सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

२५

(अगस्त १९२४–जनवरी १९२५)

उपवासके दिनोंमें, शुश्रूषामें डॉ॰ जीवराज मेहता

सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

२५

(अगस्त १९२४–जनवरी १९२५)

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मन्त्रालय

मार्च १९६८ (चैत्र १८९०)

साढ़े सात रुपये

निदेशक, प्रकाशन विभाग, दिल्ली-६ द्वारा प्रकाशित
और शान्तिलाल हरजीवन शाह, नवजीवन प्रेस, अहमदाबाद-१४ द्वारा मुद्रित

भूमिका

इस खण्डमे १६ अगस्त, १९२४ से लेकर १५ जनवरी, १९२५ तककी सामग्री दी गई है। इस अवधिमे गांधीजीने राष्ट्रीय एकता, हिन्दू-मुस्लिम एकता, कांग्रेसकी हदतक स्वराज्यवादियो और अपरिवर्तनवादियोके बीच मेल-जोल स्थापित करने तथा कांग्रेस और देशके अन्य राजनीतिक दलोंको एक मचपर लानेके लिए उत्कट प्रयास किया। यह खण्ड उसी प्रयासका विस्तृत विवरण प्रस्तुत करता है। उन्होंने असहयोग आन्दोलनके स्थगित कर दिये जानेसे उत्पन्न निराशा और अवसादकी भावनाको विनाशकारी लडाई-झगडों और पारस्परिक कटुताका कारण ठहराया और उस आन्दोलनके प्रणेताकी हैसियतसे देशमे व्याप्त हिंसाके वातावरणको दूर करना अपना कर्त्तव्य माना, और इस कर्त्तव्यको पूरा करनेका प्रयत्न किया — तपश्चर्या और विरोधियोके सामने स्वेच्छासे आत्मसमर्पण करनेके तरीकेसे। सितम्बर-अक्तूबरका २१ दिनोका उपवास, स्वराज्यवादी नेताओके साथ नवम्बर महीनेमे कलकत्तामे किया गया समझौता, बम्बईमे (नवम्बरमे) आयोजित सर्वदलीय सम्मेलन और उन्हीकी अध्यक्षतामे सम्पन्न कांग्रेसका अधिवेशन — इस कालकी ये तमाम घटनाएँ, इस विनय-भावनाकी साक्षी भरती है जिनके द्वारा उन्होने देशमे मेल-जोल स्थापित करनेका प्रयत्न किया।

हिन्दुओं और मुसलमानोके बीच तनाव चल रहा था और कुछ मास पूर्व गांधीजीने उसके कारणोंका विश्लेषण करते हुए उसका उपचार भी बताया था। (देखिए खण्ड २४)। जब अगस्त १९२४में कई स्थानोंमे मन्दिरोंकी पवित्रता भग किये जानेके समाचार मिले तो गांधीजीको बडी चिन्ता हुई। उन्होने इस विषयपर अपना रवैया साफ शब्दोमे पेश करते हुए कहा "मैं मूर्ति-पूजक भी हूँ और मूर्ति-भजक भी, पर उस अर्थमे जिसे मैं इन शब्दोका सही अर्थ मानता हूँ। मूर्ति-पूजाके पीछे जो भाव है, मैं उसका आदर करता हूँ। मनुष्य-जातिके उत्थानमे उससे बहुत सहायता मिलती है और मैं चाहूँगा कि अपने प्राण देकर भी उन हजारों पवित्र देवालयोकी रक्षा करनेकी सामर्थ्य मुझमे हो, जो हमारी इस जननी-जन्मभूमिको पुनीत कर रहे हैं। मैं मूर्ति-भजक इस मानीमे हूँ कि मैं उस धर्मान्धताके रूपमें छिपी सूक्ष्म मूर्ति-पूजाको खण्डित करता हूँ जो अपनी ईश्वर-पूजाकी विधिके अलावा दूसरे लोगोंकी पूजाविधिमें किसी गुण और अच्छाईको देखनेसे इनकार करती है।" (पृष्ठ ४८-४९)। उन्होने अज्ञात् अपराधियोंको अपने हृदयकी व्यथा सुनाई "ये घटनाएँ मेरे हृदयके टुकडे-टुकडे कर रही है।" (पृष्ठ ५०)। उन्हे इस सबके पीछे कोई योजनाबद्ध प्रयास होनेका आभास हुआ और उन्होंने यह बात सार्वजनिक रूपसे भी कही। उन्होने हिन्दुओंको प्रतिशोधकी भावनाके वशीभूत न होनेकी सलाह देते हुए इन कुकृत्योके लिए जिम्मेदार मुसलमानोंसे कहा "याद रखो, इस्लामकी जाँच तुम्हारी करतूतोसे हो रही है। . . बदला भी आखिर एक हदतक ही लिया जा सकता है। हिन्दू लोग अपने देवालयोको जानसे अधिक मानते हैं। हिन्दुओंकी जानको नुकसान पहुँचानेकी बात तो किसी

हदतक समझमे आ सकती है, पर उनके मन्दिरोको हानि पहुँचानेकी बात समझमे नही आ सकती। धर्म जीवनसे बढकर है।" (पृष्ठ ४९-५०)। इस साम्प्रदायिक वैमनस्यकी चरम-परिणति पश्चिमोत्तर सीमा प्रान्तमे कोहाटमे हुई। वहाँ ९ और १० सितम्बरको हिन्दुओपर सामूहिक रूपसे हमले किये गये और समस्त हिन्दू परिवारोको अपना घर-बार छोडकर रावलपिंडीमे शरण लेनी पडी।

इस आपसी कलहसे गाधीजीकी आत्मा व्यथित हो उठी। उन्होने सी० एफ० एन्ड्रचूजको लिखे एक छोटे-से पत्रमे अपनी इस व्यथाको प्रकट करते हुए कहा "किन्तु, अब तो मेरे मनको शीघ्र ही शान्ति मिल जायेगी। मै अपने कर्त्तव्यका स्पष्ट सकेत पानेके लिए व्याकुल था। क्या कोई मनुष्य अपना जीवन देनेसे अधिक कुछ कर सकता है?" (पृष्ठ १६७) उन्होने आत्मशुद्धिके लिए २१ दिनोका उपवास करनेका निश्चय किया था। उन्हे लगा कि इन सारे फसादोकी जिम्मेदारी उनपर है। "क्या जनताकी भारी शक्तिको जाग्रत कर देनेके लिए मैं ही जिम्मेवार नही था? अगर यह शक्ति आत्म-विनाशका कारण बन रही है तो मुझे कोई उपचार ढूँढना ही है।" (पृष्ठ २१३)।

गाधीजीके इस उपवासके मर्मको महादेव देसाई-जैसे उनके अन्तरग सहयोगी भी नही समझ पाये। उनकी शकाओका समाधान करते हुए गाधीजीने कहा "आज देखता हूँ कि अहिंसाकी गधको भी जाने बिना लोग एक-दूसरेके साथ असहयोग करने लगे है। इसका कारण क्या है? इसका कारण सिर्फ यह है कि मै खुद ही अहिंसक नही हूँ। मेरी अहिसा भी कोई अहिसा है? अगर वह पराकाष्ठापर पहुँच जाती तो आज मैं जो हिंसा देख रहा हूँ वह न देखनेको मिलती। इसलिए मेरा उपवास प्रायश्चित्त है, तपश्चर्या है। मै किसीको दोष नही देता। मै तो अपनेको ही दोष दे रहा हूँ। मेरी शक्ति चली गई है। हार-थककर, अपनी शक्ति खोकर अब मुझे सिर्फ ईश्वरके ही दरबारमे अर्ज करना है।" (पृष्ठ १८८)। निदान तारीख १७को दिल्लीमे मुहम्मद अलीके घर उन्होने उपवास शुरू कर दिया। इसने एकताके पक्षमे वातावरण तैयार किया, जिसका परिणाम प्रकट हुआ ऐक्य सम्मेलनके रूपमे। सम्मेलनने २७ तारीखको एक प्रस्ताव पास करके इस झगडेकी तीव्र निन्दा की और साम्प्रदायिक दगोको बर्बर तथा धर्मविरुद्ध व्यवहार बता कर उनकी भर्त्सना की। इसी प्रस्तावके द्वारा पचोंका एक बोर्ड भी नियुक्त किया गया, जिसका काम दोनो सम्प्रदायोके बीचके झगडोका निबटारा करना और अल्पसख्यकोके अधिकारोकी रक्षाके लिए एक योजना तैयार करना था। सम्मेलनने गाधीजीसे उपवास समाप्त करनेके लिए एक अपील भी जारी की। गाधीजीने इस अनुरोधको स्वीकार नही किया, क्योकि उपवासको वे सीधे अपने और ईश्वरके बीचका मामला मानते थे।

काग्रेसके भीतर स्वराज्यवादियोकी स्थितिकी समस्या अत्यन्त जटिल थी। अपरिवर्तनवादी लोग चाहते थे कि काग्रेसके मूल असहयोग कार्यक्रमका पालन निष्ठापूर्वक और कडाईसे किया जाये, लेकिन स्वराज्यवादियोने कौंसिलोमे जाकर वहाँ रोध-अवरोधकी नीतिसे काम लेनेका कार्यक्रम स्वीकारा था। अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीकी जून महीनेकी बैठकके बाद इन दोनो पक्षोके बीच काग्रेसको अपने-अपने नियन्त्रणमे

रखनेके लिए वडी खींच-तान शुरु हो गई थी। गाधीजीने इसपर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए कहा "देशमे इस समय जो घरेलू झगडा चल रहा है, उससे मै अव वहुत परेशान हो गया हूँ।" (पृष्ठ ६९)। उनका निश्चित मत था कि स्वराज्य-वादियोका कार्यक्रम देशके आन्तरिक विकासके लिए वाधक है, लेकिन अव उसका विरोध करनेकी उनकी कोई इच्छा नही रह गयी थी। ६ सितम्वरको च० राज-गोपालाचारीको उन्होने लिखा "मुझे तो दिनके उजालेकी तरह स्पष्ट नजर आ रहा है कि हमारे कार्यकर्त्ताओमे जो वुराई घर कर गई है, हमे उसका सीधा प्रतिरोध नही करना चाहिए। हमे पूर्णरूपसे सत्ताका परित्याग कर देना चाहिए। अगर अपने उद्देश्यमे हमारी आस्था है, तो हमे सफलता मिलनी ही चाहिए।" (पृष्ठ १०५)। लेकिन आम परिवर्तनवादी सदस्योको यह रवैया ठीक नही लगा। उन्होने इसे आत्म-समर्पण कहा। मगर गाधीजीका उद्देश्य भी तो आत्म-समर्पण ही था। 'यग इडिया' मे अपनी स्थितिपर प्रकाश डालते हुए उन्होने लिखा "अव मेरे अन्दर सघर्षका भाव विलकुल नही रह गया है। मैं एक जन्मजात लडाका हूँ। मेरे लिए इतना ही कहना वहुत है। मै अपने सर्वाधिक प्रिय जनोतक से लडा हूँ। पर मैं लडा हूँ प्रेम-भावसे प्रेरित होकर ही। स्वराज्यवादियोमे भी प्रेम-भावसे प्रेरित होकर ही लडा जा सकता है। पर मैं देखता हूँ कि पहले मुझे अपने प्रेम-भावको साबित करना होगा। मैं समझता था कि मैं इसे साबित कर चुका हूँ। लेकिन देखता हूँ कि नही, मै गलती-पर था। इसीलिए मैं अपने कदम वापस ले रहा हूँ।" (पृष्ठ १३२)। और फिर "प्रेमका नियम" शीर्षक लेखमे उन्होने कहा "मुझे हरएकको दिखा देना चाहिए कि मै जो कहता हूँ, वही हूँ — अर्थात् मैं हरएकका मित्र और सेवक हूँ।" (पृष्ठ २७९)। जव गाधीजी स्वराज्यवादी दलमे समझौता करनेके उद्देश्यसे मोतीलाल नेहरूसे वार्ता चला रहे थे, तभी वगालमे सरकारी दमनका चक्र जोरोसे चल पडा और वहुतसे लोग विना मुकदमा चलाये ही जेलोमे वन्द कर दिये गये। काग्रेसके अन्दर एकताकी आवश्यकता और भी वढ गई, क्योंकि अव उसे एक ऐसा अनुशासित सगठन वनाना था जो वक्तके हर तकाजेका सही जवाव दे सके। निदान ६ नवम्वरको कलकत्तामे गाधीजी और स्वराज्यवादी नेताओके वीच समझौता हो गया। इसके अनुसार तय पाया गया कि स्वराज्यवादी दलको अपना कौंसिल-कार्यक्रम काग्रेसके नामपर चलाने-की छूट दी जायगी और वदलेमे वह रचनात्मक कार्यक्रम तथा काग्रेसकी सदस्यताकी योग्यताके रूपमे प्रतिदिन सूत कातनेके नियमको दाखिल करनेका समर्थन करेगा। अन्य दलोको काग्रेसके भीतर एक मचपर लानेके उद्देश्यसे समझौतेमे यह प्रस्ताव भी रखा गया कि असहयोग आन्दोलनके अगके रूपमें जो विभिन्न वहिष्कार आरम्भ किये गये थे, उनमे से विदेशी वस्त्रोके वहिष्कारको छोडकर अन्य सवको स्थगित कर दिया जाये। २३ नवम्वरको वम्वईमे अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीकी वैठकमे इस समझौतेको उचित ठहराते हुए गाधीजीने कहा "मै एक तरहसे यह स्वीकार करता हूँ कि असहयोगकी लडाईका या सविनय अवज्ञा आन्दोलनका नेतृत्व करना मै तवतक असम्भव समझता हूँ जवतक हमारे साथ देशका प्रवुद्ध लोगोका एक ऐसा वहुत वडा समूह न हो, जिसकी सहानुभूति हमारे पक्षमे हो और यहाँतक कि वह

सक्रिय रूपसे हमारे साथ सहयोग करे। इसकी अपेक्षा हम तबतक नही कर सकते जबतक कि कुछ मामलोमे हम उनकी बात न माने।" (पृष्ठ ३७४)।

स्वराज्यवादी दलके प्रति समझौतेके इस रवैयेसे अपरिवर्तनवादी लोग बडी विषम स्थितिमे पड गये। गाधीजी उनकी परेशानीको समझते थे, लेकिन उन्होने उन्हे समझाया कि काग्रेसमे उनकी स्थिति चाहे जैसी रहे, वे उसकी कोई चिन्ता न करते हुए एकाग्रचित्त होकर रचनात्मक कार्यक्रमको पूरा करनेमे जुट जाये। सबसे कट्टर असहयोगी च० राजगोपालाचारीको लिखे अपने १५ सितम्बरके पत्रमे उन्होने कहा: "मै जानता हूँ कि मै आपके और दूसरे लोगोके लिए अपने-आपको इन आकस्मिक परिवर्तनोके अनुकूल ढाल लेना कितना मुश्किल होगा। लेकिन मै करूँ भी तो क्या! मै जानता हूँ कि मै अपने साथियोकी निष्ठा और आस्थापर अनुचित दबाव डाल रहा हूँ।" (पृष्ठ १५८)। उन्होने असहयोगियोको इन शब्दोमे समझाया "अपना उद्देश्य पानेके लिए हमे थोडा झुकना है। हम व्यक्तिगत रूपसे असहयोगके छोटेसे-छोटे अशको भी कायम रखे, किन्तु साथ ही हमे चाहिए कि जो लोग इसमे विश्वास नही रखते, हम उनका मार्ग इसके लिए सुगम बनाये कि वे हमे और रचनात्मक प्रयत्नोमे देशको सहायता दे। . क्या यह देख सकना बिलकुल आसान नही है कि सेवाके लिए न सत्ताकी आवश्यकता है, न पद-प्रतिष्ठाकी? मै तो चाहता हूँ कि हममे से हर आदमी केवल देशका सेवक बन जाये। मै चाहूँगा कि अपरिवर्तनवादी लोग ऐसा व्यवहार करे कि स्वराज्यवादी, लिबरल तथा अन्य सब उनकी आवश्यकता महसूस करे।" (पृष्ठ २७८-७९)। अपने सहयोगियोकी उन्हे कितनी चिन्ता रहती थी, इसका परिचय हमे राजाजीके नाम लिखे उनके पत्रकी इन पक्तियोमे मिलता है: "मेरी यही कामना है कि यह आपके व्यथित हृदयके लिए मरहमका काम करे। . बारडोलीमे मैने अहिंसाके क्षेत्रमे एक दिशामे सबसे साहसपूर्ण प्रयोग किया था। यह समझौता दूसरी दिशामे सबसे साहसपूर्ण प्रयोग है।" (पृष्ठ ३४५-४६)।

कलकत्ता-समझौतेकी तजवीजके मुताबिक बम्बईमे २१ और २२ नवम्बरको एक सर्वदलीय सम्मेलन हुआ। इसका उद्देश्य सरकारके विरुद्ध एक सयुक्त मोर्चा तैयार करना था। सरकारने सम्भवत मुख्य रूपसे स्वराज्यवादी दलको कुचलनेके लिए बगालमे दमनकी नीति आरम्भ कर दी थी। देशके राष्ट्रवादी तत्त्वोके आपसी मतभेदो और फूटसे लाभ उठानेकी सरकारी चालको गाधीजी भली-भाँति समझ गये थे। उनके कहनेपर सर्वदलीय सम्मेलनने एक प्रस्ताव पास करके सरकारकी कारगुजारियोकी तीव्र भर्त्सना की और "भारतीय राष्ट्रीय काग्रेसके साथ देशके अन्य राजनीतिक दलोंको फिरसे मिलाने और स्वराज्यकी एक योजना तैयार करनेका सर्वोत्तम रास्ता क्या हो, इसपर विचार करनेके लिए एक समिति नियुक्त की। (पृष्ठ ३६५)। यह कोई सरल काम नही था। लिबरलो और इडिपेडेंटोके काग्रेसमे शामिल होनेके रास्तेमे कुछ अडचनें थी। इनमे से एक तो थी स्वराज्यका सिद्धान्त, जिसका अर्थ पूर्ण स्वराज्य भी लगाया जा सकता था। फिर, उन्हे काग्रेसमे स्वराज्यवादी दलके दर्जे और सदस्यताके लिए प्रतिदिन सूत कातनेकी शर्तपर भी आपत्ति थी। इन सभी प्रश्नोपर गाधीजीके विचार बिलकुल निश्चित थे। फिर भी, उन्होने दूसरे दलोको

आश्वस्त करते हुए कहा "यह समिति सभी दलोंको एकताके सूत्रमें बाँधनेके लिए जो भी समुचित उपाय करना वाछनीय समझेगी, मैं उसके रास्तेमे हठपूर्वक कोई बाधा नहीं डालूँगा। . मैं बहुत विनम्रतापूर्वक उनके दृष्टिकोणको जानने-समझानेका प्रयास कर रहा हूँ। इसमें मेरा अपना कोई निजी उद्देश्य तो है नहीं। ' तो सभी दल ऐसा रास्ता ढूँढ निकालनेके लिए ईमानदारी और लगनके साथ कोशिश करें। एक सयुक्त मच खोज निकालनेके लिए वे समितिकी कार्यवाहीके प्रति विश्वास और सकल्पका रवैया अपनायें।" (पृष्ठ ३८८)।

गाधीजीको आगामी काग्रेसका अध्यक्ष चुना गया। उन्होंने ईश्वरका निर्देश पानेके लिए बहुत प्रार्थना और आत्म-चिन्तन करनेके बाद ही इस सम्मानको स्वीकार किया। उन्होंने कहा, "मेरे और भारतके समस्त शिक्षित समुदायके बीच भेदकी जबरदस्त खाई दिखाई दे रही है और देशका पूरा बौद्धिक वर्ग मेरी विचार-पद्धति और कार्य-विधिके विरुद्ध खड़ा जान पड़ता है।" (पृष्ठ ३८०)। अपने अध्यक्षीय भाषणमें उन्होंने राष्ट्रकी स्थितिका, कलकत्तेके समझौतेका और उससे उठनेवाले प्रश्नोंका अत्यन्त सम्यक् और आधिकारिक विवरण प्रस्तुत किया। उसमें उन्होंने स्वराज्यवादी दलके महत्त्वके सम्बन्धमें, असहयोग आन्दोलन स्थगित करनेके बाद राष्ट्रीय शालाओंकी भूमिकाके विषयमें और बगालके दमनके बारेमें भी अपने विचार स्पष्ट किये। उन्होंने अपनी कल्पनाके स्वराज्यकी एक रूप-रेखा भी प्रस्तुत की और कहा, "मैं साम्राज्यके भीतर स्वराज्य लेनेका उद्योग करना चाहता हूँ, किन्तु यदि ब्रिटेनके दोषके कारण उससे सम्बन्ध तोड़ लेना आवश्यक हुआ तो मैं पूर्णत सम्बन्ध तोड़नेमें भी नहीं झिझकूँगा। यदि ऐसा हो तो मैं ब्रिटेनसे अलग होनेकी जिम्मेदारी अग्रेज लोगोंपर ही डालूँगा।" (पृष्ठ ५१६)। अपने भाषणके अन्तमें उन्होंने असहयोग और सत्याग्रहमें अपनी दृढ आस्था फिरसे व्यक्त करते हुए कहा "एक काग्रेसीकी हैसियतसे काग्रेसको ज्योंका-त्यों कायम रखनेके लिए मैं असहयोगको मुल्तवी रखनेकी सलाह दे रहा हूँ, क्योंकि मैं देखता हूँ कि राष्ट्र इसके लिए अभी तैयार नहीं है। लेकिन एक व्यक्तिकी हैसि-यतसे मैं तबतक ऐसा नहीं कर सकता — न करूँगा ही — जबतक कि यह सरकार जैसीकी-तैसी बनी हुई है। असहयोग और सविनय अवज्ञा, सत्याग्रह नामक एक ही वृक्षकी अलग-अलग शाखाएँ हैं। यह मेरा कल्पद्रुम — जाम-ए-जम — है। इस सत्याग्रहने दक्षिण आफ्रिका, खेड़ा या चम्पारनमें मुझे निराश नहीं किया। मैं ऐसे और भी बहुत-से प्रसग गिना सकता हूँ जब इसने, इससे जितनी भी आशाएँ की गई थी, सब पूरी कीं। इसमें किसी किस्मकी हिंसा या घृणा-भावके लिए जगह नहीं है। इसलिए मैं अग्रेजोंसे नफरत नहीं कर सकता और न करूँगा। पर साथ ही मैं उनके जुएको भी गवारा नहीं कर सकता।" (पृष्ठ ५२४)

इस खण्डमें समाविष्ट पत्रोंमें से कुछ तो अपने सहयोगियोंके साथ गाधीजीके व्यक्तिगत सम्बन्धकी सुन्दर झाँकी प्रस्तुत करते हैं। सी० एफ० एन्ड्रयूजको लिखे अपने २५ अगस्तके पत्रमें उन्होंने निम्न सलाह दी "क्या तुम कुछ समय सन्तोषके साथ आराम करनेमें नहीं बिताना चाहोगे? कर्म प्रार्थना है, पर यह पागलपन भी हो सकता है।" (पृष्ठ ४०)। और पत्रके अन्तमें उन्होंने लिखा "अगाध स्नेहके

साथ।" (पृष्ठ ४०)। मोतीलाल नेहरू और जवाहरलाल नेहरूको लिखे पत्रोसे प्रकट होता है कि उन्हे पिता-पुत्र दोनोकी कितनी चिन्ता लगी रहती थी। मोतीलाल नेहरूको अपने २ सितम्बरके पत्रमे उन्होने लिखा, "पिछले पत्रकी तरह ही यह पत्र भी मैं जवाहरलालकी सिफारिश करनेके लिए ही लिख रहा हूँ। भारतमे बहुत अकेलापन महसूस करनेवाले जिन नौजवानोसे मिलनेका मुझे मौका मिला है, वह उनमे से एक है। आपके मानसिक रूपसे उसका त्याग कर देनेके खयालसे मुझे बहुत दुःख होता है। मैं प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष किसी भी तरहसे इस अद्भुत प्रेम-सम्बन्धमे बाधक नही बनना चाहता।" (पृष्ठ ६८-६९)। जवाहरलाल नेहरूके एक पत्रके उत्तरमे उन्होने लिखा "अभी तो पिताजी चिढे हुए है और मैं बिलकुल नही चाहता कि तुम या मै उनकी झुँझलाहट बढनेका जरा भी मौका दें। उन्हे दुखी देखकर मुझे दुःख होता है। उनकी चिढ जानेकी प्रवृत्तिसे साफ जाहिर है कि वे दुःखी है।" (पृष्ठ १५७) और फिर रोमाँ रोलाँ को लिखे पत्रमे वे मीराबहनके बारे मे कहते है "कैसी अमूल्य निधि आपने मुझे सौपी है। मै आपके इस अगाध विश्वासके योग्य बननेकी कोशिश करूँगा। मै कुमारी स्लेडकी हर तरसे सहायता करनेकी कोशिश करूँगा, ताकि वे पूर्व और पश्चिमके बीच एक लघुसेतु बन सके।" (पृष्ठ ३४१)

इस खण्डमे आपको यत्र-तत्र गाधीजीकी निजी मान्यताओकी स्वीकृति भी देखनेको मिलेगी। "मेरे जेलके अनुभव" मे यह इतिहास-निर्माता इतिहासके अध्ययन-के सम्बन्धमे अपने विचार व्यक्त करते हुए निष्कर्ष-रूपमे कहता है "जो शाश्वत है और इसलिए महत्त्वपूर्ण है, वह मात्र घटनाओको दर्ज करनेवाले इतिहासकारकी पकडमे नही आता। सत्य इतिहाससे परे है।" (पृष्ठ १३६) धर्म और राजनीतिके प्रति अपना दृष्टिकोण स्पष्ट करते हुए उन्होने कहा · "मेरे लिए मानवकी या प्राणि-मात्रकी सेवा धर्म बन गई है और मैं इस धर्म और राजनीतिमे अन्तर नही करता।" (पृष्ठ ५५)। मानव-जातिके कल्याणके लिए अपने हृदयकी आकुलता व्यक्त करते हुए एक और स्थलपर उन्होने लिखा है "आप मुझे महात्मा कहते है। इसका कारण न तो मेरा सत्य है और न मेरी अहिसा-वृत्ति बल्कि इसका कारण दीन दुखियोके प्रति मेरा अगाध प्रेम है। चाहे कुछ भी हो जाये, पर मैं इन फटेहाल नर-ककालोको नही भूल सकता, नही छोड सकता।" (पृष्ठ ६३)। लेकिन गाधीजीकी मानवीयताका उत्स उनकी भगवद्भक्ति ही थी। जैसा कि उन्होने "बोलशेविज्म या आत्मसयम" शीर्षक लेखमे स्वय कहा है, उनका आन्दोलन नास्तिक नही था। "वह ईश्वरको नही नकारता। वह तो उसीके नामपर शुरू किया गया है और निर-न्तर उसकी प्रार्थना करते हुए चलाया जा रहा है।" (पृष्ठ १९)। उनके सार्वजनिक जीवनमे उनके सामने जब भी कोई विचिकित्साका प्रसग आता था, वे सही उत्तर पानेके लिए अपनी अन्तरात्माको टटोलते थे, ईश्वरसे प्रार्थना करते थे और जब कुछ कालके लिए उन्हे अन्तरात्मा अथवा ईश्वरसे कोई स्पष्ट निर्देश नही मिलता था, वे बहुत परेशान हो उठते थे। 'फाउस्ट'की मार्गरेटकी दशाको स्मरण करते हुए उन्होने एक ऐसे ही प्रसगपर लिखा, "जान पडता है, मैं भी अपने प्रियतमसे हाथ

खो बैठा हूँ, और ऐसा मालूम होता है कि मै इधर-उधर भटक रहा हूँ। मुझे अनुभव तो ऐसा होता है कि मेरा सखा निरन्तर मेरे आसपास है, पर फिर भी वह मुझसे दूर प्रतीत होता है, क्योकि वह मुझे ठीक-ठीक राह नही दिखा रहा है। बल्कि उलटा, गोपियोके छलिया नटखट कृष्णकी तरह वह मुझे चिढाता है। कभी दिखाई देता है, कभी छिप जाता है, और कभी फिर दिखाई दे जाता है।" (पृष्ठ ८३)। वे बार-बार चरखेके पास जाकर बैठते रहे और अन्तमे तब जब उन्हे शान्तिकी तलाश नही रह गई थी, वह "अनायास ही मिल गई।" उनकी अन्तरात्माने उनसे कहा, "यदि तुम और किसी भी बातकी परवाह न करो, बल्कि केवल जिसे तुम अपना कर्त्तव्य समझते हो उसीका पालन करो तो सबकुछ ठीक होगा।" (पृष्ठ ४८२)। गाधीजीने स्वय ही पाठकोका ध्यान "नियमित रूपसे कार्य करनेकी उपयोगिता" की ओर दिलाया और बताया कि उनके लिए अनुक्रमणिका तैयार करने-जैसा शुष्क और उबानेवाला काम किस तरह एक दैनिक व्यायाम और व्यक्तिको तन्मय कर देनेवाला काम बन गया। (पृष्ठ १६५)। स्वच्छता और दृढता सही कर्मसे आती है। "किसी बातको अपने आचरणमे उतारना ही उसके पक्षमे दिया गया सबसे अच्छा भाषण है और उसके लिए किया गया सबसे अच्छा प्रचार है, यह काम हर व्यक्ति कर सकता है तथा इसमे कोई विघ्न-बाधा भी नही डालेगा। दूसरोकी चिन्ता न करना अहुरमज्दका तरीका है। अहरमन हमे हमारे विश्वाससे डिगाकर अपने जालमे फँसाता है। ईश्वर काबा या काशीमे नही है। वह तो हम सबके भीतर है। इसलिए स्वराज्य भी हमे अपने भीतर खोजनेमे ही मिलेगा। यदि हम दूसरोमे या अपने साथी कार्यकर्त्ताओमे भी यह आशा करे कि वे स्वराज्य लेकर हमे दे देगे, तो हमारी यह आशा व्यर्थ होगी।" (पृष्ठ ४८३)

आभार

इस खण्डकी सामग्रीके लिए हम साबरमती आश्रम संरक्षक तथा स्मारक न्यास (साबरमती आश्रम प्रिजर्वेशन ऐंड मेमोरियल ट्रस्ट) और संग्रहालय, नवजीवन ट्रस्ट; गुजरात विद्यापीठ ग्रन्थालय, अहमदाबाद, गांधी स्मारक निधि व संग्रहालय, नई दिल्ली, बम्बई सरकार, सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय (कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गांधी) बम्बई प्रान्तीय समिति, बम्बई, श्री चन्द्रगुप्त विद्यालंकार, नई दिल्ली, श्रीमती राजकुमारी अमृतकौर, नई दिल्ली, श्री छगनलाल गांधी, अहमदाबाद, श्री डाह्याभाई मनोहरभाई पटेल, अहमदाबाद, श्रीमती गंगाबहन वैद्य, बोचासण, श्री घनश्यामदास बिड़ला, कलकत्ता, श्री कपिल ठक्कर, भावनगर, श्री काशीनाथ केलकर, पूना, श्रीमती लक्ष्मीबाई खरे, साबरमती आश्रम, कुमारी मेडेलिन स्लेड (मीराबहन) गाडेन, आस्ट्रिया, श्री महेश पट्टणी, भावनगर, श्री नारणदास गांधी, राजकोट, श्री नारायण देसाई, बारडोली, श्री परशुराम मेहरोत्रा, नई दिल्ली, आर० के० प्रभु, श्रीमती राधाबहन चौधरी, कलकत्ता, श्री शान्तिकुमार मोरारजी, बम्बई, श्रीमती शारदाबहन शाह, वढवान, श्रीमती वसुमती पंडित, सूरत, श्री विष्णुदयाल, अजमेर, 'अमृतबाजार पत्रिका'; 'आज', 'इंडियन रिव्यू', 'गुणसुन्दरी', 'ट्रिब्यून', 'नवजीवन', 'न्यू इंडिया', 'बॉम्बे क्रॉनिकल', 'यंग इंडिया', 'हिन्दी नवजीवन', 'हिन्दुस्तान टाइम्स', 'हिन्दू' समाचारपत्रों तथा पत्रिकाओं और निम्नलिखित पुस्तकोंके प्रकाशकोंके आभारी हैं 'बापुना पत्रो मणिबहन पटेलने', 'बापुना पत्रो-सरदार वल्लभभाई पटेलने', 'बापुनी प्रसादी', 'ए बन्च ऑफ ओल्ड लेटर्स', 'गांधीजीकी छत्रछायामें', 'लैटर्स ऑफ श्रीनिवास शास्त्री', 'लाइफ ऑफ श्रीरामकृष्ण', 'महादेवभाईनी डायरी खण्ड – ७' 'महात्मा-खण्ड – २', 'भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके ३९ वें अधिवेशनकी रिपोर्ट, 'द स्टोरी ऑफ माई लाइफ खण्ड – २'।

अनुसंधान व संदर्भ सम्बन्धी सुविधाओंके लिए अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी पुस्तकालय, इंडियन कौंसिल ऑफ वर्ल्ड अफेयर्स पुस्तकालय, सूचना एवं प्रसारण मन्त्रालय अनुसंधान और संदर्भ विभाग (रिसर्च ऐंड रिफरेंस डिविजन), नई दिल्ली, श्री प्यारेलाल नय्यर हमारे धन्यवादके पात्र हैं। प्रलेखोंकी फोटोनकल तैयार करनेमें मदद देनेके लिए हम सूचना एवं प्रसारण मंत्रालयके फोटो विभाग, नई दिल्लीके आभारी हैं।

पाठकोंको सूचना

हिन्दीकी जो सामग्री गांधीजीके स्वाक्षरोमे मिली है उसे अविकल रूपमे दिया गया है। किन्तु दूसरो द्वारा सम्पादित उनके भाषण अथवा लेख आदिमे हिज्जोकी स्पष्ट भूलोको सुधार कर दिया गया है।

अग्रेजी और गुजरातीसे अनुवाद करनेमे अनुवादको मूलके समीप रखनेका पूरा प्रयत्न किया गया है, किन्तु साथ ही भाषा सुपाठ्य बनानेका भी पूरा ध्यान रखा गया है। छापेकी स्पष्ट भूले सुधारनेके बाद अनुवाद किया गया है और मूलमे प्रयुक्त शब्दोके सक्षिप्त रूप यथासम्भव पूरे करके दिये गये है। नामोको सामान्य उच्चारणके अनुसार ही लिखनेकी नीतिका पालन किया गया है। जिन नामोके उच्चारणमे सशय था उनको वैसा ही लिखा गया है जैसा गाधीजीने अपने गुजराती लेखोमे लिखा है।

मूल सामग्रीके बीच चौकोर कोष्ठकोमे दी गई सामग्री सम्पादकीय है। गाधीजीने किसी लेख, भाषण आदिका जो अश मूल रूपमे उद्धृत किया है, वह हाशिया छोड-कर गहरी स्याहीमे छापा गया है, लेकिन यदि ऐसा कोई अश उन्होने अनूदित करके दिया है तो उसका हिन्दी अनुवाद हाशिया छोडकर साधारण टाइपमे छापा गया है। भाषणोकी परोक्ष रिपोर्ट तथा वे शब्द जो गाधीजीके कहे हुए नही है, बिना हाशिया छोडे गहरी स्याहीमे छापे गये है। भाषणो और भेटकी रिपोर्टोके उन अशोमे जो गाधीजीके नही है कुछ परिवर्तन किया गया है और कही-कही कुछ छोड दिया गया है।

शीर्षककी लेखन-तिथि जहाँ उपलब्ध है, वहाँ दाये कोनेमे ऊपर दे दी गई है, परन्तु जहाँ वह उपलब्ध नही है वहाँ उसकी पूर्ति अनुमानसे चौकोर कोष्ठकोमे की गई है और आवश्यक होनेपर उसका कारण स्पष्ट कर दिया गया है। जिन पत्रोमे केवल मास या वर्षका उल्लेख है उन्हे आवश्यकतानुसार मास या वर्षके अन्तमे रखा गया है। शीर्षकके अन्तमे साधन-सूत्रके साथ दी गई तिथि प्रकाशनकी है। गाधीजीकी सम्पादकीय टिप्पणियाँ और लेख, जहाँ उनकी लेखन-तिथि उपलब्ध है अथवा जहाँ किसी दृढ आधारपर उसका अनुमान किया जा सका है, वहाँ लेखन-तिथिके अनुसार और जहाँ ऐसा सम्भव नही हुआ है वहाँ उनकी प्रकाशन-तिथिके अनुसार दिये गये है।

साधन-सूत्रोमे 'एस० एन०' सकेत साबरमती सग्रहालय, अहमदाबादमे उपलब्ध सामग्रीका, 'जी० एन०' गाधी स्मारक निधि और सग्रहालय, नई दिल्लीमे उपलब्ध कागज-पत्रोका और 'सी० डब्ल्यू०' सम्पूर्ण गाधी वाड्मय (कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गाधी) द्वारा सग्रहीत पत्रोका सूचक है।

सामग्रीकी पृष्ठभूमिका परिचय देनेके लिए मूलसे सम्बद्ध कुछ परिशिष्ट दिये गये है। अन्तमे साधन-सूत्रोकी सूची और इस खण्डसे सम्बन्धित कालका तारीखवार जीवन-वृत्तान्त दिया गया है।

विषय-सूची

चित्र-सूची

१. पत्र : वसुमती पण्डितको

दिल्ली जाते हुए गाडीमे
श्रावण बदी २ [१६ अगस्त, १९२४]

चि० वसुमती,

तुम्हारा पत्र मिला। मै यह पत्र दिल्ली जाते हुए गाडीमे लिख रहा हूँ। मेरे साथ देवदास, प्यारेलाल, महादेव और मजरअली है। मै दो-चार दिनमे वापस आऊँगा। तुम अपने स्वास्थ्यका ध्यान रखना।

बापूके आशीर्वाद

चि० वसुमती
मार्फत दौलतराय काशीराम ऐंड क०
[सूरत]

मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ४५४) से।
सौजन्य : वसुमती पण्डित

२. पत्र : राधा गांधीको

शनिवार, श्रावण बदी २ [१६ अगस्त, १९२४][1]

चि० राधा,

तुम्हारा कार्ड और केशूके साथ भेजे हुए पत्र मिले। मै यह पत्र गाडीमें लिख रहा हूँ। तुम्हे वह जगह अनुकूल आई है, यह जानकर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई। अहमदावादका पानी कब्ज करता है। तुम दोनो बहनें जी भरकर और खुल-कर घूमना-फिरना। उम्मीद है, मै दिल्लीसे शुक्रवारको लौटूंगा। देवदास, प्यारेलाल और महादेव तीनो साथ है।

बापूके आशीर्वाद

चि० राधा
मार्फत वोरा शिवलाल करसनजी
राजकोट शहर

मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ६०२९) से।
सौजन्य : राधाबहन चौधरी

१. डाकखानेकी मुहरसे।

३. मलाबार संकट-निवारण[1]

इस अपीलका उत्तर अपेक्षासे भी ज्यादा शीघ्रतासे मिला है, यह मुझे मानना पडेगा। ईश्वरका अनुग्रह है कि लोगोके दिलोमे दया-भाव है और यह बात एक बार नही बल्कि अनेक बार साबित हो चुकी है। इसके लिए अनेक सहायता-कोष आरम्भ हुए है। जिसको जिसमे देना ठीक जँचे वह उसमे चन्दा दे, किन्तु दे अवश्य, मेरी यही प्रार्थना है। मलाबारके कष्टोकी कल्पना ही नही की जा सकती। मरनेकी आशा रखनेवाला मनुष्य जब जीता बच जाता है तब खुशीसे नाच उठता है। जीवित बच गया, यह नशा जबतक उसे रहता है तबतक उसे भूख-प्यास और गर्मी-सर्दीकी सुध नही रहती। यही हालत मलाबारके भाई-बहनोकी समझनी चाहिए। जो गये सो तो गये, जो बचे हैं वे जीवित बचनेके नशेमे खुश है। किन्तु ज्यो-ज्यो दिन जायेगे त्यो-त्यो उनके कष्ट बढेगे, घटेगे नही। हम ईश्वरके आगे पामर प्राणी है। अपनी मगरूरीमे चीटीको कुचलनेकी जितनी शक्ति हम अपने भीतर मानते है उससे हजारो गुनी शक्ति हमे चीटीकी तरह कुचल डालनेके लिए ईश्वरने अपने पास रखी है और मौका पडनेपर वह उसका उपयोग भी करता है। परन्तु उसकी हिंसा हिंसा नही होती, क्योकि वह सर्वज्ञ है। वह दयाका सागर है। उसके भेदको हम समझ नही सकते। इससे हम उसे कर्त्ता, भर्त्ता और संहर्त्ता मानते है। किन्तु वह न तो कर्त्ता है, न भर्त्ता है, न संहर्त्ता है। हम न जाने किस नियमके वशवर्ती होकर जन्मते है, जीते है और मरते है?

कुछ भी हो, जबतक हम जीवित रहना चाहते है तबतक दूसरोके जीनेमे मदद करना हमारा सहज और अनिवार्य धर्म है।

पाठक यह पढकर खुश होगे कि कुछ भाइयो और बहनोने एक जूनका खाना छोड़ दिया है, कुछने दूध पीना छोड दिया है और कुछने किसी दूसरी चीजका त्याग कर दिया है और ऐसा करते हुए जो बचत होती है उसे वे इस कोषमे दे देते है। बालक भी उसमे अपनी मर्जीसे शरीक हुए है। इससे भी अच्छी रकम मिलनेकी सम्भावना है। एक लडकीने तीन पैसे चुराकर रखे थे, वे भी इस कोषमे आये है। एक बहनने अपनी ठोस सोनेकी चार चूडियाँ और जंजीर दी है। एक और बहनने अपनी वजनदार कण्ठी दी है। एक लडकेने अपनी सोनेकी बाली दी है। एक बहनने अपने चाँदीके कडे दिये है और एकने पैरके अँगूठेके दो छल्ले दिये है। एक अन्त्यज लडकीने अपनी इच्छासे अपने पैरकी तोडियाँ दी है। एक नवयुवकने अपने कफोके सोनेके बटन दिये है।

१. बाढ़ सहायता कोषके सम्बन्धमें ऐसी ही एक अपील यंग इंडियामें छपी थी, देखिए खण्ड २४, पृष्ठ ५८५-८७।

आजतक नकद रकम ६,९९४ रु०, १३ आ०, ३ पा०, आये है। (देखे, अन्तिम पृष्ठ[1])। बम्बईकी शाखामे नीचे लिखे अनुसार रकम आई है.

एक सज्जन ५ रु०, डाह्यालाल हरिवल्लभ जोशी १० रु०, विश्वेश्वर मणिलाल १०१ रु०, एक सज्जन १ रु०।

मुझे आशा है कि यह रकम जिस प्रकार आनी शुरू हुई है उसी प्रकार जारी रहेगी।

कपड़े

कपडेके ढेरके-ढेर चले आ रहे हैं। उनकी कीमत लगाना मुश्किल है। ऐसे समय ये तमाम कपडे बहुत काम आयेंगे। जब आसमान फट पडा है तब स्वदेशी-विदेशीका खयाल नही रह सकता। इसलिए जो भी कपडे मिल जाये, हमने उनको ले लेनेका विचार किया है। जो लोग बिना कपडेके मारे-मारे फिरते हैं उन्हे भी विदेशी कपडे मैं अपने हाथो तो नही दूंगा, यह कहनेकी हिम्मत मुझे नही होती। यदि आज भारत खादीमय हो गया होता तो मैं जरूर यही आवाज उठाता। जब हम यह शक्ति प्राप्त नही कर पाये हैं तब तरह-तरहके कपडोसे लदे हुए हम लोग वस्त्र-विहीन लोगोको कपडा पहनाते समय यह भेद कैसे रख सकते हैं? मैं तो इस सकट-निवारणके लिए सहयोग-असहयोगको भी भूल गया हूँ। मैं सरकारी कर्मचारियोके मातहत भूखोकी सेवा करनेके लिए तैयार हूँ और असहयोगियोको तैयार रहनेकी सलाह देता हूँ। हाँ, इसका अर्थ यह नही है कि हमें सरकारी सभाओमे भी जाना चाहिए। इस काममे हमे सही अन्दाज नही हो सकता। अत हम तो सिपाहीका काम करेंगे। यदि हम चन्दा एकत्र कर सके तो जहाँ उससे सरकारी मददमे बाधा न पडती हो और जहाँ सरकार न जा सके या न जाना चाहे वहाँ हम नम्रतापूर्वक मदद पहुँचाये। सरकार यदि चाहे तो बहुत मदद कर सकती है। फिर भी काम इतना बडा है कि इसमें गैर-सरकारी साहस और दानके लिए बहुत गुजाइश है। अकेला गैर-सरकारी कोई उपक्रम इसका मुकाबला करनेमे असमर्थ है। परन्तु सरकारी मददके अलावा जो-कुछ काम बाकी रह जाये वह तो गैर-सरकारी सहायतासे ही हो सकता है। मैं वल्लभभाईसे इस बातपर सलाह-मशविरा कर रहा हूँ कि इस धनका अच्छेसे-अच्छा उपयोग किस तरह किया जाये। इसका निर्णय तो अधिकाशत. चन्देकी रकमकी तादादपर निर्भर होगा।

यदि 'नवजीवन' में किसीकी भेजी रकमकी पहुँच न छपे तो वे मुझे जरूर पत्र लिखे। तमाम रकमोकी पहुँच देनेका सकल्प अवश्य ही कायम है। हमने छोटी-छोटी रकमोको मिलाकर ही छापनेकी तजवीज की है। जो अपना नाम गुप्त रखना चाहे वे सूचित करनेकी कृपा करे।

कपड़े भेजनेवाले सज्जन नीचे लिखी हिदायतोपर ध्यान देंगे तो सहूलियत होगी

1. नवजीवनका १७-८-१९२४का अक।

१. मैले कपडे धुलाकर दे,

२. फटे कपड़े सीकर दें,

३ सब कपडोको तह कर उनके बडल बाँधे और उनपर देनेवालेके नामकी और कपडोकी चिटे लगाये।

ये कपडे हम भिक्षुओको नही भेज रहे है। इनमे हमारी तरह ही अच्छी हालतमें रहनेवाले मध्यमवर्गके हजारो भाई-बहन होगे। अपने सगे भाई-बहनोको हम जिस स्नेह, सतर्कता और विवेकके साथ कोई चीज भेजते या देते है, मै आपसे उसी प्रेम, विवेक और सतर्कताकी आशा इसमे भी रखता हूँ। सच बात तो यह है कि यदि हम भिक्षुकको भी कुछ दे तो विवेक और सतर्कताके साथ ही दे। मैले कपडोको धोनेमे, फटे कपड़ोको सीनेमे और उनकी तह बनानेमे बहुत वक्त नही लगता। उसमे केवल प्रेमकी परीक्षा है।

महाविद्यालयके विद्यार्थी

पाठकोको यह तो मालूम ही है कि महाविद्यालयके विद्यार्थियोने सूत दिया है। परन्तु इसके अलावा उन्होने श्रम भी किया है, जैसा स्वामी श्रद्धानन्दके शिष्योने दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहके समय किया था। विद्यापीठकी जो इमारत बन रही है उसमे कोई पौन सौ विद्यार्थी मजदूरी कर रहे है। वे उसमे मिली रकम इस चन्देमे देगे। मै विद्यार्थियोको धन्यवाद देता हूँ और आशा रखता हूँ कि वे समय-समयपर ऐसा ही श्रम करेगे। यही उपार्जित विद्याका शुद्ध उपयोग है।

यह सब कहाँ दें?

यह धन अहमदाबादमे प्रान्तीय कमेटीके कार्यालय, 'नवजीवन' कार्यालय या सत्याग्रहाश्रममे दे। वे इसे बम्बईमे प्रान्तीय कमेटीको भेजनेकी व्यवस्था करे अथवा प्रिन्सेस स्ट्रीटमे 'नवजीवन'के शाखा कार्यालयको दे। मेरी सलाह है कि सभी लोग हर जगहसे धन, सूत और कपड़ोंकी रसीद जरूर ले ले।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १७-८-१९२४

४. शिक्षक और चरखेकी शिक्षा

इस विषयपर भाई हरिशंकर त्रिवेदीने निम्नलिखित विचारणीय पत्र लिखा है :[1]

मेरे मनमें तो तनिक भी शका नही है कि यदि शिक्षक कताई और उससे सम्बन्धित सभी अगली और पिछली क्रियाओको सम्पूर्ण रूपसे सीख ले तथा उनमे उनकी अभिरुचि उत्पन्न हो जाये तो विद्यार्थी भी अवश्य कातना सीखेगे। किस विद्यार्थीका यह अनुभव नही है कि उसकी किसी विषयमे दिलचस्पी उस विषयके कारण नही होती, बल्कि शिक्षकोके कारण होती है। मेरा अनुभव तो यह है कि जिस रसायन-शास्त्रको पढाते समय एक शिक्षक मुझे निद्रावश कर देता था उसी विषयको पढाते समय दूसरा शिक्षक मुझे जाग्रत रखता और उसमे मेरे लिए रस उत्पन्न कर देता था। एक शिक्षक गणितका सवाल पढाता है, विद्यार्थीको वह समझमे नही आता इसलिए अच्छा नही लगता और दूसरा शिक्षक पढाता है तो ऐसा लगता है कि उसका घटा समाप्त ही न हो। सवाल तो वही होता है, विद्यार्थी भी वही, अन्तर सिर्फ यह है कि एकके पढानेका ढग सरस होता है और दूसरेका नीरस। चरखेमें रसकी गागर भरी है। ऐसा मालूम होता है कि दक्षिणामूर्ति भवनमे इस रसके पारखी शिक्षक हैं।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १७-८-१९२४

५. टिप्पणियाँ

मौलाना शौकत अली काठियावाड़में

मौलाना शौकत अली दिल्लीसे भेजे अपने तारमें सूचित करते है कि वे अपने साथियो सहित काठियावाडकी यात्राके लिए रवाना हो रहे है और १८ तारीखको राजकोट पहुँचेगे। काठियावाडकी खिलाफत समितियो, अजुमनो, जमातो और अन्य ऐसी सस्थाओको, जो अपने क्षेत्रमें मौलाना साहब और उनके साथियोको आनेका न्यौता देना चाहती हो, चाहिए कि वे समय रहते मौलाना साहबको राजकोटके पतेपर पत्र लिखे, ताकि वे अपना कार्यक्रम तय कर सके। मुझे उम्मीद है कि काठियावाडमें मौलाना शौकत अली और उनके साथी जहाँ-जहाँ जायेंगे वहाँ-वहाँ हिन्दू और मुसलमान सब उनका स्वागत करेगे।

१. पत्र यहाँ नहीं दिया गया है।

तकलीकी उपयोगिता

यह तो अनेक अनुभवोमे से मात्र एक अनुभव है।[1] अभी तो तकलीकी प्रारम्भिक अवस्था है। अभीतक इसके द्वारा प्रति घटा ७० गज सूत कातनेकी रिपोर्ट हमारे पास आ चुकी है। चरखेपर अधिकाश लोग इससे ज्यादा कातते है, लेकिन तकलीकी चरखेके साथ यो कोई तुलना नही हो सकती। तकली तो पाँच मिनटकी फुरसत मिलनेपर भी इस्तेमाल की जा सकती है। रेलगाडीमें चरखा नही चलाया जा सकता इसलिए काग्रेसने सफरमे न कातनेकी छूट दे रखी है। मुझे यदि उस समय तकलीकी उपयोगिताका ज्ञान होता तो सफरका अपवाद स्वीकार न किया जाता। इस तरह विचार करनेपर घूमने-फिरनेवाले मनुष्यको अथवा अन्य कार्योके बीच सूत कातनेवाले मनुष्यको चरखेकी अपेक्षा तकली अधिक काम दे सकती है। तथापि तकली चरखेकी जगह नही, किन्तु चरखेके अलावा कातनेका एक लगभग मुफ्त साधन अवश्य है और यदि वह ठीकरीके टुकडेसे बनाई जाये तो बिलकुल मुफ्त पडेगी।

राष्ट्रीय स्कूलोंमें दण्डनीति

एक भाई लिखते है कि आपने शिक्षा-परिषद्में कई प्रस्ताव पास करवाये है। वे सब प्रस्ताव शिक्षकोने आपको प्रसन्न करनेके लिए चाहे-अनचाहे पास किये है। उनमें से कदाचित् ही किसीपर अमल किया जाये। फिर, आप एक प्रस्ताव पास करना तो बिलकुल ही भूल गये है — हमारी राष्ट्रीय शालाओमे विद्यार्थियोको जो शारीरिक दण्ड दिया जाता है उसके निषेधका प्रस्ताव।

मुझे उम्मीद है कि शिक्षा-परिषद्के प्रस्ताव मुझे प्रसन्न करनेके उद्देश्यसे पास नही किये गये है, वरन् अमलमे लाये जानेके उद्देश्यसे पास किये गये है। जैसा अविश्वास इस भाईने व्यक्त किया है वैसा अविश्वास मेरे मनमे नही है। राष्ट्रीय स्कूलोमे दण्डनीति सर्वथा त्याज्य है, ऐसी मेरी मान्यता है। यदि ऐसा न होता तो कोई-न-कोई शिक्षक अवश्य ही इस बातकी चर्चा करता। दूसरा अनुमान यह किया जा सकता है कि सम्भवत दण्डनीति इतनी अधिक प्रचलित है कि इसमे किसीको आश्चर्य ही नही होता। लेकिन मै यह अनुमान करनेके लिए तैयार नही हूँ। मुझे उम्मीद है कि इस भाईने कुछ ही जगह शिक्षको द्वारा विद्यार्थियोको सजा देते हुए देखा होगा। जो शिक्षक सजा देता है वह शिक्षक नही, वह तो जेलका दारोगा हुआ। शिक्षकका धर्म विद्यार्थीको रिझाकर प्रेमसे आगे ले जाना है। दण्डसे बालक पढते है, यह वहम अब तो दूर हो जाना चाहिए। ससारके सहस्रो शिक्षकोका यह अनुभव है कि धीरजसे बच्चोंको ज्यादा सिखाया जा सकता है। दण्ड तो शिक्षकके अज्ञानका सूचक है। शिक्षकका काम है कि वह प्रत्येक विषयको दिलचस्प बना दे। अच्छा शिक्षक अक-गणित-जैसी चीजको भी दिलचस्प बना सकता है।

१. एक भाईने अपने पत्रमें तकलीका अपना अनुभव लिख भेजा था; उक्त पत्र यहाँ नहीं दिया गया है।

क्या वे राक्षस थे?

एक भाईने रामचन्द्र, युधिष्ठिर तथा नलपर आक्षेप लगाये है और मुझसे उनका उत्तर देनेकी माँग की है। रामचन्द्रने सीताको अग्निमे प्रवेश करवाया और उसका त्याग किया, युधिष्ठिरने जुआ खेला और द्रौपदीकी रक्षा करने तककी हिम्मत खो बैठा, नलने अपनी स्त्रीके साथ धोखा किया और उसे अर्ध नग्नावस्थामे घोर जगल-में भटकती छोड गया। इन तीनोको मनुष्य कहा जाये कि राक्षस?

इसका उत्तर तो केवल दो व्यक्ति दे सकते है। या तो कवि अथवा वे सती-साध्वी स्त्रियाँ। मैं तो एक सामान्य मनुष्यकी दृष्टिसे देखता हूँ अत मेरे लिए तो ये तीनो पुरुष वन्दनीय है। रामकी बात तो एक ओर रख देनी चाहिए। किन्तु हम क्षण-भरके लिए ऐतिहासिक रामको अन्य दोनोकी पक्तिमें रख दे। अगर तीनो सती महिलाएँ इन महापुरुषोकी अर्धागिनियाँ न होती तो वे इतिहासमे सतीके रूपमे प्रख्यात न होती। दमयन्ती नलका ही नाम रटती रही, सीताके लिए रामके सिवा इस जगत्मे कोई दूसरा पुरुप न था और द्रौपदी धर्मराजपर क्रुद्ध होनेके बावजूद उसका साथ नही छोडती थी। जब-जब इन तीनो महापुरुषोने इन सती-साध्वियोको दु ख दिया तब-तब यदि हम उनकी हृदय-गुहामे पैठ पाते तो वहाँसे झरनेवाली दु खाग्नि हमे जलाकर भस्म कर देती। रामको जो दु ख हुआ था भवभूतिने उसका चित्रण किया है। द्रौपदीको फूलकी तरह रखनेवाले ये ही पाँच भाई थे और उसके क्रोधसे भरे वचनोको सहनेवाले भी वही लोग थे। नलने जो-कुछ किया सो अपनी भ्रान्तावस्थामें किया। नलकी पत्नीपरायणताको तो, जब वह ऋतुपर्णको साथ लेकर चला तब देवता लोग भी आकाशसे झाँक-झाँककर देख रहे थे। इन तीनो स्त्रियोके प्रमाणपत्र मेरे लिए तो पर्याप्त है। हाँ, इतना सच है कि कवियोने इन तीनो स्त्रियोको उनके पतियोकी अपेक्षा अधिक गुणी चित्रित किया है। सीता बिना राम क्या, दमयन्ती बिना नल क्या और द्रौपदी बिना धर्मराज क्या है? पुरुष स्वभावसे अधीर होते है, उनका धर्म भी प्रसगानुसार बदलता रहता है, उनकी भक्ति "व्यभिचारी" होती है। जबकि इन सतियोकी भक्ति स्फटिक मणिके समान स्वच्छ है। इन स्त्रियोकी क्षमाशीलताकी तुलनामे पुरुषकी क्षमाशीलता कुछ भी नही और चूँकि क्षमा वीरताका लक्षण है इसलिए ये सती महिलाएँ अबला नही वरन् सबला थी। उनकी वीरताके आगे पुरुषोकी वीरता पानी भरती है। लेकिन यह दोष हमे गिनना ही हो तो पुरुष-मात्रका गिनना होगा, ऐसा नही कह सकते कि वह नलादिमे ही था। कवियोने इन स्त्रियोको सहनशीलताकी मूर्तिके रूपमे चित्रित किया है। मैं इनको सती स्त्रियोमे शिरोमणि मानता हूँ, लेकिन मैं उनके पुण्यात्मा पतियोको राक्षस नही मान सकता। उनको राक्षस माननेसे क्या ये सतियाँ भी दोषी नही ठहरेगी? सतीके समीप आसुरी भावना कदापि नही रह सकती। पतियोको इन सतियोसे भले ही कम माना जाये, परन्तु उनकी जाति तो एक ही है—वे दोनो पूजनीय है। मुझे इस मान्यतामे कि "जो-कुछ पुराना है वह सब पवित्र है", जितना दोष दिखाई देता है उतना ही दोष इस विचारमें भी दिखाई देता है कि "जो-कुछ पुराना है वह सब दूषित है।"

स्त्रियोंके अधिकारोकी माँग करते हुए हमे स्त्रियोके धर्मकी बलि नही देनी चाहिए। स्त्रियोके अधिकारोका समर्थन करते हुए भी मैंने पुरातन कालके पुरुषोकी निन्दा अथवा भर्त्सना करना आवश्यक नही समझा।

अन्त्यजोंके प्रति तिरस्कार

अन्त्यजोके प्रति तिरस्कारभावके जितने उदाहरण काठियावाडमें देखनेमे आते हैं उतने गुजरातमे अन्यत्र नही। काठियावाडसे आनेवाले अन्त्यज भाई ऐसे समाचार देते है और अन्य उनकी सत्यताकी पुष्टि करते हैं। एक सज्जन लिखते हैं कि काठियावाडकी रेलगाडियोमें अन्त्यजोको अभीतक उतनी ही तकलीफें उठानी पडती है जितनी पहले उठानी पडती थी। उन्हे गाडियोमे बैठने नही दिया जाता। अगर वे बैठते है तो अन्य सवारियाँ उन्हे दूर बिठाती है, उनका तिरस्कार करती है और उन्हे गालियाँ देती हैं। यह तिरस्कार भी धर्मका एक अग माना जाता होगा, क्योकि ऐसा व्यवहार करनेवालोमे तिलकधारी भी शामिल होते हैं। यह तिरस्कार उनकी मलिनताको लेकर नही किया जाता क्योकि यदि अन्त्यज भाई तनिक झूठ बोले तो उनका काम निकल जाता है, इतना ही नही बल्कि उनका आदर-सम्मान भी किया जाता है। उन्हे बस अपनी जाति ठाकुर, राठौर अथवा ऐसी ही कोई बतानेकी जरूरत होती है। अतएव जो-कुछ तिरस्कार सहना पड़ता है सो सत्यवादीको सहन करना पडता है। अन्त्यज भाई झूठ बोलकर क्षणिक सुख प्राप्त नही करना चाहते, इसके लिए वे बधाईके पात्र हैं। ऐसा करके वे यह भी सिद्ध करते है कि वे अवगणना करनेवाले लोगोसे अधिक गुणवान हैं। यदि रेलवेके अधिकारी दयावान हो तो वे निरपराध अन्त्यजोंकी रक्षा कर सकते है। सारी सवारियाँ ही अन्त्यजोका तिरस्कार नही करती। जो लोग उनका तिरस्कार नही करते, उन्हे उनका रक्षक बनना चाहिए। अन्त्यजोको इस बातका विश्वास हो जाना चाहिए कि जो मनुष्य खादीकी टोपी पहने हुए है वह उनकी रक्षा अवश्य करेगा।

अन्त्यज स्कूलोंकी कमी

एक सज्जन लिखते है

> **भावनगरके अन्तर्गत गढ़डा, उमराला, महुवा, तलाजा और शिहोर गाँवोंमें अन्त्यज बालकोंकी संख्या इतनी है कि वहाँ अन्त्यज स्कूल स्थापित किये जा सकते हैं। महुवाके लिए तो बम्बईके एक सज्जन खर्च देनेके लिए भी तैयार हैं; लेकिन कोई स्थानीय सज्जन ऐसी व्यवस्थाके लिए तैयार नहीं है इसी कारण स्कूल खोलनेकी बात मुलतवी कर दी गई है।**

क्या महुवा और अन्य गाँवोमे कोई मनुष्य व्यवस्था करनेके लिए भी तैयार नही है? यदि उन गाँवोमे ऐसे लोग नही है तो क्या काठियावाडके अन्य भागोके स्वयसेवक इसके लिए तैयार न होगे?

करुणाजनक

धोलका ताल्लुकेसे प्राप्त निम्नलिखित विवरण पढकर पाठकोको दु ख होगा [1]

अच्छे दाम मिलते है इस कारण सब कपास अथवा सब अनाज बेच डालना अपने हाथो दु.ख मोल लेना है। मनुष्य इस तरह आये हुए पैसेकी रक्षा भी नही कर सकता और इसलिए अन्तमे उसके हाथमें 'मिट्टीकी-मिट्टी' ही रह जाती है। उसे कमसे-कम अपने उपयोगके लिए पर्याप्त कपास और अनाज अवश्य रखना चाहिए।

सहानुभूतिका अभाव

इसी ताल्लुकेकी दशाका एक और चित्रण नीचे दिया जाता है -[2]

सारा दु ख 'वहाँसे चला आया' मे समाहित है। हम कुटुम्बकी भावनासे अधिक आगे नही बढे है, इसलिए गाँवके स्वार्थमे अपना स्वार्थ नही देखते। मलाबारके दु खसे हम सब दु खी नही होते। सारी जनताके विषयमें कुटुम्बकी भावनाका प्रसार करनेमें मात्र उपदेश बहुत कम प्रभावकारी होगा। आरम्भ भले ही उपदेशसे किया जाये, लेकिन इतना ही पर्याप्त नही है। बीज बोने-भरसे ही वृक्ष तैयार नही हो जाता। उसे खाद और पानीकी जरूरत होती है और जबतक वह बडा नही हो जाता तबतक बाडकी आवश्यकता भी रहती है, नही तो सारा प्रयास निष्फल हो जाता है। ठीक यही बात उपदेशके सम्बन्धमे भी लागू होती है। इसीलिए जब हर गाँवमें बैठकर, प्रत्यक्ष कार्यकी मार्फत गाँवोमे जागृतिका प्रयास किया जायेगा तभी हमें सफलता मिलेगी। यदि हमारा उद्देश्य केवल चन्दा उगाहना है तो अलग बात है। लेकिन जब हम लोगोके हृदयोमे प्रवेश करना चाहते हैं, जब उनसे हम सूत प्राप्त करना चाहते हैं तब हमें गाँवोमें जाकर रहना ही पडेगा। जनताके विरुद्ध शिकायत करनेकी बजाय यदि हम अपनी कार्य-दक्षताकी त्रुटिको देख ले तो प्रगति जल्दी हो।

परदेशी बनाम स्वदेशी खाँड

एक सज्जन लिखते है कि मैने इस बारेमें विस्तारसे चर्चा नही की है कि "किस खाँडको शुद्ध मानना चाहिए, और किस खाँडको विदेशी मानना चाहिए?" स्वदेशी खाँडको शुद्ध करनेके लिए हड्डियो आदिका इस्तेमाल नही किया जाता, यह माननेका कोई कारण नही है। हिन्दुस्तान प्रतिवर्ष १८ करोड रुपयेकी खाँड विदेशोसे मँगवाता है। मुझे नही लगता कि वह अपनी इतनी खाँडकी आवश्यकता थोडे अर्सेमे खुद ही पूरी कर सकता है। मैं स्वय तो अधिकतर खाँडका उपयोग नही करता। जहाँतक पोषणका सवाल है, इसकी जरूरत बहुत कम है। हमे जितने पोषणकी जरूरत है उतना मीठे फलोसे मिल जाता है। खाँडका इस्तेमाल करनेका उत्तम तरीका गन्ना

१. यह यहाँ नहीं दिया गया है। इसमें कहा गया था कि किसान पैसेके लिए अपनी तमाम पैदावारको बडी तेजीसे बेच रहे हैं

२. यह यहाँ नहीं दिया गया है। लेखकने लिखा था कि लोग अपने लिए पीनेके पानीका कुँआ बनानेके बारेमें भी उदासीन हैं, अत: "मैं ऊबकर वहाँसे चला आया"।

चूसना है। जब गन्नेका मौसम न हो तब हमे गुडका उपयोग करना चाहिए। यदि तिसपर भी किसीका काम न चले तो उसे स्वदेशी खाँडकी खोज करनी चाहिए किन्तु उसमे दूकानदार द्वारा मिलावट किये जानेकी जोखिम तो उठानी ही होगी।

काठियावाड़में खादी-प्रचार

श्री एम्हर्स्टने 'विश्वभारती' मे काठियावाडकी शोचनीय दशाका जो वर्णन किया है, उसे मैंने अभी-अभी पढा। उसमे वे कहते हैं कि काठियावाडके जंगलोका नाश होनेकी वजहसे वहाँकी जमीनमे खुश्की बढती जा रही है और अकालका भय भी बढ रहा है। चरागाह कम हो रहे हैं, इसलिए जो पशु कभी स्वस्थ दिखाई देते थे उनका भी नाश होता जा रहा है। शहरोमे कारखाने खुलनेके कारण गाँवोकी आबादी कम होती जा रही है और अन्तमे किसानोके यहाँ न रहनेसे शहर भी नष्ट हो जायेंगे। ऐसे परिवर्तनोके कारण काठियावाडकी कला भी श्रीहीन होती जा रही है।

यह लगभग भविष्यवाणी है। यह बात जिस हदतक काठियावाडपर लागू होती है, उसी हदतक हिन्दुस्तानपर भी लागू होती है। लेकिन काठियावाड बहुत छोटा-सा प्रायद्वीप है, इस कारण अभी उसकी रक्षा की जा सकती है। इसीसे श्री एम्हर्स्ट वर्तमान सक्रान्तिकालमे भूत और भविष्य दोनो स्थितियोको एक साथ देख सके हैं। मैंने अनेक बार लिखा है कि वर्तमान [यन्त्रोद्योग-प्रधान] प्रवृत्ति उन्ही देशोमे निभ सकती है जहाँ दूसरे देशोसे कच्चा माल आता हो। दूसरे शब्दोमे एक औद्योगिक देश किसी दूसरे देशको नुकसान पहुँचाकर ही समृद्ध हो सकता है। हिन्दुस्तानका निर्वाह दूसरे देशोसे नही होता बल्कि वह स्वय इग्लैड और अन्य देशोका खाद्य है। अगर हमारे शहर भी इन देशोका अनुकरण करेगे तो ग्रामीण किसानोपर दूना बोझ आ पडेगा।

काठियावाड कुछ हदतक ऐसी भयकर स्थितिसे बच सकता है। वह घर-घर वृक्ष बोये और उगाये, गोचर-भूमिको बढाये तथा मिलो और फैक्टरियोकी प्रवृत्तिको कम करे। छोटेसे-छोटे प्रदेशमे मिले और फैक्टरियाँ लोगोपर असह्य भारस्वरूप हैं, इस बातको तो सामान्य कोटिका गणितज्ञ भी समझ सकता है। यदि राजा लोग और उनके दीवान शान्त चित्त होकर परोपकारकी भावनासे विचार करे तो उन्हे मालूम होगा कि किसानोके पोषणमे उनका पोषण भी है। किसानोके पोषणमे केवल दो वस्तुओकी सावधानी रखनी पडती है उनके खेत हरे-भरे रहे और उन्हे खेतीसे बचे समयके लिए उद्योग मिले। यह उद्योग सम्पूर्णत रुईकी क्रियाओपर आधारित होनेके कारण किसानोके घरमे होता है। इसका केन्द्रबिन्दु चरखा है। उसको जो पोषित करता है वह प्रजाका पोषण करता है। काठियावाडमे विदेशी अथवा मिलका कपडा आये, यह बात असह्य होनी चाहिए।

अमरेली खादी-कार्यालय

आजकल चरखेकी प्रवृत्तिका प्रसार करनेके जो प्रयत्न चल रहे है उसमे काठियावाड़ भी भाग ले, यह वाछनीय है और मै उससे ऐसी आशा भी रखता हूँ। इसलिए

अमरेलीके खादी-कार्यालयने जो पत्रिका प्रकाशित की है उसका मैं स्वागत करता हूँ। जो व्यक्ति कपाससे सम्बन्धित सभी क्रियाओको सीखना चाहता हो अथवा जो सूत कातकर काग्रेसको चन्दा देना चाहता हो उसके लिए इस पत्रिकामे सारी सुविधाओकी जानकारी दी गई है। जो चाहे उसके लिए तालीमकी व्यवस्था भी की गई है। मुझे उम्मीद है कि बहुतसे काठियावाडी भाई-बहन इन सुविधाओसे लाभ उठायेगे। इतना याद रखनेकी जरूरत है कि काग्रेसके प्रस्तावका उद्देश्य जनताके मध्यम वर्गसे धार्मिक क्रियाके रूपमें कताई करवाना है। यदि यह प्रयास फलीभूत हो तो कताई-धर्मका पालन फिर होने लगे और गरीबोके पेटमे जो गड्ढा पड़ गया है वह भी भरे। इस तरह चरखेका घर-घरमे प्रचार तभी होगा जब पहले उसके प्रति लोगोमे श्रद्धा उत्पन्न कर दी जायेगी। यह श्रद्धा तभी उत्पन्न हो सकती है जब जनताका मध्यम वर्ग उसे धर्मके रूपमे अगीकार करे। जितनी जरूरत चरखेको लोकप्रिय बनानेकी है उतनी ही खादीको भी लोकप्रिय बनानेकी है। हिन्दुस्तानमें जब यह स्थिति आयेगी कि घीके समान खादीको बेचनेमें भी कोई दिक्कत न हो, उसी दिन समझना चाहिए कि हिन्दुस्तानसे भुखमरी चली गई। इस महायज्ञमें काठियावाड पूरा-पूरा योगदान दे, ऐसी मेरी कामना है। इस यज्ञकी यह खूबी है कि जो इसे करता है उसे तात्कालिक लाभ मिलता है। यदि छब्बीस लाख काठियावाडी प्रति व्यक्तिके हिसाबसे एक रुपयेकी मजदूरी करे तो काठियावाड प्रतिवर्ष छब्बीस लाख रुपया बचायेगा।

खादी-कार्यालयके कार्यकर्त्ताओको मेरी सलाह है कि वे अपने कामके सम्बन्धमें तनिक भी निराश न हो। इस समय देशमें निराशा और अश्रद्धा घर कर गई दिखाई पडती है। ऐसे समयमें यदि थोडी-सी भी दृढतासे काम लिया गया तो निराशाके बादलोको छँटते देर नही लगेगी।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १७-८-१९२४

६. गांधीजीके लिए या देशके लिए?

एक मित्र कहते हैं कि आजकल गाधीजीके नामसे विद्यार्थियोको कातनेके लिए जोर देकर कहनेका एक रिवाज-सा पड़ गया है। वे पूछते हैं कि क्या यह ठीक है?

जबतक मैं देशके लिए और देश ही के लिए कार्य करता रहूँ, तबतक इस प्रकारकी अपील खास परिस्थितिमे और कुछ हदतक अनुचित नही है। मेरे लिए कातनेकी अपील, देशके लिए कातनेकी अपीलसे अधिक सीधा असर पहुँचा सकती है। फिर भी इसमे कोई शक नही कि सबको देशके लिए कातना ही उचित है। अपने लिए उसके आदर्श अर्थमें कातना और भी अच्छा है। क्योकि हरएक कार्यकर्त्ता जो देशके लिए कार्य करता है, वह अपने लिए भी कार्य करता है। जो सिर्फ अपने लिए काम करता है, वह अपना ही नुकसान करता है। हमारा लाभ देशके लाभके अनुकूल होना चाहिए। वह उससे जुदा न हो जाना चाहिए। जो लोग केवल दिखानेके

लिए कभी-कभी कातते हैं और फिर बन्द कर देते हैं, वे आँखोमे धूल झोकनेका ही प्रयत्न करते है।

हिन्दी नवजीवन, १७-८-१९२४

७. क्षमा-प्रार्थना

'हिन्दी नवजीवन' का तीसरा वर्ष आज पूरा होता है। मुझे कहते हुए रंज होता है कि मै 'हिन्दी नवजीवन' के लिए स्वतन्त्र लेख बहुत न लिख सका। पाठक इस बातको माने कि इसका कारण अनिच्छा नही, बल्कि समयका अभाव है और इसके लिए वे मुझे क्षमा करे।

'हिन्दी नवजीवन' अबतक स्वावलम्बी नहीं हुआ है। मैंने एक समय जाहिर किया है कि किसी अखबारको नुकसान उठाकर चलाना प्रजाकी दृष्टिसे अच्छा नही है। 'हिन्दी नवजीवन' केवल सेवा-भावसे ही निकलता है। इसीलिए प्रत्येक पाठक उसपर अपना स्वामित्व समझे और उसे स्वावलम्बी बनानेकी कोशिश करे। अब २,७०० प्रतियाँ बिकती है। स्वावलम्बी बननेके लिए कमसे-कम ३,००० प्रतियाँ बिकनी चाहिए। मै आशा करता हूँ कि पाठकगण कोशिश करके इस कमीको दूर करेगे।

हिन्दी नवजीवन, १७-८-१९२४

८. पत्र : अजमेरके यातायात अधीक्षकको

पता : आश्रम
साबरमती
१८ अगस्त, १९२४

सेवामे
यातायात अधीक्षक
अजमेर

महोदय,

पिछले शनिवार अर्थात् इसी महीनेकी १६ तारीखको मैंने द्वितीय श्रेणीमे अहमदाबादसे दिल्लीकी यात्रा की थी। मेरे साथ तीन परिचारक थे, जिनके पास तृतीय श्रेणीके टिकट थे। इनमे से एक अहमदाबादके उप-स्टेशनमास्टरकी अनुमतिसे तथा मेरे अस्वस्थताके प्रमाणपत्रके आधारपर मेरे साथ मेरे डिब्बेमे ही बैठा सफर कर रहा था। दो वर्ष पूर्व अपने कारावासके पहले मै आपकी तथा दूसरी भारतीय रेलवे लाइनोपर इसी प्रकार यात्रा किया करता था। एक बार जी० आई० पी० के[1] एक

१. ग्रेट इंडियन पेनिनसुला रेलवे।

टिकट निरीक्षकने एतराज किया था। तबतक मैं अपने पास डाक्टरी प्रमाणपत्र नही रखता था, क्योकि मेरा शरीर देखकर ही मेरी अस्वस्थताका पता चल जाता था। परन्तु इस अवसरपर जी० आई० पी०के यातायात अधीक्षकने मेरा ध्यान उस नियमकी ओर आकृष्ट किया जिसके अन्तर्गत उच्च दरजेके बीमार यात्रीके साथ निचले दर्जेके परिचारक यात्रीको चलनेकी अनुमति है और तबसे मैं अपने साथ डाक्टरी प्रमाणपत्र रखने लगा। इसलिए इस बार भी मैंने अहमदाबादके स्टेशन अधिकारियोके समक्ष प्रमाणपत्र प्रस्तुत किया — जिसकी प्रतिलिपि यहाँ सलग्न है।

१७ तारीखको जब हम दिल्ली स्टेशनपर उतरे तो एक टिकट कलेक्टरने, जिसको यह बतला दिया गया था कि एक परिचारकने जिसके पास तृतीय श्रेणीका टिकट था मेरे साथ द्वितीय श्रेणीमें यात्रा की है, मय जुर्मानेके, अतिरिक्त किरायेकी माँग की। मेरे परिचारकने उप-अधीक्षकको उन परिस्थितियोके बारेमे बतलाया, जिनके कारण उसे मेरे साथ द्वितीय श्रेणीमे यात्रा करनी पडी थी। वह डाक्टरी प्रमाणपत्र दिखलानेके लिए और उस नियमको भी पढकर सुना देनेके लिए तैयार था, जिसके अनुसार ऊँचे दर्जेके यात्रीको अपने साथ उसी डिब्बेमें तृतीय श्रेणीके टिकटपर एक परिचारकको ले जानेका अधिकार प्राप्त है। (कोचिंग टैरिफ, पार्ट १, पैरा ६९ से उसकी एक प्रतिलिपि लेकर उसने अपने पास रख ली थी)। मुझे यह बताया गया है कि उसने उसको देखा तक नही। इसके बाद उप-अधीक्षकके द्वारा स्टेशन अधीक्षकसे मिलनेकी कोशिश की गई; पर उसने मेरे परिचारकसे मिलनेसे ही इनकार कर दिया। मैं इस व्यवहारको अत्यन्त अशिष्टतापूर्ण मानता हूँ। झगडेको बचानेके लिए मेरे परिचारकने विरोधके साथ २३ रु० अदा कर दिये। मैं उसकी रसीद यहाँ नत्थी कर रहा हूँ और अब आपसे निवेदन करता हूँ कि उपर्युक्त कारणोके आधारपर आप इन रुपयोको लौटा`की कृपा करे।

आपका विश्वस्त,
मो० क० गांधी

सलग्न :

१ अस्वस्थताका डाक्टरी प्रमाणपत्र
२. अतिरिक्त किरायेका टिकट न० ए–९०२५७

अंग्रेजी पत्र (एस० एन० १०१२०) की फोटो-नकलसे।

९. तार : एन० एच० बेलगाँववालाको[1]

[१९ अगस्त, १९२४ या उसके पश्चात्]

कोई समझौता[2] नही। मोतीलालके[3] साथ हुआ पत्र-व्यवहार भेज रहा हूँ। तेईस तारीखको अहमदाबाद पहुँच रहा हूँ।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २३-८-१९२४

१०. टिप्पणियाँ

पहली किस्त

अ० भा० कांग्रेस कमेटीके कताई सम्बन्धी प्रस्तावके[4] जवाबमे सूतकी जो पहली किस्त मिली है, उसका विश्लेषण करते हुए मुझे खुशी हो रही है। मै चाहता हूँ कि पाठक भी उसमे शरीक हो। अभीतक तो गुजरातके भेजे हुए सूतका हिसाब ही मुझे मिला है, क्योकि अ० भा० खादी बोर्डका प्रधान कार्यालय अहमदाबादमे है। जिन प्रतिनिधियोके लिए सूत भेजना लाजिमी है उनकी सख्या ४०८ है। उनमे से सिर्फ १६९ प्रतिनिधियोने सूत भेजा है अर्थात् फी सैकडा ४२ लोगोने अपने जिम्मेका सूत भेजा है और ५८ लोगोने नही भेजा। कहा जाता है कि जिन्होने अपने जिम्मेका सूत नही भेजा वे नौसिखिया है। किन्तु यह कारण ठीक नही है। श्री तैयबजी और श्री वल्लभभाई नौसिखिया होनेपर भी निश्चयपूर्वक काम करनेके कारण ५,००० गजसे भी अधिक सूत भेज सके हैं। इसलिए मुझे आशा है कि दूसरे महीनेमे सब प्रतिनिधि अपना-अपना सूत अवश्य भेज देगे। जिन व्यक्तियोने प्रतिनिधि न होनेपर भी सूत भेजा है उनकी सख्या सूत न भेजनेवाले प्रतिनिधियोकी सख्यासे भी अधिक है, क्योकि गुजरातमे कुल मिलाकर ६७२ लोगोंने अर्थात् ५०३ गैर-प्रतिनिधियोने सूत भेजा है। यह सख्या सचमुच उत्साहवर्धक है। थोडे और सगठनसे और अधिक अच्छा नतीजा दिखाई देगा। सच तो यह है कि यदि त्याग-

१. यह तार बेलगाँववालाके १९ अगस्तके निम्नलिखित तारके उत्तरमें भेजा गया था :

"अखबारोंमें बहुत उत्तेजनापूर्ण बयान। श्रीमती नायडूको समझौता करनेका अधिकार दिया जा रहा है। आंग्ल-भारतीय अखबार कांग्रेससे आपके अलग होनेका अनुमान लगा रहे हैं। अपना दृष्टिकोण तारसे सूचित करें।"

२. स्वराज्यवादियोंके साथ।

३. मोतीलाल नेहरू।

४ देखिए "पहली परीक्षा", २४-८-१९२४।

भावसे कातनेका यह आन्दोलन फैल जाये तो महीने-दर-महीने उसका बडा आश्चर्य-कारी फल दिखाई देगा। इनमे से किसी भी व्यक्तिने ३,००० गजसे कम सूत नही भेजा है। वहुतोने ५,००० गज भेजा है। एक सज्जनने तो ४३,००० गज भेजा है। यह वहुत बडा काम है। सूत भी वरावर अच्छा और बटदार है। पाठकोको यह न समझना चाहिए कि सूत कातना उनका पेशा है। उन्हे बहुत थोडे समयका ही अभ्यास है। एक दूसरे सज्जनने १२,००० गज सूत दिया है। उन्होने २४,००० गज काता था। लेकिन १२,००० गज खुद अपने उपयोगके लिए रख लिया है। एक तीसरे सज्जनने यद्यपि काता तो है २७,००० गज पर भेजा है ११,००० गज ही। ये दोनो कार्य-व्यस्त प्रतिनिधि है और वडी जिम्मेवारीके पदोपर है। हर रोज बगैर तीन घटे काते वे इतना अधिक सूत नही भेज सकते थे। उनका कहना है कि हमारे सुपुर्द जो दूसरा काम है हमने उसको नुकसान पहुँचाकर यह सूत नही काता। उनके इतना काम कर सकनेका कारण यह है कि वे सुवह जल्दी उठ बैठते है और अपने एक-एक मिनटका हिसाव रखते है। एक युवकने ४६,००० गज सूत काता है, किन्तु सिर्फ उतना ही भेजा है जितना कमसे-कम माँगा गया था। वह अधिक नही भेज सकता था। मै यह भी कह देता हूँ कि वहुतोने ३,००० गजसे अधिक सूत काता है लेकिन वे खुद अपने कपडेके लिए भी कातते है और इसलिए कमसे-कम जितना माँगा गया उससे अधिक नही भेज सकते। जिलोके हिसावसे खेडा जिलेका नम्वर पहला है और पचमहालका आखिरी।

अली भाइयोंका हिस्सा

वडे भाईने खूव प्रयत्न किया लेकिन वे सिर्फ एक तोला खराब कता हुआ सूत ही भेज पाये है। यदि पाठकोकी तरफसे मुझपर इन भाइयोके प्रति पक्षपात रखनेका दोष लगाये जानेका भय न होता तो मै यह कहता कि जो हमेशा घूमता-फिरता रहता है और जिसका शरीर कातनेके लिए लगातार वैठे रहने योग्य नही, उसके लिए यह कुछ वुरा नही। फिर भी मौलाना शौकत अलीने मुझे यह यकीन दिलाया है कि वे अगले महीने अपना हिस्सा पूरा-पूरा भेज देगे। मौलाना मुहम्मद अलीने कुछ अधिक किया है। उनकी वात उन्हीके मुँहसे सुन लीजिए.

> मै, शौकतके साथ कांग्रेसके सभापतिके कातनेकी कोशिशका जो-कुछ भी मामूली-सा नतीजा निकला है, भेज रहा हूँ। मेरे कातनेकी कहानी इस तरह है। मैने जिन्दगी-भरमें एक वार भी सूत नहीं काता था किन्तु अहमदाबादके बाद मैने तय किया कि जिस रोजसे मै दिल्लीमें पक्की तरहसे रहने लगूंगा उसी दिनसे कातना शुरू कर दूंगा। लगातार सफर करनेके बाद मुझे बीमारीने घेर लिया। लेकिन दूसरी अगस्तको बहुत दिनो बाद मे आखिर कातने बैठ ही गया। दो और तीन अगस्तको जो-कुछ भी काम किया उसका नतीजा है बराबर न कते हुए खराब सूतकी दो आँटियाँ, लेकिन उसमें से कुछ तो मेरी स्त्रीका काता हुआ है जो मुझे कातना सिखा रही थी और फिर कुछ आरिफ

हस्वीका भी। मुझे कताई सिखानेमें कुछ हिस्सा इनका भी है। ४ तारीखको मैंने तीसरी आँटी काती, लेकिन कितने गज सूत काता यह गिनना ही भूल गया। मेरा खयाल है कि वह ११० गज होगा। ५, ६, ७ तारीखको मैंने ३०० गज काता और उसके बाद मुझे माताजीको देखनेके लिए रामपुर जाना पड़ा। मुझे बड़ा अफसोस है कि जानेकी हड़बड़ी और जल्दबाजीके कारण मेरा चरखा पीछे रह गया। वहाँसे लौटनेके बाद १५० गजके करीब फिर काता लेकिन हिन्दू-मुस्लिम समझौता कराने, माँकी बीमारी और खुद मेरे पैरकी वजहसे — जिसका एक फोड़ा अभी अच्छा नहीं हो पाया है कि दूसरा निकल आया है — मैं काममें बड़ा उलझा रहा। आखिरकी चौथी आँटीमें ४६२ गज सूत है। यह चार दिनका काम है। मैं आपसे वादा करता हूँ कि खुदाने चाहा तो १५ सितम्बरतक सिर्फ २,००० गज ही न कातूंगा बल्कि अगस्तकी कमीको भी पूरा कर दूंगा। तबतक क्या आप कामके बजाय कामकी इच्छाको ही कबूल कर लेंगे?

जो हमेशा सफरमे रहता है और बीमार रहता है, उसके लिए यह बहुत है। लेकिन मै यह जानता हूँ कि अपने अनुयायियोसे काम लेनेकी आशा रखनेके पहले सभापतिको खुद अपने काममें नियमित रहना और उसपर खूब ध्यान देना चाहिए। अली भाई सिर्फ काग्रेसके ही नही, मुसलमानोके भी प्रतिनिधि है। सब तरफसे यही आवाज उठती है कि मुसलमान काग्रेसके कार्यक्रमके प्रति कोई उत्साह नही दिखाते। उनको उनके कर्त्तव्यके प्रति जागरूक बनानेके लिए बडे प्रयत्नकी आवश्यकता है। कातनेमे यदि मुसलमान हिन्दुओकी बराबरी करने लगे तो उसका असर हिन्दुओपर भी पडेगा। तब विदेशी कपडेका बहिष्कार सफल होगा और उसके फलस्वरूप प्रजाको आर्थिक मुक्ति मिल जायेगी। आर्थिक मुक्तिसे आत्मविश्वास प्रकट होगा और आत्म-विश्वाससे स्वराज्य अवश्य ही प्राप्त होगा।

आचार्य गिडवानी

ऐसा बताया जाता है कि नाभा जेलमे आचार्य गिडवानीका वजन ३० पौंड कम हो गया है और श्रीमती गिडवानीके बार-बार लिखकर पूछनेपर भी कि वे अपने पतिसे कब मिल सकेंगी, कोई उत्तर नही मिला है। यह उदासीनता हृदयहीन है। राज्यके प्रशासक महोदय कमसे-कम आचार्य गिडवानीके स्वास्थ्यके बारेमे नियमित रूपसे बुलेटिन जारी कर सकते हैं, जिससे जनताको उनकी तन्दुरुस्तीका सही हाल मालूम हो सके। यह समझना भी बड़ा मुश्किल है कि श्रीमती गिडवानीको जितनी मर्तबा वे चाहे उनके पतिसे क्यो नही मुलाकात करने दी जाती। मेरी उनके साथ सहानुभूति है। लेकिन मै जानता हूँ कि वे बहादुर पतिकी बहादुर पत्नी है। मै सिर्फ उनको यही सलाह दे सकता हूँ कि वे किसी बातकी भी चिन्ता न करे और विश्वास रखे कि मनुष्यकी अपेक्षा ईश्वर उनके पतिकी सँभाल अधिक अच्छी तरह रख सकता है। उन्हे और हमे यह महसूस करना चाहिए कि सत्याग्रही और असहयोगी होनेके

नाते हम ऐसे ही बरतावकी आशा रख सकते है जैसा बरताव उनके और उनके पतिके साथ किया गया है। यदि आचार्य गिडवानी अपने सिद्धान्तको छोड दे तो उन्हे आज ही रिहाई मिल सकती है। उन्हे सिर्फ नाभाकी सीमामें पैर रखनेके अपने वीरोचित और मानवीय कार्यके लिए माफी माँगनी पडेगी। बस वे छोड दिये जायेंगे। किन्तु वे ऐसा न करेगे। सत्याग्रहियोका तो धर्म ही है कि अपमानजनक स्वतन्त्र जीवनकी बजाय वे कैद को ही पसन्द करते है।

मन्दिरोकी पवित्रताका भंग

यदि मुरादाबादके जिला मजिस्ट्रेटकी विज्ञप्तिपर विश्वास किया जाये तो उसमें जो समाचार प्रकाशित हुए है वे बडे ही गम्भीर और चिन्ताजनक है। कहा जाता है कि दो मन्दिर अपवित्र किये गये और वहाँ एकत्र हिन्दुओको बुरी तरह पीटा गया। मन्दिरोको इस प्रकार महज दुष्टतावश अपवित्र करनेका कोई कारण नही बताया गया है। कहा जाता है कि जिला लखनऊमे अमेठी नामक स्थानपर भी ऐसी ही घटना हुई है। कहते है वहाँ मजिस्ट्रेटके हुक्मके खिलाफ हिन्दुओने शख फूंके। यदि उन्होने ऐसा किया तो यह काम मस्जिट्रेटका था कि वह उन शख बजाने-वालोको सजा देता। किन्तु मुसलमानोका यह काम हरगिज न था कि वे एक बड़ी तादादमे मन्दिरमे घुस जाते और हमला करते और उसे अपवित्र कर देते। इसमें कोई शक नही कि ऐसी घटनाओके पीछे कोई सगठित जमात है। यह जमात उन लोगोकी है जो जान-बूझकर हिन्दू-मुसलमानोमे मनमुटाव पैदा करते है और हिन्दू-मुस्लिम एकतामे बाधा डालते है। समझमें नही आता कि ऐसे काम करनेसे उस जमातको क्या हासिल होगा। इससे इस्लामकी इज्जत नही बढ सकती और वह लोकप्रिय नही हो सकता। यदि किसी दुनियावी लाभके लिए ऐसे काम किये जाते है तो वह भी नही मिल सकता। यदि ऐसे उपायोसे इस जमातके सगठनकर्त्ता सरकारी कृपा पानेकी आशा रखते हो तो उनका यह भ्रम थोड़े ही दिनोमें दूर हो जायेगा।

नेटालके भारतीय

नेटाल सरकारने एक अध्यादेश पास करके वहाँ रहनेवाले हिन्दुस्तानियोको नगरपालिकाके चुनावोके मताधिकारसे बचित कर दिया है। वहाँके हिन्दुस्तानियोने इसके प्रति विरोध प्रकट करते हुए एक करुणाजनक तार भेजा है। इस लडाईकी शुरुआत १८९४ में हुई थी। अन्तत इस झगडेका फैसला वहाँ बसनेवाले हिन्दुस्तानियोके हकमें हो गया था। तत्कालीन नेटाल सरकारने इस बातको कबूल किया था कि हिन्दुस्तानी कर-दाताओके नगरपालिका मताधिकारको छीनना अत्यन्त अन्यायपूर्ण होगा। अलबत्ता, वहाँके हिन्दुस्तानियोने राजनैतिक मताधिकारसे वस्तुत वचित रहना तो कबूल कर लिया था। परन्तु कोई सरकार जब किसी नीति या सिद्धान्तको बदलना चाहती है तब पिछले वचन या प्रतिज्ञाएँ उसके रास्तेमे बाधक नही बनती। दक्षिण आफ्रिकाके हिन्दुस्तानियोके इतिहासमे हमने इसके अनेक उदाहरण देखे है। मौका

पडते ही, उन्हे दिया गया प्राय हर आश्वासन तोडा गया है। नेटाल-स्थित हमारे देशभाई इस हुक्मसे बडे पसोपेशमे पड़ गये है। उन्होने हिन्दुस्तानकी जनतासे करुण स्वरमे सहायता माँगी है। पर वे शायद यह नही जानते कि उन्हे कोई वास्तविक सहायता देनेकी सामर्थ्य हममे नही है। हाँ, हमदर्दी तो है ही। अखबारोमे लेख भी उनके लिए लिखे जायेंगे, पर मुझे अन्देशा है कि इससे अधिक सहायता उन्हे नही मिल पायेगी। यदि भारत सरकार, शर्मके कारण उनके सिरपर मँडरानेवाली इस लूट-खसोटसे उन्हे बचानेके लिए कुछ करना चाहे तो सचमुच कारगर कदम उठा सकती है। मै इसे 'सिरपर मँडरानेवाली' इसलिए कह रहा हूँ कि इस अध्यादेशके लिए दक्षिण आफ्रिका सघके गवर्नर-जनरलकी मजूरी जरूरी होती है। पहले एक बार वे एक ऐसे ही अध्यादेशको नामजूर कर चुके है। अगर अपने विशेषाधिकारका प्रयोग करे तो वे इस अध्यादेशसे हिन्दुस्तानियोका जो अपमान होगा उससे उन्हे बचा सकते है। जब श्रीमती सरोजिनी नायडू दक्षिण आफ्रिकामे अपना गौरवशाली कार्य कर रही थी तब जितने पत्र वहाँसे आते थे उनमे मै अपने देश-भाइयोको उसपर बडी-बडी आशाएँ लगाते हुए देखता था। परन्तु दक्षिण आफ्रिकाके यूरोपीय जहाँ सभ्यतासे व्यवहार कर सकते है, वहाँ वे अपने इरादोको पूरा करनेका निश्चय भी रखते है — फिर भले ही वह सरासर अन्याय हो — जैसा कि यह मामला है। जनरल स्मट्सकी देख-रेखमे उन्होने मीठी-मीठी बाते करके अन्याय करते जानेकी कला सीख ली है। इसका आखिरी इलाज तो खुद हमारे देश-भाइयोके ही पास है।

केनियाका फैसला

केनियाके भारतीयोके बारेमे उपनिवेश-मन्त्रीकी घोषणा बहुत चतुराई भरी है। पढनेपर वह बिलकुल निर्दोष मालूम होती है लेकिन इस घोषणाने केनियाके हमारे देशवासियोसे लगभग वह सब छीन लिया है जिसके लिए वे सघर्षकर रहे थे। श्री टामसने आव्रजन कानूनका विचार त्याग दिया है। इससे कोई फर्क नही पडता। इस कानूनको बनानेकी कोई जल्दी भी नही थी। अन्य मुद्दोपर प्रतिकूल निर्णय होनेके कारण आव्रजन अपने-आप ही कम हो जायेगा। भारतीय लोग पहाडी क्षेत्रोमे भू-सम्पत्ति रखनेके अधिकारको बरकरार रखनेकी माँग कर रहे थे। उनकी माँग सामान्य मताधिकारमे बराबरीके दर्जेके लिए थी। वे न्यायोचित ढगसे सघर्ष करनेका अधिकार चाहते है, दयाकी भीख नही चाहते। उक्त घोषणा उन्हे केनियाके सबसे स्वास्थ्यवर्धक भागमें भू-सम्पत्ति रखनेके अधिकारसे वचित कर देती है। उसमे जातिगत मताधिकार देनेकी व्यवस्था है, जिसका वास्तवमे यह अर्थ है कि हमारे देशवासियोकी कोई प्रभावकारी राजनीतिक शक्ति नही रह जायेगी। यह सघर्ष कई वर्षोसे चल रहा है। पिछले वर्ष नरमदलीय और अन्य विचारधाराओके भी सब भारतीय एक हो गये थे। उन्होने ब्रिटिश मालके बहिष्कारकी भी घोषणा कर दी। लेकिन ब्रिटिश मालके आयातपर कोई प्रभाव नही पडा और केनियाके भारतीयोको अपने आन्दोलनसे कोई लाभ नही हुआ। हमारे पास शक्ति नही है, बल्कि यह कहना ज्यादा ठीक होगा कि हमारे पास जो शक्ति है, हम नही जानते कि उसका उपयोग कैसे करे। पाठकोको

केनिया और नेटालका भेद समझ लेना चाहिए। नेटालको उपनिवेशका दर्जा मिल चुका है पर केनियाको अभीतक नही मिला। नेटालका निर्णय स्थानीय विधान-मण्डलका निर्णय है। अत वहाँ अब भी राहत पानेकी आशा है। केनियामे इस समय जो फैसला हुआ है वह साम्राज्य सरकारका फैसला है, अत वह लगभग अन्तिम है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २१-८-१९२४

११. बोल्शेविज्म या आत्म-संयम?[1]

दो अमेरिकी मित्रोने मुझे बडे भावावेशमे एक पत्र लिखा है। वे कहते है कि मै धर्मके नामपर शायद भारतमें बोल्शेविज्मका प्रचार कर रहा हूँ, जो न तो ईश्वरको मानता है, न नैतिकताको और स्पष्टत नास्तिक है। वे कहते है कि मुसलमानोकी और आपकी मैत्री एक नापाक मैत्री है और दुनियाके लिए एक खतरा है, क्योकि वे कहते है, आज मुसलमान बोल्शेविक रूसकी सहायतासे पूर्वी देशोमे अपना प्रभुत्व जमानेकी फिक्रमे है। मेरे ऊपर यह आरोप इससे पहले भी लगाया गया है, पर अबतक मैने उसपर कोई ध्यान नही दिया। पर अब तो जिम्मेवार विदेशी मित्रोने शुद्ध भावसे यह इलजाम लगाया है, इसलिए मेरी समझमे इसपर विचार करनेका समय अब आ पहुँचा है। सबसे पहले तो मै यह स्वीकार करता हूँ कि मुझे पता नही बोल्शेविज्मके मानी क्या है? मै इतना ही जानता हूँ कि इस मामलेमें दो परस्पर विरोधी दल है—एक तो उसका बड़ा भद्दा और काला चित्र खीचा करता है और दूसरा उसे ससारकी तमाम दलित-पतित और पीडित जातियोके उद्धारका आन्दोलन बताता है। अब मै नही कह सकता किसकी बातपर विश्वास करना चाहिए। मै तो इतना ही कह सकता हूँ कि मेरा आन्दोलन नास्तिक नही है। वह ईश्वरको नही नकारता। वह तो उसीके नामपर शुरू किया गया है और निरन्तर उसकी प्रार्थना करते हुए चलाया जा रहा है। निस्सन्देह, वह एक जन-आन्दोलन है। परन्तु वह जनतातक उसके हृदयके द्वारा, उसकी धर्मबुद्धिको जगाकर ही पहुँचना चाहता है। यह आन्दोलन है क्या? यह तो एक प्रकारसे आत्म-सयमकी प्रक्रिया है और यही कारण है कि इसने मेरे कुछ अच्छेसे-अच्छे साथियोको अधीर बना दिया है।

मुसलमानोसे अपनी मित्रतापर मुझे गर्व है। इस्लाम ईश्वरको नकारता नही बल्कि वह तो केवल एक सर्वशक्तिमान् ईश्वरको कट्टरतासे मानता है। इस्लामके बुरेसे-बुरे टीकाकारने भी इस्लामपर नास्तिकताका दोषारोपण नही किया। ऐसी हालतमें यदि बोल्शेविज्म अनीश्वरवाद है तो उसमें और इस्लामके बीच मैत्रीका कोई समान आधार नही हो सकता। उस अवस्थामे इन दोनोके बीच एक मरणातक

१. एम० एन० राय द्वारा दिये गये इस लेखके उत्तरके लिए देखिए परिशिष्ट १; उत्तरपर गांधीजीकी टिप्पणीके लिए देखिए "बोल्शेविज्मका अर्थ", १-१-१९२५।

सघर्ष अनिवार्य है। ये दोनो मित्रोकी तरह गले नही मिलेगे बल्कि परस्पर वैरियोंकी तरह जूझेगे। मैंने अमेरिकी मित्रोके पत्रकी भाषाका ही प्रयोग किया है। पर मैं अपने अमेरिकी पाठको तथा औरोको सूचित करता हूँ कि मै किसी भ्रमका शिकार नही हूँ। मेरा दावा तो बहुत ही मामूली-सा है। जो मित्रता है वह तो अली भाइयोके और मेरे बीच है, अर्थात् कुछ बडे ही सम्माननीय मुसलमान मित्रोके और मेरे बीच है। यदि मै इसे मेरे नही, मुसलमानो और हिन्दुओके बीच मित्रता कह सकूं तो फिर पूछना ही क्या! पर हिन्दू-मुस्लिम मित्रता तो लगता है दिवा-स्वप्न-जैसी सिद्ध हुई। इसलिए वास्तवमे तो यही कह सकते है कि यह मित्रता कुछ मुसलमानो, जिनमे अली भाई भी है, और कुछ हिन्दुओके बीच है, जिनमे एक मै भी हूँ, अब यह हमे कहाँतक आगे ले जायेगी, यह भविष्य ही बता सकता है। इस मित्रतामे कोई बात गोलमोल या अस्पष्ट नही है। यह तो ससारमे सबसे अधिक स्वाभाविक चीज है। दु खकी बात तो यह है कि इसपर लोगोको आश्चर्य ही नही, आशकाएँ भी है। भारतके हिन्दू और मुसलमान यही जन्मे और यही पले है। एक-दूसरेके दुख-सुख, आशा-निराशाके साथी हैं। ऐसी हालतमे इससे बढ़कर स्वाभाविक बात क्या हो सकती है कि दोनो स्थायी तौरपर परस्पर मित्र और भाई, एक ही माताके पुत्र बनकर रहे? ताज्जुब तो इस बातपर होना चाहिए कि दोनोमे झगडे क्यो होते है, इस बातपर नही कि दोनोमे एकता कैसे हो रही है। दोनोका यह सम्मिलन ससारके लिए एक सकट क्यो माना जाना चाहिए? दुनियाका सबसे बड़ा सकट तो आज वह साम्राज्यवाद है, जो दिनपर-दिन अपने पैर फैलाता जाता है, दुनिया-को लूटता जाता है, जिसे अपनी जवाबदारीका भान नही है और जो भारतको गुलाम बनाकर उसके द्वारा दुनियाकी तमाम निर्बल जातियोके स्वतन्त्र अस्तित्व और विकासके लिए खतरा उपस्थित कर रहा है। यह साम्राज्यवाद ही ईश्वरको धता बता रहा है। वह ईश्वरके नामपर उसके आदेशके खिलाफ करतूते करता है। वह अपनी अमानुषिक-ताओ, डायरशाही और ओ'डायरशाहीको मानवता, न्याय और नेकीके आवरणमे छिपा लेता है और इसमें भी अत्यन्त दु खकी बात यह है कि अधिकाश अग्रेज नही जानते कि इसमे उनके ही नामका दुरुपयोग किया जा रहा है। इससे भी बढकर करुणा-जनक बात यह है कि सौम्य और ईश्वर भीरु अग्रेजोके दिलमे यह जँचा दिया जाता है कि भारतमे तो चैनकी बसी बज रही है—जबकि दर हकीकत यहाँ करुण-क्रन्दन हो रहा है, और आफ्रिकी जातियाँ भी अमन-चैन कर रही है, हालाँकि वाकई वे उनके नामपर लूटी और अपमानित की जा रही हैं। यदि जर्मनी और यूरोपके मध्यवर्ती राज्योकी शिकस्तने जर्मन-रूपी सकटका अन्त किया है, तो मित्र-राष्ट्रोकी विजयने एक नये सकटको जन्म दे दिया है, जो ससारकी शान्तिके लिए उससे कम खतरनाक और घातक नही है। इसलिए मै चाहता हूँ कि हिन्दुओ और मुसलमानोकी यह मित्रता एक स्थायी सत्य बन जाये और उसका आधार दोनोके प्रबुद्ध हितोकी परस्पर स्वीकृति हो। तब जाकर वह घृणित साम्राज्यवादके लोहेको मानव-धर्मके सोनेमे बदल सकेगी। हम चाहते है कि हिन्दू-मुस्लिम मित्रता भारत और सारे ससारके लिए एक

मंगलमय वरदान बने, क्योंकि उसकी कल्पनाके मूलमें सबके लिए शान्ति और सद्भावकी भावना है। उसने भारतमें सत्य और अहिंसाको अनिवार्य रूपसे स्वराज्य प्राप्त करनेका साधन स्वीकार किया है। उसका प्रतीक है चरखा, जो कि सादगी, स्वावलम्बन, आत्म-सयम और करोडो लोगोमें स्वेच्छा प्रेरित सहयोगका प्रतीक है। यदि ऐसी मैत्री ससारके लिए संकट-रूप हो तो समझना चाहिए कि दुनियामे कोई ईश्वर है ही नही, अथवा यदि है तो वह कही गहरी नीदमें सो रहा है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २१-८-१९२४

१२. शक्तिका अपव्यय ?

गत मई मासके 'वेलफेयर' नामक अंग्रेजी पत्रके एक लेखकी ओर एक मित्रने मेरा ध्यान खीचा है, जो कि श्री एम० एन० रायका[1] लिखा हुआ है और जिसमें उन्होने कोकोनाडाकी खादी प्रदर्शनीके उद्घाटनके अवसरपर दिये गये आचार्य रायके[2] भाषणकी आलोचना की है। मेरे कागज-पत्रोमें उस पत्रिकाकी प्रति कोई दो महीनेसे रखी हुई थी। खेद है कि मैं उसे अवतक पढ न पाया था। पढ चुकनेके बाद ऐसा मालूम हुआ कि आचार्य रायके विचारोका श्री एम० एन० रायने जो खण्डन किया है उसका निरसन इन पृष्ठोमें कई बार किया जा चुका है। पर पाठकोकी स्मृति अल्पजीवी होती है, इसलिए अच्छा होगा कि फिर एक बार यहाँ मैं अपने तर्कोको सिलसिलेवार पेश कर दूं। आचार्य रायके ये आलोचक महाशय मानते हैं कि चरखेके लिए जो इतना उद्यम किया जा रहा है यह महज 'शक्तिका अपव्यय' है। आचार्य रायकी दलीलोका मुख्य मुद्दा यह है कि चरखा खासकर किसानोके लिए अपना एक सन्देश रखता है और वह यो कि इसके जरिये किसान अपने फुरसतके वक्तका सदुपयोग कर सकते हैं। पर श्री रायका कहना है कि किसानोके पास फुरसतका वक्त होता ही नही और जितनी कुछ फुरसत उन्हे मिलती है, उतनी उनके लिए जरूरी है। यदि उन्हे चार महीने फुरसत रहती है तो इसकी वजह यह है कि वे आठ महीनोतक हदसे ज्यादा काम करते हैं और अगर इन फुरसतके चार महीनोमें भी उन्हे चरखेपर काम करना पडे तो उन आठ महीनोमें काम करनेकी उनकी शक्ति हर साल कम होती जायेगी। दूसरे शब्दोमें कहे तो आलोचक महाशयकी रायमें भारतके पास चरखा कातनेका समय नही है।

ऐसा जान पडता है कि आलोचक महोदयको भारतके किसानोका बहुत ही कम अनुभव है और न ही वे इस बातका चित्र अपनी आँखोके सामने खडा कर पाये हैं कि चरखा किस तरह काम करेगा — बल्कि आज कर रहा है। किसानोको

१. प्रसिद्ध विचारक और लेखक; रैडिकल डेमोक्रेटिक दलके संस्थापक।

२. आचार्य प्रफुल्लचन्द्र राय।

चरखेपर गुलामोकी तरह कडी मेहनत करनेकी जरूरत नही। बल्कि उसके जरिये कडी मेहनतके बाद किसानोको एक अच्छे किस्मके मनोरजनका मौका मिलता है। हाँ, भारतकी महिलाओको अलबत्ता यह स्थायी वस्तुके रूपमे भेट किया गया है। जब-जब उनके पास समय होगा वे चरखा कातेगी। यदि अधिकाश मेहनत-मजदूरी अर्थात् शारीरिक श्रम करनेवाले लोग औसतन सिर्फ आधा घटा रोज चरखा काते तो न केवल अपने लिए काफी सूत कात सकेगे बल्कि दूसरोके लिए भी सूत जुटा सकेगे। ऐसा मेहनतकश अपनी आयमे हर साल कमसे-कम १ रु०, ११ आ० की वृद्धि तो कर ही लेगा, जो कि लगभग भूखो मरते आदमीके लिए कम नही है। इस बातको सब लोग मानते है कि आज भारतमे हाथ-करघे और जुलाहे तो इतनी तादादमे मौजूद है कि वे हमारी जरूरतका तमाम कपडा बुन सकते है। ऐसी हालतमे सवाल सिर्फ हाथ-कताईका ही रह जाता है। यदि किसान भाई इसे अपने हाथमे ले ले तो बहुत बडी पूँजी बिना लगाये कपडेके मामलेमे आत्म-निर्भर बननेकी भारतकी समस्या हल हो सकती है। इसके मानी यह होगे कि कमसे-कम ६० करोड रुपया उन करोडो कतैयो, हजारो धुनियो और जुलाहोके बीच घूमता-फिरता रहेगा जो कि अपनी झोपडीमे काम करेगे और उसी हदतक किसानोकी कमाईकी क्षमता भी बढेगी।

तमाम दुनियाका यह अनुभव है कि किसानोको एक ऐसे धन्धेकी जरूरत रहती है, जिससे वे फुरसतके समयमे कुछ कमाई कर सके — अपनी आमदनी बढा सके। इस मौकेपर यह बात हरगिज न भूलनी चाहिए कि बहुत दिनोकी बात नही है जब भारतकी महिलाएँ देशके कपडेकी आवश्यकता-भरका सूत फुरसतके वक्तमें कातकर तैयार करती थी और चरखेके इस पुनरुत्थानने तो इस बातकी सत्यताको बडी अच्छी तरह प्रदर्शित कर दिया है। यह खयाल करना गलत है कि चरखेका आन्दोलन असफल हुआ है। हाँ, कार्यकर्त्ता अलबत्ता कुछ अशोमे काम नही कर पाये है। लेकिन जहाँ कही उन्होने दिल लगाकर काम किया है वहाँ बराबर चरखेका काम चल रहा है। यह सच है कि अभी उसमे स्थायित्व नही आ पाया है। इसका कारण है व्यवस्था और सगठनकी अपूर्णता। एक कारण यह भी है कि कतैयोको अभी यह यकीन नही हो पाया है कि उनको काम निरन्तर मिलता रहेगा। मै श्री रायसे प्रार्थना करता हूँ कि वे पजाब, कर्नाटक और आन्ध्र तथा तमिलनाडके कुछ हिस्सोमें स्थितिको खुद देखें-समझें। वे खुद देख लेगे कि चरखेमे कितनी सम्भावनाएँ है।

भारतवर्ष अकालोका देश है। हमारे भाई-बहनोके लिए सडकोपर गिट्टी तोडना अच्छा है या रुई धुनना और सूत कातना? लगातार अकालोसे पीडित रहनेके कारण उडीसाकी जनता कगालीकी हालतमे पहुँच गई है। यहाँतक कि अब उनसे काम कराना भी बहुत मुश्किल हो गया है। वे धीरे-धीरे मौतके मुँहमे जा रहे है। उनके लिए अगर जिन्दगीकी कोई आशा है तो वह चरखेका पुनरुत्थान ही है।

श्री राय उन्नत तरीकोसे खेती करनेपर जोर देते है। हाँ, इसकी जरूरत है, पर चरखेकी तजवीज कृषि-सुधारके साधनोकी जगह नही की जा रही है, बल्कि उलटे यह तो सुधारकी दिशामे पहला कदम है। इस सुधारके रास्तेमे भारी कठिनाइयाँ

है। हमें सरकारकी अनिच्छा, पूँजीका अभाव और नये तरीकोके प्रति किसानोका विरोध-भाव, इन तीनो कठिनाइयोको पार करना होगा। परन्तु चरखा-कताईके निस्वत जिन बातोका दावा किया जाता है वे ये हैं

१ चरखेसे उन लोगोको एक सुलभ धधा मिलता है, जिन्हे फुरसत रहती है और दो पैसे ज्यादा कमानेकी जरूरत रहती है,

२ हजारो लोग इससे वाकिफ है,

३ इसे आसानीसे सीख सकते है,

४ इसके लिए पूंजीकी वस्तुत बिलकुल जरूरत नही है,

५ चरखा आसानीसे बहुत कम दाममे बन सकता है। बहुतेरे लोग यह भी नही जानते कि किसी मामूली तकलीपर भी सूत काता जा सकता है,

६ लोग उसे हिकारतकी निगाहसे नही देखते,

७ अकाल और अभावके दिनोमे तुरन्त सकट-निवारणका सबसे अच्छा साधन है,

८ विलायती कपडेकी खरीदके रूपमे हिन्दुस्तानके बाहर जानेवाले धनके प्रवाह-को बन्द करनेकी सामर्थ्य अकेले चरखेमे ही है,

९ इस तरह बची हुई रकमको वह करोडो गरीबोके घर पहुँचा देता है,

१० थोडी-सी सफलता भी उसी हदतक लोगोको तुरन्त फायदा पहुँचाती है,

११ लोगोके अन्दर सहयोग उत्पन्न करने और फैलानेका सबसे समर्थ साधन है।

इसके रास्तेमे ये कठिनाइयाँ हैं मध्यवर्गके लोगोके मनमे इसके प्रति श्रद्धाका अभाव है जबकि मध्यम श्रेणीके ही लोगोमे अच्छी तादादमें कार्यकर्त्ता मिल सकते हैं। और भी बडी कठिनाई है बारीक और चिकने दिखाई देनेवाले मिलके बने कपडोके बजाय खादी पहननेकी ओर लोगोकी अरुचि और सक्रमण-अवस्थामे खादीका महँगापन। यदि लोग अच्छी तादादमें कताईके प्रस्तावको अपना ले तो खादी मिलके कपडेका मुकाबला कर सकती है। इसमें कोई सन्देह नही कि इस आन्दोलनकी सफलताके लिए लोगोको कुछ त्याग करनेकी जरूरत है। यदि सरकार हमारी अपनी होती, जो किसानोकी जरूरतोका ध्यान रखती और विदेशी प्रतिद्वन्द्वितासे उनकी रक्षा करनेका निश्चय रखती, तो हमे इस प्रत्यक्ष त्यागकी जरूरत न पडती। पर राष्ट्रीय सरकारके अभावमे वही काम जो राष्ट्रीय सरकार कर सकती है, मध्यवर्गके लोगोके कुछ समयके लिए थोडा-सा त्याग करनेसे हो सकता है।

शक्तिके अपव्ययका तो सवाल ही नही है। आचार्य राय पहले गरीब बहनोको मुफ्तमें अन्न बाँटा करते थे। अब वे चरखेके रूपमे उन्हे एक प्रतिष्ठित पेशा देकर कुछ अशोमें या सर्वांशमें स्वावलम्बी बना रहे हैं। क्या यह शक्तिका अपव्यय है? भीख माँगने या भूखो मरनेके अलावा उनके पास दूसरा कोई काम करनेको नही था। क्या नवयुवकोका गाँवोमे जाना, उनकी जरूरते मालूम करना, उनके दु खसे दु खी होना और उनकी सहायता करना शक्तिका अपव्यय है? क्या हजारो खाते-पीते नवयुवको और नवयुवतियोका करोडो अध-पेट रहनेवाले दरिद्र लोगोका खयाल रखना और निष्ठापूर्वक उनके लिए आधा घटा चरखा कातना शक्तिका अपव्यय

है? जबकि हाथमें कोई भी काम न हो, किसी पुरुष या स्त्री द्वारा चरखा कातकर कुछ पैसे कमा लेने जितना लाभ तो यह है ही। इसी प्रकार त्यागभावसे किसीका चरखा कातना भी एक लाभ ही है। अगर कोई ऐसा कार्य है जिसमे हर तरह लाभ-ही-लाभ है, हानि कुछ नही, तो वह चरखा-कताई ही है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २१-८-१९२४

१३. अन्तःकरणकी आड़में

एक भाईने मुझे पत्र लिखा है, जिसका आशय कुछ इस प्रकार है:

> क्या आप जानते है कि आपके बार-बार अन्त करणकी दुहाई देनेका परिणाम क्या हुआ है? मै देखता हूँ, किशोर और वयस्क लोग अन्त करणकी आड़ लेकर किस प्रकार निरी बकवास किया करते हैं। इससे भी बुरी बात तो यह है कि किशोर ढीठ हो गये है तथा वयस्क लोगोका कोई दीन-ईमान नही रह गया है; क्या आप इस दुर्वृत्तिको रोक नही सकते? यदि आप ऐसा नही कर सकते तो कृपया इस शब्दका प्रयोग न कीजिए और उस बकवासको बन्द कराइए, जो इस शब्दकी आडमें की जा रही है। यह एक पवित्र शब्द है, किन्तु इसका बहुत दुरुपयोग किया जा रहा है। कृपया हमे बताइए कि अन्त करण किसके होता है? क्या वह सबके होता है? जब बिल्लियाँ चूहेका शिकार करती है, तब क्या वे अन्त करणकी प्रेरणापर ही वैसा करती हैं?

मैंने पत्र-लेखकका प्रश्न उनके अपने शब्दोमे नही दिया है। मैंने उसका भावार्थ देनेकी कोशिश की है। मै समझता हूँ, इस कोशिशमें मैंने उनके साथ अन्याय नही किया है।

मुझे यह स्वीकार करना होगा कि इस आरोपमें कुछ सार अवश्य है। किन्तु उन्होने केवल बुरे पहलूको ही पेश किया है। हर अच्छी चीजका दुष्टो द्वारा दुरुपयोग किये जानेका उदाहरण मिलता है। किन्तु हम इस कारण उस अच्छी चीजको छोड़ नही देते। हम तो सिर्फ यही कर सकते है कि उसके दुरुपयोगकी रोक-थामके उपाय करे। जब लोग खुद सोचना छोड देते है और हर मामलेमें उनके लिए जो-कुछ तय कर दिया जाता है, उसीको अपना दीन मानने लगते है, तब कभी-कभी व्यक्तियोके इस अधिकारपर जोर देना जरूरी हो जाता है कि वे लोकमत, या दूसरे शब्दोमे कानूनके खिलाफ चल सकते है। जब व्यक्ति ऐसा आचरण करते है तब उनका दावा होता है कि उन्होने अपने अन्त करणके आदेशका पालन किया है। मै पत्र-लेखककी इस बातसे सर्वथा सहमत हूँ कि किशोरोको आमतौरपर अपने अन्त.करणको जाननेका दावा नही करना चाहिए। यह एक ऐसा गुण या स्थिति है जो बहुत प्रयास और अभ्याससे प्राप्त होती है। मनमानीको अन्त करणकी प्रेरणापर

किया गया आचरण नही कहते। बच्चेमें अन्त करण नही होता। पत्र-लेखकने जो बिल्लीका उदाहरण दिया है, सो वह अपने अन्त करणके आदेशका पालन करनेके लिए चूहेका शिकार नही करती। वह तो वैसा अपने स्वभावके कारण करती है। अन्त करण तो कठोरतम साधनाका मीठा फल है। इसलिए गैर-जिम्मेदार किशोरोमे, जो अपनी पशु-वृत्तिकी प्रेरणाके अतिरिक्त किसी अन्य वस्तु या किसी व्यक्तिके आदेशपर चले ही नही, अन्त.करण नही होता। इसी प्रकार सभी वयस्क लोगोमे भी अन्त करणका गुण नही होता। उदाहरणके लिए बर्बर जातियोके लोगोमे दरअसल अन्त करणका कोई गुण नही होता। अन्त करण तो केवल सवेदनशील हृदयके अन्दर ही रहता है। इसलिए व्यक्तियोके अन्त करणसे भिन्न सार्वजनिक अन्त करण नामकी कोई वस्तु नही है। अतः यह कहनेमें कोई हर्ज नही कि जब कोई व्यक्ति प्रत्येक बातमें अन्त करणकी दुहाई देता है तब समझ लीजिए वह अन्तकरणसे सर्वथा अपरिचित है। यह लोकोक्ति सत्य ही है कि अन्त करण हमें फूंक-फूंककर कदम रखना सिखाता है। अन्त करणवाला व्यक्ति अपनी बातमें बहुत आग्रही नही होता, वह हमेशा नम्र होता है, कभी उग्रतासे काम नही लेता, हमेशा समझौता करनेको, दूसरोकी सुननेको तैयार रहता है, वह अपनी भूल स्वीकार करनेके लिए सदैव इच्छुक, यहाँतक कि उत्सुक रहता है।

पत्र-लेखक महोदय व्यर्थ ही परेशान हैं। यदि पचास हजार लोग यह कहते है कि वे अपने अन्त करणकी खातिर ही अमुक काम कर रहे हैं, या अमुक नही कर रहे हैं, तो इससे क्या फर्क पडता है? कोई सचमुच अन्त करणके गुणसे युक्त है या अहकार अथवा अज्ञानके वशीभूत होकर इस गुणसे विभूषित होनेका झूठा दावा कर रहा है, इन दोनो तथ्योमें भेद करनेमें दुनियाको कोई कठिनाई नही होती। ऐसे लोग तो अन्त करणकी आड लिये बिना भी समान परिस्थितियोमें ऐसा ही आचरण करते है। यदि सार्वजनिक जीवनमे अन्त करणकी बातको दाखिल करनेसे बहुत कम लोग भी कठिनसे-कठिन परिस्थितिके मुकाबले मानवीय गरिमा और मानवीय अधिकारोके लिए खडे होना सीख पाये हैं तो इस तरह सार्वजनिक जीवनमें अन्त करणको स्थान देनेपर खुशी होनी चाहिए। ये सत्कार्य सदैव जीवित रहेगें, जबकि पाखण्डपूर्ण कार्य साबनके झागकी तरह क्षण-भगुर है।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २१-८-१९२४

१४. मार्गकी कठिनाइयाँ

दक्षिणके एक कार्यकर्त्ताने पचमोके बारेमे निम्न प्रकार लिखा है.

> **मै अभी-अभी पंचमोंकी एक सभासे लौटा हूँ। सभामें जो-कुछ हुआ, बहुत ठीक और उत्साहवर्धक था। लेकिन पंचमोके मोहल्लेसे लौटते हुए जब हम बीच गॉवसे गुजरे तो वहाँ जो देखा वह उत्साहवर्धक नहीं था। वहाँ एक बरगदके पेड़के नीचे उस गाँवके अब्राह्मण किसान इकट्ठे थे। दुआ-सलामके लिए जब हम वहॉ रुके तो वे सब खड़े हो गये। फिर उनसे जो बातचीत हुई उससे मेरे सारे सपने टूट गये। इस गॉवमें खादी तैयार होती है। लेकिन बातचीतसे स्पष्ट था कि यह काम अब बन्द होने जा रहा है, क्योकि अस्पृश्यता-निवारणकी बात उन्हे अच्छी नहीं लगती। मुख्य सड़कतक पहुँचनेके लिए हमें कोई बैलगाड़ी भी नहीं मिली। जैसे-तैसे काफी रात गये हम मुख्य सड़कपर खड़ी अपनी मोटर गाड़ीतक पहुँचे। टायर पंचर हो जानेके कारण हम रुकते-ठहरते आधी रातको घर वापस आये। मन बहुत उदास था और नीद भी नहीं आ रही थी। खैर, यह कोई ऐसी बात नहीं जिससे हम हारकर बैठ जायें। लेकिन इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि दक्षिण भारतमें अस्पृश्यता-निवारणका काम इतना बड़ा है कि हम सबको अपनी पूरी शक्ति और साधन लगाकर भी इसे पूरा करनेमें वर्षों लग जायेंगे। अभी तो हम इस कामको कांग्रेस कार्यक्रमके एक गौण हिस्सेके रूपमें ही कर रहे है। मगर इससे बात बननेवाली नहीं है।**

बेशक, इससे बात बननेवाली नही है। अस्पृश्यता एक भयानक वास्तविकता है। अस्पृश्य लोग यदि शिकायत कर सकते, तो धर्मके नामपर उनके साथ जो दुर्व्यवहार किया जाता है, उसके विरुद्ध वे इतनी शिकायते करते कि उसके शोरसे हमारी नीद हराम हो जाती।

अभीतक तो हम इस समस्यासे अपना मन बहलाव ही करते रहे हैं। इस कार्यके लिए हमने, जितना चाहिए उस अनुपातमे न तो अपना आराम छोडा है, न समय ही लगाया और पैसा तो और भी कम खर्च किया है, जबकि परिस्थितिका तकाजा यह है कि हम हिन्दुओको इस ध्येयकी सिद्धिके लिए अपना खून पानीके समान बहाना होगा। हम सुधारक लोगोको तत्काल यह स्वीकार कर लेना चाहिए कि इस सवालपर हमारे पक्षके लोगोकी सख्या बहुत ही कम है। मगर मै सचमुच ऐसा मानता हूँ कि काग्रेसने इस सुधार-कार्यको अगीकार करके इसे बहुत बल प्रदान किया है। किन्तु फिर भी अभीतक वह इस समस्याका केवल कोर-किनारा ही छू पाई है। हमने इसे सुलझानेका कोई गम्भीर प्रयत्न नही किया है। हम एक प्रकारकी सरगर्मी पैदा करना चाहते थे। किन्तु अस्पृश्यताके कार्यसे इस प्रकारकी सरगर्मी नही

पैदा हो सकती। इसके लिए तो यश-प्रतिष्ठाकी अपेक्षा रखे बिना चुपचाप काम करते रहनेकी जरूरत है। एक ओर तो हमें हिंसाके जरिये नहीं बल्कि धैर्यपूर्ण प्रयत्नोसे, जो केवल प्रेमकी प्रेरणासे ही सम्भव है, पूर्वग्रहोकी दीवार ढाहनी है और कट्टरपथियोके साथ धीरज खोनेका मतलब अपना काम बिगाडना और अपनी तथा पचमोकी स्थितिको और भी खराब कर देना है। हमे दलील देकर उन्हे अपनी बात समझानी है, उनके व्यग, उनके अपमान सहने है, यहाँतक कि बदलेके तौरपर अपना हाथ उठाये बिना उनकी लातें भी सहनी है। तब हम ऐसा वातावरण तैयार कर सकेगे कि जिसमे कट्टरपन्थियोके सामने सत्य प्रकट हो जायेगा।

हमें अपने मनमें यह तय कर लेना है कि हम सचमुच क्या चाहते है। इस प्रश्नके सम्बन्धमें हमारे विचार जुदा-जुदा नही होने चाहिए। हमें यह समझ लेना चाहिए कि यह अन्तर्जातीय खान-पान या अन्तर्जातीय विवाहका प्रश्न नही है। साथ ही इस सवालका सम्बन्ध वर्ण-धर्मके, जिसे मतलबी लोग गलतीसे जाति-प्रथा मान बैठे है, उन्मूलनसे भी नही है। इसका तो सीधा-सादा सम्बन्ध अस्पृश्यता-निवारणसे, अकारण ही जो एक पचम वर्ण बना दिया गया है, उसके उन्मूलनसे है। हमारे बीच ऐसे विचारोवाले सुधारकोका भी एक दल है जो वर्णधर्मको सर्वथा मिटा देना चाहता है। यहाँ हमें इस सुधारके गुण-दोषपर विचार नही करना है। अस्पृश्यता-आन्दोलनका उद्देश्य तो केवल इस पापपूर्ण अन्धविश्वासको दूर करना है कि किसी खास जातिमें उत्पन्न व्यक्तिके स्पर्शसे कोई इतना अपवित्र नही हो जाता कि उसके लिए प्रायश्चित्त करना आवश्यक हो। यह आन्दोलन जितना ज्यादा फैलता जायेगा, इसमें जितनी अधिक तीव्रता आती जायेगी इसकी मर्यादाओको समझना और उनका सावधानीके साथ पालन करना भी उतना ही जरूरी होता जायेगा। इस प्रकार जहाँ हमें कट्टरपन्थियोको ललकारना है वहाँ उन्हे यह विश्वास भी दिलाना है कि हम जो कुछ कह रहे है उससे अधिक हमारा और कोई मतलब नही। उन्हे इस आन्दोलनके प्रयोजनको पूरा-पूरा समझ सकनेका मौका देना है। मुझे हर हफ्ते जो पत्र मिलते है, उनमे मालूम होता है कि हम आन्दोलनकी मर्यादाओको बराबर अपने सामने नही रखते। इसलिए कट्टरपन्थी लोग स्वभावत सशक हो गये है। इससे सुधारकोका कार्य जितना चाहिए, उससे कही अधिक कठिन हो जाता है।

दूसरी ओर पचम भाइयोके साथ भी हमें समान रूपसे धैर्यके साथ काम लेना होगा। वे हमेशा हमारे प्रयत्नोकी कद्र नही करते। वे प्राय हमपर अविश्वास करते है। मैं जानता हूँ, जब अछूत बच्चोको यह सिखाया जाता है कि स्पृश्योकी थालीसे जूठा खाना अध पतन है और अस्वास्थ्यकर भी है तो उनके माता-पिता बुरा मानते है। कुछ तो सफाईको भी बुरा समझते है। वे अपनी आदतोसे उसी प्रकार दुराग्रहपूर्वक चिपके हुए है जिस प्रकार कट्टरपन्थी लोग इस विश्वाससे बँधे हुए है कि आदमी आदमीके स्पर्शसे भी अपवित्र हो सकता है।

इसलिए कोई भी साधारण सुधारक जब यह अनुभव करेगा कि उसके सामने कितना भारी काम पडा हुआ है तो उसका निराश हो जाना स्वाभाविक ही है।

गनीमत समझिए, वह यह न सोचने लगे कि अछूतके साथ जैसा व्यवहार किया जाता है, वे उसीके पात्र है, मानो वे जिस परिस्थितिमे पडे हुए है उसके लिए स्वय ही जिम्मेदार हो।

अब शायद यह बात स्पष्ट हो गई होगी कि मैं क्यो कहता हूँ कि इस अभिशापको दूर कर हिन्दू धर्मको शुद्ध बनानेके लिए हमे अपना रक्त पानीकी तरह बहाना पडेगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २१-८-१९२४

१५. हब्शियोंकी सहानुभूति

न्यूयार्कसे प्राप्त निम्नलिखित तारकी प्राप्ति मैं कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार करता हूँ और उसे सहर्ष प्रकाशित कर रहा हूँ

> **विश्वके हब्शी हमारे जरिये आपको अपने देश तथा देशवासियोकी आजादीके संघर्षके लिए शुभकामनाएँ भेजते हैं। हम आपके साथ हैं। संसार-भरके हब्शी लोगोंका चौथा वार्षिक अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन। मैरियस गार्वी, अध्यक्ष।**

उनका कार्य हमारे कार्यसे शायद ज्यादा कठिन है। किन्तु उनके बीच कुछ अत्यन्त योग्य कार्यकर्त्ता है। इतिहासके बहुतसे अध्येताओका विचार है कि भविष्य उनके साथ है। उनका शारीरिक गठन बहुत अच्छा है। उनकी कल्पनाशक्ति बहुत ऊँची है। वे जितने बहादुर है, उतने ही सीधे-सादे भी। श्री एम० फीनोने अपने वैज्ञानिक अनुसन्धानोसे दिखा दिया है कि यह आम खयाल कि उनमे दूसरोकी तुलनामे किसी तरहकी वशानुगत हीनता है, गलत है। आवश्यकता केवल इस बातकी है कि उन्हे अवसर मिले। मेरा विश्वास है कि यदि उन्होने भारतीय आन्दोलनकी भावनाको समझ लिया है, तो वे निश्चय ही बहुत तेजीसे प्रगति करेगे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २१-८-१९२४

१६. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

श्रावण कृष्ण ७ [बृहस्पतिवार, २१ अगस्त, १९२४][1]

भाई श्रीयुत घनश्यामदास,

ईश्वरने मुझको नीति रक्षक दीये है। उन्हीमे सें मैं आपको समझता हूँ। मेरे कई बालक भी ऐसे है कई बहिन भी है और आप, जमनालालजी जैसे प्रौढ भी है जो मुझको सम्पूर्ण पुरुष बनाना चाहते हैं। ऐसा समझते हुए आपके पत्रसे मुझे दु ख कैसे हो सकता है। मैं चाहता हु कि हर वखत आप ऐसे ही मुझे सावधान बनाते रहे।

आपकी तीन फरीयाद हैं। एक मेरा स्वराज दलको रिश्वतके आरोपसे मुक्त रखना। दूसरा सोहरावर्धीको प्रमाणपत्र देना और तीसरा सरोजिनी देवीको सभापतित्व दिलानेकी कोशिश करना।

प्रथम बात तो यह है कि मनुष्यका धर्म है कि साधनाके पश्चात जो अपनेको सत्य लगे उसी चीझको कहना भले जगत्को वह भूलसा प्रतीत हो—इसके सिवा मनुष्य निर्भय नहिं बन सकता है। अपना मोक्षके सिवा और किसी चीझका मैं पक्षपाती नहिं बन सकता हुँ। परन्तु यदि मोक्ष भी सत्य और अहिंसाका प्रतीकुल हो तो मुझे मोक्ष भी त्याज्य है। उक्त तीनो बातोमे मैंने सत्यका हि सेवन किया है। आपने जो कुछ मुझे जुहुमे कहा था मुझे स्मरणमे रखते हुए जो कुछ भी कहा है वह कहा। जब मेरे नजदीक कुछ भी प्रमाण न हो तो मेरा धर्म है कि मैं स्वराज दलको आरोपसे मुक्त समजु। यदि आप मुझको प्रमाण दे देंगे तो मैं अवश्य निरीक्षण करूगा। और आप उसका उपयोग करने देंगे तो मैं जाहेरमे भी कह दुगा। वरना मेरे दिलमे समझकर मैं खामोश रहुगा।

सोहरावर्धीजीको मैंने प्रमाणपत्र उनकी हुशियारीका दीया है। मैं अब भी उनकी हुशियारीका अनुभव कर रहा हूँ।

सरोजिनी देवीके लिये आप खामखा घभराते हैं। मेरा दृढ विश्वास है कि उन्होने भारतवर्षकी अच्छी सेवा की है और कर रही हैं। उनके सभापतित्वके लीये मैंने कुछ प्रयत्न इस समय नहिं कीया है परन्तु मेरा विश्वास है कि वह उस पदके लीये योग्य है यदि दूसरे जो आजतक हो गये वे योग्य थे तो उसके उत्साहपर सब कोई मुग्ध है। उसकी वीरताका मैं साक्षी हू। मैंने उनका चरित्र दोष नहिं देखा है।

१. वर्ष, प्रेषीकी पुस्तक इन द शैडो ऑफ द महात्मामें दी गई तिथिके अनुसार।

इन सब बातोका आप यह अर्थ न करे कि उनके या किसीके सब कार्योंको मै पसद करता हु।

जड-चेतन गुण-दोषमय, विश्व कीन्ह करतार।
सत हस गुण गर्हाहिं पय, परिहरि वारि विकार।

आपका,
मोहनदास गांधी

मूल पत्र (सी० डब्ल्यू० ६०३०) से।
सौजन्य घनश्यामदास बिडला

१७. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

श्रावण कृष्ण ८ [२२ अगस्त, १९२४][1]

भाई घनश्यामदासजी,

प० सुदरलालजी मुझको यहाँ मीले है और आपके पत्रके बारेमे मुझको पूछते है। मैंने कहा आपका पत्र मुझको मीला था और मैंने ऊत्तर भी दे दीया था। सुदरलालजी कहते है आपको हरदवार जानेतक मेरा ऊत्तर नहि मीला था [इसलिए] और दूसरा चाहते है। मै आपको सहायके बारेमे कुछ लीखना नहि चाहता हु। सुदरलालजीको सहाय देना न देना इस बारेमे यदि आप किसीकी सलाह लेना चाहे तो जमनालालकी सलाह ले ले। सुदरलालजी कहते है, वह आपकी स्वतत्र सहाय चाहते है और मै सिर्फ आपको उनके कार्यके बारेमे लिखु। मै अवश्य इतना कह सकता हु कि सुदरलालजी देशप्रेमी है असहयोगी है उत्साही है और कार्य करनेकी शक्ति अच्छी रखते है। यूवक वर्गपर उनका प्रभाव है। स्वभावमे बहोत स्वतत्र है।

आपको मैंने अमदाबाद छोडनेके समय तार भेज दीया था। मै आज आश्रम जाता हु। अब तक तो कुछ यहा नहि हो सका है। दोनो पक्ष मेरी सलाहपर विचार कर रहे है।

आपका,
मोहनदास गांधी

मूल पत्र (सी० डब्ल्यू० ६०३१) से।
सौजन्य. घनश्यामदास बिडला

१. गांधीजी दिल्लीसे अहमदाबादके लिए २२ अगस्तको रवाना हुए थे।

१८. भेंट : हिन्दू-मुस्लिम एकतापर[1]

दिल्ली
२२ अगस्त, १९२४

गांधीजी आज सुबह अहमदाबादसे बम्बई जानेके लिए रवाना हुए। भेंटकर्त्ताके पूछनेपर उन्होंने बताया कि समझौतेके लिए हिन्दुओ और मुसलमानोंके बीच अब भी बातचीत चल रही है और स्थिति पहलेकी तरह ही आशाजनक है।[2] अभी तो मैं इतना ही कह सकता हूँ।

यह पूछनेपर कि आप दिल्ली कब लौट रहे हैं, श्री गांधीने कहा कि अगर मुहम्मद अली चाहेंगे कि मैं आऊँ तो अवश्य आऊँगा।

फिर जब उनसे यह पूछा गया कि क्या आप कोई ज्यादा आशाजनक बात नहीं कह सकते, तो श्री गाधीने उसका उत्तर प्रश्नके ही रूपमें दिया। उन्होंने कहा, "क्या यह काफी आशाजनक नहीं है?"

विदा होनेसे पहले उन्होंने मुहम्मद अलीसे खूब काम करनेको कहा। चूँकि वे दिल्लीकी स्थितिको सिर्फ स्थानीय स्थिति ही नहीं मानते और चूँकि कहा जाता है कि वे जैसे-तैसे जोड़-तोड़कर किये गये समझौतेके खिलाफ हैं, इसलिए कहते हैं, इस बातचीतमें ज्यादा समय लगा है और अभी और भी लग सकता है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २२-८-१९२४

१९. पत्र : जमनालाल बजाजको

श्रावण वदी ९ [२३ अगस्त, १९२४]

चि० जमनालाल,

मैं इस वक्त ट्रेनमें हूँ। दिल्लीसे वापस आश्रम जा रहा हूँ। दिल्लीमें समझौतेकी बातें चल रही है। मोतीलालजीका पत्र नही आया। तुम्हारे प्रान्तमें शुद्ध रीतिसे जो हो वह होने दो। हम तटस्थ रहकर अपना काम करते रहे, इतना ही जरूरी है।

घनश्यामदास दिल्लीमे नही थे। उनकी ओरसे रुपये मिल गये थे। वे रुपये बिना खर्चके किस तरह तुम्हे भेजे जायें, यह लिखकर पूछनेके लिए छगनलालको कहा था। साथमें महादेव, देवदास और प्यारेलाल है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (जी० एन० २८४९) की फोटो-नकलसे।

१. यह भेंट एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको दी गई थी।
२. गांधीजी स्वयं झगड़ेके स्थानपर गये थे।

२०. पत्र : भवानीदयालको

ट्रेनमें,
श्रावण कृष्ण ९ [२३ अगस्त, १९२४][1]

भाईश्री भवानीदयाल,

तुमारे खतका उत्तर आज हि दे सकता हु। क्षमा मागनेकी कुछ आवश्यकता नहिं। तुम अब द० आ० की लडतको ज्यादा समझते हो यह बात सन्तोषजनक है। मुझे एक क्षणकी भी फुरसद नहिं है। इतना हि लेख भेजता हु। मैं देखता हु की उन्नतिके लीये तपश्चर्यासे अधिक शक्तिप्रद कोई दूसरी चीज नहिं है।

मोहनदास गांधी

श्रीयुत भवानीदयाल
पो० ओ० — जेकोब्स
नेटाल
दक्षिण आफ्रिका

मूल पत्र (सी० डब्ल्यू० ६०३२) से।
सौजन्य विष्णुदयाल

२१. पत्र : अब्बास तैयबजीको

२३ अगस्त, १९२४

भाई साहब,

भुर्र . .।[2]

आपका पत्र पाकर बडी प्रसन्नता हुई। जब आपको चरखा चलानेकी ज्यादा आदत हो जायेगी तब आपको इतनी दिक्कत नही होगी। आप उस ओर देखे ही नही।

आपने मुस्लिम छात्रावासके लिए बहुत अच्छी रकम जमा की है।

श्रीमती अब्बासको और लडकियोको — सभीको — मेरा वन्देमातरम् अथवा सलाम, जो भी वे चाहे, कहे।

आपका,
मोहनदास गांधी

गुजराती पत्र (एस० एन० ९५४८) की फोटो-नकलसे।

१. डाककी मुहरसे।
२. गाधीजी और तैयबजी एक-दूसरेका अभिवादन इसी प्रकार किया करते थे।

२२. भाषण : मजदूरोंकी सभा, अहमदाबादमे

२३ अगस्त, १९२४

लगभग ५,००० मजदूर मो० क० गांधीको ३,००० रुपयेकी थैली भेंट करनेके लिए २३ अगस्तको अहमदावाद शहरमें शाहपुर दरवाजेके बाहर नदीके किनारे एकत्र हुए। मजदूर-संघके मन्त्री श्री गुलजारीलाल नन्दाने अहमदाबादके मजदूरोंको समय-समयपर महात्माजी द्वारा दी गई मददका जिक्र किया।

गांधीजीने मजदूरोसे पूछा कि क्या आप लोग मेरे सामने कोई शिकायत रखना चाहते है। संघकी आन्तरिक आर्थिक स्थितिसे सम्बन्धित अनेक प्रश्न उठाये गये। गांधीजीने उन्हें आत्म-निर्भर बनने तथा अपनी संस्थाओंको अपने नियन्त्रणमें रखनेके लिए कहा। उन्होंने कहा, आप संघके मालिक है। आपको ऐसे पदाधिकारी चुनने चाहिए जो आपकी सच्ची सेवा कर सकें, चाहे वे हिन्दू हों या मुसलमान। उन्होने उनसे खादी पहननेका भी आग्रह किया।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स

२३. पहली परीक्षा

गुजरातके प्रतिनिधि पहली परीक्षामे अनुत्तीर्ण हो गये है। ४०८ प्रतिनिधियोमें से केवल १६९ ने अपना सूतका हिस्सा भेजा है। २३९ नही भेज सके है। ४२ प्रतिशत सूतका हिस्सा भेजे और ५८ प्रतिशत न भेजे, इसका अर्थ क्या हुआ? यदि स्वराज्य सूतके तागेमे हो तो प्रतिनिधियोका इतना बडा भाग परीक्षामे कैसे अनुत्तीर्ण हो सकता है? जिस पेढीके हिस्सेदारोका बडा भाग पेढीके नियमोका अनुसरण नही करता उस पेढीका क्या हाल होता है?

समुद्रमे आग लगे तो उसे कौन बुझा सकता है? यदि नमक ही अपना खारा-पन छोड दे तो उसे खारा कौन बना सकता है? यदि प्रतिनिधि अपनी प्रतिज्ञाका पालन न करे तो सामान्य जनतासे क्या उम्मीद की जा सकती है?

गुजरातका प्रस्ताव तो कडा है। जिन्होने सूत नही भेजा है उन्हे अपनी जगह खाली करनी पडेगी। जिन प्रतिनिधियोके पास सूत न कातनेका खास कारण हो वे तो अपने द्वारा निश्चित किये गये दण्डसे बच सकते है। किन्तु जिनके पास प्रामाणिक कारण न हो, मुझे तो ठीक रास्ता यही जान पडता है कि उन्हे त्यागपत्र दे देना चाहिए। त्यागपत्रकी शोभा इसीमे है कि उसे देनेमें दुःख अथवा वैमनस्य न हो। जिनकी चरखेमें श्रद्धा नही उनका त्यागपत्र देना ही उचित है। जिन्होने आलस्यवश

न काता हो वे त्यागपत्र दें, आलस्य छोडकर नियमपूर्वक कातनेका अभ्यास करें और तब काग्रेसमे फिर प्रवेश करे। इस तरह काग्रेस दिन-प्रतिदिन शुद्ध और शक्तिमान सस्था बनती जायेगी।

लेकिन गुजरातमे जो लोग प्रतिनिधि नही है उन्होने काफी मात्रामे सूत भेजकर प्रतिनिधियोके इस दोषको ढँक दिया है। १५ अगस्ततक सूत भेजनेवालोकी कुल सख्या ६७२ थी। इसका अर्थ यह है कि प्रतिनिधियोके अलावा अन्य ५०३ भाइयो और बहनोने अपना सूतका हिस्सा भेजा है। मै इस स्थितिको आशाजनक मानता हूँ। इतनी सख्यासे मुझे आश्चर्य नही होता। काग्रेसके प्रस्तावका मुद्दा ही यह है कि प्रतिनिधियोकी देखा-देखी, उनके प्रयाससे लाखो भाई और बहन हमे यज्ञके रूपमे अर्थात् मुफ्त प्रतिदिन अपनी आधे घटेकी मेहनत दे। अतएव मुझे उम्मीद है कि आगामी मासमे ५०३ के बजाय बहुत अधिक भाई और बहन हमे अपने हाथका कता हुआ सूत भेजेगे।

सूत भेजनेवाले प्रतिनिधियोका विवरण इस तरह है:

	कुल प्रतिनिधि	सूत भेजनेवाले	सूत न भेजनेवाले
अ० भा० का० कमेटी	११	१०	१
प्रान्तीय कमेटी	६८	४६	२२
अहमदाबाद	५२	२३	२९
खेड़ा	११७	३८	७९
भड़ौंच	८२	२६	५६
सूरत	७८	२६	५२
पचमहाल	—	—	—
	४०८	१६९	२३९

फुटकर सूत भेजनेवालोका विवरण निम्न प्रकार है:

	सूत भेजनेवाले
अहमदाबाद	५३
आश्रम	८४
खेडा —	
बोरसद	९९
पेटलाद	२६
कपडवज	२३
नडियाद	६५
भादरण	१५
बड़ौदा	५
आनन्द	१८
महमदाबाद	३
खम्भात	२

सूरत —	
वारडोली	६१
अन्य	२१
भडौच	१२
खादी मंडल	१६
कुल	५०३

इन आँकडोसे हमें वहुत-कुछ सीखनेको मिलता है। जहाँ अधिक काम हुआ है वहाँसे हमे अधिक सूत मिला है। खेडा जिलेके लोगोको अधिक सूत कातना आता है इससे खेडाने ज्यादा सूत भेजा है, सो वात नही। वल्कि वहाँपर ज्यादा काम हुआ है इसीलिए वहाँके ज्यादा भाइयो और वहनोने सूत भेजा है। पचमहालसे सूतका ढेर मिलना चाहिए था। यह खेदकी वात है कि वहाँके प्रतिनिधियोके नामोके आगे कुछ भी नही मिलता। भडौचके केवल १२ लोग ही सूत काते, इसका क्या अर्थ हो सकता है? काठियावाडका एक भी नाम फुटकर सूत कातनेवालोमे नही है, इससे क्या पता चलता है?

पैसा देना आसान था। आधे घटेकी मेहनत देना मुसीवतकी वात जान पडती है!

कुछ लोग कह सकते है कि हम तो अपनी इच्छासे जैसे चाहे वैसे मेहनत करनेके लिए स्वतन्त्र है। यदि कोई ऐसा कहता है तो वह सगठनकी कीमत नही जानता। वर्षा ऋतुमे वूँदकी कोई कीमत नही होती, परन्तु अनेक वूँदे मिलकर अकालको सुकालमे वदल सकती है। अनेक होनेके वावजूद यदि ये सारी वूँदे स्वेच्छाचारी बन जाये और एक निश्चित नियमका अनुसरण न करे तो ये सब बूँदे निष्फल हो जायेगी। इसी तरह यदि अनेक स्त्री-पुरुष अपनी इच्छानुसार सेवा करते रहे तो भी वह सेवा व्यर्थ सिद्ध होगी। किन्तु यदि अनेक स्त्री-पुरुष किसी नियमके अधीन होकर कुछ कार्य करे तो वह कार्य चमक उठता है। इसलिए जो सेवा करना चाहते है उन्हे एक नियमके अधीन रहकर कार्य करना चाहिए, इसीमे उनकी और देशकी भलाई है।

अतएव गुजरातने फुटकर सख्यामे जो सूत भेजा है वह यद्यपि आशाजनक है, तथापि आश्चर्यजनक नही। वह आशाजनक इस तरह है कि प्रत्येक मास सूत भेजनेवालोकी सख्या वढती जायेगी। मुझे उम्मीद है कि जिन ६७२ लोगोने शुरुआत की है वे लोग तो नियमका पालन करते हुए प्रति मास सूत कातकर भेजते रहेगे।

अभी एक खुशीकी वात लिखनी वाकी है और वह यह कि कुछ लोगोने वहुत ज्यादा सूत काता है। अव्वास साहव और वल्लभभाई दोनोमे से प्रत्येकने ५,००० गज सूत भेजा है। एक भाईने ४३,००० गज सूत काता और भेजा है। दूसरेने २७,००० गज काता है और इसमे से ११,००० गज भेजा है। तीसरेने २४,००० गज सूत काता है और उसमे से १२,००० गज भेजा है। अन्तिम दो व्यक्ति तो वहुत ज्यादा कार्य-व्यस्त रहनेके वावजूद इतना कात सके है। एक युवकने ४६,००० गज सूत काता है, किन्तु उसने दान केवल ३,००० गजका ही किया है, क्योकि सारेके-सारे सूतको दानमे देना उनकी शक्तिसे वाहर है। इस तरह अधिक कातनेवाले लोग

मेरी जानकारीमे बहुत है; लेकिन वे अपने काते हुए सूतसे अपना कपडा बनवानेका आग्रह रखनेके कारण अधिक सूत दानमे नही दे सकते। लेकिन इन आँकड़ोसे पता चलता है कि प्रत्येक मास ३,००० गज सूत कातना बहुत ही आसान है किन्तु इतनेपर भी वह जितना आसान है उतना ही महत्त्वपूर्ण भी है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २४-८-१९२४

२४. टिप्पणियाँ

वन्ध्या पार्लियामेन्ट

एक पत्रकारने ये विचार व्यक्त किये है:[1]

पार्लियामेन्ट तो सचमुच ही वन्ध्या होगी। मुझे यह भरोसा नही कि हिन्दुस्तान-मे उसका यह अवगुण बदला जा सकेगा। लेकिन मैने इतनी आशा अवश्य रखी है कि हमारी पार्लियामेन्ट वन्ध्या ही रहेगी, कपूत तो नही जनेगी। मै व्यावहारिकताके विचारको नही छोड सकता। रामका राज्य ही एक आदर्श है। लेकिन हम राम कहाँसे लायेगे? पत्रकार लिखते है "प्रजा जिसको माने।" किन्तु प्रजा क्या है? पार्लियामेन्ट जिसे मान्य करे वही पुरुष या स्त्री चरित्रवान् है — ऐसी है हमारी दृष्टि। प्रजाकी आवाज प्रजाकी ही होनी चाहिए, वह आवाज किरायेके मत देनेवाले लोगोंकी न हो। इस हेतुसे मै बहुतेरी मर्यादाएँ सुझा रहा हूँ और इसी हेतुसे ऐसी युक्तियाँ ढूंढ रहा हूँ कि हम सारी प्रजाकी आवाज सुन सके। जितनी पद्धतियाँ है सभी सदोष है। आज तो हम ऐसी पद्धति ढूंढ रहे है जिससे हिन्दुस्तानको अधिकसे-अधिक लाभ मिल सके। अच्छे आदमी बुरी पद्धतिको भी अच्छा बना लेते है, जैसे बुद्धिमान गृहिणी धूलमे से भी धान पैदा कर लेती है। दुष्ट आदमी अच्छीसे-अच्छी पद्धतिका भी दुरुपयोग करते है, जैसे मूर्ख गृहिणी अच्छी धानको भी धूल बना देती है। इसलिए मै भारतमे अच्छे आदमियोको ढूंढ रहा हूँ और ऐसे लोग बाहर निकल आये, ऐसी युक्तियाँ कर रहा हूँ। लेकिन मनुष्य क्या कर सकता है? वह तो केवल शुभ प्रयत्न ही कर सकता है। उसका परिणाम तो ईश्वरके अधीन है। परिणामका परिपाक एक मनुष्यके नही, अनेक मनुष्योके प्रयत्नपर निर्भर है। उसमे अनेक अनुकूल परिस्थितियोका योग होता है। इसलिए हमारे लिए तो "एक कदम आगे बढना ही पर्याप्त होगा।"

अन्तरात्माकी पुकार

पूर्वोक्त पत्रकार आगे कहते है:[2]

लेखककी ये बाते यथार्थ है; परन्तु ये दोष अनिवार्य है। यदि सच्चोके नाम-पर झूठे लोग ठगते फिरे तो क्या इससे हम सच्चोको त्याग देते है? अन्तरात्मा-

१. ये यहाँ नहीं दिये गये हैं। इनमें इंग्लैंडकी संसदीय पद्धतिकी आलोचना की गई थी।

२. यहाँ नहीं दिया गया है।

तो अभ्याससे जाग्रत होती है। वह मनुष्य-मात्रमें स्वभावत' जाग्रत नही होती। इस अभ्यासके लिए बहुत पवित्र वातावरणकी जरूरत रहती है, सतत प्रयत्नकी जरूरत है। यह अत्यन्त नाजुक चीज है। बालकोमें अन्तरात्माकी पुकार-जैमी कोई चीज नही होती। जो लोग जंगली माने जाते हैं उनमे अन्तरात्माकी पुकार नही होती। अन्तरात्माकी पुकार क्या चीज है? परिपक्व बुद्धि द्वारा हमारे अन्तरतममें उत्पन्न प्रतिध्वनि। अतएव यदि हर शख्स अन्तरात्माकी पुकारका दावा करे तो वह हास्य-जनक होगा।

ऐसा होते हुए भी यदि सब लोग उसका दावा करते हैं तो उससे परेशान होनेकी जरूरत नही। जो अधर्म अन्तरात्माकी पुकारके नामपर किया जाता है वह ज्यादा दिन नही टिक सकता। फिर वे लोग जो अन्तरात्माकी पुकारका बहाना लेकर काम करते हैं, कष्ट-सहनके लिए तैयार नही होते। उनका रोजगार दो दिन चलकर अवश्य ही बन्द हो जायेगा। अत भले ही सैकड़ो लोग ऐसा दावा करते रहे उससे ससारकी हानि न होगी। हाँ, जो ऐसी सूक्ष्म वस्तुके साथ खिलवाड़ करेंगे उनके नाशकी सम्भावना जरूर है, औरोके नाशकी नही। एक हदतक अखबार इसकी मिसाल हैं। कितने ही अखबार आज लोकसेवाके नामपर जहर-ही-जहर फैला रहे हैं। परन्तु यह रोजगार ज्यादा दिन नही चल पायेगा। लोग जरूर उससे ऊब जायेंगे। पजाब इस बातमें महा अपराधी है। ताज्जुबकी बात तो यह है कि ऐसे अखबार भी चल पाते है। किन्तु लोग उन्हे उत्साहित क्यो करते है? जबतक सेठ-साहूकार होगे तबतक चोर भूखो नही मर सकते। इसी प्रकार वहाँ जबतक लोगोका एक हिस्सा जहरीले लेख पढ़नेके लिए तैयार रहेगा तबतक ऐसे अखबार जरूर चलेगे। इसकी एकमात्र दवा शुद्ध लोकमतका निर्माण है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २४-८-१९२४

२५. पत्र : च० राजगोपालाचारीको

साबरमती
२४ अगस्त, १९२४

प्रिय राजगोपालाचारी,

आपने महादेवको जो पत्र लिखा था वह उसने मुझे दिखाया है। आप निराश न हो। श्रीमती नायडूका यह कहना कि मैं निराश हो चुका हूँ, एक लाछन है। यह सत्य है कि मैं अँधेरेमे रास्ता टटोल रहा हूँ। कुछ ऐसी चीजें है जिनके बारेमें मैं साफ-साफ कोई निर्णय नही दे पाता हूँ, लेकिन यह तो सिर्फ इस बातकी स्वीकृति है कि हमारा जहाज समुद्रमें अज्ञात पथपर चल रहा है।

याद रखिए कि हम सब सत्याग्रही हैं। हमारे सामने जो परिस्थिति है, उसपर हम पारिवारिक नियमको लागू करके देखें। मान लीजिए कि दो भाई उत्तराधिकारके

सवालपर झगड रहे है। दोनों इसका उपयोग परिवारके हितमे ही करना चाहते है। एक कमसे-कम यह जानता है कि परिवारकी सेवाके लिए उसे इस सम्पत्तिकी आवश्यकता नही है। जातिके अधिकाश लोग चाहते है कि वह सम्पत्तिका अपना उत्तराधिकार छोडे नही। लेकिन क्या सत्याग्रही भाईका कर्त्तव्य यह नही कि उत्तराधिकारका त्याग करके झगडेको और उसमे नष्ट होनेवाले समय और शक्तिको बचा ले? हमारे सामने जो सवाल है, वह क्या इससे भिन्न है? फिर भी मै अपने कदम बडी सावधानीसे उठा रहा हूँ। मै जो-कुछ करनेका प्रयत्न कर रहा हूँ वह यही है कि अशोभन विवादकी स्थिति न आये। अध्यक्ष बनना[1] मै स्वीकार कर लूँगा, बशर्ते कि मुझे यह यकीन हो जाये कि इससे देशका हित होगा। इसका निर्णय करनेके लिए अभी काफी समय है। कहाँ कितनी कताई हो रही है, इसके जो आँकडे प्राप्त हो रहे है, उनसे काफी-कुछ सीखनेको मिल रहा है। यदि कताईका ऐसा ही बुरा हाल रहा तो मेरे अध्यक्ष बननेसे क्या कोई ज्यादा लाभ होगा?[2] उस हालतमे काग्रेससे अलग होकर एक कठोर कार्यक्रम बनाना और उसके लिए ईमानदार तथा इच्छुक लोगोको ही सदस्य बनाना क्या ज्यादा अच्छा नही होगा? क्या उस व्यक्तिसे जो स्वय विदेशी कपडा पहनता हो, चरखेके पक्षमे मत प्राप्त करनेका कोई उपयोग है? फिर काग्रेसपर अधिकार जमानेके लिए भोली-भाली जनताको बहकाकर उससे लाभ उठानेकी बात भी सोचिए। क्या तथाकथित अपरिवर्तनवादी पूर्ण रूपसे ईमानदार रहेगे? आप सारी चीजकी तनिक कल्पना तो कीजिए। यदि हम काग्रेसको इस रस्साकशीके बिना अपने हाथमे नही रख सकते तो हमे स्वेच्छासे इसका त्याग कर देना चाहिए। मैंने आपके पत्रोपर बहुत गम्भीरतापूर्वक विचार किया है, पर मुझे निश्चित तौरपर यही लगा है कि मै ऐसे किसी मुकाबलेसे अपनेको अलग रखूँ। लेकिन फिलहाल तो मै स्थितिको देख ही रहा हूँ। मै मोतीलालजीके उत्तरकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ।

अब मलाबारपर आइए। अनेक सूत्रोसे मेरे पास प्रार्थनापत्र आये है। आप मुझसे क्या काम लेना चाहते है? मै सोच रहा था कि किसीको वहाँ आपके साथ मिलकर एक विशेप रिपोर्ट तैयार करनेके लिए भेजूँ। परन्तु चूँकि अभी ऐसा कुछ नही हो पाया है इसलिए अब मै चाहूँगा कि आप मुझे इस विषयमे अपनी राय दे। बहुत बडी मात्रामे कपडे इकट्ठे किये जा चुके है। उनके वितरणके विषयमे भी आप मुझे सुझाव दे।

मै दिल्लीमें कुछ ज्यादा प्रगति नही कर पाया हूँ। कुछ ठीक समझौता हो जायेगा, ऐसी आशा अब भी है। लेकिन बात बहुत नाजुक है।

हाँ, आपका अनुमान ठीक है। वे मित्र सरलादेवी[3] ही है। वे मुझपर और भी सामग्री लादना चाहती है, पर मैने और गुजाइश निकालनेसे इनकार कर दिया है।

१. बेलगाँव कांग्रेसका।
२. देखिए "पहली परीक्षा", २४-८-१९२४।
३. सरलादेवी चौधरानी।

आरोपका खण्डन करते हुए कुछ ब्राह्मणोंने बहुत रोचक पत्र भेजे हैं। एक तो मैंने प्रकाशित भी कर दिया है।

आपका,
मो० क० गांधी

[पुनश्च :]

मेरा कार्यक्रम :

२९ अगस्तसे ३ सितम्बरतक बम्बईमें, ४थीको पूना, ५वीको बम्बई। फिर अनिश्चित, सम्भवत ५ को ही बम्बईसे दिल्लीको रवाना हो जाऊँ।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

२६. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

[२५ अगस्त, १९२४ के पूर्व][1]

परम प्रिय चार्ली,

रंगूनसे भेजा हुआ तुम्हारा तार[2] मिला। तुम्हारे भेजे सभी लेख मुझे मिल गये हैं।

मेरे खयालमें अफीमके बारेमें तुम मुझसे जो-कुछ भी करनेकी अपेक्षा रख सकते हो, वह सब मैं कर चुका हूँ। कह नहीं सकता क्यों, किन्तु मुझे लगता है कि इस मामलेमें मैं जितना तुम्हारे लिए कर रहा हूँ उतना खुद इस समस्याके लिए नहीं कर रहा हूँ।

इस सवालपर तुम्हीं विचार करो कि तुम्हारे मलाया हो आनेके बाद भी क्या बनारसीदास और वझेको[3] वहाँ जानेकी जरूरत रह जाती है।

मैं आशा करता हूँ कि परिवर्तनसे तुम अवश्य लाभान्वित हुए होगे।

तुम्हें मेरे लिए परेशान होनेकी जरूरत नहीं। यहाँ तो सब-कुछ बिलकुल विपर्यस्त है, लेकिन मैं बहुत प्रसन्न हूँ और काफी अच्छी तरह हूँ।

सस्नेह,

तुम्हारा,
मोहन

१. पत्रमें उल्लिखित सी० एफ० एन्ड्रयूज द्वारा प्रेषित लेखोंकी प्राप्तिके आधारपर; देखिए अगला शीर्षक।

२. उक्त तार सकुशल पहुँचनेकी सूचना देते हुए १४ अगस्तको भेजा गया था।

३. एस० ए० वझे, साम्राज्यीय नागरिकता संघ (इम्पीरियल सिटीजनशिप एसोसिएशन) के मन्त्री।

[पुनश्च :]

गुरुदेवको मेरी याद दिलाना। मैं आशा करता हूँ कि वे प्रसन्न हैं। बडो दादाके पत्र आते रहते हैं।

अंग्रेजी पत्र (जी० एन० २६३८) की फोटो-नकलसे।

२७. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

२५ अगस्त, १९२४

प्रिय चार्ली,

श्री ओल्डहमकी लिखी 'क्रिश्चियनिटी ऐंड द रेस प्रॉब्लम' तुमने देखी है क्या? कैसी है? के० टी० पॉलका बडा आग्रह है कि मैं इसे प्राप्त करूँ और पढ़ूँ। यदि तुम भी ऐसा चाहते हो तो मेरे लिए एक प्रति कहीसे प्राप्त करो।

बर्मापर तुम्हारा लेख[1] मैंने पढा। स्थिति बहुत आघात पहुँचानेवाली है, पर तुमने इसे जल्दीमे लिखा है। मैं समझता हूँ कि तुमने वहाँ इतना ज्यादा देखा है कि तुम्हारे लिए उसका ठीक-ठीक विश्लेपण करना और उसके कारणोका पता लगाना कठिन सिद्ध हुआ। इसके सिवा जल्दी-जल्दी सारी दुनियाका चक्कर लगा आनेवालोकी टीका करते हुए हम जो कहते है, वही तुमने किया लगता है। क्या तुम कुछ समय सन्तोषके साथ आराम करनेमे नही बिताना चाहोगे? कर्म प्रार्थना है, पर यह पागलपन भी हो सकता है। बर्माके सम्बन्धमे जब तुमने लेख लिखा था, ऐसा लगता है उस समय तुम्हारा मन बहुत क्षुब्ध था। फिर भी मैं इसे प्रकाशित कर रहा हूँ, क्योकि यह तुम्हारे पवित्र हृदयका उद्गार है। हाँ, इतना जरूर कहूँगा कि कोई काम पूरी तैयारीके बिना न किया करो।

अगाध स्नेहके साथ,

तुम्हारा,
मोहन

अंग्रेजी पत्र (जी० एन० २६१२) की फोटो-नकलसे।

१. २८ अगस्त, १९२४के यंग इंडियामें "बर्मामें भारतीय मजदूर" शीर्षकसे प्रकाशित लेखमें मजदूरोंकी भरती करनेवाले ठेकेदारों द्वारा भारतीय मजदूरोंके शोषण और उनपर किये जा रहे अन्यायपूर्ण अत्याचारोंका तथा स्त्रियोंकी दयनीय दशा और जहाजोंमें होनेवाली बेशुमार भीडका वर्णन था।

२८. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

श्रावण कृष्ण ११ [२५ अगस्त, १९२४]

भाईश्री घनश्यामदासजी,

आपका पत्र मीला है। पिताजीकी तबीयत अब अच्छी होगी। प० सुदरलालजीके लीये जो कुछ में लीख सकता था मेंने लीखा।[1]

हिंदु-मुसलमान झगडेका काम दिन-प्रति-दिन कठिनतर होता जाता है। मेरी सूचना आप चाहते हैं उसीकी बुनियाद है। यदि दिल्लीके झगडेकी अच्छी तरहसे तेहकीकात हो सके तो उसपर से ज्यादा काम हो सकता है। मे बिलकुल मानता हु कि आखरमें कई नेताओको अपना शरीरका बलीदान देना पडेगा।

आपका,
मोहनदास

१३७, केनिंग स्ट्रीट
कलकत्ता

मूल पत्र (सी० डब्ल्यू० ६०३४) से।
सौजन्य घनश्यामदास बिडला

२९. भाषण : अहमदाबाद नगरपालिकाके अभिनन्दनके उत्तरमें[2]

[२६ अगस्त, १९२४][3]

आपने जो यह सुन्दर अभिनन्दन-पत्र मुझे दिया है उसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। पर मैं बडे दुःखके साथ महसूस करता हूँ कि मैं अहमदाबादके नागरिककी हैसियतसे इसके योग्य कदापि नही हूँ। यह मत समझिए कि मैं अनावश्यक शिष्टता या झूठे सकोचवश ऐसा कह रहा हूँ। किसी नगरकी नगरपालिकाकी ओरसे अभिनन्दन-पत्र पानेका अधिकारी वही नागरिक हो सकता है जिसने उस नगरकी खास सेवा की हो। मैंने अहमदाबादकी ऐसी कोई सेवा नही की। मेरा खयाल है कि मेरी जिन सेवाओके उपलक्ष्यमें आपने यह अभिनन्दन-पत्र दिया है, उसको देनेकी आपको बिलकुल जरूरत न थी। पर एक तो आपमें से बहुतेरे सज्जन दूसरे क्षेत्रमें

१. देखिए "पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको", २२-८-१९२४।

२. म्युनिसिपल हालमें आयोजित इस सभामें यह अभिनन्दन-पत्र सरदार वल्लभभाई पटेलने पढ़कर सुनाया था।

३. बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्ससे।

मेरे सहकर्मी है और दूसरे हमारा देश स्वभावत उदारताके लिए प्रसिद्ध है, जिसके निवासी होनेका आपको और मुझे अभिमान है। मै जानता हूँ कि इन दो कारणोसे ही मै इस अभिनन्दन-पत्रके योग्य समझा गया हूँ।

मै जब अपने कुछ मित्रोके अनुरोधपर कुछ वर्ष पहले अहमदाबादमे आकर बसा था, तब मैंने सोचा था कि मुझे नगरकी कुछ सेवा करनी चाहिए और अपनेको इस नगरका निवासी कहलानेके लायक बनाना चाहिए। उस समय मै आप बहुतेरे सज्जनोसे परिचित न था, पर मै डा० हरिप्रसादसे अपनी भावी कल्पनाओ और आदर्शोकी बाते किया करता था। उनसे मेरी मुलाकात अकसर होती रहती थी। दक्षिण आफ्रिकामे मैने विभिन्न नगरोकी जो-कुछ सेवा की उसका हाल मै उन्हे सुनाया करता था। आप लोगोको उसका कुछ भी पता नही है और इस बातकी मुझे खुशी है। सच्ची सेवा वही है जिसका दुनियामे ढीढोरा नही पीटा जाता। मै डाक्टर हरिप्रसादके साथ अहमदाबादके स्वास्थ्य-सुधार और सफाई-सम्बन्धी तजवीजोकी चर्चा करता था। हमने सोचा था कि एक ऐसी सेवा-समिति बनाई जाये जो नगरके कोने-कोनेमे घूमकर खुद गटरे, पाखाने तथा सडके साफ करे और लोगोके सामने अपनी खुदकी मिसाल पेश करके उन्हें इन्हे साफ करना सिखाये। हमने नगर-विस्तारकी तजवीजे भी सोची थी और हम लोगोको यह सलाह देना चाहते थे कि वे गन्दी और तग गलियोमे रहना छोडकर नगरके बाहर खुली जगहोमे जा बसे। हमने सोच लिया था कि यह काम नये कर लगाकर सतोषजनक ढगसे नही किया जा सकेगा। इसलिए हमने विचार किया था कि हम लोग भिक्षा-पात्र लेकर लक्ष्मी-पुत्रोके घर पहुँचकर उनसे नगरके बीचमे जगह-जगह जमीने माँगेगे, जहाँ छोटे बालकोके खेलनेके लिए बगीचे बनाये जा सके। अहमदाबादके बच्चे-बच्चेको शिक्षा प्राप्त करनेकी पूरी-पूरी सुविधाये सुलभ बनानेकी तजवीज भी हमने सोची थी। हमने यह भी सोचा था कि नगरकी तमाम दूध-शालाओको नगरपालिकाके अधीन करके शुद्ध और सस्ता दूध लोगोतक पहुँचानेका प्रबन्ध करे। श्री जीवनलाल देसाईने[1] तो यह भी सुझाया था कि मै नगरपालिकामे शरीक हो जाऊँ और अपने सोचे उपायोको काममे लानेकी कोशिश करूँ। पर होनहार कुछ और ही था। रौलट कानूनके रूपमे देशमे ऐसा भारी बवण्डर उठा, जो हम सबको अपनी लपेटमे ले उडा। उसमे कुछ लोगोकी जाने भी गईं जिनमे कसूरवार और बेकसूर दोनो ही थे। मुझे अपनी भयकर भूलके लिए प्रायश्चित्त करना पडा।[2] वह बवण्डर आज भी मौजूद है—हाँ, उसकी शक्ल बदल गई है। हम लोग अपने बस-भर उसे रोकनेकी कोशिश कर रहे है, पर वह काफी नही है और कमसे-कम मुझे तो ऐसा लगता है कि अभी मै अपनी उन तजवीजोको कार्य-रूपमें परिणत करानेकी फुरसत न निकाल सकूँगा। पर मै यह दावा भी क्यों करूँ

१. बैरिस्टर; अहमदाबादके सार्वजनिक कार्यकर्ता; १९१५ में सत्याग्रह आश्रमकी स्थापनामें गांधीजीके सहायक।

२. १४ अप्रैल, १९२० को गांधीजीने तीन दिनका उपवास करनेका निश्चय किया था, देखिए खण्ड १५, पृष्ठ २३१।

कि यदि मैं नगरपालिकामें शामिल हो गया होता तो निश्चय ही अपनी योजनाओंको कार्यान्वित करा लेता? मैं कैसे कह सकता हूँ कि आपके पिछले सभापतियों या आपने ये सब बातें न सोची होंगी या अब न सोच रहे होंगे? मैं यह कहनेकी धृष्टता कैसे कर सकता हूँ कि इस बातके लिए अबतक किसी तरहकी कोशिश नहीं की गई? मैं तो सिर्फ इतना ही कह सकता हूँ कि जब-जब मैं अहमदाबादकी सड़कोंसे गुजरता हूँ तब-तब सड़कोंकी गन्दगी, धूल और दुर्दशा देखकर मेरा हृदय रो उठता है। ऐसी धनिक और महान् परम्परावाली नगरीमें इतनी गन्दगी, यह फाकेकशी क्योंकर रह सकती है?

पर मैं यह अभिमान नहीं कर सकता कि यदि मैं नगरपालिकामें शामिल हुआ होता तो मैं इन तमाम बुराइयोंको दूर कर देता। बहुत मुमकिन है वहाँ भी मुझे वही बदनामी नसीब होती, जो कि दूसरे क्षेत्रोंमें हो रही है। शायद ईश्वरने मेरे वहाँ न जानेमें कुछ भलाई ही सोची हो। परन्तु फिर भी आज मेरे माथेपर यह कलंक तो लगा ही हुआ है कि मैं इस नगरकी कुछ भी सेवा न कर सका और तिसपर भी आज यह अभिनन्दन-पत्र ग्रहण कर रहा हूँ, जिसके मैं सर्वथा अयोग्य हूँ। अतः परमात्मासे मेरी प्रार्थना है कि वह सिर्फ मेरे शुभ हेतुओंपर ही ध्यान रखे और मेरी त्रुटियोंके लिए मुझे क्षमा करे। आप सज्जनोंसे भी मैं प्रार्थना करता हूँ कि कृपया मुझे क्षमा कीजिए और आज आदर्श नगरके स्वप्नका जो वर्णन मैंने आपके सम्मुख किया है उसे याद रखिए। मैं फिर एक बार आपको धन्यवाद देता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २८-८-१९२४

३०. पत्र : अब्दुल मजीदको

२७ अगस्त, १९२४

भाई अब्दुल मजीद[1],

आपका खत मुझे मिला है। आपका अहसान मानता हूँ। आप मुझे याद हैं।

आपका,
गांधी

उर्दू पत्र (जी० एन० ६२१३) की फोटो-नकलसे।

1. राष्ट्रीय विश्वविद्यालय, अलीगढ़के उप-कुलपति।

३१. टिप्पणियाँ

लॉर्ड लिटनकी सफाई

लॉर्ड लिटनने कविवर रवीन्द्रनाथ ठाकुरको एक पत्र लिखकर अपनी सफाई दी है। उनके खुलासेसे मेरी रायमे उनके द्वारा किया गया भारतीय स्त्री-जातिका अपमान घटता नही, उलटे बढ जाता है। वाइसराय महोदयने व्याकरणके सूक्ष्म भेदोकी जो दुहाई दी है, उससे मेरी समझमे स्थिति सुधरती नही। मुझे यकीन है कि जब वाइसराय महोदयने वे अविवेकपूर्ण उद्गार प्रकट किये थे तब भी किसीने यह तो नही माना था कि उनका कथन हिन्दुस्तानकी स्त्रियोके सम्बन्धमे आमतौरपर था। लोगोकी शिकायत तो यह है कि वाइसराय महोदयने वह बात ही क्यो कही? जब कोई जिम्मेदार आदमी किसीपर कोई दोषारोपण करता है तब उसके सम्बन्धमे हमेशा दो अनुमान होते है. एक तो यह कि खुद उसने उन बातोंके सम्बन्धमें अपनी पूरी तसल्ली कर ली है और वह दुनियाके सामने उसे साबित कर सकता है। दूसरा यह कि आरोपसे सम्बन्धित बुराई लगभग सर्व-सामान्य है। अब पुलिसके सबूतके अलावा क्या वाइसराय महोदयके पास अन्य कोई ऐसा सबूत है, जिससे वे सर्वसाधारणको, उदाहरणके लिए कविवरको ही, अपनी बातका यकीन करा सके? क्या वे इस बातको नही जानते कि सर्वसाधारणका विश्वास पुलिसपर नही रह गया है? क्या वे यह नही जानते कि जहाँतक सर्वसाधारणका ताल्लुक है, पुलिसकी स्थिति आमतौरपर प्रतिवादी-जैसी होती है? थोडी देरके लिए यह मान भी ले कि यह तोहमत कुछ मर्दो और कुछ औरतोकी निस्बत सच है, तो क्या वे यह साबित कर सकते है कि यह बुराई इतनी व्यापक हो गई है कि उन्हे उसकी सार्वजनिक निन्दा करनेकी जरूरत पडी? यदि कोई जिम्मेदार हिन्दुस्तानी यह कहे कि अग्रेज सरकारी अधिकारी भ्रष्टाचार और चरित्रहीनताके अपराधी है, क्योकि उसकी जानकारीमें ऐसे इक्के-दुक्के अधिकारियोके मामले है, तो क्या उसका यह कहना न्याययुक्त होगा? अगर कोई ऐसा कहे तो क्या उससे रोषपूर्वक नही कहा जायेगा कि उनके नाम बताओ और उन्हे अदालतमे ले जाओ और साथ ही, उससे इस बातपर माफी न मँगवाई जायेगी कि जो बुराई केवल कुछ लोगोपर घटती है उसे उसने एक पूरे समाजपर थोप दिया है? ऐसी अवस्थामे क्या वह मुलिजम 'कुछ' शब्दकी ओटमे अपना बचाव कर पायेगा? यदि लॉर्ड लिटनके कहनेका अभिप्राय सिर्फ इतना ही था कि अन्य राष्ट्रोकी तरह हिन्दुस्तानी जन-समाजमे भी कुछ पतित लोग है, तब फिर उनकी शिकायतके लिए जगह ही कहाँ रह जाती है, और वह भी ऐसे भाषणमे जो कि गम्भीर विषयपर था, जिसके बारेमें वे जानते थे कि उसका एक-एक शब्द यहाँ बडे ध्यानसे पढा जायेगा और विदेशोमे भी उसका काफी वजन माना जायेगा। अतएव मैं अदबके साथ यह कहे बिना नही रह सकता कि यदि उनका उद्देश्य यह न रहा

हो कि भारतीय स्त्रियो और पुरुषोपर लाछन लगाये जायें, तो उनको विना शर्त अपने आरोप वापस लेकर माफी माँग लेनी चाहिए। ऐसा करके वे अपनी प्रतिष्ठा और गौरवकी वृद्धि ही करेगे। इसके विपरीत, अगर उनके पास वैसे सबूत हो, जैसे कि मैंने सुझाये हैं, तो उन्हे हिम्मतके साथ अपने आरोपोकी पुष्टि करनी चाहिए और जन-साधारणके सामने वे सबूत उपस्थित कर देने चाहिए। लचर किस्मकी सफाई कोई सफाई नही होती। वह तो जलेपर नमक छिडकना होता है।

अधीनताका बिल्ला

भारतका हरएक पत्रकार इस बातको जानता है कि जब बाहरसे आयात होने-वाले सूती कपडेपर चुगी लगाई गई, तब सिर्फ लकाशायरके हितके लिए भारतके बने कपडेपर उत्पादन-कर लगा दिया गया था। उसके खिलाफ विरोधकी आवाजे उठाई गईं और इस बातका वचन भी दिया गया कि इसपर फिरसे विचार किया जायेगा। फिर भी वह आजतक ज्योका-त्यो कायम है। यह कर हमे निरन्तर इस बातकी याद दिलाता रहता है कि भारतका हित इग्लैडके हितके अधीन है — उसके आगे गौण है। इसलिए मै विदेशी मिलोके मुकाबले हिन्दुस्तानी मिलोके कपडेको तरजीह देता हूँ। पर कितने ही लोग इससे चक्करमें पड जाते है। वे उसका आशय ठीक-ठीक नही समझ पाते, क्योकि एक ओर तो मै मिलके कपडेके मुकाबले हाथके बने कपड़ेकी सिफारिश जोर-शोरसे — लगभग आवेशपूर्वक — करता हूँ और दूसरी ओर विदेशी कपडेके मुकाबले देशी मिलके बने कपडेकी रक्षाकी आवाज उठाता हूँ। पर जरा गौर करनेसे ही उन्हे ये दोनो नीतियाँ परस्पर सुसगत लगने लगेगी। यदि भारतवर्षको आर्थिक रूपसे एक स्वाधीन राष्ट्र बनना हो, यदि उसके किसानोकी सदियो पुरानी फाकेकशी मिटानी हो, यदि उन्हे अकालो और ऐसे ही दूसरे सकटोके समय कोई प्रतिष्ठित काम दरकार हो तो देशसे विदेशी कपडेका मुंह काला किये विना चारा नही। अपने कपडा-उद्योगकी रक्षा करना उसका जन्म-सिद्ध अधिकार है। अतएव मै विदेशी मिलोकी होडसे भारतीय मिलोकी रक्षा जरूर करूँगा — भले ही उसका फल यह होता हो कि चन्द रोजके लिए गरीबोको दण्ड भुगतना पडे। ऐसा दण्ड उन्हे तभी भुगतना पडेगा जबकि मिल-मालिक देश-प्रेमको इतना खो बैठे हो कि कपडेका बाजार पूरी तरह अपने हाथमे आ जानेपर वे उसके दाम बढा दें। इसलिए मै कपास तथा भारतके कपडेपर लगे उत्पादन-करको हटाने और आयातपर भारी चुगी लगानेके लिए विना हिचकिचाहटके जोर दे सकता हूँ।

इसी तरह और विना किसी प्रकारकी असगतिके, मै देशी मिलोके मुकाबले हाथ-कती खादीकी रक्षा करूँगा। मैं जानता हूँ कि यदि सिर्फ विदेशोके साथ होडा-होड़ी बन्द हो जाये तो खादीकी रक्षा विना दिक्कत हो सकती है। ज्यो ही लोकमत इतना प्रबल हुआ कि उसका प्रभाव पड सके, त्यो ही यहाँसे विदेशी कपडेका मुँह काला हो जायेगा और वही शक्ति मिलोके मुकाबलेमे खादीकी रक्षा करेगी। पर मुझे तो यह दृढ विश्वास है कि खादी तो मिलोसे विना किसी अशोभन टकरावके ही अपने पैर जमा लेगी। परन्तु यह जरूरी बात है कि जबतक खादीके भक्तोकी

सख्या बहुत थोडी है तबतक उन्हे लाजिम है कि वे देशी मिलोतक मे बने अथवा मिलके सूतसे बने कपडोकी बजाय एकमात्र खादीका प्रचार करे। लोगोको देशी मिलोके कपडे या खादीका विकल्प देना, मानो खादीको निर्मूल कर देना है।

मिलकी खादी

इसपर कोई अधीर देशप्रेमी कहेगा "जब कि मिल-मालिक नकली खादी भोली-भाली जनताके सिर मढकर उनकी आँखोमे धूल झोकते नही हिचकते तब आपके दिलमे मिलोके लिए कैसे गुजाइश हो सकती है?" हाँ, मुझे इस नकली खादीका पता है। मैने जान-बूझकर ऐसी नकली खादीके कुछ बढिया नमूने अपने सामने रख छोडे है, जिससे कि वे मुझे मेरे इस कर्त्तव्यकी याद दिलाते रहे कि मुझे ऐसे मिल-मालिकोके इस राष्ट्र-विरोधी आचरणके बावजूद उनपर गुस्सा नही करना है। मै यह भी जानता हूँ कि बिना खादीकी होडा-होडीमे पडे भी वे अपना रोजगार अच्छी तरह कर सकते थे। उन्हे कमसे-कम अपने मोटे कपडेको झूठ-मूठ खादीके नामपर बेचनेके पापसे तो बचना ही चाहिए था, क्योकि यह तो वे अच्छी तरह जानते है कि 'खादी' नाम केवल उसी कपडेके लिए इस्तेमाल किया जाता है जो कि हाथ-कता और हाथ-बुना हो। परन्तु यो बुराईका जवाब बुराईसे देनेसे वह भलाई नही हो सकती। मेरा सत्याग्रह-धर्म मुझसे कहता है कि बदला लेनेकी नीयत न रखो। उनके राष्ट्र-विरोधी आचरणका अनुकरण मै तो नही कर सकता। मुझे निश्चय है कि खादीके अनुरागी लोग यदि अपने विश्वासपर दृढ और सच्चे बने रहे तो तमाम कठिनाइयोके होते हुए भी हाथ-कती खादी फूलने-फलने लगेगी। इसलिए असहयोगियोको चाहिए कि कपासपर लगे उत्पादन-करको हटानेकी ही नही, बल्कि मिलोके महान् उद्योगकी रक्षाके लिए भी बराबर आवाज उठाते रहे और कुछ मिले जो जानमे या अनजानमे खादीको हानि पहुँचा रही है, उसका कुछ खयाल न करे।

विदेशोमें रहनेवाले भारतीय

मै श्री एन्ड्रयूज द्वारा भेजे गये एकाधिक लेख एक ही अकमे छाप रहा हूँ। ये सब इसी सप्ताहके दौरान प्राप्त हुए है। इनसे पता चलता है कि उनके मनमें भारतके लिए कितना उत्कट प्रेम है और हर अन्यायके विरुद्ध उनके मनमें कितना रोप है। इन लेखोसे एक ही नजरमे पता चल जाता है कि दुनियाके विभिन्न भागोमे बिखरे हुए हमारे देश-भाइयोसे सम्बन्धित हमारा काम कितना कठिन है। जिन दिनो श्रीमती नायडू दक्षिण आफ्रिकामे थी, उन्ही दिनो नेटाल अध्यादेशको बनानेकी तैयारी बडे जोर-शोरसे चल रही थी। अब इस अध्यादेशसे स्पष्ट हो गया है कि श्रीमती नायडूके महत्त्वपूर्ण कामको और आगे बढाना है। केनियामे आफ्रिकियो और भारतीयोके साथ जो धोखा किया गया है वह तो इतना बडा अन्याय है कि बेचारा भारत उससे निपट नही सकता। जिस प्रणालीके अन्तर्गत हमारे देशवासी बर्मा जाते है वह तो इतने भयकर रूपसे अनैतिकतापूर्ण है कि हमे निरन्तर जागरूक रहनेकी आवश्यकता है। जिन दिनो मै तीसरे दर्जेमें सफर किया करता था तब मैने अपनी आँखो देखा कि

कलकत्ता और बर्माके बीच स्टीमरके डेकपर सफर करनेवालोपर क्या गुजरती थी। उस समय मैंने डेक-यात्रियोकी दशाको अमानवीय बताया था। उस समय मैं समझता था कि मद्रास और रगूनके बीच यात्रा इससे भी कही बदतर थी। इसका कारण स्टीमर कम्पनीकी कभी न बुझनेवाली पैसेकी प्यास थी। वह जानते हुए भी जहाजोपर गन्दगी और जिल्लतको चलने देती थी, बल्कि उसे शह भी देती थी। सरकार, जो कम्पनीको डेक-यात्रियोके शारीरिक और नैतिक स्वास्थ्यकी घोर अवहेलना करते हुए अपनी स्टीमर-सेवा चलाने देती है अथवा कम्पनी, जो यह अन्याय करती है, अथवा यात्री, जिन्हे विदेशमे आजीविका कमानेकी खातिर शारीरिक और नैतिक दोनो ही दृष्टियोसे गन्दगीमे लोटना भी कबूल है — इनमे से किसका दोष है, सबसे बडा अपराधी कौन है, यह कहना मुश्किल है। श्री एन्ड्रयूज एक निजी पत्रमे कहते हैं कि वे शीघ्र ही डेकपर यात्रा करनेवालोकी दशामे निश्चित सुधार होनेकी आशा करते हैं। हम आशा करते है कि इस नेक अंग्रेजकी आशा पूर्ण होगी।[1]

ध्यान दीजिए

अ० भा० खादी बोर्डके मन्त्रीने सभी सम्बन्धित लोगोके लाभार्थ नीचे लिखी सूचनाएँ भेजी हैं :

> (१) अधिकांश सूत भेजनेवाले सदस्योने अपना रजिस्टर-नम्बर नहीं लिखा है। इसका कारण शायद यह हो कि प्रान्तीय खादी मण्डलोने अपने-अपने सदस्योंको उनके रजिस्टर-नम्बरकी सूचना न दी हो।
>
> (२) रजिस्टरोंमें वर्णानुक्रमसे सदस्योकी सूची नहीं दी गई है; उनमें उनके नाम खोजनेमें भी दिक्कत पड़ती है। इस तरहकी वर्णानुक्रमणिकाके सम्बन्धमें जो हिदायतें दी गई है, उनका पालन बहुत कम प्रान्तोंने किया है। जिन सदस्योंने अपना रजिस्टर-नम्बर नहीं लिखा है, रजिस्टरमें वर्णानुक्रमसे सूची न होनेपर उनके नाम छाँटना प्रायः असम्भव हो जाता है।
>
> (३) हिदायतोके विपरीत कितने ही सदस्यो और गैर-सदस्योंने अपना सूत सीधा यहाँ, इस दफ्तरको भेज दिया है। उन्हे सूचित कर दिया जाना चाहिए कि आगेसे सदस्य और गैर-सदस्य, दोनों अपना-अपना सूत अपने प्रान्तके ही दफ्तरमें भेजा करें।
>
> (४) बहुतेरे लोगोंने सूतकी लम्बाई नापकर नहीं भेजी है। प्रान्तीय मन्त्रीको चाहिए कि वे पार्सल रवाना करनेके पहले यह देख ले कि हर शख्सके सूतपर पर्ची लगी है या नहीं और उसपर आवश्यक तफसील दर्ज है या नहीं।

सूत-कताईकी व्यवस्था उसी हालतमें पुर-असर और कामयाब हो सकती है जब कि दी गई हिदायतोका पालन कामिल तौरपर किया जाये। इसलिए मै आशा करता

१. सी० एफ० एन्ड्रयूजके लेखके सारांशके लिए देखिए "पत्र: सी० एफ० एन्ड्रयूजको", २५-८-१९२४ की पाद-टिप्पणी।

हूँ कि अगले माहसे अ० भा० खादी-बोर्ड द्वारा समय-समयपर दी गई हिदायतोका पूरा-पूरा पालन किया जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २८-८-१९२४

३२. गुलबर्गाका पागलपन

पिछले सप्ताह मैंने इशारा किया था[1] कि हिन्दुओके मन्दिरोको अपवित्र करनेकी जो हवा आजकल बह रही है उसके पीछे जरूर कोई सगठित जमात है। इस सिलसिलेमे गुलबर्गाकी मिसाल सबसे ताजा है। हिन्दुओकी ओरसे मुसलमानोको अगर उत्तेजनाका कोई कारण दिया गया हो तो वह चाहे कैसा भी क्यो न रहा हो, लेकिन मुसलमानोकी हिसात्मक कार्रवाइयाँ किसी बडी विपत्तिकी सूचक हैं। मन्दिरोको अपवित्र करना तो किसी भी हालतमें उचित नही कहा जा सकता। मौलाना शौकत अलीने जब शम्भर और अमेठीमे मन्दिरोको अपवित्र करनेका हाल सुना तो वे गुस्सेमे कह उठे थे कि अगर किसी दिन हिन्दू लोग मुसलमानोकी मसजिदोको नापाक करके इसका बदला ले तो ताज्जुब नही होना चाहिए। मौलाना साहबके इन क्रोधपूर्ण वचनोको सुनकर मुमकिन है, हिन्दू लोग फूल उठे या उनको खुशी हो; लेकिन मुझे नही होती और मै हिन्दुओको सलाह देता हूँ कि वे भी इसपर खुश न हो। वे इस बातको अच्छी तरह समझ ले कि मुसलमानोके हर धर्मान्धतापूर्ण कृत्यसे बहुतेरे हिन्दुओके मुकाबले कही अधिक चोट मेरे दिलको पहुँचती है। मुझे इस बातका पूरा ध्यान है कि इस मामलेमे मेरी जिम्मेदारी क्या है। मैं जानता हूँ कि बहुतेरे हिन्दुओका दिल यह कहता है कि ऐसे बहुतेरे दगे-फसादोका जिम्मेदार मै हूँ। क्योकि, उनका कहना है, सोई हुई मुसलमान-जनताको जाग्रत करनेमे मेरा सबसे ज्यादा हाथ है। मै इस इलजामकी कद्र करता हूँ। यद्यपि इस जागृतिमे अपने योगदानके लिए मुझे जरा भी पछतावा नही, तथापि मै महसूस करता हूँ कि उनके कथनमे वजन है। इसलिए अगर और किसी वजहसे नही तो अपनी बढी हुई इसी जिम्मेदारीके खयालसे मुझे बहुतेरे हिन्दुओकी अपेक्षा, इन मन्दिरोके अपवित्र किये जानेकी दुर्घटनाओपर अधिक दुःख होना चाहिए। मै मूर्तिपूजक भी हूँ और मूर्तिभजक भी, पर उस अर्थमे जिसे मै इन शब्दोका सही अर्थ मानता हूँ। मूर्ति पूजाके पीछे जो भाव है मै उसका आदर करता हूँ। मनुष्य-जातिके उत्थानमे उससे बहुत सहायता मिलती है और मै चाहूँगा कि अपने प्राण देकर भी उन हजारो पवित्र देवालयोकी रक्षा करनेकी सामर्थ्य मुझमे हो, जो हमारी इस जननी जन्मभूमिको पुनीत कर रहे हैं। मुसलमानोके साथ जो मेरी मित्रता है, उसके अन्दर यह बात पहलेसे ही ग्रहीत है कि वे मेरी मूर्तियो और मेरे मन्दिरोके प्रति पूरी-पूरी सहिष्णुता बरतेगे। मै मूर्तिभजक इस मानीमे हूँ कि मै उस धर्मान्धताके रूपमे

१. देखिए "टिप्पणियाँ", २१-८-१९२४, उप-शीर्षक "मन्दिरोंकी पवित्रताका भग"।

छिपी सूक्ष्म मूर्तिपूजाको खण्डित करता हूँ जो अपनी ईश्वर-पूजाकी विधिके अलावा दूसरे लोगोकी पूजा-विधिमें किसी गुण और अच्छाईको देखनेसे इनकार करती है। इस किस्मकी सूक्ष्म मूर्तिपूजा, वुतपरस्ती ज्यादा घातक है, क्योकि यह उस स्थूल और प्रत्यक्ष पूजासे, जिसमे कि एक पत्थरके टुकडे या सोनेकी मूर्तिमे ईश्वरकी कल्पना कर ली जाती है, अधिक सूक्ष्म और प्रच्छन्न है।

हिन्दू-मुस्लिम ऐक्यके लिए यह आवश्यक है कि मुसलमान लोग न तो आपद्धर्मके तौरपर और न व्यवहार-नीतिके तौरपर वल्कि अपने मजहवका एक अग समझकर दूसरोके मजहवके प्रति तवतक सहिष्णुता वरते जवतक कि दूसरे लोग अपने-अपने मजहवोको सच्चा मानते रहे और इसी तरह हिन्दुओसे भी यह आशा की जाती है कि वे धर्म और ईमान समझकर दूसरोके धर्मोके प्रति उसी सहिष्णुताका परिचय दें—फिर चाहे दूसरोके धर्म उनको कितने ही प्रतिकूल क्यो न मालूम होते हो। इसलिए हिन्दुओको चाहिए कि वे वदला लेनेकी इच्छाको अपने दिलोमें जगह न दे। सृष्टिकी उत्पत्तिसे लेकर आजतक हम वदले अर्थात् प्रतिहिंसाकी नीतिकी आजमाइश करते आ रहे है और अवतक का अनुभव हमे वतलाता है कि वह वुरी तरह वेकार सावित हुई है। उसके जहरीले असरसे हम आज वेतरह छटपटा रहे है। जो भी हो; पर हिन्दुओको चाहिए कि मन्दिरोके तोडे जानेपर भी वे मसजिदोकी ओर अँगुली-तक न उठायें। यदि वे वदलेका अवलम्वन करेगे तो उनकी वेडियाँ और भी मजवूत हो जायेगी और ईश्वर जाने, उनकी क्या-क्या दुर्गति होगी। इसलिए चाहे हजारो मन्दिर तोड-फोड़कर मिट्टीमे क्यो न मिला दिये जाये, मै एक भी मसजिदको न छुऊँगा और इस तरह धर्मान्ध, दीवाने लोगोके तथाकथित धर्मसे अपने धर्मको ऊँचा सावित करनेकी उम्मीद रखूँगा। अलवत्ता यदि मै यह सुनूँगा कि पुजारी लोग अपने मन्दिरो और मूर्तियोकी रक्षा करते-करते काम आ गये तो मेरे दिलकी कली खिल उठेगी। ईश्वर घट-घट व्यापी है। वह मूर्तिमे भी विद्यमान है। फिर भी वह अपने और अपनी मूर्तिके अपमान और तोड-फोडको चुपचाप सहनकर लेता है। पुजारियोको भी चाहिए कि वे अपने भगवान्की तरह ही अपने मन्दिरोकी रक्षाके लिए कष्ट-सहन करना और मरना सीखे। यदि हिन्दू लोग वदलेमे मसजिदे तोडने लगेगे तो वे अपनेको भी उन्ही लोगोकी तरह धर्मान्ध सावित करेगे जो कि मन्दिरोको अपवित्र करते है और इस तरह वे अपने धर्म अथवा अपने मन्दिरोकी रक्षा तो कर ही नही पायेंगे।

अव उन अज्ञात मुसलमानोसे, जो नि सन्देह इन मन्दिरोकी तोड-फोड़मे भीतर-ही-भीतर शरीक है, मैं कहता हूँ

याद रखो, इस्लामकी जाँच तुम्हारी करतूतोसे हो रही है। मैंने अभीतक एक भी ऐसा मुसलमान नही देखा, जिसने इन हमलोकी ताईद की हो—फिर वे भले ही किसीके उभारे जानेपर ही क्यो न किये गये हो। मुझे जहाँतक दिखाई देता है, हिन्दुओकी तरफसे आपको उत्तेजित होनेका मौका या तो दिया ही नही गया है या दिया भी गया है तो वहुत ही कम। पर अच्छा, फर्ज कीजिए कि वात इसके खिलाफ हुई है अर्थात् हिन्दुओने मुसलमानोको दिक करनेके लिए मसजिदके नजदीक

वाजे बजाये और यहाँतक कि किसी मीनारपर से एक पत्थर उखाड लिया, तो भी मैं कहनेका साहस करता हूँ कि मुसलमानोको मन्दिरोको अपवित्र नही करना चाहिए था। बदला भी आखिर एक हदतक ही लिया जा सकता है। हिन्दू लोग अपने देवालयको जानसे अधिक मानते है। हिन्दुओकी जानको नुकसान पहुँचानेकी बात तो किसी हदतक समझमे आ सकती है, पर उनके मन्दिरोको हानि पहुँचानेकी बात समझमें नही आ सकती। धर्म जीवनसे बढकर है। इस बातको याद रखिए कि दूसरे धर्मोके साथ तात्त्विक दृष्टिसे तुलना करनेमे चाहे किसीका धर्म नीचा बैठता हो, परन्तु उसे तो अपना वही धर्म सबसे सच्चा और प्रिय मालूम होता है। परन्तु जहाँतक अनुमान किया जा सकता है, हिन्दुओकी तरफसे मुसलमानोको उत्तेजनाका मौका ही नही दिया गया। मुलतानमे जब मन्दिर अपवित्र किये गये तब बिना-किसी उत्तेजनाके ही किये गये थे। हिन्दू-मुस्लिम तनावके विषयमे लिखे अपने लेखमें[1] मैंने कुछ ऐसे स्थानोकी चर्चा की है, जहाँ हिन्दुओ द्वारा मसजिदोके अपवित्र किये जानेकी बात कही जाती है। मैं इन आरोपोके सम्बन्धमे सबूत एकत्र करनेकी कोशिश कर रहा हूँ। परन्तु अबतक मुझे उनका कुछ भी सबूत नही मिला है। अमेठी, शम्भर और गुलबर्गाकी जो खबरे प्रकाशित हुई है, ऐसे काम करके आप इस्लामकी कीर्तिको बढाते नही हैं। अगर आप इजाजत दे तो मैं कहूँगा कि इस्लामकी इज्जतका भी मुझे उतना ही खयाल है जितना कि खुद अपने मजहबका। यह इसलिए कि मैं मुसलमानोके साथ पूरी, खुली और दिली दोस्ती रखना चाहता हूँ। पर मैं यह कहे बिना नही रह सकता कि मन्दिरोको अपवित्र करनेकी ये घटनाएँ मेरे हृदयके टुकडे-टुकडे कर रही है।

दिल्लीके हिन्दुओ और मुसलमानोसे मैं कहता हूँ .

यदि आप इन दो जातियोमे मेल-मिलाप कराना चाहते हो, तो आपके लिए यह अनमोल अवसर है। अमेठी, शम्भर और गुलबर्गामे जो-कुछ हुआ है, उसे देखनेके बाद आपका यह दुहरा कर्त्तव्य हो जाता है कि आप इस मसलेको हल कर डाले। आपको अपने बीच हकीम अजमलखाँ साहब और डा० असारी-जैसे मुसलमान सज्जनोके होनेका सौभाग्य प्राप्त है, जो अभी कलतक दोनो जातियोके विश्वासपात्र थे। इस तरह आपकी परम्परा उच्च रही है। अपनी दलबन्दियोको तोडकर और ऐसी दिली दोस्ती कायम करके जो किसी तरह न टूट पाये, आप इन लडाई-झगडोकी शुभ परिणति कर सकते है। मैंने तो अपनी सेवाएँ आपके हवाले कर ही दी है। यदि आप मुझे दोनोका मध्यस्थ बनाना पसन्द करे तो मैं दिल्लीमे जमकर बैठनेके लिए तैयार हूँ और उन दूसरे सज्जनोके साथ, जिन्हे आप चुने, सच्ची बातोका पता लगानेकी कोशिश करूँ। इस सवालके स्थायी निपटारेके लिए यह आवश्यक है कि पहले हम इस बातकी पूरी तहकीकात करे कि पिछली जुलाईमे दरहकीकत क्या-क्या हुआ और वह क्योकर हो पाया। मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप शीघ्र ही इस सम्बन्धमे कोई निर्णय लीजिए। हिन्दू-मुसलमानोका सवाल एक ऐसा सवाल है जिसके ठीक-ठीक हल होनेपर ही निकट भविष्यमे भारतका भाग्य निर्भर करता है। दिल्ली इस

१. देखिए खण्ड २४, पृष्ठ १३९-५९ ।

सवालको हल कर सकती है क्योंकि दिल्ली जो कुछ करेगी, उसीका अनुसरण दूसरी जगहोंपर होगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २८-८-१९२४

३३. आँकड़ोंपर विचार

१५ अगस्तको खत्म होनेवाले महीनेके लिए आये सूतकी आखिरी फेहरिस्त नीचे दी जाती है। २५ अगस्ततक जितना सूत आया है, वह इसमें शामिल किया गया है। इसके बाद जो सूत आयेगा वह अगले महीनेमें गिना जायेगा।

प्रान्तका नाम	प्रतिनिधियोंकी संख्या	सदस्य कतैये	गैर-सदस्य कतैये	कुल सूत भेजनेवाले
आन्ध्र	१,६५३	३०२	१२७	४२९
असम	२५०	३४	२	३६
अजमेर	५७	९	६	१५
बम्बई	२४२	६४	२१	८५
बर्मा	३६	१	१	२
बिहार	१,०७४	१७४	३४	२०८
बंगाल	१,५४९	४०१	४३	४४४
बरार	२५५	१	—	१
मध्य प्रान्त (मराठी)	९४२	४४	२३	६७
मध्य प्रान्त (हिन्दी)	१,३२४	६६	५	७१
दिल्ली	१८५	६	६	१२
गुजरात	४०८	१७७	६६८	८४५
*कर्नाटक	१६३	२३	१८	४१
केरल	५३	२	—	२
महाराष्ट्र	६७४	१३७	२५	१६२
*पंजाब	२५५	२३	—	२३
*सिन्ध	२६२	३६	१२	४८
*तमिलनाड	८२६	७९	११	९०
संयुक्त प्रान्त	१,५८१	१३५	२७	१६२
उत्कल	४१३	३२	५	३७
कुल योग	१२,२०२[1]	१,७४६	१,०३४	२,७८०

*यहाँके रजिस्टर अधूरे हैं।

१. साधन-सूत्रमें यह संख्या '११,३०२' है।

काग्रेसके प्रस्तावके अनुसार जिन सदस्योने सूत भेजा है उनकी तादाद रजिस्टरमे दर्ज सख्याकी सिर्फ १४ फीसदी है। गैर-सदस्य सूत भेजनेवालोकी सख्या सूत कातनेवाले सदस्योकी ६७ फीसदी है। प्राय हरएक प्रान्तने इस बार कम सूत भेज पानेके लिए माफी चाही है। अगले महीनेमे वे इससे कही अच्छा नतीजा दिखानेकी आशा रखते है। इस सूचीमे गुजरातका नम्बर सबसे पहला है। पर इसमे कोई आश्चर्यकी बात नही। क्योकि सूत कातनेकी शिक्षा देनेकी सुविधाएँ और व्यवस्था यहाँ सबसे अच्छी है। बरार सबसे फिसड्डी रहा। मै तो आशा कर रहा था कि बरारका विश्वास चरखेपर न होनेपर भी वह काग्रेसकी आज्ञाका पालन अवश्य करेगा और मै उसे बधाई दूँगा। मै बरारकी प्रान्तिक समितिसे अनुरोध करता हूँ कि वह नियमोका पालन करे। फिर क्या बरारमे ऐसे लोग नही है, सदस्य चाहे न हो, जो चरखेके कायल है? गुजरातके बाद दूसरा नम्बर है बगालका। यह बात ध्यान देने लायक है। ऐसा मालूम होता है कि वह गुजरातको हरा देगा। होना भी यही चाहिए। क्योकि बगाल तो उन नफीस कतैयोकी जन्मभूमि है जिनकी टक्करके कतैये दुनियामे कही पैदा ही नही हुए। बगालको ही ईस्ट इडिया कम्पनीकी क्रूरताका पूरा-पूरा शिकार होना पडा था। ऐसी हालतमे इससे बढकर ठीक बात दूसरी हो ही नही सकती कि बगाल भारतको सबसे अधिक सूत कातनेवाले स्वयसेवक देकर औरोको रास्ता दिखाये। गुजरातके बाद बगालके दूसरे नम्बरपर होनेका रहस्य वहाँ डाक्टर राय द्वारा किया गया सगठन और व्यवस्था है। यदि नेता लोग आगे बढे तो कार्यकर्त्ता बढनेके लिए तैयार है। मै आशा करता हूँ कि मै अगले सप्ताह सूतकी अच्छाई-बुराई आदिकी तफसील दे सकूँगा। फिलहाल तो इतना ही कहना काफी होगा कि यदि लोगोके उत्साहका यही क्रम रहा तो हम बिना दिक्कत ऊँचे नम्बरका बुनने लायक सूत प्राप्त करनेकी समस्या हल कर सकेगे। खादी-प्रचारके रास्तेमे यही सबसे बडी बाधा रही है।

[अग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २८-८-१९२४

३४. दो पहलू

काग्रेसका कताई सम्बन्धी प्रस्ताव काग्रेसियोकी मनोवृत्तिके अध्ययनकी खासी सामग्री पेश कर रहा है। जब अ० भा० कांग्रेस कमेटीने चरखा कातनेका प्रस्ताव किया तब कही काग्रेसियोकी समझमे आया कि चरखा कातना तभी लोकप्रिय और सार्वत्रिक हो सकता है जब कमसे-कम काग्रेसके प्रतिनिधि केवल कताई सीखना ही नही बल्कि रोज चरखा कातना भी अपना कर्त्तव्य माने। अब वे इस बातका महत्त्व समझने लगे है। अबतक तो काग्रेसके इस आशयके एक पिछले प्रस्तावके रहते हुए भी कि तमाम काग्रेसियोको कमसे-कम चरखा कातनेकी कला सीख लेनी चाहिए, बहुतोने उसे छुआतक न था।

ऐसी अवस्थामें क्या आश्चर्य कि चरखा-कताई इतनी नही बढ पाई जिससे विदेशी कपडेका बहिष्कार सफलतापूर्वक हो सके। पर अब तो वे लोग भी कातने लगे हैं जो यह समझते थे कि हम तो कभी कात ही न सकेंगे; यही नही, वे उसे पसन्द भी करने लगे है। एक महाशयके पत्रका कुछ अश मै नीचे देता हूँ, जिससे यह बात और स्पष्ट हो जाती है

> कातनेका काम मैंने कुछ देरसे शुरू किया। सामग्री जुटानेमें कुछ दिन और बीत गये। फिर, कुछ दिनोंतक मुझे अपने औजारोंसे झगड़ना पड़ा। इस तरह पता चला कि मैं किस किस्मका कारीगर हूँ। जब चरखेने बुद्धिके आगे सिर झुकाया, तो पूनियोने बगावत शुरू कर दी। नालायक पूनियाँ अड़ने लगीं, धागा देनेसे इनकार करने लगीं, लेकिन दिल्लगी यह कि ये सबकी-सब एक रस्सा बनकर निकलनेमें जरा न सकुचाती थीं। मुझे ऐसा मालूम हुआ कि तत्त्वज्ञानकी कुर्सीपर पड़े-पड़े सूक्ष्म काल्पनिक विचार-मालाका महीन तार निकालना बड़ा आसान था। चरखेपर वास्तविक सूत कातना कहीं कठिन है। यदि मुझे यह पहलेसे मालूम होता कि नटखट महात्मा हमें आगे चलकर इस झंझटमें फँसायेंगे तो मै १९२१में उनकी पुकारके अनुसार कालेजकी अपनी आरामकुर्सीसे असहयोग करनेसे पहले हजार बार सोचता। उस समय मैंने यह खयाल किया था कि मैं तो एक नेताकी हैसियतसे सैकड़ों सभा-मंचोपर जाकर चरखेपर लम्बे-लम्बे व्याख्यान झाड़ा करूँगा। यह तो मैंने ख्वाबमें भी न सोचा था कि मुझे चरखा कातना पड़ेगा। पर अब मेरा भ्रम बुरी तरह दूर हो गया। अच्छा, तो मैं इस होनहारके आगे सिर झुकाता हूँ। अब पीछे कदम हटानेका तो सवाल ही कैसे खड़ा हो सकता है? मैं अपनी मेहनतका तुच्छ फल आपकी सेवामें भेज रहा हूँ। जो शर्तें लगाई है, उनमें से एकका भी पालन नहीं हो पाया है। पर मैं आपको यकीन दिलाता हूँ कि मेरा दिल निराश नहीं हुआ है और अब भी मुझे आशा है कि मैं बहुत बढ़िया नतीजा दिखा सकूँगा।

मैं ऐसे और भी कितने ही उदाहरण दे सकता हूँ, जिनमे लोग जरा देर करके, पर झपाटे और दृढताके साथ कताईमें जुट पडे हैं।

पर पाठकोको दूसरा पक्ष भी जता देना उचित है। मैं नीचे एक पत्र देता हूँ। यह एक काग्रेस कमेटीके सभापतिका भेजा हुआ है। इस किस्मका यह एक ही खत मुझे अबतक मिला है। वे कहते है

> मैं अ० भा० कांग्रेस कमेटीके इस प्रस्तावको नाजायज मानता हूँ। आज कहा जाता है कि या तो चरखा कातो या इस्तीफा दो। कल कहेंगे अपना खाना खुद पकाओ या इस्तीफा दे दो या यह भी कहा जा सकता है कि अपना सिर मुड़ाओ, नहीं तो इस्तीफा दो। इस चरखेके सिद्धान्तपर मुझे विश्वास

नहीं। मुझे इसके फायदोंपर भी एतबार नहीं। थोड़ेमें कहूँ तो मुझे इसपर इतना अविश्वास है जितना कि महात्मा गांधीको इसपर विश्वास है। यह उनके मनोविनोदका साधन है। मैं न तो इस प्रस्तावको मानूँगा और न इस्तीफा ही दूंगा। हाँ, समिति चाहे तो मुझे शौकसे निकाल दे।

किसी सस्थामे रहना कोई दिल्लगी नही है। उसका सभापति होना तो और भी बडी जिम्मेदारीकी बात है। जब-जब चरखेपर राय ली गई होगी तब-तब सम्भवत ये महाशय भी उसके पक्षमे अपना हाथ ऊँचा उठाते रहे होगे। पर अब, जब कि बिल्लीके गलेमें घटी बाँधनेका वक्त आया, वे आसमानपर चढकर अपनी नाएतबारीका शोर मचाने लगे। दिन-भरका भूला-भटका शामको घर आ जाये तो बुरा नही। मै उन्हे उनके दृढ विश्वासपर बधाई देता हूँ, पर मुझे भय है कि मै उनकी अवज्ञाको अनुकरणीय नही बनन दे सकता। सस्थाओके सदस्य और खास करके उनके पदाधिकारी ही यदि उनकी नीतिका पालन करनेसे इनकार कर दे और उसके खिलाफ रहते हुए भी पदासीन रहे तो इस तरह दुनियाकी किसी सस्थाका काम हरगिज नही चल सकता। स्वराज्य हासिल करनेके लिए हमे कठोर नियम-पालनकी जरूरत है। इनको तथा इनके सदृश विचार रखनेवाले सज्जनोको जानना चाहिए कि हम एक वडे कठिन और नाजुक काममे लगे हुए है। वह है सत्ताको उस सगठनके हाथसे छीननेका काम जिसके सदस्य बडे काबिल, मेहनती, उद्योगशील, बुद्धिमान, पुरुषार्थी और सबसे बढकर यथावत् नियम-पालनके पूरे-पूरे आदी है। यदि हम बिना खून-खरावीके विजय पाना चाहते हो तो मै बडे अदबके साथ इन महाशयसे कहूँगा कि फर्ज कीजिए कि चरखा अपने मकसदके लिए बेकार है, तो भी अनुशासनके लिहाजसे उसके महत्त्वका अन्दाज नही किया जा सकता। मै उनसे कहना चाहता हूँ कि अनुशासन स्थापित करनेके एक साधनके तौरपर यदि किसीसे अपना खाना खुद ही बनाने या सिर मुडानेके लिए भी कहा जाये तो यह बुरी बात न होगी। ऐसी कसौटियाँ, फिर वे दूसरी तरहसे चाहे हास्यास्पद दिखाई दे, अपने ढगसे अपना एक अलग महत्त्व रखती है। क्योकि इससे इस बातका पता चलता है कि अनुशासनकी भावना कितनी विद्यमान है। किसी प्रस्तावके पास होनेके पहले उसका सब तरहसे विरोध करना न्यायसगत है और कभी-कभी कर्त्तव्य-रूप भी होता है। पर उसके पास हो जानेके बाद दलीलकी गुजाइश नही हो सकती। उस समय सदस्योका एकमात्र यही कर्त्तव्य है कि या तो वे उसका तन-मनसे पालन करे या इस्तीफा देकर अलग हो जाये।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २८-८-१९२४

३५. दक्षिण भारतके बाढ़-पीड़ितोंको सहायता

दक्षिण भारतके पीडितोकी ओरसे निकाली गई अपीलके प्रति लोग लगातार बहुत अच्छा उत्साह दिखा रहे है। प्रतिदिन नकद और कपडे आ रहे है और उनका ढेर लगता जा रहा है। किन्तु सबसे अधिक सन्तोषजनक बात यह है कि गरीब लोग बडी तत्परतासे सहायताके लिए आगे आ रहे है। अछूत लोगोने भी आगे बढकर उदारतापूर्वक सहायता दी है। मेरे सामने एक हृदयस्पर्शी पत्र पडा हुआ है। इसमे एक पूरे परिवारने विशेप रूपसे आत्म-त्याग करके बचाया हुआ धन भेजा है। प्रोप-राइटरी हाईस्कूलके अध्यापको तथा छात्रोने ७२० रुपये भेजे है। महाविद्यालयने ५०० रुपये इकट्ठे किये है, जिसमे से उन्होने वस्त्रहीन लोगोके लिए २०० रुपयेका खद्दर खरीदा है। मुझे विश्वास है कि इस प्रकारके दानके बारेमे जानकारी प्राप्त करके हमारे पीडित देशभाइयोको सच्ची सान्त्वना प्राप्त होगी। मुझे आशा है, कार्यकर्त्ता इस बातको याद रखेंगे कि प्रकृतिने मुसलमान और हिन्दू, ईसाई और यहूदी किसीके बीच कोई भेद नही किया है, इसलिए वे भी अपने-अपने सगठनोके जरिये सहायता भेजते समय इस प्रकारका कोई भेद-भाव नही बरतेंगे। किन्तु यदि वे सहायताको अपने ही सम्प्रदायतक सीमित रखेंगे तो यह असह्य होगा।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २८-८-१९२४

३६. भाषण : बम्बई-निगमके अभिनन्दनके उत्तरमें

२९ अगस्त, १९२४

निगमके अध्यक्ष महोदय, सदस्यगण, भाइयो और बहनो,

मै आप लोगोके सम्मुख पहले अपनी मातृभाषामे बोला। मै इसके लिए माफी मॉगनेकी जरूरत नही समझता। परन्तु बम्बई विभिन्न लोगोका निवास-स्थान है, इस-लिए मुझे अपने उत्तरका आशय अंग्रेजीमे भी बताना चाहिए।

इस अभिनन्दन-पत्र[1] और इसमे प्रकट किये गये भावोके लिए मै आपको धन्य-वाद देता हूँ। आपने मेरी मानव-जातिके प्रति की गई सेवाओका विशेष रूपसे उल्लेख किया है। मेरे लिए मानव या प्राणिमात्रकी सेवा धर्म बन गई है और मै इस धर्म और राजनीतिमे अन्तर नही करता। मै अवश्य ही राजनीतिसे सर्वथा पृथक्, पूर्ण सेवाके जीवनकी कल्पना नही कर सकता। मै अपने प्रयोगोसे यह साबित करनेका

१. यह सर कावसजी जहाँगीर भवनमें गाधीजीके रोगमुक्त होनेपर सन्तोष प्रकट करनेके लिए बुलाई गई सभामें दिया गया था और इसमें उनकी अमूल्य सेवाओंका उल्लेख था।

प्रयत्न कर रहा हूँ कि राजनीति धर्मके बिना एक भयानक मनोविनोद या क्रीडा-मात्र है, जिसका परिणाम उसमे रत व्यक्तियो और राष्ट्रोके लिए अहितकर ही होता है।

मगर मै देखता हूँ कि अपने राजनीतिक जीवनमे ऊपर बताये गये धर्मको शामिल करनेके मेरे प्रयत्नसे मेरे कुछ परम मित्रो और साथियोको डर लग रहा है। मेरे लिए एक ओर कुआँ और दूसरी ओर खाई है। जहाँ ये मित्र राजनीतिको धर्मके रूपमे चलानेके मेरे प्रयत्नसे डरते है वहाँ एक दूसरा दल चाहता है कि अपना कार्य-क्षेत्र उन्ही कामोतक सीमित रखूँ जिन्हे वह सामाजिक सेवा समझता है, किन्तु यदि मुझे अपने उद्देश्यपर विश्वास है तो मुझे अपने मार्गपर अडिग रहना चाहिए। मेरा विश्वास है कि वह समय तेजीसे पास आ रहा है जब राजनीतिज्ञ मानवताके धर्मसे डरना बन्द कर देंगे और मानव-हितवादियोको राजनीतिक जीवनमे स्थान मिलेगा जो पूर्ण सेवाके लिए अनिवार्य है। मै इसी कारण तो सारे भारतका आह्वान कर रहा हूँ कि वह चरखे और खद्दरके सन्देशको अपनाये और हिन्दू, मुसलमान, पारसी, क्रिस्तान, यहूदी आदि जातियोमे, जो व्यर्थ ही यह सोचती है कि एकका ईश्वर दूसरेके ईश्वरसे अलग है, हार्दिक एकता स्थापित करे। मै इसी कारण यह भी अनुभव करता हूँ कि हिन्दुओका जन्मके कारण किसी स्त्री या पुरुषको अछूत मानना अधर्म है। ये कार्य मेरी समझमे जितने उच्च प्रकारके मानव-हितके कार्य है उतने ही राजनीतिक कार्य भी है। अत आपके मानपत्रके लिए धन्यवाद देनेका सबसे बढिया तरीका यह है कि मै आपका आह्वान करूँ कि आप इस काममे मेरा साथ दे और मेरी सहायता करे और भारतमे अपना प्रधान निगम कहलाना सार्थक करे।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ३०-८-१९२४

३७. पत्र : मोतीलाल नेहरूको

बम्बई

३० अगस्त, १९२४

प्रिय मोतीलालजी,

श्रीमती नायडूने मेरे नाम लिखा आपका पत्र[1] मुझे कल दिया। मूल पत्र अब-तक साबरमती पहुँच गया होगा। पिछले दोनो पत्रोमे[2] मै पूरा, अर्थात् जितना कर सकता था उतना, समर्पण कर चुका हूँ।

इसलिए अब तो आप मुझसे लगभग अपनी ही शर्तोपर अपनी बात मनवा सकते है। "लगभग" इसलिए कहा कि कुछ बाते ऐसी है जिन्हे मै अपने जीवन और दुनियाके सभी सम्बन्धोसे ज्यादा महत्त्व देता हूँ। लेकिन अगर आप मुझे कुछ चीजे

१. २५ अगस्त, १९२४ का।

२. देखिए खण्ड २४, पृष्ठ ५४१-४२ तथा ५८९-९०।

इच्छापूर्वक और पूरे हृदयसे, अर्थात् यह मानते हुए कि यह देना ठीक है, दे तो मैं यह चाहता हूँ

हमारे प्रस्तावमें —

(१) विधान सभाओंके बहिष्कार-सहित पूर्ण असहयोगकी नीति और सिद्धान्तमें काग्रेसका विश्वास दुहराया जाये;

(२) लेकिन १९२५ के अन्ततक विदेशी कपडेके अलावा और सभी चीजोसे सम्बन्धित बहिष्कार स्थगित कर दिया जाये,

(३) हर आदमीको काग्रेसमे शामिल होनेको आमन्त्रित किया जाये,

(४) साम्राज्यके मालके बहिष्कारकी बातको शामिल न किया जाये,

(५) और काग्रेसके कामको सिर्फ हाथ-कताई और हाथ-बुनी खादी, हिन्दू-मुस्लिम एकता और हिन्दुओ द्वारा अस्पृश्यता निवारणतक ही सीमित रखा जाये।

इसका मतलब यह हुआ कि काग्रेसियोके रूपमे काग्रेसियोका कौसिलोसे या बहिष्कारसे कोई सम्बन्ध नही रहना चाहिए, लेकिन अगर चाहे तो वे कौसिलोमे काम करने और जो दूसरे काम काग्रेसकी नीतिके विरुद्ध न हो उन्हे करनेके लिए अपना स्वतन्त्र सगठन बना सकते है। अत कौसिलोके बहिष्कार या इस प्रस्तावके अनुसार स्थगित दूसरे बहिष्कारोंको लागू करनेके लिए कोई सगठन नही हो सकता। वर्तमान राष्ट्रीय स्कूलोको सहायता मिलती रहनी चाहिए और जहाँ सम्भव हो, नये स्कूल खोले जा सकते हैं, लेकिन उनका सरकारसे कोई सम्बन्ध नही होना चाहिए।

चार आनेकी सदस्यताको समाप्त कर देना चाहिए और उसके स्थानपर जो भी आदमी काग्रेसका सदस्य बने वह खादी पहने और हर महीने सदस्यताकी शर्तके रूपमें अपने हाथका कता कमसे-कम २,००० गज सूत दे। अलबत्ता वह चाहे तो पूरे वर्षका सूत एक ही साथ दे सकता है।

काग्रेसको सच्ची और जीवन्त सस्था बनानेका मै और कोई उपाय नही देखता और चरखेके सिवा भारतके गरीबोके लिए और कोई आशा भी दिखाई नही देती और जबतक हम खुद कताई नही करेगे तबतक उनको प्रेरणा भी नही दे सकते।

सविधानमें मैं दूसरे परिवर्तन भी सुझाना चाहता हूँ, लेकिन अभी उनकी चर्चा करनेकी जरूरत नही है। उनका उद्देश्य सिर्फ यह है कि काम प्रभावशाली ढंगसे और वेगसे चले। हमें एक ऐसी घोषणा करनी चाहिए कि कार्य-समितियोको कार्य-कारिणी सस्था माना जाये और अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीको विचारकर्तृ सस्था माना जाये तथा कमेटीमे सिर्फ वही लोग हो जो काग्रेसके सम्पूर्ण कार्यक्रमको पूरा करनेके लिए वचनबद्ध हो। लेकिन मेरे प्रस्तावके अधीन कार्य-समितिमे चुने जानेका जितना अधिकार मुझे है उतना ही आपको भी होगा। मेरे कहनेका मतलब यह है कि यदि चार बहिष्कार स्थगित कर दिये जाते है तो कौसिल-प्रवेश या अदालतमे वकालत करना अपने-आपमे इसके लिए प्रतिबन्धक नही रह जाता। वास्तवमे किसी भी व्यस्त वकील या कौसिल-सदस्यके लिए कार्य-समितिमे आना ठीक नही होगा, क्योकि इसके सदस्योसे काग्रेस-कार्यक्रमकी तीनो बातोके लिए पूरा समय देनेकी अपेक्षा की जायेगी।

मेरी योजनामे फिर बगालके पक्षमे कोई अपवाद[1] करनेका कारण नही रह जाता। स्वराज्यवादी दलके लोग काग्रेसकी ओरसे बिना किसी बाधाके अपने-आपको हर प्रान्तमे सगठित कर सकते हैं। लेकिन काग्रेस-सगठनका तो हर जगह एक ही कार्य-क्रम होना चाहिए। इस प्रकार श्री दास[2] काग्रेस-सगठनको स्वराज्य-सगठनके रूपमें बदल सकते है और वे स्वय एक ऐसा काग्रेस-सगठन भी बना सकते है तथा दूसरोको बनाने दे सकते है जो केवल उक्त तीन काम ही करेगा। उद्देश्य यह है : काग्रेस-सगठन दूसरे सगठनोको न तो सहायता देगा न उनके रास्तेमे बाधा डालेगा, लेकिन दूसरे सभी सगठनोको, अगर उनके सदस्य काग्रेसी हो तो, काग्रेस-कार्यक्रममे सहायता देनी चाहिए। उसी प्रकार जो काग्रेसी बहुत-सी दूसरी चीजोमे विश्वास रखते है वे, यदि काग्रेसने उनका निषेध नही किया है तो, अपनी इन दूसरी गति-विधियोके लिए दूसरे सगठनोमे शामिल हो सकते हैं।

जहाँतक मैं देख सकता हूँ, व्यावहारिक दृष्टिसे तो सिर्फ सदस्यताकी योग्यताएँ ही बाधा बन सकती है, लेकिन आप देखेगे कि अगर हम सभी लोग आर्थिक आव-श्यकताके रूपमे भी खादीमे विश्वास करे तो मेरी बातको स्वीकार करना जरूरी है।

आप देखेगे कि जैसे-जैसे मेरे मनमे विचार आते गये है वैसे-वैसे मै लिखता गया हूँ। आप जो निर्णय करेगे, मुझे कोई आपत्ति नही होगी, क्योकि मैं तो आपकी मर्जीपर ही निर्भर रहना चाहता हूँ। मै अब इस पारिवारिक विवादको समाप्त कर देना चाहता हूँ।

हृदयसे आपका,

अग्रेजी प्रति (एस० एन० १०१४०) की फोटो-नकलसे।

३८. वक्तव्य : राष्ट्रीय एकताके बारेमे[3]

३१ अगस्त, १९२४

मैंने निश्चय किया है कि बेलगाँव काग्रेसके समय या उससे पहले मेरी ओरसे ऐसा कोई विरोध नही होना चाहिए जिससे कि देश दो दलोमे बँट जाये। मैंने पण्डित मोतीलाल नेहरूसे कह दिया है कि मेरा भाव तो सम्पूर्ण समर्पणका है, क्योकि हमारी दशा एक ऐसे घरकी-सी हो गई है जिसके सदस्य आपसमे ही लडनेमे लग गये है। हमे मनसे सारा क्रोध और द्वेष-भाव दूर करके इस दशासे अपना उद्धार करनेके लिए भगीरथ प्रयत्न करना चाहिए और तब हमारा देश न केवल अपने कल्याणके लिए बल्कि सारी मानवताके कल्याणके लिए काम कर सकेगा।

१. वैसा अपवाद, जैसा कि प० मोतीलाल नेहरूने अपने पत्रमें सुझाया था।

२. देशबन्धु चित्तरजन दास।

३. **बॉम्बे क्रॉनिकलने** यह वक्तव्य **न्यू इंडियासे** उद्धृत किया था; **न्यू इंडियाके** अनुसार वह ३१ अगस्तको दिया गया था और उसने उसे १ सितम्बरको प्रकाशित किया था।

ऊपर जो-कुछ कहा गया है उसमे हम लोगोके बीच हुए समझौतेका साराश आ जाता है। अलबत्ता उल्लिखित 'समर्पण' के सम्बन्धमे कुछ तफसीलकी बातोको उसमे छोड दिया गया है, इनका प्रकाशन, जिन कतिपय लोगोसे इस विषयमे चर्चा करना जरूरी है उन्हे अपनी स्वीकृति प्रदान करनेके लिए आमन्त्रित करनेके बाद, कर दिया जायेगा। इस समझौतेमे हम दोनोकी वृत्ति यह रही है कि हम अपनी कार्य-पद्धतियोकी तुलनामें अपने देशको कही ज्यादा प्रेम करते है और हम यह विश्वास करते है कि मानव-जातिकी प्रगतिके लिए भारतका स्वतन्त्र होना आवश्यक है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ६-९-१९२४

३९. भाषण : एक्सेल्सियर थियेटर, बम्बईमे[1]

३१ अगस्त, १९२४

आज यहाँ इतने व्याख्यान हुए है कि यदि सरोजिनी देवीकी सलाहके अनुसार मै चुप ही रहूँ तो हर्ज नही। परन्तु इसमे एक कठिनाई है। मै अपना हथियार घर रख आया हूँ। यदि उसे यहाँ लाया होता तो आपको पदार्थ-पाठ देकर कहता कि आप सब चरखा लेकर मेरी तरह सूत कातने लग जाये।

मुझे पता नही था कि सरोजिनी बहनसे मुझे आज जैसी नसीहत मिलेगी, या मेरे भाग्यमे इतने स्तुति-स्तोत्रोको सुनना बदा होगा। मै अपनी प्रशसा सुन-सुनकर थक गया हूँ। आप निश्चित मानें कि प्रशसा मुझे जरा भी नही सुहाती। पर यहाँ इस बारेमे अधिक नही कहना चाहता। सिर्फ इतना ही कहूँगा कि जिन्होने मेरी प्रशसा की है उनका मै कृतज्ञ हूँ और उनसे प्रार्थना करता हूँ कि वे श्री जयकरके कथनानुसार चुपचाप मुझे सहायता दे। यदि आप सबकी मूक सहायता मुझे मिलेगी तो मै इस भारी जिम्मेदारीके कामका भार उठा सकूँगा।

कुछ और कहनेसे पहले मै कुछ भाइयोसे प्रायश्चित्त कराना चाहता हूँ। हम किसी सभामे जाये उसके पहले हमे सभाका शिष्टाचार सीख लेना चाहिए। सभामे जिसे निमन्त्रित किया गया हो उसके मनोभावको देखकर हमें उसके अनुकूल व्यवहार करना चाहिए। यदि हम ऐसा न कर सके तो बेहतर है कि हम वहाँ न जाये। दो-तीन भाइयोने सभाके इस नियमको भग किया है। भाई जमनादासने[2] जो-कुछ कहा वह अक्षरश सच था। 'महात्मा' के नामपर अनेक वाहियात काम हुए है। मुझे 'महात्मा' शब्दमे से दुर्गन्ध आती है। फिर जब कोई इस बातका इसरार करता है कि मेरे लिए 'महात्मा' शब्दका ही प्रयोग किया जाये तब तो मुझे असह्य पीड़ा

१. यह भाषण पारसी राजकीय मण्डलकी ओरसे जयकरकी अध्यक्षतामें गाधीजीके सम्मानार्थ और मलाबार सहायता कोषके लिए धन-संग्रहके निमित्त की गई सभामें दिया गया था।

२. जमनादास द्वारकादास मेहता, होमरूल लीगके एक प्रमुख सदस्य।

होती है और मुझे जीवित रहना अच्छा नही लगता। यदि मै यह न जानता होता कि मै ज्यो-ज्यो 'महात्मा' शब्दका प्रयोग न करनेपर जोर देता हूँ त्यो-त्यो उसका प्रयोग अधिकाधिक होता है तो मै जरूर लोगोसे स्पष्ट 'ना' कह देता। आश्रममें, जहाँ मैं जीवन यापन करता हूँ, बच्चो, स्त्रियो और पुरुषो, सभीको आज्ञा है कि वे 'महात्मा' शब्दका प्रयोग न करे। किसीको पत्र लिखे तो भी मेरा उल्लेख 'महात्मा' शब्दसे न करे, सिर्फ गाधी या गाधीजी कहा करे। जिन लोगोने भाई जमनादास-को रोका है उन्होने मेरे प्रति अशिष्टता की है, शान्ति भग की है। हमारा सग्राम शान्तिमय है। शिष्टताके बिना शान्ति कैसे हो सकती है? विनयहीन शान्ति, जड शान्ति होगी। हम तो चैतन्यके पुजारी है और चैतन्यमय शान्तिमे विवेक और विनय जरूर रहते है। इसलिए मेरी सलाह है कि जिन लोगोने जमनादासजीके भाषणमे रोकटोक की है वे सब उनसे माफी माँगे। जमनादासजीने तो मेरी बडी स्तुति की है। परन्तु अगर उन्होने यह भी कहा होता कि गाधीके बराबर दु खदायी मनुष्य कोई भी नही है---और जो ऐसा मानता हो उसे ऐसा कहनेका पूरा अधिकार है---तो भी उसे रोकनेका अधिकार किसीको नही हो सकता। हमे उसके भाषणको शिष्टतापूर्वक सुनना चाहिए।

इतनी बात सुनते ही एक सज्जनने सामनेकी पहली गैलरीमें खड़े होकर प्रणाम करके सिर नवाया। गांधीजीने कहा:

इतना काफी है। किन्तु अभी एक-दो सज्जन ऊपर भी है। क्या वे माफी न माँगेगे? मै कहता हूँ कि जो माफी नही माँगेगे वे स्वराज्य लेनेके अयोग्य हैं।

सभामें से भी 'खड़े हो जाओ', 'माफी माँगो' की आवाजे आईं। इसपर दो सज्जनोंने खड़े होकर माफी माँगी। गांधीजीको शांति मिली और जब उन्होंने फिर बोलना आरम्भ किया तब शेष एक सज्जनने भी खड़े होकर माफी माँग ली।

अच्छा, अब कोई ऐसा कुसूर न करे। जितने मनुष्य उतने मत हुआ करते है। यदि हम एक-दूसरेके विचारोको बरदाश्त न करेंगे तो कैसे काम चल सकता है? आज हिन्दू मुसलमानको सहन नही कर सकते और मुसलमान हिन्दुओको सहन नही करते और मन्दिरोको तोडते है। यदि दोनो सहिष्णुताका पाठ सीख ले तो तमाम झगडे बन्द हो जाये। सब लोगोको अपने जीवनमे सर्वत्र सहिष्णुताका व्यवहार करना चाहिए। एक बार जहाँ उसका प्रचार हुआ कि फिर हिन्दू-मुसलमान और पारसी सब एक-दूसरेके विरोधको सहन करेंगे। हमारी प्रगतिमे बाधक सबसे बडी वस्तु असहिष्णुता है। मै इस स्थितिको दूर करनेकी कोशिश कर रहा हूँ। मैं तो तुच्छ प्राणी हूँ, कोई महापुरुष नही। यदि महापुरुष होता तो इस असहिष्णुताको रोक देता। अभी मुझमे शुद्धता, प्रेम, विनय और विवेककी कमी है; नही तो आपको मेरी आँखो और जिह्वामे ऐसी शक्ति दिखाई देती कि आप क्षण-भरमे समझ जाते कि शान्तिमय असहयोगका तरीका यह नही है। मै तो आपसे कह चुका हूँ कि डायर हमारा शत्रु नही है। ओ'डायर भी हमारा शत्रु नही है। उन्हे आप अपना शत्रु न माने। भले ही उन्होने शत्रुओके समान काम किया होगा, फिर भी आप उनपर

दयाभाव रखें। यदि हम उन तकका तिरस्कार नही कर सकते तो फिर जमनादासजी-का तिरस्कार किस तरह कर सकते है? हमारे यहाँ जब कोई अतिथि आता है तब हम अपने घरके लोगो और इष्ट-मित्रोको दूर बैठाकर उसे आसनपर बिठाते हैं। यदि जमनादास हमारे विरोधी हो तो भी वे हमारे अतिथि है। अत हम उनका तिरस्कार नही कर सकते और अगर वे हमारे भाई ही है तब तो उनका तिरस्कार करनेकी कोई बात ही नही।

आप लोगोने जमनादासजीका जो अपमान किया, इससे मुझे बडा दु ख हुआ था। परन्तु आपके अत्यन्त नम्रताके साथ माफी माँग लेनेसे वह दु ख सुखके रूपमे बदल गया है और यह मुझे बहुत अच्छा लगा है। जिन लोगोने माफी माँगी है उनका तो कल्याण होगा ही, किन्तु हमारा भी कल्याण होगा जो इस दृश्यके साक्षी हैं। मै यहाँ विधान सभाकी चर्चा नही छेड़ना चाहता। किन्तु भाई जयकरसे माफी माँगकर विनयपूर्वक इतना तो अवश्य कहूँगा कि ऐसे दृश्य हमे विधान सभाओमें नही दिखाई दे सकते। इस प्रायश्चित्तमे मुझे सच्चे स्वराज्यकी जड दिखाई देती है।

श्री देवधरने[1] यदि मलाबारका जिक्र न किया होता तो भी हर्ज न था, क्योकि आज हम मलाबारके भाई-बहनोके प्रति आदर-भाव प्रदर्शित करनेके लिए ही एकत्र हुए हैं। आप लोगोने तो यथाशक्ति टिकट खरीदकर उनके लिए धन-संग्रह किया है। श्री देवधरके भाषणका दुहरा हेतु था। उन्होने इसके अलावा आपसे नि स्वार्थ सेवा भी माँगी है। और मै इससे सहमत हूँ। 'नवजीवन' और 'यंग इंडिया' के पाठकोको मालूम है कि मै तो बच्चोसे भी कहता हूँ कि जब हमारे सगे भाई-बहन भूखे हो तो तुम क्या करोगे? क्या तुम उन्हे अपने कपडे और खानेमे से कुछ हिस्सा न दोगे? तुम कम खाना खाओ, कम कपडे पहनो और बचतकी रकम मलाबारके लोगोकी सहायताके लिए दो। मै इस तरहका दान आपसे माँगता हूँ। मुझसे बार-बार यह सवाल पूछा जाता है कि इस दानका सद्व्यय होता है या नही? यह टीका उचित भी है और अनुचित भी। जहाँ श्री देवधर हो वहाँ अप्रामाणिकता हो ही नही सकती। कितनी ही बातोमे इनके और मेरे विचारोमे जमीन-आसमानका अन्तर है। इनके कितने ही विचार मुझे पसन्द नही है। परन्तु इनकी पवित्रताके सम्बन्धमे मुझे जरा भी शक नही। मै जब-जब इनकी गरीब कुटियामे जाता हूँ तब-तब मुझे मालूम होता है कि इसमे आत्माका वास है। ये जगलोमे घूमते हैं, धूप-छाँहकी परवाह नही करते और खराब आबोहवाको सहन करते है — यह सब महज शुद्ध सेवाके लिए। अत हमे इनके काममे सहायता क्यो न देनी चाहिए?

हाँ, यदि ये चरखेके खिलाफ कुछ कहे तो मै कहता हूँ, आप इनकी बात बिलकुल न सुने।

हिन्दुस्तान मुझसे कुछ आशा करता है। वह समझता है कि मै बेलगाँवमे कोई ऐसा रास्ता बताऊँगा जिससे हम सब एकमत हो जायेगे अथवा विरोधी विचारोको

१. जी० के० देवधर (१८७१-१९३५); भारत सेवक समाज (सर्वेन्ट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी) के सदस्य तथा बादमें उसके अध्यक्ष।

सहन करने लगेगे। मै अपने आपको धोखा नही दे सकता। अपनी तारीफ सुनकर मै यह नही मान लेता कि मै उस तारीफके लायक हूँ। मेरी स्तुतिका अर्थ सिर्फ इतना ही है कि अभी मुझसे अधिक आशा रखी जाती है—अधिक प्रेमकी, अधिक त्यागकी, अधिक सेवाकी आशा की जाती है। परन्तु मै यह किस तरह कर सकूँगा? मेरा शरीर अब कमजोर पड गया है। इसका कारण है मेरे पाप। बिना पाप किये मनुष्य रोगी नही होता। ईश्वरने हमे शरीर नीरोग रखनेके लिए दिया है। पापका मतलब है कुदरतके नियमोका जान व अनजानमे उल्लघन। अनजानमे भी राज्यके कानूनका उल्लघन करनेपर दण्ड मिलता है। फिर प्रकृतिके कानूनको भग करनेका परिणाम दूसरा कैसे हो सकता है? चोरको माफी नही मिल सकती। हाँ, यदि अपराध अनजानमे हुआ हो तो सजा कुछ कम मिलती है। इसके अलावा और कोई भेद नही है। मै जो बीमार हुआ उसका कारण मेरा ऐसा कोई पाप ही है और जबतक मेरे हाथो ऐसे पाप जानमे या अनजानमे होते रहेगे तबतक समझना चाहिए कि मै अपूर्ण मनुष्य हूँ। अपूर्ण मनुष्य पूर्ण सलाह कैसे दे सकता है? इससे मै उलझनमे पडा हुआ हूँ।

तिसपर भी मेरे पास दूसरा कोई साधन नही है। मेरे पास बस एक ही साधन है—सत्याग्रह। अबतक मैने सत्याग्रहका भीषण स्वरूप देशके सामने रखा है। अब मै उसका शान्त, मधुर और गम्भीर स्वरूप रखना चाहता हूँ। यदि उसपर आचरण किया जाये तो फिर जय ही जय है। मै मानता हूँ कि मुझे सत्याग्रह-शास्त्र पूरी तरह ज्ञात है। मुझे बराबर यह भय बना रहता है कि आजकी हालतमे भारत सत्याग्रहके उग्र स्वरूपको निभा न सकेगा। यदि हम समझदारीके साथ शान्त स्वरूपपर अमल करेगे तो हम बेलगाँवके काग्रेस अधिवेशनसे पहले बहुत-सा काम कर सकेगे। इसमे सहयोगी, असहयोगी, कट्टर अपरिवर्तनवादी, परिवर्तनवादी, स्वराज्यवादी, उदारदलीय, कनवेन्शनवादी, हिन्दू, मुसलमान, पारसी, ईसाई और यहूदी सब शामिल हो सकते है। सत्याग्रहका अर्थ केवल सविनय अवज्ञा ही नही है।

मैने कल ही पण्डित मोतीलालजीको कई सुझाव भेजे है। पण्डितजीसे मेरी कितनी घनिष्ठता है, यह बात सब लोग जानते है। मैने पत्रमे उनके सम्मुख अपना सारा हृदय खोलकर रख दिया है, क्योकि यदि मै उन्हे समझा सका तो औरोको भी समझा सकूँगा। विदुषी बेसेंट कल मुझसे मिलने आई थी। मैने उनसे भी यही बाते कही थी। विदुषी बेसेटकी उम्र कहाँ? उनका अनुभव कहाँ? उनके सामने तो मै एक बालक-सा हूँ। मैने उनके सामने उसी तरह अपनी बात पेश की जिस तरह बच्चा माँके सामने करता है। इतनी ही नम्रतासे मै अपने विचार श्री शास्त्रीजीके[1] सामने पेश करूँगा। मै अग्रेजोसे भी यही बात कहूँगा। यदि सब लोगोकी समझमे यह बात आ जाये तो हमे तुरन्त इसका लाभ मिल सकता है। मै यहाँ तफसीलमे नही जाना चाहता। किन्तु आप इतना जरूर समझ जायेगे कि इसमे चरखा अवश्य ही शामिल था। मेरी तमाम योजनाओके किसी-न-किसी कोनेमे चरखा जरूर होता

१. वी० एस० श्रीनिवास शास्त्री।

है। इसके विना न मैं जी सकता हूँ और न भारत ही जी सकता है। मुझे तो लगता है कि ऐसा समय आ रहा है जब इसके बिना आपका भी काम न चल सकेगा।

आप मुझे 'महात्मा' मानते हैं। इसका कारण न तो मेरा सत्य है और न मेरी अहिंसावृत्ति, बल्कि इसका कारण दीन-दुखियोके प्रति मेरा अगाध प्रेम है। चाहे कुछ भी हो जाये, पर मैं इन फटेहाल नरककालोको नही भूल सकता, नही छोड सकता। इसीसे आप समझते हैं कि गाधी कुछ कामका आदमी है। इसलिए मैं अपने प्रेमियो, रतनशी, जमनादास, पिक्थॉल, जयकर सबसे कहता हूँ, आप यदि मेरे प्रति प्रेम-भाव रखते है तो ऐसी कोशिश करे कि देहातके लोग जिन्हे मैं प्रेम करता हूँ, अन्न-वस्त्रके विना न रहे। आप इन दीन-दुखियोको भजे, उनकी सेवा करे। किस तरह भजे सो मैं बताता हूँ। आप झूठ-मूठको उनके नामकी माला न फेरे। जो झूठ-मूठको माला फेरकर भजेगा उसे मुक्ति कभी नही मिलेगी, उलटे उसकी अधोगति होगी; क्योकि वह ऊपरसे माला फेरते हुए भी मन-ही-मनमे सानपर छुरी ही धरता है। मैं मानता हूँ कि चरखा चलाते हुए भी मेरे मनमे मलिनता होना सम्भव है। परन्तु मैं मलिनता होते हुए भी कातनेके वाह्य फलसे तो वचित नही रह सकता। मैं तो सिर्फ इतना कहना चाहता हूँ कि ईश्वर या खुदाका नाम लेकर मैं भारतके गरीब बच्चोके लिए चरखा कातता हूँ और आपसे भी ऐसा ही करनेकी प्रार्थना करता हूँ। हो सकता है कि इसमें मेरी भूल हो। भविष्यमे शायद अर्थशास्त्री बतायेंगे कि इसमे भूल थी, परन्तु वे कबूल करेंगे कि इस भूलसे भी लाभ ही हुआ है, क्योकि उससे थोडा-बहुत सूत तो मिला और देशमे कपडेकी वढोतरी हुई। आप मुझे सर दिनशा वाछाका[1] शिष्य ही समझे। उन्होने बताया कि भारतमे फी आदमी १३५ गज कपडेकी दरकार है, परन्तु मिलता है सिर्फ ९५ गज ही। अर्थात् फी आदमी ४ गज कपडा और तैयार करनेकी जरूरत है। यदि आप हर रोज १०० गज सूत कातेगे तो उससे सूतका कितना वडा ढेर लग जायेगा। 'वहुतसे धागोसे रस्सी वनती है' इस कहावतमे तथ्य है। यदि हम सब मिलकर सूत कातेगे उससे हिन्दुस्तानको ढक सकेगे और वाँध सकेगे। मुझे तो अटल विश्वास है कि यदि आप एक बार कातने लगेगे तो कहेगे कि गाधी ठीक कहता था।

मुझे इस बातपर विश्वास है कि मेरे प्रति आपका जो प्रेम है उसका कारण इसके सिवाय और कुछ नही है कि मैंने दीन-दुखियोके साथ तादात्म्य कर लिया है। मैं भगीके साथ भगी हो सकता हूँ और ढेढके साथ ढेढ होकर उसका काम कर सकता हूँ। यदि इस जन्ममे अस्पृश्यता न मिटे और मुझे दूसरा जन्म लेना पडे तो मैं चाहता हूँ कि मेरा जन्म भगीके ही घरमे हो। यदि अस्पृश्यता कायम रहे और मेरे लिए हिन्दू धर्म छोडना सम्भव हो तो मैं उसे जरूर छोड दूंगा और कलमा पढ लूंगा या वपतिस्मा ले लूंगा। परन्तु मुझे तो अपने धर्मपर इतनी श्रद्धा है कि मुझे उसीमे जीना और उसीमे मरना है। सो इसके लिए भी यदि फिर जन्म लेना पडे तो मैं भगीके

१. दिनशा ईदुलजी वाछा (१८४४-१९३६); पारसी राजनीतिज्ञ; १९०१ के कांग्रेस अधिवेशनके अध्यक्ष।

ही घरमे जन्म लूँगा। इसी कारण मै कहता हूँ कि यदि भगियो, ढेढो और उडीसाके कगालोपर आपको दया आती हो तो आप विलायती कपडे और मिलोके कपड़ेको भूल जाये और उन ग़रीबो द्वारा कता और ढेढो द्वारा बुना कपडा पहने। वे हमे हमारी आवश्यकताके अनुसार कपडा किस तरह दे सकते है? वे तो भयभीत लोग हैं। काठियावाड़की कितनी ही कगाल बहनोको एक-दो आने रोज भी नही मिलते। उन्हे जब चरखे दिये गये तब कुछ पैसे मिलने लगे थे। आज उनके चरखे बन्द हो गये है। इसलिए वे दो-चार पैसोके लिए रोती है। ऐसी बहने बहुत हैं। यदि मै इन बहनोसे यह कह सकूँ कि जयकर कातते है, सरोजिनी कातती है, श्रीमती बेसेंट कातती है, दादाभाईकी[1] पौत्री कातती है और शास्त्रीजी कातते है, तो फिर उनके पास जाते हुए और उनसे फिर चरखा चलानेके लिए कहते हुए मुझे शर्म न लगेगी।

मै हिन्दुस्तानमें सदाव्रत नही खोलना चाहता। मै तो सदाव्रतोको बन्द कराना चाहता हूँ। मै मानता हूँ कि सदाव्रत हमारे माथेपर कलक है। इसलिए मै चाहता हूँ कि सब स्वावलम्बी बन जाये। मै इन बहनोको चार पैसे मुफ्त नही दिलाना चाहता। मै तो उन्हे केवल स्वावलम्बी बनाना चाहता हूँ। यदि आप इन बहनोको, दूसरे गरीबोको और ढेढ भगीको भी स्वावलम्बी बनाना चाहते हो तो आप यह यज्ञ शुरू करे। हरएक शख्स अपने हाथसे कता हुआ २,००० गज सूत दे। फिर मै एक सालमे ही स्वराज्य दिला दूँगा।

लेकिन आप याद रखे, मै मीआदका वादा नही करता। अकेले आप कातेगे तो स्वराज्य मिल जायेगा, यह नही कहता। लेकिन सब कातेगे तो स्वराज्य मिल जायेगा, यह अवश्य कहता हूँ। यदि आप कातेगे तो यकीनन दूसरोसे भी सूत कतवा सकेगे। भगवद्गीतामे कहा गया है 'यद्यदाचरति श्रेष्ठस् तत्तदेवेतरो जन।' श्रेष्ठ पुरुषोके बरतावके अनुसार ही दूसरे लोग भी चलते है। कहा जाता है कि इंग्लैंडके युवराज जब अपनी पोशाकका प्रकार बदलते है तो दूसरे लोग भी उनका अनुकरण करते है। आप लोग तो हिन्दुस्तानकी नाक समझे जाते है अथवा आप चाहते है कि आप वैसे समझे जाये। आप यदि सूत कातना शुरू कर देगे तो क्या दूसरे वैसा नही करेगे?

लेकिन इस बातको भी मै छोड देता हूँ। आप लोगोके सूत कातनेसे स्वराज्य मिले या न मिले, किन्तु मै आप लोगोसे इतनी भिक्षा जरूर माँगता हूँ कि यदि आपके हृदयमे भिखारियोके प्रति कुछ भी दया हो तो उस दयाभावसे प्रेरित होकर ही आप उनके लिए सूत काते। आप भिखारियोके साथ एक हो जाये, आप उनसे अपना तादात्म्य करे। मीराबाईने तो कहा है.

सूतरने तातणे मने हरिजीए बाँधी,
जेम ताणे तेम तेमनी रे,
मने लागी कटारी प्रेमनी रे।[2]

१. दादाभाई नौरोजी।

२. मुझे हरिने सूतके धागेसे बाँध लिया है। वह मुझे जैसे नचाता है, मैं वैसे ही नाचती हूँ। मुझे हरिके प्रेमकी कटारी लग गई है।

यदि अपने करोडो भाई-बहनोके प्रति हमारा ऐसा प्रेम हो तो हम उन्हे और वे हमको सूतके तारसे बाँध लेगे। मै तो यही अर्थशास्त्र जानता हूँ, दूसरा नही।

एक और बात भी कह देता हूँ। आपने नागपुरके दगेकी बात तो सुनी ही होगी। हिन्दुओके मनमे मैल है, मुसलमानोके मनमे भी मैल है। इस स्थितिमे मै अपनी तीन बातोके सिवा और क्या पेश कर सकता हूँ। आप सत्याग्रहके वर्तमान शान्तिमय प्रयोगमे इन तीन बातोको जरूर देखेगे। यदि आप सब इतनी बात याद रखेगे तो मेरा खयाल है कि हम सब एक ही मचपर खडे हो सकेगे। अदालत, विधान सभा इत्यादिके त्यागकी बाते अलग रखे। हम सब इनमे एक नही हो सकते लेकिन जितनी बातोमे हमारा मेल हो सकता है उतनी बातोमे तो हम सबको साथ-साथ ही रहना चाहिए।

गाधीजीने इसके बाद इन्हीं विचारोंको गुजराती न समझनेवाले लोगोंके लिए अंग्रेजीमें कहा। विचार तो वे ही थे किन्तु उनमें कुछ नवीनता भी थी।

मैने गुजरातीमें अपने हृदयका सारा उफान निकाल दिया है। अब मै इतना थक गया हूँ कि अधिक नही कह सकता। मैने बहुत-सारी बाते कह दी है। उनका सार यही है कि मेरे स्वभावके दो रूप है: एक उग्र और दूसरा शान्त। उग्र या भयकर रूपके कारण अनेक लोग मुझसे अलग हो गये है। इसके कारण मेरा अपनी पत्नी, अपने पुत्र और अपने स्वर्गीय भाईसे भी मतभेद हो गया था। दूसरे रूपमे तो लबालब प्रेम-ही-प्रेम है। पहले रूपमें प्रेमको खोजना पडता है। मुझ जैसे कठोर आत्मनिरीक्षक दूसरे कम ही होगे। मुझे विश्वास है कि पहले रूपमे द्वेषकी गन्धतक नही है, परन्तु उसमे हिमालय-जैसी भयकर भूलोकी सम्भावना रहती है। किन्तु मनोविज्ञानके ज्ञाता आपको बतायेगे कि दोनो का उत्पत्ति-स्थान एक ही है। अथाह प्रेम भीषण रूप धारण कर सकता है। यदि मैने अपनी पत्नीको दु ख पहुँचाया है तो उससे मेरे दिलमे गहरा घाव हुआ है। यदि मैने दक्षिण आफ्रिकामे अपने रात-दिनके साथी अग्रेजोको दु ख पहुँचाया है तो उनसे अधिक दु ख मुझे हुआ है। यदि मैने अपने यहाँके कार्योसे अग्रेजोका जी दुखाया है तो उनसे अधिक दु ख मेरे जीको हुआ है।

मै अग्रेजोसे कहता हूँ, "तुमने हमे खूब चूसा है, आज भी चूस रहे हो, परन्तु तुम्हे ज्ञान नही है। तुम हमपर अत्याचार करते हो। तुम इसके लिए पछताओगे।" मुझे इग्लैंडकी आँखें खोलनेके लिए अपना भयकर रूप प्रकट करना पडा है। मै ऐसा कहता हूँ तो इसका कारण यह नही कि मै उन्हे कम चाहता हूँ बल्कि यह है कि मै उन्हे स्वजनोकी ही तरह चाहता हूँ। परन्तु अब मेरा वह भीषणरूप नही रहा है। मैने पण्डित मोतीलालजीसे कहा है कि अब तो मुझमें लडनेकी भावना ही नही रह गई है। मै तो शरणागत हूँ। जब हमारे घरमे ही फूट फैली हुई है और कटुता और शत्रुता बढ रही है, तब दूसरा विचार ही कैसे हो सकता है? मुझे तो इस हालतको दुरुस्त करनेके लिए भगीरथ प्रयत्न करना होगा। मै इस तरहका कोई विरोध नही करना चाहता जिससे बेलगाँवके अधिवेशनमे या उससे पहले देशमें फूट

फैले। मैं मान लूंगा कि मैं हार गया। मै झुक जाऊँगा और झुककर सबको एकत्र करनेकी आशा रखूंगा। ऐसा करते हुए जब भारत अपनी विस्मृत दशासे जगकर अपनी आजादी हासिल करेगा तब मानव-जातिको उससे सबक मिलेगा। मैं इससे ज्यादा क्या कहूँ? मैं तो ईश्वरसे इतनी ही प्रार्थना करता हूँ कि मुझे सत्पथ दिखा, यदि मेरे अन्दर राग, द्वेष या क्रोधका कुछ भी अंश छिपा हुआ रह गया हो तो उसे दूर कर और मुझे ऐसा कार्यक्रम सुझा, जिसमे सब लोग उत्साह और उमगसे सम्मिलित हो।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ७-९-१९२४

४०. भाषण: बम्बई प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीकी बैठकमें[1]

३१ अगस्त, १९२४

स्थिति ऐसी है कि जिन लोगोको चरखेकी स्वराज्य प्राप्त करनेकी शक्तिके सम्बन्धमे शंका हो उन्हें प्रस्ताव पास होनेतक उसका विरोध करना चाहिए। किन्तु यदि वे बहुमतसे हार जाये तो उन्हे बहुमतके प्रस्तावका आदर करना चाहिए। लेकिन जिनका सिद्धान्त चरखा न चलाना ही हो उन्हे तो काग्रेससे बाहर निकल जाना चाहिए; इसीमे न्याय है, विनय है और विवेक है।

अन्य सब शकाओका उत्तर मै आज नही दूंगा। मै सलाह-मशविरा कर रहा हूँ और आपको उनका उत्तर थोड़े समयमे मिल जायेगा। मेरी घडी बहुत तेज चलती है, आपकी धीमी चलती है। लेकिन मुझे तो आपको साथ लेकर दौडना है और मुझे आप स्वराज्यवादी या अपरिवर्तनवादी जो भी कहे, मै तो कार्यदक्ष हूँ। इसलिए मै कोई-न-कोई रास्ता अवश्य निकालूंगा। जबतक वह न निकले तबतक आप लोगोको मेरी सलाह है कि आप सब सिर नवाकर सूत काते।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ७-९-१९२४

१. कताईके सम्बन्धमें अहमदाबादमें पास किये गये प्रस्तावकी आलोचनाके उत्तरमें।

४१. पत्र : वाइकोम सत्याग्रह आश्रमके मन्त्रीको[1]

[१ सितम्बर, १९२४][2]

प्रिय मित्रो,

आपको तथा अन्य सभी मित्रोको सूतकी बहुमूल्य भेटके लिए धन्यवाद देता हूँ। ईश्वर आपके प्रयत्नोको सफल बनाये। आप अपने प्रयत्नमे मृत्यु-पर्यन्त लगे रहे।[3]

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ४-९-१९२४

४२. पत्र : शुएब कुरैशीको

१ सितम्बर, १९२४

प्रिय शुएब,

ऐसी उम्मीद किये था कि कल तुम्हारे साथ सावकाश लम्बी बातचीत करूँगा, लेकिन यह सम्भव नही हुआ।

कृष्टोदासका ध्यान रखना और तुम दोनोके कल्याणकी चिन्ता ईश्वर करेगा।

रेल-किराया तुम मत देना, उसका भुगतान मेरे हिसाबमे से होने देना।

हाँ, इसका खयाल रखना कि तुम्हे किसी भी रूपमे हैदराबादके अधिकारियोका प्रतिरोध नही करना है। हम जो जाँच करना चाह रहे है वह सार्वजनिक किस्मकी जाँच नही है। असलमे तो जाँच शब्दके मान्य अर्थमे वह जाँच ही नही है। उसका मतलब इतना ही है कि तुम मेरे लिए कुछ जानकारी इकट्ठी कर रहे हो।

जो भी दल तुम्हे अपनेसे मिलने दे, तुम उन सबसे मिलना — दोनो दलोके अधिकारियो और वकीलोसे भी। अगर फोटो ला सको तो अवश्य ले आना।

हरएक चीज देखने-सुननेके बाद, मेरा सुझाव है कि तुम्हारे मनपर जो छाप पडी हो उसके अनुसार तुम दोनो अलग-अलग अपने विवरण लिख डालना, फिर उनकी तुलना करना और तब दोनोको स्वीकार्य विवरण या वक्तव्य तैयार करना।

कृष्टोदासका कहना है कि तुम कुछ खिन्न और उदास हो। ऐसा क्यो? ईश्वरमें तो तुम्हारा गहरा विश्वास है। वह तो अपनी सृष्टिके तुच्छतम प्राणीकी भी चिन्ता

१. आश्रमवासियों द्वारा भेजे गये सूतकी प्राप्ति सूचित करते हुए।
२. एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडिया द्वारा इसी तारीखको प्रकाशित किया गया था।
३. वाइकोम सत्याग्रहमें।

करता है। तब फिर उन्हे क्यो चिन्ता करनी चाहिए? क्या यह बस नही है कि हम अपनी समझके अनुसार उसकी इच्छाका पालन करे और निश्चिन्त रहे।

तुम्हारा,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी पत्र (जी० एन० ५६००) की फोटो-नकलसे।

४३. पत्र : बम्बईके यातायात महाप्रबन्धकको

[१ सितम्बर, १९२४ या उसके पश्चात्]

महोदय,

अजमेरके यातायात प्रबन्धकने मुझे[1] सूचित किया है कि मेरा पिछले महीनेकी १८ तारीखका लिखा हुआ पत्र वहाँसे आपके कार्यालयको भेज दिया गया है। यदि जल्दी उत्तर भेजे तो आभार मानूंगा।

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १०१२०) की फोटो-नकल से।

४४. पत्र : मोतीलाल नेहरूको

बम्बई
२ सितम्बर [१९२४]

प्रिय मोतीलालजी,

सुबह तडके ही प्रार्थनोपरान्त मै आपको पुन. पत्र लिख रहा हूँ। आशा करता हूँ कि मेरा लम्बा पत्र आपको मिल गया होगा। आपसे एक तारकी[2] उम्मीद कर रहा हूँ। अपना वह पत्र मै दोबारा पढकर सुधार नही सका था। उसके व्यक्तिगत हिस्सेमे मैने क्या कहा था, शब्दश याद नही है। श्रीमती नायडू इसे नही ही पढ पाईं, क्योकि पत्र उनके पढ़ सकनेसे पहले ही डाकमे डाल दिया गया था। लेकिन कामकाजसे सम्बन्धित अशको, जिसकी प्रति मेरे पास मौजूद है, उन्होने तथा अन्य साथियोने भी पढा है।

पिछले पत्रकी तरह यह पत्र भी मै जवाहरलालकी सिफारिश करनेके लिए ही लिख रहा हूँ। भारतमे बहुत अकेलापन महसूस करनेवाले जिन नौजवानोसे मिलनेका मुझे मौका मिला है, वह उनमे से एक है। आपके मानसिक रूपसे उसका त्याग कर

१. २३ अगस्त, १९२४ के पत्रमें।
२. देखिए "तार : मोतीलाल नेहरूको", २-९-१९२४ या उसके पश्चात्की पाद-टिप्पणी।

देनेके खयालसे मुझे बहुत दुख होता है। शारीरिक त्यागकी वातको तो मै असम्भव मानता हूँ। कहनेकी जरूरत नही कि जब मंजर अली और मै यरवदा जेलमें थे तो आप लोगोके विषयमें प्राय. बातचीत हुआ करती थी। एक बार उन्होने यह कहा भी था कि अगर कोई एक वस्तु ऐसी है जिसके लिए आपका जीवन और वस्तुओसे ज्यादा समर्पित है तो वह जवाहरलाल है। उनका यह कथन बहुत सत्य जान पडा। मै प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष किसी भी तरहसे इस अद्भुत प्रेम-सम्बन्धमे बाधक नही बनना चाहता।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अग्रेजी पत्र (एस० एन० १०१४६) की फोटो-नकलसे।

४५. पत्र : एक मित्रको

[२ सितम्बर, १९२४][1]

परमप्रिय मित्र,

यद्यपि हम एक-दूसरेको कभी मुश्किलसे ही लिखते है और इसी तरह मुश्किलसे ही कभी मिलते है, फिर भी ऊपर आपके लिए मैने अपने सम्बोधनमें जो-कुछ कहा है वह तो आप है ही।

देशमें इस समय जो घरेलू झगडा चल रहा है उससे मै अब बहुत परेशान हो गया हूँ। इसीलिए मैने हारकर पूरी तरह आत्म-समर्पण कर दिया है। अगर मुझे काग्रेसमें रहनेके लिए सभी पुराने मित्रोसे अलग होना पडेगा, तब तो मै काग्रेसमें नही रहना चाहता। मैने श्रीमती बेसेंटसे बात की है। पण्डित मोतीलालजीसे मेरा पत्र-व्यवहार चल रहा है तथा अब मै आपको लिख रहा हूँ। क्या एक चरखेको ही आप बराबर बाधा मानते रहेगे? क्या आप भारतके गरीबो तथा पद-दलित लोगोके हितके लिए खद्दर और चरखा नही अपनायेगे? अगर आप सिद्धान्तत. इसके विरुद्ध न हों तो मै चाहता हूँ कि आप मेरी बातपर गम्भीरतासे विचार करे।

आशा है कि आप सकुशल हैं। उत्तर साबरमतीके पतेपर भेजें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अग्रेजी पत्र (एस० एन० १०१४६ ए) की फोटो-नकलसे।

१. ऐसा लगता है कि यह पत्र पिछले पत्रके साथ ही लिखा गया था। दोनों एक ही कागजपर टाइप हुए हैं। लेकिन जिस व्यक्तिको यह पत्र लिखा गया, उसका नाम नहीं दिया गया है।

४६. पत्र : कान्ति गांधीको

भाद्रपद सुदी ३ [२ सितम्बर, १९२४][1]

चि० कान्ति,[2]

मैंने तुम्हे पत्र लिखनेके लिए तो कहा नही था। तुम बहुत समझदार हो गये हो; इसलिए मुझे कहनेकी कोई जरूरत नही थी। लेकिन तुम्हे मुझे अपने विचार तो जरूर बताने चाहिए। मुझे पत्र स्पष्ट और सुन्दर अक्षरोमे लिखा करो। रसिककी[3] देखभाल करना और उससे पत्र लिखनेके लिए कहना। यहाँ अच्छी बारिश हुई है। दिल्लीके बारेमे अभी कुछ निश्चित नही हुआ है।

बापूके आशीर्वाद

चि० कान्ति
सत्याग्रहाश्रम
साबरमती

गुजराती पत्र (एस० एन० १०१४९) की फोटो-नकलसे।

४७. भाषण : नेशनल मैडिकल कालेज, बम्बईमें[4]

२ सितम्बर, १९२४

अपने छोटे-से भाषणमें महात्माजीने नेशनल मैडिकल कालेजकी सन्तोषजनक प्रगतिपर बड़ी प्रसन्नता व्यक्त की। उन्होंने कहा कि जब डा० साठयेने पहले-पहल ऐसी संस्था शुरू करनेके सम्बन्धमें मेरी सलाह माँगी थी तो मै कुछ हिचकिचा रहा था; क्योंकि काम बहुत बड़ा और बहुत-सी कठिनाइयोंसे भरा हुआ था। लेकिन अब खुद यह देखकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हो रही है कि मेरा डर निराधार था और इस संस्थाने शानदार प्रगतिकी है। मै आशा करता हूँ कि डाक्टरी पेशेमें लगे प्रमुख लोग इसे मदद देते रहेंगे और बम्बईके धनाढ्य लोग इसकी मकान सम्बन्धी कठिनाई दूर कर देंगे तथा इसकी आर्थिक सहायता भी करेंगे। अन्तमें उन्होंने विद्यार्थियोंसे खादी पहननेका अनुरोध किया और राष्ट्रीय कर्त्तव्यके रूपमें रोज आधा घंटा कातनेको भी कहा।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ३-९-१९२४

१. डाककी मुहरसे।
२ और ३. गांधीजीके सबसे बड़े बेटे हरिलाल गांधीके पुत्र।
४. कालेजके तृतीय स्थापना-दिवस समारोहके अवसरपर।

४८. भाषण : कांग्रेस कमेटीकी बैठकमें[1]

[२ सितम्बर, १९२४][2]

माण्डवीमें कांग्रेस कमेटीकी बैठकम बोलते हुए श्री गांधीने कहा कि कांग्रेसके दो दलोंको आपसमें लड़ना नहीं चाहिए बल्कि एक हो जाना चाहिए। उन्होंने कहा, मैं स्वयं लड़ना नहीं चाहता और अपनी हार स्वीकार करता हूँ। यह भारतका दुर्भाग्य है कि हमारे बीच ऐसे मतभेद व्याप्त हैं जिनसे देशकी प्रगतिमें रुकावट पड़ रही है। मैंने पण्डित मोतीलाल नेहरूको लिख दिया है कि मैं लड़ने नहीं जा रहा हूँ, बल्कि मैंने तो हथियार डाल दिये हैं। वक्ताने सभी लोगोंसे सूत कातने, हिन्दू-मुसलमानोंके बीच एकता स्थापित करने तथा छुआछूतको दूर करनेकी अपील करते हुए कहा कि इन्हींपर हमारी स्वाधीनता निर्भर करती है। बम्बईके शिक्षित जनोंके लिए स्वराज्य खद्दरके बिना भले सम्भव हो, परन्तु खेतिहरोंके लिए स्वराज्य खद्दरके बिना सम्भव नहीं हो सकता। रुईके निर्यातका अर्थ है उन [खेतिहरों]की बरबादी। मसजिद और मन्दिरोंके नामपर हिन्दू और मुसलमानोंका आपसमें लड़ना कायरता है, न कि बहादुरी। श्रोताओंसे उन्होंने ईश्वरके नामपर सूत कातने तथा देशकी सेवा करनेकी अपील की।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ४-९-१९२४

४९. तार : मोतीलाल नेहरूको[3]

[२ सितम्बर, १९२४ या उसके पश्चात्]

धन्यवाद, आपके तारसे बड़ी राहत मिली।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १०१४७) की फोटो-नकलसे।

१. यह बैठक बम्बईमें हुई थी।

२. बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्ससे।

३. यह तार मोतीलालजीके २ सितम्बरके इस तारके उत्तरमें था : "आपका पत्र मिला। जवाहरके बारेमें पूरी कहानी बिलकुल झूठी है। स्कूल जानेपर अनावश्यक आग्रह नहीं किया बल्कि इच्छा व्यक्त की, जिसे जवाहरने अपना कर्त्तव्य समझकर शिरोधार्य किया। स्कूलका सरकारसे कोई सम्बन्ध नहीं। जवाहरको वहाँ मिलनेवाली शिक्षाकी अनुपयोगितापर आपत्ति थी। मैं तो केवल इतना ही चाहता था कि शिक्षा जैसी भी हो, इन्दुको उसकी उम्रके बच्चोंका साथ मिले। अन्तमें जवाहर सहमत हो गया, . . ।"

५०. पत्र : सन्तोक गांधीको

बुधवार, भाद्रपद सुदी ४ [३ सितम्बर, १९२४][1]

चि० सन्तोक[2]

तुम्हे पत्र लिखनेका यह कैसा दु:खद अवसर है! मैंने आज राजकोटके पतेसे तुम्हारे नाम जो तार दिया है वह तुम्हे मिल गया होगा और तुम सब आश्रममे आ गये होगे। तुमने आश्रममे रहकर जो ज्ञान लाभ किया है उसका उपयोग करना। मुझे उम्मीद है कि तुमने आँखोसे एक भी आँसू न गिराया होगा। सारा ससार वियोगके दु:खको अनुभव करता है; लेकिन तुम उसे दबाना और मृत्युकी यथार्थता-को समझना। जिसने गीताके द्वितीय अध्यायके अर्थको जान लिया है वह, जो अनिवार्य है उसपर शोक नही करता। हमे ऐसे अवसरोपर शास्त्रोका उपयोग अवश्य करना चाहिए।

शिवलालभाईके साथ मेरे निजी सम्बन्ध थे। मै उन्हे अपना बुजुर्ग मानता था और अनेक बातोमे उन्हीकी सलाह लिया करता था। हमारा यह सम्बन्ध अन्त तक बना रहा। यह सम्बन्ध प्रकट नही होता था। क्योकि सलाह-मशविरा करनेके अवसर ही बहुत कम होते थे। लेकिन जब-जब हमारी आँखे चार होती तब-तब हम एक-दूसरेके मनोगत भावोको जान लेते थे। मैंने सदा यह अनुभव किया है कि वे साहूकारोमे एक ईमानदार साहूकार थे। हमें उनके पुण्योका स्मरण करके उनका अनुकरण करना चाहिए।

जमनादास रुखीके[3] बारेमे क्या खबर लाया है? मुझे रुखीकी चिन्ता सदैव बनी रहती है। लेकिन जबतक जमनादासकी ओरसे कोई समाचार नही मिलता तबतक मै दूसरी कोई बात नही सोचता। रुखीने कहलाया है कि उसे पत्र लिखना नही आता, यह ठीक नही है। रुखीको मुझे पत्र अवश्य लिखना चाहिए और अपने विचार खुलकर बताने चाहिए।

मैंने राजकोटमे किसीको अलगसे पत्र नही लिखा है क्योकि वहाँ मै किसीको नही जानता। यदि कोई वहाँ अब भी है तो उसे इस पत्रकी एक प्रतिलिपि भेज देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ६१९९) की नकलसे।
सौजन्य. राधाबेन चौधरी

१. पत्रमें सन्तोक गांधीके पिताकी मृत्युका उल्लेख है। उनकी मृत्यु १९२४ में हुई थी।
२. मगनलाल गांधीकी पत्नी।
३. सन्तोककी लड़की।

५१. अविस्मरणीय

गत रविवारको जब मैं एक्सेल्सियर थियेटरमें वक्ताओंके मुँहसे अपनी प्रशस्ति सुन रहा था,[1] उस समय मुझे ऐसा लगा मानो श्री भरूचाने दक्षिणके पीड़ित लोगोंकी सहायताके लिए रंगमंचपर एक नाटक प्रस्तुत किया हो। किन्तु एक घटनाके कारण यह मेरे लिए नाटक न रहकर एक गम्भीर चीज बन गई। श्री भरूचाने विभिन्न राजनीतिक दलोंसे सम्बद्ध लोगोंको एक मंचपर एकत्र करनेका प्रयत्न किया था। इसलिए उन्होंने वक्ताओंमें श्री जमनादास द्वारकादासको भी शामिल कर लिया था। श्री जमनादासने मुझे "महात्मा" न कहकर गांधीजी कहा। श्रोताओंमें से दो-तीन व्यक्तियोंने, जो मुझे "गांधीजी "कहनेके अपमानको न सह सके, माँग की कि वे मुझे "महात्मा" कहें। श्री जमनादास, बहादुरी किन्तु शिष्टताके साथ मुझे गांधीजी ही कहते रहे, यद्यपि उन्होंने कहा कि मेरे प्रति उनका प्रेम किसी भी श्रोतासे कम नहीं है। उन्होंने आपत्ति करनेवालोंका विरोध करते हुए कहा कि सम्बोधनके उनके इस ढंगको मैं ज्यादा पसन्द करता हूँ। फिर भी रोक-टोक अन्ततक जारी रहीं। ऐसा होनेपर भी सभाके लिए यह अत्यन्त श्रेयकी बात थी कि श्री जमनादासके खिलाफ उठाई गई आवाजको श्रोताओंने अनसुना कर दिया। श्री जमनादासने बिना किसी कठिनाईके अपना भाषण पूरा किया। किन्तु यह रोक-टोक मुझे बराबर कचोटती रही। मुझे लगा कि जहाँ श्री जमनादासने मेरे कतिपय राजनीतिक विचारोंसे नम्रता, किन्तु दृढ़ताके साथ अपनी असहमति प्रकट करके और किसी अन्यके कहनेपर मुझे "महात्मा" कहनेसे इनकार करके मेरा समुचित आदर किया और मुझे सही रूपसे समझा, वहाँ मेरे उन प्रशंसकोंने अपने आचरणसे अपने इष्ट व्यक्तिका अपमान किया और उसे गलत रूपमें समझा। इसलिए मैंने ऐसी अशिष्टता दिखानेवाले भाइयोंसे सार्वजनिक रूपसे क्षमा-याचना करनेको कहा। मैंने उनका ध्यान इस बातकी ओर आकर्षित किया कि सार्वजनिक सभाओंके नियमानुसार विरोधियोंके साथ भी सम्मानपूर्ण व्यवहार करना चाहिए। मैंने कहा कि अहिंसक असहयोगियोंको तो शिष्टताके नियमोंका और भी अधिक आवश्यक रूपसे पालन करना चाहिए। असहयोगियोंके अहिंसा-व्रतका तकाजा है कि वे अपने विरोधियोंका भी उसी प्रकार आदर करें जिस प्रकार अपने मित्रोंका करते हैं। इसके अतिरिक्त श्रोताओंको उन लोगोंकी भावनाओंका आदर करना चाहिए जिनके सम्मानमें वे सभामें एकत्र हुए हों। रोक-टोक करनेवालोंको जानना चाहिए कि मैंने अकसर यह कहा है कि "महात्मा" शब्द मुझे बहुत बुरा लगता है। उदाहरणके लिए, १९२१में हुए बम्बईके दंगोंके समय यह शब्द मुझे बहुत बुरा लगा था। आश्रममें इस विशेषणका प्रयोग करना निषिद्ध है। इसलिए श्री जमनादासने वही किया जो मेरे मनको रुचता है। यह सब कहनेके बाद मैं क्षमा-याचनाके लिए रुक

१. देखिए "भाषण: एक्सेल्सियर थियेटर, बम्बईमें", ३१-८-१९२४।

गया। इसमे श्रोताओने मेरी मदद की। उन्होने फुसफुसाकर मेरी बातका समर्थन किया और रोक-टोक करनेवालोको क्षमा-याचनाकी सलाह दी और तब रोक-टोक करनेवालोने बहादुरीके साथ खडे होकर हाथ जोडकर क्षमा-याचना की। यह एक ऐसा दृश्य था, जिसे मैं आसानीसे नही भूल सकता। अपना भाषण फिरसे प्रारम्भ करते हुए तथा रोक-टोक करनेवालोको क्षमा-याचनाके लिए धन्यवाद देते हुए मैं यह कहे बिना न रह सका कि स्वराज्य-प्राप्तिके साधनके रूपमे विधान परिषदोमे ओजस्वी भाषणो या बहस-मुबाहिसो तथा मतदानोंकी अपेक्षा इस प्रकारका सच्चा और सज्जनतापूर्ण आचरण कही अधिक कारगर है। श्रोतृसमूहमें शामिल ये पश्चात्ताप करनेवाले लोग अपनी भूलके लिए निर्भीकतापूर्वक खुले-आम पश्चात्ताप प्रकट करके स्वराज्यको निकटतर ले आये हैं।

इस घटनाने, जो दुःखद भी थी और सुखद भी, मेरे भाषणके लिए एक विशेष पृष्ठभूमि तैयार कर दी। उस दिन मैंने जो-कुछ कहा सब इसी पृष्ठ-भूमिमे कहा और मेरे भाषणमे एक अप्रत्याशित शालीनता आ गई।

मलाबारके विषयमे बोलते हुए इसी पृष्ठ-भूमिके सहारे मुझे इतने दिनो बाद श्री देवधरकी समाज-सेवाकी अपरिमित क्षमताकी प्रशसा करनेका अवसर मिला और मैं लोगोंसे यह कह सका : यद्यपि राजनीतिके क्षेत्रमे हम एक-दूसरेसे दो ध्रुवोकी तरह बिलकुल दूर-दूर दिखाई देते हैं, फिर भी उनके व्यक्तिगत चरित्र, कर्त्तव्यनिष्ठा और आत्म-त्यागके प्रति मेरे सम्मान-भावमे कोई अन्तर नही पडता। इसके बाद मैंने चरखेकी चर्चा करते हुए उन्हे समझाया कि यह देशके गरीबोके साथ आपके एकात्म-भावका सच्चा प्रतीक है। सिर्फ मुँहसे किसी बातपर हामी भर देना काफी नही है, और न सिर्फ हृदयसे उनके प्रति दयाका अनुभव करनेसे ही कुछ बननेवाला है। हम चाहते हैं कि गरीब लोग यह महसूस करे कि अगर वे हमारे लिए मेहनत करते हैं तो हम भी उनके लिए चरखा चलाते हैं। आधा पेट खाकर जीनेवाले ये करोडो लोग आज घोर निराशाकी स्थितिमे पडे हुए हैं। उनका न अपने-आपपर विश्वास है और न हमपर। उनके मनमे पस्तीका यह भाव आ गया है कि उन्हे तो इसी तरह भूखकी पीडा झेलते हुए तिल-तिलकर मरना है, उनके लिए और कोई रास्ता नही है। उन्हे धर्मार्थ दिये गये दानोपर जीनेकी ऐसी लत पड गई है कि वे काम करनेको लगभग तैयार ही नही है। यदि हम चाहते हैं कि ये करोडो दीन-हीन लोग ईमानदारी और सम्मानके साथ चार पैसे कमा सके तो इसके लिए हम उन्हे जो एकमात्र साधन दे सकते है वह तो यह छोटा-सा सुन्दर चरखा है, जिसे कमजोरसे-कमजोर आदमी भी चला सकता है। इन करोड़ो लोगोको भिखमगोके जड और निःसार जीवनको छोडकर सुन्दर और सहज श्रमका जीवन अंगीकार करनेका प्रोत्साहन देनेका एकमात्र कारगर तरीका यही है कि हम स्वय चरखा चलाकर उन्हे भी चरखेको अपनानेकी प्रेरणा दे। गीतामे कहा है कि जैसा आचरण श्रेष्ठ जन करते है, वैसा ही आचरण सामान्य जन भी करते है।[1]

१. यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः। ३-२१

चरखेकी चर्चाके बाद मैंने कहा कि बहुत-से भाइयोंने ऐसी आशा व्यक्त की है कि आज हमारा राष्ट्रीय जीवन जिस विकट स्थितिमे पड़ गया है मैं उससे निकलनेका रास्ता दिखाऊँगा। मैं अपनी जिम्मेदारी समझता हूँ और कोई रास्ता ढूँढ निकालनेकी कोशिश कर रहा हूँ। पण्डित मोतीलालजीसे इस सम्बन्धमे पत्र-व्यवहार कर रहा हूँ। लेकिन, मैं सत्याग्रहके अलावा और किसी बातका सुझाव नही दे सकता। अबतक लोग इसके उग्र पक्ष — सविनय अवज्ञा तथा असहयोग — को ही जानते रहे है। लेकिन इसका एक सौम्य पक्ष भी है और यही इसका स्थायी पक्ष है। अब तो जनताके सामने इसके सौम्य पक्षको ही रखना है, वह चाहे जो भी रूप धारण करे। हम लोग काफी लड-झगड चुके और अकसर बहुत छोटी-छोटी बातोपर ही लडे-झगडे है। हम प्रमादमे पडकर आपसमे विभक्त हो रहे है। कोई कारण नही कि हम कोई ऐसा कार्यक्रम न तय कर पाये, जिसपर सबकी सहमति हो। कुछ बाते तो ऐसी होनी ही चाहिए, जिनपर हम सभी एकमत हो सके और जिनको अजाम देनेके लिए हम एक ही झण्डेके नीचे एकत्र हो सके। चरखा, साम्प्रदायिक एकता और हिन्दुओ द्वारा अस्पृश्यता निवारण — ये सब ऐसी बाते है जिनपर शायद सभी एक हो सकते है। मैं श्रीमती बेसेंटसे मिल चुका हूँ और नम्रतापूर्वक उनके सामने अपना विचार प्रस्तुत कर चुका हूँ। मै दूसरे नेताओसे भी इसी तरह मिलकर अपनी बात समझाऊँगा। मैं किसी भी कारण काग्रेसको विरोधी पक्षोमे नही बँटने दूँगा और यदि लोगोमे झगडनेकी इच्छा देखूँगा तो उसमे कोई भाग तो नही ही लूँगा, साथ ही चुपचाप पीछे जा बैठूँगा और ऐसे अशोभनीय सघर्षसे दूर ही रहूँगा। इसलिए जो भी कार्यक्रम हो, वह ऐसा हो जो बहुमतके द्वारा नही बल्कि अनौपचारिक रूपमे परस्पर बात-चीत करके सबकी सहमतिसे तय किया गया हो। अगर जरूरी हो जाये तो सभी पक्षोकी सहमति हो जानेपर मत लिये जा सकते है। यदि मै यह पाऊँगा कि ऐसा कोई कार्यक्रम नही है जिसे कार्यान्वित करनेमे मैं शामिल हो सकता हूँ तो मैं विघ्न डालनेवालोका नेतृत्व करनेके बजाय काग्रेससे खुशी-खुशी बिलकुल अलग हो जाऊँगा। सत्याग्रहका सबसे सौम्य पक्ष सम्पूर्ण आत्म-समर्पण है। सौम्य सत्याग्रहमे अगर कोई विरोध किया जा सकता है तो ऐसे सिद्धान्तको लेकर ही, जिसे सम्बन्धित व्यक्तिने अपने आचरणमे उतारा हो और अपने जीवनमे गूँथ लिया हो। मैंने श्रोताओं-को बताया कि सत्याग्रह-शास्त्रका — अगर इसे शास्त्र कहा जा सके तो — विकास मैंने पारिवारिक जीवनके सुदीर्घ अनुभवके आधारपर किया है। इसके उग्र पक्षका प्रयोग मैंने स्वय अपनी पत्नी, पुत्रो और उन भाइयोपर, जो बहुत पहले दिवगत हो चुके है किया है। इसके कारण मुझे उन सबकी नाराजगी और अलगाव भी सहना पडा। लेकिन, मैंने यह सब उनके प्रति गहरे प्रेमसे ही प्रेरित होकर किया था। मै मानता हूँ कि मुझमें ईश्वरकी सृष्टिके दूसरे समस्त प्राणियोसे भी उतना ही स्नेह करनेकी क्षमता है जितना कि मैं अपने प्रियसे-प्रिय परिजनोसे कर सकता हूँ। प्रेमकी पीडा कभी-कभी प्रेम-पात्रपर गहरे निशान छोड जाती है, लेकिन प्रेमीके हृदयमे तो वह उससे भी कही अधिक गहरे निशान छोड़ती है। अंग्रेजोके प्रति मेरे मनमे

कोई दुर्भावना नही है। कुछ अंग्रेज तो मेरे घनिष्ठतम मित्रोंमें से हैं, लेकिन एक समय ऐसा आया जब मुझे उनसे कहना पडा, "आप मेरे देशका शोषण नही कर सकते। इस शोषणने उसे असीम क्षति पहुँचाई है। आपमे से कुछ लोगोको तो इसके कल्याण-का कोई खयाल नही है और वे इसे जहाँतक बने, अधिकसे-अधिक चूसना चाहेगे। आपमे से कुछ लोग अज्ञानवश ऐसा मानते हैं कि भारतमें अग्रेजी राज्य तो भारतके कल्याणके लिए ही कायम है और आप लोग इस देशके ट्रस्टी है। यह स्थिति समाप्त होनी है और जल्दी ही होनी है।" जब मैंने ऐसा कहा तो उसका यही मतलब था कि मै इस काममे प्राणपणसे जुट जाऊँ। इस प्रयत्नके परिणामस्वरूप सत्याग्रहका उग्र पक्ष सामने आया है। इससे शोषक प्रणालीका अन्त नही हो पाया, लेकिन हम आपमे से विभक्त हो गये हैं। इसलिए अब मुझे पूरी शक्ति लगाकर सत्याग्रहके सौम्य पक्षको लोगोके सामने रखना है। यह चीज आग्रहसे नही, सिर्फ समर्पणसे ही सम्भव है। यदि मै सफल न होऊँ तो मै जानता हूँ कि इसका कारण इस सिद्धान्तकी कम-जोरी नही बल्कि इस सिद्धान्तपर आचरण करनेवालेकी कमजोरी ही होगी। इसका मतलब यह होगा कि प्रयोगकर्त्ता जिस सिद्धान्तके बारेमे जानता था कि वह एक सच्चा सिद्धान्त है, उसे वह अपने आचरणमे नही उतार पाया है। मै जानता हूँ कि मैं महात्मा नही हूँ; मै तो अल्पात्मा हूँ। प्रेमकी शक्तिकी कोई सीमा नही है; यह तो सबपर विजय प्राप्त कर सकता है। यह कठोरसे-कठोर हृदयको भी पिघला देता है। उसमे 'स्व' के लिए कोई स्थान नही है। कौन जानता है कि मेरे भीतर कही, किसी कोनेमे मुझसे भी छिपकर क्रोध या दुर्भावना घातमें नही बैठी हुई हो। लेकिन मुझे डिगना नही चाहिए। मुझे तो स्वपर विजय प्राप्त करनेका और उस प्रक्रियामे, हम सबके बीच जो दरारे दिखाई दे रही है, उन्हे पाटनेका प्रयत्न करना ही है। अन्तमे मैंने कहा, "तो अब मेरे लिए यही कामना कीजिए कि ईश्वर मुझे ऐसा करनेके लिए बल दे।"

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४-९-१९२४

५२. बम्बईका खादी-भण्डार

अखिल भारतीय खादी बोर्डने खादी-भण्डारको समुचित लिखा-पढीके बाद लगभग पूरी तरह अपने हाथमे ले लिया है। अबतक इसका प्रबन्ध श्री विट्ठलभाई जेराजाणी करते थे। इसके पीछे विचार यह है कि विभिन्न प्रान्तोकी अतिरिक्त खादीके वितरणकी ठीक व्यवस्था की जा सके और बम्बई-जैसे नगरोकी आवश्यकता पूरी करनेके लिए खादी मुहैया की जा सके। अभीतक निजी एजेन्सीके जरिये ऐसा नही किया जा सकता था। यह काम तो कोई अखिल भारतीय सस्थान ही कर सकता है। कीमते नियन्त्रित निर्धारित करनेका काम अब बोर्डके हाथमें रहेगा, ताकि खरीदारोको यथासम्भव सस्तेसे-सस्ते दामोपर खादी मिल सके। भण्डारके पूरे हिसाब-किताबकी जाँच-पड़ताल भी बोर्डके ही जिम्मे रहेगी।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४-९-१९२४

५३. बनारसमें कताई

प्रोफेसर रामदास गौडने एक दिलचस्प रिपोर्ट भेजी है जिसमे बताया गया है कि उन्होने किस प्रकार बनारस नगरपालिकाके स्कूलोके बच्चोमें चरखेका प्रवेश कराया। उन्होने ४० पुराने चरखे और धुनकियाँ आदि खरीदी। फिर उन्होने १३ शिक्षकोको सूत कातना सिखाया। उन शिक्षकोने दूसरे साथी शिक्षकोको सिखाया। इस तरह एक महीनेसे कुछ अधिक समयमे १७५ शिक्षक कताईके खासे उस्ताद बन गये। गौडजीकी पत्नी और पुत्रीने इसमे उनकी सहायता की। अब गौडजी अभिमानके साथ कहते है

> हर पाठशालामें कोई चरखा-मास्टर अलगसे रखा जाता तो कमसे-कम १०,००० रुपये सालाना खर्च उठाना पड़ता। . . . कोई ५-६ सप्ताहतक मैंने अपना सिर्फ ४ घंटेका समय मौजूदा शिक्षकोंको कातना सिखानेमें लगाया और यह समस्या हल हो गई।

आगे वे कहते है

> अब ऐसा कोई शिक्षक नहीं रह गया जो कातना या धुनना न जानता हो और आगे किसी भी ऐसी स्त्री या पुरुषको शिक्षककी जगह नहीं दी जायेगी जो धुनना और कातना न जानता हो।

गौडजी अपनी आगेकी योजना इस तरह बयान करते है

> जब यह कठिनाई हल हो गई तब मैंने बोर्डमें एक ब्योरेवार तजवीज पेश की — अपर प्राइमरी २६ स्कूलोंमें ३५० चरखे दाखिल किये जायें, कमसे-

कम ७०० लड़कोंको धुनना और कातना सिखाया जाये और खादीकी बुनाईके लिए बुनाई विभागमें ६ खड्डी करघे हों, एक बुनाई-शिक्षक, एक निरीक्षक, एक बढ़ई और इतनी कपास दी जाये, जिससे हर विद्यार्थी आध घंटेतक रोज काम कर सके। इसके लिए ६,००० रु० प्रति वर्ष दरकार थे। पर बोर्ड इसपर पशोपेशमें पड़ गया और अपनी बैठकोंमें दो महीनेतक इस सवालको टालता रहा। आखिर पिछली २६ जुलाईको बोर्डने एक सालके लिए सिर्फ ३,००० रु० मंजूर किये। ऐसी हालतमें मुझे कपासकी मद प्रायः बिलकुल निकाल देनी पड़ी और दूसरी मदोंमें भी इसी तरह काट-छाँट करनी पड़ी, जिससे काम छोटे पैमानेपर मजेमें चल सके। अब मैं सिर्फ ३०० चरखे और ६०० चमरखे साबरमती आश्रमके नमूनेके मँगा रहा हूँ। (आश्रममें मैंने जो-कुछ देखा उसके अनुसार) कुछ थोड़ा सुधार कर देनेसे मैं उम्मीद करता हूँ कि एक हजारसे अधिक लड़के-लड़कियाँ कातना सीख जायेंगे और रोज चरखा कातकर अच्छा सूत निकाल सकेंगे। अब सिर्फ चरखोंके बन जानेका इन्तजार है, और वे तो बनते-बनते ही बनेंगे। पर इस बीच लड़के-लड़कियोंके माँ-बाप और अभिभावकोंसे मैं प्रार्थना कर रहा हूँ कि वे कपासका इन्तजाम अपने घरसे कर दिया करें। चरखा वगैरह चीजें मैं दूंगा, जरूरी बातें मैं बता दिया करूँगा और माँ-बाप सिर्फ कपासका इन्तजाम करेंगे। सूतके मालिक वे रहेंगे और अगर वे चाहे तो हमें बुनाईका उचित मेहनताना देकर खादी बुनवा लेंगे। मैं सिलाई सिखानेका भी इन्तजाम कर रहा हूँ, जिससे खादीकी सिलाई सस्ती हो जाये।

लोग इस प्रयोगको दिलचस्पी और हमदर्दीके साथ देखेंगे। मुझे आशा करनी चाहिए कि अन्य शिक्षक भी प्रोफेसर रामदास गौडका अनुकरण करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४-९-१९२४

५४. पतितोंके लिए

मुझे कोई तीन साल पहले बारीसालमे हमारी विषय-वासनाकी शिकार बनी पतित बहनोसे मिलनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था।[1] उनमे से कुछने मुझसे कहा था "हमें दो से तीन रुपयेतक रोज आमदनी होती है। आप हमे ऐसा कोई काम बताइए जिससे हमे इतनी आमदनी हो जाया करे।" एक क्षणके लिए तो मेरा कलेजा बैठ गया, पर तुरन्त ही मै सँभल गया और कहा, "नही, बहनो, मै तुम्हे ऐसा तो कोई काम नही बता सकता जिससे तुम्हे दो या तीन रुपये रोज मिल सके, पर मै इतना जरूर कहूँगा कि तुम यह पेशा छोड दो, भले ही तुम्हे भूखो मरना पडे। हाँ, चरखा एक ऐसी चीज है, अगर तुम इसे अपनाओ तो यह तुम्हारी मुक्तिका साधन बन सकता है।"

ये पतित बहने तो भारतके पतित समाजका एक अल्पाश-मात्र है। उड़ीसाके नर-ककाल भी एक अर्थमें इसी पतित समाजके अग है। पतित बहने जिस प्रकार हमारी विषय-वासनाकी शिकार हो रही है, उसी तरह ये उडीसाके हाड़-चामके पुतले हमारे अज्ञानके शिकार हो रहे है। हमारी इन्द्रियोकी पाशविक तृप्ति नही, बल्कि धनकी भोग-लालसाने उन्हे अस्थिचर्मावशिष्ट कर दिया। उनके कलेजेके खूनसे हम मालामाल हो रहे है।

पर, ईश्वरको धन्यवाद है कि अब हम मध्यवर्गके पढे-लिखे लोग अपनी पतित बहनो और क्षुधा-पीडित भाइयोके दु खोको अपना दु ख बनानेके लिए उतावले हो रहे है। हम स्वराज्य इसीलिए चाहते है कि जिससे उन्हे जीवन मिले। पर हम सब लोग गाँवोमें जाकर देहातियोकी सहायता नही कर सकते। हमारी पतित बहनोका चित्र हमे चौबीसो घटे इस बातकी याद दिलाता रहता है कि हमे अपना चरित्र निर्मल, निष्कलक बनाना चाहिए। तब सवाल है कि हम कौन-सा उपाय करे जिससे हमे बराबर उनका खयाल बना रहे, उनकी दुर्दशासे हमारा हृदय व्यथित होता रहे? हर रोज उनके लिए हमें क्या करना उचित है? हम तो इतने कमजोर है कि जो कमसे-कम हो, उतना-भर करना चाहते है। तो वह कमसे-कम भी क्या है जो हम कर सकते है? मुझे तो सिवा चरखेके और कुछ नही दिखाई देता। वह काम ऐसा होना चाहिए जिसे अपढ और पढे-लिखे, भले और बुरे, बालक और बूढे, स्त्री और पुरुष, लडके और लडकियाँ, कमजोर और ताकतवर — फिर वे किसी जाति और धर्मके हो — कर सके। फिर वह ऐसा होना चाहिए जो सबके लिए एक-सा हो। तभी वह फलदायी हो सकता है। चरखा ही एक ऐसी वस्तु है जिसमें ये सब गुण है। अतएव जो कोई स्त्री या पुरुष रोज आध घटा चरखा कातता है वह जन-समाजकी भरसक अच्छीसे-अच्छी सेवा करता है। यही नही, वह भारत-भूमिके पतित मानव-समाजकी सेवा तहेदिल और सेवाभावसे करता है और इस तरह स्वराज्यको दिन-दिन नजदीक लाता है।

१. देखिए खण्ड २१, पृष्ठ १०८-१०।

हम भारतवासियोके लिए तो चरखा हमारे तमाम सार्वजनिक और सामुदायिक जीवनका आधार ही है। उसके बिना किसी भी प्रकारके स्थायी सार्वजनिक जीवनका निर्माण करना असम्भव है। यही एक ऐसा प्रत्यक्ष प्रेम-पाश है, जो अपनी जन्म-भूमिके छोटे-छोटे व्यक्तियोके साथ हमे बाँध देता है और उन्हे आशाका सन्देश पहुँचाता है। हाँ, यदि जरूरत हो तो हम चाहे अन्य चीजे भी उसके साथ शामिल कर ले, पर सबसे पहले हमे उसकी जड मजबूत कर लेनी चाहिए; वैसे ही जैसे होशियार कारीगर पहले इमारतकी बुनियादको पक्का कर लेता है, फिर उसपर मजिले उठाता है और इमारत जितनी ही बड़ी और ऊँची बनानी होती है वह नीवको उतनी ही अधिक गहरी और मजबूत बनाता है। अतएव यदि हम चाहे कि चरखेकी कुछ करामात हमें दिखाई दे तो हमें घर-घर उसका प्रचार करना चाहिए।

परन्तु चरखा देशके सिर्फ ऊँचे और नीचे लोगोको ही एक सूत्रमे नही बाँधेगा बल्कि वह देशके विविध राजनीतिक दलोको भी एक सूत्रमे बाँधनेका साधन होगा। तमाम दलोके लिए यह चरखा एक समान वस्तु होगी। वे चाहे तो भले ही दूसरी तमाम बातोमे मतभेद बनाये रहे, पर कमसे-कम इसपर सब सहमत हो सकते है।

अतएव मै हरएक शख्ससे, जिसके हृदयमे अपने देशके प्रति प्रेम हो और जो देशके दरिद्र और पतित भाइयोमे अनुराग रखता हो, प्रार्थना करता हूँ कि वह उनके लिए और ईश्वरके नामपर कृपाकर आध घटेका दैनिक श्रम चरखा कातकर दें और एक-सा और मजबूत सूत भेजे। चूंकि राष्ट्रके लिए उनकी तरफसे यह दान होगा, अतएव वे अ० भा० खादी बोर्डके पास उसे भेज दे, नियमपूर्वक जैसे कि किसी धार्मिक नियमका पालन करते हो।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४-९-१९२४

५५. टिप्पणियाँ

न्यूनतम समान कार्यक्रम

बम्बईके एक्सेलसियर थियेटरमे हुए मेरे भाषणके सक्षिप्त विवरणमे पाठक मेरी एक योजना देखेंगे, जिसका उद्देश्य देशके उन तमाम विभिन्न तत्त्वोको साथ मिलानेका है, जो इस समय एक-दूसरेके खिलाफ काम कर रहे है। बहुताशमे वे यह जानते भी नही कि वे ऐसा कर रहे है। लोग मुझसे कहते है कि इन सब दलोको एक कर लीजिए। इसलिए मै इस बातकी चेष्टा कर रहा हूँ कि किस तरह ये भिन्न-भिन्न शक्तियाँ एक हो सकती है। दूसरे शब्दोमे, वे कौन-सी बाते है, जिनपर उन लोगोकी एक बड़ी तादाद — जिन्होने कि देशके सार्वजनिक जीवनको बनानेमे कुछ योग दिया है — परस्पर सहमत है या हो सकती है, अथवा वे कौन-सी चीजे है जो हमारी आन्तरिक शक्तियोके विकासके लिए अनिवार्य है। यद्यपि बाहरी बातोमे भी

कुछ काम बन सकता है, पर मेरा स्वभाव ही ऐसा है कि मैंने जीवनमें सदा यही माना है कि सच्चा विकास तो भीतरसे ही होता है। यदि भीतरसे ही प्रतिक्रिया न हो तो बाहरी साधनोका प्रयोग बिलकुल निरर्थक है। यदि शरीरकी भीतरी शक्तियाँ पूर्णताको पहुँच गई हो तो बाहरी प्रतिकूल परिस्थितियो और प्रभावोका उसपर कुछ असर नही होता और न उसे बाहरी साधनोंकी सहायताकी ही जरूरत रहती है। एक बात और है, जब आन्तरिक अवयव सुदृढ हो तो बाहरी सहायता अपने-आप उनकी ओर खिचती हुई चली जाती है। इसीसे यह कहावत पड़ गई है कि ईश्वर उन्हीका सहायक होता है जो अपनी सहायता आप करते हो। अतएव यदि हम सब मिलकर भीतरी पूर्णताके लिए प्रयत्न करना चाहते है तो हमे दूसरी किसी हलचलमे पडनेकी बिलकुल जरूरत नही। पर हम चाहे ऐसा करे या न करे, कमसे-कम कांग्रेसको तो भीतरी विकासतक ही अपने कामकी सीमा बाँध लेनी चाहिए।

अच्छा, तो अब ऐसे विकासके लिए न्यूनतम समान कार्यक्रम क्या हो सकता है? मैं बराबर कहता आया हूँ कि वह है चरखा और खादी, तमाम धर्मोकी एकता और हिन्दुओ द्वारा छुआछूतका परित्याग। आखिरी दो बातोसे शायद ही किसीका मतभेद हो। पर मैं जानता हूँ कि चरखेके सम्बन्धमे अर्थात् सारे राष्ट्रके लिए चरखा कातने और खादी धारण करनेकी आवश्यकताके तथा चरखेको इतना व्यापक बनानेकी विधिके सम्बन्धमें अब भी कुछ मतभेद है। अन्यत्र मैं इस बातको दिखा चुका हूँ कि हमारे राष्ट्रीय अस्तित्वके लिए खादी कितनी आवश्यक है और उसके उत्पादनके लिए घर-घर चरखा कातना ही एकमात्र उपाय है।

कब खत्म होगी?

पर लोग पूछते है कि यह "अनिश्चयकी स्थिति आखिर खत्म कब होगी?" मेरा जहाँतक ताल्लुक है; मेरी तरफसे तो खत्म ही समझिए। मुझमे लडनेकी इच्छा नही रह गई है। आगामी कांग्रेस अधिवेशनमे स्वराज्यवादियोसे लडनेका मेरा कोई इरादा नही है और न मैं नरमदलवालोसे ही लडना चाहता हूँ। मेरी कोई शर्त नही है या अगर कोई शर्त है तो वह है मेरा भिक्षापात्र। मैं स्वराज्यवादियो, नरमदल-वालो, लिबरलो और कन्वेन्शनवालो — सबसे प्रार्थना करता हूँ कि वे इस भिखारीकी झोलीमें अपना खुदका काता हुआ सूत डाल दे। यही है मेरी मनोदशा। अतएव मैं तो राष्ट्रके तमाम कार्यकर्त्ताओंको सलाह दूँगा कि वे चरखा कातने, एकता बढाने और जो हिन्दू हो वे छुआछूत दूर करनेमें ही अपनी सारी ताकत लगा दे।

लेकिन अपरिवर्तनवादी मुझसे पूछते है, "ऐसी हालतमे कांग्रेस कमेटियोका क्या होगा?" मेरी धारणा तो यह है कि हमारा सारा सविधान छिन्न-भिन्न हो गया है। हमारे पास नाम लेने लायक मतदाता भी नही है और जहाँ-कही रजिस्टरोमे उनकी थोड़ी-सी तादाद दिखाई भी देती है तो ये वे लोग नही है जो कांग्रेसकी कार्य-वाहियोंमे उत्साहके साथ दिलचस्पी लेते है। ऐसी हालतमे हम स्वयभू मतदाता और स्वयभू प्रतिनिधि है। जब मतदाताओकी यह दशा है, तब उन जगहोपर कटुता पैदा हुए बगैर नही रह सकती, जहाँ एक-दूसरेके खिलाफ उम्मीदवार खडे होगे।

निष्पक्षता तभी सम्भव है जब कि मतदाताओकी तादाद बहुत बडी हो, वे सब बातोंको अच्छी तरह समझते हो और स्वतन्त्र-रूपसे खुद किसी बातका फैसला कर सकते हों। इसलिए मेरी यही सलाह है कि जहाँ-कही जरा भी सघर्षकी सम्भावना हो और मत दोनो ओर बराबर-बराबर बँटा दिखाई दे, वहाँ अपरिवर्तनवादियोको चाहिए कि उम्मीदवारीसे हट जायें। जहाँ-कही सघर्षकी सम्भावना न हो तथा जहाँ मत बहुत भारी तादादमें उनके पक्षमें हो, वहाँ वे पदाधिकारी बने रहें या अपना बहुमत बनाये रखे। किसी तरहकी चालाकी या धोखा-धडीसे काम न लिया जाये। मतदाताओके साथ चालाकी बरतना ऐसी-वैसी बात नही है। कार्यकर्त्तागण ऐसा करके अपने सिरपर एक भारी जिम्मेदारी लेते है। बहुमत सचालित सरकारोके लिए भ्रष्टाचार विनाशकारी साबित होता है। ऐसी हालतमे जो इन बातोको ज्यादा अच्छी तरह समझते है, उन्हे ऐसे तरीकोसे दूर रहना चाहिए।

सभापतिके बारेमें ?

काग्रेसका सभापति कौन होगा, यह भी बहुतोके लिए शशोपजका कारण बना हुआ है। मुझे दु:ख है कि सार्वजनिक जीवनमे फिरसे लौटनेके बादसे मै तमाम अनिश्चय और चिताकी स्थिति पैदा होनेका कारण बन रहा हूँ। मुझे इस स्थितिपर बडा खेद है, पर किया क्या जाये ? जिस बातकी कुछ दवा नही हो सकती, उसे सहनेमे ही भलाई है। अभीतक मुझे पता नही कि मेरी स्थिति क्या है। मै ऐसा सभापति होना नही चाहता जिससे देशमे फूट फैले। मैं उसी अवस्थामे इस गौरवको स्वीकार करना चाहता हूँ जब वास्तवमे उसके द्वारा देशकी कुछ भी सेवा हो सकती हो। बात यह है कि मै इन दलबन्दियोसे उकता गया हूँ। जब मै यरवदा जेलमे था तब मैने जर्मन कवि गेटेका 'फॉस्ट' नामक नाटक दुबारा पढा था। बरसो पहले एक बार मैने उसे पढा था। पर उस समय उसकी कुछ भी छाप मेरे चित्तपर नही पड़ी थी। गेटेके सन्देशको मै ग्रहण नही कर पाया था। मै नही कह सकता कि अब भी मै उसे पूरा-पूरा ग्रहण कर पाया हूँ। हाँ, मै उसे थोडा-बहुत समझ जरूर पाया हूँ। उसकी एक स्त्री पात्र है, मार्गरेट। उसका हृदय दु ख और विषादमे व्याकुल रहता है। उसे चैन नही पडता, शान्ति नही मिलती। अपने क्लेशसे छुटकारेका कोई उपाय नही सूझ पडता। वह चरखेका आश्रय ग्रहण करती है और चरखा मानो अपने सगीतके द्वारा उसकी व्यथा और वेदनाको बाहर निकालता है। मैं इस पूरी कल्पना-से बहुत प्रभावित हुआ। मार्गरेट अपने कमरेमे अकेली है। उसका हृदय दुविधा और निराशासे टूक-टूक हो रहा है। कवि उसे कमरेके एक कोनेमे पडे चरखेके पास भेजता है। यह बात नही कि सान्त्वनाके लिए वहाँ दूसरे साधन न थे। बढिया चुनी हुई पुस्तकोका पुस्तकालय था, कुछ सुन्दर चित्र भी थे और एक हस्तलिखित और सचित्र 'बाइबिल' भी वहाँ रखी हुई थी। पर न तो चित्र, न वे पुस्तके और न वह 'बाइबिल' ही उसे तसल्ली दे सकी। वह बरबस चरखेके नजदीक जाती है और जो शान्ति उसके पास आनेसे इनकार करती थी वह अनायास उसे मिल जाती है। उसकी वे हृदयद्रावक पक्तियाँ यहाँ दी जाती है·

मेरी शान्ति तिरोहित हो गई है, मेरा हृदय उद्विग्न है;
मैंने उसे खो दिया है, और जितना ही खोजती हूँ,
खोनेकी अनुभूति उतनी ही गहरी होती जाती है।
यह स्थान, जहाँ वह नहीं है, मेरे लिए श्मशानकी
भाँति निर्जीव हो गया है;
मेरा जीवन, मानो एक अपार निरानन्द है,
जहाँ प्रकाशकी एक रेखातक नहीं है।
मेरा मन व्याकुल है और मेरा हृदय टूक-टूक हो रहा है।
मेरी शान्ति तिरोहित हो गई है, मेरा हृदय उद्विग्न है;
क्योंकि मेरा प्रिय मुझसे बिछुड़ गया है।

आप इनके कुछ शब्दोको इधर-उधर कर दीजिए — बस ये पक्तियाँ मेरी मानसिक स्थितिका चित्र आपके मामने खडा कर देगी। जान पडता है, मै भी अपने प्रियतमसे हाथ धो बैठा हूँ और ऐसा मालूम होता है कि मै इधर-उधर भटक रहा हूँ। मुझे अनुभव तो ऐसा होता है कि मेरा सखा निरन्तर मेरे आसपास है, पर फिर भी वह मुझसे दूर प्रतीत होता है क्योकि वह मुझे ठीक-ठीक राह नही दिखा रहा है और स्पष्ट निर्देश नही दे रहा है। बल्कि उलटा, गोपियोके छलिया नटखट कृष्णकी तरह वह मुझे चिढाता है, कभी दिखाई देता है, कभी छिप जाता है और कभी फिर दिखाई दे जाता है। जब मुझे अपनी आँखोके सामने स्थिर और निश्चित रूपसे प्रकाश दिखाई देगा, तभी मुझे अपना पथ साफ-साफ मालूम होगा और तभी मै पाठकोसे कहूँगा कि आइए, अब मेरे पीछे-पीछे चलिए।

तबतक मै सिर्फ इतना ही करूँगा कि अपना चरखा लेकर बैठ जाऊँगा और उसीके सम्बन्धमे कहता-सुनता रहूँगा या लिखता-लिखाता रहूँगा और पाठकोको उसकी आवश्यकता और उपयोगिता जँचाता रहूँगा। अब, जब कि मै सब तरह अकेला पड गया हूँ, चरखा ही मेरा मित्र है, यही मुझे तसल्ली देनेवाला है, मेरा अमोघ शान्तिदाता है। परमात्मा करे, पाठकोके लिए भी यह ऐसा ही साबित हो। मेरे एक और मित्र भी है, जो कि मार्गरेट और मेरी तरह दु खाक्रान्त है। वे भी कहते है "हमारे बडे भाग्य है जो आपने हमे चरखा दे रखा है। मुझसे जितना होता है, चरखा कातकर अपने दिलको तसल्ली दे लिया करता हूँ।"

फिर नागपुर

डा० मुजेने[1] मुझे चेताया है कि मै नागपुरके हिन्दू-मुस्लिम तनाजेके बारेमे कुछ न लिखूँ। नागपुरमे अब तीसरी दफा हिन्दू-मुसलमान लड पडे है और उन्होने एक-दूसरेके साथ मारपीट की है। क्या उन्होने इस बातका अहद कर लिया है कि अपने पशुबलको आजमानेके बाद ही वे शान्तिके साथ रहेगे? क्या दोनोके वैमनस्यको मिटानेका

१. हिन्दू महासभाके नेता, १९३० में लन्दन गोलमेज सम्मेलनमें भाग लिया।

दूसरा कोई उपाय नही हो सकता? ऐसा मालूम होता है कि नागपुरमें दोनों दलोंमें बराबर-बराबर दम-खम है। इतना होते हुए भी उन्हे जल्द ही पता लग जायेगा कि हमेशा लट्ठबाजी करते रहनेसे कुछ हासिल नही होता। अवश्य ही नागपुरमे ऐसे कितने ही समझदार और तटस्थ हिन्दू और मुसलमान होगे जो दोनोके झगड़ोका निपटारा करा दें और पिछली बुराइयोको भुला दे। मन्दिरोके अपवित्र किये जानेकी तरह, इक्के-दुक्के राहगीरोपर टूट पडनेका एक नया तरीका और निकल पड़ा है। बहुतेरे झगड़े तो क्षणिक होते हैं और उनका कारण होता है छोटी-मोटी बातोंमे बातका बढ जाना और लोगोका भडक उठना। लेकिन बेकसूर लोगोपर टूट पड़ना तो यही दिखलाता है कि दोनो ओरसे ऐसी कोशिशे जानबूझकर और किसी खास तजवीजके मुताबिक हो रही है, पर जबतक दोनों दलवालोकी तरफसे ठीक-ठीक और विश्वसनीय समाचार न मिले, तबतक मुझे चुपचाप सहन करना लाजिमी है। ऐसी अवस्थामे मै सिर्फ इतनी आशा-भर कर सकता हूँ कि समझदार और तटस्थ लोग दोनो जातियोमे राजी-रजामन्दीके साथ स्थायी शान्ति करा देनेमे कोई कसर न उठा रखेगे।

आन्ध्रमें प्रगति

मैंने पूर्वी कृष्णा जिलेमे, जिसमे चार ताल्लुके शामिल हैं, हुए खादी-कार्यका विवरण पढ लिया है। स्थानीय खादी बोर्डने अपना कार्य रुई इकट्ठा करनेसे शुरू किया। यह उचित ही था। उसने रुई धुनने और पूनियाँ बनाने, पूनियोको कताई करनेवालोमे बाँटने और कते हुए सूतको इकट्ठा करनेका काम उठाया। बोर्डने जिलेमें ही खादीकी बिक्रीका इन्तजाम भी किया। इसके लिए उसने वहाँ कई खादी भण्डार खोले है। कताई करनेवालोमे ब्राह्मण, मुसलमान, कप्पू और ताडी निकालनेवाले शामिल है। ये प्रतिमाह करीब १८० पौड सूत कातते है। उनके सूतका नम्बर १५ से ३० तक होता है और उसकी कीमत औसतन प्रति पौड २ रुपये होती है। उनके पास बतौर पूंजी ७,२५० रुपये थे। रुई और पूनियो सहित कुल बिक्री ३०,४०० रुपयेकी हुई। यो अपनी जगहपर यह ठीक है, लेकिन रिपोर्टमे जितनी अवधिका हवाला है, उस अवधिको देखते हुए यह परिणाम बहुत अच्छा नही है। ऐच्छिक कताई-आन्दोलनसे काम करनेका तरीका ही बिलकुल बदल जाता है। पैसा लेकर कताई करनेवालोके जरिये भी सूतका उत्पादन-कार्य तो जारी रखा ही जाये। लेकिन अब हमे केवल कुछ सौ चरखे चलनेसे ही सन्तोष नही होना चाहिए। फिर भी यह आन्दोलन जन-साधारणमे फैले, इसमे थोडा समय तो लगेगा ही। जब काग्रेसी लोग कुशल कतैये हो जायेगे तब वे राष्ट्रको केवल आधा घटा देकर ही सन्तुष्ट नही होगे, बल्कि उनमे से कुछ लोग गाँवोमे विशेषज्ञोकी हैसियतसे जायेगे और गाँवोको आत्म-निर्भर इकाइयोके रूपमे सगठित करेगे।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४-९-१९२४

५६. कसौटीपर

पिछले महीने भिन्न-भिन्न प्रान्तोसे प्राप्त सूतकी, अखिल भारतीय खादी बोर्ड द्वारा की गई परीक्षाके निम्न परिणाम बडे रोचक तथा शिक्षाप्रद होगे।

आन्ध्र

भारतमे सर्वोत्तम कताई-क्षेत्रके रूपमे इस प्रान्तसे जो अपेक्षा की जाती थी उसे यह पूरा नही कर पाया।

कुल मिलाकर ४२९ पैकेट प्राप्त हुए। इनमें से ५० पैकेटोमे ऐसा सूत है जिसमे वट जरूरतसे ज्यादा है और जिसकी कताई अच्छी नही कही जा सकती। गुडियाँ लम्बाईकी दृष्टिसे बहुत ही अलग-अलग है। एक तो ६ फुट लम्बी है और कुछकी लम्बाई सिर्फ ९-१० इंच है। इन ९-१० इंचवाली गुडियोको सुलझानेमे समय और सूतकी बहुत बरबादी होगी। खासकर इसलिए कि उनकी लच्छियाँ बाँधी नही गई है। बहुतेरी गुडियोमें लगता है घटिया किस्मकी रुईसे ऊँचे नम्बरका सूत कातनेकी कोशिश की गई है और सूतपर छिडकाव नही किया गया है। नीचे उन लोगोकी सूची दी जा रही है जिन्हे "सम्मानपूर्वक" उत्तीर्ण हुआ माना जा सकता है।

			गज	सूतका अंक	प्रकार
१	श्री	एम० पापाराव	६६६	५५	बहुत अच्छा
२	"	के० सूर्यनारायण	२६६०	४९	बहुत अच्छा
३	"	एम० लक्ष्मी नरसिंह	५७००	४७	सामान्य
४	"	पी० कनकम्मा	२०००	४८	अच्छा
५	"	के० अश्वत्थाचार्युलु	२०००	४१	सामान्य

तके साथ नाम आदिकी पर्चियाँ और सूचियाँ बिलकुल ठीक है।

असम

यदि मात्रा बहुत कम न होती तो सूतके ऊँचे दर्जेको देखते हुए यह कमी पूरी हुई मानी जा सकती थी। अगर छिड़काव किया जाता तो सूतका दर्जा और भी अच्छा होता। सम्मानसहित उत्तीर्ण .

		गज	सूतका अंक	प्रकार
१	श्रीयुत शिवप्रसाद वर्मा	२९४०	४०	अच्छा

अजमेर

राजपूतानाके दूसरे हिस्सोकी अपेक्षा यहाँसे ज्यादा अच्छा सूत प्राप्त हुआ है।

बम्बई

एक बडी विशेषता, जिससे दूसरी कमियाँ ढक जाती है, यह है कि यहाँ सूत कातनेवालोमे स्त्रियोकी सख्या पुरुषोसे अधिक है और इनमे से चार तो पारसी स्त्रियाँ

है। कुछ सूत पर्याप्त सावधानीसे नही काता गया है, जब कि कुछ ठीक तरहसे कता हुआ है, उसकी गुडियाँ भी ठीक ढँगसे बनाई गई है और उसपर छिडकाव भी किया गया है।

बिहार

बिहारने तो सूतकी किस्म और मात्रा दोनो ही दृष्टियोसे ऐसा परिणाम भी नही दिखाया है जिसे कामचलाऊ माना जा सके। सबसे ऊपर बाबू राजेन्द्रप्रसाद आते है, जिन्होने बढिया कता और अच्छी तरह लच्छियोमे बँधा हुआ १०,१४८ गज ८ नम्बरका सूत भेजा है। लेकिन उनके अलावा किसीने ऐसा काम नही किया है जिसमे वह उनके मुकाबले सही मानीमे द्वितीय स्थानका भी पात्र हो।

बंगाल

बगालने तो सबसे प्रशसनीय कार्य किया है। खादी प्रतिष्ठानके १०७ सदस्योने ऐसा सूत भेजा है जिससे प्रकट होता है कि वह कताईमे माहिर लोगोके हाथका कमाल है। लेकिन गुडियोमे कुछ और एकरूपता होनी चाहिए, लच्छियाँ अच्छी तरह बँधी हुई होनी चाहिए और सूतपर छिड़काव भी होना चाहिए।

१८ वर्षकी एक महिलाने आसानीसे प्रथम स्थान प्राप्त किया है और वह पूरे भारतवर्षमे प्रथम आई है। उसका नाम श्रीमती अपर्णादेवी है। उसने ७६ नम्बरका ७,००० गज बढिया बटवाला और एक-सा सूत भेजा है।

पर्चियाँ बिलकुल ठीक है।

मध्य प्रान्त (हिन्दी)

कुल मिलाकर इसने अच्छा काम नही किया; तो भी कुछ अच्छे नमूने है :

१	देवी सुभद्राकुमारी	२०००	३०	अच्छा
२	उमरावसिह चौहान	२०४८	२२	सामान्य

मध्य प्रान्त (मराठी)

अधिकाश सूत २० से ज्यादा नम्बरका नही है, लेकिन उसको देखनेसे यह जरूर प्रकट होता है कि वह सधे हुए हाथोसे काता गया है। कुछ सूत इससे भी कम नम्बरका है, लेकिन अच्छा और एक-सा कता हुआ है। पर्चियाँ ठीकसे नही लगाई गई है — यहाँतक कि कुछ अच्छे कातनेवालोके नाम भी नही जाने जा सकते।

गुजरात

सूतकी मात्राकी दृष्टिसे इसका स्थान पहला है और इसके भेजे सूतको देखनेसे ज्ञात होता है कि यह बहुत ही कुशल हाथोसे कता हुआ है। कच्छ और काठिया-वाडने भी जो मोटा सूत कातनेके लिए प्रसिद्ध है, अच्छा सूत भेजा है। लेकिन बाजी तो दरबार साहब गोपालदास देसाई, ढसावाले ले गये है जिन्होने औसतन् ४५ नम्बरका ५,०७४ गज अच्छा सूत भेजा है। उनके द्वारा भेजी गुडियोमे से एकमे ७२ नम्बरका

सूत है, दूसरीमे ५५ नम्बरका और शेषमे ४० या इसीके आसपासका। खादी मण्डल-के कुछ सदस्योने ३० नम्बरतक का बहुत अच्छा सूत भेजा है।

सूचियाँ और पर्चियाँ ठीक है।

दिल्ली

सिर्फ १२ पैंकेट भेजे गये है जिनमें से एक पैंकेटमे अच्छा कता सूत है पर उसमें भी पर्ची ऐसी है कि भेजनेवालेका नाम भी नही पढा जा सका।

कर्नाटक

मात्रा बहुत कम है लेकिन किस्म अच्छी है। सभी सूत बिना छिडकाव किया हुआ ही है। सर्वोत्तम कताई करनेवाले लोग निम्नलिखित है

१	श्रीयुत शकर जी० गोलटगी	२०४०	३८	बहुत अच्छा
२	„ डा० डी० आर० हुलियालकर	२०००	४०	सामान्य
३.	„ भीमराव नगावी	२०४०	३८	अच्छा

महाराष्ट्र

कुल मिलाकर बहुत मामूली। रत्नागिरी और भुसावल-जैसी एक दो जगहोसे प्राप्त सूतको देखनेसे यह लगता है कि सधे हुए कातनेवालोने काता है। श्री दास्तानेने १४ नम्बरका सूत भेजा है, जो अच्छा है। सूचियो और पर्चियोका मेल नही बैठता।

पंजाब

मात्रा बहुत कम है और एक-दो नमूनोको छोडकर सूतकी किस्म भी पजाबकी प्रतिष्ठाके अनुकूल नही है।

सिन्ध

स्थिति बहुत खेदजनक है।

सधी हुई कताईका कोई उदाहरण नही मिलता।

तमिलनाड

सूत आमतौरपर अच्छी किस्मका है। मात्राके सिवाय और बातोमे यह बगालकी बराबरी करता है। वाडकोमके स्वयसेवको द्वारा काफी बड़ी मात्रामे भेजा गया सूत विशेष रूपसे उल्लेखनीय है। यह आमतौरपर अच्छा है। सम्मान विजेता

१.	श्रीयुत मीनाक्षी सुन्दरम्	२०४०	९७	अच्छा
२.	„ षण्मुख सुन्दरम् पिल्लै	२५२०	८०	अच्छा

सूचियाँ भारत-भरमे सबसे अच्छी तैयार की गई है।

संयुक्त प्रान्त

अच्छी कताईके तो बहुत कम नमूने देखनेको मिले, लेकिन कुछ बहुत अच्छे अपवाद भी है

१. पण्डित जवाहरलाल नेहरू	४०५१	२३ से ४०	बहुत अच्छा
२. श्रीमती कमला नेहरू	२५४८	१७ से २२	अच्छा
३ श्रीयुत शम्भूनाथ	२२६५	१५	अच्छा
४ पुरुषोत्तमदास टण्डन	२८००	१४	सामान्य

उत्कल

कुल मिलाकर मामूली। लेकिन सयुक्त प्रान्तकी तरह कुछ अच्छे अपवाद भी है।

१. श्रीयुत	विश्वनाथ परीडा	२०००	३०	अच्छा
२. ,,	बिकनचरन होता	२०००	२८	अच्छा
३. ,,	गोपबन्धु चौधरी	२०००	२१	अच्छा
४ ,,	निरजन पटनायक	२२२३	१९	अच्छा
५. ,,	मोहम्मद हनीफ	२०००	१६	अच्छा

बर्मा, बरार, केरल

कहने लायक सूत प्राप्त नही हुआ।

इस प्रकार सब जगह सुधारकी गुजाइश है। गुडियोकी लम्बाईमे कमसे-कम हर प्रान्तको तो एकरूपता प्राप्त करनी ही चाहिए। इससे बादके खर्चमे बचत होती है। यज्ञके भावसे स्वेच्छापूर्वक काम करनेकी प्रणालीके अधीन जहाँ हर आदमी प्रेमके कारण कताई करता है, हमे भी उसमे पूर्णता प्राप्त कर सकनी चाहिए बशर्ते कि अ० भा० खादी बोर्ड द्वारा समय-समयपर जारी की गई विस्तृत हिदायतोको हम ध्यानमे रखे। मै श्रीमती अपर्णादेवीको बधाई देता हूँ जो कताई प्रतियोगितामे प्रथम आई है।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४-९-१९२४

५७. जेलके अनुभव — ११[1]

मेरा पठन [– १]

जब मै बच्चा था तब पाठशालाकी पुस्तकोके अलावा और कुछ पढनेका मुझे कोई खास शौक नही था। पाठ्य-पुस्तकोमे ही मुझे चिन्तनकी काफी सामग्री मिल जाती थी, क्योकि पाठशालामे जो पढता उसपर अमल करना मेरा सहज स्वभाव था। घरपर पढनेसे मुझे बहुत अरुचि थी। घरके लिए दिये गये पाठ मजबूरन ही पढ़ता था। जब मै विलायतमे पढ रहा था तब भी परीक्षोपयोगी पुस्तकोके अलावा कुछ न पढनेकी मेरी आदत बनी रही। परन्तु जब मैने ससारमे प्रवेश किया तब मुझे खयाल हुआ कि सामान्य ज्ञान प्राप्त करनेके लिए भी मुझे पढना चाहिए। लेकिन,

१. पहली किस्त १७-४-१९२४ के **यंग इंडिया**में प्रकाशित हुई थी; देखिए खण्ड २३, पृष्ठ ४७५-७८।

मेरा जीवन विलकुल प्रारम्भसे ही कठिनाइयो और सघर्षोका जीवन वन गया। इसकी शुरुआत काठियावाड़के तत्कालीन पोलिटिकल एजेन्टके साथ झगडेसे हुई। इसलिए अध्ययन-मननमे दिलचस्पी लेनेका वहुत समय नही मिला। दक्षिण आफ्रिकामे स्वातन्त्र्य-युद्धका मुकावला था, परन्तु उसके वावजूद वर्पभर मुझे काफी अवकाश रहा। १८९३ का वर्ष मैंने धार्मिक साधनामे विताया। इसलिए सारा पठन धार्मिक ही हुआ। १८९४के वादसे मुझे जमकर पढनेका समय दक्षिण आफ्रिकाकी जेलोमे ही मिला। मुझे न केवल पढनेका शौक उत्पन्न हुआ वल्कि सस्कृतका अपना ज्ञान पूरा करने और तमिल, हिन्दी और उर्दूका अभ्यास करनेकी रुचि भी जगी। तमिल इसलिए कि दक्षिण आफ्रिकामे अनेक तमिलभापियोसे मेरा सम्पर्क था और उर्दू इसलिए कि वहुतसे मुसलमानोसे मुझे काम पडता था। दक्षिण आफ्रिकाकी जेलोमे मेरी पढनेकी अभिरुचि तीव्र हो गई थी, इतनी कि दक्षिण आफ्रिकाके अपने अन्तिम कारावासके दौरान मीआद पूरी होनेसे पहले ही छोड़ दिये जानेपर मुझे बहुत दु ख हुआ।

इसलिए जव हिन्दुस्तानमे ऐसा अवसर आया, मैंने उसका सहर्ष स्वागत किया। मैंने यरवदामे अध्ययनका एक कठिन-सा कार्यक्रम तैयार कर लिया था, जिसे पूरा करनेके लिए छ वर्ष भी काफी नही थे। प्रथम तीन मासतक मुझे यह धुँधली-सी आशा थी कि भारत समयकी चुनौती स्वीकार करेगा और विदेशी कपडोके बहिष्कारका कार्यक्रम पूरा करके जेलोके दरवाजे खोल देगा। परन्तु मुझे शीघ्र ही मालूम हो गया कि ऐसा नही होगा। मैंने फौरन देख लिया कि ऐसा करनेके लिए परिश्रमके साथ शान्तिपूर्वक सगठन करनेकी जरूरत है, जिसमे देशको पाँच वर्षसे कम नही लगेगे। सचमुच स्वराज्यके कारण न सही, फिर भी यदि लोगोके शान्तिमय रचनात्मक कार्यके परिणामस्वरूप भी मैं जल्दी छूट जाता तो यह मजूर था, किन्तु अन्यथा मीआद पूरी होनेसे पहले छूटनेकी मुझे लेशमात्र इच्छा नही थी। इसलिए जर्जरित शरीरवाला चौवन वर्पका वूढा होनेपर भी, मैंने चौबीस वर्षीय तरुणके उत्साहसे अध्ययन शुरू किया। मै अपने समयके एक-एक क्षणका उपयोग करता था और आशा करता था कि जब छूटूँगा तबतक उर्दू और तमिलका खासा पण्डित वन जाऊँगा और सस्कृतका भी अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लूँगा। मै अवश्य ही सस्कृतके मूल ग्रन्थ पढनेकी योग्यता प्राप्त कर लेनेकी अपनी कामना पूरी कर लेता। परन्तु ऐसा होना वदा नही था। दुर्भाग्यसे वीमारी आ गई। उसके परिणामस्वरूप मै छूट गया और मेरे अध्ययनमे विघ्न पड गया। फिर भी इस अवधिमे मै कितना पढ सका, इसकी कल्पना पाठकोको नीचे दी हुई सूचीसे हो जायेगी:

'द कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ स्कॉटलैंड'; 'द मास्टर ऐंड हिज टीचिंग', 'आर्म ऑफ गॉड', 'क्रिश्चियनिटी इन प्रैक्टिस'; तुलसी-कृत 'रामायण' (हिन्दी), 'सत्याग्रह और असहयोग' (हिन्दी), 'कुरान', 'द वे टु विगिन लाइफ', लूशियन-कृत 'ट्रिप्स टु द मून', ठाकोर-कृत 'इडियन एडमिनिस्ट्रेशन', 'नेचुरल हिस्ट्री ऑफ बर्ड्स'; 'द यग क्रूसेडर', 'बाइविल व्यू ऑफ द वर्ल्ड मार्टियर्स', फेरर-रचित 'सीकर्स आफ्टर गॉड', 'मिस्रकुमारी' (गुजराती); 'स्टोरीज फ्रॉम द हिस्ट्री ऑफ रोम'; 'टॉम

ब्राउन्स स्कूल डेज', बेकन-कृत 'विजडम ऑफ द एशेंट्स'; चन्द्रकान्त-लिखित 'भारतका इतिहास' (गुजराती), 'पातजल योग-दर्शन' (प्रो० काणियाका अनुवाद); वाल्मीकि 'रामायण'का गुजराती अनुवाद, किपलिंग-रचित 'फाइव नेशन्स', एडवर्ड बेलामीकी 'इक्वलिटी', 'सेंट पॉल इन ग्रीस', 'द स्ट्रेन्ज केस ऑफ डा० जेकिल ऐंड मि० हाइड', रोज़बरी-कृत 'पिट', किपलिंगकी 'जंगल बुक'; 'फॉस्ट'; 'लाइफ ऑफ जॉन हॉवर्ड', 'महाभारत'के अठारहो पर्वोका गुजराती अनुवाद, जूल बर्न-कृत 'ड्रॉप्ड फ्रॉम द क्लाउड्स', इरविंग-लिखित 'लाइफ ऑफ कोलम्बस'; गिरधरकी रामायण (गुजराती), विलबरफोर्स-कृत 'फाइव एम्पायर्स', 'लेज आफ एशेंट रोम'; 'द क्रूसेड्स', गिबन-कृत 'राइज ऐंड फाल ऑफ द रोमन एम्पायर'; 'उर्दू वाचनमाला'; 'श्रीमद्भागवत' (गुजराती अनुवाद), बकिमका 'कृष्ण-चरित्र' (झवेरी-कृत गुजराती अनुवाद), वैद्य-लिखित 'कृष्ण' (गुजराती अनुवाद), तिलककी 'गीता' (गुजराती अनुवाद); 'सरस्वतीचन्द्र' (गुजराती), 'मनुस्मृति' (गुजराती अनुवाद), 'ईशोपनिषद्' (अरविन्दकी टीका); 'कबीर्स साग्स'; जैकब बोहमैन-कृत 'सुपर-सेन्सुअल लाइफ', 'प्रो क्रिस्टो एट एक्सेलिसिया'; 'कठवल्ली उपनिषद्' (हिन्दी-टीका), 'गैलीलियन', 'ज्ञानेश्वरी' (गुजराती अनुवाद), 'फिलो क्रिस्टस,' 'सत्यार्थप्रकाश' (हिन्दी), 'प्रेममित्र' (अंग्रेजी), 'षड्दर्शन' (गुजराती अनुवाद); 'द गास्पेल ऐंड द प्लाउ', नाथुराम शर्मा कृत 'गीता'की गुजराती टीका, शाकरभाष्य गीता, 'श्रीमद्राजचन्द्र' (गुजराती), जे० ब्रिअर्ली-कृत 'आवरसेलव्ज ऐंड द यूनिवर्स'; एबट-कृत 'व्हाट क्रिश्चियनिटी मीन्स टु मी', 'स्टेप्स टु क्रिश्चियनिटी'; ट्राइन-कृत 'माई फिलॉसफी ऐंड रिलीजन', रवीन्द्रनाथ-कृत 'साधना'; प्रो० भानु-कृत 'उपनिषद्-भाष्य' (मराठी); मैक्समूलरका 'उपनिषद्', वेल्स-कृत 'आउट लाइन ऑफ हिस्ट्री', 'बाइबिल'; भगवानदास-कृत 'साइन्स ऑफ पीस'; किपलिंग-कृत 'बैरकरूम बैलेड्स', गेडिस-कृत 'इवोल्यूशन ऑफ सिटीज', 'लाइफ ऑफ रामानुज', कनिंघम-रचित 'सिखोका इतिहास', गोकुलचन्द-लिखित 'सिखोका इतिहास', मेकॉलिफ रचित 'सिखोका इतिहास', 'एथिक्स ऑफ इस्लाम', किड-कृत 'सोशल इवोल्यूशन', बुहलरकी 'मनुस्मृति', जेम्स-रचित 'आवर हेलेनिक हेरीटेज'; दादाचानजी-कृत 'अवेस्ता'; अरविन्दकी 'गीता'; स्पेन्सर-कृत 'एलिमेण्ट्स ऑफ सोशियोलॉजी', फेरवानी-कृत 'सोशल एफिशिएन्सी'; वाडिया-लिखित 'मेसेज ऑफ मुहम्मद', वाडिया-लिखित 'मेसेज ऑफ क्राइस्ट', हसन-कृत 'सेण्ट्स ऑफ इस्लाम', मोल्टन-कृत 'अर्ली जोरोस्ट्रियनिज्म'; 'हिमालयनो प्रवास' (गुजराती); 'सीताहरण' (गुजराती); 'बुद्ध अने महावीर' (गुजराती), 'राम अने कृष्ण' (गुजराती), 'मैन ऐंड सुपरमैन', 'मार्कण्डेय पुराण' (गुजराती); 'पूर्वरग' (गुजराती); 'हजरत उमरकी जीवनी' (उर्दू); पैगम्बर साहबकी स्वीकारोक्तियाँ (उर्दू), बकल-कृत 'हिस्ट्री ऑफ सिविलिजेशन', 'जया अने जयन्त' (गुजराती), रवीन्द्रनाथ-कृत 'प्राचीन साहित्य' (गुजराती); 'काउटेस टाल्स्टाय-कृत 'डिफेन्स'; 'कालापानीनी कथा' (गुजराती); 'अर्थशास्त्र' (गुजराती), 'गीतगोविन्द' (गुजराती), जेम्स-कृत 'वेराइटीज़ ऑफ रिलीजिअस

एक्सपीरिएन्स', हॉपकिन्स-कृत 'ऑरिजिन ऐंड इवोल्यूशन ऑफ रिलीजन', लेकी-कृत 'यूरोपीयन मोराल्स', विनोवा-कृत 'महाराष्ट्र-धर्म' (मराठी), होम्स-कृत 'फ्रीडम ऐंड ग्रोथ', हैकेल-कृत 'इवोल्यूशन ऑफ मैन', रवीन्द्रनाथकी 'मुक्तधारा' (गुजराती अनुवाद), रवीन्द्रनाथ-कृत 'डूवतु वहाण' (गुजराती), मौलाना शिवलीकी लिखी पैगम्वर साहवकी जीवनी (उर्दू); डा० मुहम्मद अलीकी कुरान-सम्बन्धी कृति, विवेकानन्द-कृत 'राजयोग'; चम्पकराय जैन-कृत 'कन्फ्लुएन्स ऑफ रिलीजन्स', निकल्सन-कृत 'मिस्टिक्स ऑफ इस्लाम', पॉल कैरस-कृत 'गॉस्पेल ऑफ वुद्ध', राइस डेविसका 'लेक्चर्स ऑन वुद्धिज्म', अमीर अली-कृत 'स्पिरिट ऑफ इस्लाम', लॉज-कृत 'मॉडर्न प्रॉब्लेम्स'; वाशिंग्टन इर्विंग-कृत 'मुहम्मद', 'स्याद्वाद मजरी' (हिन्दी), अमीर अली-कृत 'हिस्ट्री ऑफ द सेरेसन्स'; गीज़ो-कृत 'यूरोपीयन सिविलिजेशन', शिवली-कृत 'अल फारूक' (उर्दू), मोटले-कृत 'राइज ऑफ द डच रिपब्लिक'; 'म्यूजिंग्स ऑफ सेंट टेरेसा'; राजम् अय्यर-कृत 'वेदान्त'; 'उत्तराध्ययनसूत्र' (हिन्दी); 'रोज़ीक्रुशियन मिस्ट्रीज़'; 'डायलॉग्स ऑफ प्लेटो', शिवली-कृत 'अल-कलाम'; वुड्रुफ-कृत 'शाक्त ऐंड शक्ति', 'भगवती-सूत्र' (गुजराती, अधूरी)।

लेकिन पाठक यह न मान ले कि ये सव पुस्तके मैंने अपनी पसन्दसे पढी थी। इनमे से कुछ तो निकम्मी थी और यदि मैं जेलसे वाहर होता तो उन्हे हरगिज न पढ़ता, कुछ परिचित और अपरिचित मित्रोकी भेजी हुई थी और मुझे लगा कि कमसे-कम उनकी भावनाका खयाल करके तो उन्हे पढ ही लेना चाहिए। यरवदा जेलमे अग्रेजी पुस्तकोका सग्रह वुरा नही कहा जा सकता। उनमे कुछ तो सचमुच अच्छी पुस्तके थी। उदाहरणके लिए, फेररकी 'सीकर्स ऑफ्टर गॉड', 'लूशियनकी 'ट्रिप्स टु द मून', अथवा जूल वर्नकी 'ड्रॉप्ड फ्रॉम द क्लाउड्स'— ये सव अपने-अपने ढगकी उत्तम पुस्तके थी। फेररकी पुस्तकमे मार्कस ओरेलियस, सेनेका और एपिक्टेटसके जीवन-चरित्रके उत्तम पक्ष देखनेको मिलते है। यह प्रेरणाप्रद पुस्तक है। लूशियनकी पुस्तक एक वढिया शिक्षाप्रद व्यगात्मक कृति है। जूल वर्न कहानीके रूपमे विज्ञान सिखाता है। उसका ढग निराला है, जिसका अनुकरण नही हो सकता।

इस वीच अनेक ईसाई मित्र मेरा वहुत खयाल रखते थे। उन्होने अमेरिका, इग्लैड और भारतसे भी मुझे वहुत-सी पुस्तके भेजी। मुझे स्वीकार करना चाहिए कि इसमे उनकी भलमनसाहत ही थी, परन्तु उनकी भेजी हुई अधिकाश पुस्तके मुझे अच्छी नही लगी। काश, मैं उनकी भेजी हुई पुस्तकोके वारेमे उन्हे प्रसन्न करनेवाली कोई वात लिख सकता। परन्तु जीमे न होते हुए, वैसा लिखूं तो अनुचित और असत्य होगा। ईसाई धर्मके वारेमे कट्टरपथी ईसाइयोकी लिखी हुई पुस्तकोसे मुझे सन्तोप नही होता। ईसामसीहके जीवनके लिए मेरे मनमे अत्यन्त आदर है। उनकी नीति-विषयक शिक्षा, उनका व्यावहारिक ज्ञान, उनका वलिदान — इन सवके प्रति मेरे मनमे वडी श्रद्धा है, परन्तु ईसाई धर्म-पुस्तकोमे जो यह उपदेश दिया गया है कि ईसा सर्वस्वीकृत अर्थमे ईश्वरके अवतार थे या है अथवा वे ईश्वरके एकमात्र पुत्र थे अथवा है, इसे मैं स्वीकार नही करता। दूसरेका पुण्य भोगनेका सिद्धान्त मैं स्वीकार नही करता। ईसाका वलिदान एक नमूना है और हम सवके लिए आदर्श-स्वरूप है।

हम सबको मोक्षके लिए "सूलीपर" चढना है — आत्म-बलिदान करना है। 'पुत्र', 'पिता' और 'पवित्र आत्मा' — 'बाइबिल' के इन शब्दोका केवल वाच्यार्थ करनेसे मै इनकार करता हूँ। इन सबमे रूपक है। इसी प्रकार 'गिरि-शिखरके उपदेश' (सर्मन ऑन द माउण्ट) को जिन मर्यादाओमे बाँधनेका प्रयत्न किया जाता है, उन्हें भी मै स्वीकार नही करता। 'न्यू टेस्टामेट' मे मुझे युद्धका कही समर्थन नही मिलता। ईसा मसीहको मै ससारमे जितने उपदेशक और पैगम्बर हो गये है, उनमे सबसे यशस्वी पुरुषोमे गिनता हूँ। कहनेकी जरूरत नही कि 'बाइबिल' को मै ईसाके जीवन और उपदेशका ऐसा विवरण नही मानता, जिसमे भूल न हो। इसी प्रकार मै यह भी नही मानता कि 'न्यू टेस्टामेट' का एक-एक शब्द ईश्वरका अपना शब्द है। नये तथा पुराने टेस्टामेटोमे एक महत्त्वपूर्ण अन्तर है। पुरानेमे कुछ गहन सत्य है, परन्तु मै नयेको जितना आदर देता हूँ उतना पुरानेको नही। नयेको मै पुरानेके उपदेशोंका विस्तृत सस्करण और कुछ बातोमे पुरानेके उपदेशोको त्याग देनेवाला मानता हूँ। लेकिन नये 'टेस्टामेट' को भी मै ईश्वरका अन्तिम शब्द नही मानता। विश्वमे जो विकास-क्रम वस्तु-मात्रपर लागू होता है, धार्मिक विचार भी उसी विकास-क्रमके अधीन है। केवल ईश्वर ही अव्यय है और उसका सन्देश अपूर्ण मनुष्यके माध्यमसे मिलता है। इसलिए माध्यम जितना शुद्ध या अशुद्ध होगा, उतनी ही मात्रामे सन्देशके शुद्ध या अशुद्ध होनेकी सम्भावना रहेगी। इसलिए मै अपने ईसाई मित्रो और शुभ-चिन्तकोसे आदरपूर्वक आग्रह करूँगा कि वे मुझे जैसा मै हूँ, वैसा ही स्वीकार करे। जिस प्रकार मै मुसलमान भाइयोकी इस इच्छाका आदर करता हूँ और कद्र करता हूँ कि जैसा वे सोचते है, जैसे वे है, मै भी वैसा ही सोचने लगूँ, वैसा ही बन जाऊँ, उसी प्रकार मै ईसाई भाइयोकी भी इस इच्छाका आदर और कद्र करता हूँ। मै दोनो धर्मोको अपने धर्मकी तरह ही सच्चा मानता हूँ। परन्तु मुझे अपने धर्मसे पूरी तरह सन्तोप मिल जाता है। अपने विकासके लिए मुझे जो-कुछ चाहिए, वह सब उसमे है। मेरा धर्म मुझे यह नही सिखाता कि मै ऐसी प्रार्थना करूँ कि दूसरे लोग मेरे धर्मके हो जाये। वह तो मुझे यह सीख देता है कि तुम प्रार्थना करो कि सब अपने-अपने धर्ममे रहकर पूर्णता प्राप्त करे। इसलिए मेरी प्रार्थना ईसाईके लिए सदा यह रही है कि वह अधिक अच्छा ईसाई बने और मुसलमानके लिए यह कि वह अधिक अच्छा मुसलमान बने। मुझे विश्वास है, मै जानता हूँ कि ईश्वर हमसे यह पूछेगा, बल्कि आज भी पूछ रहा है कि हम कैसे है, हमारे काम कैसे है, यह नही कि हम किस दीनके माननेवाले है। उसके लिए तो कर्म ही सब-कुछ है। कर्मसे रहित विश्वासका उसकी नजरोमे कोई मोल नही है। उसके लिए तो कर्म ही विश्वासका सूचक है। लेकिन ईसाई भाइयोने मेरे लिए जेलमे जिस ईसाई साहित्यका ढेर लगा दिया था, उसके अध्ययनसे मेरे मनमे जो विचार बने उन्हे और किसी कारणसे नही तो मेरे आध्यात्मिक कल्याणमे उनकी रुचिके लिए कृतज्ञता प्रकट करनेके लिए ही, कह देना आवश्यक था। इस विषयान्तरके लिए मै पाठकोसे क्षमा चाहता हूँ।

जिन पुस्तकोको पढे विना मैं नही रह सकता था वे थी, 'महाभारत' और 'उपनिषद्', 'रामायण' और 'भागवत्'। उपनिषदोको पढनेसे वेदोको मूल रूपमे पढकर वैदिक-धर्मके अध्ययनकी इच्छा जागृत हुई। उनकी उत्कट कल्पनाओसे अपार आनन्द मिला और उनकी आध्यात्मिकतासे मेरी आत्माको शान्ति मिली। लेकिन मुझे यह भी कहना चाहिए कि उनमे से कुछमे ऐसी अनेक बाते थी जिन्हे मैं प्रोफेसर भानुकी विस्तृत टीकाकी सहायताके बावजूद नही समझ सका और न ही उनमे रस ले सका, यद्यपि प्रोफेसर भानुने तो अपनी टीकामें सारा शाकरभाष्य और दूसरे कई भाष्योका सार दे दिया है। 'महाभारत' के छुट-पुट अशोके अलावा इससे पहले मैंने इस ग्रन्थको कभी पढा ही नही था। उलटे, मैंने उसके विरुद्ध राय बना ली थी (जो अब गलत साबित हुई है)। वह राय यह थी कि 'महाभारत' तो केवल रक्तपातके विस्तृत वर्णन और ऐसे विवरणोसे भरा हुआ ग्रन्थ है जिन्हे पढकर नीद आने लगती है। 'महाभारत' के घनी छपाईवाले छ हजारसे ज्यादा पृष्ठोको देखकर मैं घबराया था। परन्तु कुछ भागोके सिवा वह इतना अधिक चित्ताकर्षक साबित हुआ कि एक बार शुरू कर देनेके बाद उस ग्रन्थको पूरा करनेको मैं अधीर हो गया। चार महीनेमे उसे पूरा करनेके बाद मुझे महसूस हुआ कि 'महाभारत' की तुलना थोडे-से सुन्दर जवाहरातवाले किसी खजानेके साथ नही की जा सकती। वह किसी ऐसी अक्षय खानके समान है, जिसे जितना गहरा खोदिए उतने ही कीमती रत्न उसमे से निकलते है। मेरे मतानुसार 'महाभारत' कोई इतिहास नही, इतिहासके रूपमे तो मैं उसे बेकार-सा ग्रन्थ मानूंगा। उसमे तो रूपक द्वारा विश्वके सनातन सत्योकी चर्चा की गई है। कविका आशय पुण्य और पाप, सत् और असत्, खुदा और शैतानके सनातन द्वन्द्वका वर्णन करना है, और उस आशयके अनुकूल ही ऐतिहासिक पात्रो और घटनाओको ले-लेकर उसने उन्हे दैवी अथवा दानवी शक्तियोके रूपमे चित्रित किया है। यह ग्रन्थ किसी महानदके समान है, जो आगेकी ओर बहता हुआ अनेक नदियोको अपनेमे समेट लेता है, जिनमे कई मैली और गन्दी भी है। यह ग्रन्थ एक ही प्रतिभाकी अवधारणा है, परन्तु समय-समयपर उसमें इतने प्रक्षिप्त अश मिल गये कि आज हमारे लिए यह कह सकना मुश्किल हो गया है कि क्या मूल है और क्या प्रक्षिप्त। ग्रन्थकी समाप्ति तो भव्य है ही। उसमे ऐहिक सत्ताकी नश्वरता प्रकट की गई है। गरीब भिखारी द्वारा अपना स्वल्प सर्वस्व, अन्तिम कौर भी दे डालनेवाले ब्राह्मणके हार्दिक बलिदानकी तुलनामे, पाण्डवोका अन्तिम महायज्ञ भी कम पुण्यप्रद सिद्ध किया गया है। पुण्यशाली पाण्डवोके भाग्यमे प्रखर शोक ही शेष बचा दिखाया गया है। कर्मवीर कृष्ण लाचार हालतमे मरते है। असख्य और एकसे-एक बलशाली यादव अपने ही भ्रष्ट आचरणके कारण आपसी कलहमे कुत्तोकी मौत मरते है। अजेय अर्जुन डाकुओंकी टोलीसे पराजित होते है, उनका गाण्डीव काम नही आता। पाण्डव युद्धके परिणाम-स्वरूप मिली हुई गद्दी एक बालकको सौपकर वानप्रस्थी होते है। स्वर्गारोहणमे एकको छोड, सारे यात्रामे ही मर-खप जाते है। और धर्मराज युधिष्ठिरको भी इसलिए नरककी भयकर दुर्गंध सहनी पडती है कि उन्होने सकटके समय एक बार असत्य

भाषण किया था। कारण और कार्यके अटल नियमका सनातन रूपमे अमल होता हुआ बताया गया है, जिसका कोई अपवाद नही। इस चमत्कारी काव्यके लिए यह दावा किया जाता है कि उसमे ऐसी कोई चीज नही छोडी गई है जो उपयोगी और अच्छी हो और जो दूसरे ग्रन्थोमे मिल सके। यह महाकाव्य इस दावेको सही सिद्ध करता है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४-९-१९२४

५८. भाषण : पूनाकी सार्वजनिक सभामे[1]

४ सितम्बर, १९२४

आप पूछते है कि [भारतीय] मिलोका कपडा पहननेसे बहिष्कार क्यो नही हो सकता? यह प्रश्न भारी अज्ञान-जनित है। मिलका कपडा बहिष्कारके लिए काफी है ही नही। बंग-भंगके समय मिलवालोने बंगालको किस तरह धोखा दिया, इसकी शिकायत बंगाल आज भी करता है। उनके अनुभवसे हमे यह शिक्षा लेनी चाहिए कि मिलके कपडेसे बहिष्कार असम्भव है। इसलिए हमे केवल खादीका ही प्रचार करना चाहिए। यह बात स्पष्ट है कि कांग्रेसकी हदमे मिलके कपडेको बिलकुल स्थान नही मिलना चाहिए।

श्रद्धाका[2] अर्थ है आत्म-विश्वास और आत्म-विश्वासके मानी है, ईश्वरपर विश्वास। जब चारो ओर काले बादल दिखाई देते हो, किनारा कही नजर न आता हो और ऐसा मालूम होता हो कि बस अब डूबे, तब भी जिसे यह विश्वास होता है कि मैं हरगिज न डूबूँगा, उसे कहते है श्रद्धावान्। द्रौपदीका वस्त्रहरण हो रहा था, उसकी रक्षा करनेमे युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव सब असमर्थ थे। तब भी द्रौपदीने श्रद्धा नही छोडी। वह कृष्ण-कृष्ण पुकारती रही, उसे इस बातपर श्रद्धा थी कि जबतक कृष्ण है तबतक किसीकी क्या मजाल कि मेरा वस्त्रहरण कर सके। आपमे ऐसी श्रद्धा है? यदि आपके अन्दर ऐसी श्रद्धा हो तो आप अकेले पूनाके ही बलपर स्वराज्य ले सकते है। जो श्रद्धावान् होता है वह ईश्वरके साथ सौदा नही करता, करार नही करता। हरिश्चन्द्रने कोई सौदा नही किया था। वे अपनी पत्नीका गला काटनेके लिए भी तैयार हो गये थे।

जो लोग खादीकी बातको पागलपन समझते है उन्हें सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा :

१. यह श्री एस० एम० पराजपेकी अध्यक्षतामें रे मार्केटमें हुई थी और इसमें लगभग दस हजार लोग उपस्थित थे।

२. गांधीजीने इससे पहले चिपलूणकरकी मूर्तिका अनावरण करते हुए कहा था, "महाराष्ट्रमें त्याग है किन्तु श्रद्धा नही"। उन्होंने यहाँ इसी बातको स्पष्ट किया है।

मैंने कर्नल मैडॉकसे[1] पूछा था, क्या आप अपने विद्यार्थियोको खादी न पहनने देगे? उन्होने मुझे नही कहा कि तुम पागल हो। उन्होने तो कहा कि यदि विद्यार्थी खादी पहनना चाहते हो तो मै क्यो इनकार करने लगा? और श्रीमती मैडॉक तो विलायत जाते वक्त खादी साथ ले गई है। जो काम नही करना चाहता वह अनेक बहाने बनाता है। मना कोई नही करता — मनाई करती है केवल हृदयकी दुर्बलता। अच्छा, मान ले कि गाधी पागल है। मै कहता हूँ देहातके लोग जो कपडा पहनते है, आप वह कपडा पहने। क्या यह कहना पागलपन है? दूसरी बातोके लिए आप चाहे मुझे पागल कहे, परन्तु यदि आप मुझे खादीके लिए पागल कहेगे तो मै कहूँगा कि कहनेवाला ही पागल है, क्योकि मै तो अनुभवकी बात करता हूँ। मै कहता हूँ कि यदि आपसे और कुछ न हो सके तो आप गरीबोपर कृपा करके कमसे-कम खादी जरूर पहनें। चम्पारन और उडीसामे लोगोको चार पैसे रोज मिलनेमे भी साँसत पड़ती है। वहाँके लोग कच्चे चावल खाकर रहते है। उनके बदनमे हड्डी-चमडी भर रह गई है। आप उनपर रहम करके, उनके भीतर बसे ईश्वरके दर्शन करके २,००० गज सूत दे। मेरी आपसे यही प्रार्थना है।

'स्वराज्य मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है' लोकमान्य तिलकका यह सन्देश अधूरा है। वे यह कहना भूल गए कि उसको प्राप्त करनेका साधन खद्दर है।[2]

मै तो हार गया हूँ। प० मोतीलालजी और श्री केलकर यदि मुझसे कहे कि तुम काग्रेससे निकल जाओ तो मै निकल जाऊँगा — यह मेरी प्रतिज्ञा है। मै बेलगाँवमे मत नही माँगूँगा। हम अपरिवर्तनवादी और परिवर्तनवादी दोनो मत माँग-माँगकर जनताको भ्रमित कर रहे है। मैंने अ० भा० का० कमेटी [की अहमदाबादकी बैठक] मे मत लिये। अब मै देखता हूँ कि मैंने यह अपराध ही किया है। वहाँ मत लेना मेरा पागलपन था। मै तो सिपाही ठहरा। मुझे समझना था कि लडाई तो वही लडी जा सकती है जहाँ कटुता पैदा न हो, दुश्मनी पैदा न हो। यदि प० मोतीलालजी और श्री केलकरसे लडनेमे कटुता बढती हो तो मै उनके चरणोमें सीस झुकाना बेहतर समझता हूँ। मेरे दिलमे यदि किसीके प्रति भी द्वेष हो, दुश्मनी हो, तो बेहतर है कि मै साबरमतीमे डूब मरूँ। हाँ, जहाँ सिद्धान्तकी लडाई हो वहाँ मै लडे बिना नही मानता, परन्तु जहाँ दुश्मनीकी बू आती हो, वहाँ किस तरह लडूँ? जहाँ ऐसी लडाईसे तीसरे पक्षकी ताकत बढ रही हो, वहाँ मै कैसे लड सकता हूँ? इसलिए मेरी प्रतिज्ञा है कि मै लडूँगा नही। पूना निवासियोसे सिर्फ एक ही बात कहकर मै विदा लूँगा। यह पागल बनिया आपको यह कहकर जा रहा है, 'पूनावासियो, श्रद्धा रखो और स्वराज्य लो।'

[गुजरातीसे]
नवजीवन, १४-९-१९२४

१. श चिकित्सक, जिन्होंने पूनाके सैसून अस्पतालमें १२ जनवरी, १९२४को गाधीजीका ऑपरेशन किया था।

२. यह अनुच्छेद बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्टससे लिया गया है।

५९. भाषण : तिलक महाविद्यालय, पूनाके दीक्षान्त समारोहमें

४ सितम्बर, १९२४

तुम जो शिक्षा ग्रहण कर रहे हो उसका उद्देश्य स्वराज्य लेना है। मैं जो गुजरातमे कुलपति बनकर बैठा हूँ, वह भी स्वराज्यके लिए लडनेवाले सैनिककी हैसियतसे और इस मकसदसे बैठा हूँ कि विद्यार्थियोको स्वराज्यका सैनिक बनाकर निकालूँ। मै ४ अगस्त, १९१४[1] के दिन विलायत पहुँचा था। वहाँ मैंने क्या देखा? जैसे-जैसे लडाई बढती गई, वैसे-वैसे तमाम कानूनकी शिक्षा देनेवाली सस्थाएँ बन्द होती गई। ऑक्सफोर्ड और कैम्ब्रिजमे भी पढाईका काम बहुत-कुछ बन्द हो गया। उन्होने शिक्षाको लडाईके मुकाबले गौण स्थान दिया। और दे भी क्यो नही। शिक्षाका फल ही यह है कि विद्यार्थी श्रेष्ठ नागरिक बने, उत्तम देशसेवक बने — और देश, समाज एव गृहस्थाश्रमको सुशोभित करे।

अबसे चौबीस वर्ष पूर्व दक्षिण आफ्रिकामे भी मैंने यही दृश्य देखा था। वहाँ कॉलेजोके छात्र सेना और रेडक्रॉस सेवादलमे सम्मिलित हो रहे थे। जवान लड़के और लडकियाँ सभी अपने-अपने कॉलेजोको छोडकर ऐसे ही कामोमे लग रहे थे। मै तो काला आदमी था। मैंने गोरे वकीलो और बैरिस्टरोको अदालते छोड-छोडकर लडाईमे जाते देखा। मैं जब अदालतोमे गया और उन्हे खाली देखा तो मुझे शर्म मालूम हुई। मेरे जीमे आया कि मैं भी इसी काममे लग जाऊँ। जब देशपर कोई सकट आता है तब यही काम करना पडता है। यदि तुम इस बातको समझो तो तुम्हारे सम्मुख मुझ-जैसे अविद्वान्का खडा होना सार्थक हो, अन्यथा मुझे इस समारोहका अध्यक्ष बनाना तो मेरी हँसी उडाने-जैसा है।

कोई नया आया हुआ अग्रेज सरकारी सस्थाओको देखकर तुम्हारी सस्था देखने आये तो वह यहाँ क्या देखनेकी आशा रखेगा? क्या वह तुम्हारे मकान देखेगा, विद्वान् शिक्षक देखेगा, तुम्हे अग्रेजीमे बोलते हुए सुननेकी उम्मीद रखेगा? नही, वह यहाँ कोई नई तस्वीर देखनेकी आशा रखेगा। दूसरी सब सस्थाओमे उसे कताई देखनेको नही मिली होगी, यहाँ वह कताई और बुनाई देखना चाहेगा। वह तुम्हारे आँगनमे कपास पैदा होती देखना चाहेगा। तुम्हारा सूत देखना चाहेगा और यदि वह अच्छा सूत देखेगा तो मनमे कहेगा कि मैंचेस्टरपर आफत आ रही है। मोटा सूत देखेगा तो कहेगा कि मैंचेस्टरको चिन्ता नही। वह तुमको साहब बना हुआ देखनेकी उम्मीद नही रखेगा, वह तुम्हे गरीबो-जैसा देखनेकी आशा रखेगा। तुम्हे अपनी भाषामे ही काम-काज चलाते हुए देखनेकी आशा रखेगा। जनरल बोथा इंग्लैंड

१. मूलमें ६ अगस्त है जो स्पष्टतः भूल है; देखिए खण्ड १२, पृष्ठ ५१४।

गये थे। वहाँ जब बादशाहसे बात करनेका अवसर आया तो उन्होंने अंग्रेजीमें बात करनेसे साफ मना कर दिया। उन्होंने डचोंकी अपभ्रंश भाषा 'टाल' मे ही बात करनेका आग्रह किया और 'टाल' के जानकार दुभाषियेकी मार्फत बात की। यह बात नही थी कि वे अंग्रेजी भाषा नही जानते थे। वे मुझसे ज्यादा अच्छी अंग्रेजी बोलते थे, किन्तु उन्होंने अपनी ही भाषामे बात करनेमे अपना गौरव समझा। राष्ट्रपति क्रूगर भी 'टाल' के अतिरिक्त दूसरी भाषामे बातचीत करनेसे इनकार करते थे। इस तरीकेसे ही उन्होने अपनी सत्ता स्थापित की थी। इसलिए मैं तुमसे यही आशा करता हूँ कि तुम मुझसे हिन्दी, उर्दू और मराठीमे ही बातचीत करो। तुम्हारे लिए अच्छे अंग्रेजी बोलनेवाले शिक्षक मिले, इसमे कुछ नही। हिन्दी या मराठीके जरिये पढानेवाले, अकिंचन, धार्मिक, सर्वस्वका त्याग करनेवाले शिक्षक तुम्हारे यहाँ हो, यही तुम्हारा भूषण है — भले ही विद्वत्तामे वे औरोसे हार जाये। मैं तुमसे यही चाहता हूँ कि तुम विद्यापीठकी मर्यादा जानो और उसके ध्येयको अच्छी तरह समझो।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १४-९-१९२४

६०. पूनाके कार्यकर्त्ताओंके साथ चर्चा

४ सितम्बर, १९२४

प्रश्न: आप कांग्रेसको ये तीन वस्तुएँ ही सौंपते है; क्या इससे कांग्रेसका राजनीतिक स्वरूप मिट नहीं जायेगा?

गांधीजी हाँ, घड़ी-भरके लिए मिट जायेगा, लेकिन मैं तो केवल एक सालके लिए ही, जबतक मैं विदेशी कपडेका बहिष्कार कर रहा हूँ, प्रयोगका समय माँगता हूँ।

लेकिन आप तो कातनेवाले लोगोंके अलावा अन्य सब लोगोंको कांग्रेससे निकालना चाहते है। क्या केवल खादीका काम करनेवालोको ही कांग्रेसमें रहनेका अधिकार है? जो लोग बाकीके दो काम करें उन्हें कांग्रेसमें रहनेका अधिकार क्यों नहीं हो सकता?

मैं तो सैनिक हूँ, इसलिए लडाई किस तरह चलाई जाये यह समझकर बात करता हूँ। हिन्दू-मुस्लिम एकता और अस्पृश्यताके लिए शारीरिक श्रमकी जरूरत नही पडती। उसके लिए तो प्रचार और शिक्षाकी जरूरत है। शुद्ध वृत्ति-भर हो तो यह काम बहुत ज्यादा हो सकता है, जब कि खादीके काममे शुद्ध वृत्तिके अतिरिक्त हाथ हिलाना भी आवश्यक है। मुझे तो कार्यकर्त्ताओ और सामान्य जनताको एक शृंखलामें बाँधना है। वह शृंखला केवल चरखेका सूत है। यदि कांग्रेसके सदस्य कातें तो करोडो देशवासी कातेंगे।

तब जिन लोगोंको आपके अन्य दो कार्योंसे सहानुभूति हो उन्हें तो कांग्रेससे बाहर ही रहना होगा न?

बाहर रहकर वे भले ही मदद करे। मेरे सामने सहानुभूति दिखानेवाले लोग हजारोकी सख्यामे इकट्ठे होते ही रहे है। उनसे मेरा क्या काम निकला? मुझे तो महीनेमे २,००० गज सूत कातनेवाले लोगोकी सेना तैयार करनी है। क्या आपको २,००० गज सूत कातनेका समय नही मिल सकता? क्या आपके ऊपर मुझसे भी ज्यादा कार्य-भार है?

लेकिन मैंने आपसे पहले जो प्रश्न पूछा था उसे ही मैं फिर पूछता हूँ। सबसे बड़ा भय यह है कि एक राजनीतिक संस्थाके रूपमें कांग्रेसका अस्तित्व हमेशाके लिए मिट जायेगा।

नही, ऐसा नही होगा। आज युद्धमे उतरे बिना मै आपको राजनीतिक कार्य-क्रम नही दे सकता। लेकिन मै जैसा कहता हूँ यदि आप वैसा करे तो मै आपको तुरन्त ही राजनीतिक कार्यक्रम दूंगा। मै सन्त नही हूँ, मै राजनीतिज्ञ ही हूँ। फर्क केवल इतना ही है कि मै कुछ सौम्य ढगका राजनीतिज्ञ हूँ। दक्षिण आफ्रिकामे क्या मै राजनीतिज्ञ नही था? क्या मैने राजनीतिके ज्ञानके बिना ही जनरल स्मट्ससे टक्कर ली थी? भई, मुझे लडना है, लेकिन आप मुझे हथियार तो तेज कर लेने दे।

आप [कांग्रेस] कमेटियोंको छोड़नेकी बात कहते हैं तो क्या इससे कटुता कम हो जायेगी?

यदि आप रोषसे [काग्रेस] कमेटियोको छोडेगे तो कटुता नही मिटेगी। हाँ, यदि आप कटुताको नष्ट करनेके उद्देश्यसे ऐसा करेगे तो वह अवश्य मिट जायेगी।

यदि कोई आपकी खादीका और आपके सिद्धान्तका विरोध करने लगे तो आप उसका क्या करेंगे?

ऐसा कोई भी नही चाहता, यदि कोई चाहता भी हो, तो भी मुझे उसका कोई भय नही है।

लेकिन यदि कोई आपके सिद्धान्तपर आक्रमण करे तो आप सिद्धान्त छोड़नेका निर्णय तो नहीं करेंगे? बल्कि आपको तो लड़ाई करके ही उस सिद्धान्तकी रक्षा करनी होगी।

मेरे सिद्धान्तमे ही ऐसी शक्ति निहित है कि कोई उसे मिटा नही सकता। हमे सिद्धान्तका त्याग नही करना है; यदि जरूरत जान पड़े तो [काग्रेस] कमेटीको त्याग देना है।

[कांग्रेस] कमेटी न हो तो हम पंगु बन जायेंगे। फिर हम किस अधिकारसे काम कर सकते हैं?

आप तनिक गहरा विचार करे। आप देखते है कि फर्ग्युसन कॉलेज आपकी राष्ट्रीय सस्थाओके साथ-साथ चल रहा है, सो क्या काग्रेसके भरोसे? काग्रेसका आश्रय लेनेसे ही काम होता है, ऐसा मानना कोरा वहम है। आपमे जितनी शक्ति होगी आप उतना ही कार्य कर सकेगे और ऐसे तन्त्रको रखनेका लाभ ही क्या है जिसकी

सार-सँभालमें ही आपका सारा धन और बल खप जाये? इससे तो बेहतर यह है कि उस तन्त्रको नष्ट कर दिया जाये। यदि तन्त्र अनायास ही हाथमें रहे तो भले ही बना रहे। यदि इसमें आपकी सारी शक्ति खर्च होती है तो इसका आपके हाथसे निकल जाना ही श्रेयस्कर है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १४-९-१९२४

६१. भाषण : सूरतके कांग्रेसी कार्यकर्त्ताओंके समक्ष

[५ सितम्बर, १९२४][1]

गांधीजी यहाँ कुछ ही घंटे ठहरे। इस दौरान उन्होंने कांग्रेसी कार्यकर्त्ताओंसे स्थानीय मामलों और खासकर आगामी नगरपालिका चुनाव तथा राष्ट्रीय प्राथमिक स्कूलोंकी हालतके सम्बन्धमें बातचीत की। उन्होंने केवल उन्हीं उम्मीदवारोंको चुनने और खड़ा करनेकी सलाह दी जो राष्ट्रीय नीतिका समर्थन करनेका वादा करें। उन्होंने उन सभीसे एक होकर काम करनेको कहा, भले ही वे अलग-अलग दलोंके हों। राष्ट्रीय स्कूलोंके बारेमें गांधीजीने बताया कि अगर कांग्रेसी लोगोंको उन्हें चलानेके लिए काफी पैसा न मिले तो अच्छा होगा कि वे उन्हें बन्द कर दें। लेकिन वे उन्हें चलानेके लिए कर्ज लेनेकी नीतिके विरुद्ध थे।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १६-९-१९२४

६२. भाषण : सूरतकी सार्वजनिक सभामें

५ सितम्बर, १९२४

कहाँ गया सूरतका तेज, संगठन और शौर्य? ये सब सूरतमें फिर कब आयेंगे, जिससे कि सूरतसे उनका प्रवाह गुजरातमें पहुँचे और गुजरातसे हिन्दुस्तानको मिले? जब मैं देखता हूँ कि मेरी इच्छानुसार काम नहीं हो रहा है, सब दाँव उलटे पड़ रहे हैं और पारस्परिक वैमनस्य बढ़ रहा है, तब मैं बहिष्कार और सविनय अवज्ञाकी बात कैसे कर सकता हूँ? सूरतमें खादी और मिलके कपड़ेके झगड़ेका तो प्रश्न ही नहीं था, यहाँ तो ऐसी व्यवस्था करनी है जिससे खादी ज्यादासे-ज्यादा तैयार हो। इसलिए मैं आपसे कहता हूँ कि सार्वजनिक सभाओं द्वारा जगत्‌में किसीको स्वराज्य नहीं मिला है। स्वराज्यके लिए तो जी-तोड़ मेहनत करनी पड़ती है। अपनी घर-

१. गांधीजी बम्बईसे अहमदाबाद जाते हुए सूरत गये थे।

गृहस्थी हम भाषणो, लेखो और विवेचनोसे नही चलाते। कुटुम्बका काम तभी चल सकता है जब कुटुम्बके लोग अपने-अपने हिस्सेका काम करे। यदि हमे स्वराज्य लेना है तो हरएकको कसकर काम करना शुरू कर देना चाहिए।

यदि हिन्दू अथवा मुसलमान दोनोमे से एक भी बिलकुल सीधे हो जाये तो एकता हमारे हाथमे है। लेकिन यदि बदला लेनेकी इच्छा हो तो उचित यही है कि हम अपने युगमे एकताकी बात ही न करे। यदि हमे स्वराज्य लेनेकी गरज है तो दोनोमे से किसी एकको सीधा होना ही चाहिए। लेकिन कहा जाता है कि हिन्दू डरपोक और कमजोर है। डरपोकपन दूर करनेका रास्ता बदला लेना नही है। डरपोक दोनो कौमे है और इसी कारण दोनो गुलाम है। सरकार दोनोको गुलाम मानती है। इसलिए सच्चे अर्थोमे केवल एक नही, दोनो कौमे डरपोक है और उनका यह डरपोकपन अहिसाके सिवा और किसी उपायसे दूर नही किया जा सकता। हाँ यह अहिसा वीरोकी होनी चाहिए। वीरताके लिए क्या लाठी चलानेकी जरूरत है? उसके लिए तो मरना सीखनेकी जरूरत है। हम हिन्दुओके मन्दिर तोडे जानेकी बात सुनते है। यदि पुजारी मन्दिरोको टूटता हुआ छोडकर भाग जाये, तो मन्दिर किस तरह बचाया जा सकता है? आप कहेगे कि आक्रमणकारी और देव-मन्दिर-भजककी आजिजी क्यो की जाये? मै तो आपसे कहता हूँ कि आप मरकर मूर्तिकी रक्षा करे। मारनेवाला जब देखेगा कि सामने कोई मरकर रक्षा करनेके लिए उद्यत बैठा है तब वह समझ जायेगा।

आप मारकर मूर्तिकी रक्षा नही कर सकते। मुसलमान भी हिन्दुओको मारकर इस्लामकी रक्षा नही कर सकेगे। यदि वे मारकर इस्लामकी रक्षा करना चाहते है तो इसमे सन्देह नही कि इससे इस्लाम नेस्तनाबूद हो जायेगा। दुनियामे एक भी धर्म दूसरोको मारकर अपने अस्तित्वको बनाये नही रख सकता। मै तीस वर्षके अपने चिन्तन और अनुभवके आधारपर कहता हूँ कि जो लोग धर्म और देशकी रक्षा करना चाहते है, उनके लिए अहिसाके अतिरिक्त और कोई उपाय नही है। तलवार उठानेवालेकी मृत्यु तलवारसे ही होती है। आजतक कोई भी धर्म तलवारके बलपर नही चल सका है और न ही चल सकता है। इस्लाम फकीरोके और हिन्दू-धर्म तपस्वियोके कारण टिका रहा है। हिन्दू-धर्ममे ऐसे ऋषि-मुनि हुए है जिन्होने मृत्युका रहस्य बताया है। आप अपने शास्त्रोको अच्छी तरहसे सोच-समझकर पढे। आप मुझे इस चर्चामे न डाले कि रामने क्या किया। पार्वतीने अनेक विघ्न-बाधाओके बीच तपस्या की, द्रौपदीने भी उस समय अपनी रक्षा तपस्याके द्वारा ही की, जब धर्मराज युधिष्ठिर, बलवान भीम और गाण्डीवधारी अर्जुन टुकर-टुकर देख रहे थे।

मुसलमानोको मै यह सन्देश मौलाना अब्दुल बारी साहब और अली-भाइयो द्वारा दे सकता हूँ। लेकिन हिन्दू होनेके नाते मुझे यह बात प्रत्येक हिन्दूसे कहनेका अधिकार है। आज हिन्दू और मुसलमान दोनो ही ईश्वरमे अपनी श्रद्धा खो बैठे है, आत्मविश्वास खो बैठे है और गुण्डोकी सहायतासे बहादुर बनना चाहते है। इससे न तो हिन्दू-धर्मकी रक्षा होगी और न इस्लामकी ही। ये दोनो तो तपश्चर्या और

फकीरीसे ही बच पायेंगे। आप अपना डरपोकपन दूर कर दे। जमनालालजीके हाथमे चोट आई[1], इससे मुझे प्रसन्नता हुई। यदि झगडे-फसादको शान्त करते हुए वे मर भी जाते तो भी मुझे प्रसन्नता ही होती, क्योकि उससे हिन्दू-धर्मकी ज्यादा रक्षा होती। उनको अकस्मात् ही पत्थर लगा। लेकिन जो पत्थरोकी बौछारमे जाकर खडा होता है उसे केवल पत्थर ही नही लगेगा बल्कि वह मर भी सकता है। यदि जमनालालजी मर जाते तो इससे लडनेवाले दोनो पक्ष लज्जित होते और रोते।

इस तरहसे बहादुर बनकर आप मुसलमानोके दिलोको जीते। मै अखाडोका विरोधी नही हूँ। शरीर कमजोर हो तो उसमे सुधार करनेके लिए आप भले ही अखाडे खोले। लेकिन हिन्दू-मुस्लिम विवादका निर्णय करनेके लिए नही। उसके निर्णयका उपाय तो तप और सत्य ही है। महाभारतकारने एक बहुत जोरदार बात कही है "तराजूके एक पलडेमे आप सहस्रो यज्ञोको रखे और दूसरेमे सत्य, तो भी सत्यका पलडा भारी होगा।" मै चालीस वर्षके अपने अनुभवके आधारपर कहता हूँ कि यह बात सच है। जब हम इन साधनोसे विजय प्राप्त करेगे तब हिन्दुओ और मुसलमानोमे परस्पर विरोध नही रहेगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १४-९-१९२४

६३. सन्देश: 'साँझ वर्तमान' को[2]

[६ सितम्बर, १९२४ से पूर्व]

नये सालके उपलक्ष्यमे 'साँझ' के पारसी पाठकोको अपनी शुभकामना भेजते हुए मै इसके सिवा और कुछ नही सोच पाता कि भारतीय जन-साधारणकी गरीबी दिन-प्रतिदिन बढती जा रही है। हम पढे-लिखे लोग अपने निर्वाह और आमोद-प्रमोदके सभी साधन इन्हीसे प्राप्त करते हैं। जो भयकर तथ्य हमारे सामने हमे चुनौती देते हुए खडे है उनकी ओरसे अगर हम अपनी आँखे बन्द कर लेते है तो हमारी यह खुशी एक झूठी खुशी होगी। क्या 'साँझ' के पारसी पाठक नये सालमे वास्तविक प्रसन्नता प्राप्त करना नही चाहेगे? इसका सबसे अच्छा रास्ता यही है कि वे अपना ध्यान चरखे तथा उसके उत्पादन सूतकी ओर लगाये। यदि वे मातृभूमिके नामपर कुछ कताई करे तो गरीबोको कताईके लिए प्रोत्साहन मिलेगा तथा खादी सस्ती होगी। यदि वे हाथ-कते सूतसे तैयार खादीका उपयोग करेगे तो वे खादीकी बिक्रीमे सहायता पहुँचायेगे।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ६-९-१९२४

१. यह चोट जमनालाल बजाजको नागपुरके हिन्दू-मुस्लिम दगोंमें लगी थी।

२. इसके पारसी नववर्ष अंकके लिए।

६४. तार : पण्डित मदनमोहन मालवीयको[१]

साबरमती
[६ सितम्बर, १९२४]

पण्डित मालवीयजी
शिमला

तारके लिए धन्यवाद। आपसे जितना बने सब सहायता चाहूँगा। क्या आप दिल्लीके हिन्दुओंसे सुझाई गई शर्तें माननेको कह सकेंगे?

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १०१५१) की फोटो-नकलसे।

६५. तार : मुहम्मद अलीको

६ सितम्बर, १९२४

मौलाना मुहम्मद अली
कूचा चेलान
दिल्ली

अभी पहुँचा हूँ। मालवीयजीको तार दिया। आशा है आप सानन्द होंगे।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १०१५१) की फोटो-नकलसे।

१. यह तार मालवीयजीके ५ सितम्बरके तारके उत्तरमें भेजा गया था। वह तार इस प्रकार था: "हार्दिक दुःख कि पिछले दो महीनोंके बहस-मुबाहिसेमें आपकी कोई सहायता नहीं कर सका, पर आपके निर्णयसे बड़ी प्रसन्नता हुई। निर्णय आपके योग्य है। सुना है आप यहाँ आ रहे हैं। यदि आ रहे हों तो निश्चय ही आप मेरे साथ शान्तिकुटीरमें ठहरें।"

६६. पत्र : गोपबन्धु दासको

६ सितम्बर, १९२४

प्रिय गोपबन्धु बाबू,

आपका पत्र मिला। यदि सार्वजनिक धनका गबन करनेवाले . . . तथा अन्य लोग पैसेवाले हो, तो मै बिना किसी हिचकके यही सलाह दूंगा कि मुकदमे दायर कर दिये जाये। बहिष्कारका मतलब यह नही है कि हम नुकसान उठाये। हम अपनी सारी निर्जी सम्पत्ति भले ही गँवा दे, पर न्यासकी सम्पत्तिकी रक्षा तो करनी ही चाहिए। मैने निरजन बाबूको सलाह दी है कि मुकदमेकी कार्यवाही शुरू कर दें और इस्तीफा दे दे। बादमे उनको फिरसे चुना जा सकता है। आशा है, आप अब बिलकुल ठीक होगे। अमृतलाल ठक्करने मुझे बताया है कि आपके स्कूलको सहायता दरकार है। कृपया जमनालालजीको लिखे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य नारायण देसाई

६७. पत्र : मोतीलाल नेहरूको

साबरमती
६ सितम्बर, १९२४

प्रिय मोतीलालजी,

मुझे कल सूरतमे आपका पत्र मिला। मैने आपके तारका सक्षिप्त उत्तर[1] बम्बई-से भेज दिया था। कल मैने आपके पत्रके उत्तरमे एक सक्षिप्त तार भेजा है। मुझे दुःख है कि मेरे पत्रसे आपको चोट पहुँची। कृपया क्षमा करे। मैने जो-कुछ सुना था, उसे अपनेतक रखनेकी अपेक्षा आपको बतला देना क्या ज्यादा अच्छा नही था? आप विश्वास कीजिए, जो लोग सदा मेरे आसपास रहते है, वे शायद ही कभी मुझसे बातचीत करते हो? . .[2]

१. देखिए "तार : मोतीलाल नेहरूको", २-९-१९२४ को या उसके बाद।
२. साधन-सूत्रमें यहाँ कुछ पक्तियाँ छोड दी गई हैं।

फिर भी मेरा प्रस्ताव आपके सामने है और मैं चाहता हूँ कि उसपर उसके गुण-दोषके आधारपर विचार किया जाये। क्या आप उसपर विचार करके कृपया मुझे अनुगृहीत करेंगे? आपको मालूम ही है कि मैं श्रीमती बेसेंट और सर्वश्री जयकर तथा नटराजनके[1] साथ इसके बारेमें चर्चा कर चुका हूँ। पूनामें स्वराज्यवादियोंसे भी इसके बारेमें बात कर ली है।

प्रस्ताव स्वीकृत हो या नहीं, पर मेरा यह निर्णय अन्तिम है कि मतदानकी स्थिति पैदा करके प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष किसी भी रूपमें मैं कांग्रेसके विभाजनका कारण नहीं बनूंगा। जो भी हो, सबकी सहमतिसे होना चाहिए।

मो० क० गांधी

[पुनश्च .]

मुझे आपका तार मिल गया है। ऊपरके पत्रमें जो-कुछ कहा है, उससे ज्यादा मुझे कुछ नहीं कहना है।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य: नारायण देसाई

६८. पत्र: जवाहरलाल नेहरूको

६ सितम्बर, १९२४

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा तार मिला। तुम्हारे पिताजीका पत्र पहले ही आ चुका था। मुझे सचमुच बहुत दुःख है। मैंने तो सोचा था कि मैं अपनी भावनाकी गहराई व्यक्त करते हुए एक निर्दोष-सा पत्र लिख रहा हूँ। . [2]

इसलिए मैंने तुम्हारे पिताजीसे अनुरोध किया है कि वे प्रस्तावके गुण-दोषोंके बारेमें मुझे अपनी राय दें। मैं कई स्वराज्यवादी मित्रोंके साथ इसपर चर्चा कर चुका हूँ। मुझे इस कठिनाईसे निकलनेका दूसरा कोई सम्माननीय मार्ग नहीं सूझ पड़ता। लिखो कि इसके बारेमें तुम क्या सोचते हो।

नाभासे जो जवाब[3] आया है, वह उसके अपने नजरियेसे आखिरी है। इसका बस एक यही जवाब हो सकता है कि गिरफ्तारीकी चुनौती स्वीकार कर ली जाये। लेकिन आजकलकी हालत देखते हुए, वैसा करना अक्लमन्दी नहीं मालूम पड़ता।

१. बम्बईसे निकलनेवाले **इंडियन सोशल रिफॉर्मरके** सम्पादक।
२. यहाँ साधन-सूत्रमें कुछ पंक्तियाँ छोड़ दी गई हैं।
३. देखिए "टिप्पणियाँ", ११-९-१९२४, उप-शीर्षक "असन्तोषजनक उत्तर"।

इसलिए सबसे अच्छा यही रहेगा कि चुपचाप बैठकर बेहतर मौकेका इन्तजार किया जाये। [1] अमेठीके बारेमे अत्यन्त मुस्तैदीसे भेजी गई तुम्हारी रिपोर्ट मिल गई है। उसको पढते हुए दु ख होता है। समझमे नही आता कि क्या करूँ। मैंने शुएब और कृष्टोदासको निजी तौरपर सचाईका पता लगाने गुलबर्गा भी भेजा है। जितनी जल्दी हो सके, तुम नाभा चले जाओ। हयात और मोअज्जमको अपने साथ ले जा सकते हो। उनको जगहकी जानकारी होनी चाहिए। चूँकि एम० आगे कोई प्रगति नही कर पाया है, इसलिए मेरी हलचलके बारेमे कुछ भी कह सकना मुश्किल है। मैं कमसे-कम सोमवारतक यही हूँ।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गाधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य . नारायण देसाई

६९. पत्र : चक्रवर्ती राजगोपालाचारीको

६ सितम्बर, १९२४

प्रियवर राजगोपालाचारी,

मेरे विचारोमे तेजीसे परिवर्तन हो रहे है। पता नही आप उनपर ठीक-ठीक लक्ष्य कर रहे है या नही। मुझे तो दिनके उजालेकी तरह स्पष्ट नजर आ रहा है कि हमारे कार्यकर्त्ताओमे जो बुराई घर कर गई है, हमे उसका सीधा प्रतिरोध नही करना चाहिए। हमें पूर्ण रूपसे सत्ताका परित्याग कर देना चाहिए। अगर अपने उद्देश्यमे हमारी आस्था है और हमारा उद्देश्य सचमुच अच्छा है तो हमे सफलता मिलनी ही चाहिए। यदि इससे आन्दोलनको फिलहाल कुछ नुकसान भी पहुँचे, तो उसका खतरा हमे उठाना चाहिए। बहुमतके बलपर कोई भी निर्णय नही किया जाना चाहिए। हमे तबतक समर्पण करते जाना चाहिए जबतक कि हमारे सिद्धान्तपर ही आँच न आ जाये। इसी दृष्टिसे मै चरखा, अस्पृश्यता और हिन्दू-मुसलमान एकताका कार्यक्रम पेश कर रहा हूँ।

हाँ, कताई-सम्बन्धी अपने प्रस्तावमे दण्डकी एक धारा जुडवानेकी आपकी कोशिश-को लेकर यह क्या शोर-गुल मचा हुआ है? आपको कठिनाइयोमे देखकर, मेरा हृदय आपके प्रति सहानुभूतिसे भर उठता है। अगर स्थानीय नियन्त्रण बनाये रखनेमे इतनी सारी शक्ति खर्च करनी पडती है, तो उसकी चिन्ता ही छोड दीजिए। क्या अब सारा झगडा शान्त हो गया है?

१. यहाँ साधन-सूत्रमें कुछ पंक्तियाँ छोड दी गई हैं।

क्या आपने देवधर द्वारा स्थापित सहायता समितिकी कार्यप्रणालीका अध्ययन किया है? क्या आप उनके साथ सम्मिलित हो सकते है? उनका कार्य किस प्रकारका है? मै तो आपको यही सलाह दूंगा कि यदि सम्भव हो तो एक ही गैर-सरकारी समिति बनवाइए। चारो ओरसे पैसा आ रहा है। क्या मै सारी राशि आपको भेज दूं? दक्षिण कनाराका क्या होगा? विभिन्न केन्द्रोकी क्या स्थिति रहेगी? यहाँ वस्त्रोका बडा ढेर लग गया है। कृपया ब्योरेवार हिदायत दे। मै यहाँ कमसे-कम सोमवार तक तो हूँ ही। लेकिन हो सकता है कि यहाँ कमसे-कम हफ्ते-भर रहूँ।

आपका,

मो० क० गांधी

[अग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।

सौजन्य: नारायण देसाई

७०. पत्र: जमनालाल बजाजको

[६ सितम्बर, १९२४][1]

चि० जमनालाल,

तुम्हारा तार मिल गया और पत्र भी। बम्बई, पूना और सूरतकी यात्रामे लिखनेको एक क्षणका भी समय नही मिला। आज सुबह आश्रम पहुँचा।

तुमको चोट लगी, इससे मुझे बिलकुल दु:ख नही हुआ। मै तो मानता हूँ कि हम-जैसे बहुतोको कदाचित् अपना बलिदान देना पडे। जहर इतना ज्यादा व्याप्त हो गया है और अप्रामाणिकता इतनी ज्यादा फैल गई है कि कुछ शुद्ध व्यक्तियोका बलिदान हुए बिना इस आपत्तिसे हमारा छुटकारा नही हो सकता। हो सके तो झगडेकी जडका पता लगाना। क्या कुछ ऐसे समझदार हिन्दू या मुसलमान नही है जो समझे और झगडेके कारणोको दूर करे?

मेरे निश्चय तुमने समझ लिये होगे। बेलगाँवमे मतदानसे किसी भी महत्त्वपूर्ण बातका फैसला न करनेका मैने निश्चय किया है। झगडे इतने बढ गये है कि फिलहाल तो हमको सत्याग्रहका प्रचण्ड स्वरूप बन्द ही रखना चाहिए। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि अगर हम ऐसा नही करेगे तो हमारा ही नाश हो जायेगा। एक भी बात सही रूपमे नही समझी जाती। सबकुछका अनर्थ, चारो ओर अविश्वास! इस समय तो हम खुद अपनी जगह कायम रहे और दूसरे जो-कुछ करते है उसके साक्षी रहे।

१. गाधीजी आश्रम ६ सितम्बरको पहुँचे थे।

'यग इडिया' के द्वारा तो मैंने वहुत-कुछ समझाया है। मुझे पता नही कि उसमे से कितनेका अनुवाद 'नवजीवन' मे प्रकाशित हुआ होगा।

तुम्हारा हाथ विलकुल अच्छा हो गया होगा। मौ० मुहम्मद अलीका पत्र या तार आनेतक मैं यही हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (जी० एन० २८५०) की फोटो-नकलसे।

७१. टिप्पणी

खादी-प्रचार

प्रिन्सेस स्ट्रीटके खादी भण्डारको, जिसे भाई जेराजाणी अपनी जोखिमपर चलाते थे, अव अखिल भारतीय खादी मण्डलने अपने हाथमे ले लिया है और उसका इरादा उस खादी भण्डारका विस्तार करनेका है। भण्डार अपने हाथमें लेते हुए आवश्यक जमानत भी ले ली गई है। इस भण्डारको लेनेका उद्देश्य यह है कि समस्त हिन्दुस्तानमे तैयार होनेवाली खादी, जो प्रान्तोमे वच जाये, इस केन्द्रीय खादी भण्डारमे लाकर रखी जाये और वेची जाये। इस तरहकी सहायता पहले गुजरात प्रान्त किया करता था, लेकिन गुजरात प्रान्तीय कमेटीने स्थानीय उद्योगको विकसित करनेका जो निश्चय किया है उसे देखते हुए गुजरातने अव ऐसा करना वन्द कर दिया है। अत इस भण्डारमे हर तरहकी खादी दिखाई देती है। इसमें महाराष्ट्रीय वहनोको जिस तरहकी साडियाँ चाहिए वे भी मिलती है और पूरे अर्जकी धोतियाँ भी, जो अबतक नही मिलती थी, मिल सकती है। इस भण्डारने सगठनकी जो योजना चलाई है वह प्रोत्साहन देने योग्य है। एक रुपया वार्षिक चन्दा देनेवाला कोई भी मनुष्य इसका सदस्य वन सकता है। भण्डारके व्यवस्थापकने यह जिम्मेदारी ली है कि वह खादीकी किस्म और भाव-सम्वन्धी पत्रिका प्रकाशित करके प्रत्येक सदस्यको पहुँचायेगा तथा इसके प्रत्येक सदस्यको खरीदी गई खादीपर एक रुपयेके पीछे एक पैसेकी छूट भी मिलेगी। अर्थात् यदि वह एक वर्षमे ६४ रुपयेकी खादी खरीदता है तो उसमे से एक रुपया तो अवश्य वचा सकता है। तथापि कोई मनुष्य सकुचित दृष्टिकोणसे सदस्य वने यह वाछनीय नही है। यदि कोई इसका सदस्य वने तो खादीको प्रोत्साहन देनेके विचारसे ही वने। वह खादीकी प्रगति-सम्वन्धी पत्रिका पढकर समस्त जानकारी प्राप्त करे तथा अन्य लोगोमें उसका प्रचार करे। इस पत्रिकाके चतुर्थ अकमे दो सुझाव दिये गये है वे उपयोगी है। चौमासेमे सव कपडे जल्दी नही सूखते और खादीके कपडोको सूखनेमे तो वहुत ज्यादा समय लगता है। इसके लिए यह उपाय वताया गया है कि एकके वदले, वीचमें दो फुटका अन्तर रखकर, दो रस्सियाँ वाँध ली जाये और उनपर कपडेको इकहरा फैलाया जाये। इस तरह कपड़के दोनो छोर मिलने न पायेंगे और इससे

कपडेको हवा ज्यादा मिलेगी और वह तुरन्त सूख जायेगा। दूसरा सुझाव खादीकी टोपीको धोनेके बारेमे है। उसे धोते समय मरोडनेसे उसपर सिलवटे पड जाती है और कभी-कभी तो सीवन भी खुल जाती है। लेकिन यदि उसे बिना मरोडे निचोडा जाये और उसकी दो या तीन तहे करके हाथोमे दबाकर सुखा दिया जाये तो उसमे कोई सिलवट न आयेगी और वह देखनेमे सुन्दर लगेगी। यह सच है कि इससे पानी अच्छी तरहसे नही निकल सकता, लेकिन टोपी तो तीन दिन पहनी जा सकती है। अतएव उतने समयमे धोई हुई टोपी सुखाई जा सकती है। यदि उसे दोनो हाथोसे दबानेके बजाय दो चिकनी पट्टियोके बीच दबाया जाये तो सारा पानी भी निकल जायेगा और सूखनेपर टोपी भी काफी सुन्दर रह सकेगी। सफेद खादी पहननेवाले लोगोको भी मैली खादी कतई नही पहननी चाहिए। कपडे धोनेकी आदत पडनेके बाद मनुष्यको कपडे धोना अच्छा लगता है। इसमे समय भी नही लगता और आनन्द आता है सो अलग। यह स्पष्ट है कि सफेद कपडे कई बार धोये जाने चाहिए। काली बडी पहननेवाला गरीब आदमी धोबीका खर्च नही उठा सकता। उसे अपने कपडे आप धोनेकी आदत डालनी चाहिए।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ७-९-१९२४

७२. सूतकी जाँच

अखिल भारतीय खादी बोर्डने प्राप्त सूतकी जो परीक्षा की है, उसके परिणाम जानने योग्य है, इसलिए मै उन्हे नीचे दे रहा हूँ।[1]

प्रार्थना है कि प्रत्येक प्रान्त अगले महीने अपने सदस्यो तथा अन्य लोगोके सूतके रजिस्टर नम्बर सही-सही लिख भेजे।

कुछ प्रान्तोने अहमदाबाद स्टेशनके पतेसे अपने पार्सल भेजे है, इससे समय और पैसा व्यर्थ बरबाद हुआ है। सब पार्सल साबरमती स्टेशनके पतेसे भेजे जाने चाहिए। इसके अतिरिक्त सब पार्सलोपर 'किराया देय' लिखकर उसकी रकम टिकटोके रूपमे अथवा मनीआर्डरसे भिजवाना नही भूलना चाहिए।

प्रथम पुरस्कार एक १८ वर्षीया बगाली बाला लिये जा रही है, यह बात हम सबके लिए गर्वके योग्य है। भले ही कुछ लोगोको यह बात न रुचे और भले ही कुछ लोग इसे तुच्छ समझे, लेकिन मेरे लिए तो यह बहुत महत्त्वपूर्ण है। गुजरातमे दरबार साहब गोपालदास प्रथम आयेगे, यह बात मैने स्वप्नमे भी नही सोची थी। मै उन्हे बधाई देता हूँ। पण्डित जवाहरलाल और उनकी पत्नीके बारेमे भी ठीक यही बात हुई है। सयुक्त प्रान्तमे इन दोनो तथा श्री पुरुषोत्तमदास टण्डनके नाम विशेष रूपसे चमक रहे है। यह भी ध्यान देने योग्य है कि पण्डित जवाहरलालने कामका बोझ

१. यहाँ नही दिये गये हैं, देखिए "कसौटीपर", ४-९-१९२४।

बहुत ज्यादा होनेके बावजूद ४,००० गज सूत भेजा है। यह बात अन्य कार्यकर्त्ताओको प्रोत्साहन देनेवाली है।

कुल सख्या और गुणको देखते हुए गुजरातका प्रथम आना कोई आश्चर्यकी बात नही है। आश्चर्यकी बात तो यह है कि गुजरातसे भी उसकी आबादीके अनुपातसे बहुत कम नाम आये हैं। जहाँ सिखानेवाले बहुत अधिक है और जहाँ कातनेकी कलाके विकासपर खूब ध्यान दिया गया है वहाँ तो आज हजारो स्त्री-पुरुषोको सूत कातना चाहिए।

यह तो रहा एक पक्ष।

गुजरातकी सख्या सबसे ज्यादा है, इससे जो सन्तोष होता है वह है दूसरा पक्ष। जहाँ जितना ज्यादा काम हुआ है वहाँ उतना ही ज्यादा सूत काता गया है। गुजरातमे ज्यादा काम हुआ है इससे वहाँ ज्यादा सूत काता गया है। कातनेवालोकी कम सख्यासे पता चलता है कि देशमे लोग अभीतक कातनेके महत्त्वको समझ नही सके है और यह कला जितनी लोकप्रिय होनी चाहिए, अभी उतनी लोकप्रिय नही हुई है।

अगले महीनेके परिणामोसे इस सम्बन्धमे अधिक प्रकाश पडेगा।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, ७-९-१९२४

७३. दादाभाई नौरोजीकी जयन्ती

भारतके पितामह दादाभाईकी जयन्ती ४ सितम्बरको थी, लेकिन मेरी सुविधाका खयाल करके राष्ट्रीय महिला परिषद्ने यह जयन्ती ३० अगस्तको मनाई, क्योकि ४ सितम्बरको मुझे पूना जाना था। दादाभाईका जीवन एक ऋषिका-सा जीवन था। मेरे मनमे उनकी अनेक पावन स्मृतियाँ है। जिन महापुरुषोने मेरे जीवनको प्रभावित किया है, उनमे से भारतके ये पितामह भी एक है और उनके जीवनसे मुझे आज भी प्रेरणा मिलती है। मैंने बहनोको जो सस्मरण सुनाये थे, उनको मै पाठकोके सम्मुख प्रस्तुत करने योग्य मानता हूँ।

मुझे पहले-पहल सन् १८८८ मे दादाभाईके दर्शन हुए थे। मेरे पिताके एक मित्रने मुझे उनके नाम परिचय-पत्र दिया था। यह जानने योग्य है कि इस मित्रकी दादाभाईसे कोई जान-पहचान न थी, लेकिन उन्होने ऐसा मान लिया था कि दादाभाई-जैसे साधु पुरुषको कोई भी पत्र लिख सकता है। मैंने जाकर देखा कि दादाभाई इग्लैडमें सब विद्यार्थियोके सम्पर्कमे आते थे। वे उनके नेता थे और उनके सभी सभा-समारोहोमे भाग लेते थे। मैंने तबसे लेकर अन्ततक उनका जीवन एक ही धारामे बहता देखा। मै दक्षिण आफ्रिकामे बीस वर्षतक रहा और इस अरसेमे मेरे और दादाभाईके बीच सैकडो ही पत्रोका आदान-प्रदान हुआ होगा। पत्रका उत्तर देनेकी उनकी नियमितताने मुझे तो चकित कर दिया था। मेरे पत्र तो टाइप किये होते थे, लेकिन मुझे उनका एक भी पत्र टाइप किया हुआ मिला हो, यह मुझे याद नही आता। वे अपने सब पत्र हाथसे लिखते थे, इतना ही नही, बल्कि बादमे

मुझे विदित हुआ कि वे अपने हाथके लिखे पत्रोकी नकले भी अपने हाथसे टिशु-पेपर बुकमे उतार कर रखते थे। वे बहुत-से पत्रोका उत्तर तो लौटती डाकसे ही दे दिया करते थे। उनसे जब-जब मेरी मुलाकात हुई तब-तब मुझे प्रेम और माधुर्यके सिवा अन्य किसी बातका अनुभव नही हुआ। पिता जिस भाँति पुत्रसे बात करता है, दादाभाई उसी भाँति मुझसे बात करते थे और मैंने अन्य लोगोके मुँहसे सुना है कि इस सम्बन्धमे उनका अनुभव भी वही था जो मेरा था। हर घडी उनके मनमे यही विचार घूमता रहता था कि हिन्दुस्तान किस तरह उन्नति कर सकता है और उसे स्वराज्य कैसे मिल सकता है। हिन्दुस्तानकी दरिद्रताका प्रथम परिचय मुझे दादाभाईकी पुस्तकसे[1] ही हुआ था। उसी पुस्तकसे मुझे यह मालूम हुआ कि हमारे देशमे लगभग तीन करोड लोगोको भरपेट अन्न नही मिलता। आज तो ऐसे लोगोकी सख्या उससे भी अधिक हो गई है। दादाभाईकी सादगीकी तो कोई सीमा ही न थी। सन् १९०८मे ऐसा हुआ कि किसीने उनकी विपरीत आलोचना की। मुझे वह आलोचना असह्य जान पडी। तथापि मै यह सिद्ध न कर सका कि वह आलोचना असत्य है और मेरे मनमे भी उसको लेकर कुछ शका उठी। मुझे दादाभाई-जैसे महान् देशभक्तके बारेमे शका करना पापपूर्ण लगा। इसलिए मैंने आलोचकसे अनुमति ले ली और मै समय तय करके दादाभाईसे मिलने गया। उनके निजी कार्यालयमें जानेका मेरा यह पहला अवसर था। एक छोटी-सी कोठरी थी, जिसमे मात्र दो कुर्सियाँ थी। यही उनका कार्यालय था। मै उसमे घुस गया। उन्होने मुझे एक खाली कुर्सीपर बैठनेका निर्देश किया, लेकिन मै तो उनके पैरोके पास ही बैठ गया। उन्होने मेरे चेहरेपर व्यथाके चिह्न देखे और मुझसे पूछा, "कहो, साफ-साफ कहो, तुम्हारे मनको कौन-सी बात व्यथित कर रही है?" मैंने बहुत ही सकोचपूर्वक निन्दको द्वारा की गई उनकी आलोचना बताई और कहा, "इन बातोको सुनकर मेरे मनमे भी शका उत्पन्न हुई और चूँकि मै आपकी पूजा करता हूँ, मैंने अपनी इस शकाको आपसे छिपाना पाप समझा।" उन्होने हँसकर मुझसे पूछा, "मै तुमको क्या जवाब दूं? क्या तुम इस बातको सच समझते हो?" जिस ढगसे, जिस स्वरमे और जिस दु खसे उन्होने यह बात कही वह मेरे लिए पर्याप्त था। मैंने कहा, "अब मुझे कुछ नही सुनना है। मेरे मनमे अब कोई भी शका नही रही है।" तथापि उन्होने मुझसे इस सम्बन्धमे बहुत बाते कही। उनको यहाँ देनेकी जरूरत नही है। इस घटनाके बाद मुझे मालूम पडा कि दादाभाई फकीरोका-सा सादा जीवन व्यतीत करनेवाले भारतीय हैं। फकीरीका अर्थ यह नही है कि मनुष्यके पास एक कौडी भी न होनी चाहिए, लेकिन उस समय इनकी हैसियतके लोग जैसा जीवन व्यतीत करते थे और जिस सुख और ऐश्वर्यका उपभोग करते थे, दादाभाईने उस सबको त्याग दिया था; यही फकीरीका सच्चा अर्थ है।

इस पवित्र पुरुषके जीवनसे मैंने और मुझ जैसे अन्य अनेक लोगोने नियमितता, अनन्य देशभक्ति, सादगी, गरीबी और अथक परिश्रमका पाठ सीखा है। जिस समय सरकारकी टीका करना राजद्रोह माना जाता था और सत्य बात कहनेका कदाचित्

१. पावर्टी ऐंड अन-ब्रिटिश रूल इन इंडिया।

ही किसीको साहस होता था, उस समय दादाभाईने सरकारकी कडीसे-कडी आलोचना की थी और निडर होकर ब्रिटिश राज्यकी त्रुटियाँ वताई थी। जबतक हिन्दुस्तानका इस दुनियामे अस्तित्व रहेगा तबतक हिन्दुस्तानकी जनता उन्हे प्रेमपूर्वक याद रखेगी, इस वारेमे मुझे तनिक भी शका नही है।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, ७-९-१९२४

७४. बम्बईकी उदारता

मै जानता हूँ कि वम्बईमे कई वुराइयाँ है और गन्दगी भी बहुत है। इस शहरके लोगोमे धनका लोभ वहुत अधिक है। तिसपर भी मैने अन्य स्थानोकी अपेक्षा बम्बईके वातावरणमे हमेशा उदारता और भोलेपनका अनुभव अधिक किया है। यह कहा जाता है कि मै अन्य शहरोकी अपेक्षा वम्बईको ज्यादा अच्छी तरह जानता हूँ, इसी कारण मुझे ऐसा अनुभव होता है। लेकिन यह कथन सही नही है। भारतके चाहे किसी भी भागमे चन्दा उगाहा जाये, उसमे अधिकतर बम्बई ही सबसे आगे रहता है। मलाबारके लोगोकी सहायताके लिए भी वम्वईसे ही अधिक रुपया मिल रहा है। पारसी राजनीतिक सघकी ओरसे जो सभा आयोजित की गई थी, उसमे केवल टिकटोसे ही चार हजारसे अधिक रुपये मिल गये थे और इतनी ही रकम सभाके अन्तमे जो चन्दा इकट्ठा किया गया, उससे प्राप्त होनेकी आशा है। चन्दा देनेवाले भाई-वहनोने इस वातको ध्यानमें रखकर पैसा दिया है कि चन्देकी राशि अपेक्षित रकमसे ज्यादा ही हो, कम नही। आजकल बम्बईके व्यापारमे बहुत ज्यादा गिरावट है तथापि वम्वईके लोग अब भी उसी तरह उदारतापूर्वक पैसा दे रहे है।

इसका क्या कारण है? मेरी तो मान्यता यह है कि यह पारसियोकी दानशीलताका प्रभाव है। पाठक कहेंगे कि जिनके प्रति मेरा पक्षपात होता है, मै हमेशा उन्हीकी ओर झुक जाता हूँ। लेकिन मुझे ऐसा नही लगता। पारसियोकी दानशीलता जगत्प्रसिद्ध है। यह देखनेमे आया है कि अन्य स्थानोपर रहनेवाले हिन्दू और मुसलमान उतना पैसा नही देते, जितना बम्बईके हिन्दू और मुसलमान देते है। लेकिन मै यह वात मानता हूँ कि पारसी सज्जनोने सार्वजनिक कार्योमे पैसा देनेकी जो प्रथा चलाई है उसका अन्य कौमोने भी अनुकरण किया है। श्री डोडेने सब कौमोके दानके आँकडोकी तुलना करके वता दिया है कि पारसी कौम दानशीलतामे ससारकी सभी कौमोसे वढकर है।

लेकिन मेरा उद्देश्य तो वम्वईके नागरिकोकी दानशीलताके कारणोको बताकर उनसे और भी अधिक दान लेना है। मै तो वम्वईके नागरिकोसे सूतके दानकी आशा रखता हूँ। पारसी, हिन्दू और मुसलमान पैसा देते है तो इससे क्या हुआ? क्या वे आध घटेका श्रम नही देंगे? क्या वम्वईके भाई और वहन अपने अन्य कार्य रोककर ईश्वरके नामपर आधा घटा सूत कातकर देशको अर्पण न करेंगे? सूतका दान देनेमे पहल करनेके उद्देश्यसे पारसी भाई दूसरे लोगोंके समक्ष आदर्श पेश करेंगे? एक मनुष्य किसी गरीवको

मदद करनेके लिए श्रम करे और दूसरा उसकी मदद करनेके लिए अपनी बचतमे से धन दे, इन दोनोमे से भगवान्‌के पुण्यके खातेमे किसके दानको ऊँचा स्थान दिया जायेगा? [ऊँचा स्थान सूतके दानको ही दिया जायेगा], क्योकि सूत तो हिन्दुस्तानके गरीबोकी खातिर काता जायेगा। उसकी जो खादी बनेगी उसे बेचा जायेगा। लेकिन उस श्रमका वास्तविक उद्देश्य तो गरीबोके सम्मुख उदाहरण रखना है। मेरी माँग है कि बम्बईकी पचरगी जनता इस उद्देश्यको पूरा करे।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, ७-९-१९२४

७५. दो प्राचीन पुस्तके

भाई करसनदास चितालियाने मुझे दो उत्तम पुरानी पुस्तके दी है। ये पुस्तके उन्हे एक पारसी बहनसे मिली है। दोनो पुस्तके सन् १८२८ की है और लिथोमे छपी है। इनपर चमडेकी जिल्दे चढी है तथा उनके ऊपरके पृष्ठोपर सुनहरे अक्षरोमे लिखा है, "दीनशा भीखाजीको मेजर जनरल सर माल्कम द्वारा समर्पित।" ये अग्रेज सज्जन उस समय शिक्षा बोर्डके प्रमुख थे। पुस्तकोमे अकगणित, बीजगणित, ज्यामिति और बही-खाता विषय दिये गये है। अग्रेजीसे कप्तान जॉर्ज जर्विस इजीनियरने जगन्नाथ 'शास्त्री क्रमवन्त [?] की सहायतासे इनका गुजरातीमे अनुवाद किया है।' ये पुस्तके पहले जमानेके अग्रेजोकी सेवावृत्ति और उदारताका नमूना है। इनकी लिपि देवनागरी है। सम्भव है, ये पुस्तके देवनागरीको एक सर्वसामान्य लिपिके रूपमे प्रतिष्ठित करनेके उद्देश्यसे ही लिखी गई हो। इनके अक्षर मोतीके समान है और अपार अकोसे युक्त पहाडे भी बहुत सुघडतासे दिये गये है। यदि ऐसा कहे कि इन पुस्तकोमे हम शिक्षाके इतिहासका पहला अध्याय पढ सकते है, तो इसमे कोई अत्युक्ति न होगी। उस कालकी पारिभाषिक शब्दावली आज भी लगभग उसी रूपमे कायम है। इतने वर्षोकी लम्बी अवधि भी उसमे कोई परिवर्तन नही कर सकी है। चूंकि ये महाराष्ट्रीय पण्डितकी सहायतासे लिखी गई है इसलिए इनमे "शून्य" के स्थानपर "पूज्य" और "जवाब" के स्थान "जबाप" शब्दोका प्रयोग देखनेमे आता है।

आजके छापाखानो और रोटरी मशीनोके युगमे, प्राचीन कालके लोगोने कितना अधिक परिश्रम किया होगा इसकी कल्पनातक नही की जा सकती। ऐसी पुस्तके उनके परिश्रमकी साक्षी देती है।

ये पुस्तके पुरातत्त्व मन्दिरके[1] सग्रहमे भेजी जायेगी। यदि किसी अन्य भाई या बहनके पास ऐसी पुस्तके हो और वे उनका कोई उपयोग न करते हो तो मेरी उनसे प्रार्थना है कि वे उन पुस्तकोको पुरातत्त्व मन्दिरमे भेज दे।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, ७-९-१९२४

१. गुजरात विद्यापीठका एक विभाग।

७६. पत्र : कनिकाके राजा साहबको

सावरमती
७ सितम्बर, १९२४

प्रिय राजा साहव,

मैं अव आपको दो विवरणोंकी प्रतिलिपियाँ भेज रहा हूँ। ये दोनो विवरण मेरे सचिवने मेरे लिए तैयार किये हैं। ये विवरण मेरे पास मौजूद कागजातके आधारपर तैयार किये गये हैं। आप देखेंगे कि अगर इनमे दिये गये तथ्य ठीक हैं तो यह जरूरी है कि कोई आदमी खुद जाकर उनकी जाँच करे। मेरा विचार तो श्री एन्ड्रचूज या राजेन्द्रवावू अथवा पण्डित जवाहरलालको आपके राज्यमे भेजनेका है। क्या आप इसे पसन्द करेंगे? मैं वहुत चाहता था कि खुद ही वहाँ आऊँ, लेकिन इन दिनो मेरे पास काम वहुत ज्यादा है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

कनिकाके राजा साहव

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

७७. पत्र : मुहम्मद अलीको

८ सितम्बर, १९२४

प्रिय भाई,

इस समय सोमवारकी सुवहके पाँच वजे है। मैंने स्याहीसे लिखना शुरू तो किया है, पर स्याहीकी कलमपर हाथ ठीकसे जम नही पाया है और मैं तो आपसे परिहार्य रुकावटको दूर करके भी वात करना चाहता हूँ।

अभी कल ही मेरी समझमे यह आया कि आप क्या चाहते हैं। इतना याद रखें कि दो प्रेसोंका सफलतापूर्वक सचालन कर चुकनेके वाद भी उसके व्योरेके वारेमें मेरी जानकारी नहीके वरावर है। मैं अभीतक नवजीवन कार्यालयमे गया ही नही हूँ। मुझे कभी पता ही नही रहा कि दिल्लीसे क्या लाया गया है और क्या नही। मैं तो यही समझ रहा था कि जो ला रहा हूँ वह मेरा ही है। खैर, अव मैं जो भेज रहा हूँ उसे आप अपना समझें। मेरा जो-कुछ है, वह आपका है, और स्वामी[1] भी उसमे शामिल

१. स्वामी आनन्दानन्द, प्रवन्धक, नवजीवन प्रेस।

है। लेकिन जहाँ भी वह चूके, या आपको उसमे कोई कमी दिखाई दे, वहाँ आपको मेरी सहायता लेनी चाहिए। जो-कुछ वह कर सकता है, वह तो मै नही कर सकता, लेकिन हाँ, अगर धनसे इस गँवाये हुए समयकी कमी पूरी हो सकती हो, तो मै जैसे भी हो धन जुटा दगा। स्वामी कहता है कि वह इससे पहले आपको मशीने भेजनेका इन्तजाम नही कर सकता था। मुझे उसकी बातपर यकीन है। आप कुछ समयके लिए 'कॉमरेड'[1] और 'हमदर्द'[2] दोनोको किसी दूसरे प्रेसमे छपवानेका इन्तजाम क्यो नही कर लेते? और जो घाटा हो उसे पूरा करनेके लिए आप मुझसे कह सकते है?

स्वामीका कहना है कि प्रेसको ठीक ढगसे जमानेमे समय लगेगा। वह कहता है कि उसने कभी ऐसा तो समझा ही नही था कि हर चीज उसे खुद ही जमानी पडेगी। वह और मै भी यही समझते थे कि उसकी जरूरत सिर्फ मशीनोके लिए ही है। उसका कहना है कि वह यहाँ सारे फर्नीचरकी ढुलाईके लिए तैयार नही था। उस समय न तो उसे और न उसके एजेटको ही सारी आवश्यक जानकारी थी। जिस एजेटको सचमुच माल सौपा गया था, प्रेसके बारेमे उसकी जानकारी नहीके बराबर थी।

लेकिन सवाल यह नही है कि 'क' या 'ख' ने क्या समझा, बल्कि यह है कि आपको जरूरत किस चीजकी है और मै क्या कर सकता हूँ। मै जब दिल्लीमे था तब भी मेरा यह खयाल नही था कि इसमे जो देर हुई है वह केवल मेरी ओरसे हुई देरीके कारण ही हुई है। मेरा खयाल था कि दिल्लीमे मशीने लग जानेके बाद भी आपको कई चीजे और करनी पडेगी, तभी हम काम शुरू कर सकेंगे।

अब आप स्वामीसे जी-भरकर काम ले। आखिर वह उन लोगोमे से है, जो मेरे ज्यादासे-ज्यादा करीब है। उसकी नाकामयाबीका मतलब है मेरी नाकामयाबी। जो आदमी दूसरोको परख नही सकता, उसे असफल ही कहना होगा, फिर चाहे उसका हृदय बिलकुल कुन्दन-जैसा और इरादा नेकसे-नेक ही क्यो न हो। ऐसे आदमीको तो फिर लोगो और चीजोसे कोई सरोकार नही रखना चाहिए। इसीलिए मै हमेशासे कहता आया हूँ कि जिस कसौटीपर मेरे सबसे निकटके साथी खरे उतरे उसके आधारपर आप मेरा भी मूल्याकन करे। आप, स्वामी, महादेव, हयात, अशफाक, मोअज्जम, देवदास, कृष्णदास, शुएब मेरे ऐसे ही साथी है। इतना ही काफी नही है कि मै आपके साथ अच्छी तरह निभा लूं, स्वामी, महादेव, देवदास वगैरहको भी तो निभाना चाहिए। अगर ये लोग ऐसा नही कर सकते तो उनको मेरे सार्वजनिक जीवनसे उसी तरह अलग हट जाना चाहिए जैसे बा कमसे-कम फिलहाल हट गई है। यही लोग तो मेरे साधन हैं, जिनके जरिये मै काम करता हूँ—ठीक उसी तरह जैसे आप हयात, मोअज्जम वगैरहके जरिये करते है।

इसलिए मै स्वामीको भेज रहा हूँ, ताकि आप दोनो एक-दूसरेके करीब आ सके और एक-दूसरेको ज्यादा अच्छी तरह समझ सके। मै स्वराज्य और एकता प्राप्त करनेके

१ और २. मुहम्मद अली द्वारा सम्पादित क्रमशः अंग्रेजी और उर्दू पत्र।

लिए इन निजी ताल्लुकातको ठीक-ठीक शक्ल देना हजारो सार्वजनिक दस्तावेजोसे ज्यादा अहम मानता हूँ।

दिली मुहब्बतके साथ,

आपका,

मो० क० गांधी

मुहम्मद अली

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य नारायण देसाई

७८. पत्र : सतीशचन्द्र मुखर्जीको

८ सितम्बर, १९२४

प्रिय सतीश बाबू,

आपका तार पढकर हार्दिक दुःख हुआ। मैं आपको सान्त्वनापूर्ण उत्तर भेज रहा हूँ।

कृष्टोदासको न किसीने हटाया है और न कोई हटाना ही चाहता है। मैं अभी भी उसके बिना काम नही चला सकता। पिछली बार कृष्टोदास मेरे साथ नही गया, क्योकि हम दोनो इसी नतीजेपर पहुँचे कि ऐसा करना खुद उसके लिए भी और उद्देश्यके हितमे भी सर्वोत्तम है। वह उन चारो व्यक्तियोमे सबसे अधिक बुद्धिमान है, जो मेरी वैयक्तिक सेवा तथा सचिवोका काम कर रहे है। महादेव, देवदास और प्यारेलाल उसे बुद्धि और तपस्यामे अपनेसे बढकर मानते है। मुझे आश्चर्य होता है कि कृष्टोदासके दिमागमे ऐसा खयाल कैसे आया कि उनमे से कोई उसे उखाड फेंकनेकी कभी सोच सकता है। मुझे यात्राओके दौरान चारोकी जरूरत नही पडती। कमसे-कम एकको तो काम-काज देखनेके लिए पीछे रहना ही चाहिए और इस तरह या तो महादेवको या देवदासको ही आश्रममे छोडा जा सकता है, अन्य किसी कारणसे नही तो कमसे-कम इसलिए कि प्यारेलाल और कृष्टोदास दोनोमे से कोई भी 'नवजीवन' और गुजरातीमें होनेवाले पत्र-व्यवहारका काम नही देख सकता। इसलिए कृष्टोदासको हमेशा मेरे साथ ही रहना है। वह गुलबर्गा इसलिए गया है कि शुएबको सिर्फ वही स्वीकार्य था। मैं अगर जोर देता तो शुएब अपने साथ महादेवको ले जा सकता था। लेकिन मै जानता हूँ कि वह बडा भावुक है। मैं चाहता था कि वह अधिकसे-अधिक अनुकूल परिस्थितियोमे वहाँ जाये। फिर जब मैंने देखा कि महादेवका नाम सुझानेपर भी शुएबने कृष्टोदासके लिए ही कहा तो मैंने बेहिचक उसकी बात मान ली। कृष्टोदास भी राजी था। उसकी और शुएबकी खूब पटती है। इसलिए आप कृष्टोदासके बारेमे चिन्ता मत कीजिए। वह मेरे साथ रहेगा। और

यह सिर्फ इसीलिए नही कि आप ऐसा चाहते है। वह मेरे लिए मेरे साथ रहेगा। मै उसे अपने साथ रखनेके लिए आपसे कही ज्यादा उत्सुक हूँ। मेरे जीवनका यह एक सौभाग्य रहा है कि मुझे ऐसे साथी मिलते रहे है जिनको अपने साथ रखनेमे मै सम्मान और सुख महसूस करता हूँ। ऐसे साथियोमे कृष्टोदासका एक खासा स्थान है।

यह उत्तर मैने आपकी कलमसे लिखा है। आपने जो पहली कलम मुझे भेजी थी, उसे मै बहुत कीमती मानता था और हमेशा अपने साथ रखता था। मैने जेलमे वह कलम इन्दुलालको लिखनेके लिए दी थी। उन्होने उसे खराब कर दिया। फिर उन्होने उसे मरम्मतके लिए बाहर भेजा। जिस मित्रको वह काम सौपा गया, उसने वह बहुमूल्य कलम खो दी। इसलिए कृष्टोदासने मुझे यह कलम दी है। अभी उसीसे लिख रहा हूँ। मुझे छपाईके दो ऑर्डर भी मिले है। इतना ध्यान रखनेके लिए आप मेरा धन्यवाद स्वीकार कीजिए। एक और कृपा कीजिए — तार द्वारा वचन दीजिए कि आप कृष्टोदासके बारेमें आगेसे कभी चिन्ता नही करेगे।

आपका,

मो० क० गांधी

अंग्रेजी पत्र (जी० एन० ५५९७) की फोटो-नकलसे।

७९. पत्र : वसुमती पण्डितको

भाद्रपद सुदी १० [८ सितम्बर, १९२४][1]

चि० वसुमती,

तुम्हारे दो पत्र मिले। तुम्हारा ठिकाना निश्चित न होनेके कारण मैंने तुम्हारे पहले पत्रका उत्तर नही दिया। वहाँ तो तुम्हारी तबीयत अच्छी रहनी चाहिए। अपना स्वास्थ्य पूरी तरह सुधार लो। मेरी यात्राके बारेमे अभी कुछ निश्चय नही हुआ है। इस सप्ताहमे पता चलेगा।

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती वसुमती पण्डित
मार्फत—श्री अम्बालाल मथुरादास
मेसर्स स्ट्रॉस ऐंड कम्पनी
बटाला
पंजाब

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ४५५) से।
सौजन्य वसुमती पण्डित

१. पत्रपर प्राप्तिकी तारीख, १२-९-१९२४ दी हुई है।

८०. पत्र : आनन्दानन्दको

आश्रम
८ सितम्बर, १९२४

भाई आनन्दानन्द,

तुम दिल्ली जा रहे हो तो कोई रामचन्द्रकी ओरसे अगद बनकर नही और युधिष्ठिरकी ओरसे कृष्ण बनकर भी नही। तुम तो निषादराजकी-ओरसे रामकी कोई सेवा बन सके तो उसे करने, निषादराजको रामके पग धोनेकी अनुमति मिल जाये ऐसी व्यवस्था करनेके लिए जा रहे हो, अथवा सुदामाका कोई सेवक कही जाये और सुदामाका नाम उज्ज्वल करे उसी तरह तुम मेरा नाम उज्ज्वल करनेके लिए जा रहे हो। तुम न्याय लेने नही, देने जा रहे हो। जडभरतपर जो बीती सो उसने चुपचाप शान्तिपूर्वक सहन की। तुम्हे रुद्र बनकर नही जाना है, विष्णु बनकर जाना है। मौलानाको क्या करना चाहिए प्रश्न यह नही है; प्रश्न तो यह है कि मुझे अर्थात् तुम्हे क्या करना चाहिए। मैंने 'नवजीवन' मे जितना तत्त्वज्ञान उँडेला है, उसका यहाँ अक्षरश आचरण करनेका मेरा अडिग निश्चय है। उसमे तुम मन, वचन और कर्मसे मदद करना। तुम्हे और मुझे यही शोभा देगा, ऐसा मानकर उसपर अमल करना। मै आजकल लोगोको जिस बातपर अमल करनेकी सलाह दे रहा हूँ, इस मामलेमे मुझे भी वही करना चाहिए। हमें 'यग इडिया' तथा 'नवजीवन' को और अधिक नुकसान पहुँचाकर भी मुहम्मद अलीका काम करना है। उनके पत्रका प्रथम अक तुम्हारे हाथो निकले, इससे अधिक अच्छी बात और क्या हो सकती है? समझना कि 'कॉमरेड' और 'हमदर्द' तुम्हारे ही या मेरे ही पत्र है। तुम यह सोचकर वहाँ जा रहे हो कि ये पहले है और 'यग इडिया' तथा 'नवजीवन' बादमें। मै तुम्हारी हार्दिक विनय और चतुराईमें हिन्दू-मुस्लिम ऐक्यकी अर्थात् स्वराज्यकी चाबी देखता हूँ। दिल्लीसे जल्दी वापस आनेका विचार ही न करना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य नारायण देसाई

८१. पत्र : जमनालाल बजाजको

भाद्रपद सुदी १२ [१० सितम्बर, १९२४][1]

चि० जमनालाल,

तुम्हारा हाथ अब बिलकुल दुरुस्त हो गया होगा। मेरा पिछला पत्र मिला होगा।[2] मेरे चित्तमे अनेक परिवर्तन होते रहते है। उसका पूरा दर्शन इस समयके 'यग इडिया'मे आयेगा। वोट लेकर हमे बहुमत नही बनाना चाहिए, इतना मुझे अभी तो लगता है। बेलगाँवमे यदि हमको ज्योका-त्यो काम करनेका अवसर न मिले तो हमे अलग होकर जितना बन सके उतना काम करना चाहिए। मै यह देख रहा हूँ कि जो जहर अभी फैल रहा है वह उसके बिना नष्ट नही होगा। इतना तो मानता हूँ कि कैसे भी हो हम उसका मुकाबला कर सकेगे। दिल्ली जानेके लिए तारकी राह देख रहा हूँ। वहाँ जाना पडा तो हिन्दू-मुस्लिम समस्याके विषयमे कुछ रास्ता निकलनेकी सम्भावना है।

अभीतक यह पता नही चला कि वहाँ दगा कैसे हुआ।

घटवाईके[3] भाषण अभी देखे। यदि इसी तरह बोला हो तो मेरा धन्यवाद बेकार हो गया। इस भाषणमे अहिसा नही है।

बालकृष्ण[4] आ गया यह ठीक हुआ। अपनी इच्छाके अनुसार भले वहाँ रहे। इसके साथ जो पत्र है वह उसे दे देना। अक्तूबरमे तुम भी आओगे न?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (जी० एन० २८५१) से।

८२. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

भाद्रपद सुदी १२ [१० सितम्बर, १९२४][5]

तुम्हे चिरजीव तारामतीके[6] बीमार होनेका दु:ख होना स्वाभाविक ही है। लेकिन उसे दु:ख न मानना ही हमारे लिए स्वाभाविक होना चाहिए। जो भी परिस्थिति आ पडे, उसका सामना तटस्थ भावसे करना ही धर्म है। ऐसा जाननेके बाद

१. आगामी बेलगाँव काग्रेसके उल्लेखसे।
२. देखिए "पत्र: जमनालाल बजाजको", ६-९-१९२४।
३. नागपुर-क्षेत्रके एक काग्रेसी।
४. बालकृष्ण न० भावे, सत्याग्रह आश्रमके एक अन्तेवासी।
५. साधन-सूत्रमें यही तारीख दी गई है।
६. मथुरादास त्रिकमजीकी पत्नी।

हमे दुःख क्यो मानना चाहिए? दुःख न माननेका अर्थ कठोर होना नही है। जिन्हे हमसे सहायताकी अपेक्षा करनेका अधिकार है, उनकी सेवामे कोई कमी क्यो रहे? तारामतीकी यह बीमारी चली जायेगी, लेकिन मै अब भी चाहता हूँ कि उसकी प्रसूति किसी अच्छे स्थानपर कराई जाये। दलालकी सलाहकी जरूरत जान पड़े तो ले लेना। आनन्दको हिम्मत देना। मुझे रोज समाचार देते रहना।

[गुजरातीसे]

बापुनी प्रसादी

८३. पत्र : तारामती मथुरादासको

भाद्रपद सुदी १२ [१० सितम्बर, १९२४][1]

तुम्हारे बीमार पड़नेका पत्र मुझे आज ही प्राप्त हुआ है। तुम तनिक भी चिन्ता न करना। स्वस्थ अवश्य होना है—ऐसा दृढ निश्चय रखना और रामका नाम जपती ही रहना। यह जप बीमारीके कष्टको कम करेगा और बीमारीको भी दूर करेगा। अभी तुम्हारी इसी देहमे, मुझे तुमसे बहुत सेवा लेनी है। स्वस्थ होकर मुझे अवश्य पत्र लिखना। ईश्वर तुम्हे दीर्घायु करे।

[गुजरातीसे]

बापुनी प्रसादी,

८४. टिप्पणियाँ

आगामी १५ तारीख

सूतकी दूसरी किस्तका महीना जल्द ही आनेवाला है। पहले महीनेमे सूत कातनेवालोकी सख्या २,७८० थी। इसमे प्रतिनिधि और अन्य लोग सभी शामिल है। कितने ही लोगोसे और जगहोसे सूत न भेज पानेके उचित कारण प्राप्त हुए है। कुछ लोग तो यह भी नही जानते थे कि जो प्रतिनिधि नही है, उनको भी सूत भेजना है। इसलिए इस दूसरे महीनेके दौरान सभी प्रान्तोमे बहुत प्रगतिके प्रमाण मिलने चाहिए। कतैयोसे अनुरोध है कि वे नीचे लिखी बातोपर ध्यान देगे

१ सूत एक-सा भेजे। जब अच्छी पूनियाँ और अच्छी रुई मिले, तब २० अकसे कमका सूत न काते। उन्ही कतैयोने अलहदा-अलहदा अकका सूत भेजा है। हर कतैयेको ध्यान रखना चाहिए कि बुनाईके समय एक अकके सूतमे दूसरे अकका सूत नही मिलाया जा सकता।

१. साधन-सूत्रमें यही तारीख दी गई है।

२. किसी भी गुंडीमे ५०० गजसे ज्यादा सूत नही होना चाहिए। हर गुडीमे यथासम्भव सौ-सौ गजकी पाँच लच्छियाँ होनी चाहिए और हर लच्छी एक मजबूत धागेसे बाँध दी जानी चाहिए। बुनकरोंको गुडीसे खोलकर सूत नलकी (बाबिन)पर लपेटना पडता है, अतः उनकी सुविधाके लिए ऐसा करना नितान्त आवश्यक है। यदि सूत उलझा हुआ हो तो उसे खोलना प्राय' असम्भव हो जाता है। बीचमे जो गाँठे लगाई जाती है, उनसे नलकीपर सूत लपेटनेवालोंको, अगर सूत टूट गया हो तो, उसका छोर ढूंढनेमें कठिनाई नही होती। अगर उसे उस छोरको सिर्फ सौ तारोमें ही ढूँढना पडे तो वह बहुत आसानीसे ढूंढ सकता है।

३ अटेरनसे उतारनेके पहले सूतपर थोडा-सा पानी छिडकनेसे उसकी मजबूती बढ जाती है।

४. एक-से सूतकी हर गुंडीपर सूतके वजन, लम्बाई (गजोमें) और अककी चिट लगानी चाहिए। अंक निकालनेका तरीक़ा बडा आसान है। सूत जितना गज लम्बा हो उस संख्याको २१ से तथा तोलेमे सूतका जो वजन हो उससे विभक्त कर दीजिए। उदाहरणके लिए, ८४० गजकी गुडीका वजन यदि १ तोला है तो सूतका अंक $\frac{८४०}{२१ \times १}$ = ४० होगा। यदि उसका वजन $\frac{१}{२}$ तोला है तो उसका अक $\frac{८४० \times २}{२१ \times १}$ = ८० होगा। कहनेकी जरूरत नही कि अक निकालनेमे बटेको छोड देना चाहिए।

५. कुछ सदस्योंने सूतकी कूकडी तकुएसे निकालकर ज्योकी-त्यो बिना गुडी बनाये भेजी है। इस तरह तकुएसे निकलनेके बाद उसको काममें लाना निहायत मुश्किल है। यदि उसे बुनाईके लिए उपयोगमे लाना है तो उसकी गुडी अवश्य बनानी चाहिए और उसपर ऊपर सुझाये तरीकेसे गाँठे दे देनी चाहिए।

यहाँ मुझे एक बात कह देनी चाहिए। एक-दो शख्स ऐसे भी है, जिन्हे मिलका सूत भेजनेमे भी कोई संकोच नही हुआ। मुझे आशा है, उन लोगोने बिना यह जाने ही कि हमारा कर्त्तव्य क्या है, यह भेज दिया है। मिल-कते सूतकी पहचान करनेमे जरा भी कठिनाई नही होती। किसी भी किस्मका सूत भेज देनेमे कोई खूबी नही है। खूबी तो अपने हाथोंसे काता हुआ अच्छा और एक-सा सूत भेजनेमे है।

तमाम पार्सल साबरमतीके पतेपर भेजने चाहिए — अहमदाबाद नही। उनका किराया वही भर देना चाहिए।

कुछ और आँकड़े

प्राप्त सूतका विवरण प्रकाशित होनेके बाद आन्ध्र और तमिलनाडसे कुछ सूतके पार्सल और आये हैं। इससे यह मालूम होता है कि इन दोनो प्रान्तोंने रिपोर्टमे दिखलाये आँकडोंसे बहुत ज्यादा सूत भेजा है। आन्ध्रकी कुल सख्या ४८७ और तमिलनाडकी १९५ है।

कुल प्राप्त सूतका वजन २३ मन २३ पौड है। इसमें गुजरातसे भेजे गये सूतका वजन १३ मन है और शेष दूसरे प्रान्तोंका है। अधिकसे-अधिक १०० अंक तकका सूत आया है। हमारी मिलोमे आमतौरपर ४० से अधिक अकका सूत नही काता जाता। कतैयोको याद रखना चाहिए कि जब वे बिना कुछ मेहनताना लिये

अपनी खुशीसे कातना मजूर करते है, तब पैसेकी दृष्टिसे ऊँचे अकका सूत कातनेमे ही बचत होती है। यदि कोई १० के बजाय २० अकका सूत कातता है तो वह कपासकी करीब-करीब आधी कीमतकी बचत करता है। अतएव बेहतर होगा कि कतैये अँगुलियो और आँखोके जरा सब जानेपर ऊँचे अकका सूत कातनेकी कोशिश करे।

धर्मकी दृष्टिसे देखे तो कोई ४० मुसलमानो और लगभग इतने ही पारसियोने अपने हिस्सेका सूत भेजा है। हाँ, कुछ ईसाइयोके नाम भी मिलते है। अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीके सदस्योमे से १०४ ने अपने हिस्सेका सूत भेजा है। कार्य-समितिके, सिर्फ तीनको छोडकर, तमाम सदस्योने अपना सूत भेजा है। देशके अत्यन्त प्रख्यात पुरुषोमें, जो कि अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीके सदस्य नही है, दो सज्जनोने सूत भेजा है। वे है—मौलाना अब्दुल बारी साहब और आचार्य प्रफुल्लचन्द्र राय।

प्रतिनिधियोंके अतिरिक्त

आम तौरपर लोग अभी यह महसूस नही करते कि काग्रेस प्रतिनिधियोके लिए जहाँ नियमित रूपसे कताई करना अनिवार्य है, वहाँ कताईके सद्‌गुणमे विश्वास रखने-वाले अन्य सब लोग भी इस कर्त्तव्यसे बिलकुल मुक्त नही है। अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीका प्रस्ताव तो इस बातका सकेत-मात्र है कि प्रत्येक देशभक्तका क्या कर्त्तव्य है। इसलिए यदि सभी प्रान्त स्वेच्छया कताईके लिए अपने-आपको सगठन-सूत्रमे बाँध ले, तो वे पायेगे कि विदेशी वस्त्रोका बहिष्कार अपेक्षाकृत सरल चीज है। इसमे जो दो बाधाएँ बतलाई जाती है, वे है खद्‌दरका मँहगापन और खुरदरा-पन। लेकिन जिस क्षण लोग पारिश्रमिकका खयाल किये बिना एक प्रेम-कार्यके रूपमें कताई करने लगेगे उसी क्षण ये दोनो बाधाएँ दूर हो जायेगी और जिस उद्देश्यके लिए हम स्वर्गीय शास्त्री चिपलूणकर और बग-भगके समयसे ही उद्योग करते आ रहे है, उसकी प्राप्तिके लिए प्रेम-भावसे कताई शुरू कर देना कोई बडा मूल्य चुकाना नही है। सदस्योको इसकी राह भी नही देखते रहना चाहिए कि प्रान्तीय कमेटियाँ आगे आकर कताईका आयोजन करे। पर्याप्त जानकारी और क्षमता रखने-वाला प्रत्येक व्यक्ति कताई मण्डलका आयोजन कर सकता है। इसमे बहुत थोडे पैसेकी जरूरत है। थोडी-सी कपास जमा करना, पूनियाँ तैयार करना और उनका वितरण करना तथा सूत इकट्ठा करना—बस इतनेकी ही जरूरत है। ज्यादा जगहकी भी जरूरत नही है। गरीबसे-गरीब आदमी भी यह काम करनेकी कोशिश कर सकता है। जहाँ चरखा न मिले वहाँ तकलीसे काम चल जायेगा। इसलिए मुझे आशा है कि दूसरे महीनेमें अब जो सूत प्राप्त होगा, वह न केवल कातनेवाले प्रतिनिधियोकी सख्यामे वृद्धिका द्योतक होगा, बल्कि इस बातका भी प्रमाण होगा कि कताई करने-वाले गैर-प्रतिनिधि लोगोने भी काफी ज्यादा सूत भेजा है।

योग्य कार्य

यह खुशकिस्मतीकी बात थी कि पिछले हफ्तेके हिन्दू-मुस्लिम दगेमे जमनालालजी भी मौकेपर मौजूद थे। उसमे उन्हे जो चोट आई वह झगडा न बढनेका एकमात्र

नही तो एक कारण अवश्य था। मुझे मालूम हुआ है कि स्थानीय काग्रेस कमेटीके मन्त्री बाबू कालीचरण और श्रीयुत अवारी भी खुद बहुत जोखिम उठाकर लडाई रोकनेकी कोशिश कर रहे थे। मै इन तीनो कार्यकर्त्ताओको उनके साहस और विवेकके लिए बधाई देता हूँ। बहुत मुमकिन है कि स्थायी सुलह और शान्तिके लिए हममे से कुछ लोगोको अपने-आपको बलिदान करदेना पडे। दोनो जातियोके बदमाशो और गुण्डोको एक-दूसरेके खिलाफ सगठित करके हम अपनी पीढीके दौरान ऐसी एकता स्थापित नही कर सकते। इस तरहका आपसी कलह हमारी शक्तिके निरर्थक क्षयकी प्रक्रिया है। इसके द्वारा प्राप्त की गई शान्ति शस्त्रबलपर प्राप्त की गई शान्ति होगी, जिसके कारण हमे दीर्घकालतक एक-दूसरेका सिर फोडते रहना होगा।

वाइकोम सत्याग्रह

त्रावणकोरकी सरक्षिका (रीजेट) महारानीने सभी सत्याग्रही बन्दियोको रिहा करके अपनी उदारताका परिचय दिया है। मै इसके लिए उनको बधाई देता हूँ। राज्यकी यह एक बडी ही सुन्दर प्रथा है कि नये शासकके गद्दीनशीन होनेपर कुछ बन्दियोको रिहा कर दिया जाता है। फिर इससे अधिक स्वाभाविक बात और क्या हो सकती है कि ऐसे बन्दियोको रिहा किया जाये जिनके सिर अपराधका कोई कलक न हो? मै सत्याग्रहियोको भी फिलहाल सत्याग्रह स्थगित कर देनेके लिए बधाई देता हूँ। इससे एक-दूसरेको समझानेका रास्ता सुगम हो गया है और राज्यके अधिकारियोको भी बिना किसी परेशानीके सत्याग्रहियोके प्रति अपने रुखके बारेमे फिरसे सोचनेका मौका मिला है। कहते है, स्वर्गीय महाराज कई मामलोमे बडे जागरूक होते हुए भी अस्पृश्यताके बारेमे बडे ही कट्टर विचार रखते थे। मुझे आशा है कि अब महाविभव संरक्षिका महारानी यह महसूस करेगी कि अस्पृश्यता हिन्दूधर्मके लिए कोई श्रेयकी नही, बल्कि कलककी बात है। एक हिन्दू राज्य हिन्दू धर्मकी अच्छीसे-अच्छी सेवा यही कर सकता है कि हिन्दू धर्मको इस अभिशापसे मुक्त कराये और इस प्रकार ब्रिटिश भारतके हिन्दुओके सामने धार्मिक उदारताका एक उदाहरण पेश करे। मुझे विश्वास है कि सत्याग्रही लोग भी अपना सयम कायम रखकर और अधिकारियोको स्पष्ट रूपसे यह जताकर कि अनुपगम्यो और अस्पृश्योके बिलकुल बुनियादी मानवीय अधिकारोको मान्यता दिलानेसे अधिक वे कुछ नही चाहते, अधिकारियोका मार्ग सुगम बनायेगे।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक

हुबलीसे मेरे पास एक काफी लम्बा पत्र आया है। उसमे राष्ट्रीय स्वयसेवकोके सगठनकी ओर मेरी तथाकथित उदासीनताके प्रति विरोध प्रकट किया गया है। मै पत्र-लेखक और अन्य लोगोको विश्वास दिलाता हूँ कि मै उदासीन नही हूँ। मै इसे एक बहुत ही जरूरी काम मानता हूँ। मै इस मामलेमे डा० हार्डीकरकी योग्यताका बडा प्रशसक हूँ। लेकिन मेरे सामने कठिनाई यह है कि सारे भारतको सगठित करनेके लिए हमारे पास काफी तादादमे आदमी नही है। इसीलिए मैने सुझाया है कि

डा० हार्डीकरको अभी किसी एक प्रान्त या जिलेमे ही अपनी सारी शक्ति लगानी चाहिए और उस क्षेत्रके स्वयसेवकोके दलको पूरे तौरपर सक्षम वना देना चाहिए। तव फिर दूसरे क्षेत्रोको सगठित करनेमे कोई कठिनाई नही होगी। यह काम ऐसा है कि समाचारपत्रोके प्रचारके वलपर नही किया जा सकता। यह तो चुपचाप अथक परिश्रम करके ही सम्पन्न किया जा सकता है। डुवल्लीसे यह पत्र जिस सप्ताह मुझे मिला, उसी सप्ताह अलमोडासे भी एक पत्र आया। पत्र-लेखकका कहना है:

> **वालचर आन्दोलन तो फैल रहा है, लेकिन कुछ ही लोग राष्ट्रीय स्वयंसेवक वनते है।**

ऐसा क्यो? इसलिए कि वह आन्दोलन वहुत ही कुशल ढगसे सगठित किया गया है। जो काम वालचर करते है, उसमे ऐसा कुछ नही है जिससे उस कामको, जो-कुछ हमे करना चाहिए, उससे वढ-चढकर माना जाये। कमी सिर्फ इतनी ही है कि हमारे पास इस कामके लिए पर्याप्त सख्यामे उपयुक्त सगठनकर्त्ता नही है। कवायद, अनुशासन और शिक्षाकी राष्ट्रको जरूरत है और उसे जहाँ भी ये चीजे मिलती है, वह इनको ग्रहणकर लेता है। मै जानता हूँ कि यह बात बुरी है, इससे विवेकका अभाव प्रकट होता है। लेकिन राष्ट्र तवतक इस परावलम्बनकी परवाह नही करता जवतक कि उसे वे चीजे मिल रही है, जिन्हे वह आवश्यक समझता है। इस बुराईको महसूस करनेवाले हम-जैसे कार्यकर्त्ताओको यह करना है कि हम अपने-आपको प्रशिक्षित करे। लेकिन हम ऐसा लिखने या भाषण देनेसे नही कर सकते। हमे सबसे पहले तो अपने-आपको प्रशिक्षित करना चाहिए। करनेके लिए तो वहुत-से काम है। हममे से प्रत्येकको अपना काम चुन लेना चाहिए और फिर वाधाओके होनेपर भी हमे उसीमे जुटे रहना चाहिए। हमे वहुत विस्तारकी चिन्ता नही करनी चाहिए। हमे तो उतना ही काम चुनना चाहिए, जितना कि हम अच्छेसे-अच्छे ढगसे कर सकते हो। लोगोको ऐसा समझनेकी गलती नही करनी चाहिए कि यदि मै स्वयसेवकोके आन्दोलनके वारेमे लिखता नही हूँ तो मै ठीकसे उसपर नजर भी नही रख रहा हूँ। मै अध्यक्ष रहूँ या न रहूँ, पर मुझे पूरी आशा है कि आगामी दिसम्बर महीनेमे कर्नाटकमे हमारे लिए जो अनेक आकर्षण होगे, उनमे कर्नाटकके स्वयसेवक दलका भी एक खासा स्थान होगा।

एक भद्दी तुलना

एक रोमन कैथोलिक पत्र-लेखकने, जो कैथोलिक इडियन एसोसिएशनके मन्त्री है, मुझे एक लम्वा पत्र लिखा है। उसके कुछ अश मै नीचे दे रहा हूँ[1]

पत्र-लेखकको ऐसी तुलनासे जो दुःख पहुँचा है, वह विलकुल स्पष्ट है। उनके प्रश्नके उत्तरमे मै जो वात पहले कह चुका हूँ उसीको फिर दोहराता हूँ, अर्थात् यह

१. इन अशोंका अनुवाद यहाँ नहीं दिया जा रहा है। पत्र-लेखकने कुछ लोगों द्वारा गाधीजीकी तुलना ईसा मसीहसे करनेपर और उन्हें भारतीयोंके लिए आधुनिक ईसा मसीहका पद देनेपर आपत्ति की थी। उसने यह भी लिखा था कि जहाँ ईसा मसीह राजनीतिसे विलकुल अलग रहे, गाधीजी उसमें डूबे हुए है।

कि मै ऐसी तुलना कतई पसन्द नही करता। इनसे कोई लाभ भी नही होता और जिन महान् आत्माओके साथ मेरी तुलना की जाती है, उनके अनुयायियोंको ठेस भी लगती है। मै ऐसी किसी दैवी शक्तिका दावा नही करता जो दूसरोमे न हो। मै नही कहता कि मै कोई पैगम्बर हूँ। मै तो सत्यका एक अकिचन अन्वेषक-भर हूँ और मै उसे पानेके लिए कटिबद्ध हूँ। ईश्वरका साक्षात्कार करनेके लिए मै बडेसे-बडे बलिदानको भी तुच्छ मानता हूँ। मेरी सभी गतिविधियाँ — आप उनको सामाजिक, राजनीतिक, मानवीय या नैतिक, जो भी कहे — इसी लक्ष्यकी ओर निर्दिष्ट है। और चूँकि मै जानता हूँ कि ईश्वर उच्च और शक्तिशाली व्यक्तियोकी अपेक्षा अपनी सृष्टिके तुच्छतम प्राणियोमें ही अधिकतर मिलता है, इसलिए मै उनके स्तरतक पहुँचनेके लिए सघर्ष कर रहा हूँ। मै उनकी सेवाके बिना वैसा नही कर सकता। इसीलिए दलित वर्गोकी सेवाके लिए मेरे अन्दर इतना उत्साह है। चूँकि मै राजनीतिमे उतरे बिना उनकी सेवा नही कर सकता, इसीलिए राजनीतिमे पडा हूँ। इस प्रकार मै कोई मसीहा नही हूँ। मै तो भारतका और इसीलिए समूची मानवताका केवल एक सघर्ष-रत, भ्रान्त और तुच्छ सेवक हूँ।

असन्तोषजनक उत्तर

पाठकोको याद होगा कि पण्डित जवाहरलाल नेहरूने २५ जुलाईको नाभाके प्रशासकको लिखा था कि मुझे ऐसी कोई जानकारी नही कि मेरी, आचार्य गिडवानी और पण्डित सन्तानमकी कैद पूरी होनेसे पहले रिहाईपर कोई शर्तें भी लगाई गई थी। प्रशासकको उसका उत्तर भेजनेमे २७ दिन लग गये। उत्तर इस प्रकार है

> **मै आपके पिछली २५ जुलाईके पत्रके उत्तरमें बताना चाहता हूँ कि "मुल्तवी" शब्दके अर्थके बारेमें आपको कुछ भ्रम है। सजा मुल्तवी करनेका मतलब ही यह है कि उसके साथ कुछ शर्तें जुड़ी हुई है। यदि बात ऐसी नहीं होती और आपकी दलील बिलकुल ठीक होती, तो बिना शर्त सजा मुल्तवी करनेका मतलब सजा मंसूख करना होता, जो साफ गलत मालूम पड़ता है।**
>
> **ऐसी हालतमें मै पत्र-व्यवहारका यह सिलसिला जारी रखनेमें कोई सार नहीं देखता।**

इसमे पण्डित जवाहरलालको "मुल्तवी" शब्दका अर्थ समझानेकी खूब कोशिश की गई है। लेकिन प्रशासकका दुर्भाग्य तो यह है कि पण्डितजीने उनसे यह नही पूछा था कि "मुल्तवी" शब्दका क्या अर्थ है। वे तो यह जानना चाहते थे कि रिहाई पर लगाई गई शर्तोंके बारेमे उनको क्यो नही बतलाया गया। क्या कैदीको यह जाननेका अधिकार नही है कि उसकी सजा "मुल्तवी" कर दी जानेपर उसे किन शर्तोंपर छोडा जा रहा है? प्रशासक महोदयको यह भी जानना चाहिए कि सजाकी माफी पर भी शर्तें लगाई जा सकती है। श्री सावरकरकी सजा शर्तोंके साथ माफ की गई है। इस तरह प्रशासकका जवाब खुद अपनी ही बात काट देता है, क्योकि इस जवाबसे प्रकारान्तरसे स्पष्ट हो जाता है कि सजा मुल्तवी करनेकी शर्तें पण्डितजीको

नही वतलाई गई और वास्तवमें अभीतक उनको उन शर्तोंकी ठीक-ठीक जानकारी नही है। उदाहरणके लिए, क्या सजाकी तारीखसे दो साल पूरे हो चुकनेके बाद भी नाभा क्षेत्रमें प्रवेश करनेपर उनको पुरानी सजाके अन्तर्गत फिर कारावास दिया जा सकता है? प्रशासकको चाहे "पत्र-व्यवहारका यह सिलसिला जारी रखनेमें कोई सार नही दिखाई देता" हो, लेकिन जनताको न केवल सजा मुल्तवी करनेकी शर्तें जानने-का हक है, वल्कि यह जाननेका भी अधिकार है—और यह जानना उसके लिए अधिक महत्त्वपूर्ण है—कि क्या यह सच नही कि पण्डित जवाहरलाल और उनके साथियोको यह नही बताया गया कि उनकी रिहाईके साथ क्या शर्तें लगाई गई है, और यदि ऐसी बात है तो क्या आचार्य गिडवानीको जेलमे डाल देनेका औचित्य किसी आधारपर सिद्ध किया जा सकता है।

अनुकरणीय उदाहरण

मैं शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबन्धक समितिकी विज्ञप्ति (२०-८-२४) का एक अंश नीचे दे रहा हूँ :

> **तहसील कसूरके काछा गाँवमें एक मसजिदमें मुसलमानोंके नमाज पढ़नेके समय अज़ान देनेके हकको लेकर सिखों और मुसलमानोके बीच लम्बे अर्सेसे झगड़ा चल रहा था। बात इतनी बढ़ गई थी कि मामला अदालत तक पहुँच गया। अदालतने मुसलमानोके खिलाफ फैसला दिया। नतीजा यह हुआ कि गाँवमें मुसलमान नमाजकी अज़ान नहीं दे सकते थे। १० और ११ अगस्तको भाई फेरूके लिए जाते हुए ५०० अकालियोंका एक जत्था जब गाँवमें पहुँचा तो मुसलमान भाइयोंने अपना मामला उनके सामने पेश किया और अनुरोध किया कि उसपर हमदर्दीके साथ गौर किया जाये। जत्थेने समाज-के सभी तवकोंके लिए धार्मिक पूजाकी स्वतन्त्रताके उसूलको मानते हुए, उसके मातहत फैसला किया कि सिखोको किसी भी कौमकी धार्मिक पूजाके रास्तेमें बाधक नहीं बनना चाहिए और इसलिए मुसलमान लोग अज़ान दे सकते हैं। गाँवकी सिख संगतने जत्थेका यह फैसला सिर माथे लिया और अपने कियेपर पछतावा किया; साथ ही मसजिदकी मरम्मतके लिए २० रुपये चन्दा भी दिया। जत्थेके फैसलेपर तुरन्त अमल हुआ और इस तरह इतने लम्बे अर्सेसे चले आ रहे एक ऐसे झगड़ेका सौहार्दपूर्ण ढंगसे निबटारा हो गया, जिसे अदालतने और ज्यादा भड़का दिया था। इस शुद्ध न्यायके कार्यके लिए मुसलमान भाइयोंने जत्थेको धन्यवाद दिया और इसपर अपनी खुशी प्रकट करनेके लिए बैंड बाजेवालोंका एक दल भेजा जिसने जत्थेके शिविरमें आकर लगातार पाँच घंटेतक बैंड बजाया।**

मैं इस झगडेको इतने अच्छे ढगसे निबटानेके लिए सम्बन्धित सिखो और मुसल-मानो, दोनोको बधाई देता हूँ। ध्यान देनेकी बात यह है कि सिखोने अपना एक

ऐसा हक छोड दिया जो उनको अदालतने दिलाया था। जिनको अदालतोका अनुभव है वे जानते है कि अदालते अक्सर ऐसे फैसले दे देती है जो न्याय और समझदारीके खिलाफ पडते है और इसमे उनकी कोई गलती भी नही होती। उनके लिए भावनाओ या पूर्वग्रहोकी ओर ध्यान देनेकी गुजाइश ही नही है। लेकिन धार्मिक झगडोमे तो यही चीजें सबसे ज्यादा महत्त्व रखती हैं। इसलिए इस प्रकारके मामलोमे न्यायपूर्ण फसला सिर्फ पच ही कर सकते है, जो ऐसी तमाम बातोका ध्यान रखना अपना कर्त्तव्य समझेगे, जिनसे दोनो पक्षोके बीच न्यायपूर्ण और सम्मानप्रद सुलह करानेमे सहायता हो सकती हैं।

कांग्रेसियों द्वारा जालसाजी

कहा जाता है कि गरीब उडीसा प्रान्तमे काग्रेसी कहलानेवाले कुछ लोगोने काग्रेसके कोषमे से कई हजार रुपयेकी रकमका गबन किया है। एक शख्सने तो बिलकुल सन्तका बाना ले लिया और लोगोको दिखाने लगा कि वह बडी लगनसे काम कर रहा है, जिसके फलस्वरूप उसका असर काफी बढ गया और जनताका विश्वास उसपर इतना जम गया कि उसे एक बडे विश्वस्त पदपर नियुक्त कर दिया गया। इस जालसाजीके खिलाफ कार्रवाई करनेका सवाल बडा ही गम्भीर बन गया और अब भी बना हुआ है। यह मामला मेरे पास भेजा गया। मैंने बिना किसी हिचकके यही सलाह दी कि मुकदमा दायर किया जाना चाहिए और साथ ही यह सुझाव भी दिया कि जालसाजी करनेवाले शख्सको भरोसेका काम सौपनेवाले काग्रेस पदाधिकारीको मुकदमेकी कार्रवाई खत्म होनेपर यदि जरूरत पडे तो अदालतोके बहिष्कार-प्रस्तावका उल्लघन करनेके अपराधपर अपने पदसे इस्तीफा दे देना चाहिए। अदालतोके बहिष्कारके अपने इस प्रस्तावका हम तथाकथित काग्रेसियोको खुद काग्रेसके ही साथ धोखा करनेके लिए इस्तेमाल नही करने दे सकते। वैसे तो साधारण लोगोको भी, अगर वे असहयोगी है तो ऐसी हरकतोसे होशियार रहना चाहिए जो उनको मुकदमोमे फँसा दे सकती है। लेकिन जहाँतक खुद काग्रेसियो और काग्रेसके अपने अन्दरूनी मामलोका — दूसरे शब्दोमे विश्वासके मामलोमे, — सवाल है, यदि मक्कार लोग काग्रेसी बनकर और बहिष्कारकी आड लेकर इस सस्थाको ही धोखा देने लगे तो बहिष्कारका ध्येय ही खत्म हो जायेगा। यही कारण है कि कथनी और करनीमे भेद रखनेवाला माने जानेका खतरा मोल लेकर भी मैंने बिना किसी हिचकके उडीसाके काग्रेस-पदाधिकारियोको यह सलाह दी है कि वे न्यासकी रकम वसूल करनेके लिए जालसाजोके खिलाफ मुकदमा दायर करे और तब यदि जरूरत पड़े तो अपने पदसे इस्तीफा दे दे। अगर मै काग्रेस कमेटीका अध्यक्ष होता तो न केवल सम्बन्धित पदाधिकारीको मुकदमेकी कार्रवाई शुरू करनेकी इजाजत देता, बल्कि उसके इस्तीफा दे देनेके बाद उसकी कर्तव्य-निष्ठाके पुरस्कार-स्वरूप उसे फिर उसी पदपर नियुक्त करनेकी भी पूरी कोशिश करता। काग्रेस-कोषकी रकमको सुरक्षित रखना भी उतना ही बडा कर्त्तव्य है जितना कि अदालतोका बहिष्कार जारी रखना। सच तो यह है कि काग्रेसका पदाधिकारी व्यक्ति, जो प्रतिनिधिकी हैसियतसे वादी या मुद्दई हो,

काग्रेसके प्रस्तावका कोई उल्लघन नही करेगा। उस सूरतमे, उल्लघन तो काग्रेस सस्था करती है और काग्रेसको अपने हितमे अपने ही वनाये नियम तोडनेका पूरा हक है। सुव्यवस्थित राज्यमे यह उक्ति कि "राजा कोई गलती नही करता" सही और सार्थक है।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ११-९-१९२४

८५. वास्तविकताएँ

आजकल मेरे 'य० इ०'के लेखोमे आज एक वात तो कल दूसरी वात दिखाई देती है। वहुत सम्भव है, पाठक इससे चक्करमे पडते हो और हैरान होते हो। पर मै उन्हे यकीन दिलाता हूँ कि इन्हे वे तब्दीलियाँ न समझे वल्कि यह समझें कि जिस दिशाकी ओर हम जा रहे है अथवा हमें जाना उचित है, उसमे हम एक-एक कदम आगे वढ रहे है। हम जिन सिद्धान्तोका पालन करनेका दावा करते है, उनके ये सहज परिणाम ही है।

यदि हम इस वातको याद रखे कि असहयोगकी अपेक्षा अहिंसा अधिक महत्त्व-पूर्ण है और अहिंसाके विना असहयोग पाप है, तो मै आजकल जिन विचारोका निरूपण इन पृष्ठोमे कर रहा हूँ, वे सूर्यके प्रकाशकी तरह स्पष्ट हो जायेगे। पर मुश्किल यह है कि पाठक इस वातको वहुतागमे नही जानते कि परदेके पीछे क्या-कुछ हो रहा है। मैं अभीतक जो सव वातोको खोलकर नही वता रहा हूँ, वह कुछ तो जान-बूझकर और कुछ लाचारीके कारण। पल-पलमे और दिन-दिन एकके वाद दूसरी वातका फैसला अपने साथियोतक पहुँचाना मुश्किल है। मै यही विश्वास करता हूँ कि चूंकि मेरी रायमें वे मुख्य सिद्धान्तके सहज परिणाम है, इसलिए मेरे नजदीक वे जितने स्पष्ट है उतने ही पाठकोके निकट भी होगे।

वात यह है कि परिस्थितिके साथ-साथ हमारी गतिविधिमें भी फर्क होना चाहिए। ऐसे फर्ककी उत्पत्ति यदि उसी एक उद्‌गमसे हो, तो वह असगत नही हो सकता।

लेकिन यह वात तो हरएक समझ ही रहा है कि हमारे मतभेद दिनपर-दिन वढते जा रहे है। हर दलके लोग अपने कार्यक्रमको सिद्धान्तका रूप दे रहे है। हर दलवाले सच्चे दिलसे इस वातको मानते है कि उनके ही कार्यक्रम द्वारा हम लोग अपने ध्येयके ज्यादा नजदीक पहुँचेगे। देशमें जवतक ऐसे लोग मौजूद है—और उनकी सख्या काफी वडी है, भले ही वह दिन-दिन वढ न रही हो—तवतक धारा-सभाओके अन्दर जाकर काम करनेवाले दल भी मौजूद रहेगे ही। पर हमारे इस असहयोगने तो अमली तौरपर सरकारसे असहयोगकी वनिस्वत आपसमे ही असहयोगका रूप धारण कर लिया है। अनचाहे ही हम एक-दूसरेको कमजोर वना रहे है और उस हदतक उस शासन-प्रणालीकी सहायता कर रहे है, जिसको मिटा देना हम सवका

उद्देश्य है। हमे इस प्रणालीकी सबसे बडी खासियत समझ लेनी चाहिए। यह प्रणाली परजीवी है और राष्ट्रीय जीवनकी गन्दगीसे अपने लिये पोषण प्राप्त करती है।

इस शासन-तन्त्रके मूलमे हिंसा है। उसके खिलाफ जीवन्त और सक्रिय अहिंसात्मक शक्ति उत्पन्न करना हमारे असहयोगका उद्देश्य था। पर बदकिस्मतीसे हमारा असहयोग कभी सक्रिय रूपमे अहिंसात्मक हुआ ही नही। हम तो निर्बलो और असहायोकी शारीरिक अहिंसासे ही सन्तुष्ट रहे। इस शासन-प्रणालीको नष्ट करनेका तात्कालिक प्रभाव न उत्पन्न कर सकनेके कारण हमारी यह असहयोगकी शक्ति दूनी ताकतसे हमपर ही उलट पडी है और यदि हम समय रहते न चेते तो वह हमको ही नष्ट करनेकी तैयारीमे है। ऐसी हालतमे मैने तो अपनी तरफसे यह दृढ निश्चय कर लिया है कि मै इस घरेलू लडाईमे शरीक न होऊँगा और साथ ही सब सम्बन्धित लोगोसे भी यही दरख्वास्त करूँगा। यदि हम इस काममे आगे बढकर सहायक नही हो सकते तो कमसे-कम हमे इसमे कोई रुकावट नही डालनी चाहिए। मै आज भी उसी दृढताके साथ पाँचो बहिष्कारोको मानता हूँ। पर अब मुझे यह साफ-साफ दिखाई देता है कि हम चाहे खुद निजी तौरपर उनपर अमल भले ही करे, पर आम तौरपर उनके अनुसार काम करनेके लायक वायुमण्डल नही है। यह बात [अहमदाबादकी] अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीकी बैठकके समय मेरी समझमे नही आई थी, पर अब स्पष्ट है। आज हमारे चारो ओर अविश्वास ही अविश्वास दिखाई देता है। हर कार्रवाई शककी नजरसे देखी जाती है और उसका गलत अर्थ लगाया जाता है। ऐसी हालतमे हम एक ओर जहाँ कैफियत-दर-कैफियतकी जगमे मुब्तिला है, वहाँ दूसरी ओर दुश्मन हमारे दरवाजेपर खडा खुश हो रहा है और अपनी ताकतको जुटा और बढ़ा रहा है। हमे हर सूरतमे और हर हालतमे इससे बचना चाहिए।

इसलिए मैने यह सुझाया है कि हम देशके तमाम मुख्तलिफ राजनीतिक दलोका एक न्यूनतम समान कार्यक्रम तय करे और उसको प्राप्त करनेके लिए सबको काग्रेसके मचपर सहयोग करनेके लिए बुलाये। यह है हमारे आन्तरिक विकासका कार्य, जिसके बिना किसी प्रकारका बाहरी राजनीतिक प्रभाव सफलतापूर्वक काम नही कर सकता। जो राजनीतिज्ञ लोग बाहरी कामको भीतरी कामसे अधिक महत्त्व देते है या जो समझते है कि यह भीतरी काम बहुत देरसे फल देगा (दोनोका एक ही मतलब है), उन्हे अपनी शक्ति बढानेकी पूरी-पूरी आजादी रहनी चाहिए, पर मेरी रायमें यह काम काग्रेसके बाहर होना चाहिए। काग्रेसको तो दिनपर-दिन जनताका अधिकाधिक प्रतिनिधित्व करना चाहिए। वह अभीतक राजनीतिसे अछूती है। उसके अन्दर वैसी राजनीतिक चेतना नही है जैसी कि हमारे राजनीतिज्ञ भाई चाहते है। जनताकी राजनीति तो नमक और रोटीतक ही सीमित है। मै इसमें घी किस तरह जोडूँ, क्योकि लाखो लोग ऐसे है जो घी तो क्या तेलका भी स्वाद नही जानते। उनकी राजनीति तो जातिगत सम्बन्धोमे तालमेल बैठानेतक ही सीमित है। फिर भी यह कहना बिलकुल ठीक है कि हम राजनीतिज्ञ लोग सरकारके खिलाफ जनताके प्रतिनिधिका काम जरूर करते है। पर यदि हम उसके तैयार होनेके पहले ही उसका

इस्तेमाल करने लगें, तो हम उनके प्रतिनिधि नही रह जायेंगे। पहले हमें उनके अन्दर काम करके, उनके साथ अपना जीता-जागता रिश्ता जोडना चाहिए। हमे उनके दु खको अपना दु ख समझना चाहिए, उनकी कठिनाइयोको अनुभव करना चाहिए और उनके अभावो और जरूरतोको जानना चाहिए। अछूत और बहिष्कृत लोगोमे भी हमे उन-जैसा ही बनकर जाना चाहिए और देखना चाहिए कि उच्च श्रेणीके लोगोके पाखाने साफ करना और अपने सामने उनकी जूठी पत्तलोका बचा हुआ खाना फेंका जाना कैसा लगता है। हमें बम्बईके मजदूरोकी सन्दूकनुमा खोलियोमे, जिन्हे लोगोने झूठ-मूठ मकानका नाम दे दिया है, रहकर देखना चाहिए कि हमारे दिलको कैसा लगता है। हमे देहातियोमे देहाती बन जाना चाहिए और देखना चाहिए कि वे किस तरह जेठ-बैसाखकी कडी धूपमें कमर झुकाकर हल चलाते है और हमे जानना चाहिए कि उन पोखरोसे पानी पीना हमे कैसा मालूम होगा जिनमे देहाती लोग नहाते है, कपडे और बरतन धोते है और जिनमे उनके मवेशी पानी पीते है और लोटते है। हम उसी अवस्थामे अपनेको उनका सच्चा प्रतिनिधि कह सकते है, उसके पहले नही; और तभी वे यकीनन हमारी हरएक पुकारपर प्राणपणसे दौड पड़ेंगे, उसके पहले नही।

इसपर कुछ लोग कहेंगे, "हमसे यह सब नही हो सकता और अगर हमे यही करना हुआ तो फिर आगे एक हजार साल या उससे भी अधिक समयके लिए स्वराज्यको नमस्कार।" इस ऐतराजके साथ मेरी हमदर्दी होगी। पर मैं यह बात दावेके साथ कहूँगा कि हममे से कमसे-कम कुछ लोगोको जरूर इन यन्त्रणाओसे गुजरना पडेगा और उसी तपस्या से एक पूर्ण, बलशाली और स्वाधीन राष्ट्रका जन्म होगा। इसलिए मै सब लोगोको यह सुझाव देता हूँ कि वे अपना मानसिक सहयोग दें और मानसिक रूपसे वे जनताके साथ अपना तादात्म्य स्थापित करे तथा उसके दृश्य और ठोस प्रतीकके तौरपर वे उसके नामपर, उसके लिए रोज कमसे-कम तीस मिनट लगनपूर्वक चरखा काते। यह कार्य मानो भारतके हिन्दू, मुसलमान, पारसी, ईसाई आदि जातियोके प्रबुद्ध लोगोकी तरफसे जनताकी अर्थात् भारतमाताकी मुक्तिके लिए ईश्वरसे की जानेवाली बलवती प्रार्थना होगी।

हिन्दुओ और मुसलमानोका तनाव दिनपर-दिन बढता जा रहा है। सिवा इसके कि देशके तमाम दल कांग्रेसके अन्दर एक होकर इस अत्यन्त जटिल समस्याको हल करनेका सबसे अच्छा उपाय सोचें, इसे दूर करनेका दूसरा कोई रास्ता मुझे नही दिखाई देता। इस समस्याके कारण तो पारस्परिक विश्वास और पारस्परिक सहायताकी बुनियादपर आधारित राष्ट्रीय स्वतन्त्रता प्राप्त करनेकी हमारी बडी-बडी उमगें टूक-टूक हो रही है। अतएव यदि और किसी कारणसे नही तो महज इस एकताके लिए ही हमे अपनी अन्दरूनी राजनीतिक लडाई बन्द कर देनी चाहिए।

इसकी सिद्धिके लिए मेरा प्रस्ताव यह है

(१) १९२५ के अधिवेशन तकके लिए कांग्रेस विदेशी कपड़ोके बहिष्कारको छोडकर अपने तमाम बाकी बहिष्कारोको स्थगित कर दे।

(२) काग्रेस अग्रेजी मालके बहिष्कारको बन्दकर दे, बशर्ते कि शर्त (१) अमलमे लाई जाये।

(३) हाथ-कती और बुनी खादीका प्रचार, हिन्दू-मुस्लिम एकताके लिए प्रयत्न और हिन्दू सदस्योके द्वारा छुआछूत मिटाना — इतने ही कामोतक काग्रेस अपने प्रयास सीमित रखे।

(४) काग्रेस मौजूदा राष्ट्रीय शिक्षा-सस्थाओका सचालन करे, और अगर मुमकिन हो तो नवीन सस्थाएँ खोले तथा उन्हे सरकारके अकुश या प्रभावसे अलग रखे।

(५) काग्रेसके सदस्योके लिए जो चार आना फीस है वह उठा ली जाये और उसकी जगह सदस्यताकी अर्हता हाथ कती-बुनी खादी पहनना, आध घटा रोज सूत कातना और हर महीने कमसे-कम २,००० गज अपना काता सूत काग्रेसको भेजना हो। जो सदस्य इतने गरीब हो कि रुईका खर्च न उठा सके, उन्हे रुई मुहैया की जाये।

ऊपर मैंने काग्रेसके सविधानमे जो क्रान्तिकारी परिवर्तन सुझाया है, उसके सम्बन्धमें कुछ खुलासा करनेकी जरूरत है। काग्रेसके वर्तमान सविधानका मुख्य विधाता स्वय मैं ही हूँ। इस उल्लेखके लिए पाठक मुझे क्षमा करेगे। हमारा उद्देश्य इस सविधानको दुनियाका सबसे अधिक लोकतान्त्रिक सविधान बनाना था और हमारी उम्मीद यह थी कि यदि उसे सफलतापूर्वक कार्यान्वित किया जाये तो बिना कुछ और किये ही हमे स्वराज्य मिल जायेगा। पर उसके अनुसार यथेष्ट रूपसे काम ही नही किया गया। हमारे पास सच्चे और सुयोग्य कार्यकर्त्ता काफी तादादमे न थे। हमे यह बात कबूल करनी होगी कि जिस उद्देश्यके लिए वह बनाया गया था उसके लिहाजसे वह असफल रहा है। हमारे रजिस्टरमे कभी एक करोड सदस्य भी दर्ज नही हो पाये। इस समय शायद सारे भारतमे कुल मिलाकर सदस्योकी सख्या कोई दो लाखसे अधिक नही होगी, और इन दो लाखमे भी अधिकतर लोग ऐसे है जो सिवा चार आना देने और राय देनेके वक्त हाथ ऊँचा उठा देनेके हमारे काम-काजमे आम तौरपर दिलचस्पी नही लेते। लेकिन हमे जरूरत तो एक ऐसी सस्थाकी है जो प्रभावकारी फुर्तीसे काम करनेवाली, सुसगठित, काम ठीक-ठीक और तुरन्त बजानेवाली हो और जिसमे बुद्धिमान, परिश्रमी और उद्योगी राष्ट्रीय कार्यकर्त्ता हो। एक ऐसी भीमकाय और सुस्त तथा जटिल सस्थाकी अपेक्षा जिसका अपना कोई दिमाग ही न हो, यदि थोडे लोगोका एक छोटा सगठन हो, तो हम अपने कार्यका अच्छा लेखा दे सकते है। इस प्रस्तावमे एक ही बहिष्कार कायम रखा गया है — विदेशी कपडेका। यदि हम चाहते है कि उसमे सफलता मिले तो ऐसा हम कुछ समयतक काग्रेसको मुख्यतया कतैयोका सघ बनाकर ही कर सकते है। यदि हम एक ही भारी और महत्त्वपूर्ण रचनात्मक काममे सफल हो जायें तो यह हमारे लिए एक जबरदस्त फतह होगी। मैं मानता हूँ कि ऐसा महत्त्वपूर्ण रचनात्मक काम यदि कोई है तो वह है हाथ-कती और हाथ-बुनी खादीका उत्पादन। यदि हम चाहते है कि खादीका काम राष्ट्रीय दृष्टिसे सफल हो तो चरखा ही उसका एकमात्र साधन है। यदि हम चाहते है कि राष्ट्रके कल्याण-साधनमे जनता भी स्थायी रुचि लेती रहे तो चरखा ही उसका एकमात्र साधन

है। यदि हम देशसे दरिद्रताका मुँह काला कर देना चाहते है, तो चरखेके सिवा दूसरी कोई रामवाण दवा नही है।

मेरे प्रस्तावसे नीचे लिखी बाते फलित होती है

(क) स्वराज्यवादी, काग्रेस या अपरिवर्तनवादियोकी तरफसे बिना किसी विरोधके अपना दल सगठित करनेको स्वतन्त्र होगे।

(ख) दूसरी राजनीतिक सस्थाओके सदस्य काग्रेसमे शरीक होनेके लिए निमन्त्रित किये जाये, इसके लिए उन्हे राजी किया जाये।

(ग) अपरिवर्तनवादियोको कौसिल-प्रवेशके खिलाफ जाहिरा तौरपर या दबे-छिपे आन्दोलन करनेसे मना कर दिया जाये।

(घ) जिन लोगोका बाकी चार बहिष्कारोमे व्यक्तिश कोई विश्वास न हो वे पूरी आजादीके साथ यह मानकर चल सकते है कि ये बहिष्कार थे ही नही और उनके इस व्यवहारसे उनकी प्रतिष्ठापर कोई आँच नही आयेगी। इस तरह असहयोगी वकील यदि चाहें तो फिरसे वकालत शुरू कर सकते है और खिताबधारी, सरकारी स्कूलोके शिक्षक आदि काग्रेसमे शरीक होने और उसके पदाधिकारी होनेके पात्र समझे जायेगे।

इस तजवीजके मुताबिक देशके तमाम राजनीतिक दल मिल-जुलकर [राष्ट्रके] आन्तरिक विकासके लिए एक साथ काम कर सकते है। इस तरह काग्रेस तमाम राजनीतिक दलोको अपने मचपर सम्मिलित होनेका खासा मौका देती है और काग्रेसके बाहर स्वराज्यकी एक ऐसी योजना तैयार करनेका मौका देती है जिसे सब मजूर कर सकें और जो सरकारको पेश की जा सके। मेरी निजी राय तो यह है कि अभी ऐसी तजवीज पेश करनेका समय नही आया है। मै तो यह मानता हूँ कि यदि हम सब मिलकर एक साथ पूर्वोक्त रचनात्मक कार्यक्रमको सफल बनानेका उद्योग करे तो उससे हमारी आन्तरिक शक्ति आशातीत रूपसे बढ जायेगी। पर देशके उन बहुतसे-सज्जनोकी राय, जो अबतक लोगोके अगुआ रहे है, इसके विपरीत है। जो भी हो, कमसे-कम हमारे सुभीतेके लिए तो एक स्वराज्य-योजनाकी जरूरत है ही। पाठक जानते ही होगे कि इस मामलेमे मै तो बाबू भगवानदासके विचारोका पूरी तरह कायल हो गया हूँ। अतएव इसके लिए यदि कोई परिषद् होगी और उसमे मेरी हाजिरीकी जरूरत होगी तो उसमे हाजिर होकर उस योजनाको बनानेमे मै जरूर मदद दूँगा। इस कामको काग्रेसके बाहर रखकर चलानेपर जो मै जोर दे रहा हूँ, उसका सबब यह है कि मै पूरे एक सालतक काग्रेसको सिर्फ आन्तरिक विकासके काममे लगाये रखना चाहता हूँ। जब हम अपने इस काममें काफी परिमाणमें सफलता प्राप्त कर चुकेंगे तब काग्रेस शौकसे बाहरी राजनीतिक हलचलोमें भी भाग ले सकती है।

अब सवाल है कि यदि यह प्रस्ताव मजूर न हुआ और देशके तमाम राजनीतिक दलोको काग्रेसके अन्दर एकत्र करना मुश्किल हुआ और हमारे और स्वराज्यवादियोके बीचकी इस खाईको पाटना नामुमकिन हुआ तो फिर क्या होगा? मेरा जवाब सीधा है। यदि सारा झगडा काग्रेसपर कब्जा करनेके लिए ही हो तो मै उसमे

शरीक नही होऊँगा। जिन लोगोके विचार मुझसे मिलते है उन्हे भी मै ऐसा ही करनेकी सलाह दूँगा। मै उन्हे यह भी सलाह दूँगा कि वे कांग्रेसको स्वराज्यवादियोकी शर्तपर उनके हवाले कर दे और अपनी तरफसे बिना किसी तरहका विरोधी प्रचार-आन्दोलन किये उनको कौंसिल-कार्यक्रम निर्विघ्न रूपसे चलाने दे। मै अपरिवर्तनवादियोको सिर्फ रचनात्मक काममे लगाऊँगा और उन्हे सलाह दूँगा कि वे दूसरे दलवालोसे — जितनी वे दे सके, सहायता ले।

जो लोग अपने राष्ट्रीय पुनरुज्जीवनके लिए महज रचनात्मक कार्यक्रमपर ही सारा दारोमदार रखते है उनका काम है कि वे स्वार्थ-त्यागके रास्तेमे पहले आगे कदम बढ़ाये। कांग्रेसमे पदाधिकारी बनने और स्वराज्यवादियोका विरोध करनेसे हमे अपनी एक भी प्रिय वस्तु प्राप्त न होगी। हम स्वराज्यवादियोकी सहमतिसे ही उन पदोपर रहे। यदि हम 'कांग्रेस' नामकी पूजा करनेवाले सीधे-सरल लोगोको इस आत्मघातक गज-ग्राहके युद्धमे फँसायेगे तो उनको भ्रष्ट करनेका दोष हम दोनो दलोके लोगोपर होगा। अपनी शुद्ध सेवाके बलपर जो पद और सत्ता हमे मिलती है वह हमारे हृदयको उच्च बनाती है। जो सत्ता सेवाके नामपर हासिल की जाती है और महज कसरत रायके बलपर प्राप्त की जाती है, वह केवल भ्रम-जाल है। हमे उससे बचना चाहिए — खासकर इस मौकेपर।

मै पाठकोको अपने इस प्रस्तावकी उपयोगिताका कायल कर सका होऊँ या न कर सका होऊँ, पर मै तो अपनी तरफसे निश्चय कर चुका हूँ। इस विचारसे मेरे चित्तको व्यथा होती है कि जिन लोगोके साथ मैने अबतक कन्धेसे-कन्धा भिडाकर काम किया है, वे प्रतिकूल दिखाई देनेवाली दिशाओमे काम करने लगे।

ऊपर मैने जो बाते पेश की है वे मेरे शस्त्र रख देनेकी शर्ते नही है। मेरा आत्म-समर्पण तो बिना किसी शर्तके है। मै कांग्रेसकी रहनुमाई अगले वर्ष उसी हालतमे कर सकता हूँ जबकि तमाम दलके लोग ऐसा चाहे। मै इस घनघोर अन्धकारमे प्रकाश देखनेकी कोशिश कर रहा हूँ। मुझे वह धुँधला-सा दिखाई भी देता है। मुमकिन है, अब भी मै गलती कर रहा होऊँ। पर मै इतनी बात जरूर जानता हूँ कि अब मेरे अन्दर सघर्षका भाव बिलकुल नही रह गया है। मै एक जन्मजात लडाका हूँ। मेरे लिए इतना ही कहना बहुत है। मै अपने सर्वाधिक प्रियजनो तकसे लडा हूँ। पर मै लडा हूँ प्रेम-भावसे प्रेरित होकर ही। स्वराज्यवादियोसे भी प्रेम-भावसे प्रेरित होकर ही लडा जा सकता है। पर मै देखता हूँ कि पहले मुझे अपने प्रेम-भावको साबित करना होगा। मै समझता था कि मै इसे साबित कर चुका हूँ। लेकिन देखता हूँ कि नही, मै गलतीपर था। इसलिए मै अपने कदम वापस ले रहा हूँ। मै हर शख्ससे अनुरोध करता हूँ कि वह इसमे मेरा हाथ बँटाए और इन दोनो पक्षोको एक होनेमे मेरी सहायता करे। कमसे-कम कुछ समयके लिए तो अवश्य ही कांग्रेसको बहुतांशमे एक मतवालोकी ही सस्था रहना आवश्यक है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ११-९-१९२४

८६. जेलके अनुभव – ११ [चालू]

मेरा पठन [– २]

मेरा उर्दूका अध्ययन भी 'महाभारत' की तरह ही चित्ताकर्षक सिद्ध हुआ। मैं ज्यो-ज्यो आगे बढता गया, त्यो-त्यो वह मेरे दिमागपर अधिक छाने लगा। दो-तीन महीनेमे उर्दूपर अच्छा अधिकार प्राप्त कर लूँगा, ऐसी मूर्खतापूर्ण धारणाके साथ उसके अध्ययनमे मैं कुछ हलके मनसे प्रवृत्त हुआ। परन्तु थोडे ही दिनोमे मुझे अपनी भूल समझमे आ गई और मैंने देखा कि इस भाषाको हिन्दीसे बिलकुल ही अलग कर दिया गया है और उसे ऐसा बनानेकी तरफ रुझान बढता जा रहा है। परन्तु इस एहसाससे उर्दू साहित्यको पढने और समझनेका मेरा निश्चय और भी दृढ हो गया। मैं उर्दू पढनेके लिए रोज लगभग तीन घटे देने लगा। उर्दू लेखकोने हिन्दू-मुसलमानोमे प्रचलित शब्दोका त्याग करके फारसी और अरबी शब्दोका उपयोग जान-बूझकर बढा दिया है। दोनो भाषाओके सामान्य व्याकरण तकका उपयोग करना छोडकर, उन्होने अरबी और फारसीके व्याकरणको अपना लिया है। इसके परिणाम-स्वरूप, मुसलमानी विचार-परम्परासे परिचित रहनेके इच्छुक बेचारे देश-प्रेमियोको उर्दूका अध्ययन एक बिलकुल भिन्न और नई भाषाके रूपमें ही करना पडेगा। मैं जानता हूँ कि हिन्दीके लेखकोने भी इस मामलेमे इससे कुछ अच्छा काम नही किया है, हिन्दीको बिलकुल एक अलग भाषा बना देनेके लिए कुछ कम कोशिश नही की गई है। हाँ, मैं यह जरूर सोचता था कि यह बुराई अभीतक बहुत गहरी नही गई है और हिन्दी और उर्दूको अलग कर डालनेकी वृत्ति केवल थोडे समय ही चलेगी। परन्तु अब देखता हूँ कि यदि हमें हिन्दुस्तानके लिए हिन्दी और उर्दूको मिला-जुलाकर एक सर्व-सामान्य राष्ट्रीय भाषा बनानी हो तो आजकल एक-दूसरेसे अलग बहते दिखाई देनेवाले इन दो प्रवाहोको एक करनेकी दिशामे लम्बे समयतक विशेष प्रयत्न करने पडेंगे। इसके बावजूद, मैं मानता हूँ कि हिन्दूको अपनी शिक्षा पूरी करनेके लिए शिष्ट उर्दू जान लेनेकी जितनी जरूरत है, उतनी ही मुसलमानको शिष्ट हिन्दी जान लेनेकी है। यह काम जल्दी ही आरम्भ कर दिया जाये तो बिलकुल आसान है। ऐसे अध्ययनसे कोई आर्थिक लाभ भले ही न हो और पश्चिमके ज्ञान-भण्डारके कपाट भी भले ही इससे न खुलें, परन्तु राष्ट्रीय दृष्टिसे इसकी उपयोगिता अमूल्य है। उर्दूके गहरे अध्ययनसे मुझे लाभ ही पहुँचा है। मैं चाहता हूँ कि मैं यह अध्ययन अब भी पूरा कर सकूँ।

दो वर्ष पहले मैं मुसलमानोके मानसको जितना जानता था उसकी अपेक्षा आज कही अधिक जानता हूँ। मुझे उर्दू साहित्यके धार्मिक पहलूमे ज्यादा दिलचस्पी थी। इसलिए ज्यो ही सम्भव हुआ, मैं उर्दूकी धार्मिक पुस्तकोमे डूब गया। नसीबने तो हमेशा मुझे मदद दी ही है। मौलाना हसरत मोहानीने[1] भाई मजर अलीको 'उस्व-ए-

१. १८७५-१९५१; राष्ट्रवादी मुसलमान नेता, खिलाफत आन्दोलनमें सक्रिय भाग लिया।

सहाबा' नामक ग्रन्थमाला भेजी थी। चूँकि वे मुझे उर्दू सिखाते थे, इसलिए उन्होने ये पुस्तके मुझे सौप दी। मैंने पूरी लगनसे उन्हे पढ डाला। यद्यपि इन पुस्तकोमे पुनरुक्ति दोष बहुत है और कई जगह लेखन सक्षिप्त होता तो बहुत सुन्दर लगता, फिर भी उनसे पैगम्बर साहबके अनेक साथियोके किये हुए कामकी गहरी जानकारी मिलती थी, इसलिए उनमे मुझे बहुत ही आनन्द आने लगा। उनके जीवन जैसे एक जादूसा हुआ हो कैसे एकाएक बदल गये, पैगम्बरके प्रति उनकी कैसी अगाध भक्ति थी, दुनियाके धन-मानकी ओर वे कितने उदासीन थे, अपने जीवनकी सादगी साबित करनेके लिए उन्होने राज्यशक्तिका भी किस तरह उपयोग किया, धनकी लालसासे वे कितने मुक्त रहे, अपने पवित्र माने हुए कार्यके लिए जीवन समर्पित करनेके बारे मे वे सदा-सर्वदा कैसे तत्पर रहते थे — इन सब बातोका इन पुस्तकोमे सविस्तार और अत्यन्त विश्वसनीय वर्णन है। यदि कोई उनके जीवनकी तुलना भारतमे इस्लामके आज-कलके प्रतिनिधियोंके जीवनके साथ करे तो उसकी आँखोमे शोकके आँसू आये बिना न रहेगे।

'सहाबा' पढनेके बाद, मै खुद पैगम्बर साहबके चरित्रपर आया। मौलाना शिबलीके लिखे हुए ये दो बडे-बडे ग्रन्थ बेशक सुन्दर शैलीमे लिखे गये है। किन्तु मुझे जो शिकायत पैगम्बर साहबके साथियोके विषयमे लिखी उक्त ग्रन्थ-मालाके सम्बन्धमे है, वही इन ग्रन्थोके बारेमे भी है — इनमे विस्तार बहुत ज्यादा है। परन्तु पश्चिममे जिसकी लगभग एक स्वरसे निन्दा की गई है और जिसे गालियाँ दी गई है, उसीके जीवनकी घटनाओको एक मुसलमान लेखकने किस दृष्टिकोणसे देखा-परखा है, यह सब जाननेकी मेरी उत्सुकता इस विस्तारके बावजूद बनी रही। दूसरी पुस्तक पूरी हो जानेके बाद, उस महान् जीवनके बारेमे पढनेके लिए पासमे कुछ और न होनेके कारण मुझे अफसोस हुआ। उसमे कुछ घटनाएँ ऐसी अवश्य है, जिन्हे मै समझ नही सका और कुछ ऐसी है, जिन्हे मै समझा नही सकता। परन्तु मैंने यह अध्ययन मनोरंजन अथवा आलोचनाके लिए तो किया नही था। मुझे तो उस महापुरुषके जीवनकी उत्कृष्टता जाननी थी, जिसका आज करोडो मनुष्योके हृदयपर साम्राज्य है और यह चीज मुझे इन पुस्तकोमे पूरी मात्रामे देखनेको मिली। अब मेरा यह विश्वास पहलेसे भी अधिक पक्का हो गया है कि मानव-जीवनमे इस्लामने जो स्थान प्राप्त किया, वह तलवारके बलपर नही किया। उसका श्रेय तो कठोर सादगी, पैगम्बरके आत्म-विलोपनके भाव, उनकी टेक और अनुयायियोके प्रति उनके गहरे प्रेम-भाव, उनके साहस और निडरता तथा अपने कार्यके प्रति और खुदाके प्रति उनके सम्पूर्ण विश्वासको है। अपने अभियानमे वे जो लगातार सफल होते गये और बाधाओपर विजय पाते गये, उसका कारण उनके ये गुण ही थे, तलवार नही। पैगम्बर हो या अवतार, मै किसी भी मनुष्यको पूर्ण नही मानता। इसलिए पैगम्बरके जीवनकी एक-एक घटना और किस्सेका स्पष्टीकरण चाहनेवाले आलोचकका मै समाधान कर ही सकूँ, यह मेरे लिए जरूरी नही है। मेरे लिए तो इतना ही जानना पर्याप्त है कि वे लाखो-करोड़ोमे एक ऐसे नर-रत्न थे, जिसने ईश्वरसे डरकर चलनेका प्रयास किया, जो

गरीबीमे मरा, जिसने अपने मृत शरीरके लिए किसी शानदार मकबरेकी कामना नही की और जो मृत्यु-शय्यापर भी अपने छोटेसे-छोटे ऋण-दाताओतकको नही भूला। आज-कलके मुसलमानोमे जो पतनकारी असहिष्णुता या गलत तरीकोसे परधर्मावलम्बियोका धर्म-परिवर्तन करनेकी वृत्ति पाई जाती है, उसके लिए पैगम्बरको जिम्मेवार मानना उतना ही गलत है जितना कि आजके हिन्दुओके अध पतन और असहिष्णुताके लिए हिन्दू-धर्मको जिम्मेवार ठहराना।

पैगम्वरके जीवन-चरित्रके बाद मैंने दो खण्डोमे लिखी अजेय हजरत उमरकी जीवनीका अध्ययन किया, और जव मैं अपने मनमे जेरूसलेमकी यात्रा करते उस महापुरुषकी कल्पना करता हूँ जो पडोसियोकी शान-शौकतका अनुकरण करनेवाले अपने अनुयायियोको फटकारता है, जो एक गिरजाघरमे इस भयसे इबादत नही करता कि इसी कारण भावी पीढियाँ कही उसे मसजिद न बना डाले, जो पराजित ईसाइयोके सामने भी समझौतेकी अत्यन्त उदार शर्तें रखता है और जव मैं अपने मनमे उस व्यक्तिकी तस्वीर खीचता हूँ जिसने यह घोषणा की कि इस्लामके किसी भी अनुयायीका वचन, भले ही उस अनुयायीको ऐसा कोई वचन देनेकी सत्ता प्राप्त न हो, उतना ही मूल्यवान है जितना कि स्वय खलीफाका लिखित फरमान, तो मैं सहज ही उसके प्रति श्रद्धानत हो उठता हूँ। वे वज्रके समान सुदृढ इच्छाशक्तिवाले आदमी थे। उन्होने अपनी बेटीके साथ भी वैसा ही न्याय किया जैसा कि वे किसी अजनबीके साथ करते। आज हमारे यहाँ मूर्तियाँ तोडने, मन्दिर नष्ट करने और हिन्दुओके भजन-कीर्तनके प्रति अन्धी असहिष्णुताका जो जोर दिखाई दे रहा है, मुझे लगता है, वह इस महानतम खलीफाके जीवनको एक बिलकुल उलटे अर्थमे समझनेका ही फल है। मुझे ऐसी आशका है कि इस पवित्र और न्याय-परायण मनुष्यके कार्योको आम मुसलमानोके सामने विकृत रूपमे पेश किया जा रहा है। मुझे महसूस होता है कि अगर हजरत उमर खुद आज अपनी कब्रसे उठकर हमारे बीच आयें, तो इस्लामके कथित अनुयायियोके बहुत-से ऐसे कामोको वे निंद्य और अस्वीकार्य बतायेंगे जो उनके भद्दे अनुकरणके रूपमे किये जाते है।

इस चित्ताकर्षक अध्ययनके बाद, मैं 'अल-कलाम' नामक तत्त्वज्ञानसे सम्बन्धित ग्रन्थोकी तरफ मुडा। ये पुस्तके समझनेमे मुश्किल हैं। उनकी भाषा बहुत पारिभाषिक है। परन्तु भाई अब्दुल गनीने मेरे अध्ययनमे सहायता देकर काफी आसानी कर दी। इसलिए जब इन ग्रन्थोको आधा पढ जानेके बाद ही मैं बीमार हो जानेके कारण, रिहा कर दिया गया तो मुझे बडा दु ख हुआ।

अग्रेजी पुस्तकोमें गिबन-कृत रोमका इतिहास पहले नम्बरपर आता है। बरसो पहले मेरे अनेक अग्रेज मित्रोने उसे पढनेकी मुझे सलाह दी थी। इस बार जेलमे गिबनको पढनेका मैंने निश्चय कर लिया था। लेखकने जिस ढगसे एक विश्व-साम्राज्य स्थापित कर देनेवाले एक ही नगरके नागरिकोके जीवनकी एकके बाद एक घटनाओका वर्णन किया है, वह सचमुच पाठकोके सामने आत्माके इतिहासके पन्ने खोलकर रख देता है। कारण, गिबन सिर्फ छोटी-छोटी बातोका वर्णन करते बढते हो, सो तो बात ही नही है। वे तो तथ्योके समग्र समूहोको लेकर चलते है और उन्हे पाठकोके

सामने इस रूपमे प्रस्तुत कर देते है जिसका कोई अनुकरण ही नही कर सकता। उन्होने अर्ध-सभ्यो, ईसाइयो और मुसलमानो — तीनोकी सस्कृतियोका विवेचन इतने विस्तारसे किया है कि हम उसके अध्ययनके बाद इनके विषयमे अपनी राय स्वय बना सकते है। उनका अपना मत हमारा ध्यान खीचता है, परन्तु एक इतिहासकारके नाते उन्हे अपने कर्त्तव्यका बडा खयाल है। अपने पासके तमाम ब्योरे पाठकके सामने सच्चाईके साथ रखकर वे पाठकको अपना मत बनानेका अवसर देते है।

मोटले दूसरी ही तरहके इतिहासकार है। गिबन एक बड़े साम्राज्यके पतन और नाशके कारणोकी खोज करते है, तो मोटले एक छोटेसे प्रजातन्त्रकी कहानीमे अपने प्रिय नायककी जीवन-कथा उभारते चलते है। गिबनके पात्र एक अतुल शक्तिशाली साम्राज्यकी कथाके सामने गौण बन जाते है। मोटले जो एक राज्य [हॉलैंड] की कहानी कहते है, वह एक ही व्यक्तिके जीवनकी कहानीकी कडियोमे पिरोयी हुई, उसीके अधीन चलती है। उस गणतन्त्रका सारा इतिहास विलियम द साइलेंटमे समा जाता है।

इन दो इतिहास-ग्रन्थोके साथ लॉर्ड रोजबरी द्वारा लिखित 'लाइफ ऑफ पिट' जोड दीजिए तो फिर आप भी मेरी ही तरह कहेगे कि तथ्य और कल्पनाके बीचका भेद वास्तवमे बहुत ही थोडा है, और तथ्योके भी कमसे-कम दो पहलू तो होते ही है, अथवा जैसा कि कानूनके पण्डित कहते है, तथ्य भी तो आखिर कुछ मतोको ही पेश करते है। परन्तु इतिहास हमारी जातिके विकासमे किस तरह सहायक हो सकता है, इस दृष्टिसे इतिहासके मूल्यके बारेमे अपने विचारोपर पाठकोका ध्यान मै रोके रखना नही चाहता। मै स्वय तो इस कहावतको मानता हूँ कि जिस जातिका इतिहास नही, वह सुखी है। मेरी प्रिय मान्यता तो यह है कि हमारे हिन्दू पूर्वजोने, इतिहासका जो अर्थ आजकल समझा जाता है उस अर्थमे इतिहास लिखनेकी ओर ध्यान ही नही दिया बल्कि छोटी-छोटी बातोंका आधार लेकर तत्त्वज्ञानके प्रासाद रचे और हमारे लिए इस सवालको हल कर दिया है। 'महाभारत' ऐसा ही ग्रन्थ है, और मै तो गिबन और मोटलेको 'महाभारत' के घटिया सस्करण ही मानूँगा। 'महाभारत' का अमर किन्तु अज्ञात ग्रन्थकार अपनी गाथामे अलौकिक तत्त्वोको इस ढगसे मिला देता है कि उसके शाब्दिक अर्थसे चिपटे रहनेके विरुद्ध आपको पर्याप्त चेतावनी मिल जाती है। गिबन और मोटले आपके दिलपर यह बात जमानेके लिए कि वे हमे सच्ची घटनाएँ और केवल सच्ची घटनाएँ ही बता रहे है, व्यर्थ ही जान मारते है। लॉर्ड रोजबरी इससे आपको बचा लेते है और कहते है कि जो अन्तिम शब्द पिटके कहे बताये जाते है, उनके बारेमें खुद उनका बावर्ची ही दूसरी बात कहता है। इन सारी गाथाओका साराश इतना ही है: नाम-रूप गौण वस्तु है। वे तो आते-जाते रहते है। जो शाश्वत है और इसलिए महत्त्वपूर्ण है, वह मात्र घटनाओको दर्ज करनेवाले इतिहासकारकी पकडमे नही आता। सत्य इतिहाससे परे है।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ११-९-१९२४

८७. पत्र: एक मित्रको

साबरमती
११ सितम्बर, १९२४

प्रिय मित्र,

महादेवने आपके दोनो पत्र मुझे दे दिये है। उनके लिए मै आपको धन्यवाद देता हूँ। मुझे कोई भ्रम नही है। लिबरल दलवाले शामिल हो या न हो, स्वराज्य-वादी लोग भी चाहे तो शामिल हो या अलग रहे, पर मुझे तो यही लगता है कि हम लोग आपसमे एक-दूसरेसे असहयोग कर रहे है। हमे इससे बचना होगा। फिर बाकी सब अपने-आप ठीक हो जायेगा। पहले पत्रके बारेमे बस इतना ही कहना था।

अब दूसरे पत्रके बारेमे। मैंने बिलकुल स्पष्ट कर दिया है कि अगर [एकताके लिए] समर्पण करना है तो आपको अपनी ही प्रेरणासे करना होगा। मै तो केवल अहिंसासे उद्भूत सिद्धान्त ही सुझा सकता हूँ। दास्ताने और देवधरने जुहूमे बेशक बहुत-सी बाते कही थी। मेरे ऊपर उन बातोका असर भी पडा, लेकिन उस तरहका नही जैसी आपको आशका है। उनकी बातचीतसे मैंने यही अनुमान लगाया कि सभी प्रमुख सदस्य अहिसा या खद्दरके काममे पूरा विश्वास नही रखते। श्री बापटका ही उदाहरण लीजिए। उन्होने मूलशीपेटा आन्दोलनका[1] नेतृत्व किया था। मैंने सत्याग्रहके सम्बन्धमें उनकी पुस्तिका पढी है। अहिंसामें उनका कोई विश्वास नही। श्री निम्ब-करको लीजिए तो वे भी अहिसामे विश्वास नही रखते। मैंने उनके भाषण सुने है और उनके लेख भी पढे है। उनके खिलाफ बार-बार शिकायते आती रही है। लेकिन ये मामले ऐसे है कि इनमे अन्दरसे सुधारकी जरूरत है, हमारे समर्पणकी नही। समर्पणका विचार तो अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीकी बैठकके काफी बादकी चीज है। यह विचार तो मेरे मनमे तब आया जबकि मैंने कुछ जहरीले लेख पढे। अगर हम सब फरिश्ते होते तब भी मै सबको समर्पणकी ही सलाह देता। [अपने सिद्धान्तपर आग्रह करनेका मतलब ही यह है कि हम पदोका त्याग कर रहे है, सिद्धान्तोका नही।] सिद्धान्तोका तो हमे अपने जीवनमे आचरण करना ही है। यद्यपि सत्याग्रहके राजनीतिक परिणाम भी निकलते है, फिर भी वह शुद्ध आध्यात्मिक अवधारणा ही है। उसका सार है मानवीयता। यह बहस-मुबाहिसेकी चीज नही है। यदि आपका आचरण ठीक है तो यह आपके विरोधीपर अज्ञात रूपसे प्रभाव जमाता रहता है। आप पद-त्याग करेगे भी तो इसीलिए कि आप पहलेसे कही अधिक अच्छा काम कर सके। यह तरीका सामान्य तरीकोसे सर्वथा भिन्न है। मै अपनी भाषाको जान-बूझकर अस्पष्ट नही बना रहा हूँ। बात यह है कि मै जो-कुछ सोचता हूँ, वह मौलिक है,

१. देखिए खण्ड २०, पृष्ठ ६६-६७।

अर्थात् यह तरीका मौलिक है। उसे सजीव ढगसे व्यक्त करने लायक भाषा मेरे पास नही है और इसीलिए उसमे अस्पष्टता आ जाती है। पर इतनी बात तो आसानीसे समझमे आ जाती है कि यदि पदपर बने रहनेसे घृणा पैदा होती हो तो पदसे चिपके न रहे और यदि कोई पद आपको अनायास ही मिल जाये अर्थात् इस कारणसे मिले कि लोकमत बहुत प्रबल रूपसे आपके पक्षमे है तो उसे ग्रहण किये रहे। मुझे इस बातमे तनिक भी शका नही है कि सभी प्रान्तोकी जनता उन्ही लोगोका साथ देगी जो मौजूदा सरकारके बिलकुल खिलाफ खडे है और जनताकी सेवाकी खातिर बडेसे-बडा त्याग करनेको तैयार है। फिर इससे कोई फर्क नही पड़ता कि ऐसे सेवक काग्रेससे बाहर है या इसके अन्दर।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य नारायण देसाई

८८. पत्र : इन्द्र विद्यावाचस्पतिको

साबरमती
भाद्र शुक्ल १३ [११ सितम्बर, १९२४][1]

चि० इन्द्र,

तुमारा खत मुझे मीला है। भोपालके बारेमे मैं सविस्तर हकीकत चाहता हुँ। अत्याचारोकी फेरिस्त अगर मील सके तो मैं इस बारेमे जो कुछ हो सकता है तुरत करूँगा।

मोहनदासके आशीर्वाद

[पुनश्च]

राय साहबका पत्र आ गया है। मौलाना साहबके खत या तारकी राह देखता हु।

मूल पत्र (सी० डब्लू० ४८६१) की प्रतिसे।
सौजन्य . चन्द्रगुप्त विद्यालकार

१. डाककी मुहरसे।

८९. तार : कृष्णदासको

[१२ सितम्बर, १९२४][1]

कल सुबह दिल्ली जा रहा हूँ। वहाँ काम खतम करके सीधे दिल्ली आओ।

बापू

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १०१६४) की फोटो-नकलसे।

९०. तार : बालमुकुन्द वाजपेयीको[2]

[१२ सितम्बर, १९२४][3]

यहाँके और दिल्लीके पतेपर पूरा विवरण तार द्वारा भेजिए। कल सुबह दिल्ली रवाना हो रहा हूँ।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १०४९२) की माइक्रोफिल्मसे।

९१. तार : अब्दुल बारीको

[१२ सितम्बर, १९२४][4]

मौलाना अब्दुल बारी साहब
फिरंगी महल

आपके प्यारे लखनऊमें हिन्दू-मुसलमानोंके बीच क्या झगड़ा है? मैं जानता हूँ आप झगड़ा टालनेके लिए सब-कुछ करेंगे।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १०४९२) की माइक्रोफिल्मसे।

१. गांधीजी १३ सितम्बरको अहमदाबादसे दिल्लीके लिए रवाना हुए थे।

२. यह तार संयुक्त प्रान्तीय कांग्रेसके अध्यक्षकी हैसियतसे लखनऊसे भेजे गये श्री वाजपेयीके १० सितम्बरके तारके उत्तरमें दिया गया था। तार इस प्रकार था: "हिन्दू-मुसलमानोंके बीच बड़ा तनाव। स्थिति अत्यन्त चिन्ताजनक। मुसलमान नेता उदासीन। सहायता अविलम्बनीय।"

३. देखिए पाद-टिप्पणी १।

४. इस तार और बालमुकुन्द वाजपेयीको भेजे गये तार (देखिए पाद-टिप्पणी २) की विषय-वस्तुकी समानताको देखकर लगता है कि यह तार भी १२ सितम्बरको ही भेजा गया होगा।

९२. पत्र : चक्रवर्ती राजगोपालाचारीको

दिल्ली जाते हुए
१३ सितम्बर, १९२४

प्रियवर रा०,

मैं दिल्लीके रास्तेमें हूँ। मैं वहाँ झगड़ने जा रहा हूँ। मैंने एस० के नाम लिखा आपका पत्र पढ़ा है। मैं उदास हूँ क्योंकि आप उदास हैं। क्या ही अच्छा होता, अगर आप मेरे साथ होते! जब हमारे अन्दर इतनी फूट पड़ी हुई है तब फिर आप इस तरह कैसे चला सकते हैं? आप 'यंग इंडिया' के ताजा अंकमें प्रकाशित मेरा लेख[1] पढ़ें। जरूरत पड़े तो पचास बार पढ़ें, तब शायद आपके दिमागमें मेरा अर्थ स्पष्ट हो जायेगा। लेख सबसे अधिक आपके लिए ही लिखा गया है। एस० के नाम आपके पत्रसे ही मुझे उसे लिखनेकी प्रेरणा मिली। राष्ट्रीय कार्यक्रममें से बहिष्कारको फिलहाल हटा देनेका मतलब यह तो नहीं है कि हम उसे छोड़ रहे हैं। यदि हमारे अन्दर विश्वासका बल मौजूद है तो हम कभी भी उसे पुनरुज्जीवित कर सकते हैं। अगर हमें अपने ऊपर भरोसा है तो फिर मुल्तवी करनेका मतलब बिलकुल ही त्याग देना क्यों लगाया जाये?

आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य नारायण देसाई

९३. पत्र : फूलचन्द शाहको

भाद्रपद सुदी १५, १९८० [१३ सितम्बर, १९२४]

भाईश्री५ फूलचन्द,[2]

तुम्हारा पत्र मिला। तुमने नाम प्रकाशित करनेका जो सुझाव दिया है, उस-पर मैं अगले महीनेसे अवश्य अमल करूँगा। श्याम बाबू, राजगोपालाचारी आदि अन्य अपरिवर्तनवादियोंका सूत तो मिला है, किन्तु किसी भी प्रमुख स्वराज्यवादीका सूत नहीं मिला। मैं शिवलालभाईकी जमीनके बारेमें देखूँगा। काठियावाड़के नाम मुझे

१. देखिए "वास्तविकताएँ", ११-९-१९२४।
२. फूलचन्द कस्तूरचन्द शाह, सौराष्ट्रके एक राजनीतिक और रचनात्मक कार्यकर्ता।

किसीने दिये ही नही। अब इस बार मैंने सुधार किया है। भाई केवलरामने[1] अभी कोई निश्चय नही किया है। तुम अन्त्यज आश्रमके बारेमे जो-कुछ करो सो बहुत सोच-विचार कर करो। मैं यह पत्र दिल्ली जाते हुए लिख रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

भाईश्री फूलचन्द
केलवणी मण्डल कार्यालय
वढवान शहर

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० २८२२) से।
सौजन्य शारदाबहन शाह

९४. पत्र : राधा गांधीको

भाद्रपद सुदी १५ [१३ सितम्बर, १९२४][2]

चि० राधा,

मैं यह पत्र दिल्ली जाते हुए लिख रहा हूँ। मुझे कदाचित् पन्द्रह-एक दिन लगेंगे। मणिबहनके पेटमें दर्द है। उसका पता है मार्फत वल्लभभाई पटेल, बैरिस्टर। दिल्लीमे मेरा पता है: मार्फत मौलाना मुहम्मद अली, 'कॉमरेड' कार्यालय, दिल्ली।

देवदास अहमदाबादमे ही रह गया है। रामदास भावनगर जा रहा है। कृष्णदास, प्यारेलाल और महादेव मेरे साथ हैं।

बापूके आशीर्वाद

चिरजीव राधा
मार्फत बोरा शिवलाल करसनजी
लाल दरवाजाके पास
राजकोट

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ६०३४) से।
सौजन्य राधाबहन चौधरी

१. केवलराम जोशी, वढवानके दीवानके पुत्र।
२. डाककी मुहरसे।

९५. पत्र : सन्मुखरायको

१३ सितम्बर, १९२४

भाई सन्मुखराय,

ब्रह्मचर्यका पालन करनेके लिए निम्न बाते आवश्यक है· (१) एकान्त-सेवन; (२) अल्पाहार, (३) अच्छी पुस्तकोका अध्ययन, (४) नित्य मनन, (५) पर्याप्त शारीरिक और मानसिक श्रम; (६) मसालो और मादक द्रव्योका त्याग, (७) नाटकादि शृगारमय वस्तुओका त्याग; (८) मानसिक रूपसे भी स्त्रीसगका त्याग; (९) स्त्रीके साथ एकान्तमे न मिलना, (१०) रामनाम अथवा ऐसे ही किसी अन्य नामका जप।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य नारायण देसाई

९६. पत्र : शरद् कुमार घोषको[1]

[१३ सितम्बर, १९२४के पश्चात्]

आपका तार पाकर बडी खुशी हुई। मैं बडी उत्कटतासे प्रार्थना कर रहा हूँ कि ईश्वर मुझे राह दिखाये। मैंने मोतीलालजीको दो पत्र लिखे है। सिद्धान्तके मामलेमें समझौता करनेका कोई सवाल ही नही उठता। आपका प्रस्ताव मुझे पसन्द आया है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १६-९-१९२४

१. यह पत्र सर्वेंटके सवाददाता शरद् कुमार घोषके १३ सितम्बरके तारके उत्तरमें भेजा गया था। तार इस प्रकार था: "...लगता है कि आप या तो स्वराज्यवादियोंके कार्यक्रमको, जिसमें उनका सरकारी ओहदे मंजूर करना भी शामिल है, स्वीकार कर लेंगे और अपने रचनात्मक कार्यक्रम-मात्रसे ही सन्तोष कर लेंगे या फिर आप कांग्रेससे बिलकुल ही बाहर निकल जायेंगे। हमें नहीं मालूम कि आप क्या करेंगे।...जबतक आप कांग्रेसमें है, अपरिवर्तनवादियोंको कांग्रेसके पद प्राप्त करनेके लिए कोशिश करनी ही पड़ेगी। इसीलिए लगातार खींच-तान होती रहती है। आपके कांग्रेससे बाहर आ जानेपर अपरिवर्तनवादी लोगोंको भी बिना कोई सकोच-विकोच किये उससे बाहर आ जानेकी छूट मिल जायेगी।... ऐसी परिस्थितिमें तो हम लोग जो आपके अनुयायी हैं, सोचते हैं कि सबसे अच्छा यही रहेगा कि आप और आपके अनुयायी कांग्रेस छोड़ दें और एक स्वतन्त्र संस्था बना लें।..."

१७. हिन्दू-मुस्लिम एकता

मुझे सूरतकी सभामे हिन्दू-मुस्लिम एकताके सम्बन्धमे कुछ बोलनेका मौका मिला था।[1] कारण यह था कि कितने ही सज्जनोंने सगठनके विषयमे मेरे विचार जानने चाहे थे। उसके बाद मुझे एक मुसलमान सज्जनका पत्र मिला। उसमे उन्होंने कुछ सुझाव दिये थे। अब मैं देखता हूँ कि गुजरातमे भी झगडेका भय दिखाई देता है। वीसनगरका मामला अभी तय हुआ नही माना जा सकता। माडलमे कुछ उपद्रव हुआ है। अहमदाबादमे भी कुछ गडबडी हुई है। उमरेठमें दगेका डर है। ऐसी ही हालत अन्य प्रान्तोमे, जैसे भागलपुर (विहार) मे भी हो रही है।

यह सवाल दिन-ब-दिन गम्भीर होता जा रहा है। एक बात तो शुरुआतमें ही स्पष्ट कर दी जानी चाहिए। यह बात बराबर कही जाती है कि इन झगडोमें सरकारी लोगोका हाथ है। यदि यह आरोप सच हो तो मुझे दुख होगा, ताज्जुब तो कुछ भी न होगा, क्योकि सरकारकी तो नीति ही हममे फूट डालनेकी है। इसलिए यदि सरकार यह चाहती हो कि हम लडे-झगडे तो इसमे कोई आश्चर्यकी बात नही। दुख तो इसपर होगा कि अभीतक दोनो कौमे अपना-अपना हित नही समझ पाई है। जिन्हे लडाई-झगडा करनेकी आदत पड गई है, उन्ही लोगोमे तीसरा पक्ष झगडा करा सकता है। ब्राह्मणो और बनियोमे तो सरकारकी ओरसे झगडा कराये जानेकी बात अबतक नही सुनी गई और सुन्नी मुसलमानोमे भी लडाई कराये जानेकी बात भी कभी नही सुनी। परन्तु वह हिन्दू-मुसलमानोमे झगडा फसाद कराती है, ऐसा सन्देह और भय सदा रहा है, क्योकि दोनो जातियाँ बहुत बार लड चुकी है। जब हम लडनेका स्वभाव छोड देगे तभी हम आसानीसे स्वराज्य ले सकते है, नही तो वह असम्भव है।

जबतक हिन्दू डरते रहेगे तबतक झगडे भी होते ही रहेगे। [जहाँ डरपोक होता है वहाँ डरानेवाला हमेशा मिल ही जाता है।] हिन्दुओको समझ लेना चाहिए कि जबतक वे डरते रहेगे तबतक उनकी रक्षा कोई न करेगा। [मनुष्यका डर रखना यह सूचित करता है कि हमारा ईश्वरपर अविश्वास है।] जिसे यह विश्वास न हो कि ईश्वर हमारे चारो ओर है, सर्वव्यापी है या जिसका यह विश्वास शिथिल हो, वह अपने बाहुबलपर विश्वास रखता है। हिन्दुओको दोनोमे से एक बात प्राप्त करनी होगी। यदि ऐसा न करेगे तो सम्भव है, हिन्दू जाति नष्ट हो जाये।

पहला मार्ग — [केवल ईश्वरपर विश्वास रखकर मनुष्यका डर छोड देना — अहिंसाका मार्ग है] और उत्तम है। दूसरा मार्ग बाहुबलका है, यह हिंसाका मार्ग है। ससारमे दोनो मार्ग प्रचलित है और हमें दोनोमे से किसी भी एकको ग्रहण करनेका अधिकार है। परन्तु एक आदमी एक ही समय दोनोका उपयोग नही कर सकता।

१. देखिए "भाषण: सूरतकी सार्वजनिक सभामें", ५-९-१९२४।

यदि हिन्दू और मुसलमान दोनो बाहुबलका ही रास्ता ग्रहण करना चाहते हो तो फिलहाल शीघ्र स्वराज्य मिलनेकी आशा छोड़ देना ही उचित है। यदि तलवारके रास्तेसे ही शान्ति प्राप्त करनी हो तो दोनोको पहले खूब लड लेना होगा और इसमे खूनकी नदियाँ बहेगी। दो-चार लोगोका खून करने या दस-पाँच मन्दिर तोडनेसे फैसला नही हो सकता। मै सगठनके खिलाफ हूँ भी और नही भी हूँ। यदि सगठन-का मतलब अखाडे खोलना और अखाडोके द्वारा हिन्दू गुण्डोको तैयार करना हो तो यह हालत मुझे तो दयाजनक ही मालूम होती है। गुण्डोके द्वारा धर्मकी अथवा अपनी रक्षा नही की जा सकती। यह तो एक आफतके बदले दूसरी, अथवा उसके सिवा एक और आफत मोल लेना हुआ। यदि ब्राह्मण, वैश्य आदि ही अखाडोके द्वारा अपनी शारीरिक उन्नति करे और अपनी रक्षा करनेके लिए तैयार हो तो मुझे कुछ भी आपत्ति नही है। परन्तु मुझे तो यकीन है कि उन्हे लडाई लडनेके लायक शक्ति प्राप्त करनेमे बहुत समय लगेगा। अखाडोके लिए अखाडे खोलना बिलकुल ठीक है। किन्तु मुसलमानोको लडाईमे शिकस्त देनेके लिए अखाडे खोलनेकी बात हमारी समस्याका हल नही है — इसमे मुझे जरा भी शक नही।

यदि हम मुसलमानोके दिलको जीतना चाहते हो तो हमे तपश्चर्या करनी होगी। हमे पवित्र बनना होगा। हमे अपने दोषोको दूर करना होगा। अगर वे हमसे लडे तो हमे उलटकर प्रहार न करते हुए हिम्मतसे मरनेकी कला सीखनी होगी। डर कर औरतो, बाल-बच्चो और घर-बारको छोडकर भाग जाना और भागते हुए मर जाना, मरना नही कहाता; बल्कि उनके प्रहारके सामने खडे रहना और हँसते-हँसते मरना हमे सीखना पडेगा।

मै मुसलमानोको भी यही सलाह दूंगा। परन्तु यह अनावश्यक है, क्योकि वे डरानेवाले माने गये है। सामान्य अनुभव यह है कि वे मारनेमे बहादुर है। इसलिए उन्हे हिन्दुओके बाहुबलसे बचनेका रास्ता दिखानेकी जरूरत नही रह जाती। उनसे तो यही विनती करनी होगी कि भाई आप अपनी तलवार म्यानमे रखे। अपने गुण्डोको अपने कब्जेमे रखकर शान्तिसे काम ले। मुसलमानोको हिन्दुओसे दूसरे भय भी चाहे हो पर उनको हिन्दुओसे आर्थिक भय तो अवश्य है। इसके सिवा उन्हे बकरीदके दिन अपने धार्मिक कृत्यमे रुकावट पडनेका भी भय है। परन्तु उन्हे हिन्दुओ-के हाथो पिटनेका डर हरगिज नही है। इसलिए मै तो उनसे यही कहूँगा, आप लाठी या तलवारके बलपर इस्लामकी रक्षा नही कर सकते। लाठी या तलवारका युग अब चला गया। धर्मोकी कसौटी उनके माननेवालोकी पवित्रता ही होगी। यदि आप अपने धर्मकी रक्षा गुण्डोके हाथोमे सौप देगे तो आप इस्लामको भारी नुकसान पहुँचायेगे। फिर इस्लाम फकीरोका, खुदापरस्त लोगोका धर्म न रहेगा।

यह तो साधारण विचार हुआ। मौलाना हसरत मोहानी कहते है कि मुसल-मानोको हिन्दुओकी खातिर गायकी रक्षा करनी चाहिए और हिन्दुओको उन्हे अछूत न मानना चाहिए। वे कहते है कि उत्तर भारतमें मुसलमान भी अस्पृश्य गिने जाते है। मैने मौलाना साहबसे कहा कि मै तो ऐसी बातमे सौदा या अदला-बदला न करूँगा। मुसलमान यदि हिन्दुओकी खातिर गायकी रक्षा करना अपना धर्म समझे

तो वे गायकी रक्षा करे, फिर हिन्दू उनसे अच्छा सलूक करे या बुरा। यदि हिन्दू मुसलमानोको अस्पृश्य मानते हो तो यह पाप है। मुसलमान चाहे गोवध करे या न करे, परन्तु हिन्दुओको उन्हे अछूत नही मानना चाहिए अर्थात् स्पर्श आदिके बारेमे चारो वर्ण एक-दूसरेके साथ जैसा व्यवहार रखते है, हिन्दुओको वैसा ही व्यवहार मुसलमानोके साथ रखना चाहिए। इस बातको मै तो स्वयसिद्ध मानता हूँ। यदि हिन्दू-धर्म मुसलमानोके या अन्य धर्मियोके तिरस्कारकी शिक्षा देता हो तो उसका नाश ही होगा। इसलिए किसी तरहका सौदा किये बिना दोनोको अपना घर साफ करना चाहिए। गायकी रक्षाके लिए मुसलमानोसे दुश्मनी करना गायको मारनेका रास्ता है और दुहरा पाप है। यदि विधर्मी लोग गोवध करे तो इससे हिन्दू धर्मका लोप न होगा। हिन्दू गायको न मारे, यह उनका धर्म है। परन्तु क्या विधर्मियोसे जबरदस्ती करके गायको छीन लेना उनका धर्म हो सकता है? हिन्दू लोग भारतमे स्वराज्य चाहते है, हिन्दू-राज्य नही। हिन्दू-राज्यमें भी यदि सहिष्णुताका स्थान हो तो मुसलमान और ईसाई दोनोके लिए जगह होनी चाहिए। यदि उसमे दोनो जातियाँ समझ-बूझकर अपनी खुशीसे गोकुशी बन्द करे तो ही हिन्दू-धर्मकी शोभा मानी जायेगी। परन्तु मै तो हिन्दुओके लिए हिन्दू-राज्यकी इच्छा करना भी देशद्रोह मानता हूँ।

अब रहा बाजेका झगड़ा। बाजेका झगडा दिन-पर-दिन बढता दिखाई देता है। एक पत्रमें जो मुझे सूरतमे मिला था यह कहा गया है कि हिन्दू-धर्ममे बाजा बजाना अनिवार्य नही है। इसलिए हिन्दुओको चाहिए कि वे मुसलमानोकी भावनाको आघात न पहुँचानेके खयालसे मसजिदोके सामने बाजे बजाना बन्द कर दे। मै चाहता हूँ कि यह बाजेकी बात उतनी ही आसान होती जितनी कि पत्र-लेखक बताते है। परन्तु हकीकत इसके खिलाफ है। हिन्दू-धर्मकी कोई भी विधि ऐसी नही है जो बिना बाजा बजाये हो सकती है। कितनी ही विधियाँ तो ऐसी है जिनमे शुरूसे अखीर तक बाजा बजाना जरूरी है। हाँ, इसमे भी हिन्दुओको इतनी चिन्ता जरूर रखनी चाहिए कि मुसलमानोका दिल न दुखने पाये। बाजा धीमे बजाया जाये, कम बजाया जाये तथा यह सब लेन-देनकी नीतिके अनुसार हो सकता है और होना चाहिए। कितने ही मुसलमानोके साथ बातें करनेसे मुझे ऐसा मालूम होता है कि इस्लाममे ऐसा कोई फरमान नही है जिससे दूसरोके बाजेको बन्द कराना लाजिमी हो। इसलिए मसजिदके सामने विधर्मियोके बाजे बजानेसे इस्लामको धक्का नही पहुँचता। अत यह बाजेका सवाल झगडेका मूल नही होना चाहिए।

ऐसा होते हुए भी कितनी ही जगह मुसलमान भाई हिन्दुओके बाजे जबरदस्ती बन्द कराना चाहते है। यह स्थिति असह्य है। जो बात विनयसे कराई जा सकती है वह जोर-जबरदस्तीसे नही कराई जा सकती। विनयके सामने झुकना धर्म है, जोर-जबरदस्तीके सामने झुकना अधर्म है। यदि हिन्दू मारके डरसे बाजे बजाना छोडे तो वे हिन्दू न रहेगे। इस सम्बन्धमे सामान्य नियम इतना ही बताया जा सकता है कि जहाँ हिन्दुओने समझ-बूझकर बहुत समयसे मसजिदके सामने बाजे बन्द करनेका रिवाज रखा है वहाँ उन्हे उसका पालन अवश्य करना चाहिए। जहाँ वे हमेशा बाजे बजाते

आये है वहाँ उन्हें बजानेका अधिकार होना चाहिए। जहाँ झगडेकी सम्भावना हो और तथ्योके बारेमे मतभेद हो वहाँ हिन्दू और मुसलमान दोनो पक्षोको पचोसे निर्णय करा लेना चाहिए।

जहाँ अदालतने बाजे बजानेकी मुमानियत की हो, वहाँ हिन्दू लोग कानूनको अपने हाथोमे न ले। मुसलमानोको भी हिन्दुओका बाजा बजाना जबरदस्ती बन्द करानेकी जिद छोड़ देनी चाहिए।

जहाँ मुसलमान बिलकुल न माने अथवा जहाँ हिन्दुओके साथ जबरदस्ती होनेका अन्देशा हो और जहाँ अदालतसे बाजे बजानेकी मनाही न हो वहाँ हिन्दुओको निडर होकर बाजे बजाते हुए निकलना चाहिए और मुसलमान चाहे कितनी ही मार-पीट करे उन्हे उसे सहन करना चाहिए। इस तरह जितने बाजे बजानेवाले मिले सब वहाँ अपनी बलि दे दे। इससे उनके धर्म और आत्म-सम्मान दोनोकी रक्षा होगी।

जहाँ हिन्दुओमे इतना आत्मबल न हो, वहाँ उन्हे अपने बचावके लिए मार-पीट करनेका अधिकार है। मरकर अथवा मारते हुए मरकर धर्मकी रक्षा करनेकी जहाँ जरूरत दिखाई दे वहाँ दोनो दलोको अदालत या सरकारकी शरणमे जानेका विचार छोड देना चाहिए। यदि एक पक्ष सरकारकी या अदालतकी सहायता ले तो भी दूसरेको वैसा न करना चाहिए। यदि अदालतमे गये बिना काम ही न चले तो भी वहाँ झूठे सबूत हरगिज न दिये जाये।

मारपीटका यह कानून है कि पेट भरके मार खाने और मारनेके बाद दोनो लड़नेवाले ठडे पड जाते है और दूसरोकी सहायता लेने नही जाते। जिस जगह दोनो पक्षोने लड़नेका निश्चय किया हो वहाँ उन्हे पीछे बदला चुकानेका या औरोकी सहायता लेनेका विचार छोड़ देना चाहिए।

उन्हे एक मुहल्लेका झगड़ा दूसरे मुहल्लेमे न ले जाना चाहिए और स्त्रियो, बूढो, अपगो और बालकोपर तथा शान्त रहनेवाले लोगोपर हमला न करना चाहिए। यदि इतने नियमोका पालन होता रहेगा तो भी समझा जायेगा कि कुछ तो मर्यादा रखी गई है।

मुझे आशा है कि गुजरातके हिन्दू और मुसलमान सोचेंगे, समझेगे और शान्तिकी रक्षा करेगे। मुझे आशा है कि उमरेठमे दगा होनेका भय अकारण सिद्ध होगा और दोनो जातियाँ पहलेसे मिलकर अपने मतभेद मिटा लेगी।

डरकर भाग खडा होना, मन्दिर छोडकर चला जाना या बाजे बजाना बन्द कर देना या अपनी रक्षा न करना, यह धर्म नही है, मनुष्यता नही है, यह तो नामर्दी है। [अहिसा वीरताका लक्षण है — भीरु, डरपोक मनुष्य तो यह जान भी नही सकता कि अहिसा किस चिडियाका नाम है।]

दोनो कौमोंके सर्वसाधारण लोग समझदारीसे काम लेने लगे, हिम्मत रखना सीखें, जो डरते हैं वे डर छोड दें और जो डराते है वे डराना छोड दे — इसमे तो अभी समय लगेगा। इस बीच दोनों जातियोके समझदार लोगोको हर झगडेके मौकेपर पचायतके सिद्धान्तका पालन करनेका प्रयत्न करना चाहिए। समझदार वर्गकी

हालत नाजुक है। परन्तु उसे चाहिए कि वह अपनी सारी शक्ति सर्व-साधारणको शान्त बनाये रखनेमें ही लगाये।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १४-९-१९२४

९८. असफलताके कारण

हम निर्धारित अवधिके भीतर स्वराज्य प्राप्त नही कर सकेंगे, इतना ही नही, बल्कि ऐसा लगता है कि हम जिस स्थितिको समाप्त करना चाहते थे वह स्थिति दिन-प्रतिदिन और अधिक जड पकडती जा रही है। हमें स्वराज्य तो नही मिला, उलटे अब हमें स्वराज्यसे डर लग रहा है। हिन्दू कहते है, हमें स्वराज्य नही चाहिए, मुसलमान कहते हैं, हमें स्वराज्य नही चाहिए और ब्राह्मणेतर कहते है, हमे स्वराज्य नही चाहिए, तब स्वराज्य चाहिए किसको? जो राष्ट्र स्वतन्त्रतासे डरता है वह क्या राष्ट्र हुआ? तथापि आज हमारी स्थिति कुछ ऐसी ही विचित्र हो गई है।

तो अब हम इसके कारणोपर विचार करे। यदि कोई मनुष्य बिना सोचे-समझे तेज दवा लेता है तो उसका परिणाम उलटा होता है। असहयोग भी तेज दवा है, इसलिए इसका परिणाम भी यही हुआ है। इसका उपयोग असावधानीसे नही किया जा सकता। यदि इसका उपयोग करनेमें कोई भूल हो जाये तो गम्भीर हानि हो सकती है। पुत्र पितासे, पत्नी पतिसे और प्रजा राजासे सामान्य रूपसे तो सहयोग ही करते है। दोनोके बीच प्रेमभाव होता है। लेकिन कभी-कभी ऐसे प्रसग भी आ जाते है जब दोनोमे परस्पर असहयोग होता है और वह होना भी चाहिए। यदि वह असहयोग द्वेषपूर्ण हो तो त्याज्य है, पाप-रूप है। पिता-पुत्रके बीच वैर नही हो सकता। लेकिन अगर वैर हो जाता है तो वह सामान्य वैरसे भयकर होता है। अग्रेज और जर्मन चचेरे भाई हैं, लेकिन जब वे परस्पर लड पडे तब एक तो तबाह हो गया। हमने ऐसे हिंसात्मक असहयोगको त्याज्य माना और इसलिए अपने असहयोगको 'शान्तिपूर्ण' असहयोग कहा और यह विशेषण जोडकर उसके स्वरूपको बिलकुल ही बदल डाला। हमारे शान्तिपूर्ण असहयोगको विनाशक नही बल्कि रचनात्मक होना चाहिए था। प्रेमकी लड़ाईमें से विष नही निकलना चाहिए। हम तो अग्रेजोंके साथ भी सारा वैर मिटाकर उन्हे मित्र बनाना चाहते थे, लेकिन वैसा नही हो सका। हमारे असहयोगमें "शान्तिपूर्ण" विशेषण गौण होकर रह गया। हमारा असहयोग असमर्थ लोगोका असहयोग सिद्ध हुआ। तिसपर भी इसके कई सुन्दर परिणाम निकले। हममे उत्साह बढा, जनताको अपनी सत्ताका भान हुआ और ऐसा भी लगा कि एक अमोघ शस्त्र हमारे हाथ आ गया, लेकिन हमे उसका पूरा-पूरा उपयोग करना नही आया।

इसलिए हम पीछे हटे। इसमें ऊपर-ऊपरसे प्रेमका रग-मात्र चढा हुआ था; वह उड गया, असहयोग रह गया और हम सरकारके विरुद्ध पूरी तरह सफल न हो

सके। इसलिए अब आपसमें ही एक-दूसरेसे असहयोग करने लग गये। हाथसे निकला शस्त्र कदापि वापस नही आता, अत उसने हमारा ही सहार करना आरम्भ कर दिया। हिन्दुओ और मुसलमानो तथा स्वराज्यवादियो और अपरिवर्तनवादियोने परस्पर असहयोग आरम्भ कर दिया। दोनोके असहयोगमे शान्तिके स्थानपर अशान्ति और प्रेमके स्थानपर वैर है। दोनोके दिलोमे एक-दूसरेके प्रति अविश्वास है, द्वेष है। ऐसी स्थितिमे शुद्ध प्रेमको सबल हथियार माननेवाले लोगोको क्या करना चाहिए। ऐसी स्थितिमे मेरे-जैसे अहिसावादी होनेका दावा करनेवाले लोगोका धर्म क्या है? मैं स्वराज्यवादियोसे लडनेमे सबसे आगे हूँ। उनकी विधान-परिषदोमे जानेकी नीति मुझे तनिक भी पसन्द नही आई। इसलिए अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीमे मैंने उनका डटकर विरोध किया, लेकिन अन्तमे हार मान ली। मगर मैंने फिर लडनेका इरादा जाहिर किया। मैंने यह मान लिया कि जब दोनो पक्ष मेरे शुभ उद्देश्यको जान जायेंगे तब वे फिर अपने-अपने कार्यमे निरत हो एक-दूसरेकी मदद करने लगेंगे। लेकिन मेरा यह अनुमान गलत सिद्ध हुआ है। दोनोके मन अशान्त हैं। बेलगाँवमे बहुमतके बलपर काग्रेसपर कब्जा करनेकी तैयारियाँ की जा रही हैं। यह प्रेमकी निशानी नही है। जहाँ सैद्धान्तिक मतभेद हो, वहाँ बहुमतकी पद्धति काम नही देती। जहाँ दोनो पक्षोमे अविश्वास आ जाता है, वहाँ वह दोनोके बीच कटुताको बढाता है। जहाँ मतदाता केवल अन्ध-श्रद्धासे ही मत देते हो और अपनी बुद्धिसे काम न लेते हो, वहाँ उन्हे सच्ची शिक्षा नही मिलती; अपितु उनका पतन होता है। जहाँ मतदाता भोले-भाले लोग होते हैं और सूक्ष्म बातोको नही समझते वहाँ बहुमतकी पद्धति उनके नाशका कारण भी बन जाती है।

यह जानते हुए मैं काग्रेसमे बहुमतके सिद्धान्तसे निर्णय कैसे करवा सकता हूँ? जो प्रतिनिधि आयेंगे वे गुण और दोषकी जाँच न करके, भाषणकर्त्ताओका मुँह देखकर ही मत देंगे।

ऐसी स्थितिमे मुझे अपने अहिंसा-धर्मपर दृढ रहकर लोगोके सामने प्रेमका पदार्थ-पाठ प्रस्तुत करना चाहिए। मैं काग्रेसका कारोबार अपने हाथोमे रखनेके मोहमे नही पड सकता। यदि मैं विनम्रतापूर्वक दलीले देकर स्वराज्यवादियोको नही समझा सकता तो मुझे सिर झुकाकर काग्रेससे अलग हो जाना चाहिए। [अहिसावादी की पराजयमे भी उसकी जय ही होती है।] अहिंसावादी सत्ताके लिए कदापि नही जूझेगा। अहिंसावादी अपने सिद्धान्तका प्रचार भी बहुमतके बलपर नही बल्कि आत्मबलसे करता है। उसे पूरा विश्वास होता है कि यदि उसकी अहिसा सच्ची होगी तो वह अकेला रहनेके बावजूद अन्तमें विजय प्राप्त करेगा अर्थात् यदि वह मृत्युपर्यन्त अपने सिद्धान्तका अनुसरण करता रहेगा तो अन्तमे उसके सिद्धान्तकी जीत अवश्य होगी। देहधारियोमे सिद्धान्तका प्रचार करनेके लिए यही एक रास्ता है कि कोई उस सिद्धान्तको अपने जीवनमे मूर्तिमान करे। कहनेका तात्पर्य यह है कि सिद्धान्तके लिए किसी-न-किसीको तो अपने जीवनकी भेट देनेकी तैयारी रखनी ही चाहिए। अत मैंने निश्चय कर लिया है कि मैं सिद्धान्तकी खातिर तो स्वराज्यवादियोके साथ बहुमतकी

लडाईमे नही उतरूँगा और जो लोग शान्तिपूर्ण असहयोगके पक्षमे है, उन्हे भी मै यही सलाह देता हूँ। हमारे बीच जो गहरी दरार पड गई है, वह ऐसा करनेसे ही पट सकेगी। मै तो केवल स्वराज्यवादियोको ही नही वरन् सब पक्षोको काग्रेसमे भाग लेते हुए देखना चाहता हूँ। सरकारके विरुद्ध हमारा असहयोग तो तभी चमकेगा जब जनताका बडा हिस्सा आपसमे हार्दिक सहयोग करेगा।

तब क्या कोई ऐसा कार्यक्रम है, जिसके सम्बन्धमे सभी पक्ष एकमत हो सके? यह कार्यक्रम जनताके लिए आवश्यक होना चाहिए। मेरी दृष्टिसे ऐसे कार्यक्रममे तीन बाते आती है, खादी, हिन्दू-मुस्लिम एकता और हिन्दुओके लिए अस्पृश्यता-निवारण।

ये तीनो बाते ऐसी है जिनमे से यदि कोई एक भी असिद्ध रह जाये तो मै स्वराज्य असम्भव मानता हूँ। अत मेरे सुझाव ये है.

१. काग्रेस एक वर्षके लिए पाँच बहिष्कारोमे से चारको मुल्तवी रखे और केवल विदेशी कपडेका बहिष्कार कायम रखे। कपडेके अलावा ब्रिटेनके दूसरे मालका बहिष्कार भी वह रद कर दे।

२ काग्रेस उपर्युक्त तीन कार्योके अलावा मौजूदा राष्ट्रीय पाठशालाओको चलाये और यदि सम्भव हो तो नई पाठशालाओकी स्थापना करे। वह इनके अलावा किसी दूसरे काममे न पडे।

३ स्वराज्यवादी और दूसरे दल इस कार्यक्रमके बाहर जो काम करें उनमे काग्रेस न तो उनकी मदद करे और न कोई विघ्न डाले।

४ काग्रेसकी कार्यकारिणी-समितियो आदिमे काग्रेसमे शामिल किसी भी दलके लोगोके चुने जा सकनेकी छूट होनी चाहिए।

५ काग्रेसका सदस्य बननेके लिए चार आना चन्दा देनेकी शर्त हटा दी जानी चाहिए और उसके बदले प्रत्येक सदस्यके लिए प्रति मास अपने हाथका कता २,००० गज सूत देने और प्रतिदिन आधा घटा सूत कातनेकी शर्त होनी चाहिए। सब सदस्य शुद्ध खादी पहननेवाले होने चाहिए।

इनमे पाँचवे सुझावके अलावा किसी और सुझावके बारेमे कोई मतभेद नही हो सकता। यदि हम विदेशी कपडेके बहिष्कारको तुरन्त पूरा करना चाहते है तो मै पाँचवे सुझावको आवश्यक मानता हूँ। खादीका प्रचार अपेक्षाकृत कम होनेके मुख्य कारण निम्नलिखित है

१ आलस्य,

२ [चरखेके सम्बन्धमे] दक्षताका अभाव,

३. गरीबोके दु खके प्रति उपेक्षा-भाव।

जिन्हे बहुत ज्यादा काम हो, उन लोगोके बारेमे भी ऐसा नही कहा जाता कि वे देशके लिए प्रतिदिन आधे घटेका समय नही निकाल सकते। हमे जो व्यर्थ ही समय खोनेकी आदत पड गई है, उसे कमसे-कम काग्रेसमे शामिल होनेवाले लोगोको त्याग ही देना चाहिए। चरखेके काममे दक्ष न होनेसे हम चरखेका प्रचार नही कर सकते।

इस कामके लिए अभी हमे बहुत थोडे लोग मिलते है। लेकिन पाँचवे सुझावपर अमल करनेसे अवश्य ही हजारों स्त्री-पुरुष चरखा-शास्त्रमे पारगत हो जायेंगे।

यदि हममे गरीबोके प्रति तनिक भी दया-भाव हो तो हम विदेशी कपडेको हाथ न लगाये और केवल हाथसे कती और बुनी खादीका ही उपयोग करे। नियमित रूपसे आधा घटा सूत कातनेसे गरीबोके साथ हमारा तादात्म्य निरन्तर बना रहता है और चूँकि ईश्वर हमेशा गरीबोमे वास करता है, इसलिए इसके द्वारा ईश्वरसे भी हमारा सम्बन्ध स्थापित होता है। हम स्वराज्यकी जितनी कामना अपने लिए करते है, उतनी ही कामना यदि गरीबोंके लिए भी करते हो तो चरखा चलाना काग्रेसमे शामिल होनेवाले प्रत्येक व्यक्तिका धर्म है। जब हजारो लोग चरखा चलाना अपना धर्म समझेगे और उसका पालन करेंगे तब गरीब लोग भी अपनी कमाईमे बढती करनेके लिए चरखा चलायेंगे। अनियमित रूपसे और अधूरे किये हुए बहुतसे कार्य निष्फल जाते हैं। केवल कातना ही एक ऐसा काम है जिसमे कोई हानि नही है। यह काम तो जितना कीजिए उतना ही फलदायी सिद्ध होता है। सूत तो जितना पाँच मिनटमे काता जा सकता है, उतनेको भी बेचा जा सकता है। लेकिन पाँच मिनटमे जितना कपड़ा बुना जा सकता है उतनेको नही बेचा जा सकता। यही बात पाँच मिनटमे धुनी रुईके साथ भी है। इसके अलावा यदि करोडो लोग बुनाई करे, तो सारे उत्पादनकी खपत नही हो सकती। जब करोडो लोग सूत कातेंगे, तभी जनताकी जरूरत पूरी होगी। यदि हजारो स्त्री-पुरुष धर्मार्थ सूत कातेंगे तो खादी महीन और सस्ती होगी। यदि ऐसा किया जाये तो छ मासके भीतर ही हमारे पास बारीक और अच्छा बटा सूत बडी मात्रामे इकट्ठा हो जाये।

इसपर कुछ लोग यह दलील दे सकते है कि यदि यह नियम रखा जायेगा कि केवल सूत कातनेवाले लोग ही काग्रेसमे शामिल हो तो काग्रेससे बहुतसे लोग निकल जायेंगे। तथ्य तो यह है कि आज भी हमारे रजिस्टरोमे बहुत कम लोगोके नाम है। गुजरातमे अन्य प्रान्तोकी अपेक्षा उनकी सख्या अधिक हो सकती है। लेकिन वहाँ भी बीस हजारसे कम सदस्य ही है। गुजरातमे ५० ताल्लुके है। इनमे से लगभग आधे ताल्लुकोमे ऐसा एक भी व्यक्ति नही है, जिसका नाम हमारे रजिस्टरोमे हो। मेरी मान्यता है कि अन्य प्रान्तोकी हालत इससे ज्यादा खराब है। इसके अलावा इन नामोका परिचय-मात्र दो अवसरोपर ही होता है। एक चार आना उगाहते समय और दूसरे मत लेते समय। उनसे काग्रेस कमेटियाँ अन्य ठोस काम नही लेती। काग्रेसके रजिस्टरोमे हम जनताके सेवकोके नामोकी अपेक्षा रखते है। ऐसे सेवक ही काग्रेसको जनसस्थाका रूप दे सकते है। मान लीजिये कि हम कोई चन्दा लिए बिना अपने रजिस्टरोमे चार करोड नाम दर्ज कर ले। किन्तु उसका क्या उपयोग हो सकता है? लेकिन कल्पना कीजिए कि इसके बदले हमारे रजिस्टरोमे चार लाख कातने-वालोके नाम दर्ज हो तो इन चार लाख लोगोसे आध घटेके श्रमका और थोड़ी-सी रुईका दान लेकर काग्रेस जनताकी सेवा करनेवाली एक जोरदार सस्था बन सकती है। इन चार लाख लोगोका प्रतिमास काग्रेसके सम्पर्कमे आना कोई छोटी-मोटी बात

नही है। लेकिन प्रत्येक कातनेवालेके लिए घर बैठे-बैठे आध घटे श्रम करना और थोडी-सी रुई दान देना अवश्य ही बहुत आसान और मामूली बात है। इस तरह बहुत-से लोगोके अल्पश्रम और अल्पदानसे जनतामे ऐसी शक्ति आ सकती है, जिससे वह बडे-बडे काम कर दिखाये। इसीसे मै अपने सुझावको कीमती समझता हूँ। और इस बातको काग्रेस स्वीकार करे या न करे, लेकिन मेरी कामना यह अवश्य है कि गुजरात इसपर स्वेच्छासे अमल करने लगे। जो प्रान्त, जो ताल्लुका इसके अनुसार कार्य करेगा वह थोडे ही समयमे इस प्रवृत्तिके शुभ परिणामोको देख सकेगा।

तब क्या असहयोगियोका असहयोग बन्द ही हो जायेगा? ऐसी शका किसीको नही होनी चाहिए। असहयोगको माननेवाले असहयोगी तो अपने असहयोगको बढ़ायेगे ही, लेकिन वे अपने मतसे विरुद्ध मत रखनेवालोको भी अपने दिलोमे स्थान देगे। यह कोई नई बात नही है। मै शुरूसे ही यह बात समझाता आया हूँ। लोगोने इस बातको नही समझा इसीसे मै असहयोग आन्दोलन और बहिष्कारको मुल्तवी करके तथा सहयोगियोको अपने साथ मिलानेका सुझाव देकर प्रेमके सिद्धान्तपर अमल करना चाहता हूँ। अदालतोके बहिष्कारमे विश्वास रखनेवाले वकील बेशक वकालत न करें, किन्तु उन्हें वकालत करनेवाले वकीलोका काग्रेसमे आदरपूर्वक स्वागत करना चाहिए। बहिष्कारके मुल्तवी किये जानेका अर्थ ही यह है कि बहिष्कारवादीको सहयोगियोकी निन्दा करनेका कोई अधिकार नही रहा। यही बात कौंसिल-प्रवेशके लिए लागू होती है। काग्रेसमे कौसिल-प्रवेशके पक्षपातियो और विरोधियो, दोनोको एक-सा स्थान और एक-सा अधिकार होगा। उन्हे बाँधनेवाली उपर्युक्त चार बातें होगी। यह सच है कि काग्रेसमे विदेशी अथवा मिलके कपडे पहननेवालोके लिए कोई स्थान नही होगा। जो इस कपडेका व्यापार करता है अथवा किसी मिलका मालिक है, वह भी काग्रेसमें आ सकता है, लेकिन उसे स्वय खादी पहनकर खादीकी महिमा स्वीकार करनी होगी, गरीबोके साथ सहयोग करना होगा और चरखेके प्रचारमें मदद देनी होगी। विदेशी कपड़ेका बहिष्कार जनतन्त्रका शाश्वत अग होगा; इसलिए यदि उसपर जोर न दिया जायेगा तो स्वराज्य मिलना असम्भव हो जायेगा। हमारी अपनी मिलोके कपडेका बहिष्कार सदाके लिए नही है; लेकिन हमारे मनसे इस कपड़ेका मोह जाना चाहिए और खादीको प्रधान पद मिलना चाहिए। इसलिए जबतक खादी और चरखेका व्यापक प्रचार नही होता तबतक काग्रेसके लिए मिलका कपडा भी त्याज्य होना चाहिए, इस बारेमे मुझे तनिक भी सन्देह नही है।

लेकिन अगर मेरे इन विचारोको भी स्वराज्यवादी स्वीकार न करे तो मेरा उत्तर सीधा-सादा है। तब भी मुझे लडकर काग्रेसपर अधिकार प्राप्त नही करना है।

यदि मै उन्हे इतनी-सी बात भी नही समझा सकता तो स्वराज्यवादी काग्रेसपर भले अधिकार कर लें। मै उन्हे इस कार्यमें मदद दूंगा और अन्य लोगोको भी मदद देनेके लिए प्रेरित करूँगा। मै खादी-प्रचारके बिना हिन्दुस्तानके दारिद्र्यका कोई उपचार नही देखता। इससे इस वस्तुका त्याग मेरे और सब भारतीयोके लिए दु खद होना चाहिए। यदि स्वराज्यवादियोको यह कार्य भी पसन्द न आये तो मै

झुककर उन्हे मार्ग दूंगा और खादीके प्रचारके लिए ऐसे साधनोकी खोज करूँगा जो काग्रेसके मार्गमे बाधक नही होगे। इस घरसे वैमनस्यको मिटानेमे अपनी समस्त शक्तिका उपयोग करनेकी मेरी प्रतिज्ञा अडिग है, क्योकि इससे हिन्दू-मुस्लिम वैमनस्य भी दूर होगा। लेकिन क्या गुजरात ऐसा कुछ नही कर सकता कि मैंने खादीके प्रचार और उपयोगके बारेमे जो बाते कही हैं, कोई भी मनुष्यका उनका विरोध न करे। यदि गुजरातको खादीमे श्रद्धा हो तो वह इसे व्यापक करे। प्रभु उसे इस कार्यमे सहायता दे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १४-९-१९२४

९९. टिप्पणियाँ

कातनेवालोंको निर्देश

अखिल भारतीय खादी बोर्ड द्वारा नियुक्त सूत-परीक्षककी ओरसे निम्न निर्देश मिले हैं। ये निर्देश प्रत्येक कातनेवालेको ध्यानमे रखने चाहिए[1]

इसका तात्पर्य यह है कि महीन सूत कातनेवालोको सूतकी परीक्षा किये विना महीन सूत कातनेका प्रयास नही करना चाहिए। यदि महीन सूत कच्चा रह जाये तो बिलकुल व्यर्थ हो जाता है। इसके सिवा यदि रुई लम्बे रेशेकी न हो अथवा उसकी पूनियाँ बनानेमे खास होशियारी न बरती गई हो तो महीन सूत कातनेका लोभ छोड देना चाहिए। ३० अकतक का सूत महीन सूत नही गिना जाता। यदि सूत २० से ३० अकतक का हो तो हम बहुत-सी रुई बचा सकते है और साडियाँ और धोतियाँ आदि, जो बहुत वजनदार होती हैं, हल्की और सस्ती बना सकते हैं।

काठियावाड़ियोंसे क्षमा-याचना

मेरे पास जब कातनेवालोकी सूची आई तब मुझे काठियावाडियोका नाम कही भी दिखाई नही दिया। इससे मुझे दुःख हुआ और मैंने टीका की कि काठियावाडसे सूत बिलकुल नही आया है। दूसरे हफ्ते मेरे पास भूल-सुधारकी सूचना आई, जिसमे बताया गया था कि काठियावाडके १३ नाम तो अवश्य थे, लेकिन वे प्रान्तीय कमेटीकी सूचीमे जुड गये थे। मुझे यह भूल-सुधार प्रकाशित करनी थी, लेकिन मेरी यात्राके कारण यह नही हो पाया। सौभाग्यसे अब मेरे पास नये आँकडे आये है। उनके अनुसार काठियावाडके ६३ नाम है और कच्छके तीन नाम। इतने आँकडे प्राप्त हुए है इसलिए मै और अधिककी आशा करता हूँ और काठियावाड और कच्छसे क्षमा माँगता हूँ। काठियावाडकी आबादी २६ लाख कही जाती है और महागुजरातकी ९२ लाख है, अत काठियावाडका हिस्सा कमसे-कम एक चौथाई होना चाहिए। इसके बजाय काठियावाडसे ६३ लोगोने और कच्छसे केवल तीन लोगोने सूत भेजा है। यह

१. ये यहाँ नहीं दिये गये हैं

अधिक नही कहा जा सकता। उसमे मढडा आश्रमके २२, भावनगरके १७, राजकोटके १५ और अमरेलीके ५ नाम है। शायद इन आँकडोमे भी सुधारकी गुजाइश हो, लेकिन अब इसी सूचीमे और ज्यादा स्थानोके जुडनेकी सम्भावना नही है। काठियावाडके पास ऐसे साधन है कि यदि वह चाहे तो कातनेमे पहला स्थान प्राप्त कर सकता है। इसके बावजूद इतना कम सूत मिला है, इससे पता चलता है कि अन्य प्रान्तोकी भाँति काठियावाडमे भी व्यवस्थाका अभाव है। धर्मार्थ कातनेवाले अधिक लोग नही मिल सकते, मैं यह बात नही मानता। जिन्होने सूत भेजा है यदि वे लोग अधिक उद्योग करे तो कातनेवालोकी सख्यामे बहुत वृद्धि हो सकती है।

प्रचार कैसे करे?

यदि हम स्वेच्छासे सूत कातनेकी प्रवृत्तिको व्यापक करना चाहते है तो उसके लिए हमे कार्य-कुशलता और लगनकी आवश्यकता पडेगी। सूरतके एक धनिक परिवारके एक नवयुवक भाई रतनलाल खाडवालाने लोकमान्य तिलककी जयन्तीके अवसरपर एक मण्डलकी स्थापना की है। उसे स्थापित हुए अभी एक मास ही हुआ है। इसका कार्य चरखे, पूनियाँ तथा चरखेसे सम्बन्धित अन्य सामान मुहैया करना और चरखोकी मरम्मत करना आदि है। यह मण्डल सूत कातनेवालोके सूतको बुन भी देता है। जो लोग प्रति मास कमसे-कम तीन हजार गज सूत काते वे इस मण्डलके सदस्य बन सकते है। एक महीनेमे इसके २७ सदस्य बने है और इन्होने २,२७,५०० गज सूत काता है। उसके दो सदस्य बुनाईका काम भी जानते है और कपडा बुनते है। यदि ऐसे मण्डलोकी स्थापना स्थान-स्थानपर की जाये तो थोडे ही समयमे कताईका प्रचार घर-घर हो जाये। पूनियोकी कमी सब जगह देखनेमे आती है। छोटी धुनकीसे थोडी-सी रुई धुन लेना कोई मुश्किल काम नही है। यदि स्वेच्छासे कातनेवाले सावधानी रखे और अच्छी रुई चुने तो वे भी अच्छा महीन सूत कात सकते है। यह बात याद रखनी चाहिए कि एक सीमातक अर्थात् ३० अकतक महीन सूतके लिए कम रुईकी जरूरत होती है। और कम रुईका मतलब हुआ कम खर्च और कम धुनाई। इस तरह ३० अकतक का महीन सूत कातनेमे तिहरा लाभ है — कम रुई, कम मेहनत और कम वक्त। ऐसा समझना चाहिए कि जिस तरह कम रुई लगनेसे पैसा बचता है उसी तरह कम धुनाई होनेसे भी कम पैसा खर्च होता है।

बुनाईके कामसे कमाई

काठियावाडके एक भाईने, जिन्होने स्वेच्छा और देश-प्रेमसे प्ररित होकर बुनकरका धन्धा अपनाया है, अपनी कमाईके ऑकडे भेजे थे। वे बहुत सावधानीसे काम कर रहे है। अब पहलेके आँकडोमे सुधार होनेपर वे लिखते है।[1]

नौसिखियोको मुसीबते तो झेलनी ही पडती है। लेकिन अनुभवसे सुधार करते रहनेपर ज्यादा मेहनत किये बिना भी आयमे वृद्धि की जा सकती है, इस बारेमे

१. यह पत्र यहाँ नहीं दिया गया है। इसमें पत्र-लेखकने लिखा था कि यदि अच्छी किस्मका सूत मिले तो आयमें कमसे-कम डेढ़ गुनी वृद्धि हो जाती है।

मुझे तनिक भी शंका नहीं रही है। अनुभव हमारी छिपी शक्तियोंको प्रकाशमें लाता है और सोच-समझकर काम करनेसे समयकी बचत होती है। समयकी बचत धन ही है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १४-९-१९२४

१००. पत्र : एनी बेसेंटको

मार्फत 'कॉमरेड' कार्यालय
दिल्ली
१४ सितम्बर, १९२४

प्रिय डा० बेसेंट,

आपके पत्र और हमारी बातचीतके सम्बन्धमें आपकी टिप्पणीके लिए मैं सदैव आभारी रहूँगा। आपका पत्र आनेपर मैंने आपको तार भेजा था कि 'यंग इंडिया' पहले ही प्रकाशित हो चुका है। इसलिए मैं अब वह टिप्पणी एसोसिएटेड प्रेसको दे रहा हूँ। स्वराज्यवादियोंकी ओरसे अभी मुझे कोई उत्तर नहीं मिला है। इसलिए यह कहना मुश्किल है कि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी इस मामलेमें क्या कहेगी। फिर भी आगे जो-कुछ होगा, उसकी सूचना आपको देता रहूँगा।

आप जब भी चाहेंगी, मैं अपने लड़केको तुरन्त अड्यार भेज दूँगा। आपको कताई सिखाना वह अपना सौभाग्य मानेगा।

हृदयसे आपका,

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।

सौजन्य : नारायण देसाई

१०१. पत्र : आनन्दानन्दको

रविवार [१४ सितम्बर, १९२४ या उसके पश्चात्][1]

भाईश्री ५ आनन्दानन्द,

शाह नामके एक सज्जनने 'यग इडिया' और 'नवजीवन' के चन्देकी टीका करते हुए पत्र लिखा था। यह पत्र मैंने तुम्हारे उत्तरके लिए भेजा था। उत्तर मुझे अभीतक नहीं मिला है। अब भेज देना।

मैं आज ८ नहीं, बल्कि ९ गैलियाँ भेज रहा हूँ। तुम पूरी तेजीसे छाप रहे हो, परन्तु लिखित सामग्रीके समाप्त होनेपर तो मैं तुम्हे बहुत कम सामग्री भेज पाऊँगा। लगता है कि मुझे आश्रममें आनेके बाद ही [लिखनेका] अवकाश मिल पायेगा। मैं प्रूफ संशोधित करके तो तुम्हे भेज दूँगा; लेकिन बादमे मैं बहुत कम सामग्री दे सकूँगा, इस बातका ध्यान रखना।

मैंने मुहम्मद अलीसे टाइप और अन्य बातोके बारेमे बातचीत की है। उनका कहना है कि अभी तो जैसा चलता है वैसा ही चलने दिया जाये। मेरा ख्याल है, हमें इस सम्बन्धमे और कुछ नही कहना चाहिए।

व्यावसायिक पत्र-व्यवहार तो अच्छी तरह सँभाल कर रखते ही होगे। यदि तुम्हे मुश्किल महसूस हो रही हो तो बताना।

मुझे लगता है कि हमारा व्यावसायिक व्यवहार अब और भी बढ़ेगा। अवन्तिकाबाईका कहना है कि वे 'यग इडिया' के लेख और अनुवाद जब [बॉम्बे-] 'क्रॉनिकल' और 'नवाकाल' में पढ लेती है, 'यग इडिया' उन्हे उसके बाद मिलता है। ऐसा क्यों?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (जी०एन० ७७५५) की फोटो-नकलसे।

१. पत्रमें मुहम्मद अलीसे टाइप और अन्य चीजोंके बारेमें बातचीत करनेकी जो चर्चा है उससे अनुमान होता है कि यह पत्र १९२४ में दिल्लीसे लिखा गया होगा। देखिए "पत्र: आनन्दानन्दको", ८-९-१९२४।

१०२. तार : अब्दुल बारीको

[१४ सितम्बर, १९२४ के पश्चात्][1]

मौलाना अब्दुल बारी
फिरगी महल
लखनऊ

लखनऊ आनेके बारेमे हकीमजीसे सलाह की। हम इस नतीजेपर पहुँचे है कि मेरे लिए इस समय दिल्ली छोडना मुनासिब नही। इसलिए सोचता हूँ दोनो पक्षोके प्रतिनिधियोको यहाँ आ जाना चाहिए।

गांधी

अग्रेजी प्रति (एस०एन० १०४९२) की माइक्रोफिल्मसे।

१०३. टिप्पणी

[१५ सितम्बर, १९२४]

आधी रातका कतैया

मौलाना मुहम्मद अलीको अपनी प्रतिज्ञाका और अपनी जिम्मेदारीका कितना खयाल है, इसका अनुभव मुझे दिल्ली पहुँचते ही हुआ। १४ तारीखतक उनका २,००० गज सूत पूरा नही हुआ था। उसमे कोई ५०० गज सूत कातना बाकी था। इसलिए वे अपने दूसरे कामोको खतम करके आधी राततक सूत कातते रहे। यह भी सुना कि वे इस तरह रातमे अकसर कातते है। आज १५ तारीख है और उन्होने निश्चय किया है कि वे आज २,००० गज सूत पूरा कर देगे। यह टिप्पणी लिखते समयतक कुछ गज सूत कातना ही बाकी रह गया है। शामतक पूरा कर सकेगे या नही, यह सवाल नही। परन्तु ध्यान देने योग्य बात तो यह है कि उन्हे अपना काम पूरा करनेकी चिन्ता कितनी है। मौलाना साहबको अनुभवसे मालूम होगा कि यदि वे अपने कामोमे अधिक व्यवस्था रखेगे तो वे अवश्य बिना दिक्कत सूत कात सकेगे। कातनेके आग्रहमे से ही व्यवस्था उत्पन्न होगी। मनुष्य अपने सोचे हरएक काममे ज्यो-ज्यो अधिक व्यवस्था रखता है, त्यो-त्यो उसे अनुभव होता है कि वह पहलेसे ज्यादा काम करता है और बहुत बार तो उसका समय बच रहता है। व्यवस्थित आदमी दूना काम करते हुए भी दूसरे काम लेनेके लिए तैयार रह सकता

१. गाधीजीके दिल्लीमें ठहरनेके उल्लेखसे। गाधीजी १४ सितम्बर, १९२४ को दिल्ली पहुँचे थे।

है। अव्यवस्थित आदमीका काम कभी पूरा नही होता। मुझे निश्चय है कि कातनेकी नियमित क्रियासे हर कतैया व्यवस्थित बनेगा और उसका समय बचेगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २१-९-१९२४

१०४. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको[1]

१५ सितम्बर, १९२४

प्रिय जवाहरलाल,

दिलको छू लेनेवाला तुम्हारा निजी पत्र मिला। मैं चाहता हूँ कि इन सब चीजोको तुम बहादुरीके साथ झेल लोगे। अभी तो पिताजी चिढे हुए है और मैं बिलकुल नही चाहता कि तुम या मैं उनकी झुझलाहट बढनेका जरा भी मौका दे। सम्भव हो तो उनसे जी खोलकर बातें कर लो और ऐसा कोई काम न करो, जिससे वे नाराज हो। उन्हे दुखी देखकर मुझे दु:ख होता है। उनकी चिढ जानेकी प्रवृत्तिसे साफ जाहिर है कि वे दु:खी हैं। हसरत आज यहाँ आये थे। उनसे पता चला कि मेरे इस प्रस्तावसे भी उन्हे परेशानी होती है कि हर काग्रेसीको कताई करनी चाहिए। सचमुच मेरा मन होता है कि काग्रेससे हट जाऊँ और तीनो काम चुपचाप करने लगूं। उनमे जितने भी सच्चे स्त्री-पुरुष हमे मिल सकते है, उन सबके खपनेकी गुजाइश है। लेकिन इससे भी लोगोको परेशानी होती है। पूनाके स्वराज्यवादियोसे मेरी बातचीत काफी देरतक हुई। वे कातनेको भी राजी नही है और मेरे काग्रेस छोड देनेसे भी सहमत नही है। उनकी समझमे यह नही आता कि ज्यो-ही मैं, 'मैं' नही रहूँगा मेरा कोई उपयोग नही रह जायेगा। यह स्थिति बडी बुरी है, मगर मैं निराश नही हूँ। मेरा ईश्वरपर विश्वास है। मैं तो इतना ही जानता हूँ कि इस घडी मेरा क्या धर्म है। इससे आगेकी बात मुझे मालूम नही। फिर मैं क्यो चिन्ता करूँ।

क्या तुम्हारे लिए कुछ रुपयेका बन्दोबस्त करूँ? तुम कुछ कमाईका काम हाथमे क्यो न ले लो? आखिर तो तुम्हे अपने ही पसीनेकी कमाईपर गुजर करनी चाहिए, भले ही तुम पिताजीके घरमे रहो। कुछ समाचारपत्रोके सवाददाता बनोगे या अध्यापकी करोगे?

हृदयसे तुम्हारा,

मो० क० गांधी

[अग्रेजीसे]

ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स

१. जवाहरलाल नेहरूने इसके सम्बन्धमें लिखा था: "मैंने गांधीजीको यह लिखा था कि खर्चेकी दृष्टिसे पिताजीके ऊपर भार बनना मुझे ठीक नहीं लग रहा है और मैं अपने पैरोंपर खडा होना चाहता हूँ। मुश्किल यह थी कि मैं काग्रेसका पूरे समय काम करनेवाला कार्यकर्ता था। मेरे पिताजीने जब यह सुना तो बड़े नाराज हुए।"

१०५. पत्र : चक्रवर्ती राजगोपालाचारीको

मार्फत ' मौलाना मुहम्मद अली
'कॉमरेड' कार्यालय
दिल्ली
१५ सितम्बर, १९२४

प्रिय राजगोपालाचारी,

आपका पत्र पढा, तभीसे मै लगातार आपके बारेमे सोचता रहा हूँ। यह कैसी बात है कि मेरे उठाये गये कदमकी आवश्यकताको आप उतनी स्पष्टतासे नही देखते जितनी कि मै देखता हूँ? मै आपकी यह बात मानता हूँ कि अगर हम अपना कार्यक्रम चालू नही करा सकते तो काग्रेसको छोड देना ही ज्यादा अच्छा रहेगा। कठिनाई यह है कि इसे छोडा कैसे जाये। मुझे तो बार-बार यही लगता है कि हमे स्वराज्यवादियोको अटपटी स्थितिमे नही डालना चाहिए। वे एक ऐसी जरूरत पूरी कर रहे है जिसे महसूस किया जा रहा है। वे छोटी-मोटी राहते चाहनेवाले एक बहुत बड़े जन-समुदायका प्रतिनिधित्व तो करते ही है। क्या हम इसमे अडचन पैदा करेगे? हमारी प्रवृत्ति मुख्यत आध्यात्मिक है। इसकी शक्ति अप्रत्यक्ष रूपसे बढती है और महज बहस-मुबाहिसो या मतदान करानेसे नही बढती। अभी भी मै अपनी बातको पूरी स्पष्टतासे व्यक्त नही कर पा रहा हूँ। यह तो मैने जो रास्ता अपनाया है और अपने सब लोगोको जिसे अपनानेकी सलाह दी है, उसके पक्षमे दी जा सकनेवाली कई दलीलोमे से सिर्फ एक ही दलील पेश की है। जैसे भी हो, मुझे तो यही लगता है कि मैने बिलकुल सही कदम उठाया है, यद्यपि मै आपको उसके सही होनेका इस प्रकार यकीन नही दिला सकता कि आप सन्तुष्ट हो जाये। मै जानता हूँ कि आपके और दूसरे लोगोके लिए अपने-आपको इन आकस्मिक परिवर्तनोके अनुकूल ढाल लेना कितना मुश्किल होगा। लेकिन मै करूँ भी तो क्या? मै जानता हूँ कि मै अपने साथियोकी निष्ठा और आस्थापर अनुचित दबाव डाल रहा हूँ। परन्तु अपनी अन्तरात्माकी बिलकुल स्पष्ट आवाजको दबा देनेकी अपेक्षा क्या यह ज्यादा अच्छा नही है कि मै यह कदम उठाऊँ? अगर मै एक बार भी अपनी इस सचेतक (अन्तरात्माकी) आवाजको दबा दूँ तो फिर मै किस कामका रह जाऊँगा। लेकिन यह सब तो यो ही प्रसगवश लिख गया हूँ।[1]

[अग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य ' नारायण देसाई

१. साधन-सूत्रमें इसके आगे कोष्ठकमें यह वाक्य लिखा हुआ है, "पत्रके शेष भागमें दक्षिण भारतमें चलनेवाले बाढ-सहायता कार्यकी चर्चा है।"

१०६. भाषण : 'हिन्दुस्तान टाइम्स' दिल्लीके उद्घाटन-समारोहके अवसरपर

१५ सितम्बर, १९२४

श्री गांधीने प्रेसका उद्घाटन करते हुए कहा कि मैंने उद्घाटन करनेके लिए सरदार मंगलसिंहका आमन्त्रण बिलकुल निस्संकोच भावसे स्वीकार नहीं किया, क्योंकि मेरी अपनी पक्की राय है कि देशकी वर्तमान परिस्थितिको देखते हुए यदि मेरा बस चले तो मैं 'यंग इंडिया' के अलावा सभी समाचारपत्रोंको बन्द करा दूं। लेकिन सिखोंके प्रति अपने प्रेमके कारण मुझे यह आमन्त्रण स्वीकार करना पड़ा। आज सिखोंकी स्थिति बड़ी कठिन है और मैं आपसे सिर्फ इतना ही कहूँगा कि आप ईश्वरपर अडिग विश्वास रखें। मुझे विश्वास है कि इतनी अच्छी साइतमें शुरू किया जानेवाला यह समाचारपत्र इस दायित्वपूर्ण पेशेके योग्य सिद्ध होगा और इसका संचालन सचाई, नीति-कुशलता और निर्भयताके साथ किया जायेगा। यह एक धार्मिक अनुष्ठान है और मुझे आशा है कि ऐसा कोई काम नहीं किया जायेगा जिससे आपके महान् नारे — 'सत श्री अकाल' — की गरिमापर आँच आये। इस पत्रमें प्रकाशित प्रत्येक शब्द और वाक्य तुला हुआ होना चाहिए। इतना ही नहीं कि इसमें असत्य कथनको स्थान न दिया जाये, बल्कि ऐसी भी कोई चीज इसमें नहीं जानी चाहिए जो परोक्ष रूपमें भी असत्यको पनपानेमें सहायक हो या सत्यपर पर्दा डालती हो। आपका धर्म सत्य और बलिदानकी शिक्षा देता है और मुझे आशा है कि श्री के० एम० पणिक्करके सुयोग्य और प्रबुद्ध सम्पादन तथा सरदार मंगलसिंह-जैसे लोगोंके मार्ग-दर्शनमें यह पत्र इस शिक्षाको सिखों और भारतकी सेवाके लिए कार्य-रूपमें परिणत करेगा।[१]

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १७-९-१९२४

१. मशीन खराब हो जानेके कारण दरअसल हिन्दुस्तान टाइम्सका प्रकाशन एक सप्ताह बाद हो पाया था।

१०७. तार : जमनादास द्वारकादासको[1]

[१५ सितम्बर, १९२४ या उसके पश्चात्]

पत्र मिला। काग्रेसका लक्ष्य स्वराज्य कायम है। काग्रेसी सम्मेलनमे भाग लेगे। कताईको अत्यावश्यक मानता हूँ। लिख रहा हूँ।

गांधी

अंग्रजी प्रति (एस० एन० १०१७२) की फोटो-नकलसे।

१०८. सन्देश : लाहौरके 'हिन्दू'को

[१५ सितम्बर, १९२४ या उसके पश्चात्][2]

प्रिय लाला करमचन्द,

लीजिए मेरा सन्देश.

मैं आजकी परिस्थितिमे समाचारपत्रोकी सख्या बढ़ानेके विरुद्ध हूँ। ज्यादातर समाचारपत्र तो केवल परेशानी ही पैदा कर रहे है और हिन्दुओ और मुसलमानोके बीच तनाव बढा रहे है। आपका समाचारपत्र हिन्दुओका पत्र है। इसलिए अगर यह हिन्दुओ द्वारा मुसलमानोंकी खातिर अपने हरएक भौतिक हितके त्यागके सिद्धान्तको लेकर नही चलता तो कमसे-कम मै तो उसका स्वागत नही कर सकता।

मो० क० गांधी

[अग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।

सौजन्य : नारायण देसाई

१. यह जमनादास द्वारकादासके १५ सितम्बर, १९२४ के पत्रके उत्तरमें भेजा गया था।

२. महादेवभाईकी डायरी, खण्ड ६ में इस पत्रको चक्रवर्ती राजगोपालाचारीके नाम १५ सितम्बरके और मोतीलाल नेहरूके नाम १७ सितम्बरके पत्रोंके बीच स्थान दिया गया है।

१०९. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

भाद्रपद वदी ३ [१६ सितम्बर, १९२४][1]

भाईश्री वल्लभभाई,

मेरा निश्चय तो इस पत्रके पहुँचनेसे पहले ही आप जान लेंगे। आप सिंह है, इसलिए घबराये नही। अपना सोचा हुआ सब काम ज्यादा जोरोसे करते रहियें। किसीको घबराने न दें। मै उपवास यही पूरा करना चाहता हूँ। मुझे डर है मणिबहन बहुत घबरायेगी। उसे समझाइय। मै अलग पत्र नही लिख रहा हूँ।

बापू

भाईश्री वल्लभभाई पटेल, बैरिस्टर
अहमदाबाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो २ – सरदार वल्लभभाईने

११०. टिप्पणियाँ

[१७ सितम्बर, १९२४ से पूर्व][2]

किसी कांग्रेसीका सम्बन्ध नहीं

पाठकोको याद होगा कि 'सवर्ण महाजन सभा' के अध्यक्षने कांग्रेसियोपर लगभग उच्छृंखल आचरण करनेका आरोप लगाया था। अब मुझे तीन ऐसे पत्र मिले हैं, जिनमें इस आरोपको साफ-साफ अस्वीकार किया गया है। एक पत्र सभाके सयोजकोने भेजा है। उस पत्रके कुछ अश मैं नीचे दे रहा हूँ[3].

> हम यह स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि सभाका संचालन कांग्रेसके अनुयायियोके तत्त्वावधानमें नहीं हुआ था। यह मध्य त्रावणकोरके सवर्ण हिन्दुओकी सभा थी। इसका आयोजन चेंगनूरके सबसे प्रमुख-प्रतिष्ठित ब्राह्मण जमींदार, वंजीपुझाके प्रधानके कहनेपर कुछ प्रतिनिधि संयोजकोने किया था। इन

१. पत्रमें गांधीजीके निश्चयका उल्लेख है; यह निश्चय अनुमानतः हिन्दू-मुस्लिम एकताके लिए किये गये २१ दिनके उपवासका है, जो ता० १७की रातसे प्रारम्भ हुआ था।

२. अन्तमें दी गई सम्पादकीय टिप्पणीसे।

३. गांधीजी द्वारा मूल अंग्रेजीमें उद्धृत सभी अंश यहाँ नहीं दिये जा रहे हैं।

संयोजकोंमें से चार तो वहींके ब्राह्मण थे और शेष तीन नय्यर। इनमें से कोई भी कांग्रेसका अनुयायी नहीं था।

... ...

हम आपको सूचित कर देना चाहते हैं कि वाइकोम-सत्याग्रहके सम्बन्धमें त्रावणकोरमें आम तौरपर शुद्ध अहिंसाकी भावना व्याप्त है।

पत्रमे 'यग इडिया' मे उल्लिखित आरोपका पूरा और साँगोपाँग खण्डन किया गया है। लेकिन, चूंकि इस सभाका आयोजन स्पष्टत. काग्रेसियोने नही किया था और जनसाधारणको इस खण्डनकी तफसीलोमे कोई दिलचस्पी नही हो सकती, इसलिए बातको सक्षेपमें कहनेके लिए मैंने पत्रका अधिकाश छोड दिया है।

किसीके जरिये नहीं

एक सज्जनने लिखा है कि उनकी माँ कताईमे बहुत कुशल है और वे हर रोज लगभग २० तोला सूत कात लेती है। कताईके सम्बन्धमे प्रस्ताव पास होनेपर उन्होने अपनी माँसे कताई सिखानेको कहा। बेचारी माँसे कुछ कहते नही बना। उनका खयाल था कि उनका सूत कातना ही उनके परिवार-भरके लिए पर्याप्त है, विशेषकर इस कारण कि एक व्यक्तिसे एक महीनेमे जितना सूत कातनेकी अपेक्षा रखी जाती है उससे दुगुना तो वे हररोज कात लेती हैं। यदि इस प्रस्तावमे सिर्फ मात्राको ही उद्देश्य रखा गया होता तब तो उनकी दलीलका कोई जवाब नही था, लेकिन कुछ ऐसे कर्त्तव्य है जो अपनी एवजमे किसी दूसरेसे नही कराये जा सकते। हमारे बदलेमे कोई दूसरा नहा ले या पढ़ ले या प्रार्थना कर ले — ऐसा तो नही हो सकता। इसी तरह यह भी नही हो सकता है कि हमारे बदले कोई दूसरा व्यक्ति सूत काते, क्योकि यहाँ उद्देश्य तो यह है कि हरएक व्यक्ति खुद कताई करके गरीबोके साथ अपना तादात्म्य स्थापित करे। विचार यह है कि हर आदमी एक व्यक्तिगत उदाहरण प्रस्तुत करे और हमारा मन्तव्य यह है कि इस कलाको इतने लोग सीख ले कि इस सरल प्रणालीसे हम हाथके बने कपडेको मिलके बने कपडेके साथ स्पर्धा करने लायक सस्ता बना दे। उस नेक माताने अपने पुत्रके सूत कातनेपर जो आपत्ति की उसके पीछे नि सन्देह यही भाव रहा होगा कि कताई तो स्त्रियोका काम है। यह सही है कि आम तौरपर स्त्रियाँ ही यह काम करती हैं। इसमे भी कोई सन्देह नही कि कुछ ऐसे हलके-फुलके काम हैं, जिनके लिए स्त्रियाँ पुरुषोकी अपेक्षा अधिक उपयुक्त है। लेकिन, इसी कारण यह कहना कि ये काम पुरुषोकी शानके खिलाफ है या ये पुरुषोको स्त्रैण बना देते है, घोर अन्धविश्वासका द्योतक है। खाना पकाना मुख्यत. स्त्रियोका काम है, लेकिन हर सिपाहीके लिए न केवल खाना पकाना जानना जरूरी है, बल्कि जब वह ड्यूटीपर रहता है, उस समय उसे सचमुच अपना खाना आप ही पकाना पड़ता है। आज दुनियामे जो अच्छेसे-अच्छे पाक-कलाकुशल लोग है वे पुरुष ही है। स्त्रियाँ आदत अथवा स्वभावसे घरकी रानी होती है। उन्हे ऐसा नही बनाया गया है कि वे कोई बड़े पैमानेपर सगठनकी अपेक्षा रखनेवाला काम करे।

चूँकि वे, जो जैसा है, उसके उसी रूपसे सन्तुष्ट रहती है और उसे कायम रखना चाहती है, इसलिए उनमे आविष्कारकी प्रवृत्ति नही होती। इसके विपरीत, पुरुष वर्तमानसे असन्तुष्ट रहते है और उनका झुकाव अकसर तोड-फोडकी ओर रहता है, इसलिए उनमे आविष्कारकी प्रवृत्ति होती है। यह वात चाहे सर्वत्र लागू होती हो या नही, लेकिन इस तथ्यसे तो कोई इनकार नही कर सकता कि सभी वडे-वडे आविष्कार पुरुषोने ही किये है। हमारे कताई-कार्यका भी सगठन पुरुष कतैयोने ही किया है। उन्होने ही इस यन्त्रमें तमाम जरूरी सुधार किये है। तो हम चाहे जिस दृष्टिकोणसे देखें, जवतक कताईका इतना प्रचार नही हो जाता कि वह हमारे गाँव-गाँवमे पुन प्रतिष्ठित हो जाये और हम विदेशी कपडेका पूरा वहिष्कार कर सके, तवतक भारतमे हाथ-कताई जितनी जरूरी स्त्रियोके लिए है उतनी ही पुरुषोके लिए भी है।

(उपर्युक्त दोनो टिप्पणियाँ गाधीजीने उपवाससे पहले ही लिखी थी।)

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २५-९-१९२४

१११. जेलके अनुभव — ११ [चालू]

मेरा पठन [–३]

[१७ सितम्बर, १९२४से पूर्व][1]

एक प्रिय मित्रकी भेजी हुई एक छोटी-सी परन्तु मूल्यवान पुस्तकका भी उल्लेख करना मुझे भूलना नही चाहिए। यह पुस्तक है, जैकब बोहमन-कृत 'सुपरसेन्सुअल लाइफ' (अतीन्द्रिय जीवन) उसके कुछ आकर्षक उद्धरण पाठकोके सम्मुख रख रहा हूँ। ये मैने पुस्तकमे से उतार लिये थे।

> तेरी अपनी श्रवणेन्द्रिय और तेरी इच्छा ही तुझे प्रभुके श्रवण और दर्शनमें बाधक होती है।
>
> यदि तू प्राणियोपर अपने आन्तरिक स्वभावकी गहराईसे नहीं, केवल बाहर-से ही राज्य करता है, तो तेरी इच्छा, तेरा शासन पाशविक और जड़ है।
>
> तू वस्तु-मात्र जैसा है और ऐसी एक भी वस्तु नहीं जो तेरे जैसी न हो।
>
> यदि तुझे वस्तु-मात्र जैसा बनना हो तो तुझे तमाम वस्तुओका त्याग करना चाहिए।
>
> तेरे हाथ और तेरी बुद्धि भले ही काममें लगी रहे, परन्तु तेरा हृदय तो ईश्वरमें ही तल्लीन रहना चाहिए।

१. शीर्षकके अन्तमें दी गई सम्पादकीय टिप्पणीसे।

स्वर्गका अर्थ है, अपनी इच्छा-शक्तिको भगवानके प्रेमकी प्राप्तिमें नियोजित करना।

नरकका अर्थ है, भगवानका कोप मोल लेना।

अपनी बेतरतीब-सी नोट-बुकके पन्ने पलटते हुए, दूसरी पुस्तकोंके पठनके दौरान संगृहीत कुछ और उद्धरण भी यहाँ दे रहा हूँ।

उनमें से निम्नलिखित अंश सत्याग्रहियोंके कामका है:

जो द्वेष, उपहास और गालियोंके भयसे मौन धारण करके उस सत्यसे पीछे हट जाते हैं जिसका शोध और मनन उनका धर्म है, वे गुलाम हैं।

दो या तीन आदमियोंके साथ मिलकर जो सत्यकी हिमायत करनेका साहस न करे, वे गुलाम हैं। — लॉवेल ('टॉम ब्राउन्स स्कूल डेज' से)।

इसी विषयसे सम्बन्ध रखनेवाला एक और उद्धरण क्लॉड फील्डके 'मिस्टिक्स ऐंड सेंट्स ऑफ इस्लाम' से देता हूँ

जब शाहजहाँके क्रोधसे बचनेके लिए सूफी शाह मुल्लाशाहको भाग जानेकी सलाह दी गई, तो उन्होंने कहा, "मैं कोई पाखण्डी नहीं हूँ जो भागकर अपनी जान बचाऊँ। मैं एक सत्यवक्ता हूँ। मृत्यु और जीवन मेरे लिए समान हैं। मैं तो चाहूँगा कि अगले जन्ममें भी मैं अपने खूनसे सूलीको रंग दूँ। मैं अमर और अनश्वर हूँ; मृत्यु मुझसे भय खाती है, क्योंकि मेरे ज्ञानने मृत्युको जीत लिया है। मैं उस धामका निवासी हूँ जहाँ सब रंग मिटकर एक हो जाते हैं।" मन्सूरी हलाजने कहा है, "बँधे हुए व्यक्तिके हाथ काट देना आसान है, परन्तु मुझे भगवानसे जोड़नेवाले बन्धनको काटना सचमुच बड़ा ही कठिन काम है।"

एक और उद्धरण लॉवेलसे देता हूँ। यह दाताओंको मलाबारके पीड़ितोंके लिए उदात्त भावनासे अपनी अच्छीसे-अच्छी वस्तु देनेकी प्रेरणा प्रदान करे।

ईसाके पवित्र भोजनकी क्रिया करनेका अर्थ यह नहीं कि जो तंगीमें हो उसे केवल कुछ दे दिया जाये; उसका अर्थ यह है कि हमारे पास जो हो उसमें से उसे हिस्सा दिया जाये। दाताकी भावनाके बिना दान व्यर्थ है। दानके साथ जो अपना तन, मन भी देता है वह तीन आदमियोंका पोषण करता है — अपना, भूखे पड़ोसीका और मेरा भी।

अहिंसा धर्मके माननेवालोंको निम्नलिखित वाक्यसे बल मिलेगा:

"किसीका बुरा चाहना, बुरा करना, बुरा बोलना या बुरी कल्पना करना, सबके लिए समान और निरपवाद रूपमें निषिद्ध है।" टर्टुलियन — (जे० ब्रीअर्ली-कृत 'अवरसेल्वज ऐंड द यूनिवर्स' से)

अन्तिम पुस्तकें, जिनका मैं उल्लेख करना चाहता हूँ, कनिंघम-कृत मेकॉलिफ-कृत और गोकुलचन्द नारंग-कृत सिखोंके इतिहास हैं। ये सब पुस्तकें अपने-अपने ढंगकी अच्छी कृतियाँ हैं। सिखोंके पूर्व-इतिहास और उनके गुरुओंके जीवनको समझे

विना, सिखोकी मौजूदा लडाईका रहस्य समझना असम्भव है। कनिंघमकी पुस्तक सिख-युद्धोके मूल-कारणोका सहानुभूतिपूर्वक लिखा गया इतिहास है। मेकॉलिफके इतिहासमें सिख-गुरुओके जीवन-चरित्र हैं। इसमे उनकी रचनाओसे विस्तृत उद्धरण दिये गये हैं। यह पुस्तक वडे सुन्दर ढगसे छपी हुई है। परन्तु अंग्रेजी शासनकी वेहद तारीफ और सिख-धर्मको हिन्दू-धर्मसे सर्वथा भिन्न वतानेके आग्रहके कारण इस पुस्तकका महत्त्व घट जाता है। गोकुलचन्द नारगकी पुस्तक एक ऐसा प्रवन्ध है जिसमें ऐसी बहुत सी जानकारी है, जो ऊपरकी दोनो पुस्तकोमें नही मिलती।

जेलके अपने अध्ययनका व्यौरा पूरा करनेसे पहले मैं विद्यार्थी-पाठकोको नियमित रूपसे कार्य करनेकी उपयोगिता तथा शुष्क विषयोको रुचिकर बनानेके ढगके बारेमें दो शब्द कहना चाहूँगा। मेरा कुछ ऐसा इरादा था कि अपने ही अध्ययनके उपयोगके लिए 'गीता'की एक शब्दानुक्रमणिका तैयार कर लूं। शब्द और उनके सन्दर्भ लिखने और उनके दो-दो वार अनुक्रम तैयार करनेका काम बहुत रुचिकर नही होता। इस-लिए मैंने सोचा कि अपने कारावासके दौरान ही यह काम कर डालूं। फिर भी इस कामके लिए बहुत समय देना मुझे पसन्द नही था। मेरे कार्यक्रममे इसके लिए कोई समय नही था। इसलिए मैंने रोज केवल २० मिनट इस कामके लिए देनेका निश्चय किया। जब इस कामको इतने थोड़े समयतक करने लगा तो पहले जो मुझे यह अखरता था, वह स्थिति समाप्त हो गई। उलटे रोज मैं प्रतीक्षा करता रहता था कि उस कामका समय कब आता है। जब दुबारा उसकी अनुक्रमणिका बनानेका समय आया तब तो मैं उसमे तल्लीन ही होने लगा। जिन्हे इस बातमें जिज्ञासा हो वे स्वयं ही इसका प्रयोग करके इसका गुर समझ सकते हैं। जिन शब्दोका अनुक्रम मुझे तैयार करना था, उन्हे पहले तो मैंने उनके आद्याक्षरोके अनुसार इकट्ठा किया। परन्तु प्रत्येक अक्षरके अन्तर्गत शब्दोको उनके अक्षरानुक्रमके अनुसार कैसे बिठाया जाये, यह प्रश्न वडा पेचीदा हो गया है। मैंने कभी शब्द-कोष तैयार नही किया था। इसलिए मुझे स्वय ही इसका तरीका सोच निकालना था और जब मैंने यह तरीका निकाल लिया तो बड़ा खुश हुआ। यह तरीका इतना सुन्दर था कि वह काम बडा रुचिकर बन गया। तरीका बडा सुघड और अचूक था और इससे काम भी जल्दी निबट जाता था। यह सारा काम पूरा करनेमे मुझे अठारह मास लगे। आज इस शब्दानु-क्रमकी मददसे मैं तुरन्त जान सकता हूँ कि 'गीता'मे कोई शब्द कहाँ और कितनी वार प्रयोग किया गया है। शब्दोके साथ उनके अर्थ भी दिये गये हैं। यदि किसी समय मैं 'गीता'पर अपने विचार लिख पाया तो मैं यह शब्दानुक्रम और विचार दोनो जनताके सामने रखना चाहता हूँ।[1]

(इसे गाधीजीने उपवासके पहले लिखा था)

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २५-९-१९२४

१. यह कोष नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबादकी ओरसे गीता पदार्थ-कोषके नामसे गुजरातीमें प्रकाशित हुआ है। उसमें 'गीता'के प्रत्येक पदका उसके अर्थ-सहित स्थान निर्देश किया गया है।

११२. पत्र : मुहम्मद अलीको

बुधवार [१७ सितम्बर, १९२४][1]

प्यारे भाई,

मैं जानता हूँ कि मेरे फैसलेसे आपको सबसे ज्यादा दुःख पहुँचेगा। फिर भी मैं नही चाहता कि आप इस फैसलेसे पीछे हटनेकी सम्भावनाके बारेमे मुझसे कोई बात चलाये। यह तो मेरे और ईश्वरके बीचका मामला था। हाँ, इस फैसलेकी अच्छाई-बुराईके बारेमे आप जी-भरकर बहस कर सकते है। कृपया, इसे लेकर आँसू मत बहाये, वरना आप इसे मेरे लिए बरदाश्तसे बाहरकी चीज बना देगे। बल्कि आपको खुशी मनानी चाहिए कि ईश्वरने मुझे राह दिखाई है और इसपर चलनेकी शक्ति भी दी है। हमारे बीच जो मतभेद है उसे दूर करनेकी दिशामे मैं जो भी प्रगति करूँगा वह मेरे लिए भोजनसे कही ज्यादा पोषक होगी।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २३-९-१९२४

११३. मौन-दिवसकी टीप

बुधवार [१७ सितम्बर, १९२४]

. . . घर[2] पहुँचनेपर मैंने[3] महात्माजीपर हकीम साहब, डा० अन्सारी, शौकत तथा मुझ-जैसे कई साथियोंके साथ बेवफाई करनेका इल्जाम लगाना शुरू किया और जी भरकर अपने मनकी भड़ास निकाली। महात्माजीका मौन-व्रत खत्म नहीं हुआ था। इसलिए उन्होंने सिर्फ मुस्कराते हुए एक पर्चीपर इतना लिख दिया :

आपने जो-कुछ कहा, आपको यह सब, बल्कि इससे ज्यादा भी कहनेका हक है। पहले आपका दिमाग ठण्डा हो जाये, फिर मैं आपसे रात-भर बाते करूँगा। बस इतना याद रखिए कि कुछ ऐसी बाते है जिनमे खुदा और बन्देके बीच कोई तीसरा नही होता।

उससे कुछ ही देर पहले उनके एक साथीने मुझे एक पर्ची[4] दी थी, जो उन्होंने अपने हाथसे लिखी थी और जिसपर उर्दूमें उनके दस्तखत थे। . . .

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २३-९-१९२४

१. अपने हाथसे लिखे इस पत्रपर गांधीजीने उर्दूमें हस्ताक्षर किये थे। देखिए अगला शीर्षक।

२. मुहम्मद अलीके घर।

३. मुहम्मद अली।

४. देखिए पिछला शीर्षक।

११४. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

दिल्ली
१७ सितम्बर, १९२४

प्रियवर चार्ली,

मेरे निर्णयपर परेशान मत होना। हार्दिक प्रार्थना और ईश्वरसे यथासम्भव स्पष्ट संकेत मिलनेके बाद ही मैंने यह निर्णय किया है। प्रसंग ऐसा है कि कमसे-कम २१ दिनका उपवास तो मुझे करना ही चाहिए। आह! इस सबके कारण मुझे कितनी वेदना हुई है। हर दिन भारी सन्ताप सहना पड़ा है। किन्तु अब तो मेरे मनको शीघ्र ही शान्ति मिल जायेगी। मैं अपने कर्त्तव्यका स्पष्ट संकेत पानेके लिए व्याकुल था। प्रकाश विद्युत् गतिसे आया है। क्या कोई मनुष्य अपना जीवन देनेसे अधिक कुछ कर सकता है?

हार्दिक प्रेमके साथ,

तुम्हारा,
मोहन

श्री सी० एफ० एन्ड्रयूज
शान्तिनिकेतन
वरास्ता–बोलपुर
ई० आई० रेलवे

अंग्रेजी पत्र (जी० एन० २६१३) की फोटो-नकलसे।

११५. पत्र : मोतीलाल नेहरूको

दिल्ली
१७ सितम्बर, १९२४

प्रिय मोतीलालजी,

आपका तार मिला। कमसे-कम अभी कुछ दिन तो दिल्लीमे हूँ ही। इसलिए जब भी आप और श्री दास दिल्ली आये, मुझे आपसे मिलकर प्रसन्नता होगी। अब तो मैंने गोता लगा दिया है, जो आखिरी भी साबित हो सकता है। मेरा २१ दिनका उपवास आजसे प्रारम्भ है। मैंने धर्मको इसी रूपमे समझना सीखा है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य: नारायण देसाई

११६. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

भाद्रपद बदी ४ [१७ सितम्बर, १९२४][1]

कामके बारेमे तुम्हे महादेव लिखेगा। तुम्हे मेरे उपवाससे दु खी होनेकी बजाय प्रसन्न होना चाहिए। यदि कोई मनुष्य कष्ट उठाकर भी धर्मका पालन करता है तो उससे उसके स्नेही जनोको प्रसन्नता ही होनी चाहिए। यहाँ दौड आनेकी तुम्हे जरूरत नही है। अभी तो सब आयेगे। हाँ, अन्तिम सप्ताहमे जरूर आ जाना, यदि उस समय तारामतीकी तबीयत अच्छी हो तो।

[गुजरातीसे]

बापुनो प्रसादी

१. मथुरादास त्रिकमजीकी दी हुई तिथि।

११७. पत्र : वसुमती पण्डितको

भाद्रपद वदी ४ [१७ सितम्बर, १९२४][1]

चि० वसुमती,

तुम्हारा कार्ड मिला। कटिस्नान ठँडे पानीसे ही किया जाता है। उसका सामान्य स्नानसे कोई सम्बन्ध नही है। लेकिन यह भोजनके कमसे-कम तीन घटे वाद किया जाता है और इसके एक घटे वादतक कुछ नही खाया जाता। कटिस्नान करते समय पाँव और शरीरका ऊपरी भाग पानीके वाहर रहता है। पेडु पानीमें डूवा रहता है। उसको गीले कपड़ेसे रगडना चाहिए। तुमने मेरे उपवासका समाचार पढा होगा। यह उपवास २१ दिनका है, इसलिए इससे घवरानेकी तनिक भी आवश्यकता नही है। मेरे पास दौड आनेका विचार भी न करना। मेरा खयाल है कि २१ दिनका उपवास मुझे भारी नही पडेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ४५६) से।
सौजन्य . वसुमती पण्डित

११८. पत्र : रुक्मिणी गांधीको

वुधवार [१७ सितम्बर, १९२४][2]

चि० रुखी,

मैं तुम्हारे पत्रकी वाट ही जोह रहा था। सारा काम-काज करते हुए भी स्वास्थ्यका ध्यान रखना। यह बहुत जरूरी है कि वहाँ जवतक रहो तवतक तुम्हारा शरीर अच्छी तरह मजवूत हो जाये। संस्कृतको न भूलना। मोटी वा ठीक हो गई है, यह जानकर मुझे वहुत प्रसन्नता हुई। उनको मेरा प्रणाम कहना।

बापूके आशीर्वाद

चि० रुक्मिणी गाधी
मार्फत—श्री खुशालभाई गाधी
नवु परु, राजकोट

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू ६०९५) से।
सौजन्य . राधावहन चौधरी

१. पत्रमें गांधीजीके २१ दिनके उपवासके जिक्रसे स्पष्ट है कि यह १९२४ में लिखा गया था।
२. डाककी मुहरसे।

११९. पत्र : सी० एफ० एन्ड्र्यूजको

[१८ सितम्बर, १९२४ से पूर्व][1]

प्रिय चार्ली,

तुम्हारा पत्र और तार, दोनो मिले। तुम यात्रामे गुरुदेवका साथ नही दे रहे हो। आशा करता हूँ, इसका कारण तुम्हारी अस्वस्थता नही है, क्योकि अबतक तो तुम स्वस्थ हो ही गये होगे।

इस विषयमे जैसा मै महसूस करता हूँ, जबतक तुम भी वैसा ही महसूस न करने लगो, तबतक तुम्हे बहनके भेजे जुराब वगैरह स्वीकार करनेमे कोई हर्ज नही होना चाहिए। मगर इस सम्बन्धमे मेरा मत तो जैसा पहले था, वैसा ही अब भी है। गरीबो द्वारा बनाई चीजोका इस्तेमाल करके, उनके साथ तादात्म्य स्थापित करनेके स्पष्ट कर्त्तव्य-मे बहनके प्रेमोपहारको भी बाधक नही बनने दिया जा सकता। यहाँ सही निर्णयपर पहुँचनेका तरीका यह है सोचो कि यदि तुम्हारी ही तरह दस लाख दूसरे लोगोको भी ऐसे ही दस लाख प्रेमोपहार मिले तो क्या हम इस देशके गरीबोको अपने बीच उनके द्वारा बनाये कपडेको खपानेके अवसरसे वंचित नही करेगे? खैर, मै तुमको समझानेकी कोशिश क्यो करूँ? तुम अपनी बहनके भेजे कपडे स्वीकार करो और उनका इस्तेमाल करो, इससे तुम्हारे प्रति मेरा प्रेम कुछ कम तो नही हो जायेगा। मै नही चाहता कि तुम खुद जिस कामको जरूरी नही समझते, वह करो।

इसी प्रकार, तुम और मै यदि ऐसी सेवामे प्रवृत्त हो, जिसका सम्बन्ध हमारे पड़ोसीसे — निकट परिवेशसे — नही है, तो इस स्थितिको भी स्वीकार करनेके लिए अपने मनको मना सकनेमे मुझे कोई कठिनाई नही दीखती। मैंने सिद्धान्त बता दिया है। उसे मै बिलकुल सही ही मानता हूँ। जब ईसा मसीहने अपने सगे-सम्बन्धियोका "त्याग" किया था तो वास्तवमे उन्होने उनका त्याग नही किया था। उन्होने जो महत्तर सेवा की, उसमे उन सगे-सम्बन्धियोकी सेवा भी शामिल थी। लेकिन, इसके विपरीत, महावीरने अपनी माताकी आज्ञाका पालन करनेके लिए, जैसा कि हमे लग सकता है, महत्तर सेवासे मुँह मोड लिया था। किन्तु, दोनो ही सही थे। हम उनके कार्योके सम्बन्धमे कोई निर्णय नही दे सकते। लेकिन नियमको तो हमे स्वीकार करना ही पडेगा। किसी दूरस्थ कर्त्तव्यकी पुकारपर तुम अपने निकटस्थ कर्त्तव्यकी उपेक्षा नही कर सकते। अगर शान्तिनिकेतनको तुम्हारी आवश्यकता हो तो तुम सारे भारतको बचानेके कर्त्तव्यकी पुकारपर भी शान्तिनिकेतनको छोड नही सकते। सबको अपने-अपने कर्त्तव्य-स्थलपर डटे रहना है।

१. पत्रमें "बहनके प्रेमोपहार" के उल्लेख और "पत्र: सी० एफ० एन्ड्रयूजको", १८-९-१९२४ के आधारपर।

हार्दिक स्नेह सहित,

तुम्हारा,
मोहन

अंग्रेजी पत्र (जी० एन० २६३५) की फोटो-नकलसे।

१२०. टिप्पणियाँ

डा० एनी बेसेंटकी घोषणा

वर्तमान स्थितिके बारेमे डा० एनी बेसेंटकी घोषणाका मै स्वागत करता हूँ। मुझे आशा है कि पाठकगण भी मेरी ही तरह उसका स्वागत करेगे। मेरे लिए यह बडे महत्त्वकी बात है कि वे इस बातकी आवश्यकता महसूस करने लगी है कि राष्ट्र-कार्यके लिए हरएक कार्यकर्त्ताको सूत कातनेकी मिसाल पेश करनी चाहिए। डा० बेसेंटकी मिसालका कताई-आन्दोलनपर निश्चय ही बडा असर पडेगा। इन गुणी महिलाका इतनी उम्रमें अपनी व्यस्तताओके बावजूद आधा घटा कातनेपर राजी होना राष्ट्र-कार्यके प्रति उनकी निष्ठाका ज्वलन्त उदाहरण है।

कांग्रेसके सविधानके सम्बन्धमे स्पष्टत कुछ भ्रम पैदा हो गया है। सविधानको स्थगित करनेका तो कोई सवाल ही नही उठता। हाँ, यदि मेरा कातनेका प्रस्ताव मजूर कर लिया जायेगा तो उसमे कुछ सशोधन जरूर करना पडेगा। असहयोग-कार्यक्रम, जिसमे सविनय अवज्ञा भी आ जाती है, सविधानका अग तो है ही नही। यदि मेरे प्रस्ताव स्वीकार कर लिये जायेगे तो असहयोग-कार्यक्रम अवश्य ही एक सालके लिए स्थगित हो जायेगा। स्वराज्यकी योजना तैयार करनेमे मेरा योगदान यह रहेगा स्वराज्यकी योजना तैयार करनेके लिए विभिन्न दलोके किसी भी निर्दलीय सम्मेलनमे यदि जरूरत हुई तो मै अवश्य शरीक होऊँगा। बहुमतका निर्णय इस अर्थमे मेरे लिए बन्धनकारी होगा कि मै सिर्फ इस कारण असहयोग या सविनय अवज्ञाकी धमकी नही दूंगा कि बहुमत द्वारा स्वीकृत योजनासे मुझे सन्तोष नही है। और यदि बहुमतको अपने निर्णयसे सन्तोष हुआ तो इस कार्यके लिए निर्धारित वर्ष-भरकी अवधि खतम हो जानेपर भी मै ऐसी धमकी नही दूंगा, मै तो उसे सफल बनानेके लिए सरगर्मीसे कोशिश करूँगा। यदि उस योजनामे मेरी न्यूनतम अपेक्षा पूरी कर दी गई। यहाँ मै कांग्रेस-सविधानके विषयमे भी दो शब्द कहना चाहूँगा। मै देखता हूँ कि कुछ आलोचकोका कहना है कि मै ऐसा मानता हूँ कि कांग्रेसका वर्तमान सविधान सर्वथा असफल सिद्ध हुआ है। यदि उसे कांग्रेसके ही माप-दण्डसे मापा जाये तो वह जरूर कारामद नही हो पाया है। लेकिन मेरी रायमे गम्भीरतासे सोचनेपर इस बातसे कोई भी इनकार नही कर सकता कि भारतमें जितनी भी सस्थाएँ है, उनमे कांग्रेस अब भी सबसे अधिक राष्ट्रीय और प्रातिनिधिक है। आज भी उसके बुनियादी सदस्योकी सख्या सबसे बडी है और किसी भी सस्थाकी बनिस्बत उसमे काम करनेवाले स्वय-

सेवक और वेतनभोगी कार्यकर्त्ता भी अधिक है। मै यह भी नही चाहता कि मेरे कहनेका मतलब यह निकाला जाये कि असहयोग सर्वथा असफल सिद्ध हुआ है। इसके विपरीत, उसने तो राष्ट्रको इतनी शक्ति और ओज प्रदान किया है, जितना और किसी चीजने नही दिया, लेकिन जितनी आशा इससे रखी गई थी, उतनी वह पूरी नही कर सका। लोगोने इसके प्रति काफी उत्साह दिखाया, लेकिन उतना नही जितना कि उस उद्देश्यके लिए जरूरी था, जिस उद्देश्यसे असहयोग शुरू किया गया था। लेकिन इन बातोसे कार्यकर्त्ताओको क्या तसल्ली मिल सकती है? उन्हे तो उसका फल चखनेके लिए अभी बहुत काम करना है।

स्थगित किया जा रहा है या रद?

एक भाई लिखते है: "बहिष्कारोको स्थगित करनेका जो प्रस्ताव आपने रखा है, क्या वह वास्तवमे उन्हे रद करनेका ही प्रस्ताव नही है?" मेरा तो ऐसा मशा नही। फिलहाल मेरा ऐसा कोई इरादा नही कि बहिष्कारोको रद कराऊँ। अगर ऐसा इरादा होता, तो मै उसे जाहिर करनेमे न हिचकिचाता। हाँ, यह आशा अवश्य करता हूँ कि उन्हें फिरसे चालू करनेकी जरूरत ही शायद न रहे। लेकिन राष्ट्रीय विकासके लिए बहिष्कारोको स्थगित करनेकी जिस तरह आज मुझे आवश्यकता दिखाई दे रही है, उसी तरह अगर मुझे उसके लिए उनको फिरसे चालू करनेकी जरूरत मालूम हुई तो मैं उन्हे चालू करते हुए जरा भी न हिचकूंगा। वे आगे पूछते हैं: "क्या इस तरह आप घातक आन्तरिक कलहको एक सालके लिए टाल ही नही रहे है?" मै फिर कहूँगा — नही। हमे तो सालके अन्तमें ही पता चलेगा कि हम है कहाँ। अगर सालके अन्तमे भी ऐसे ही तीव्र मतभेदोकी सम्भावना रही तो निश्चय ही बहिष्कार फिर चालू नही किये जा सकेंगे। वे अब राष्ट्रके कार्यक्रममें उसी अवस्थामे दाखिल हो सकते है जब राजनीतिक क्षेत्रके सक्रिय कार्यकर्त्ताओको उनकी जरूरत समझाई जा सके। जबतक ऐसा नही होता तबतक तो उन्हे कुछ थोड़े-से लोगोकी नीति या सिद्धान्तके रूपमे ही बने रहना पड़ेगा। इस हकीकतकी तरफसे आँखें न मूँद लेनी चाहिए कि सरकार जो-कुछ देनेको राजी होगी, वह राष्ट्रके उस छोटे-से तबकेकी माँगोका खयाल करके ही उतना कुछ देनेको राजी होगी, जिसकी आवाजमें जोर है और जो सक्रिय है। अगर यह तबका भी परस्पर एक-दूसरेसे लड़ते रहनेवाले गुटोमे बँट जायेगा तो सरकार कुछ भी नही देगी। सालके अन्तमे मैं दोमे से एक बातकी उम्मीद रखता हूँ — या तो अपरिवर्तनवादी लोग विशुद्ध राजनीतिक अर्थात् बाहरी हलचलोमे विश्वास करने लगेंगे या हमारे शुद्ध राजनीतिज्ञ लोग, महज बाहरी हलचलोकी निरर्थकता महसूस करके अपने-आपको भीतरी मजबूतीके काममें लगा देंगे, जिसके लिए बहिष्कारोको जरूरी तौरपर मजूर करना होगा। हाँ, यह भी हो सकता है कि भीतरी मजबूती और उन्नतिका काम तथा राजनीतिक हलचल, दोनोको ही आमतौरपर और भी अधिक लोग स्वीकार करनेमे लगें और इस तरह हम दोनों पक्षोकी परस्पर सहायताके बलपर सरकारको सभी दलोकी न्यूनतम सयुक्त माँगें स्वीकार करनेपर मजबूर कर दें।

मेरे प्रस्तावके मूलमे मुख्य आशय यह है कि राष्ट्रको एक ही मचपर सुसगठित किया जाये और फिर यह आशा रखी जाये कि हरएक पक्ष ईमानदारीके साथ अपने कार्यसे दूसरे पक्षोको प्रभावित करता चलेगा और इस तरह सारे पक्ष स्वेच्छापूर्वक एक सामान्य कार्यक्रमको स्वीकार कर लेगे। अगर ये महान् उद्देश्य कामयाव न हो तो भी हम इतनी आशा तो कर ही सकते है कि सभी दल एक-दूसरेकी नीयतपर शक किये विना यथासम्भव अधिकसे-अधिक शोभनीय ढगसे एक दूसरेसे अलग होगे। किसी भी आन्दोलनमें किसी योजनाको स्थगित कर देना कोई असाधारण बात नही है। उससे तो अकसर उस स्थगित की गई योजनाको, यदि उसमे आन्तरिक शक्ति हो तो, और भी वल मिलता है। इसलिए जो लोग इन वहिष्कारोके वास्तविक गुणके कायल है, उन्हें थोडेसे समयके लिए इन्हे स्थगित करनेपर इनके सदाके लिए लुप्त हो जानेका डर मनमें नही पनपने देना चाहिए। वहिष्कारमें सच्ची आस्था रखनेवाले लोगोको ऐसे किसी सकटको न आनेकी पक्कीसे-पक्की गारटी होनी चाहिए।

हृदयकी एकता

एक भाई लिखते है

वम्बई नगर-निगमके अभिनन्दनके उत्तरमें[1] आपने एक मुहावरेका प्रयोग किया। वह था — हृदयकी एकता। मैंने इसपर खूब विचार और मनन किया और इस निष्कर्षपर पहुँचा कि ब्रह्माण्डके अभ्यन्तरमें हृदयकी एकताका रहस्य छिपा हुआ है। आवश्यकता सिर्फ इस बातकी है कि कोई इन अथाह गहराइयों-में उतरकर इस दिव्य पारसमणिको प्राप्त करे और उसके स्पर्शसे मानवीय सम्बन्धोके विशृंखल और विवर्ण अंशोको पुनः सौन्दर्य और आनन्दसे भर दे। सत्य और ऋतके अन्तरमें भी हृदयकी एकता ही विद्यमान है। जिस सूत्रसे नक्षत्र एक दूसरेसे बँधे और अन्तरिक्षमें टिके हुए है, वह भी हृदयकी एकता ही है। इसीने भौतिक तत्त्वोंको एक-दूसरेसे संयुक्त कर रखा है। रसायन-शास्त्रियोने इस बातका तो पता लगा लिया था कि जल हाइड्रोजन और नाइट्रोजनका मिश्रण है, लेकिन इन दोनो तत्त्वोके संयोगसे वे जल नहीं बना पाये। इसके लिए उन तत्त्वोमें से एक विद्युत्-धारा प्रवाहित करनी पड़ी। प्रकृतिमें यही विद्युत्-धारा हृदयकी एकता है। हृदयकी एकता ही वस्तुओका रूपान्तरण करती है — बर्फको पिघला कर पानी और पानीको जमा कर बर्फ बना देती है। . . . आत्म-तत्त्वका पदार्थके रूपमें प्रकट होना और पदार्थका आत्म-तत्त्वमें विलीन हो जाना, यह सब इसी हृदयकी एकताका व्यापार है।

शिवके साथ हृदयकी एकता प्राप्त करनेके लिए पार्वतीकी तपस्या हिन्दू कल्पनाका एक अद्भुत उदाहरण है। पार्वती मानव-रूपमें ईश्वरीय शक्ति या ब्रह्माण्डका क्रियाशील सिद्धान्त है। मुझे लगता है कि इसकी कल्पना हमारे

१. देखिए "भाषण: बम्बई-निगमके अभिनन्दनके उत्तरमें", २९-८-१९२४।

किसी साधक पूर्वजने ईश्वरकी प्रत्यक्ष प्रेरणापर ही की होगी। इस स्थूल जगत्में प्राणस्य प्राणम्के लिए तपस्यारत पार्वतीके माध्यमसे सर्वशक्तिमानके कार्य-कलापकी शक्तिका उसके सुन्दरतम रूपमें उद्घाटन किया गया है। यह ऐसा पाठ है जिसे हृदयंगमकर मानव समाजको अपने जीवनमें उतारना चाहिए। आपने इस पाठको अपने जीवनमें उतारा है और अली-बन्धुओं तथा दूसरोंके साथ हृदयकी एकता प्राप्त करके इसे राजनीतिक क्षेत्रमें लागू किया है। परि-णाम यह है कि आज हम विभिन्न जातियों और धर्मोंके अलग-अलग तत्त्वोंसे एक सामाजिक भारतीय राष्ट्रकी रचना करनेके मार्गपर भली-भाँति आरूढ़ हैं। ईश्वर करे, यह देश आपके संकेतको समझे और हृदयकी एकता प्राप्त करनेके लिए कर्म-रूप तपस्यापर दृढ़ रहे।

मै इस पत्रको इसलिए नही छाप रहा हूँ कि इसमे मेरी प्रशसा है। इसे मै उस हृदयकी एकताके लिए छाप रहा हूँ, जिसपर पत्र-लेखकका आग्रह है और जिसे वे मेरे तथा अली-बन्धुओ और उन दूसरे लोगोके बीच वास्तवमे लक्षित करते है जिनका धर्म ही नही बल्कि विचार-पद्धति भी मुझसे भिन्न है। पिछले हफ्ते बडे भाईने मुझसे पूछा : "हालाँकि हम लोग अधिकाश बातोमें एक-दूसरेसे इतने असमान है, फिर भी वह क्या चीज है जो हमे परस्पर अविच्छेद्य रूपसे बाँधे हुए है? क्या यह आखिरकार एक ही ईश्वरके प्रति निष्ठा और भयकी भावना नही है?" उन्होंने जो कहा वह बहुत स्वाभाविक और सच था। चूँकि हम ईश्वरको भिन्न-भिन्न माध्यमोसे — 'कुरान', 'बाइबल', 'तालमुद', 'अवेस्ता' या 'गीता' के माध्यमसे — देखते है, इसी कारण हम आपसमे लडकर उसकी निन्दा करनेके भागी क्यो बनें? जो सूरज पर्वतोपर प्रकाश फेंकता है वही मैदानोपर भी चमकता है। सूर्यका ताप दोनो जगहोपर अलग-अलग होता है, क्या इसीलिए मैदानी लोगोको हिम-प्रदेशमे रहने-वालोसे झगडना चाहिए? हमे धर्मग्रन्थो और सूत्रोका उपयोग अपनेको दास बनानेवाली जजीरोके रूपमें करनेके बजाय अपनी मुक्ति और हृदयकी एकता प्राप्त करनेके साधनोके रूपमें क्यो नही करना चाहिए?

वाइकोम-सत्याग्रह

वाइकोम-सत्याग्रहका अर्थ जितना समझा जाता है, उससे शायद ज्यादा गहरा है। उसे सगठित करनेवाले नौजवान अनुशासनमे कठोर और कट्टरपन्थी वर्गके प्रति अपने व्यवहारमे शिष्ट है। लेकिन यह तो उनकी परीक्षाका एक मामूली-सा हिस्सा है। उनमें से तो कुछ सामाजिक बहिष्कारका उत्पीडन भी सह रहे है। हम पश्चिमी प्रेसीडेन्सीके लोगोको कल्पना भी नही हो सकती कि इस उत्पीडनका क्या अर्थ हो सकता है। इस आन्दोलनमे भाग लेनेवाले इन नौजवानोको न केवल सामाजिक सुविधाओ-से वंचित रखा जा रहा है बल्कि उनके सामने पारिवारिक सम्पत्तिमे अपने हिस्सेसे वंचित होनेका खतरा भी है। यदि वे कानूनकी शरण ले तो शायद उन्हे अपना हक मिल जाये। लेकिन एक सत्याग्रही वैयक्तिक अन्यायके निवारणके लिए कानूनकी

शरण नही ले सकता। वह तो यह मानकर चलता है कि उसे उत्पीडन सहना है। वाइकोम-सत्याग्रह द्वारा जैसा सुधार करानेकी कोशिश हो रही है, उसमे सत्याग्रहीका प्रयास यह होता है कि वह अपने चरित्र-बल और कष्ट-सहनके जरिए अपने विरोधीका हृदय-परिवर्तन कर दे। वह जितना ही अधिक शुद्ध होगा और जितना ज्यादा कष्ट-सहन करेगा, उतनी ही तेजीसे वह अपने उद्देश्यकी ओर प्रगति करेगा। इसलिए उसके लिए जरूरी है कि वह सामाजिक बहिष्कार, पारिवारिक सुविधाओका विवर्जित और पारिवारिक सम्पत्तिमे अपने हिस्सेसे वचित किया जाना बरदाश्त करे। उसे न केवल ये कठिनाइयाँ खुशी-खुशी बरदाश्त करनी चाहिए, बल्कि उसे चाहिए कि वह अपने उत्पीडकोके प्रति सक्रिय प्रेम-भाव रखे। उत्पीडक लोग ईमानदारीसे ऐसा मानते है कि सुधारक लोग कोई पापपूर्ण काम कर रहे है और इसलिए सुधारकोको उस कल्पित गलत मार्गसे विरत करनेके लिए जो एकमात्र तरीका उन्हे कारगर लगता है, उसका वे इस्तेमाल करते है। दूसरी ओर, सत्याग्रही दूसरोको दण्डित करनेकी पद्धतिसे अपना सुधार लागू नही करना चाहता, बल्कि इसके लिए वह तपस्या, आत्म-शुद्धि और कष्ट-सहनका सहारा लेता है। अत उत्पीडनके प्रति किसी प्रकारका रोष, उसने अपनेको स्वेच्छासे जिस अनुशासनके बन्धनसे बाँध लिया है, उसमे बाधक होगा। यह रास्ता लम्बा हो सकता है, ऐसा लगता है कि यह कभी खतम ही नही होगा, ऐसा लगता है कि यदि तनिक शक्ति-प्रदर्शन अथवा नैतिक रूपसे समझाने-बुझाने या दबाव डालनेके तरीकेसे ही काम लिया जाये तो बात ज्यादा आसानीसे बन सकती है। लेकिन मै यहाँ जो दिखानेकी कोशिश कर रहा हूँ वह यह नही है कि सत्याग्रह ज्यादा कारगर चीज है, बल्कि यह कि सत्याग्रही द्वारा समझ-बूझकर चुने गये तरीकोका अमली मतलब क्या होता है। वैसे तो मैने इन पृष्ठोमे अकसर यह दिखाया है कि अगर हम अन्तिम परिणामकी दृष्टिसे देखे तो सबसे जल्दी सफलता दिलानेवाला साधन भी सत्याग्रह ही है। लेकिन यहाँ मेरा मशा सिर्फ यह दिखानेका है कि वाइकोमके युवा सत्याग्रही क्या कर रहे है। धरनोके रूपमे वे क्या कर रहे है, उसके बारेमे जनताको बहुत-कुछ मालूम है, लेकिन उनमे से कुछ लोग अपने परिवार और जातिवालोके हाथो चुपचाप जो यातना सहन कर रहे है, उसका उसे कोई ज्ञान नही है। लेकिन मै जानता हूँ कि मौन रहकर और प्रेम-भावसे किया जानेवाला यह कष्ट-सहन ही अन्तत पूर्वग्रहकी दीवारोको तोडेगा। इसलिए मै चाहता हूँ कि सुधारक लोग अपनी जिम्मेवारीको पूरी तरह समझे और स्वेच्छासे स्वीकार किये गये अनुशासनके नियमोको रच-मात्र भी भग न करें।

दक्षिण भारतके लिए सहायता

श्री जॉर्ज जोजेफने जेलसे निकलते ही अपने एक मित्रको त्रावणकोरकी सकटापन्न स्थितिका निम्नलिखित विवरण[1] लिख भेजा

१. यहाँ नहीं दिया जा रहा है। इसमें बाढकी विभीषिकाका वर्णन करते हुए सहायताके उपायोंके रूपमें कताई करने और रुई मुहैया करनेका सुझाव दिया गया था।

बाढ़के तुरन्त बाद ही एक अन्य मित्रने जो-कुछ लिखा, वह भी काफी सच है। उन्होंने लिखा कि किसी विप्लवसे जितनी हानि महीनोमे हो सकती है, वह निष्ठुर दिखनेवाली प्रकृतिने एक ही दिनमे कर दी। तात्कालिक सहायताका प्रारम्भिक कार्य समाप्त होनेके बाद असली सहायता-कार्य आरम्भ होगा। 'यग इडिया' और 'नवजीवन' के पाठक मेरी अपीलका बहुत ही उदारतापूर्वक जवाब दे रहे है। लेकिन वे विश्वास करे कि कार्यकर्त्ताओके सामने जो कठिन काम है, उसे देखते हुए यह सहायता बहुत उदार नही कही जा सकती। मेरा सुझाव है कि रुईके व्यापारी जब नकद रुपया न भेज सके तो वे रुई भेजे। जो हजारो लोग एक साल और अपनी भूमिपर खेती नही कर सकेंगे, उनके पास चरखेके सिवा दूसरा सहारा नही है। अपने देशके इन सकटग्रस्त भाई-बहनोके लिए रोजगारका प्रबन्ध करनेकी योजनाएँ भेजनेके लिए मै कार्यकर्त्ताओको कह रहा हूँ। चरखा मेरे लिए कोई अन्धश्रद्धाकी चीज नही है और मै दाताओको विश्वास दिलाता हूँ कि यदि मै हजारो व्यक्तियोके लिए इसी ढगका कोई दूसरा काम ढूंढ सका तो मै उनके दानसे प्राप्त पैसे या चीजोका उपयोग उस कामके लिए करनेमे तनिक भी आगा-पीछा नही करूँगा।

अपने प्रान्तका गर्व

अ० भा० खादी बोर्डके मन्त्रीने बिहारसे प्राप्त यह सर्वथा उचित शिकायत स्पष्टीकरण और सुधारके लिए मेरे पास भेजी है

> हमारा ध्यान इसी ४ तारीखके 'यंग इंडिया' में विभिन्न प्रान्तोंके सदस्यो द्वारा भेजे गये सूतके बारेमें महात्मा गांधीकी टिप्पणीकी ओर दिलाया गया है। बिहारके बारेमें महात्माजी कहते हैं कि "किसीने भी ऐसा काम नहीं किया है जिससे वह उनके [राजेन्द्रप्रसादके] मुकाबले सही मानेमें द्वितीय स्थानका भी पात्र हो।" चूंकि इससे हमारे कुछ अच्छे कातनेवाले सदस्य निरुत्साहित हो सकते हैं, इसलिए मे आपसे अनुरोध करूँगा कि आप निम्नलिखित सदस्यों और गैर-सदस्योंके सूतको फिरसे जाँचें। अगर वे काम-चलाऊ तौरपर भी अच्छे साबित हों तो कृपया देखें कि उनका कुछ उल्लेख हो जाये।

मैने पत्रमे दिये गये १७ नामोको छोड दिया है। मै मन्त्री और उक्त १७ सदस्योके निकट क्षमाप्रार्थी हूँ। तथ्य यह है कि मैने मूल रिपोर्ट, जो गुजरातीमे थी और जो पूरीकी-पूरी 'नवजीवन' मे छपी है, सक्षिप्त अनुवादके लिए एक सहायकको दी थी और उस अनुवादको बिना मूलसे मिलाये ही छाप दिया। मूल रिपोर्टमें बिहारके साथ कोई अन्याय नही हुआ है। बिहारसे सम्बन्धित मूल अंशका अनुवाद यह है।

> लगभग सब सूत सामान्य दर्जेका है। बहुत-सा सूत तो अत्यन्य अव्यवस्थित ढगसे कता हुआ है। रुई अच्छी नही है। उसपर छिड़काव नही किया गया है। बाबू राजेन्द्रप्रसादने १०,१४८ गज सूत भेजा है। सूत ८ अंकके आस-पासका है और ठीक ढंगसे कता हुआ और अच्छी तरह लच्छियोमे बाँधा हुआ है। इस प्रान्तसे ऐसा अच्छा सूत और किसीने नही भेजा है।

'यंग इंडिया'की जिस टिप्पणीका उल्लेख किया गया है, उसमें बिहारके साथ हुए अन्यायके लिए मुझे दुःख है। सूतकी जाँच करनेवालेने जो नुक्स बताये हैं, आशा है दूसरे महीनेकी किस्तमें उन्हें दूर कर दिया जायेगा। मेरे लिए यह खुशकिस्मती होगी। जाँच करनेवालेने मेरा ध्यान सिन्धसे सम्बन्धित अंशके अनुवादकी ओर भी दिलाया है और कहा है कि अगर सिन्ध भी शिकायत करे तो उचित ही होगा। इसलिए मैं सिन्धसे सम्बन्धित अंशका भी पूरा अनुवाद नीचे दे रहा हूँ

"दो या तीन वण्डलोंको छोड़कर, शेषमें अच्छी कताई देखनेमें नहीं आती। कुछ वण्डलोंमें तो गुंडियोंकी लम्बाई भी अलग-अलग है। छिड़काव करनेका तो कोई उदाहरण ही नहीं मिला। कुछने तो गुंडियाँ बनाये बिना ही सूत भेज दिया है।" हालाँकि सिन्धको इसपर एतराज हो सकता है, लेकिन मैं अनुवादकको निम्नलिखित संक्षिप्तीकरणके लिए क्षमा कर दूँगा। "स्थिति बहुत खेदजनक है। सधी हुई कताईका कोई उदाहरण नहीं मिलता।" निपुण सिन्धियो, सावधान!

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १८-९-१९२४

१२१. सबसे बड़ा प्रश्न

दिल्ली जाते हुए रास्तेमें अपनी डाक देखते हुए नीचे लिखा पत्र मुझे मिला। दो-तीन व्याकरण-दोषोंको सुधारकर उसे प्रायः शब्दशः यहाँ देता हूँ:

> **नागपुरके मुसलमान पगला गये हैं। मैं यद्यपि हिन्दू हूँ फिर भी मैंने नागपुरमें हिन्दुओंकी तरफसे की गई हलचलसे अपनेको सावधानीके साथ दूर रखा है। मेरा अहिंसा और हिन्दू-मुसलमान एकता, दोनोंमें विश्वास है। आप विश्वास रखें कि मेरे मनमें साम्प्रदायिक भावना नहीं है। लेकिन नागपुर और दूसरी जगहोंमें की गई मुसलमानोंकी करतूतोंको देखकर तो मेरे इस विश्वासकी बड़ी कठोर परीक्षा हो रही है। सबसे अधिक दुःखकी बात तो यह है कि एक भी जिम्मेवार मुसलमानने सार्वजनिक रूपसे इन कार्योंकी निन्दा नहीं की है। यदि वीर डाक्टर मुंजे और वीर उदेराम तथा कोष्ठी[1] लोग न होते तो न मालूम इन मुसलमानोंने क्या-क्या अत्याचार किये होते। मैं यह जानता हूँ कि प्रेममें सौदा नहीं होता। इस बातको भी मानता हूँ कि प्रेममें देना-ही-देना होता है। लेकिन मैं इस बातको नहीं भूल सकता कि प्रेमके लिए जो आहुति दी जाये, जो दुःख सहन करना पड़े, वह सब स्वेच्छासे होना चाहिए। इसमें जबरदस्ती नहीं हो सकती। लेकिन हिन्दू शक्तिशाली होनेकी वजहसे या अपनी इच्छासे नहीं झुकता, बल्कि अपनी कमजोरीकी वजहसे और**

१. बुनकरोंकी एक जाति।

इच्छा न होनेपर भी दब जाता है। मुझे तो यह खयाल होता है कि हिन्दू लोग अंग्रेजोंकी गुलामीसे मुक्त होनेकी जो कोशिश कर रहे हैं सो उसका नतीजा यह होगा कि वे मुसलमानोंकी गुलामीमें पड़ जायेंगे। आपका दिलको हिला देनेवाला लेख[1] 'गुलबर्गाका पागलपन' इस मामलेमें खुद आपकी भावनाओंकी गहराईको जाहिर करता है।

आपने कई मरतबा यह जाहिर किया है कि आप कायरतासे हिंसाको अधिक पसन्द करते हैं। आपने कुछ दिनों पहले 'यंग इंडिया'में यह भी लिखा[2] था कि औसत मुसलमान गुंडा होता है और हिन्दू बुजदिल। अफसोस कि वह बिलकुल सच है। अन्यथा यह कैसे हो सकता था कि नागपुरके अल्प-संख्यक मुसलमान हिन्दुओंकी एक बहुत बड़ी संख्याके खिलाफ इस तरह बार-बार उठ खड़े होते हैं। सच बात तो यह है कि गरीब हिन्दूकी न तो कोई इज्जत करता है और न कोई उससे डरता है। डार्विनकी बात सही थी या नहीं, इसका निर्णय करना मेरा काम नहीं है। किन्तु एक बात तो बिलकुल स्पष्ट है कि कमजोरोंके लिए इस संसारमें स्थान नहीं है। उन्हें या तो शक्ति-शाली बनना चाहिए नहीं तो उनका अस्तित्व ही मिट जायेगा। अगर हिन्दू लोग जीना चाहते हैं तो उन्हें अपना संगठन करना चाहिए और शक्तिशाली बनना चाहिए। उन्हें आन्दोलन करना चाहिए और अपनी स्त्रियों और अपने देवताओंके सम्मानकी रक्षाके लिए जान देनेकी दैवी कला सीखनी चाहिए।

लेकिन वे जो हद दरजेके कायर हैं, उनके लिए अहिंसाका कुछ भी अर्थ नहीं है। यह तो उनकी निरी कायरताको छिपानेके लिए एक आवरणका काम देती है। उन्हें अहिंसा सिखाना तो ऐसा मालूम होता है जैसे अकालमें भूखसे पीड़ित लोगोंको भूख मिटानेके लिए आवश्यक खाना दिये बिना ही खानेमें संयम रखनेकी शिक्षा देना या बीमार और कमजोर आदमीको वह खाना खिलाना जिसे हजम करना एक मजबूत आदमीके लिए भी मुश्किल हो। यह उन्हें कुछ भी फायदा पहुँचानेके बजाय सिर्फ नुकसान ही पहुँचायेगा।

यदि आप इस विचारधाराको स्वीकार करें तो क्या आपको यह स्वीकार न करना पड़ेगा कि सच्ची और स्थायी हिन्दू-मुसलमान एकताके लिए हिन्दुओंमें मर्दानगी पैदा होना लाजिमी है? क्या उन्हें अपनी स्त्रियों और मन्दिरोंके सम्मानकी रक्षा करना नहीं सीखना चाहिए? जो कमजोर हैं वही समाजके सबसे बड़े दुश्मन हैं। वे खुद अपनेको भ्रष्ट करते हैं और शक्तिशालीको भी, जिसे वे अपने ऊपर अत्याचार करनेका मौका देते हैं। कमजोरी उन दोनोंके लिए शाप बन जाती है, जो स्वयं कमजोर हों तथा जो कमजोरोंपर जुल्म

१. २८-८-१९२४ का।
२. देखिए खण्ड २४, पृष्ठ १३९-५९।

करते हों। हाँ, हिन्दुओंको उचित है कि वे 'दाँतके बदले दाँत' और 'आँखके बदले आँख'वाले अर्थमें बदला न लें; वे मुसलमान स्त्रियोंका शील-भंग न करें और मसजिदोंको अपवित्र या नष्ट न करें। पर चूँकि अहिंसा उनके बसके बाहरकी चीज है, इसलिए क्या आप उन्हें यह सलाह न देंगे कि वे इन बुराई करनेवालोंको अच्छा सबक सिखाना तो सीख लें? वे अहिंसाकी श्रेष्ठता समझें, इससे पहले क्या यह जरूरी नहीं है कि वे हिंसात्मक उपायोंसे अपनी रक्षा करनेकी क्षमता उत्पन्न करें। हिन्दुओंकी भलाई, सच्ची हिन्दू-मुसलमान मैत्री और खुद स्वराज्यका भी क्या यही रास्ता नहीं है?

ये विचार मुझे बहुत दिनोंसे उद्विग्न बनाये हुए हैं। मैंने उपर्युक्त सवालोंका उत्तर पानेके लिए हर पहलूसे सोचा, लेकिन सन्तोषप्रद उत्तर न मिला। इसलिए मैं मार्ग-दर्शनके लिए आपको कष्ट दे रहा हूँ। मैं 'यंग इंडिया' के स्तम्भोंमें आपका उत्तर देखनेकी उत्कण्ठापूर्वक प्रतीक्षा करूँगा। आप अपना सुभीता देखकर, जितनी जल्दी बन पड़े इसका उत्तर दीजिएगा।

मैं अपना पत्र तो नहीं, लेकिन नाम गुप्त रखना चाहता हूँ।

इस पत्रके हर वाक्यसे लेखककी ईमानदारी झलकती है। उनकी दलीलें अपनी जगह ठीक हैं। पर ज्यों-ही लेखकके विचारोंको और उनसे निकलनेवाले निष्कर्षोंको कार्यरूपमें परिणित करनेका विचार उठता है, त्यों-ही मेरे सामने कठिनाई खड़ी हो जाती है। गुजरातमें जो समस्या खड़ी हो गई है उसका सामना करनेके लिए और मेरे हिन्दू और मुसलमान मित्रों द्वारा जो प्रश्न पूछे गये हैं, उनके जवाबमें मैंने पिछले सप्ताह 'नवजीवन' में एक लेखमें अपनी योजनाकी रूपरेखा दी थी। पाठक उस लेखका महादेव देसाई द्वारा किया गया अनुवाद[1] अन्यत्र देखेंगे।

मेरी तो इस समय बहुत ही दयनीय हालत हो रही है। यह हमारे राष्ट्रकी परीक्षाका समय है और यह कहना गलत न होगा कि हजारों लोग इस मौकेपर रहनुमाईके लिए मेरी ओर आँखें लगाये हैं। खिलाफत-आन्दोलनमें मैंने प्रमुख भाग लिया है। मैंने बदलेमें कुछ पानेकी आशाके बिना सब-कुछ दे देनेके सिद्धान्तका बेहिचक और बेखौफ होकर प्रतिपादन किया है। मेरी इस विचार-प्रणालीमें कुछ भी दोष नहीं है। पर पत्र-लेखकका सवाल यह है—"क्या मेरा विचार वर्तमान स्थितिके लिए ठीक है? क्या हिन्दुओंके पास देनेके लिए कुछ है? कोई बिना लिए उसी अवस्थामें दे सकता है जब खुद उसके पास काफी हो।"

आइए, अब इसपर जरा विचार करें।

पत्र-लेखक और मैं दोनों इस बातपर तो सहमत हैं कि औसत हिन्दू डरपोक है। तब सवाल यह है कि वे निर्भय और वीर कैसे बनें? उनका भय अपने बदनके रग-पुट्ठोंको मजबूत बनानेसे दूर होगा या उनकी आत्मामें वीरताका संचार होनेसे? पत्र-लेखक कहते हैं, "कमजोरोंके लिए इस संसारमें स्थान नहीं।" कमजोरसे

१. देखिए "हिन्दू-मुस्लिम एकता", १४-९-१९२४।

उनका मतलब, मै समझता हूँ, 'शरीरसे कमजोर' है। यदि हाँ, तो उनका विचार ठीक नही है। दुनियामें ऐसे बहुत-से प्राणी है जो शारीरिक दृष्टिसे मनुष्योसे बहुत ज्यादा बलवान् है और फिर भी मनुष्य-जाति जीवित है। शरीर-बलमे बढी-चढ़ी बहुत-सी मानव-जातियाँ अबतक लुप्त हो चुकी है और कुछ तो इस समय भी लुप्त होती जा रही है। ऐसी अवस्थामे जहाँतक मनुष्य-जातिका सम्बन्ध है, यो कहना चाहिए कि "ससारमे उसके लिए जगह नही जिसकी आत्मा कमजोर है।"

जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मै तो अपना पासा फेंक चुका हूँ। तमाम धर्मोमे अहिंसा एक समान-तत्त्व है। कुछ धर्मोमे उसपर औरोकी अपेक्षा ज्यादा जोर दिया गया है। पर इस बातपर सभी सहमत है कि अहिंसाका जितना भी पालन किया जायेगा, थोडा होगा। पर हमे इस बातका निश्चय कर लेना चाहिए कि वह अहिंसा ही है, भीरुताको ढँकनेवाला पर्दा नही।

इस समस्याका हल खोजनेके लिए हमे आम आदमियोंका मुँह जोहनेकी जरूरत नही, बल्कि हमे अपनी ही स्थितिका विचार करना चाहिए, क्योकि उन आम आदमियोके पीछे हम लोग रहते है जो उनको कठपुतलियोकी तरह नचाया करते है। इसलिए हमे इस बातकी चिन्ता रखनी चाहिए कि हम खुद कोई काम डरकी वजहसे न करे। मै द्वन्द्व-युद्धसे नफरत करता हूँ, पर हाँ, उसका भी एक रोमानी पहलू है और उसे मै अब लोगोके सामने रख रहा हूँ। मै बड़े शौकसे बडे भाईके[1] साथ द्वन्द्व-युद्ध करना चाहूँगा। जब हम दोनोको यह यकीन हो जायेगा कि अब तो बिना खून-खराबेके एकता-का कोई उपाय ही नही रह गया है और जब हम देखेगे कि हम दोनो भी सुलहसे एक साथ नही रह सकते, तब मै जरूर बडे भाईको दो-दो हाथ करनेके लिए कहूँगा। मै जानता हूँ कि वे अपने बड़े-बडे पजोसे मरोडकर मेरे टुकडे-टुकडे कर सकते है। लेकिन बस, उसी दिन हिन्दू धर्म आजाद हो जायेगा अथवा यदि वे एक हट्टे-कट्टे पहलवानकी ताकत रखते हुए भी मेरे हाथो मर जायेगे तो इस्लाम हिन्दुस्तानमे आजाद हो जायेगा। उस अवस्थामे वे मानो मुसलमानो द्वारा हिन्दुओको डराने-धमकानेका प्रायश्चित्त कर लेगे। पर मै इस बातसे सख्त नफरत करता हूँ कि दोनो दलोके गुडोके बीच यह खूनी खिलवाड होता रहे। ऐसे भुज-बलकी आजमाइशके सहारे जो सुलह होगी वह अन्तत कटुतामे बदले बिना न रहेगी। हिन्दुओकी भीरुता दूर करनेका उपाय तो यह है कि हिन्दुओका पढा-लिखा समुदाय इन गुडोसे लडे। हम शौकसे लाठियोका तथा दूसरे ठीक हथियारोका इस्तेमाल करे। मेरी अहिंसा उसकी अनुमति देगी। इस लडाईमें हम मारे जायेगे, पर उससे हिन्दू और मुसलमान दोनोके दिलकी मलामत निकल जायेगी। उससे हिन्दुओकी भीरुता एक क्षणमें दूर हो जायेगी। पर अगर मौजूदा तरीका जारी रहा तो हर जमात अपने-अपने गुडोकी गुलाम हो जायेगी। इसका मतलब होगा कि फौजी ताकतका दौर-दौरा हो जायेगा। इग्लैंडने असैनिक सत्ताकी प्रधानताके लिए सघर्ष किया। उसकी जीत हुई और वह जीवित है। लॉर्ड कर्जनने हमें बहुत नुकसान पहुँचाया है। पर

१. मौलाना शौकत अली।

जब उन्होने असैनिक सत्ताकी प्रधानताके लिए आवाज उठाई थी, उस समय उनका कहना बहुत ठीक था और उन्होने बडी वीरताका परिचय दिया था। जब रोमपर सैनिक सत्ताका दौर-दौरा हुआ, उसका पतन हो गया। इस खयालसे ही कि हमारे धर्मकी रक्षाका सूत्र गुडोके हाथमे हो, मेरी अन्तरात्मा विद्रोह कर उठती है। इसलिए फिलहाल, हिन्दुओको ही अपनी नजरमे रखकर, मै बडे अदब और सच्चे मनसे हर समझदार हिन्दूको चेतावनी देना चाहता हूँ कि वे अपने मदिरोंकी, अपनी और अपने बीवी-बच्चोकी रक्षाके लिए गुडोकी सहायताका भरोसा न रखे। अपने कमजोर शरीरको ही लेकर उन्हे खुद अपनी जगहपर खडे रहकर बिना मारे अथवा मारकर, मर-मिटनेका निश्चय करना चाहिए। यदि जमनालालजी और उनके साथी शान्ति-रक्षा करते हुए मर भी जाते तो उनकी मृत्यु बडी गौरवपूर्ण होती। डा० मुजे या मै यदि अकेले अपने मन्दिरोकी रक्षा करते हुए मर जाये तो वह हमारे लिए गौरवपूर्ण मृत्यु होगी। सबमें वही हमारे हृदयकी निर्भयता और वीरता होगी।

पर इसके अलावा भी ऐसे अनेक काम किये जा सकते है जिसमे उससे कम बहादुरी दरकार है। हमें नागपुरके बारेमे सच्चाई खोज निकालनी चाहिए। मै डा० मुजेसे इसके लिए लिखा-पढी कर रहा हूँ। मै दिल्लीके हिन्दू-मुसलमानोसे अनुनय-विनय कर रहा हूँ कि वे मुझे वहाँके फसादका मूल कारण बताये। मैने उन्हे इस सम्बन्धमें पच-फैसला करानेकी सलाह दी है और कहा है कि वे चाहे तो यह काम मै अकेले या औरोके साथ खुद करनेको तैयार हूँ। उन्होने अभीतक मेरी कोशिशोमे मेरी मदद करनेसे इनकार नही किया है। अभीतक वहाँकी दुर्घटनाका कोई प्रामाणिक विवरण नही मिला। मै आपेसे बाहर कैसे होऊँ? मुझे इस बातका यकीन नही हुआ है कि हर बातमें और हर जगह अकेले मुसलमानोका कसूर है। मुझे पता नही कि आरम्भिक कारण क्या था। पर हाँ, मै यह जरूर जानता हूँ कि दोनो फरीकोकी तरफसे सिद्धान्तहीन अखबार सीधे-सादे हिन्दुओ और सीधे-सादे मुसलमानोके दिलोमें जहर फैला रहे है। मै यह भी जानता हूँ कि खानगी बातचीतमे यह जहर और भी ज्यादा फैलाया जा रहा है और बाते इस तरह बढा-चढाकर कही जा रही है जिसकी कोई हद नही। इस अन्धकार, दुविधा और निराशाके सागरकी तहतक पहुँचनेमे मै कोई कसर न उठा रखूँगा। इस हिन्दू-मुस्लिम तनावसे राष्ट्रके पूरे स्वच्छ सार्वजनिक जीवनके नष्ट होनेका खतरा पैदा हो गया है। उसके ठीक-ठीक निपटारेके लिए यह अनिवार्य है कि पहले आजतकको घटनाओ और तथ्योका एक सच्चा विवरण तैयार किया जाये। इस तनाजेका निपटारा करनेकी मेरी आन्तरिक अभिलाषा भी इस बातका एक महत्त्वपूर्ण कारण है, जिसने मुझे स्वराज्यवादियो तथा अन्य सम्बन्धित पक्षोके सामने पूर्ण आत्म-समर्पण करनेपर मजबूर किया है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १८-९-१९२४

१२२. स्पष्टीकरण

दिल्ली-निवासी कुछ मुसलमान भाई मुझसे मिलने आये थे। उन्होने २१ अगस्तके 'यग इडिया' मे प्रकाशित मेरे इस कथनपर आश्चर्य प्रकट किया कि हिन्दू मन्दिरोकी पवित्रता भग करनेकी कार्रवाईके पीछे मुसलमानोके एक सगठनका हाथ है, और ऐसा भी नही है कि वह कार्रवाई उत्तेजनाका कोई कारण मिलनेपर की गई हो। इन भाइयोका कहना है कि मैने जो सगठनकी वात कही, उसका मतलव सम्पूर्ण मुसलमान जातिकी ओरसे खडा किया गया सगठन लगाया गया है और उत्तेजनाके कारणकी जो चर्चा की गई है उसका अर्थ किसी भी प्रकारकी उत्तेजनाका कारण समझा गया है। मैने मुलाकातियोको वताया कि सगठनसे मेरा मतलव सम्पूर्ण मुसलमान जाति द्वारा या उसकी प्रेरणापर खडा किया गया सगठन नही, वल्कि कुछ खास लोगोका सगठन है। मगर मेरे पास ऐसे आँकडे नही है कि इन लोगोकी संख्या वता सकूँ।

इन मित्रोने मुझे वताया — और मेरे दिल्ली पहुँचनेपर हकीम साहव और मौलाना मुहम्मद अलीने भी ऐसा ही वताया कि उन्ह तो ऐसे किसी सगठनकी कोई जानकारी नही है और यदि सचमुच इस तरहका सगठन होता तो उन्हें मालूम जरूर होता। इसपर मैने कहा कि चूँकि आप यह वात स्वीकार नही कर रहे है, इसलिए अपने कथनकी सत्यतामे कुछ शका तो मुझे भी होने लगी है, फिर भी मै अपने मनसे इस खयालको विलकुल निकाल देनेके लिए तैयार नही हूँ कि जैसे सगठनका मैने जिक्र किया वैसा कोई सगठन सचमुच है। अभी हालमे जो पवित्रता-भगकी घटनाएँ हुई है, उनसे पहले ही कई लोगोने, जिनमे कुछ मुसलमान भी शामिल थे, मुझे वताया कि ऐसा कोई सगठन है। जव ये घटनाएँ घटी तो मै स्वभावत. इसी निष्कर्षपर पहुँचा कि ये कोई क्रोधके आवेगमे हठात् की गई कार्रवाइयाँ नही है, इसके विपरीत इनका जो एक विशेष स्वरूप है वह इस कारण है कि लोगोने किसी सगठनके उकसानेपर ये कार्रवाइयाँ की। यदि मुझे यह मालूम हो जाये कि मेरा खयाल विलकुल गलत है तो मुझे खुशी होगी और अपने निर्णयकी भूलकी प्रतीति होते ही मै तत्काल आवश्यक भूलसुधार कर लूंगा। कहा गया है कि हो सकता है, यह सगठन किसी सरकारी एजेंसीकी ही करतूत हो। मैने कहा कि इन उपद्रवोमे सरकारका जो हिस्सा हो सकता है, उससे मै भी इनकार नही कर सकता। वल्कि अगर मुझे पता चले कि इस सवके पीछे असली हाथ किसी सरकारी एजेंसीका ही है तो निश्चय ही मुझे कोई आश्चर्य नही होगा।

उत्तेजनाके कारणके सम्वन्धमे मैने मुलाकातियोको वताया कि 'यग इडिया' मे प्रकाशित लेखसे[1] यह वात विलकुल स्पष्ट है कि मेरा तात्पर्य विशेष ढगके उत्तेजनाके

१. देखिए "गुलबर्गाका पागलपन", २८-८-१९२४।

कारणसे ही है। लेखमे कहा गया है कि हिन्दुओकी तरफसे मुसलमानोको उत्तेजना-का मौका ही नही दिया गया। मुलतानमे जब मदिर अपवित्र किये गये तब बिना किसी उत्तेजनाके ही किये गये। हिन्दू-मुस्लिम तनावके विपयमे लिखे अपने लेखमे मैंने कुछ ऐसे स्थानोकी चर्चा की है, जहाँ हिन्दुओ द्वारा मसजिदोको अपवित्र किये जानेकी बात कही जाती है। मै इन आरोपोके सम्बन्धमे सबूत एकत्र करनेकी कोशिश कर रहा हूँ। परन्तु अबतक मुझे उनका कुछ भी सबूत नही मिला है।

मेरे मुलाकातियोने मुझे हैदराबादसे प्रकाशित होनेवाली एक पत्रिका दिखाई। कहते है, उस पत्रिकाके अनुसार हिन्दू लोग इस प्रकारके उत्तेजनात्मक काम करते है। मैंने कहा कि वैसे तो किसी भी स्थितिमें मै अपने दृष्टिकोणसे मन्दिर-मसजिद — किसीकी भी पवित्रताको भग करना समान रूपसे अनुचित मानूँगा और इस पत्रिकाकी बातके सही सिद्ध हो जानेपर भी वैसा ही मानूँगा, फिर भी मै स्वीकार करता हूँ कि यदि यह बात सिद्ध हो जाये तो इस कार्रवाईकी भर्त्सना करनेका उतना ज्यादा कारण मेरे पास नही रह जायेगा। गुलबर्गामे हिन्दुओ द्वारा मसजिदकी पवित्रता भग करनेकी जो बात कही जाती है, वह अगर सिद्ध की जा सकती हो तो मै सचमुच बहुत दुखी और लज्जित होऊँगा।

इसपर मुलाकातियोने पूछा कि क्या हिन्दुओका भी कोई ऐसा ही सगठन नही है। मैंने बताया कि मुझे तो हिन्दुओके किसी ऐसे सगठनकी कोई जानकारी नही है, जो मसजिदोकी पवित्रता भग करनेके लिए लोगोको उकसाता हो, लेकिन यह अवश्य देखता हूँ कि कुछ ऐसे हिन्दुओका — इनकी सख्या कोई कम नही है — एक सगठन है, जो इस्लामके बारेमें अपमानजनक बाते लिखकर और मुसलमानोकी शरारतोको बहुत ही अतिरजित रूपमे पेश करके उत्तेजना फैलानेपर तुला हुआ है। यह अक्षम्य है। लेकिन मामलेमे दोनो पक्ष समानरूपसे दोषी है। इस हालतमे देशके प्रत्येक शुभेच्छुका यह कर्त्तव्य है कि वह ऐसी शरारतोको बढावा देनेवालोकी निन्दा करे और इन्हें रोकनेके लिए कुछ भी उठा नही रखे। मैंने मुलाकातियोसे कहा कि अगर दोनो समुदायोके लोग मुझे इजाजत दें और पूरे मनसे सहयोग करें तो मै इस बातके लिए तैयार हूँ कि जरूरत हुई तो अकेले और सम्भव हुआ तो साथियोकी सहायतासे मामलेकी जाँच करके इस बातका पता लगाऊँ कि शरारत किसने शुरू की, यह कैसे फैल गई और इसका क्या इलाज है।

[अग्रेजीसे]

यग इंडिया, १८-९-१९२४

१२३. गांधीजीका खुलासा[1]

१८ सितम्बर, १९२४

श्री गांधीने दिल्लीमें अपने २१ दिनके उपवासकी घोषणा करते हुए १८ सितम्बरको निम्नलिखित वक्तव्य जारी किया :

इधर हालकी घटनाएँ मेरे लिए असह्य हो गई हैं। और इसमें मेरी असहायावस्था तो मेरे लिए और भी असह्य हो रही है। मेरा धर्म मुझे सिखाता है कि जब भी कोई ऐसा सकट उपस्थित हो जिसपर हमारा बस न चले और कष्ट असह्य हो जाये तब उपवास और प्रार्थना करनी चाहिए। अपने घनिष्ठ आत्मीयोके सम्बन्धमे भी मैंने ऐसा ही किया है। मुझे यह स्पष्ट हो गया है कि मेरे हर तरहके लिखने और कहनेसे भी हिन्दुओ और मुसलमानोमे एकता नही हो सकती। इसीलिए मैं आजसे २१ दिनका उपवास प्रारम्भ करता हूँ, जो बुधवार, ८ अक्तूबरको पूरा होगा। अनशनके दिनोमे सिर्फ पानी और उसके साथ नमक लेनेकी मैंने छूट रखी है। यह अनशन प्रायश्चित्तके रूपमे भी है और प्रार्थनाके रूपमे भी।

यदि उपवास केवल प्रायश्चित्त-रूप होता तो इसे सर्वसाधारणके सामने प्रकाशित करनेकी आवश्यकता न थी। परन्तु इस बातके प्रकट करनेका सिर्फ एक ही प्रयोजन है। मैं यह आशा करता हूँ कि मेरा यह प्रायश्चित्त हिन्दू और मुसलमानोके लिए, जो कि आजतक मेल-मिलापसे काम करते आये हैं, आत्मघात न करनेके लिए एक कारगर प्रार्थना सिद्ध हो। मैं तमाम जातियोके नेताओसे, अग्रेजो तकसे, सविनय प्रार्थना करता हूँ कि वे धर्म और मनुष्यताके लिए लाछन-रूप इन झगडोको मिटानेके हेतु एक जगह एकत्र होकर विचार करे। आज तो ऐसा जान पडता है, मानो हमने ईश्वरको सिंहासनसे उतार दिया है। आइए, हम फिर अपने हृदयरूपी सिंहासनपर उसे अधिष्ठित करे।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २५-९-१९२४

१. यह वक्तव्य गांधीजीके निजी सचिवने सुबह दो बजे एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाको दिया था।

१२४. पत्र : एनी बेसेंटको

दिल्ली
१८ सितम्बर, १९२४

प्रिय डा० बेसेंट,

पत्रके लिए धन्यवाद। आप मेरे उपवासकी बात जानती ही है, इसलिए मुझे २ अक्तूबरके[1] समारोहकी अध्यक्षताके सौभाग्यसे वंचित रहना पड़ेगा। किन्तु सन्देश भेजनेकी आशा तो करता ही हूँ।

कांग्रेस द्वारा इस संविधानके पास किये जानेके सम्बन्धमें मुझे बहुत-सी कठिनाइयाँ दिखाई देती हैं। किन्तु मैं इस विषयमें दूसरोंकी बात सुनने-समझनेको तैयार हूँ। जब कभी हम मिल पायेंगे, इसपर बातचीत करेंगे। मुझे इस उपवाससे किसी बुरे परिणामकी आशंका नहीं है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

१२५. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

१८ सितम्बर, १९२४

प्रिय चार्ली,

तुम्हारा पत्र मिला। मैंने तुम्हारा प्रश्न समझा नहीं। बेशक, तुम्हारी बहन मलाबारके गरीबोंके लिए अपनी बुनी जुराबें भेज सकती है। इस सम्बन्धमें मैंने पहले जो बात कही थी और अब जो छूट दी है, उसके पूरे कारणोंकी चर्चा यहाँ नहीं करूँगा। यह इसलिए कि मैं तुम्हारा दृष्टिकोण भी समझ सकता हूँ और जो एक-मात्र सबसे अच्छा नजरिया है, उससे अपने दृष्टिकोणका भी औचित्य सिद्ध कर सकता

१. एनी बेसेंटकी ७८वीं वर्षगांठ तथा उनके सार्वजनिक जीवनकी जयन्तीके उपलक्ष्यमें। वस्तुत यह समारोह १ अक्तूबरको कावसजी जहाँगीर हॉल, बम्बईमें मनाया गया था। गांधीजीके सन्देशके लिए देखिए "सन्देश : एनी बेसेंटके जन्म-दिवसपर", १-१०-१९२४ से पूर्व।

हूँ। कुछ भी हो, इसमे कोई विरोध अथवा पक्षपातपूर्ण भेद-भावकी बात नही है। यह तो विशुद्ध रूपमे कर्त्तव्यका प्रश्न है।

सस्नेह,

तुम्हारा,
मोहन

[पुनश्च:]

तुम्हे कल मेरा कार्ड अवश्य मिला होगा। मैं बिलकुल ठीक हूँ।

श्री सी० एफ० एन्ड्र्यूज
शान्तिनिकेतन
बरास्ता-वोलपुर
ई० आई० रेलवे

अग्रेजी पत्र (जी० एन० २६१६) की फोटो-नकलसे।

१२६. पत्र : राधा गांधीको

भाद्रपद बदी ५ [१८ सितम्बर, १९२४][1]

चि० राधा,

तुम्हारा पत्र आज मिला। मेरे २१ दिनके उपवासकी खबर तुमने सुनी होगी। कोई चिन्ता न करना। धर्मका पालन करते हुए यदि दुख आ पड़े तो उसे सहन करना ही उचित है और इसमें प्रियजनोको सुख मानना चाहिए। आशा है कि अब तुम्हारी तबीयत बिलकुल ठीक होगी। तुम क्या पढती हो, क्या खाती हो, कितनी घूमती-फिरती हो, कातती हो अथवा नही, आदि सब बाते तुम्हे मुझे लिखनी चाहिए। रुखी क्या पढती है, उसकी तबीयत कैसी रहती है, यह भी लिखना। मुझे अभी तो यही रहना होगा। यह पत्र सबको पढवा देना।

बापूके आशीर्वाद

चि० राधा
मार्फत — खुशाल गाधी
नवु परु, राजकोट
काठियावाड़

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ६०३५) से।
सौजन्य. राधाबहन चौधरी

१. डाककी मुहरसे।

१२७. महादेव देसाईके साथ बातचीत[1]

[१८ सितम्बर, १९२४][2]

[गांधीजी] अच्छा महादेव, चौरीचौरा[3] और बम्बईके काण्डोको लेकर जो उपवास किये, उन्हे तो तुम समझते हो?

[महादेव देसाई:] हाँ, जरूर।

फिर इस उपवासको क्यो नही समझ पाते?

उनमें तो आपने अपना दोष माना था, लेकिन यहाँ तो अपना दोष माननेका कोई कारण ही नहीं है। यहाँ आपने कुछ गुनाह किया है, ऐसा कौन कह सकता है?

है! यह कैसी नासमझी है? चौरीचौराके गुनहगार तो ऐसे लोग थे, जिन्होने मुझे न कभी देखा था, न वे मुझे जानते थे। यहाँ तो वे लोग गुनहगार है जो मुझे जानते है, जो मुझपर प्रेम रखनेका दावा करते है।

शौकत अली और मुहम्मद अली तो हिन्दू-मुस्लिम झगड़ोको रोकनेका प्रयत्न कर ही रहे है। कुछ लोग इनकी न सुनें तो वे क्या कर सकते है और आप भी क्या कर सकते है? यह तो समय बीतनेपर ही ठीक होगा।

यह तो तुमने दूसरी बात कही। शौकत अली और मुहम्मद अली तो कुन्दन है। वे पूरा प्रयत्न कर रहे है। लेकिन यह बाजी अब हमारे हाथमे नही है। छ महीने पहले थी। मैं जानता हूँ कि इस उपवाससे लोगोके अन्तरमे खलबली मच जायेगी। लेकिन यह तो उसका अप्रत्यक्ष असर होगा। यह उपवास मैं किसीपर असर डालनेके लिए नही कर रहा हूँ।

लेकिन आपने अपना कोई गुनाह तो बताया ही नहीं।

गुनाह! कहा जा सकता है कि मैंने, हिन्दू जातिके साथ विश्वासघात किया है। मैंने हिन्दुओसे मुसलमानोको गले लगानेको कहा, उनकी पाक जगहोकी रक्षाके लिए अपना तन, मन, धन अर्पित कर देनेको कहा। आज भी उन्हे अहिंसाकी — मारकर नही, बल्कि खुद मरकर झगडा शान्त करनेकी — सीख दे रहा हूँ, और उसका परिणाम

१. जब गांधीजीने २१ दिनका उपवास रखनेका निश्चय किया तो उनके निकटके कई लोगोंने उनसे अपना निर्णय बदल लेनेके लिए आग्रह किया। इन लोगोंसे उनकी जो बातचीत हुई उससे उपवासके मर्मपर बहुत प्रकाश पडा। इन्हीं बातचीतोंके आधारपर महादेव देसाईने **यंग इंडिया**में "द इनर मीनिंग ऑफ द फास्ट" (उपवासका मर्म) और **नवजीवन**में "अे तपश्चर्यानो मर्म" (इस तपश्चर्याका मर्म) शीर्षकसे लेख लिखे। यह बातचीत गुजराती लेखसे ली गई है।

२. साधन-सूत्रसे।

३. देखिए खण्ड २१, पृष्ठ ४८५-८९ तथा खण्ड २२, पृष्ठ ४३८-४४।

क्या देख रहा हूँ? कितने मन्दिर तोड़े गये! कितनी बहनोंने मेरे आगे फरियाद की है! कल ही मैंने हकीमजीसे कहा कि बहनें मुसलमान गुंडोंके डरसे आतंकित रहती है, कई जगहोंमें उनका बाहर निकलना मुश्किल हो गया है। . .भाईका पत्र आया है। उनके बच्चोंपर जो बीती उसे क्या सहा जा सकता है? अब मैं किस मुँहसे हिन्दुओंसे कहूँ कि आप सहन करते चले जायें। मैंने तो उन्हें विश्वास दिलाया था कि मुसलमानोंके साथ प्रेम रखनेका फल मीठा ही होगा, परिणामका विचार किये बिना आप उनके साथ प्रेम करें। इस विश्वासको सही सिद्ध करनेकी शक्ति आज मुझमें नहीं रही, न मुहम्मद अली और न शौकत अलीमें ही रही। मेरी बात कौन सुनता है? फिर भी हिन्दुओंसे मुझे मरनेको ही कहना है। ऐसा मैं मरकर ही कर सकता हूँ, मरकर ही उसकी कुंजी बता सकता हूँ। और किस तरह बताऊँ?

मैंने असहयोग आन्दोलन शुरू किया। आज देखता हूँ कि अहिंसाकी गन्धको भी जाने बिना लोग एक-दूसरेके साथ असहयोग करने लगे है। इसका कारण क्या है? इसका कारण सिर्फ यह है कि मैं खुद ही अहिंसक नहीं हूँ। मेरी अहिंसा भी कोई अहिंसा है? अगर वह पराकाष्ठापर पहुँच जाती तो आज मैं जो हिंसा देख रहा हूँ वह देखनेको न मिलती। इसलिए मेरा उपवास प्रायश्चित्त है, तपश्चर्या है। मैं किसीको दोष नहीं देता। मैं तो अपनेको ही दोष दे रहा हूँ। मेरी शक्ति चली गई है। हार-थककर, अपनी शक्ति खोकर अब मुझे सिर्फ ईश्वरके ही दरबारमें अर्ज करना है। अब वही सुनेगा, दूसरा कौन सुननेवाला है?

किन्तु प्रायश्चित्तका मतलब क्या यही है — ऐसा उपवास ही है? ऐसे उपवासका विधान हिन्दू-धर्ममें है क्या?

वाह! जरूर है! ऋषि-मुनि क्या करते थे? वे जो घोर तपस्या करते थे वह क्या वनमें फल-मूल खाकर करते थे? और हजारों वर्षकी तपस्या करने, गुफाओंमें जाकर तपस्या करनेकी बात सुनते हैं, सो क्या है? पार्वतीने अपर्णाव्रत लिया था, वह क्या था? तप-जपसे तो हिन्दू धर्म भरा पड़ा है।

जितना गहरा विचार इस उपवासके पीछे रहा है, उतना गहरा विचार पहलेके उपवासोंके पीछे शायद ही रहा हो। इस उपवासकी कल्पना तो जिस दिन मैंने असहयोग शुरू किया उसी दिनसे कर रखी थी। असहयोग प्रारम्भ करते समय मनमें ऐसा खयाल आया कि लोगोंके हाथमें मैं जैसा भयंकर शस्त्र दे रहा हूँ, यदि इसका दुरुपयोग हुआ तब? तो प्राणोंकी बलि देनी होगी। आज वह समय आ गया है। आजतकके उपवासोंके उद्देश्य तो सीमित थे। इस बारके उपवासका उद्देश्य विश्वव्यापी है। इसमें प्रेमका पारावार उमड़ रहा है और मैं इस समुद्रमें आज नहा रहा हूँ।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २८-९-१९२४

१२८. तार: चक्रवर्ती राजगोपालाचारीको[1]

[१८ सितम्बर, १९२४ या उसके पश्चात्]

उपवास छोड़नेका मतलब तो अपने-आपको नकारना होगा। उपवास मरनेके लिए नही, जीनेके लिए कर रहा हूँ। ईश्वरकी मर्जी कुछ और हो तो दूसरी बात है। चिन्ता न करें।

गांधी

हिन्दू, २९-९-१९२४

१२९. तार[2]

[१८ सितम्बर, १९२४ के पश्चात्]

तार अभी मिला। ईश्वरने चाहा तो इक्कीस दिन बाद भी निश्चय ही जीवित रहनेकी आशा। इरादा चालीस दिन उपवास करनेका था। किन्तु बहुत कष्टके बिना ही इसे पूरा कर लूं, इस आशासे इक्कीस दिन ही रखना तय किया। ऐसा निर्णय करने तथा मित्रोंकी सलाह न लेनेका पूरा कारण है। जो स्पष्ट कर्त्तव्य हो उसका पालन चाहे जितना कष्टकर हो, उसपर चिन्ता नही करनी चाहिए। उपवास धर्मकी मेरी कल्पनाका सीधा परिणाम है।

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १०१७८) की फोटो-नकलसे।

१. यह राजगोपालाचारीके १८ सितम्बरके उस तारके उत्तरमें भेजा गया था जिसमें उन्होंने गांधीजीसे उपवास छोड़नेका अनुरोध करते हुए लिखा था: आपके वर्तमान स्वास्थ्यको देखते हुए उसका (उपवासका) अर्थ मृत्युके सिवा और कुछ नहीं होगा।

२. इस तारका मसविदा १८ सितम्बरको सी० एफ० एन्ड्रयूज द्वारा महादेव देसाईको भेजे गये पत्रके पीछे लिखा गया था।

१३०. ईश्वर एक है[1]

१९ सितम्बर, १९२४

पिछले गुरुवारकी रातको पहलेसे वक्त मुकर्रर करके कुछ मुसलमान मित्र मुझसे मिलने आये थे। उनमे मुझे ईमानदारी और सचाई दिखाई देती थी। शुद्धि और सगठनके खिलाफ उन्हे बहुत कुछ कहना था। मै इन आन्दोलनोके बारेमे अपने विचार पहले ही प्रकट कर चुका हूँ।[2] जहाँतक हो सके, उपवासके इन विशेष दिनोमे, मै विवादास्पद विषयोपर कुछ भी नही कहना चाहता। यहाँ तो मै उनके बताये एकताके उपायकी ओर पाठकोका ध्यान दिलाना चाहता हूँ। उन्होने कहा, "हम 'वेदो' की अपौरुषेयताको मानते है। हम श्रीकृष्णजी महाराज और रामचन्द्रजी महाराज (विशेषण उन्हीके है) को भी मानते है। फिर हिन्दू 'कुरान' को दैवी मानकर हमारे साथ यह क्यो नही कहते कि खुदा केवल एक है और मुहम्मद उसका पैगम्बर है? हमारा मजहब वर्जनशील नही है, वह तो तत्त्वत ग्रहणशील और व्यापक है।"

मैने उनसे कहा कि उनका उपाय उतना आसान नही जितना कि वे बताते है। उनका यह सूत्र चाहे कुछ सुशिक्षित लोगोके लिए ठीक हो, पर सामान्य लोगोके लिए वह काम न देगा। क्योकि हिन्दुओकी दृष्टिमे गो-रक्षा और रास्तेमे मसजिद हो तो भी वाद्य और सगीतके साथ हरि-कीर्तन करते हुए जाना हिन्दू-धर्मका सार है और मुसलमानोके खयालमे गो-वध और बाजे बजानेपर रोक इस्लामका सार-सर्वस्व है। इसलिए यह जरूरी है कि हिन्दू लोग मुसलमानोको गो-कुशी छोड देनेपर मजबूर करना छोड दे और मुसलमान लोग हिन्दुओको बाजे बन्द करनेपर लाचार करना छोड दे। गो-कुशी और बाजे बजानेके नियमनका काम दोनो जातियोके सद्भावपर छोड दिया जाये। ज्यो-ज्यो दोनोमे सहनशीलताके भाव बढते जायेगे, त्यो-त्यो ये दोनो रिवाज अपने-आप सही रूप धारण कर लेगे। पर मै इस नाजुक सवालकी चर्चा यहाँ अधिक विस्तारसे नही करना चाहता।

मै तो यहाँ उन मुसलमान मित्रोके बताये आकर्षक सूत्रपर विचार करना चाहता हूँ और कहना चाहता हूँ कि उसमे से कमसे-कम मै क्या मान सकता हूँ, और चूंकि मेरा मन पूरी तरहसे वैसा ही है जैसा एक हिन्दूका होता है, मै जानता हूँ कि इसपर मै जो-कुछ कहूँगा वह हिन्दुओके एक विशाल समुदायको भी पसन्द होगा।

१. मूल अंग्रेजी लेखके आरम्भमें महाकवि गेटेके फॉस्टसे एक उद्धरण दिया गया था। उसकी अन्तिम पंक्तियाँ, जिनमें उसका सारांश आ जाता है, इस प्रकार हैं · मैं उसे कोई नाम नहीं दे सकता? अनुभूति ही सब-कुछ है! नाम तो केवल शब्द है, वह तो धुआँ है — ऐसा कुहासा है जो उस स्वर्गिक ज्योतिको आवृत्त करता है।

२. देखिए "हिन्दू-मुस्लिम एकता", १४-९-१९२४।

सच पूछिए तो औसत दर्जेके मुसलमान ही 'वेदो' तथा दूसरे हिन्दू धर्म-ग्रन्थोकी अपौरुपेयताको या कृष्ण अथवा रामके पैगम्बर या अवतार होनेकी बातको कुबूल नही करेगे। हिन्दुओके लिए तो 'कुरान शरीफ' या पैगम्बर साहबको भला-बुरा कहनेकी रीति एक बिलकुल ही नयी चीज है जो अभी-अभी शुरू हुई है। हिन्दुओकी जमातमे मैने पैगम्बर साहबके प्रति आदरभाव देखा है। यहाँतक कि हिन्दुओके कुछ गीतोमे भी इस्लामकी तारीफ पाई जाती है।

अब सूत्रके पहले भागको लीजिए। ईश्वर वाकई एक और अद्वितीय है। वह अगम, अगोचर और मानव-जातिके अधिकाशके लिए अज्ञात है। वह सर्वव्यापी है। वह बिना आँखोके देखता है, बिना कानोके सुनता है। वह निराकार और अखण्ड है। वह अजन्मा है, उसके न माता है, न पिता है, न सन्तान — फिर भी वह पिता, माता, पत्नी या सन्तानके रूपमे पूजा ग्रहण करता है। यहाँतक कि वह काष्ठ और पाषाणके रूपमे भी पूजा-अर्चनाको अगीकार करता है, हालाँकि वह न तो काष्ठ है, न पाषाण ही। वह हाथ नही आता — पकडमे आता दिखता है और निकल जाता है। अगर हम उसे पहचान सके तो वैसे वह हमारे बिलकुल नजदीक है। पर यदि हम उसकी सर्व-व्यापकताको अनुभव न करना चाहे तो, वह हमसे अत्यन्त दूर है। 'वेद' मे अनेक देवता है। दूसरे धर्म-ग्रन्थ उन्हे देव-दूत आदि दूसरे नाम देते है। पर 'वेद' एक ही ईश्वरका गुण-गान करते है।

मुझे 'कुरान' को ईश्वर-प्रेरित माननेमे कोई सकोच नही होता, जिस प्रकार कि 'बाइबिल,' 'जेन्द-अवेस्ता,' या 'ग्रन्थ साहब' तथा दूसरे पुण्य-धर्मग्रन्थोको माननेमे नही होता। ज्ञानका ईश्वरकृत प्रकाश किसी एक ही राष्ट्र या जातिकी सम्पत्ति नही है। यदि मुझे हिन्दू-धर्मका कुछ भी ज्ञान है तो वह मूलत ग्रहणशील, सदा वर्द्धमान और परिस्थितिके अनुरूप नवीन रूप धारण करनेवाला है। उसमे कल्पना, अनुमान और तर्कके लिए पूरी-पूरी गुजाइश है। 'कुरान' और पैगम्बर साहबके प्रति आदर-भाव उत्पन्न करनेमे मुझे हिन्दुओके नजदीक कभी जरा भी दिक्कत महसूस नही हुई। पर हाँ, मुसलमानोके अन्दर वही आदर-भाव 'वेदो' और अवतारोके प्रति उत्पन्न करनेमे मैने अलबत्ता दिक्कत अनुभव की है। दक्षिण आफ्रिकामे मेरे एक बहुत अच्छे मुसलमान मुवक्किल थे। अफसोस है, अब वे दुनियामे नही रहे। हमारा वकील-मुवक्किलका रिश्ता आगे चलकर घनिष्ठ मैत्री और पारस्परिक आदरभावका हो गया था। हम बहुत बार धार्मिक चर्चाएँ भी किया करते थे। मेरे वे मित्र किसी अर्थमे विद्वान् तो नही कहे जा सकते, पर उनकी बुद्धि कुशाग्र थी। वे 'कुरान' की सब बाते जानते थे। उन्हे दूसरे धर्मोकी भी कुछ बातोका ज्ञान था। मुझे इस्लाम स्वीकार करानेमें वे दिलचस्पी रखते थे। मैने उनसे कहा, "मै 'कुरान शरीफ' और पैगम्बर साहबके प्रति पूरा-पूरा आदर-भाव रख सकता हूँ, पर आप 'वेदो' और अवतारोको न माननेका इसरार क्यो करते है? उन्हीकी मददसे तो मै आज जो कुछ हूँ, हो पाया हूँ। 'भगवद्गीता' और तुलसी-दासकी 'रामायण' से मुझे अपार शान्ति मिलती है। मै खुल्लमखुल्ला कबूल करता हूँ कि 'कुरान', 'बाइबिल' तथा दुनियाके अन्यान्य धर्मोके प्रति मेरा अति आदर-

भाव होते हुए भी मेरे हृदयपर उनका उतना असर नही होता जितना कि श्रीकृष्णकी 'गीता' और तुलसीदासकी 'रामायण' का होता है।" तब वे मुझसे ना-उम्मीद हो गये और उन्होंने बेहिचक मुझसे कहा कि आपके दिमागमे जरूर कुछ गडबड है। यह एक उनकी ही मिसाल नही। उसके बाद ऐसे कितने ही मुसलमान मित्रोसे मेरी मुलाकात हुई, जो ऐसे ही विचार रखते है। फिर भी मै मानता हूँ कि यह मनःस्थिति चन्दरोजा है। मै जस्टिस अमीरअलीके इस विचारसे सहमत हूँ कि हारूँ-अल-रशीद और मामूं के जमानेमे इस्लाम दुनियाके तमाम मजहबोमे सबसे ज्यादा सहिष्णु था। पर आगे चलकर उनके जमानेके धर्म-गुरुओकी उदार-वृत्तिके खिलाफ प्रतिक्रिया शुरू हुई। प्रतिक्रियावादियोमे भी बडे विद्वान् और प्रभावशाली लोग थे और उनके प्रभावने इस्लामके उदार और सहिष्णु धर्मगुरुओ और तत्त्ववेत्ताओकी शिक्षाको प्राय दबा दिया। भारतमे उस प्रतिक्रियाके दुष्परिणाम हम आज भी भुगत रहे है। लेकिन इस बातमे तिल-मात्र भी सन्देह नही है कि इस्लामके अन्दर इस अनुदारता और असहिष्णुताको निकाल डालनेकी पूरी-पूरी क्षमता है। हम बडी तेजीसे उस दिनके नजदीक पहुँच रहे है जबकि इन मित्रोका सुझाया सूत्र सारी मनुष्य-जातिको मान्य हो जायेगा। इस समय आवश्यकता इस बातकी नही कि सबका धर्म एक बना दिया जाये, बल्कि इस बातकी है कि भिन्न-भिन्न धर्मोके अनुयायी और प्रेमी परस्पर आदर-भाव और सहिष्णुता रखे। हम निष्प्राण एकरूपता नही चाहते, बल्कि हम चाहते है, विविधतामें एकता। पूर्व परम्पराओ तथा आनुवशिक सस्कार, जलवायु और दूसरी आसपासकी बातोके प्रभावको उन्मूलित करनेका प्रयत्न निश्चय ही विफल होगा और ऐसा प्रयत्न करना अधर्म होगा। सब धर्मोकी आत्मा एक है, हाँ, वह भिन्न-भिन्न रूपोमे मूर्तिमान होती है। रूपोकी यह विविधता कालके अन्ततक कायम रहेगी। इसलिए जो बुद्धिमान है, समझदार है, वे तो ऊपरी कलेवरपर ध्यान न देकर भिन्न-भिन्न रूपोमे उसी एक आत्माका दर्शन करेगे। हिन्दुओके लिए यह आशा करना कि इस्लाम, ईसाई-धर्म और पारसी-धर्म हिन्दुस्तानसे निकाल दिया जा सकेगा, एक निरर्थक स्वप्न है और इसी तरह मुसलमानोका भी यह उम्मीद करना कि किसी दिन अकेले उनके काल्पनिक इस्लामका राज्य सारी दुनियामे हो जायेगा, कोरा ख्वाब है। पर अगर इस्लामके लिए एक ही खुदाको तथा उनके पैगम्बरोकी अनन्त परम्पराको मानना काफी होता हो तो हम सब मुसलमान है, इसी तरह हम सब हिन्दू और ईसाई भी है। सत्य किसी एक ही धर्म-ग्रन्थकी ऐसी सम्पत्ति नही है जो अन्यत्र हो ही नही।

[अग्रेजीसे]
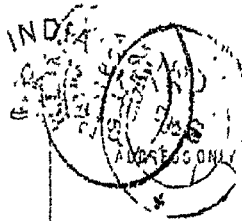
यंग इंडिया, २५-९-१९२४
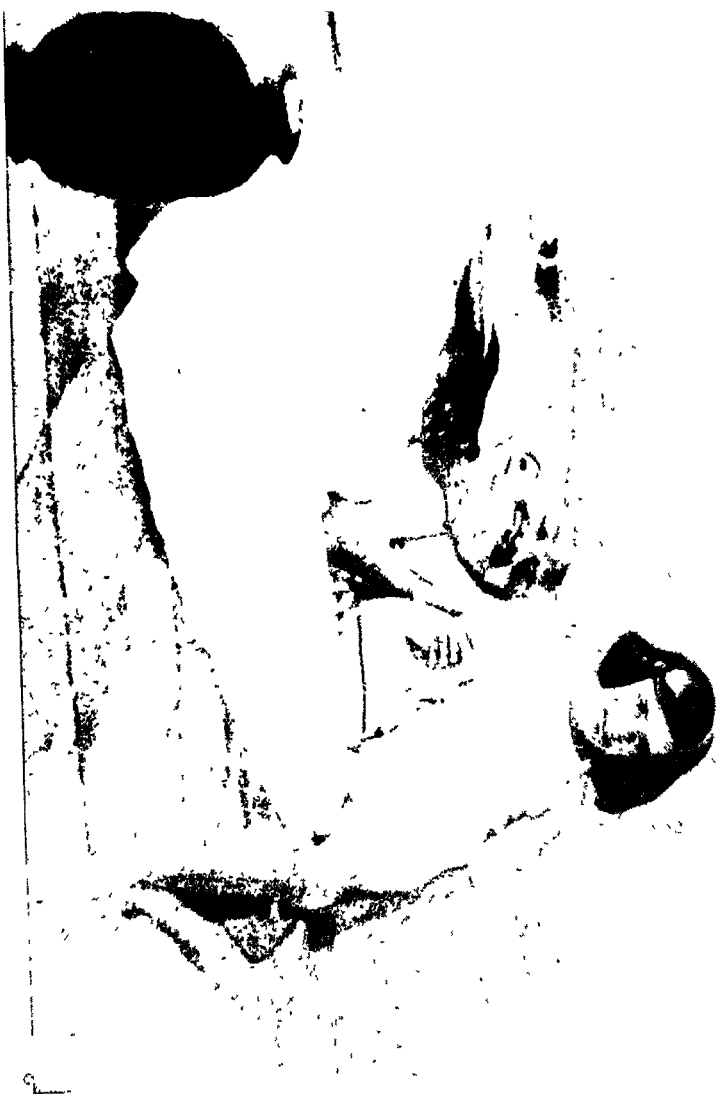
उपवासके दिनोंमें, इन्दिराके साथ

१३१. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको[1]

१९ सितम्बर, १९२४

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हे स्तब्ध नही होना चाहिए, वल्कि खुशी मनाओ कि ईश्वर मुझे अपना कर्त्तव्य-पालन करनेका वल और आदेश दे रहा है। मै और कुछ कर ही नही सकता था। असहयोगके प्रवर्तककी हैसियतसे मेरे कन्धोपर अधिक जिम्मेदारी है। लखनऊ और कानपुरके वारेमें अपने विचार मुझे जरूर लिख भेजो। मुझे यह प्याला पूरा पी लेने दो। मुझे पूर्ण आन्तरिक शान्ति है।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स

१३२. पत्र : लक्ष्मीको

[१९ सितम्बर, १९२४][2]

चि० लक्ष्मी,

यह पत्र भी सवके लिए है। लेकिन बच्चोकी तरह लक्ष्मीको अच्छी लडकी कहूँ या वुरी? वह वचन तो देती है पर पत्र नही लिखती — यह कैसी बात? मैं तो तुमसे सुन्दर अक्षरोमें लिखे पत्रकी उम्मीद करता हूँ। मै उपवासमें भी सब बच्चो-को याद करता हूँ और मेरे मनमें प्रश्न उठते है, "क्या सब बच्चे नियमसे कातते हैं? पढते है? सच वोलते है? नियमोका पालन करते है?" मुझे इन सब प्रश्नोका उत्तर कौन देगा?

मुझे उपवाससे वहुत शान्ति मिलती है। मेरी चिन्ता किसीको भी नही करनी चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

चि० लक्ष्मी
सत्याग्रह आश्रम, सावरमती

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५६४५) से।
सौजन्य. छगनलाल गाधी

१. देखिए पृष्ठ १९२ के सामनेका चित्र।
२. डाककी मुहरसे।

१३३. शौकत अलीसे बातचीत[1]

[१९ सितम्बर, १९२४][2]

मौलाना शौकत अली अगले दिन आये। मौलाना मुहम्मद अलीने उनके आगमनपर बड़े-बड़े मंसूबे बाँध रखे थे, क्योंकि उन्होंने यही मान रखा था कि वे गांधीजीको शायद, अपने निश्चयसे डिगा देंगे। दरअसल, गांधीजीने उनसे वादा किया था कि अगर शौकत अली या खुद वे उन्हें इस बातकी प्रतीति करा दें कि उनका उपवास करना नैतिक अथवा किसी भी दृष्टिसे गलत है तो वे अपना संकल्प छोड़ देंगे। किन्तु, जहाँतक उपवास जारी रखनेका सम्बन्ध था, उनके साथ हुई लम्बी बातचीतका कोई नतीजा नहीं निकला। हाँ, उससे उपवासका भीतरी अर्थ और भी स्पष्ट अवश्य हुआ।

[शौकत अली:] महात्माजी, इस स्थितिका निराकरण करनेके लिए हमने सचमुच क्या किया है? लगभग कुछ नहीं। अपने अखबारके जरिये तो आप लोगोंसे अपनी बात अवश्य कहते रहे हैं, लेकिन उसके लिए आपने अभीतक कोई लम्बा दौरा नहीं किया है। तो कृपया आप प्रभावित क्षेत्रोंका दौरा करके वातावरणको शान्त और निर्मल बनायें। यह उपवास तो इस गलतीको दूर करनेका तरीका नहीं है।

[गाधीजी.] मेरे लिए तो यह विशुद्ध रूपसे एक धार्मिक प्रश्न है। मैंने अपने आसपास देखा, अपने मनको पूछा, टटोला और पाया कि मै असमर्थ हूँ। लम्बी यात्रा करके भी मै क्या कर सकता था? आज जनसाधारण हमे सन्देहकी दृष्टिसे देखता है। आप यह भी न समझिए कि दिल्लीके हिन्दुओका मुझपर पूरा विश्वास है। उन्होने मुझसे मध्यस्थता करनेके लिए भी एक-मत होकर नही कहा और यह स्वाभाविक ही था, क्योकि हत्याएँ भी हुई हैं। जिन्होने दु:ख उठाया है, वे मेरी सुनेंगे, यह आशा मै कैसे कर सकता हूँ? मै तो उनसे उन लोगोको माफ कर देनेको ही कहूँगा जिन्होने उनके सगे-सम्बन्धियोका खून किया है। लेकिन यह किसको स्वीकार होगा? अजुमन भी तो हकीम साहबकी नही सुन रहा है। जब हम लोग उनके मामलेकी मध्यस्थता करनेके विषयमे सोच-विचार कर रहे थे, मैंने कोहाटके बारेमें सुना। मैंने अपने-आपसे पूछा, "अब तुम क्या करने जा रहे हो?" मै अदम्य आशावादी आदमी हूँ, लेकिन मेरी आशा बराबर ठोस तथ्योपर आधारित होती है। आप भी वैसे ही आशावादी हैं, लेकिन आप अपनी आशाका महल कभी-कभी बालूकी नीवपर भी खडा कर देते हैं। सच मानिए, आज आपकी कोई नही सुनेगा। गुजरातमें

१. महादेव देसाईकी डायरीमें छपे "द इनर मीनिंग ऑफ द फास्ट" (उपवासका मर्म) शीर्षक लेखसे उद्धृत।

२. नवजीवनके २८-९-१९२४ के अंकमें दी गई तिथि।

वीसनगरमे श्री अब्बास तैयवजी और महादेवके पल्ले भी वेरुखी ही पडी। अहमदावादमे भी आग भडकने जा रही थी, लेकिन उसे प्रारम्भमे ही शमित कर दिया गया। जव मैं गुजरातसे चला, उस समय उमरेठमे कुछ मुसीवत खडी हो रही थी। मुझे हाथपर-हाथ धरे चुपचाप यह सव देखना पडे, इससे प्रकट होता है कि मैं कितना असमर्थ हूँ। मैं अव भी सैकडो वहनोके स्नेह-सौजन्यका भाजन हूँ। आज वे भयके मारे मरी जा रही है। मैं खुद ही एक उदाहरण पेश करके उन्हे मरनेका रास्ता दिखाना चाहता हूँ।

अगर दोनो जातियोके वीच खरी, खुली और ईमानदारी तथा वहादुरीकी लडाई हो तो लडाईकी मुझे कोई चिन्ता नही। लेकिन आज तो यह लडाई लडाई नही, घोर कायरताकी शर्मनाक कहानी है। लोग पथराव करते है और भाग जाते है, हत्या करते है और भाग खडे होते है। वे अदालतोमे जाते है, झूठी गवाहियाँ देते है, झूठे सवूत पेश करते है। कितनी दर्दनाक स्थिति है? मैं कैसे, किस तरह उन्हे वहादुर वनाऊँ? आप अपने तई पूरी कोशिश कर रहे है। लेकिन मुझे भी तो अपने-भर पूरी कोशिश करनी चाहिए। मुझे वह शक्ति प्राप्त करनी ही है, जिससे मैं उन्हे प्रभावित कर सकूँ।

नहीं, आप असफल नहीं हुए हैं। उन्होंने आपकी बात सुनी थी; वे आपकी बात सुन भी रहे थे। लेकिन आपकी अनुपस्थितिमें उन्हें सलाह देनेवाले दूसरे लोग भी तो थे। उन्होंने उनकी बात सुनी और गलत रास्ता अख्तियार कर लिया। मुझे पूरा विश्वास है कि वे अब भी अपनी गलती महसूस करेंगे। जनसाधारणके मनमें जहर कम करनेके लिए आपने बहुत-कुछ किया है। मैं तो इन उपद्रवोंकी कोई परवाह नहीं करूँगा। मैं तो सीधे उनसे जाकर कहूँगा, "शैतानो, यह शैतानियतका खेल जी भरकर खेल लो। लेकिन सबके ऊपर खुदा बराबर बैठा हुआ है। तुम एक-दूसरेको भले ही मार डालो, लेकिन उसे नहीं मार सकते।" तो प्यारे भाई, खुदाके आड़े न आइए। आप तो उसके खिलाफ लड़ रहे हैं। अब वह होने दीजिए, जो वह चाहता है।

तो क्या मैं उससे लड रहा हूँ? अगर मुझमें कोई अभिमान या अहम् है तो वह अव समाप्त हो चुका है। सच मानो प्यारे भाई, यह उपवास मैंने निरन्तर कई दिनतक प्रार्थना करते रहनेके वाद ही शुरू किया है। मैंने रातके तीन-तीन बजेतक जगकर उससे पूछा है कि वताओ, अव क्या करूँ। १७ सितम्वरको उसका जवाव मेरे सामने विजलीकी तरह कौंध गया। अगर मैंने गलती की है तो वह मुझे माफ करेगा। मैंने जो-कुछ भी किया है, जो-कुछ कर रहा हूँ, पूरी तरह मनमें उसका भय रखते हुए किया है, और कर रहा हूँ। और सो भी कहाँ? खुदासे डरकर चलनेवाले एक मुसलमानके घर। मेरा धर्म मुझे यह सिखाता है कि जो कष्ट-सहनके लिए तैयार है, वही ईश्वरसे प्रार्थना कर सकता है, याचना कर सकता है। मेरे धर्ममें उपवास और प्रार्थना दोनो एक ही तरहके विधान हैं। लेकिन, मैं तो इस्लाममें भी ऐसे तपके वारेमें जानता हूँ। मैंने पैगम्वर साहवकी जीवनीमें पढ़ा है कि वे अकसर उपवास और प्रार्थना किया करते थे, लेकिन दूसरोको अपनी नकल

करनेसे मना करते थे। किसीने उनसे पूछा कि जो चीज आप खुद करते हैं, उसे दूसरोंको क्यों नहीं करने देते। उनका उत्तर था: "क्योंकि मैं दैवी पोषणपर जीता हूँ।" उनकी बड़ी-बड़ी उपलब्धियोंमें से अधिकांश उपवास और प्रार्थनाका परिणाम थी। मैंने उनसे यह सीखा है कि जिसका ईश्वरमें अनन्त विश्वास हो वही उपवास कर सकता है। पैगम्बर साहबको इलहाम ऐशो-आरामकी घड़ियोंमें नहीं हुआ करते थे। वे उपवास करते थे, प्रार्थना करते थे, लगातार कई राततक जागते रहते थे और जब उन्हें इलहाम होता था उस समय वे सारी रात खड़े रहते थे। इस समय भी मैं अपने सामने उपवास और प्रार्थनारत पैगम्बर साहबका चित्र देख रहा हूँ। भाई शौकत, मैं यह सहन नहीं कर सकता कि लोग आपपर और आपके भाईपर मेरे साथ किये गये वादेको तोड़नेका इलजाम लगायें। आपपर ऐसा आरोप लगाया जाये, इस बातका खयाल भी मेरे लिए असह्य है। मुझे इसके लिए मर मिटना चाहिए। यह उपवास मैं सिर्फ अपनी शुद्धिके लिए, शक्ति प्राप्त करनेके लिए कर रहा हूँ। मुझे गलत न समझें। मैं आपसे इस तरह बातें कर रहा हूँ, मानो मैं मुसलमान होऊँ। इसका कारण यह है कि मैंने अपने मनमें इस्लामके प्रति वही श्रद्धा जगा ली है जो आपमें है। इस्लामके प्रति अपनी समस्त श्रद्धाका विश्वास दिलाते हुए मैं कहूँगा कि उपवास और प्रार्थनाके बाद मुझमें दोनों जातियोंको अपनी बात समझानेकी ज्यादा ताकत आ जायेगी। यह मेरा अपना पक्का विश्वास है कि शरीरको जितना ही तपाया जाये, आत्माका रंग उतना ही निखरता है। हमें हुल्लड़बाजीके खिलाफ लड़ना है, उसे रोकना है पर अभी हममें उसके लिए अपेक्षित पर्याप्त आत्मिक शक्ति नहीं है।

यहाँ आकर शौकत अलीने अपनी दलीलका रुख बदल दिया।

क्या यह सोचना भी आपका फर्ज नहीं है कि आपके इस लम्बे उपवाससे देशको कितना बड़ा सदमा पहुँचेगा?

नहीं, बिलकुल नहीं। क्योंकि आदमी बहुत बार अपने-आपको धोखा देता है। वह अकसर दूसरोंको खुश करनेके लिए ऐसे काम करता है, जिससे उसे बचना चाहिए। इसलिए मनुष्यके लिए धर्मकी सीख यही है कि कोई सकल्प लेनेके बाद वह दुनियाके सामने उसपर दृढ़ रहकर खड़ा रहे। और यह कितना बड़ा मिथ्याभिमान है कि कोई सोचे कि दुनिया उसकी भारी तपस्या देखकर स्तब्ध रह जायेगी। और हम किस-किसकी इच्छाका खयाल रखें? इसका तो कहीं अन्त ही नहीं है। अगर राम सलाह लेने और दलील करनेके लिए रुके रहते तो वे कभी भी वनवासको न जाते और धरतीके दु:ख दूर नहीं कर पाते। वे किसीकी सलाहके लिए नहीं रुके। बस, निकल पड़े। क्यों? क्योंकि वे अपनी प्रतिज्ञाको अपने जीवनसे अधिक मूल्यवान मानते थे। कोई भी बड़ा संकल्प वही आदमी कर सकता है जिसकी ईश्वरमें प्रबल आस्था हो और जो ईश्वरसे डरकर चलनेवाला हो।

एक बात और। क्या ऐसा निश्चय करनेसे पहले आपको किसीसे सलाह नहीं कर लेनी चाहिए? क्या आपके लिए इसका भी खयाल करना जरूरी नहीं कि आपके स्वास्थ्य और शरीरपर इसका क्या प्रभाव पड़ेगा?

नही, मैं इसकी कोई जरूरत नही समझता। यह तो मेरे और ईश्वरके बीचकी बात है। और अगर मुझे किसीसे सलाह लेनी ही चाहिए तो बेहतर यही होता कि मैं यह प्रतिज्ञा करता ही नही। आप मेरे शरीर और स्वास्थ्यपर इसके प्रभावकी बात करते है, तो सुनिए, अगर मैं इतना दुर्बल हूँ कि इसे बरदाश्त नही कर सकता तो मर जाऊँगा। यह शरीर किस कामका है? जब मैं जेलमें था, मैंने आनन्दसे आह्लादित हो-होकर पैगम्बर साहबके साथियोकी जीवनियाँ पढी। कहते है, एक बार हजरत उमरने किसीको उपहार-स्वरूप ५०० दीनार भेजे। उन्हे देखकर उसका मन काँप गया और वह रोने लगा। उसकी पत्नीने पूछा कि क्यो रो रहे हो? उसने जवाब दिया, "मेरे पास माया आई है। अब मेरा क्या होगा?" यह उपहार हजरत उमर-जैसे पाक आदमीने भेजा था। फिर भी उसे देखकर वह काँप उठा, क्योकि वह माया थी, नश्वर पदार्थ था। जीवन भी वैसा ही है। अगर ईश्वरको अब भी इस शरीरसे कुछ काम लेना हो तो वह इसे कायम रखे। और उसे इससे जो काम लेना था, वह अगर वह ले चुका हो तो फिर इसे नष्ट हो जाने दे। दरअसल तो मैंने ऐसा सोचा था कि अगर उपवासकी यह अवधि पूरी होनेतक स्थिति नही सुधरती तो मैं स्थायी उपवासका व्रत लूँगा। हकीमजीने मुझसे ऐसा विचार मनमें न लानेको कहा। इसपर मैंने कहा, "लेकिन, मै इसे अपने मनसे कैसे निकाल सकता हूँ?" यह मेरी रग-रगमें समाया हुआ है, यह मेरे अस्तित्वका अश है। अगर मुसलमान हिन्दुओके साथ सद्भावना स्थापित करना अपने धर्मके विरुद्ध नही मानते तो उन्हे उनके साथ सद्भावना स्थापित करनी चाहिए। अगर वे ऐसा मानते हो और मुझसे ऐसा कहे कि नही, यह हमारे धर्मके विरुद्ध है तो मेरा निश्चित मत है कि फिर मेरे जीवित रहनेका कोई कारण नही रह जायेगा। उस हालतम तो मुझे मर ही जाना चाहिए। अभी पिछले दिनो ख्वाजा अहमद निजामी साहबसे भी मेरी साफ-साफ बातचीत हुई। मैंने उनसे कहा, "आप लावारिस बच्चो और अस्पृश्योको ही मुसलमान क्यो बनाते है? अच्छा हो आप मुझे मुसलमान बनाये ताकि जब मैं इस्लामको स्वीकार कर लूं तो दूसरे बहुत-से लोग भी मेरा अनुकरण करे। वे बेचारे इस्लाम कबूल करेगे तो कुछ इस कारणसे नही कि वे उसकी खूबियोको समझते है, उसके कारण तो कुछ और ही होगे। इन लोगोके मुसलमान बन जानेसे इस्लाम रचमात्र भी समृद्ध नही होगा।

यह बातचीत बहुत ही प्रभावित करनेवाली थी। मै इसके साथ न्यूनतम न्याय भी नहीं कर पाया हूँ। शौकत अली तो बिलकुल अभिभूतसे दिखाई पड़ रहे थे। वहाँसे उठते हुए उन्होने कहा, "तीन बातोंके लिए मै रोज ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ। एक तो है हिन्दू-मुस्लिम एकता; दूसरी यह कि मेरी माँ इस्लाम और भारतको आजाद देखनेके लिए जीवित रहे और तीसरी यह कि महात्मा गांधीका व्रत पूरा हो।"

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २३-१०-१९२४

१३४. तार: 'आउट लुक'को[1]

[१९ सितम्बर, १९२४ या उसके पश्चात्]

आउट लुक
लाहौर

तारके लिए धन्यवाद। [प्रचार-संघर्षमें] अस्थायी विराम समस्याका पूरा समाधान नहीं। आवश्यकता इस बातकी है कि हिन्दुओं और मुसलमानों दोनोंके अखबारोंमें से अतिशयोक्ति, मिथ्या-प्रचार तथा उत्तेजनाका विष जड़से समाप्त हो। मैं पैबन्द लगी कृत्रिम एकताके लिए नहीं बल्कि हृदयोंकी एकताके लिए जीना चाहता हूँ। इसलिए आपसे अनुरोध है कि अपना प्रयत्न उसी एकताकी सिद्धिमें लगायें।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १०४९३) की माइक्रोफिल्मसे।

१३५. टिप्पणियाँ

२० सितम्बर, १९२४

कताईमें मासिक बढ़ती

कातनेवालोंकी संख्या २,७८० से बढ़कर एक महीनेमें ही ४,९०८ तक पहुँच जाना कोई बुरी प्रगति नहीं है। पाठक इस बातपर गौर करें कि सदस्यों और गैर-सदस्यों, दोनोंकी संख्यामें काफी बढ़ती हुई है। गुजरातका नम्बर अब भी अव्वल ही है। लेकिन आन्ध्र इस दौड़में उसके बिलकुल पीछे लगा हुआ है। कर्नाटकका ४१ से एकदम कूदकर ३६२ तक जाना और तमिलनाडका ९० से ४५६ तक पहुँच जाना बहुत उत्साहवर्द्धक है। इस साल कर्नाटकको कांग्रेसका अधिवेशन अपने यहाँ करनेका गौरव प्राप्त होने जा रहा है, इसलिए वस्तुतः उसे तो अव्वल नम्बरपर ही होना चाहिए। इस महीनेका अभी और सूत आना बाकी है। उससे तो वृद्धि और भी अधिक स्पष्ट प्रतीत होगी। यदि इसी तरह प्रगति होती रहेगी तो बहुत जल्द कातनेवालोंकी

१. यह आउट लुककी ओरसे १९ सितम्बर, १९२४ या उसके पश्चात् भेजे गये तारके उत्तरमें भेजा गया था। इस तारमें गांधीजीको यह सूचित करते हुए कि हिन्दुओं और मुसलमानों दोनोंके अखबारोंने एक सप्ताहतक एक-दूसरेके विरुद्ध प्रचारका अभियान बन्द रखनेका निर्णय किया है, उनसे प्रोत्साहनका सन्देश माँगा गया था।

सख्या काफी बडी हो जायेगी। पाठक ध्यान रखे कि जितने स्वेच्छासे कातनेवाले है उन सबको इसमें शामिल नही किया गया है। जो लोग अनियमित रूपसे कातते है उनकी सख्या नियमित कातनेवालोकी सख्यासे कमसे-कम दूनी होगी और मजदूरी लेकर कातनेवाले इसमे शुमार नही किये गये है। यदि सिर्फ वे जिन्होने नियमित कातना शुरू कर दिया है, स्वराज्य मिलनेतक बराबर कातते रहे (यह कोई उनसे बहुत बडी अपेक्षा तो नही होगी) तो हम उसको कुछ जल्दी जरूर पा सकेगे।

सभापतिकी तरफसे इनाम

कताईके प्रति मौलाना मुहम्मद अलीका आकर्षण रोज बढ रहा है। घटो सार्वजनिक कार्योंमें लगे रहनेपर भी वे कताई करते रहे है और गत मासके २,००० गज पूरा करनेके लिए वे अकसर आधी-आधी राततक कातते रहे है। उन्होने मुझे यह घोषित करनेको कहा है कि उनके कार्य-कालमे जो प्रान्त गुजरातसे बाजी ले जायेगा उसे पाँच बढिया चरखे इनाम दिये जायेगे। जो प्रान्त यह बाजी मारेगा उसके सबसे लायक और गरीब कातनेवालोको ये मिलेगे। चरखे साबरमतीमें तैयार किये गये नवीनतम नमूनेके होगे। जहाँतक कातनेवालोकी सख्या और सूतकी मात्राका सम्बन्ध है, गुजरातसे कातनेमे बाजी मार ले जाना आसान बात नही है। सूतकी अच्छाई और बारीकीमें बगाल, कर्नाटक, आन्ध्र और तमिलनाड गुजरातसे बाजी मार ले जा सकते है, लेकिन उसको स्वेच्छासे कातनेवालोकी सख्यामे और सूतकी मात्रामें भी हरा देना, वह कभी आसानीसे न होने देगा। लेकिन मौलाना साहबने कातनेवालो-की सख्याका खयाल करके- यह इनाम रखा है। इसलिए जहाँतक मेरा खयाल है होडका जोर बगाल, तमिलनाड और कर्नाटककी तरफसे ही पडनेकी ज्यादा सम्भावना है। मुझे आशा है कि इस इनामकी कीमतकी ओर न देखकर काग्रेसके सदस्य इसी बातका खयाल करेगे कि यह इनाम काग्रेसके सभापतिकी ओरसे दिया जा रहा है। मै चाहता हूँ कि यह प्रतियोगिता गम्भीर और फलदायी हो। इस इनामको जीतनेके लिए केवल तीन महीने बाकी है। यदि सबके-सब प्रान्त प्रयत्न करेगे तो मै जानता हूँ कि मौलाना साहबको इससे बडा सन्तोष होगा। क्योकि स्वेच्छासे कातने-का राष्ट्रीय महत्त्व वे समझ गये है। अपना काता हुआ सूत दिखानेमे और उसको रोजाना अधिक सुधारकर बारीक और बराबर कातनेका प्रयत्न करनेमें वे बड़ी दिलचस्पी ले रहे है।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २५-९-१९२४

१३६. पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

मार्फत 'कॉमरेड'
दिल्ली
२० सितम्बर, १९२४

परमप्रिय मित्र,

आपके स्वास्थ्यका समाचार जाननेके लिए आपको पहले ही पत्र लिखना चाहता था। हकीमजीको[1] भेजे आपके तारसे मुझे अपना वह इरादा याद आ गया। कृपया पूर्ण रूपसे विश्राम करें।

दुःखी न हों। मेरे लिए तो उपवास धार्मिक कर्त्तव्य था। मैं चाहता हूँ, मित्रगण इस बातसे प्रसन्न हों कि ईश्वरने मुझे इस अग्नि-परीक्षामें प्रवेश करनेकी शक्ति दी है।

सस्नेह,

आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
लेटर्स ऑफ श्रीनिवास शास्त्री

१३७. पत्र : वसुमती पण्डितको

भाद्रपद बदी ७ [२० सितम्बर, १९२४][2]

चि० वसुमती,

मेरा उपवास २१ दिनका है। वह बुधवारको प्रारम्भ हुआ था, इसलिए आज उसका तीसरा दिन है। अक्तूबरकी ८वीं तारीखको, बुधवारके दिन समाप्त होगा। मुझे उपवास इस कारण करना पड़ा है कि इसके बिना मेरे लिए धर्मका पालन करना असम्भव हो गया था; इसलिए तुम निश्चिन्त रहना। मुझे परम शान्तिका अनुभव हो रहा है। भागकर मेरे पास आनेकी इच्छा न करना। तीसरे हफ्तेमें आ सकती हो, उस समय तो मैं भी तुम्हें देखना चाहूँगा। 'श्रीमती' तो पतेमें दिया हुआ है। पतेमें ऐसा ही लिखा जाता है। मेरे लिए तो तुम सदा सभी बेटी रहोगी। जब तुम देवलालीमें थीं, तब मैं तुम्हें पत्रमें क्या लिखा करता था, यह तो मैं भूल

१. हकीम अजमलखाँ।
२. डाककी मुहरसे।

गया हूँ। कटिस्नानके तुरन्त बाद नहानेमें कोई हर्ज नहीं है। एक दूसरा प्रयोग भी करना। एक छोटी-सी पीले रंगकी बोतल खरीद लेना। उसमें स्वच्छ पानी भरकर तीन घंटेतक धूपमें रखना। रातको उसमें से दो औंस पानी पीकर सो जाना। इस तरह धूपमें गरम किया हुआ इतना पानी रोज पीना। यदि वह गरम करनेके बाद ठण्डा हो जाये तो उसकी फिक्र न करना। उद्देश्य यह है कि पानीको सूर्यकी किरणें पीले पात्रके माध्यमसे मिलें। कहते हैं कि इस तरह तैयार किये गये पानीकी तासीर दस्तावर हो जाती है।

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती वसुमती पण्डित
मार्फत मेसर्स स्ट्रॉस ऐंड कं०

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ४५७) से।
सौजन्य: वसुमती पण्डित

१३८. टिप्पणी

निराश नहीं, असहाय[1]

देखता हूँ, ऐसा कहा गया है कि अपनी उपवास-सम्बन्धी टिप्पणीमें मैंने कहा, "मेरी निराशा तो और भी असह्य है।" मैंने इस विषयमें जो बात कही है उसमें "निराशा" नहीं "असहायावस्था" शब्दका प्रयोग किया गया है। जिस व्यक्तिकी ईश्वरमें तनिक भी आस्था है, वह कभी निराश नहीं होता, क्योंकि वह सदा इस बातमें विश्वास रखता है कि अन्तमें सत्यकी ही विजय होती है। ईश्वरमें विश्वास रखनेवाला व्यक्ति कभी भी असत्यके पीछे नहीं भागता और इसलिए वह कभी निराश हो ही नहीं सकता। इसके विपरीत चारों ओर घिरते अंधकारमें उसकी आशा सबसे अधिक चमक उठती है। लेकिन, मेरी असहायावस्था मेरे सामने एक स्पष्ट तथ्यके रूपमें मौजूद है। मैं इसकी उपेक्षा नहीं कर सकता। मुझे तो इसे बराबर स्वीकार ही करना चाहिए। तमिलमें एक बड़ी अच्छी कहावत है: "निराशकी एकमात्र आशा ईश्वर ही है।" इस कहावतमें छिपा सत्य मेरे सामने आज जितना उजागर कभी नहीं हुआ था। जिस व्यक्तिकी क्षमता ईश्वरने इतनी ज्यादा सीमित कर दी हो, उसके लिए इतने विशाल जन-समुदायको अपने साथ चलाना, उसे नियन्त्रित रखना, उसके प्रतिनिधिके रूपमें बोलना और काम करना इतना आसान तो नहीं है। इसलिए बराबर सतर्क रहनेकी आवश्यकता है। पाठकगण इस बातके लिए आश्वस्त रहें कि यह आखिरी कदम मैंने अपनी असहायावस्थाकी पूरी प्रतीति हो

१. देखिए "पत्र: देवदास गांधीको", २१-९-१९२४।

जानेके बाद ही उठाया और मैंने ईश्वरको करुण स्वरमे उसी प्रकार टेरा जिस प्रकार द्रौपदीने उसे पुकारा था, जब लगता था कि उसके पाँच पराक्रमी सरक्षकोंने उसे छोड दिया है। ईश्वरके दरबारमे उसकी पुकार व्यर्थ नही गई। पुकारका यह स्वर मात्र होठोंसे नहीं बल्कि अन्तस्तलकी गहराईसे उठना चाहिए। इसलिए ऐसी पुकार तभी सम्भव है जब आदमी सचमुच आन्तरिक व्यथासे विह्वल हो। मेरी पुकार इस उपवासके रूपमें निकली है, यद्यपि यह उपवास इस मामलेमे निहित समस्याकी दृष्टिसे किसी भी प्रकार पर्याप्त नही है। मेरा हृदय बार-बार कहता है.

"प्रभो, तू ही मेरा आश्रय है,
मुझे शरण दे।"

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २५-९-१९२४

१३९. आधे घंटेका अभ्यास[1]

२१ सितम्बर, १९२४

मौलाना शौकत अलीकी यह स्नेहपूर्ण फटकार मुझे अच्छी ही लगी। यद्यपि इन दिनो मैं हर मामलेमें हार ही मान लिया करता हूँ, लेकिन यह नही जानता था कि मुझे 'बडे भाई' के सामने भी हार माननी पडेगी। मैंने सोचा था कि उनका भारी-भरकम और बेडौल शरीर कताईकी कोमल कलाके उपयुक्त नही है। अब मैं उनकी हलके कामोको करनेकी क्षमताको घटाकर आँकनेके लिए उनसे क्षमा माँगता हूँ। इस तरहसे तो हजार बार हारकर भी मैं सुखी ही रहूँगा। अगर देशको लाभ हो तो मेरी हार क्या चीज है? मौलानाने जो नाराजगीके साथ इस बातका विरोध किया है कि कोई भी व्यक्ति उनके भारी-भरकम शरीरको देखकर उन्हे हलके कामोसे बरी करनेका साहस करे, उसे मैं अपनी कोई छोटी-मोटी उपलब्धि नही मानता।

१. यह मौलाना शौकत अली द्वारा एक पत्रमें उठाये गये मुद्देके उत्तरमें लिखा गया था। प्रसंग यह था कि गांधीजीने मौलाना साहबके भारी-भरकम शरीरको देखते हुए उन्हें कताईकी शर्तसे मुक्त करनेकी बात लिखी थी। इसपर उन्होंने लिखा कि अगर मेरे कताई करनेसे देशको गुलामीसे छुटकारा मिल सकता है तो मै रोज आधे घटेतक ही नहीं, सारा दिन कातनेको तैयार हूँ। इसी सिलसिलेमें उन्होंने काठिया-वाडमें खिलाफत-कोषके लिए चन्दा उगाहनेके अपने प्रयत्नका भी जिक्र किया था और लिखा था कि किस प्रकार कुछ मुसलमानों द्वारा गांधीजीपर उनकी (मौलाना साहबकी) आस्था होनेके कारण उनपर काफिर होनेका आरोप लगाये जानेके बावजूद उन्होंने काफी पैसा इकट्ठा कर लिया था। उन्होंने डा० अन्सारी और खिलाफत-कार्यालयके सभी कार्यकर्त्ताओंके कताईमें जुट जानेकी भी चर्चा की थी; और अन्तमें लिखा था कि "खुदाई फौज" में शामिल होनेके इच्छुक हर भारतवासीको — वह चाहे हिन्दू हो या मुसलमान, पारसी हो या ईसाई, सिख हो या यहूदी, गरीब हो या अमीर, सभीको — रोजाना आधा घटा कताई करके अपनी योग्यता प्रमाणित करनी चाहिए। देखिए **यंग इंडिया**, २५-९-१९२४।

उनके लिए कोई भी काम उनकी सामर्थ्यसे बहुत हलका या भारी नही है, यदि उससे देशको कुछ लाभ पहुँचता हो। क्या ही अच्छा होता, अगर प्रत्येक कार्यकर्त्ता इसी कडी कसौटीको अपनाकर चलता। मौलाना साहबने सूचित किया है कि खिलाफत-कार्यालयके सभी कार्यकर्त्ता इस काममे जुट गये है, डा० अन्सारीने भी अपने धन्धेके सिलसिलेमे अत्यन्त व्यस्त रहनेके बावजूद कताई शुरू कर दी है। यह सब जानकर शकरलाल बैंकरके मुँहमे तो पानी भर आया होगा। अगर यह उत्साह बना रहा तो मैं आशा करता हूँ कि मुसलमान लोग इस दिशामें बहुत शानदार काम कर दिखायेंगे। मौलानाकी लोकप्रियताका अनुमान इसी बातसे लगाया जा सकता है कि उनके द्वारा उल्लिखित बदनाम करनेवाले पर्चे बँटवाये जानेके बावजूद, वे अपने काठियावाडके दौरेमें खिलाफत-समितिके कोषके लिए २५,००० रुपये नकद ले आये और लगभग दस हजार रुपयेके वादे भी। इन पर्चोंके लेखकोको मालूम नही कि हमारे सम्बन्धोका आधार क्या है। जैसा कि मैं पहले ही बता चुका हूँ,[1] हम हर बातमे एक-दूसरेसे भिन्न है, फिर भी एक चीज ऐसी है जो हम दोनोको बाँधे हुए है। हम दोनो ही गुलामीसे तग आ चुके है। किसी भी मानवकी उचित स्वतन्त्रता-का अपहरण हमें नागवार गुजरता है। इसलिए हमने ईश्वरकी गुलामी स्वीकार की है। हम समस्त मानव-समाजके मुकाबले खडे हो सके, बल्कि जरूरत पडे तो उसका विरोध भी कर सके, इसी खयालसे हम दोनो सबकी रचना करनेवाले उस कुम्हारके हाथमें मिट्टीके पुतले बन गये हैं। वह चाहे हमें जैसे घड़ ले, मसल-कुचल दे, उलट-पुलट दे, फिर भी हम उसीके है। हम दोनोको जोडकर रखनेवाला यही एक तत्त्व है। मै मानता हूँ कि उस तत्त्वमें बाँधनेकी, जोडनेकी क्षमता है और इसलिए उसने हमें एक-दूसरेसे इस तरह जोड रखा है कि हम कभी भी अलग नही हो सकते। इसलिए ऐसा कहना कि मौलाना साहब मुझे ईश्वरकी तरह पूजते है, मौलाना साहबके ही शब्दोमें ईश्वरकी निन्दा तो है ही, साथ ही हमारे सम्बन्धोके बारेमे उनके घोर अज्ञानका भी द्योतक है।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २५-९-१९२४

१. देखिए "टिप्पणियाँ", १८-९-१९२४, उप-शीर्षक "हृदयकी एकता"।

१४०. उनके प्रति हमारा कर्त्तव्य

२१ सितम्बर, १९२४

श्री एन्ड्रचूजने अपने "आदिवासी जातियाँ" शीर्षक लेखमें[1] अपनी सधी लेखनीसे बड़े ही सुन्दर ढंगसे तीन चीजोको एक साथ पिरो दिया है। श्री अ० वि० ठक्करने पंचमहालके 'भील-सेवा-मण्डल' के कोषमें धन देनेके लिए जो जोरदार अपील की थी, उसका उन्होने समर्थन किया है। श्री एन्ड्रचूजके उद्‌गारोसे मैं हार्दिक सहमति प्रकट करता हूँ। और श्री ठक्करका परिचय भला मैं क्या दे सकता हूँ! वे तो मेरे भारत लौटने और प्रसिद्धि अर्जित करनेसे पहले ही मातृभूमिकी सेवाके लिए अपना जीवन अर्पित कर चुके थे। गुजरातने उडीसाके अकाल-पीडितोके लिए जो सहायता-कार्यका संगठन किया था, श्री ठक्कर द्वारा उसका सुयोग्य संचालन हमें आज भी अच्छी तरह याद है। गुजरातके अस्पृश्योके प्रति अपने एकनिष्ठ सेवाभावके कारण वे उनकी आँखोका तारा बन गये हैं। किन्तु, उन्हें तो सेवाकी धुन लगी हुई है, सो उनका ध्यान अब गुजरातके एक ऐसे वर्गकी ओर गया जो अस्पृश्योसे भी अधिक गिरी हुई अवस्थामें है और जिसे सहारा देनेवाले हाथकी और ज्यादा जरूरत है। इसलिए वे पंचमहालके भोले-भाले भीलोके त्राता बन गये हैं। आशा है, लोग श्री ठक्करकी अपील अनसुनी नही करेंगे।

आदिवासियोके सम्बन्धमें लिखते हुए श्री एन्ड्रचूजके लिए भला यह कैसे सम्भव था कि वे अपने मित्र, शिष्य और सहयोगी विली पियर्सनकी चर्चा न करते? भारतकी सेवाके लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर कर देनेवाले और नेकसे-नेक अग्रेजकी श्रेणीमें आनेवाले इस व्यक्तिकी स्मृतिमें समुचित प्रशसाके दो शब्द कहनेका अवसर वे हाथसे कभी नही जाने देते। श्री गोखलेने जब श्री एन्ड्रचूजसे दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहियोकी सहायताके लिए तत्काल वहाँ जानेको कहा तो विली पियर्सनने स्वेच्छासे अपनी सेवाएँ अर्पित की और वे श्री एन्ड्रचूजके साथ दक्षिण आफ्रिका गये थे। जब मैंने इन दोनो अग्रेजोको देखा तो मेरे साथ पहली नजरमें प्यार वाली बात चरितार्थ हो गई। ये पक्तियाँ लिखाते समय भी पियर्सनकी सुन्दर मुखाकृति, उनकी आँखोका निष्कपट, सौम्य और मोहक भाव मेरे सामने सजीव हो उठता है। मुझे पियर्सनको पहले दक्षिण आफ्रिकामें और फिर शान्तिनिकेतनमें कार्यरत देखनेका अवसर मिला। उनसे अधिक आत्म-त्यागी और कर्त्तव्यनिष्ठ व्यक्ति मिल पाना कठिन है। ईमानदारीका कोई भी काम वे अपनी शानके खिलाफ नही समझते थे। उनके लेखे तो काम जितना छोटा होता वह उतनी ही ज्यादा इज्जतका था। शान्तिनिकेतनमें रसोईघरकी नालियो और मेहतरोके घरोको साफ करनेके लिए अपनी सेवाएँ उन्होने ही सबसे

१. २ अक्तूबर, १९२४ के *यंग इंडिया*में प्रकाशित।

पहले अर्पित की। उनका काम परम्परागत अर्थोंमे राजनीतिक नही था, किन्तु सिर्फ इसी कारण वह कोई कम साहसपूर्ण काम नही था और फिर यह बात भी याद रखनी चाहिए कि जब वे जापानमें थे, उन्होने ब्रिटेन द्वारा दूसरे देशोके शासन और शोषणकी कटु आलोचना करते हुए एक लेख लिखा था, जिसके कारण वे परेशानीमे पड गये थे, किन्तु इसकी उन्होने कोई परवाह नही की। जब वे मृत्यु-शय्यापर पड़े थे, उन्होनें एक वसीयतनामा लिखाया, जिसमे वे शान्तिनिकेतनके उस बालकको नही भूले जिसे वे पुत्रवत् प्यार करते थे। उनकी मृत्युके बाद महाकविने उनका स्मारक बनानेके लिए २५,००० रुपयेके लिए एक अपील निकाली। उस पैसेसे शान्तिनिकेतनमें 'पियर्सन अस्पताल' का निर्माण होना था। उन दिनो मैं जुहूमे स्वास्थ्य-लाभ कर रहा था और एन्ड्रचूज एक अभिभावककी भाँति मेरी देख-रेख कर रहे थे। एक दिन आकर उन्होने प्रेम और व्यथा-विह्वल हृदयसे मुझे बताया कि लोगोने महाकविकी अपीलकी ओर बहुत कम ध्यान दिया। मैंने उन्हे सान्त्वना देते हुए कहा कि भारतकी जनता तो उन्हे ज्यादा नही जानती थी और इसलिए हम लोगोको, जो उनको इतनी अच्छी तरह जानते हैं, उसके सहयोग न करनेपर परेशान न होना चाहिए और न हमारे मनमे जनताके प्रति कोई कड़ुवाहट ही आनी चाहिए। मैंने उनसे यह भी कहा कि कोई अनुकूल अवसर आनेपर मैं महाकविकी अपीलका काम अपने हाथमे लूँगा और स्मारकके लिए जनताका सहयोग प्राप्त करनेकी कोशिश करूँगा। श्री एन्ड्रचूजने मुझे वह अवसर प्रदान किया है। अब मैं 'यग इडिया' के पाठकोसे यथा-शक्ति अपना-अपना योगदान करनेका अनुरोध करता हूँ। तीन हजारसे ऊपर तो इकट्ठा किया जा चुका है। अब शेष इक्कीस हजार रुपये जुटा पाना उदार जनताके लिए बहुत मामूली बात है।

श्री एन्ड्रयूजने इस लेखमें जिस तीसरी चीजको पिरोया है, वह है—चरखा। इसको उन्होने शायद मेरा खयाल करके ही शामिल किया है। लेकिन, मैं जानता हूँ कि वह समय आ रहा है, जब चरखेको अपने अस्तित्वके लिए मुझपर निर्भर नही करना पडेगा। देशके बडेसे-बडे आदमीको भी, यदि उसे गरीबोके साथ सहानुभूति है तो चरखेका समर्थन करना ही पड़ेगा। सिर्फ चरखेमें ही यह खूबी है कि उसे जहाँ भारतके सभी लोग अपना सकते हैं, वहाँ उससे इतनी कमाई भी की जा सकती है जिससे देशके गरीब किसानोके स्वल्प अर्थ-साधनकी यत्किंचित् पूर्ति हो सके, इतना ही नही इससे देशके करोडो भूख-पीडितोको जीवित रहनेके लिए दो कौर भोजन भी प्राप्त हो सकता है। यह एक ऐसी चीज है जो अमीरोकी ओरसे अकालपीडित जनताको दिये जानेवाले सदाव्रतोकी पतनकारी प्रथाका स्थान ले सकती है और उनके मनमें ऐसा आत्म-विश्वास पैदा कर सकती है कि जबतक वे कताईके लिए तैयार है, उन्हें भूखो नही मरना पडेगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २-१०-१९२४

१४१. धर्मके लिए "अधर्म"

एक सज्जन पूछते हैं :

"मलाबार-संकट-निवारणके लिए यदि कोई जुआ खेले और जुएसे मिलनेवाला पैसा मलाबारके पीड़ितोंको देनेका प्रस्ताव करे तो उसके जुआ खेलनेको आप क्या कहेंगे -- उचित या अनुचित?"

जुआ खेलना सर्वथा त्याज्य है। यदि जुएके बिना सकट-निवारण न होता हो तो भले ही लाखो भाई-बहन भूख और दु:खसे मर जाये। अधर्मसे धर्मकी उत्पत्ति हो ही नही सकती। इसलिए मेरी सबको सलाह है कि कोई भी मलाबारके दु:खी भाई-बहनोके लिए जुआ न खेले। परन्तु हाँ, वे जुआ खेलना बन्द करके उसकी बचतका रुपया मुझे जरूर भेज दें। इससे एक पन्थ दो काज होगे। एक तो वे खुद इस कुटेवसे बचेगे और दूसरे कुटेवमें लगनेवाली रकम बचेगी, जो उन लोगोके काममे आ जायेगी जिन्हे उसकी जरूरत है। जो व्यक्ति सकट दूर करनेका विचार करता हो उसके मनमे जुआ खेलनेकी बात आ ही कैसे सकती है? वह तो खुद भूखा रहकर औरोकी भूख बुझायेगा।

लेखक ओरपाड ताल्लुकेके अपने गाँव करमलामे प्रचलित भीषण जुएका हुबहू चित्र खीचकर कहते है कि उसमे लडकेतक शरीक होते हैं। कभी-कभी तो उसमें बडे लडाई-झगडे भी हो जाते हैं। वे इसका उपाय पूछते है। इलाज यह है कि वहाँ लोकमत उसके खिलाफ तैयार किया जाय। लोकमतका ऐसी बुराइयोपर बडा असर होता है। जिस तरह उजाला होते ही चोर आदि छिप जाते हैं उसी तरह लोकमत रूपी सूर्यका प्रकाश होते ही ये बुराइयाँ दूर हो जाती हैं। यदि गाँवके ज्यादातर लोग जुआ खेलते हो और सिर्फ दो-चार लोग ही इस ऐबसे बरी हो तो वे पहले गाँव-वालोको चेतावनी दे और यदि उसके बाद भी कुछ असर न हो तो वे गाँव छोडकर चले जाये।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २१-९-१९२४

१४२. 'नवजीवन' के पाठकोंसे

इस अंकके प्रकाशित होनेतक मेरे प्रायश्चित्तकी खबर तो आप लोगोको मालूम हो ही गई होगी। मेरे अनशनसे आपको घबड़ा जानेकी जरूरत नही है। उसका अनुकरण तो आप हरगिज न कीजियेगा। प्रायश्चित्त जिसको करना हो उसीको करना चाहिए। दूसरे लोग सिर्फ उसे मदद करते रहे। आप सब गुजराती भाई-बहन उन कामोमे तन, मन और धनसे मदद कीजिये, जिन्हे आपने अंगीकार किया है। इससे आपको ईश्वर भी मिलेगा और स्वराज्य भी।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २१-९-१९२४

१४३. श्रद्धाकी परीक्षा

> **मुझे आशंका थी कि बहिष्कारके त्यागकी बातसे राष्ट्रीय स्कूलोंके दुर्बल क्षेत्रोंमें कुछ अस्थिरताका वातावरण उत्पन्न हो जायेगा। लगता है कि उसका ऐसा असर हुआ है। कितने ही शिक्षक पूछने लगे हैं कि क्या अब राष्ट्रीय स्कूलोंको सरकारी स्कूलोमें परिवर्तित न किया जायेगा?**

उपर्युक्त उद्धरण मैंने एक पत्रमे से लिया है। पहली बात तो यह है कि मैंने बहिष्कारका 'त्याग' करनेकी बात नही कही है, 'त्याग' शब्दका उच्चारणतक नही किया है। मैंने तो उसे 'मुल्तवी' रखनेका सुझाव दिया है। दूसरी बात यह कही है कि वर्तमान राष्ट्रीय स्कूल जिस तरह अभी सरकारसे किसी तरहका सम्बन्ध रखे बिना चल रहे हैं, उसी तरह चलाये जायें और यदि हममे शक्ति हो तो हम नये राष्ट्रीय स्कूलोकी स्थापना भी करे। तीसरी बात यह है कि मुल्तवी रखनेका अर्थ यह कदापि नही है कि जिनकी बहिष्कारमें अपनी स्वतन्त्र श्रद्धा है, उन्हे भी उसका त्याग करना चाहिए।

मेरे सुझावका अर्थ केवल इतना ही है कि जो लोग अपनी स्वतन्त्र श्रद्धासे प्रेरित होकर नही, बल्कि कांग्रेसके अनुशासनमें बद्ध होकर, बहिष्कार कर रहे हैं वे एक वर्षके लिए इससे मुक्त किये जाते हैं, और जो बहिष्कारके कारण कांग्रेससे बाहर रहे हैं वे कमसे-कम आगामी वर्षके लिए कांग्रेसमे शरीक हो जायें और जिन आवश्यक और सर्वमान्य कार्योंके बारेमें कोई मतभेद नही है, उनमें भाग लें और जनताको प्रशिक्षित करें।

मेरे सुझावसे जनताकी और व्यक्तियोकी परीक्षा हो जायेगी। यदि चार वर्षके अनुभवके बाद यह मालूम हुआ कि स्वतन्त्र रूपसे बहिष्कारको माननेवालोकी संख्या

अल्प है तो कांग्रेसमें बहिष्कार कदापि नही चल सकता। कांग्रेस जनताकी इच्छाको ही व्यक्त कर सकती है, फिर वह चाहे अच्छी हो चाहे बुरी और तभी वह राष्ट्रीय संस्था मानी जानी चाहिए। अत. कांग्रेसकी प्रवृत्तिके रूपमें केवल ऐसी ही प्रवृत्ति सफलतापूर्वक चलाई जा सकती है जिसमें बहुसख्यक लोगोकी अपनी स्वतन्त्र श्रद्धा हो। किसी प्रवृत्तिको कांग्रेसके प्रस्तावके कारण ही स्वीकार करनेवालोकी सख्या हमेशा कम ही होनी चाहिए। उनकी मददसे कांग्रेसका तन्त्र नही चल सकता, बल्कि कांग्रेस स्वय उनके लिए सहारा सिद्ध होती है। वे कांग्रेसको कोई सहारा नही दे सकते। कांग्रेसका आधार तो स्वतन्त्र श्रद्धावाले लोग ही होने चाहिए। यदि पाठक ससारकी चालू सस्थाओकी ओर दृष्टिपात करेंगे तो वे देखेंगे कि प्रत्येक प्राणवान् सस्थाका सचालन उपर्युक्त नियमके अनुसार ही होता है। कारण स्पष्ट है। सस्थाके अपने प्राण नही होते, उसका अपना स्वतन्त्र अस्तित्व नही होता। सस्थाके प्राण उसके सचालक होते हैं। वे ही सस्थाको बल प्रदान करते है। मद्य-निषेध सघके प्राण उसके अडिग मद्य त्यागी सदस्य ही होते है। सघ त्यागियोके त्यागमें वृद्धि नही कर सकता। लेकिन कल्पना कीजिए कि ऐसे सदस्य अच्छी सख्यामें न मिलें और इस कारण सघको बन्द करना पडे तो क्या इसलिए वे लोग, जो मद्य-त्यागी हैं, मद्यपान करने लगेंगे या कि वे लोगोको मद्यका त्याग करनेकी बात सिखानेके लिए तपश्चर्या करते हुए अन्य उपायोकी खोज करेंगे ?

मेरे सुझावका उद्देश्य यह स्पष्ट कर देना है कि हम बहिष्कारको लोगोके साथ जोर-जबरदस्ती करके नही चलाना चाहते। जोर-जबरदस्तीमें हिंसा है। हमारे आन्दोलनकी कल्पना तो जोर-जबरदस्ती नही थी, परन्तु हमारे मनमें और हमारे कार्योंमे वह थी। इसका पक्का प्रमाण है, हिन्दू-मुसलमानोके बीच फैला हुआ वर्तमान वैमनस्य। स्वराज्य-वादी और अपरिवर्तनवादीके बीच जो खाई है वह भी इसी ओर सकेत करती है। इसका निवारण करना स्वतन्त्रतावादीका प्रथम कार्य है। मैंने जिस तरह जोर-जबरदस्तीका अर्थ हिंसा किया है उसी तरह [मैं] स्वतन्त्रताका अर्थ अहिंसा करता हूँ। [ ] हम अहिंसा शब्दसे डरते हैं। हम सब स्वतन्त्रताके पुजारी होनेका दावा करते है, लेकिन उसके मूल स्वरूप, अहिंसा अथवा प्रेमकी हम उपेक्षा करते है। हम लोगोमें व्याप्त इस दोषको मैंने देख लिया है। इसीसे मुझे अपने कर्तव्यका भान हो गया है और मैं प्रत्येक बहिष्कारवादीको यह बात समझानेकी कोशिश करता हूँ। यदि बहिष्कारमें कांग्रेसके अधिकाश सदस्योकी श्रद्धा नही है तो बहिष्कारमे स्वतन्त्र श्रद्धा रखनेवाले चन्द लोगोका कांग्रेसपर अधिकार बनाये रखना हिंसा है।

लेकिन ऐसे लोग कांग्रेसपर अधिकार बनाये रखें अथवा कांग्रेस बहिष्कारको स्थगित कर दे, इसका अर्थ यह तो कदापि नही है कि बहिष्कारमें जिनकी श्रद्धा और विश्वास है, वे बहिष्कारका त्याग कर दें। वस्तुत तो हमें बहिष्कारको स्थगित करके यह देखना है कि कितने लोग सच्चे अर्थोमें बहिष्कारवादी हैं। यदि ऐसे बहिष्कारवादियोकी संख्या वर्षके अन्तम थोड़ी ही रह जाये तो यह बात सिद्ध हो जायेगी कि कांग्रेसमें बहिष्कारकी बात नही रखनी चाहिए। आज जो लोग अपने-आपको बहिष्कारवादी मानते हैं, यदि वर्षके अन्तमें भी वे अपने विचार और आचारपर

कायम रहें तो कांग्रेस फिर बहिष्कार शुरू कर सकती है। लेकिन बहिष्कारके इस पुनरुद्धारमें एक यह खूबी होगी कि उसमें से बलात्कार-रूपी डंक बिलकुल निकल जायेगा। यदि वर्षके अन्तमें यह परिणाम न निकला और सरकारकी पद्धतिमें भी कोई परिवर्तन न हुआ तो बहिष्कारवादी कांग्रेसमें उसका पुनरुद्धार करनेका प्रयत्न तो न करेगा परन्तु अपने आचार-बलसे धीरे-धीरे अन्य लोगोंको बहिष्कारके प्रति आकर्षित करेगा। स्वतन्त्र इच्छासे किया जानेवाला शान्त बहिष्कार कोई आसान बात नहीं। यदि वह संकोचवश आरम्भ किया जाता है तो वह लम्बे समयतक नहीं चल सकता। आवेगमें किया गया बहिष्कार सोडेके उफानकी तरह क्षणिक होगा। ज्ञानपूर्वक और निश्चयपूर्वक किया गया बहिष्कार ही सब विघ्न-बाधाओंको पार कर सकेगा और डिगेगा नहीं। अतएव मैं बहिष्कारवादियोंसे यही उम्मीद करता हूँ कि यद्यपि कांग्रेसमें बहिष्कार स्थगित रहेगा, फिर भी वे उसपर टिके रहेंगे, इतना ही नहीं, वरन् उस-पर दृढ़तापूर्वक आचरण करेंगे। गुजरातसे तो मैं इसके अलावा कोई दूसरी आशा करता ही नहीं। यदि हम इस तरह अगले वर्षतक निजी बहिष्कारपर कायम रहकर भी सहयोगियोंका तिरस्कार न करनेका पूरा पाठ पढ़ लें, तो यह बात हमारी अमूल्य उन्नतिकी परिचायक होगी और उससे स्वराज्यकी अपनी यात्रामें हम बहुत आगे बढ़ जायेंगे।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, २१-९-१९२४

१४४. पत्र : हरनाम सिंहको

मार्फत 'कॉमरेड' कार्यालय
दिल्ली
२१ सितम्बर, १९२४

प्रिय राजा साहब,

अपने इस गहरे दुःखमें मेरी सादर संवेदना स्वीकार करें। ईश्वर श्रीमती हरनामसिंहकी आत्माको शान्ति दे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

राजा सर एस० हरनाम सिंह
'मेनर'
शिमला

अंग्रेजी पत्र (सी० डब्ल्यू० ३७११) से।
सौजन्य : राजकुमारी अमृत कौर

१४५. पत्र : अब्बास तैयबजीको

मार्फत मौलाना मुहम्मद अली
दिल्ली
२१ सितम्बर, १९२४

भाई साहब,

मेरे उपवासके कारण आप सब चिन्तित हो रहे होंगे। लेकिन मैं क्या करता? मैं तो विवश था। मेरे पास खुदाके आगे रोनेके सिवा और कोई रास्ता ही न था। ऐसी हालतमें मैं कर ही क्या सकता था? खुदाकी मर्जी होगी तो वह मुझे मरने न देगा। इस समय मुझे रेहानाके भजन सुननेकी बड़ी इच्छा हो रही है। आपके खेड़ामें चरखे खूब चल रहे होंगे। भुर्रर . . .

सदैव आपका भाई,
मोहनदास गांधी

गुजराती पत्र (एस० एन० ९५४९) की फोटो-नकलसे।

१४६. पत्र : देवदास गांधीको

दिल्ली
भाद्रपद बदी ८ [२१ सितम्बर, १९२४][1]

चि० देवदास,

बा, रामदास आदि आ गये हैं। जमनाबहन और यशवन्तप्रसाद भी आये हुए हैं। 'नवजीवन' देखा। मुझे तो बहुत पसन्द आया। तुम्हारा वस्तु-विन्यास और बडे अक्षरो द्वारा की गई सजावट भी अच्छी है। तुमने मेरे सन्देशका[2] जो अनुवाद किया है वह तो बहुत ही सुन्दर है। उसमे मुझे कही जरा भी सुधार करनेकी गुंजाइश दिखाई नही दी। "होपलेसनैस"[3] के स्थानपर "हैल्पलेसनेस"[4] का उपयोग करके तुमने मेरे उत्तराधिकारी होनेके अधिकारको सिद्ध कर दिया है। ईश्वर तुम्हे दीर्घायु करे और तुममे आज जो चारित्र्य-सौन्दर्य और कौशल है, उसमे वृद्धि करे। मैं अत्यन्त आनन्दमें हूँ। अभी तो उपवास [का कोई प्रभाव] मालूम ही नही हो रहा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (जी० एन० २१३३) की फोटो-नकलसे।

१. पत्रमें उपवासकी जो चर्चा की गई है उससे पता चलता है कि यह पत्र १९२४ में लिखा गया था।
२. देखिए "गाधीजीका खुलासा", १८-९-१९२४।
३ और ४. मूलमें ये दोनों शब्द अंग्रेजीमें दिये गये हैं। देखिए "टिप्पणी", २१-९-१९२४।

१४७. पत्र : गंगाबहन वैद्यको

[दिल्ली]
भाद्रपद वदी ८ [२१ सितम्बर, १९२४][1]

पूज्य गंगावहन,

आप चिन्ता न कीजिएगा। आप तो ज्ञानी है। मैं धर्मके पालनके लिए जो उपवास आदि करता हूँ, मेरी इच्छा है कि उससे आप सब प्रसन्न हो। यदि ईश्वरको इस देहसे मेरे द्वारा अभी कोई काम कराना होगा तो वह मुझे मरने न देगा। आप भी ऐसा ही विश्वास रखे।

अभ्यास लगनके साथ जारी रखना। सब बालकोकी माँ बनना। यह आपकी शक्तिसे बाहर नही है।

भगवान आपको इतनी शक्ति दे जिससे आपका वैधव्य जगतके लिए उपकारी सिद्ध हो।

बापूके आशीर्वाद

पूज्य गगावहन
सत्याग्रह आश्रम
साबरमती

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ६१९७) से।
सौजन्य . गगावहन वैद्य

१४८. पत्र : तुलसी मेहरको

दिल्ली
[२१ सितम्बर, १९२४][2]

चि० तुलसी मेहर,

आश्रमका पत्र तुमारे नामपर भेजनेका निश्चय मैंने कल ही कीया था। आज तो तुमारा पत्र आ गया। तुम और दुसरे आश्रमवासीयोसे मेरी तो यही प्रार्थना है की [सब सत्य और अहिंसाका सेवन करे। जगतमें किसी प्राणीकी घृणा न करें,] और क्षुधासे पीडीत करोडो हिन्दवासीयो युवाकाते बुने और उसीका प्रचार करें। अक्षरज्ञान अवश्य हासिल करे। मानसिक शक्तिमे वृद्धि करे। प्रात चरखाको प्रधान पद दे।

१ डाककी मुहरसे।
२. डाककी मुहरसे।

मैं खूब आनंदमें हूँ। मेरी थोड़ी सी भी चिन्ता न करें।

बापूके आशीर्वाद

तुलसी मेहर
सत्याग्रह आश्रम
साबरमती

मूल पत्र (जी० एन० ६५२०) की फोटो-नकलसे।

१४९. उपवासकी कहानी

२२ सितम्बर, १९२४

मैं पाठकोंको विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि मैंने उपवास बिना सोचे-समझे प्रारम्भ नहीं किया। सच तो यह है कि जबसे असहयोगका जन्म हुआ, तभीसे मेरी जिन्दगी बराबर दाँवपर लगी रही है। इसे मैंने खूब सोच-समझकर शुरू किया। इसमें जो खतरे हैं, उनके बारेमें मुझे काफी चेतावनी मिल चुकी थी। मैं कोई भी काम बिना प्रार्थनाके नहीं करता। मनुष्यसे भूल होती ही है। वह कभी भी विश्वास-पूर्वक यह नहीं कह सकता कि वह जो-कुछ करने जा रहा है, वह सही ही है। जिससे वह अपनी प्रार्थनाके परिणामस्वरूप ईश्वरसे प्राप्त इंगित समझ सकता है, वह मात्र उसके अहंकारकी प्रतिध्वनि भी हो सकती है। ईश्वरका अचूक मार्गदर्शन तो वह तभी प्राप्त कर सकता है, जब उसका हृदय सर्वथा निर्दोष हो और उसमें बुराईके लिए कोई गुंजाइश ही न हो। मैं अपने बारेमें ऐसा कोई दावा नहीं करता। मेरी आत्मा तो अपूर्ण है और वह अभी उठती-गिरती, भूलती-भटकती, सही मार्ग पानेका प्रयत्न ही कर रही है; लेकिन मैं अपने और दूसरोंके ऊपर प्रयोग करके ही तो ऊपर उठ सकता हूँ। मैं ईश्वरकी अखण्ड एकता, और इसीलिए मानव-समाजकी भी अखण्ड एकतामें विश्वास करता हूँ। हम शरीरसे अनेक हैं, लेकिन इससे क्या अन्तर पड़ता है? हमारी आत्मा तो एक ही है। परावर्तनके कारण सूर्यकी किरणें अनेक दिखाई देती हैं, लेकिन उनका उद्गम तो एक ही है। इसलिए मैं दुष्टसे-दुष्ट व्यक्तिसे भी अपनेको अलग नहीं कर सकता (और न सज्जनसे-सज्जन व्यक्तिसे मेरी तद्रूपताके बारेमें इनकार किया जा सकता है)। इसलिए मैं चाहूँ या न चाहूँ, मैं अपने प्रयोगमें समस्त मानव-जातिको शामिल किये बिना नहीं रह सकता और न इस प्रयोगके बिना ही मैं रह सकता हूँ। जीवन प्रयोगोंकी एक अन्तहीन शृंखला ही तो है।

मुझे मालूम था कि असहयोग एक खतरनाक प्रयोग है। असहयोग अपने-आपमें एक अस्वाभाविक, बुरी और पापमय वस्तु है। लेकिन, मेरा निश्चित विश्वास है कि *अहिंसात्मक असहयोग कभी-कभी मनुष्यका कर्त्तव्य हो जाता है।* यह बात मैंने अनेक

प्रसगोपर सिद्ध करके दिखा दी है। लेकिन, जन-साधारणकी वहुत वडी सख्यापर उसका प्रयोग करनेमें गलतीकी वहुत सम्भावना थी। किन्तु, असाध्य रोगोके लिए वैसे ही कडे उपचारकी ही आवश्यकता होती है। सामने अराजकता और उससे भी वुरी स्थितिका खतरा मौजूद था। उसका एक-मात्र विकल्प अहिंसात्मक असहयोग ही था। और चूंकि असहयोगको अहिंसात्मक रखना था, इसलिए मुझे अपनी जिन्दगीको दाँव पर लगा देना पडा।

अभी दो साल पहले जो हिन्दू और मुसलमान मित्रोकी तरह मिल-जुलकर काम करते दिखाई दे रहे थे, वे ही आज कुछ स्थानोमे आपसमें भेडियोकी तरह गुंथे हुए हैं। इससे यह वात असन्दिग्ध रूपसे सिद्ध हो जाती है कि उन्होने जो असहयोग किया वह अहिंसात्मक नही था। इसके लक्षण मुझे बम्वईकी घटनाओ, चौरी-चौरा तथा वहुत-से दूसरे छोटे-मोटे मामलोमे भी दिखाई दिये थे। तब मैंने प्रायश्चित्त किया था। उस हदतक उसका असर भी हुआ। लेकिन, हिन्दू-मुस्लिम तनाव तो कल्पनातीत वात थी। जव कोहाटके दुष्काण्डका हाल सुना तो वह असह्य हो उठा। जब मैं साबरमतीसे दिल्ली रवाना होनेवाला था, उससे पहले सरोजिनी देवीने मुझे लिखा कि शान्तिपर प्रवचन और उपदेश देनेसे काम नही चलेगा। आपको कोई कारगर उपाय ढूंढना है। उनका यह जिम्मेवारी मेरे सिर लादना ठीक ही था। क्या जनताकी भारी शक्तिको जाग्रत कर देनेके लिए मैं ही जिम्मेवार नही था? अगर यह शक्ति आत्म-विनाशका कारण वन रही है तो मुझे कोई उपचार ढूंढना ही है। मैंने उन्हे उत्तरमे लिखा कि इसे तो मैं परिश्रमसे ही पा सकूंगा। कर्महीन प्रार्थना निस्सार चीज है। तव मैं नही जानता था कि इसका उपचार यह दीर्घ उपवास होगा। फिर भी, मैं जानता हूँ कि मेरी आत्माकी व्यथा शान्त करनेकी दृष्टिसे यह उपवास काफी लम्बा नही है। क्या मुझसे कोई गलती हुई है, क्या मैंने धीरजसे काम नही लिया है? क्या मैंने वुराईके साथ कभी समझौता किया है? हो सकता है, मैंने यह सव किया हो और हो सकता है कि इसमे से कुछ भी न किया हो। मैं तो जो सामने देख रहा हूँ, वही जानता हूँ। जो लोग आज लड रहे हैं, उन्होने अगर सच्ची अहिंसा और सत्यका आचरण किया होता तो जो रक्त-रजित लड़ाई आज चल रही है, वह असम्भव थी। स्पष्ट है कि इसमे कही-न-कही मेरी जिम्मेवारी अवश्य है।

अमेठी, सम्भल और गुलवर्गाके काण्डोसे मुझे जवरदस्त आघात पहुँचा। हिन्दू और मुसलमान भाइयो द्वारा अमेठी और सम्भलके वारेमें तैयार की गई रिपोर्टें मैंने पढी थी। गुलवर्गा जाकर मामलेकी जाँच करनेवाले हिन्दू और मुसलमान भाइयोका सयुक्त निष्कर्ष भी मैंने देखा था। मैं पीडासे छटपटा रहा था, फिर भी कोई उपाय नही सूझ रहा था। कोहाटका समाचार पाकर मेरे अन्तरकी सुलगती हुई आग भभक उठी। अव कुछ-न-कुछ करना ही था। दो राते मैंने वेचैनी और कष्टमे काटी। वुधवारको मुझे उपाय सूझ गया। मैंने निश्चय किया, मुझे प्रायश्चित्त करना होगा। सत्याग्रह आश्रममें प्रात कालीन प्रार्थनामे हम शिवकी एक स्तुति करते है और कहते है। हे शिव,

जाने-अनजाने मैने जो पाप किये है, उसके लिए मुझे क्षमा कर।[1] मेरा प्रायश्चित्त अनजानमे किये गये पापोको क्षमा करनेके लिए एक व्यथित हृदयकी प्रार्थना ही है।

यह उन हिन्दुओ और मुसलमानके लिए एक चेतावनी है जो कहते है कि उन्हे मुझसे प्रेम है। अगर वे सचमुच मुझसे प्रेम करते रहे है और यदि मै उनके प्रेमका योग्य पात्र रहा हूँ तो वे अपने आचरणके द्वारा ईश्वरकी अवज्ञा करनेके घोर पापके लिए मेरे साथ प्रायश्चित्त करेगे। एक-दूसरेके धर्मकी निन्दा करना, बिना सोचे-समझे जो मनमे आये कहते रहना, झूठ बोलना, निरीह लोगोके सिर फोडना, मन्दिरो या मसजिदोकी पवित्रता भग करना, यह सब ईश्वरकी अवज्ञा ही है। हमारे इस यादवी सघर्षको दुनिया देख रही है — कुछ खुशीके साथ और कुछ दु खके साथ। हम शैतानका कहा मान बैठे है। धर्म चाहे कोई भी हो उसका पालन ऐसे आचरणसे नही होता; उसके लिए तो कठोर अनुशासनकी आवश्यकता होती है। हिन्दुओ और मुसलमानोका प्रायश्चित्त उपवास करना नही, बल्कि उन्होने जो गलत रास्ता ग्रहणकर लिया है उसे छोडकर सही रास्तेपर आ जाना है। अपने हिन्दू भाइयोके प्रति मनमे कोई दुर्भावना न रखना ही मुसलमानोके लिए सच्चा प्रायश्चित्त है और उसी प्रकार मुसलमानोके प्रति ऐसी कोई भावना न रखना हिन्दुओके लिए सच्चा प्रायश्चित्त है।

मै किसी भी हिन्दू या मुसलमानसे अपने धार्मिक सिद्धान्तको रच-मात्र भी छोडनेको नही कहता, बशर्ते कि उसे इस बातका इत्मीनान हो कि जिसे वह धार्मिक सिद्धान्त कह रहा है वह सचमुच धार्मिक सिद्धान्त ही है। लेकिन, यह तो मै हर हिन्दू और मुसलमानसे कहता हूँ कि वह भौतिक लाभके लिए आपसमे न लड़े। अगर मेरे उपवासके कारण दोनोमे से कोई भी पक्ष सिद्धान्तके मामलेमे कही झुकता है तो मुझे बहुत दु ख होगा। मेरा उपवास तो मेरे और ईश्वरके बीचकी बात है।

इस मामलेमे मैने किसी मित्रसे कोई सलाह नही ली। बुधवारको हकीम साहबसे बिलकुल एकान्तमे काफी देरतक बातचीत हुई और मौलाना मुहम्मद अलीके घर तो मै ठहरा हुआ ही हूँ। वे ही मेरे मेजबान है। किन्तु, इन लोगोसे भी कोई सलाह नही ली। जब कोई व्यक्ति अपने स्रष्टासे अपना देना-पावना दुरुस्त करना चाहता है तो वह किसी तीसरेकी सलाह नही लेता — लेनी भी नही चाहिए। लेकिन, अगर उसके मनमे इस विषयमे कोई शका हो तब तो उसे सलाह लेनी ही चाहिए। लेकिन, मैने जो कदम उठाया, उसकी आवश्यकताके सम्बन्धमे मेरे मनमे कोई शका नही थी। मित्र लोग तो मुझे उपवास करनेसे रोकना अपना कर्त्तव्य समझेगे। ऐसी बाते सलाह-मशविरे और दलीलका विषय नही होती। ये तो हृदयकी अनुभूतिकी चीजे है। जब रामने एक बार कर्त्तव्य-पालनका निश्चय कर लिया तो न स्नेहमयी

१. मूल संस्कृत श्लोक इस प्रकार है :

"कर-चरणकृतं वाक्कायजं कर्मजं वा
श्रवण-नयनजं वा मानसं वाऽपराधम्।
विहितमविहितं वा सर्वमेतत्क्षमस्व
जय-जय करुणाब्धे श्रीमहादेव शम्भो!"

माताका रोना-धोना, न गुरुकी सलाह, न जनताका अनुनय-विनय और न यह निश्चित सम्भावना ही कि उनके ऐसा करनेसे उनके पिता जीवित नही रह पायेगे, उन्हे अपने सकल्पसे डिगा पाये। ये वाते क्षणिक है। अगर रामने इन समस्त प्रलोभनोके सामने अपना हृदय वज्र न कर लिया होता तो हिन्दू-धर्मको धर्मका सच्चा स्वरूप ही प्राप्त नही होता। वे जानते थे कि अगर उन्हे मानवताकी सेवा करनी है और भावी सन्ततिके लिए एक आदर्श वनना है तो उन्हे हर कष्टसे गुजरना होगा।

लेकिन, क्या एक मुसलमानके घर वैठकर मेरा उपवास करना उचित था? हाँ, विलकुल उचित था। मेरे मनमे उपवासका विचार किसीके प्रति दुर्भावनासे प्रेरित होकर नही आया। मै एक मुसलमानके घर वैठा हुआ हूँ, इससे मेरे उपवासका कोई ऐसा अर्थ समझे जानेकी गुजाइश विलकुल नही रह जाती। इसे एक मुसलमानके घर शुरू और खतम करना सर्वथा सगत है।

मुहम्मद अली है कौन? उपवाससे दो ही दिन पहले एक निजी मामलेपर हम दोनोकी वातचीत हुई थी। उस दौरान मैंने उनसे कहा था कि जो मेरा है, वह आपका है और जो आपका है, वह मेरा भी है। मै लोगोको कृतज्ञतापूर्वक यह बता देना चाहता हूँ कि मेरा जैसा स्वागत-सत्कार मुहम्मद अलीके घर हो रहा है, उससे अच्छे स्वागत-सत्कारका सौभाग्य मुझे जीवनमें कभी नही मिला। मेरी हर जरूरतका अन्दाजा वे पहले ही कर लेते है। उनके घरके हर व्यक्तिको सवसे ज्यादा इसी वातकी लगी रहती है कि किस तरह मुझे और मेरे साथियोंको अधिकसे-अधिक सुख-सुविधा दी जा सकती है। डा० अन्सारी और डा० अब्दुर्रहमान तो मेरे स्वास्थ्य-सलाहकार ही वन गये है। वे हर रोज मुझे देखते है। जीवनमे मुझे अनेक सुखदायी अवसर मिले है, यह उनमे से किसीसे घटकर नही है। भोजन ही सब-कुछ नही है। यहाँ मुझे अगाध प्रेम प्राप्त हो रहा है और वह भोजनसे बढकर है।

कुछ लोग गुप-चुप ऐसी चर्चा करते है कि मै मुसलमान भाइयोमे इतना पगा रहता हूँ कि हिन्दुओके मनका भाव जानने लायक रह ही नही गया हूँ। हिन्दुओके मनका भाव तो मेरे ही मनका भाव है। जव मेरे अस्तित्वका कण-कण हिन्दू है तो हिन्दुओके मनका भाव जाननेके लिए मुझको उनके वीच रहनेकी क्या जरूरत है? अगर मेरा हिन्दुत्व प्रतिकूलसे-प्रतिकूल वातावरणमे फूल-फल नही सकता तो अवश्य ही वह वहुत क्षुद्र वस्तु है। मुझे तो इस वातका सहज ज्ञान है कि हिन्दू-धर्मके लिए क्या कुछ जरूरी है। लेकिन, मुसलमानोके मनका भाव जाननेके लिए तो मुझे परिश्रम और प्रयत्न करना ही है। अच्छेसे-अच्छे मुसलमानोके मै जितना निकट आता जाऊँगा, मुसलमानो और मुसलमानोके कार्योके वारेमे सही अनुमान लगानेकी मेरी उतनी ही सम्भावना होगी। मै दोनो जातियोको जोडनेवाला सवसे अच्छा गारा वननेकी कोशिशमे हूँ। मेरी कामना ही यही है कि जरूरत पडे तो इसे मै अपने खूनके गारेसे जोड़ूँ। लेकिन, ऐसा करनेके लिए मुझे मुसलमानोको यह दिखा देना चाहिए कि मै जितना प्यार हिन्दुओको करता हूँ, उतना ही उन्हे भी करता हूँ। मेरा धर्म मुझे सवको समानरूपसे प्यार करनेकी सीख देता है। ईश्वरसे यही प्रार्थना है कि वह इस काममें मुझे सहायता

दे। मेरे उपवासका, और बातोके अलावा, एक उद्देश्य यह भी है कि मै ऐसा सम और नि स्वार्थ प्रेम-भाव प्राप्त करनेके योग्य बन सकूँ।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २५-९-१९२४

१५०. टिप्पणी

२२ सितम्बर, १९२४

पाठकोंको सूचना

'यग इडिया' और 'नवजीवन' मेरे लिए प्रसन्नताके स्रोत है। मुझे इनके माध्यमसे प्रति सप्ताह जनताके लिए कुछ लिखना बहुत प्रिय है। किन्तु मुझे दु खके साथ सूचित करना पड़ रहा है कि मुझे दो या तीन सप्ताहके लिए सम्पादकीय लिखनेका काम बन्द रखना होगा। मेरे तानाशाह चिकित्सक यह काम करनेसे मुझे मना करते है। चार्ली एन्ड्रयूज मेरे शुद्धीकरण तथा स्वास्थ्य-लाभकी अवधिमे 'यग इडिया' का सम्पादन स्वय करनेका आग्रह कर रहे है। मै इस प्रस्तावको सहर्ष स्वीकार करता हूँ। हम दोनो सगे भाई-जैसे है। जो सन्देश मै देता रहा हूँ, वही सन्देश श्री एन्ड्रयूजकी प्राजलतर तथा शुद्धतर शैलीमे पढकर आपको प्रसन्नता होगी। आखिर अग्रेजी मेरे लिए विदेशी भाषा ही है। चार्ली एन्ड्रयूज उसके पण्डित है। इसलिए सम्पादकका दायित्व उन्हे सौपते हुए मुझे प्रसन्नता ही हो सकती है। 'नवजीवन' के सम्पादकत्वका उत्तरदायित्व महादेव देसाईपर रहेगा। गुजरातियोमे मेरे सन्देशका इतना सच्चा व्याख्याता दूसरा कोई नही है। इसका मतलब यह नही कि 'यग इडिया' या 'नवजीवन' मे मै स्वय कुछ नही लिखूँगा। यदि मेरी शक्ति अन्त तक बनी रही — बहुत अधिक सम्भावना है कि वह अन्ततक बनी रहेगी — और यदि डाक्टरोने मुझे अनुमति दी तो मै आशा करता हूँ कि उनके प्रत्येक अकमे कुछ अनुच्छेद मै लिखता रहूँगा।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २५-९-१९२४

१५१. तार : एस० श्रीनिवास आय्यंगारको

[२२ सितम्बर, १९२४][1]

धन्यवाद। उपवास छोडनेका अर्थ होगा अपने गहनतम विश्वासोको छोडना। क्या आप मुझसे वैसा कराना चाहेगे? कृपया चिन्ता न करे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २२-९-१९२४

१५२. पत्र : सरलादेवी चौधरानीको

दिल्ली

२२ सितम्बर, १९२४

तुम्हारा करुण अनुरोध पढा। मै जीवित जरूर रहना चाहता हूँ। मै तो ४० दिनका व्रत ले रहा था; किन्तु गहराईसे विचार करनेपर मैने देखा कि स्थितिका ध्यान रखते हुए जितना कमसे-कम आवश्यक हो, मुझे उतना ही उपवास करना चाहिए। यदि ईश्वर इस शरीरसे और अधिक सेवा कराना चाहता है तो वह निश्चित रूपसे इसको बनाये रखेगा।

[अंग्रेजीसे]

ट्रिब्यून, २७-९-१९२४

१५३. काम नहीं तो राय नहीं

२३ सितम्बर, १९२४

मौलाना हसरत मोहानीने अभी उस दिन मुझे सोवियत-सविधान देते हुए कहा कि इसे पढिए —— यदि और किसी वजहसे नही तो सिर्फ इसीलिए कि काग्रेसके संविधान और सोवियत-सविधानमे कितनी स्पष्ट समता दिखाई देती है। मैने उसे सरसरी तौरपर पढा तो देखा कि दोनो सविधानोके रूपमे नि सन्देह स्पष्ट समता है। यह समता बतलाती है कि इस भूमण्डलपर कोई बात मौलिक और नई नही है। दोनोमे मुझे बहुत बुनियादी किस्मके कुछ फर्क भी दिखे, पर उनकी चर्चा करने की जरूरत नही। किन्तु, उसकी एक बातपर तो मै लट्टू हो गया। वह थी "काम नही तो राय नही" का सूत्र। सोवियत-सविधानमे सदस्यकी पात्रता न पैसेसे परखी जाती

१. "एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इडिया" ने इसे मद्राससे २२ सितम्बरको प्रकाशित किया।

है — चार आनेसे भी नही — न मिल्कियतसे और न तालीमसे, वह सिर्फ 'सच्ची मेहनतसे' परखी जाती है। इस तरह सोवियत काग्रेसको सिर्फ काम करनेवालोका सगठन समझिए। क्या दार्शनिक, क्या अध्यापक और क्या दूसरे तमाम लोग, सबके लिए कुछ-न-कुछ काम करना लाजिमी है। मुझे नही मालूम कि उन्हे मेहनत किस तरहकी करनी पडती है। मैंने चन्द मिनटोंमे ही उसे उलट-पलट देखा। इससे अगर यह बात उसमे कही दिखाई भी गई हो तो मुझे मिल नही पाई। उसमे हमारे लिए जो महत्त्वपूर्ण और प्रासगिक बात है वह यह कि हरएक मतदाताको कुछ-न-कुछ ठोस काम करके दिखाना पडता है। ऐसी अवस्थामे मेरा यह प्रस्ताव कि अबसे काग्रेसका सदस्य होनेकी इच्छा रखनेवाले हर व्यक्तिको चाहिए कि वह अपने राष्ट्रके लिए शारीरिक श्रम करे, न तो मौलिक है और न हास्यास्पद ही। यह देखते हुए कि एक महान राष्ट्रने पहलेसे ही इस सूत्रको मजूर कर लिया है, हमे उसका अनुकरण करनेमे झेपनेकी कोई जरूरत नही। थोडे समयतक रोज की जानेवाली मेहनत कभी फल दे सकती है, जब लाखो-करोडो लोग एक ही किस्मकी मेहनत करे और हमारे देशके सदृश विशाल देशमे ऐसा शारीरिक काम, जिसका घर-घर प्रचार हो सके, हाथ-कताईके सिवा दूसरा नही है।

लेकिन कहा जाता है कि यह प्रस्ताव महज शारीरिक कामका प्रस्ताव नही है; उसके अन्दर आर्थिक पात्रता छिपी हुई है। सूत कितना ही महीन क्यो न कते, एक सालके दौरान काते जानेवाले सूतका परिमाण इतना तो नही घटाया जा सकता कि चार आनेकी कीमतका सूत कातनेसे ही काम चल जाये। पर आलोचक इस बात-को भूल जाते है कि मैंने अपने प्रस्तावकी रूप-रेखा जिस लेखमे दी है, उसमे मैंने कहा है कि जो लोग रुईकी व्यवस्था खुद नही कर सकते उन्हे प्रान्तीय काग्रेस कमेटियो-की तरफसे रुई मिलनी चाहिए। इस प्रकार मेरी योजनाके अधीन लोग जो कपास बिना मूल्य प्रदान करेगे, वह चन्दा नही, बल्कि दान होगा। अनुभव बताता है कि हजारो लोग हर साल २४,००० गज सूत कातनेके लिए जरूरी कपासकी व्यवस्था खुद ही सम्भव बना सकते है। इस बार अखिल भारतीय खादी बोर्डमे लगभग ५,००० लोगोने सूत भेजा है। उन्होने खादी-बोर्डसे रुई नही माँगी। मुमकिन है कि कुछ प्रान्तोने कतैयोको रुई देनेका इन्तजाम किया हो। अगर उन्होने ऐसा किया हो तो कुछ बेजा नही, क्योकि असली चीज तो है आधा घटा शारीरिक श्रम करना। हमारे राष्ट्रके इस क्षयका कारण कच्चे मालकी कमी नही, बल्कि शारीरिक श्रम और कमसे-कम जरूरी हुनरका अभाव है। हमे अपने हाथोसे मेहनत करनेकी आदत नही रह गई है। इसीसे मेरा यह प्रस्ताव कुछ लोगोको अप्रिय मालूम होता दिखाई देता है और राष्ट्रकी एक ही आवश्यकताकी पूर्तिके लिए सारा देश अपनी राजी-खुशीसे रोजाना आधा घटा समय देने लगे, इस बातसे होनेवाले लाभोको समझना उन्हे कठिन मालूम हो रहा है। निश्चय ही मेरे प्रस्तावमे नैतिकताके विरुद्ध तो कुछ भी नही है। उसमे ऐसी भी कोई बात नही है जो किसीकी अन्तरात्माके खिलाफ पड सकती हो। यह काम कोई बहुत भारी भी नही है। सच तो यह है कि आधे घटेका यह हलका

श्रम इतना मामूली काम है कि इन अत्यन्त परिश्रमी कार्यकर्त्ताओके लिए भारी पड़ ही नही सकता। ऐसी हालतमे इस प्रस्तावके खिलाफ जो कुछ ज्यादासे-ज्यादा कहा जा सकता है वह यही कि इस मेहनतका कुछ फल न निकलेगा। जरा फर्ज कीजिए कि स्वराज्य या चटपट आर्थिक मुक्तिकी दृष्टिसे इसका कुछ फल न होगा, पर अखिल भारतीय खादी-बोर्डके पास अगर हर माह मनो सूत आता रहे और उसकी बदौलत सस्ती खादी बनती रहे तो क्या यह निष्फल होगा? नही। राष्ट्रीय उत्पादनमे एक गज कपडेके योगको भी निष्फल श्रम नही कहा जा सकता।

दूसरा एतराज उसपर यह किया गया है कि उससे काग्रेसके हजारो मतदाताओ-का मताधिकार छिन जायेगा। पर मैं कहनेका साहस करता हूँ कि यह एतराज बिलकुल बेबुनियाद है। मतदाता वही होता है जो अपनी सस्थाके काममे लगनसे दिलचस्पी लेता हो। हमारे मतदाता ऐसे नही है। कसूर उनका नही, हमारा है। हमने उनमें काफी दिलचस्पी नही ली और जबतक हमे एड न लगाई जाये तबतक हम ऐसा करेगे भी नही। तकुआ ही वह एड है। हर महीने काग्रेसके अधिकारियो-को हरएक मतदातासे अपना सीधा सम्पर्क रखना पडेगा। यह बिलकुल स्पष्ट बात है, ताज्जुब है कि इसे भी समझानेकी जरूरत पडती है। हर महीने अपने कामका हिसाब देनेवाले हजारो सच्चे कार्यकर्त्ताओकी एक सस्थाकी सम्भावनाओकी कल्पना तो कीजिए। क्या सख्यामे थोडे, पर उत्साही काम करनेवालोकी सजीव सस्था उस सस्थासे हजारो गुनी अच्छी नही है जिसमे हजारो ऐसे सदस्य हो, जिन्हे उनके काम-की परवाह ही न हो और जो कुछ आदमियोके इशारेपर अपनी राय देनेसे अधिक अपना कोई कर्त्तव्य ही न समझते हो। पर आसार तो ऐसे दिखाई देते है कि यदि हम आवश्यक परिवर्तन करनेका साहस-मात्र दिखाये तो हमे इतनी बडी तादादमे मतदाता लोग मिलेगे जो हमारे अन्दाजसे बहुत ज्यादा होगे। दूसरे महीनेमे सूत भेजनेवालोकी तादाद पहले महीनेके दुगुनेसे भी ज्यादा है। यदि हर प्रान्तका हर कार्यकर्त्ता राजी-खुशीसे कातनेवालोका खासा सगठन करे तो कतैयोकी सख्यामे हमे बराबर वृद्धि ही दिखाई देगी और ताज्जुब नही कि कुछ ही महीनोमे यह तादाद दो लाखतक पहुँच जाये। दो लाखके मानी है हर प्रान्तमे दस हजार और हर प्रान्त औसतन दस हजार स्वेच्छापूर्वक कातनेवाले लोग तैयार कर सके, इसके लिए किसी असाधारण सगठन-क्षमताकी जरूरत नही। इसलिए मै आशा करता हूँ कि मेरा प्रस्ताव नामजूर नही होगा।

मैने जान-बूझकर अपने प्रस्तावको छोटेसे-छोटा समान माप कहा है, बडेसे-बड़ा नही। छोटेसे-छोटे मापका मतलब यह नही है कि वह सारे देश द्वारा स्वीकार किये जाने योग्य छोटेसे-छोटा है, बल्कि देशकी उद्देश्य-सिद्धिके लिए कमसे-कम आवश्यक माप है। मेरा मत है कि यदि हमे रक्तपातके बिना स्वराज्य प्राप्त करना हो तो मेरी बताई ये तीनो बाते परम आवश्यक है। यदि हमारा यह आदर्श हो कि कार्य-क्षमताकी परवाह किये बिना जितने सदस्य बनाये जा सके, बनाये जाये, तब तो हिन्दू-मुस्लिम एकता और अस्पृश्यताको भी नमस्कार कर लेना होगा। कारण, मै जानता हूँ कि

अस्पृश्यता-निवारणके लिए जहाँ-कही हमने जोर-शोरसे काम किया है, वही बहुतेरे लोग कांग्रेससे अलग हो गये हैं। वे अब भी उसे हिन्दू-धर्मका अभिन्न अंग मानकर उससे चिपटे हुए हैं। यही बात हिन्दू-मुस्लिम एकताके सम्बन्धमे भी कही जा सकती है। कारण, हालके अनुभवोने यह दिखला दिया है कि कितने ही लोग ऐसे हैं जो न केवल हिन्दू-मुस्लिम एकताके इच्छुक नही हैं, बल्कि हमारे मतभेदोको बराबर बनाये रखना चाहते हैं। जरा-जरा-सी बातपर वे झगडा खडा करना चाहते हैं। वे बहाने बनानेमे भी नही हिचकते। ऐसी अवस्थामे यदि हम अपने आन्तरिक विकासके लिए आवश्यक सभी चीजोकी उपेक्षा कर देते हैं तो फिर कांग्रेस राष्ट्रकी पुकारपर एकजुट होकर एक व्यक्तिकी तरह दौड पडनेवाली संस्थाके बजाय मछुओंका बाजार बन जायेगी। कमसे-कम मैं तो ऐसी संस्थामे, जहाँ ये तीनो चीजे एक जीवन्त सत्यके रूपमे विद्यमान न हो, बिलकुल पथरा जाऊँगा और यदि इसे 'बाइबिल' की पवित्रता भंग करना न माना जाये तो उसके एक वचनका उपयोग करते हुए मैं कहूँगा — पहले तुम हिन्दू-मुस्लिम एकता प्राप्त करो, छुआछूत हटाओ, चरखा और खादीको अपनाओ, फिर दूसरी तमाम चीजे तुम्हे अपने-आप मिल जायेगी।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २५-९-१९२४

१५४. तार : मु० रा० जयकरको[1]

[२३ सितम्बर, १९२४][2]

मैं अपने शास्त्रोकी भावनाका वाच्यार्थ नही लेता। मेरा विचार है प्रायश्चित्त उचित है। कृपया मेरी चिन्ता न करे। स्वास्थ्य बिलकुल ठीक है।

[अंग्रेजीसे]

द स्टोरी ऑफ माई लाइफ, खण्ड – २

१. गांधीजीके स्वास्थ्यके बारेमें जयकर द्वारा की गई पूछताछके उत्तरमें।

२. जयकरको यह तार इसी तारीखको मिला था।

१५५. तार : कुम्भकोणम् कांग्रेस कमेटीको

[२३ सितम्बर, १९२४][1]

तारके लिए धन्यवाद। ईश्वर चाहेगा तो यह अग्नि-परीक्षा पार कर लूंगा।

गांधी

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २३-९-१९२४

१५६. पत्र : सतीश चन्द्र मुखर्जीको

दिल्ली
२३ सितम्बर, १९२४

प्रिय सतीश बाबू,

यह पत्र आपको केवल यह बतानेके लिए लिख रहा हूँ कि मेरा उपवास बहुत ही अच्छी तरह चल रहा है। मैं जानता हूँ, आप अन्दर-ही-अन्दर इस बातसे प्रसन्न हो रहे हैं कि ईश्वरने मुझे संकटमें से गुजरनेकी शक्ति दी है। यदि आप यहाँ आना ही चाहते हों तो मेरे उपवासके अन्तिम सप्ताहमे आयें। अब आप कृष्टोदासके बारेमें चिन्ता न करें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[पुनश्च.]

कृष्टोदासने मुझे अभी-अभी बताया है कि आपको तो बुखार है। यदि ऐसा हो तो आपको यात्रा नही करनी चाहिए।

मो० क० गांधी

अंग्रेजी पत्र (जी० एन० ५५९६) की फोटो-नकलसे।

१. समाचारपत्रमें दी गई तारीखसे।

१५७. पाठकोंसे

दिल्ली
बुधवार, भाद्रपद बदी ११ [२४ सितम्बर, १९२४]

मैं आपको क्या लिखूँ? मेरा और आपका सम्बन्ध, मेरी दृष्टिमे असाधारण है। 'नवजीवन' के सम्पादकका पद मैंने न तो धन-लोभसे ग्रहण किया है और न कीर्ति-लोभसे। मैंने तो अपने शब्दोके द्वारा आपके हृदयका स्पर्श करनेके लिए यह पद स्वीकार किया है। मेरे हाथ यह अनायास ही आ पडा। परन्तु जबसे आया है तबसे मै आपका ही चिन्तन करता रहा हूँ। मैंने प्रति सप्ताह 'नवजीवन' मे अपनी आत्मा उडेलनेका प्रयत्न किया है। इसमे मैंने एक भी शब्द ईश्वरको साक्षी रखे बिना नही लिखा है। आपको जो प्रसादी पसन्द हो, वही देना, मैंने अपना धर्म नही समझा। कितनी ही बार मैंने कडवे घूंट भी पिलाये है। किन्तु कडवे या मीठे हरएक घूंटमे मैंने वही बतानेकी कोशिश की है, जिसे मैंने निर्मल धर्म माना है, जिसे मैंने स्वच्छ देश-सेवा माना है।

आज जो मैं उपवास कर रहा हूँ, सो इस सम्पादक-पदके अधिक योग्य बननेके लिए। मैं जानता हूँ कि 'नवजीवन'के अनेक पाठक भाई-बहन मेरे लेखोसे मार्ग-दर्शन ग्रहण करते है। कही मैंने उनका गलत मार्ग-दर्शन करके उन्हे हानि पहुँचाई हो तो? यह खयाल मुझे बराबर सालता रहता था।

अस्पृश्यताके बारेमे मुझे कभी लेश-मात्र भी शंका नही हुई। चरखेके विषयमे तो ऐसी शकाके लिए कोई गुजाइश ही नही है। वह लँगडेकी लाठी है। वह भूखसे पीडितोकी भूख मिटानेका साधन है, निर्धन स्त्रियोके सतीत्वकी रक्षा करनेवाला किला है। जबतक इसे सब लोग स्वीकार नही करते, तबतक हिन्दुस्तानकी फाकाकशी मिटना मैं असम्भव मानता हूँ। इस कारण चरखा चलानेमे अथवा उसका प्रचार करनेमे भूलके लिए कोई गुजाइश ही नही है।

हिन्दू-मुसलमान ऐक्यकी आवश्यकताके विषयमे भी सशयके लिए कोई स्थान नही है। उसके बिना स्वराज्य आकाश-कुसुमके समान है।

परन्तु मैं जिस महान अहिंसाकी बात करता हूँ, उसे ग्रहण करनेके लिए आप तैयार है या नही, इसके विषयमे मुझे सदा शका बनी रही है। मैंने तो पुकार-पुकार कर कहा है कि अहिसा — क्षमा — वीरका लक्षण है। जिसमे मारनेकी शक्ति है, वही मारनेसे अपनेको रोक सकता है। मेरे लेखोको पढकर कही आप भीरुताको अहिंसा मान ले तो? अपनोकी रक्षा करनेके धर्मको खो बैठे तो? तब तो मेरी अधोगति ही होगी। मैंने कितनी ही बार लिखा है और कहा है कि कायरता कभी धर्म हो ही नही सकती। इस ससारमे तलवारके लिए जगह जरूर है, लेकिन कायरताके लिए कोई जगह नही है। कायरका तो क्षय ही हो सकता है और उसका क्षय

उचित भी है। परन्तु मैंने तो यह दिखानेका प्रयत्न किया है कि तलवार चलानेवालेका भी क्षय ही होगा। तलवारसे मनुष्य किसको बचा सकता है, किसको मार सकता है? आत्मबलके सामने तलवारबल तृणवत् है। अहिंसा आत्माका बल है, तलवार शरीरका बल है। तलवारका उपयोग करके आत्मा शरीरवत् बनती है। अहिंसाका उपयोग करके आत्मा आत्मवत् बनती है। जो इस बातको न समझ सके उन्हे तो तलवार हाथमे लेकर भी अपने आश्रितोकी रक्षा करनी ही चाहिए।

ऐसा अनमोल अहिंसा-धर्म मै शब्दोके द्वारा प्रकट नही कर सकता। खुद पालन करके ही उसका पालन कराया जा सकता है। इसीलिए मै इस समय इस धर्मका पालन कर रहा हूँ। मेरे मन्दिरोको तोडनेवाले मुसलमानको भी मै तलवारसे न मारूँगा। उसपर मै क्रोध भी न करूँगा। उसे भी मै केवल प्रेमसे ही जीतूंगा।

मैंने लिखा है कि हिन्दुस्तानमे यदि एक ही शुद्ध प्रेमी पैदा हो जाये तो वह स्वधर्मकी रक्षा कर सकता है। मै ऐसा ही शुद्ध प्रेमी बनना चाहता हूँ। मै हमेशा लिखता रहा हूँ कि आप भी ऐसे बने।

मै जानता हूँ कि मेरे अन्दर बहुत प्रेम है। पर प्रेमकी सीमा ही कहाँ है? मै यह भी जानता हूँ कि मेरा प्रेम असीम नही है। मै साँपके साथ कहाँ खेल सकता हूँ? मुझे पूरा विश्वास है कि अहिंसा-मूर्तिके सामने साँप भी शान्त हो जाता है।

उपवास करके मै अपनेको परख रहा हूँ, विशेष प्रेमकी सामर्थ्य अर्जित कर रहा हूँ। मै अपना कर्त्तव्य पूरा करके आपको आपका कर्त्तव्य बताना चाहता हूँ। आप यदि मेरे साथ उपवास करे तो यह निरर्थक है। उसके लिए समय, अधिकार, आदिकी जरूरत रहती है। आपका कर्त्तव्य तो यही है कि जो तीन चीजे मै भिन्न-भिन्न तरीकोसे आपके सामने पेश कर रहा हूँ, उनको साधिए। मुझे विश्वास है कि उनके द्वारा दूसरी बहुत-सी बाते अपने-आप सध जायेगी।

मेरे उपावासके औचित्यपर शका करनेके बदले आप ईश्वरसे यही प्रार्थना कीजिए कि मेरा उपवास निर्विघ्न पूरा हो जाये, मै फिर 'नवजीवन' के द्वारा आपकी सेवा करने लगूँ और मेरे शब्दोमे अधिक बल आये।

आपका सेवक,
मोहनदास गांधी

[गुजरातीसे]
नवजीवन, २८-९-१९२४

१५८. पत्र : सरलादेवी चौधरानीको

दिल्ली
२४ सितम्बर, १९२४

मेरा प्रायश्चित्त दूसरोंके पाप-शोधनके लिए नहीं है। यह उस गलतीके लिए है जो सम्भवतः मुझसे हो गई हो।... तुम ऐसा क्यों मान लेती हो कि मैंने ईसाइयोंके उदाहरणोंसे प्रेरणा ली है। अगर लेता भी तो इसमें मुझे कोई लज्जा न होती, किन्तु असलमें इस प्रायश्चित्तसे इसका कोई सम्बन्ध नहीं है।

[अंग्रेजीसे]

ट्रिब्यून, २७-९-१९२४

१५९. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[1]

दिल्ली
२४ सितम्बर, १९२४

मेरे लिए यह बड़े दुःखकी बात है कि मैं आगामी सम्मेलनमें शरीक नहीं हो सकूँगा। मैं जानता हूँ कि मेरा उपवास खुद ही सम्मेलनको अपना कार्य जिस वातावरणमें करना चाहिए, उसमें एक बाधा है। मेरी उपस्थिति तो और भी अधिक बाधक होगी। लेकिन, यद्यपि मुझे वहाँ शरीरतः उपस्थित नहीं रहना चाहिए, फिर भी मेरी आत्मा तो वहीं रहेगी।

यह सम्मेलन बुलानेका कारण मेरा उपवास ही है। यदि यह हमें आत्म-निरीक्षण करने, स्पष्टवादिता, निर्भीकता और सचाईसे काम लेनेकी प्रेरणा दे सके, अगर इससे हममें अनावश्यक बातोंको छोड़ सकने और सिर्फ आवश्यक बातोंपर ही आग्रह करनेकी वृत्ति आ सके तो मुझे बहुत प्रसन्नता होगी। किन्तु, यदि इसके कारण एक भी हिन्दू या मुसलमान उस चीजमें से कुछ छोड़नेको बाध्य होता है, जिसे वह अपना सिद्धान्त मानता है तो मुझे बहुत दुःख होगा। अगर सम्मेलनका परिणाम पैबन्द और थेगली लगी कृत्रिम शान्तिके रूपमें प्रकट होता है तो सम्मेलन निष्फल ही साबित होगा। उसका नतीजा कुछ भी नहीं निकलेगा। जिस चीजकी जरूरत है वह है हृदयकी एकता और यह तभी आ सकती है जब हर आदमी अपने हृदयकी बात कहे और हृदयसे कहे। अगर मुसलमान ऐसा मानते हों कि मन्दिरोंकी पवित्रता भंग करना उनका कर्त्तव्य है, यदि वे समझते हों कि जो व्यक्ति अपने हृदयकी प्रेरणापर

१. यह वक्तव्य २६ सितम्बर, १९२४ को दिल्लीमें होनेवाले एकता-सम्मेलनके सम्बन्धमें दिया गया था।

इस्लामका त्याग करता है या जो उसे एक बार स्वीकार करके पुन: अपना धर्म बदल लेता है, वह उनके हाथसे दण्ड पानेका पात्र है, या अगर वे सोचते हो कि मसजिदोके पास गाना-बजाना जबरदस्ती भी बन्द कराना चाहिए तो उन्हे स्पष्ट रूपसे ऐसा करना चाहिए। मैं इसके लिए उनका आदर करूँगा, यद्यपि तब मुझे यह स्पष्ट हो जायेगा कि इस अभागे देशके भाग्यमें शान्ति नही बदी है। मुसलमानोके वैसा कहनेका परिणाम झेलना मैं हजार बार पसन्द करूँगा, किन्तु यह कभी नही चाहूँगा कि एक भी मुसलमान किसी बाहरी दबावके कारण अपने धार्मिक विश्वासको अपने मनमें ही दबा कर रखे।

हिन्दू होनेके नाते मैं यह जानता हूँ कि कोई भी हिन्दू ऐसा कहनेका साहस नही कर सकता कि उसका धर्म उसे मसजिदोकी पवित्रता भग करने या किसी मुसलमानको गो-वध करनेसे जबरदस्ती रोकनेकी सीख देता है। मैं जानता हूँ कि अगर वह इनमें से कोई भी काम करता है तो पाप करता है। लेकिन, अगर ऐसे हिन्दू हो जो दूसरोके पूजा-स्थलोकी पवित्रता भग करना या जोर-जबरदस्ती गो-वध बन्द कराना अपना कर्त्तव्य समझते हो तो उन्हे ऐसा कहना चाहिए। तब फिर मैं यही समझूँगा कि आँसुओ और दु:खके इस देशके भाग्यमें शान्ति ही लिखी नही है।

मैं जो-कुछ कहना चाहता हूँ वह यही है कि मेरे उपवासके कारण लोग कोई भी बात अपने मनमें छिपाकर न रखे और यह कि नकली शान्तिसे मेरी व्यथा घटनेके बजाय बढ़ेगी ही तथा मेरी आगेकी अवस्था इससे भी बुरी होगी। इसलिए इस समस्यापर विचार करते समय मेरे उपवासका कोई खयाल न रखा जाये और अगर सदस्यगण ऐसा मानते हो कि यह असम्भव है तो मैं तो यही अनुरोध करूँगा कि उपवासका दबाव दूर हो जानेतक सम्मेलनको स्थगित रखा जाये।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २५-९-१९२४

१६०. टिप्पणियाँ

एक मित्रका निधन

हम भारतमें रहनेवाले लोग अपने दक्षिण आफ्रिकी वीरोके बारेमे कुछ नही जानते। वे उसी प्रकार अज्ञात हैं:

> **जिस प्रकार हैम्डन नामका वह ग्रामीण, जिसने अत्यन्त निर्भयतापूर्वक अपने छोटे अन्यायी जमींदारका विरोध किया था।**[1]

मुझे अभी-अभी जोहानिसबर्गसे एक तार मिला है, जिसमे समाचार दिया गया है कि श्री पी० के० नायडूकी निमोनियासे मृत्यु हो गई है। वे बहुत ही सच्चे भारतीय और अत्यन्त साहसी मनुष्य थे। उन्होने कई बार जेल-जीवनके कष्ट सहन किये थे।

1. अंग्रेज कवि ग्रेकी कवितासे।

उनकी पत्नीने भी उनका अनुसरण किया। वे सभी कार्य करनेके लिए तैयार रहते थे। वे सूचना मिलनेके बाद एक घंटेके भीतर ही उन निर्वासित भारतीयोके एक दलकी जिम्मेदारी सँभालनेके लिए तैयार हो गये थे, जिन्हे जनरल स्मट्सने भारत वापस जानेका आदेश दे दिया था। देशकी आजादीके लिए किसी भी त्यागको वे बहुत बडा नही समझते थे। ऐसे समयमे उनकी मृत्यु दक्षिण आफ्रिकामे रहनेवाले हमारे देशवासियोके लिए एक बहुत बडी क्षति है। वे अकेले ही शक्तिशाली दक्षिण आफ्रिकी सरकारको चुनौती देनेमें समर्थ थे। वास्तवमे कुछ ही दिन पूर्व मुझे उनका एक पत्र मिला था, जिसमे उन्होने अपने आन्दोलनकी योजना बताई थी। किन्तु अफसोस! निष्ठुर नियतिकी योजना कुछ और ही थी। नायडू अब ससारमे नही रहे; किन्तु उनका कार्य सदा जीवित रहेगा। श्री पी० के० नायडू अग्रेजीके अच्छे पण्डित थे। वे हिन्दी, तेलुगू, फ्रासीसी तथा जुलू भाषाएँ भी जानते थे। उन्होने सब-कुछ अपने प्रयत्नसे ही सीखा था। शरीरसे वे बडे हट्टे-कट्टे थे। वे एक अच्छे मुक्केबाज भी थे। किन्तु उन्होने अहिंसाका रहस्य समझ लिया था, इसलिए वे गम्भीरतम उत्तेजनाके क्षणोमे भी अपने ऊपर नियन्त्रण रख सकते थे। वे जन्मजात श्रमिक थे। वे कभी किसी कामको करनेसे इनकार नही करते थे। वे एक कुशल नाई थे और चूँकि वे क्लर्क नही बनना चाहते थे, इसलिए बाल काटनेकी एक दूकान चलाते थे। जब टॉल्स्टॉय फार्ममें हमने चप्पल बनानेका काम शुरू किया तो उसमे भी उन्होने बड़ी कुशलता हासिल कर ली। वे एक सच्चे सिपाही थे। वे आज्ञा-पालन करना जानते थे। मै उनकी मृत्युपर श्रीमती नायडू और दक्षिण आफ्रिकाके अपने देशभाइयोके प्रति अपनी विनम्र समवेदना प्रकट करता हूँ।

अमानुषिक व्यवहार

श्रीमती गगाबाई गिडवानी[1] और डा० चौइथरामके[2] आचार्य गिडवानीसे मिलकर लौटनेपर इन दोनोसे मेरी मुलाकात हुई। उन्होने मुझे बताया कि आचार्य गिडवानी दिन-भर कोठरीमे बन्द रखे जाते है। उन्हे तीन महीनेमे केवल एक बार मुलाकातियोसे मिलनेकी अनुमति है। उनका वजन ३० पौडसे भी अधिक घट गया होगा। उन्होने यह भी कहा कि अधिकारियोने बहुत दिनोसे आचार्यका वजन भी नही लिया है। जब उन्होने सुपरिंटेडेंटसे पूछा कि वजन क्यो नही लिया गया तो उसने अपने कन्धे हिलाकर कहा, "यहाँ ऐसा नियम नही है।" मै जानता हूँ कि जेल कोई महल नही होता। जेलमे कैदीको घरकी तमाम सुविधाओकी उम्मीद नही करनी चाहिए। पर मै ऐसी बहुत-सी जेलोको भी जानता हूँ, जहाँ ऐसा व्यवहार असम्भव है जैसा आचार्य गिडवानीके साथ किया जा रहा है। हाँ, अधिकारियोके साथ इन्साफ करनेके लिए मुझे यह भी बता देना चाहिए कि उन्होने आचार्यको हर रोज सुबह-शाम आधे घंटेतक खुली हवामे घूमनेकी इजाजत दे रखी है; किन्तु उन्होने इस

१. ए० टी० गिडवानीकी पत्नी।

२. डा० चोइथराम गिडवानी; सिन्धके कांग्रेसी नेता।

सुविधाको तिरस्कारके साथ अस्वीकार कर दिया है। इसपर मुझे ताज्जुब नही होता। वे स्वाभिमानी और आत्मसम्मानी व्यक्ति है। वे जानते है कि उन्होने कोई गुनाह नही किया है। उन्होने नाभाकी सीमा भी किसी दुराग्रहके कारण पार नही की। उनकी मनुष्यता उन्हे वहाँ खीचकर ले गई थी। उन्होने कभी भी ऐसा कोई काम नही किया, जिसे हम अभद्रतापूर्ण कह सके। उन्होने नाभा राज्यके खिलाफ कोई साजिश नही की। उनपर कोई हिंसात्मक इरादा रखनेका शकतक नही किया गया है। तब फिर उनके साथ एक सामान्य कैदीकी तरहका व्यवहार क्यो नही किया जाता, जिसे दिन-भर खुली हवामे रखा जाता है? खूनी कैदियोतक को खूब खुली हवाकी और घूमने-फिरनेकी काफी सुविधा दी जाती है। इसलिए आचार्य गिडवानीको जो निर्दयतापूर्वक कोठरीमें तनहा बन्द रखा जाता है, उसका मेरे जानते तो कोई कारण नही है। ऐसी तनहाईकी सजा तो जेलके नियमोका कोई गम्भीर उल्लघन करनेपर ही दी जाती है। यदि आचार्य गिडवानीने ऐसा कोई कसूर किया हो तो वह सर्व-साधारणको बताया जाना चाहिए। हो सकता है कि नाभा राज्यमे ऐसी सुविधा न हो जिससे वह आचार्य गिडवानीको दिन-भर बाहर रख सके। यदि यह बात है तो मेरा सुझाव है कि उन्हे दूसरी जेलमे बदल दिया जाये। मै जानता हूँ कि कैदियो-को एक जेलसे हटाकर दूसरीमे रखनेकी प्रथा सारे भारतकी जेलोमें प्रचलित है। उदाहरणार्थ, मैंने यरवदा सेन्ट्रल जेलमें पजाब, जूनागढ राज्य और मद्रास अहातेसे लाये हुए कैदी भी देखे थे। जब मैने श्रीमती गिडवानी और डा० चोइथरामका यह कथन सुना तो मुझमे सविनय अवज्ञाकी भावना पूरी तरहसे जाग उठी और मेरा मन हुआ कि मुझे इसके खिलाफ सघर्ष करना चाहिए। परन्तु जब मेरे मनमे यह खयाल आया कि इसके लिए मुझमें शक्ति ही कहाँ है तो मेरी गर्दन मारे शर्मके नीचे झुक गई। एक-दूसरेके खिलाफ खम ठोककर लडते हुए दलोमें विभक्त और हिन्दुओ और मुसलमानोके झगडोसे जर्जर भारतमे सविनय अवज्ञा असम्भव ही दिखाई देती है। पण्डित जवाहरलाल मुझसे पूछते है कि क्या उन्हे नाभाके प्रशासकसे प्राप्त पत्रकी ललकारपर नाभाकी हदमे प्रवेश करके अपने साथीसे मिलने नही जाना चाहिए। काश, मै उनसे 'हाँ' कह पाता। इस अवस्थामें तसल्लीकी बात सिर्फ इतनी ही है कि आचार्य गिडवानी वीर पुरुष है और उन्हे जेलमें जो भी कष्ट दिये जाये, उन्हे सहनेमे वे समर्थ है। ईश्वर उन्हे यह अग्नि-परीक्षा झेलनेका बल दे। स्वाधीनताकी यह कीमत हमें चुकानी ही पड़ेगी। स्वाधीनता बडी महँगी वस्तु है और जेल उसे तैयार करनेके कारखाने है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २५-९-१९२४

१६१. तार : घनश्यामदास बिड़लाको

दिल्ली
२५ सितम्बर, १९२४

घनश्यामदास बिड़ला
१३७, केनिंग स्ट्रीट
कलकत्ता

जानता था कि आप उपवासकी धार्मिक आवश्यकताका समर्थन करेंगे। आशा है आप जल्दी ही स्वस्थ हो जायेंगे। अभी आनेकी आवश्यकता नहीं। चाहता हूँ आप स्वस्थ होनेके बाद आयें।

गांधी

मूल अंग्रेजी तार (सी० डब्ल्यू० ५९९७) से।
सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

१६२. पत्र : मणिबहन पटेलको

[२६ सितम्बर, १९२४][1]

चि० मणि,

मेरे उपवाससे तनिक भी घबरानेकी जरूरत नहीं। [जितने दिन उपवास कर चुका हूँ], उसको देखते हुए अब भी खूब शक्ति है। मेरा खयाल है, २१ दिनकी अवधि निर्विघ्न पार हो जायेगी। डाक्टरोंका भी यही खयाल है। अपने स्वास्थ्यका खूब ध्यान रखना। घूमनेकी आदत रखना। मुझे पत्र लिखना।

बापूके आशीर्वाद

चि० मणिबहन पटेल
मार्फत — बैरिस्टर वल्लभभाई
अहमदाबाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो ४ — मणिबहेन पटेलने

१. मणिबहन पटेल द्वारा दी गई तिथि।

१६३. हिन्दू-मुस्लिम एकता सम्बन्धी प्रस्तावका मसविदा[1]

[२७ सितम्बर, १९२४ से पूर्व]

यह सम्मेलन भारतमें हिन्दुओ और मुसलमानोके बीच बहुत-से स्थानोपर चल रहे उस विरोध-वैमनस्य और उन झगडे-फसादोकी निन्दा करता है, जिनके परिणाम-स्वरूप लोगोकी जाने गई है, सम्पत्ति जलाई[2] गई है और पूजा-स्थानोकी पवित्रता भग की गई है। सम्मेलन इस प्रकारके कार्योको बर्बरतापूर्ण और धर्म-विरुद्ध[3] मानता है तथा इन उपद्रवोमे नुकसान उठानेवाले लोगोके प्रति हार्दिक सहानुभूति प्रकट करता है। इस सम्मेलनका विचार है कि किसी भी मनुष्यके लिए[4] कानूनको अपने हाथमे लेना अवैध और धर्म-विरुद्ध है। सम्मेलनका मत है कि सभी मतभेदोको, चाहे वे किसी प्रकारके हों, पच-फैसलेके लिए सौंप देने चाहिए या[5] न्यायालयमें पेश करना चाहिए। यह सम्मेलन पचोके रूपमें . . . को (ये व्यक्ति ऐसे होने चाहिए जो इस कार्यमें अपना सारा समय लगायें) नियुक्त करता है और उन्हे यह अधिकार देता है कि वे ऐसे अभिकर्त्ता (एजेट) नियुक्त कर सकते है जो दोनो सम्प्रदायोके सभी झगड़ोका निपटारा करें, पिछली ज्यादतियोकी जाँच-पड़ताल करे तथा अपनी जाँचके निष्कर्षोको प्रकाशित करे।

इस सम्मेलनका विचार है कि हिन्दुओको गो-हत्या बलपूर्वक बन्द करानेकी आशा नही करनी चाहिए, बल्कि इसके लिए उन्हे मुसलमानोकी सद्भावनापर विश्वास करना चाहिए और भरोसा रखना चाहिए कि दोनो सम्प्रदायोके सम्बन्ध अच्छे हो जानेपर इस सम्बन्धमे सहज ही उनकी भावनाका खयाल रखा जाने लगेगा और इसी प्रकार मुसलमानोको भी मसजिदोके पास हिन्दुओका गाना-बजाना जबरदस्ती बन्द करानेकी आशा नही करनी चाहिए, बल्कि हिन्दुओकी सद्भावनापर विश्वास करते हुए मानना चाहिए कि जहाँ उनकी भावनाएँ प्रामाणिक होगी, वहाँ हिन्दू लोग यथा-सम्भव उनका पूरा खयाल रखेंगे।

इस सम्मेलनका विचार है कि कुछ अखबारोने, विशेषकर उत्तर भारतके कुछ अखबारोने, घोर अतिशयोक्तिपूर्ण बातें लिखकर, एक-दूसरेके धर्मकी निन्दा करके और

१. अनुमानतः यह मसविदा गांधीजीने तैयार किया था। इसका पहला अनुच्छेद कुछ परिवर्तनोंके साथ, जिनका उल्लेख नीचे पाद-टिप्पणियोंमें किया गया है, २९-९-१९२४ के बॉम्बे क्रॉनिकलमें शौकत अली द्वारा प्रस्तुत और एकता सम्मेलनकी विषय-समिति द्वारा २७ सितम्बर, १९२४ को स्वीकृत प्रस्तावके रूपमें छपा था।

२. स्वीकृत प्रस्तावमें यहां "और लूटी" शब्द जोड़ा गया है।

३. स्वीकृत प्रस्तावमें "धर्म-विरुद्ध" शब्द नहीं है।

४. यहाँ "बदला लेने या दण्ड देनेके तौरपर" ये शब्द जोड़े गये हैं।

५. यहाँ "अगर यह असम्भव हो तो" शब्द जोड़े गये हैं।

हर तरहसे पूर्वग्रहो और आवेशको उत्तेजन देकर इस तनावको बढाया है। यह सम्मेलन जनतासे अनुरोध करता है कि वह इस प्रकारके अखबारो तथा पुस्तिकाओको खरीदना और पढना बन्द कर दे और प्रस्तावमे उल्लिखित बोर्डको सलाह देता है कि वह इस प्रकारके लेखोंकी जाँच-पडताल[1] करे और समय-समयपर गलत-बयानियोको सुधारकर प्रकाशित करे।

यह सम्मेलन प्रस्तावके अनुसार नियुक्त किये जानेवाले बोर्डको अधिकार देता है कि वह अल्पसख्यकोके अधिकारोकी रक्षाकी एक योजना बनाये और इस उद्देश्यकी पूर्तिके लिए सभी दलो और वर्गोसे आवेदन माँगे और अपने निष्कर्षोको प्रकाशित करे। ये निष्कर्ष १९२९ के अन्ततक पाँच वर्षोके लिए सभी दलो और वर्गोपर लागू रहेंगे और उसके बाद भी जबतक सभी पक्षोके प्रतिनिधियोका एक सयुक्त सम्मेलन उसपर पुनर्विचार न करे तबतक लागू रहेंगे।

इस सम्मेलनका विचार है कि अवयस्को और नासमझ तथा अशिक्षित वयस्कोकी शुद्धि या तबलीग नैतिक भावनाके विपरीत है और इसे बन्द कर देना चाहिए। इस सम्मेलनका यह भी विचार है कि धनका प्रलोभन देकर तबलीग या शुद्धि करना गर्हित है; इसलिए जहाँ भी ऐसा किया जाता हो, उसे बन्द कर देना चाहिए। इसके अतिरिक्त सम्मेलनका विचार यह भी है कि तबलीग या शुद्धि कभी लुक-छिप कर नही करनी चाहिए और जिसका भी धर्म-परिवर्तन किया जाये, खुले तौरपर तथा उसके सम्बन्धियोको सूचना देकर किया जाये।

अग्रेजी प्रति (एस० एन० १५८७०) की फोटो-नकलसे।

१६४. पत्र : मोतीलाल नेहरूको

२७ सितम्बर, १९२४

प्रिय मोतीलालजी,

आपने कल रात जो प्रस्ताव[2] मुझे पढकर सुनाया, उसे आपके निर्देशनमे सम्मेलनने स्नेह और करुणाकी भावनावश पास कर दिया है। मैं आपसे कहूँगा कि आप सम्मेलनको यह विश्वास दिलायें कि यदि मेरे लिए उसकी इच्छाओका पालन कर सकना सम्भव होता तो मैं खुशीसे करता। मैंने अपने मनको बार-बार टटोला है और मैं देखता हूँ कि मेरे लिए उपवास समाप्त करना सम्भव नही है। मेरा धर्म

१. साधन-सूत्रमें "निरीक्षण करें" है।

२. सम्मेलनने गांधीजीके उपवासपर चिन्ता और दुःख प्रकट करते हुए अपने प्रस्तावमें धार्मिक स्थानोंके अपवित्र किये जानेकी निंदा की थी और गांधीजीको विश्वास दिलाया था कि सम्मेलनके सदस्य धार्मिक सद्भावके लिए प्रयत्न करेंगे। अन्तमें प्रस्तावमें गांधीजीसे अनुरोध किया गया था कि वे तुरन्त अपना उपवास समाप्त कर दें।

मुझे सिखाता है कि एक बार वचन देनेके बाद या किसी अच्छे उद्देश्यके लिए कोई व्रत लेनेके बाद उसे तोड़ना नही चाहिए और आप जानते ही है कि मेरा जीवन पिछले ४० वर्षोंसे भी अधिक समयसे इसी आधारपर चलता आया है।

इस उपवासके कारण इतने गहरे है कि उन्हे इस पत्रमे समझाया नही जा सकता। एक चीज़ तो यही है कि मैं इस उपवासके द्वारा अपना विश्वास व्यक्त कर रहा हूँ। असहयोगकी कल्पना एक अग्रेजके विरुद्ध घृणा अथवा दुर्भावके वशमें होकर नही की गई थी। उसके अहिंसात्मक स्वरूपका उद्देश्य यह था कि हम अग्रेजोको अपने प्रेमसे जीते। लेकिन असहयोगका यह परिणाम तो नही ही निकला, उलटे उससे जो जोश और उत्साह उत्पन्न हुआ उसने हमारे ही बीच घृणा और दुर्भावको जन्म दे दिया है। यह इसी तथ्यका ज्ञान है जिससे विवश होकर मैंने पश्चात्ताप करनेका यह अटल निश्चय किया है।

अत अब यह उपवास मेरे और ईश्वरके बीचकी बात है। इसलिए मैं इसे न तोड़नेके लिए आपसे क्षमा ही नही चाहूँगा, बल्कि आपसे यह भी कहूँगा कि मुझे प्रोत्साहन दे और मेरी तरफसे प्रार्थना करे कि यह व्रत सफलतापूर्वक समाप्त हो।

मैंने मरनेकी इच्छासे उपवास शुरू नही किया है, बल्कि देशकी सेवाके लिए एक बेहतर और ज्यादा पवित्र जीवन जीनेके लिए किया है। अत यदि मैं किसी ऐसी सकटकी स्थितिमे पहुँच गया (जिसकी मुझे कोई सम्भावना नही दिखाई देती) जहाँ मुझे मौत और भोजनमें से किसी एकको चुनना हो तो मैं निश्चय ही उपवास[1] तोड दूँगा। डा० अन्सारी और डा० रहमान, जो बडे ध्यान और सावधानीके साथ मेरी देख-रेख कर रहे है, आपको बतायेंगे कि मैं बिलकुल तरोताजा बना हुआ हूँ।

इसलिए मैं आदरपूर्वक सम्मेलनसे कहूँगा कि उसका प्रस्ताव जिस व्यक्तिगत स्नेहका सूचक है, उस स्नेहको उस एकताके लिए, जिसके लिए कि सम्मेलन बुलाया गया है, ठोस, हार्दिक और सच्चे कामका रूप दे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २-१०-१९२४

१. गांधीजीके उपवासके सम्बन्धमें मथुरादास त्रिकमजीने महादेव देसाईको पत्र लिखा था। बापुनी प्रसादीमें यह और इससे पहलेवाला वाक्य "मथुरादास त्रिकमजीके लिए टिप्पणी" के रूपमें दिया गया है।

१६५. पत्र : नरहरि परीखको

भाद्रपद वदी ३० [२८ सितम्बर, १९२४][1]

भाई नरहरि,

महादेव तुमको रोज लिखता है, इसलिए मैंने कोई पत्र नही लिखा। लेकिन तुम्हारा और जुगतरामका ध्यान बराबर बना रहता है। मेरी लिखावट देखकर ही समझ जाओगे कि उपवासका मुझपर बहुत ज्यादा असर नही हुआ है। मैं खूब शान्त हूँ और पूरे आनन्दका अनुभव कर रहा हूँ। मेरी कोई चिन्ता न करना। सभी भाई-बहनोसे मेरा वन्देमातरम् कहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (एस० एन० ९०४६) की फोटो-नकलसे।

१६६. हृदय-परिवर्तन

२९ सितम्बर, १९२४

अबतक तो हम, जिन अंग्रेजोसे भारत सरकार बनी हुई है, उनके हृदय-परिवर्तनके लिए प्रयत्नशील और उत्कंठित रहे। वह परिवर्तन तो अभीतक नहीं आ पाया है। फिर भी हमें कुछ समयके लिए अंग्रेजोंके बजाय हिन्दुओं और मुसलमानोंके हृदय-परिवर्तनके लिए प्रयत्न करना है। जबतक उनमें इतनी बहादुरी नही आ जाती कि वे एक-दूसरेको प्यार कर सकें, एक-दूसरेके धर्म, बल्कि पूर्वग्रहो और अंधविश्वासोंके प्रति भी सहिष्णुता बरत सके तथा एक-दूसरेका विश्वास कर सके, तबतक उन्हे स्वराज्यकी बात सोचनेका साहस नही करना चाहिए। इस सबके लिए आत्म-विश्वासकी जरूरत है और आत्म-विश्वासका मतलब ईश्वरमें विश्वास रखना है। अगर हमारे अन्दर वह विश्वास पैदा हो जाये तो हम एक-दूसरेसे बिलकुल नही डरेंगे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २-१०-१९२४

१. उपवासके उल्लेखसे।

१६७. पत्र: श्रीमती हॉजकिन्सनको

[३० सितम्बर, १९२४][1]

प्रिय श्रीमती हॉजकिन्सन,

पत्रके लिए धन्यवाद। मैं प्रतिदिन ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि वह मुझे राह दिखाये। प्रार्थना करनेके बाद ही मैंने उपवास प्रारम्भ किया। मैंने मरनेके लिए ऐसा नही किया, बल्कि सेवाके उद्देश्यसे अधिक अच्छे और शुद्ध मनुष्यके रूपमे जीनेके लिए ही ऐसा किया है। किन्तु यदि ईश्वरकी ही इच्छा कुछ और हो तो उसे कौन टाल सकता है? मैं आपकी इस बातसे बिलकुल सहमत हूँ कि मानवीय प्रयत्नसे कभी एक दिनमे एकता स्थापित नही हो सकती, किन्तु आस्थाका बल और प्रार्थना तो चमत्कार उत्पन्न कर सकते हैं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
ट्रिब्यून, ३-१०-१९२४

१६८. सन्देश: 'गुणसुन्दरी' को[2]

स्वराज्यकी डोर बहनोके हाथमें है। वह डोर आज उनके हाथसे छूट गई है। अगर वे सुन्दर और मजबूत सूत कातें तो उसके बलपर वे अभी भी स्वराज्यको, वह जहाँ कही हो वहाँसे खीच ला सकती हैं।

मोहनदास गांधी

[गुजरातीसे]
गुणसुन्दरी, अक्तूबर, १९२४

१. यह पत्र श्रीमती हॉजकिन्सनको इसी दिन मिला था।
२. एक गुजराती मासिक पत्रिका।

१६९. सन्देश : एनी बेसेंटके जन्म-दिवसपर[1]

[१ अक्तूबर, १९२४ से पूर्व]

मुझे अफसोस है कि मैं डा० एनी बेसेंटके जन्म-दिवस समारोहमें उपस्थित नही हो सकता। मैं प्रतीक्षा कर रहा था कि मुझे इस सिलसिलेमें बम्बईकी एक सभाकी अध्यक्षता करनेका सौभाग्य मिलेगा। किन्तु विधिकी इच्छाके सामने मनुष्यके सकल्पोका क्या अर्थ होता है? मैं यह खयाल भी नही करता था कि मुझे यह प्रायश्चित्त करना पडेगा, जो ईश्वर मुझसे करा रहा है। आशा है, सभामें आये सभी लोग मुझे क्षमा करेंगे। किन्तु यद्यपि मेरा शरीर वहाँ उपस्थित नही रहेगा, फिर भी मेरी आत्मा वही रहेगी। डा० बेसेंटकी ख्याति दुनिया-भरमे है। यह भारतके लिए कोई छोटी उपलब्धि नही है कि उन्होने भारत माताको अपनी माता माना है और अपने सारे अनुपम गुणोको उसकी सेवामें अर्पित कर दिया है। वे इस आयुमें भी, जब कि लोग पूर्ण विश्राम करनेके अधिकारी होते हैं, अद्‌भुत स्फूर्ति और उत्साहसे लिख रही हैं और भाषण देने, यहाँ-वहाँ आने-जाने और भारतकी मुक्तिकी योजनाएँ तैयार करनेमें लगी हुई हैं। तमाम प्रतिकूल परिस्थितियोमें उनका अदम्य उत्साह, उनकी महान् संगठन-शक्ति, उनकी साहित्यिक प्रतिभा और वक्तृत्व-कला तथा बहुतसे दूसरे गुण, जिनका मैं उल्लेख कर सकता हूँ, हमारे लिए ऐसी निधियाँ हैं, जिनपर हमे गर्व होना चाहिए और जिनका सदुपयोग करना चाहिए। इसलिए जब मेरा उनसे मतभेद हुआ तो मुझे दुख हुआ था। लेकिन अब इस बातसे मुझे उतनी ही प्रसन्नता भी है कि हम एक-दूसरेके अधिक निकट आते दिखाई दे रहे हैं। ईश्वर उन्हे लम्बी आयु दे और वे उस स्वराज्यको स्थापित हुआ देख सकें, जिसके लिए वे और हम कठिन प्रयास कर रहे हैं और जिसके लिए धैर्यपूर्वक सतत प्रयत्न करनेमें कोई भी उनसे आगे नही बढ सकता।

[अंग्रेजीसे]

न्यू इंडिया, २-१०-१९२४

---

१. यह १ अक्तूबरको कावसजी जहांगीर हॉल, बम्बईमें हुई एक सभामें पढा गया था। यह सभा बम्बई प्रान्तीय कांग्रेस, स्वराज्य-सभा तथा अन्य सार्वजनिक संस्थाओंके तत्त्वावधानमें डा० बेसेंटकी ७८ वीं वर्षगाँठ तथा उनके सार्वजनिक जीवनकी जयन्ती मनानेके लिए की गई थी। मुहम्मद अली जिन्नाने इसकी अध्यक्षता की थी। इसमें एनी बेसेंट भी उपस्थित थीं। देखिए "पत्र: एनी बेसेंटको", १८-९-१९२४।

१७०. बम्बईके महिला-शिष्टमण्डलको उत्तर

१ अक्तूबर, १९२४

बम्बईकी महिलाओंका एक शिष्टमण्डल, जिसमें राष्ट्रीय स्त्री सभाकी मन्त्री श्रीमती कैप्टन, श्रीमती मीर अली, श्रीमती गोखले, श्रीमती ठाकुर और कुमारी पेटिट शामिल थीं, कल महात्मा गाधीसे मिला और उनसे उपवास तोड़नेका अनुरोध किया।

महात्माजीने उत्तरमें कहा कि मैंने निश्चय किया है कि मै उपवास निर्धारित अवधितक जारी रखूंगा और मुझे विश्वास है कि मै उसे बिना किसी विघ्न-बाधाके पूरा कर लूंगा।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, २-१०-१९२४

१७१. क्या गुजरात हार जायेगा?

बुधवार, आश्विन सुदी ३ [१ अक्तूबर, १९२४]

आन्ध्रदेश और बगालने गुजरातको कतैयोकी सख्यामे हरा देनेकी धमकी दी है। यदि इनमे से एक भी प्रान्त गुजरातको हरा देगा तो मै उसे अवश्य मुबारकबाद दूंगा। लेकिन गुजरात हारे क्यो? पूर्ण प्रयत्न कर लेनेके बाद हारमे भी जीत ही है। गुजरातने तो अभी प्रयत्न शुरू ही किया है। तमाम शिक्षक लोग अभी कहाँ कातते है? विद्यार्थी कहाँ कातते है? अगर ये सब, और सभाओमे हाजिर रहनेवाले गुजरातके असख्य भाई-बहन कातने लगे और फिर गुजरात हार जाये तो कोई हर्ज नही। बाजी कार्यकर्त्ताओके हाथ है। कार्यकर्त्ताओ, सावधान!

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ५-१०-१९२४

१७२. सन्देश : अन्तर्राष्ट्रीय अफीम सम्मेलनको[1]

[२ अक्तूबर, १९२४ से पूर्व]

महात्मा गांधी और रवीन्द्रनाथ ठाकुरने अपने हस्ताक्षरोंमें यह सन्देश दिया है :

हम नीचे हस्ताक्षर करनेवाले लोग नशीली चीजोकी इस बढती हुई लतको व्यक्तियो और राष्ट्रोके लिए घातक खतरा मानते है। इन चीजोसे मानव-जातिके शरीरमे अन्दर ही अन्दर बडी तेजीसे जहर फैल रहा है। हम इस बुराईको राष्ट्रोके आपसी सहयोगसे ही रोक सकते है। अत हम लोग नवम्बर १९२४ में जो अन्तर्राष्ट्रीय अफीम सम्मेलन हो रहा है उससे सादर निवेदन करते है कि जिन पौधोसे ये नशीली चीजे बनती है, उनको पूर्णत नष्ट करनेके लिए समुचित उपाय करे। केवल उतने ही पौधे छोडे जायें जितनेको ससारके सर्वोत्तम चिकित्सा-शास्त्रियोकी रायमें औषधियो और विज्ञानकी दृष्टिसे रखना आवश्यक हो।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २-१०-१९२४

१७३. भाई परमानन्दके सन्देशका उत्तर

[२ अक्तूबर, १९२४][2]

भाई परमानन्दके सन्देशके उत्तरमें श्री गांधीने तार भेजा है, जिसमें उन्होंने लिखा है कि केवल ईश्वर ही जानता है कि मैंने उपवास आरम्भ करके पाप किया है या नहीं। यदि कोहाटके शरणार्थियोंको मेरे प्राण देनेसे सान्त्वना मिले तो मैं वैसा करनेके लिए तैयार हूँ। यदि कोहाटका शिष्टमण्डल मुझसे उपवास त्यागनेका आग्रह करनेके लिए ही दिल्ली आना चाहता है तो उसका आना व्यर्थ है। यदि नहीं, तो वैसे उनसे भेंट करनेमें मुझे अत्यन्त प्रसन्नता होगी।

[अंग्रेजीसे]

न्यू इंडिया ३-१०-१९२४

१. यह सम्मेलन जनेवामें हुआ था। **न्यू इंडिया**के २२-११-१९२४ के अंकमें निम्न समाचार छपा था : "जनेवा, २० नवम्बर : श्री अलेक्जेंडरने . . . कहा कि उन्हें आज श्री गांधीका एक तार मिला है जिसमें कहा गया है कि भारत दवाओंको छोडकर दूसरे सभी उद्देश्योंके लिए अफीम-व्यापारका उन्मूलन चाहता है।"

२. यह समाचार 'एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडिया' ने अहमदाबादसे इसी तारीखको प्रकाशनके लिए भेजा था।

१७४. टिप्पणी

मैं मुसलमान क्यों नहीं होता

एक मुसलमान भाई लिखते हैं:

> आपका दावा है कि 'मैं सत्याभिलाषी, सत्य-शोधक और सत्य-ग्राहक हूँ।' साथ ही आपने यह भी लिखा है कि 'इस्लाम मिथ्या धर्म नहीं है।' खुदाका खास फरमान है कि दुनियाके हर शख्सको इस्लाम कबूल करना चाहिए। फिर भी आप मुसलमान क्यों नहीं होते? एक हिन्दू नेताका ध्यान जब मैंने परिशिष्टांक १४ की[1] ओर खींचा, तब उन्होंने कहा कि यह तो गांधीजीने मुसलमानोंको खुश रखनेके लिए लिख दिया है। गांधीजीके दिलमें इस्लामके लिए मुहब्बत नहीं है।

इन भाईने आग्रहपूर्वक जवाब माँगा है। यह धर्म तो कही नही सुना कि जो मिथ्या न हो वह सब हर आदमीको करना ही चाहिए। जिस तरह मैं इस्लामको मिथ्या नही मानता, उसी तरह मैं ईसाई, पारसी, यहूदी धर्मोंको भी मिथ्या नही मानता। तो फिर मैं किस धर्मको कबूल करूँ? फिर, मैं हिन्दू-धर्मको भी मिथ्या नही मानता। ऐसी अवस्थामें मुझ-जैसे सत्य-शोधकको क्या करना चाहिए? मुझे इस्लाममे खूबियां दिखाई दी और इसीलिए मैंने कहा कि यह धर्म मिथ्या नही है। यह कहनेकी जरूरत इसलिए हुई कि इस्लामपर चोट की गई है। और चूंकि मैं मुसलमान भाइयोंके साथ मित्रता रखना चाहता हूँ, इसलिए मैंने उनके धर्मका बचाव किया। हर आदमीकी नजरमें उसका अपना धर्म सर्वश्रेष्ठ होता है, इसीसे वह अपने ही धर्ममे रहता है। इसी तरह हिन्दू-धर्म मुझे मिथ्या नही मालूम होता; इतना ही नही, बल्कि सबसे श्रेष्ठ मालूम होता है। इसलिए मैं अपने धर्मसे उसी तरह चिपटा हुआ हूँ जिस तरह बालक अपनी माँसे चिपटा रहता है। परन्तु बालक जिस प्रकार परायी माताका तिरस्कार नही करता, उसी प्रकार मैं भी पर-धर्मका तिरस्कार नही करता। अपने धर्मके प्रति मेरा प्रेम, अपने-अपने धर्मके प्रति दूसरोंके प्रेमकी भी कद्र करना सिखाता है और मैं हमेशा ईश्वरसे यह प्रार्थना करता रहता हूँ कि यह बात हर हिन्दू और मुसलमान सीखे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ५-१०-१९२४

१. नवजीवनका १४ वाँ परिशिष्टांक १ जून, १९२४ को प्रकाशित हुआ था और उसमें २९-५-१९२४ के यंग इंडियामें हिन्दू-मुस्लिम तनावपर लिखे एक लेखका अनुवाद छपा था। देखिए खण्ड २४, पृष्ठ १३९-१५९।

१७५. पत्र : जमनादास गांधीको

रविवार, आश्विन सुदी ७ [५ अक्तूबर, १९२४][1]

चि० जमनादास,

आज उपवासके अठारह दिन पूरे हो गये, लेकिन [मेरे स्वास्थ्यपर] उसका कोई खास असर हुआ है, ऐसा नही कहा जा सकता। मै बहुत आनन्दमे हूँ। मेवाकी[2] तबीयत ठीक होती ही नही। इसका क्या कारण है, पता लगाना चाहिए। तुम तो कुछ और स्वस्थ हो गये होगे! पैसेकी परेशानी तो अब मिट गई होगी। स्वेच्छासे कातनेवालोकी सख्या बढाना। जगन्नाथका उपयोग उनके अपने खास काममे ही करना। पूज्य खुशालभाई[3] और देवभाभीको[4] मेरा दण्डवत् कहना। अभी तो मुझे दिल्लीमे ही रहना है, इसलिए पत्र यही, मुहम्मद अलीके पतेपर लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ६०३६) से।
सौजन्य . नारणदास गाधी

१७६. मेरा अवलम्ब

दिल्ली
६ अक्तूबर, १९२४

मेरे प्रायश्चित्त और प्रार्थनाका आज बीसवाँ दिन है। अब मै फिर शान्तिके राज्यसे निकलकर तूफानी दुनियामे पडनेवाला हूँ। इसके बारेमे मै जितना सोचता हूँ अपने-आपको उतना ही अधिक असहाय अनुभव करता हूँ। कितने ही लोग एकता-सम्मेलन द्वारा शुरू किये गये कामको पूरा करनेके लिए मेरी ओर आशा भरी नजरोसे देख रहे हैं। कितने ही लोग राजनीतिक दलोको एकत्र करनेकी उम्मीद मुझसे रखते है। पर मै जानता हूँ कि मै कुछ नही कर सकता। ईश्वर ही सब-कुछ कर सकता है। प्रभो, मुझे अपना योग्य साधन बना और अपना इच्छित काम मुझसे ले!

मनुष्य कोई चीज नही। नैपोलियनने क्या-क्या मनसूबे नही बाँधे, पर सेंट हेलेनामे एक कैदी बनकर उसे रहना पडा। जर्मन सम्राट् कैसरने समस्त यूरोपका

१. डाककी मुहरसे।
२. जमनादास गांधीकी पत्नी।
३. जमनादास गांधीके पिता।
४. जमनादास गांधीकी माता।

गाह बननेका ख्वाब देखा, पर आज वह एक मामूली आदमी है। ईश्वरकी यही इच्छा थी। हम ऐसे उदाहरणोंपर विचार करें और विनम्र बनें।

सौभाग्य और शान्तिके इन दिनोंमें, जबकि मुझे ईश्वरकी कृपाका अनुभव होता रहा है, मैं अकसर एक भजन गुनगुनाता रहा हूँ। वह सत्याग्रह आश्रममें अकसर गाया जाता है। वह इतना भावपूर्ण है कि मैं उसे पाठकोंके सामने उपस्थित करनेकी प्रसन्नताका संवरण नहीं कर सकता। मैं खुद जितना कह सकता हूँ उससे कहीं ज्यादा अच्छी तरह उस भजनका भाव ही मेरी स्थितिको प्रदर्शित करता है।

भजन इस प्रकार है:

रघुवर तुमको मेरी लाज।
सदा-सदा मैं सरन तिहारी, तुम बड़े गरीब निवाज।।
पतित उधारन विरुद तिहारो श्रवणन सुनी अवाज।
हौं तो पतित पुरातन कहिये पार उतारो जहाज।।
अघ खण्डन दुख-भंजन जनके यही तिहारो काज।
तुलसीदासपर किरपा करिये भक्ति-दान देहु आज।।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ९-१०-१९२४

१७७. पत्र : ना० मो० खरेको

आश्विन सुदी ९-१० [७ अक्तूबर, १९२४][1]

भाई पण्डितजी,[2]

यह पत्र उपवासके अन्तिम दिन लिख रहा हूँ। आत्माके विकासके लिए संगीतके महत्त्वकी प्रतीति मुझे दिन-दिन होती जा रही है। मैं चाहता हूँ, आप इस बातके लिए खूब प्रयत्न करें कि हमारे भजन सब लोग अर्थ समझकर गाने लगें। आश्रम-वासी अभी जो भजन गाते हैं, उनमें लीन नहीं होते। इस समय बालकृष्णके[3] यहाँ होनेसे मुझे बड़ी मदद मिली। सब बालकृष्ण-जैसे क्यों नहीं हो सकते? सभी भक्त सदासे भजनोंमें लीन होते आये हैं। रामभाऊ[4] [प्रार्थनाके समय] तनकर नहीं बैठता। उसे तनकर बैठनेकी आदत डालिए।

१. डाककी मुहरसे।
२. नारायण मोरेश्वर खरे, आश्रममें संगीतके अध्यापक; डांडी यात्रा-दलके एक सदस्य।
३. बालकृष्ण न० भावे, सत्याग्रह आश्रमके निवासी।
४. पण्डित खरेका पुत्र।

मेरा आनन्द अवर्णनीय है। बहुत दुःख नही उठाना पड़ा। ईश्वर बड़ा दयालु है।

बापूके आशीर्वाद

पण्डितजी
सत्याग्रह आश्रम
साबरमती

महात्मा, खण्ड २, मे दिये मूल गुजराती पत्रके चित्रसे।

१७८. वक्तव्य : उपवास तोड़नेके पूर्व

दिल्ली
८ अक्तूबर, १९२४

श्री गांधीने आज १२ बजे दोपहरको अपना उपवास छोड़ा। . . . हिन्दुओं, मुसलमानों तथा ईसाइयोंकी प्रार्थनाएँ समाप्त होनेके बाद . . . उन्होंने मन्द स्वरमें, जो कभी-कभी सुनाई नहीं पड़ता था, कहा :

हिन्दू-मुस्लिम एकतामे मेरी दिलचस्पी कोई नई चीज नही है। तीस वर्षोंसे मुझे मुख्य रूपसे इसीकी चिन्ता लगी रही है। किन्तु मैं इसे प्राप्त करनेमें असफल रहा हूँ। मैं नही जानता कि ईश्वरकी इच्छा क्या है। आप जानते हैं कि मूल रूपमे मेरी प्रतिज्ञाके दो भाग थे। उनमें से एक तो पूरा हो गया है। दूसरेको मैंने उन मित्रोके कहनेपर वापस ले लिया, जो उस रात श्री मुहम्मद अलीके घरपर उपस्थित थे। यदि मैं दूसरे भागको कायम रखता तो भी एकता-सम्मेलनकी सफलताके कारण मुझे अपना उपवास अब तोड़ना ही पडता।

हकीम अजमलखां और श्री मुहम्मद अलीकी मार्फत मुसलमानोंको सन्देश देते हुए श्री गांधीने कहा :

आज मै आपसे यह वचन देनेका अनुरोध करता हूँ कि आवश्यकता पड़नेपर आप हिन्दू-मुस्लिम एकताके लिए अपने प्राणतक दे देंगे। यदि यह एकता स्थापित नही हुई तो मेरे लिए हिन्दू-धर्म अर्थहीन हो जायेगा और यही बात मैं इस्लामके लिए भी कहनेकी धृष्टता करता हूँ। हमें एक साथ रहने लायक बनना ही है। हिन्दुओके लिए पूर्ण स्वतन्त्रतासे अपने मन्दिरोंमें पूजा कर सकने और इसी प्रकार मुसलमानोंके लिए भी उतनी ही स्वतन्त्रतासे अपनी मसजिदोंमे अजान देने तथा नमाज पढ़ सकनेकी सुविधा होनी चाहिए। यदि हम पूजाकी इस मूलभूत स्वतन्त्रताको भी सुनिश्चित नही कर सकते तो न तो हिन्दू-धर्मका कोई अर्थ रह जाता है और न इस्लामका। मैं आपसे यह वचन लेना चाहता हूँ और मैं जानता हूँ कि आपने मुझे यह वचन दिया है; किन्तु अब चूंकि मैं उपवास तोड़ रहा हूँ, इसलिए मैं उत्तर-

दायित्वकी भावनासे विवश हो गया हूँ और आपसे अपने इस वचनको फिर दोहरानेका अनुरोध कर रहा हूँ।

[अंग्रेजीसे]

न्यू इंडिया, ९-१०-१९२४

१७९. तपकी महिमा

८ अक्तूबर, १९२४

हिन्दू-धर्ममें पग-पगपर तप है। पार्वती शंकरको पाना चाहती है तो तप करे। शिवसे भूल हुई तो उन्होंने तप किया। विश्वामित्र तो तपकी मूर्ति ही थे। राम जब वनको गये तो भरतने योगारूढ होकर घोर तपश्चर्या आरम्भ की और शरीरको सुखा लिया।

ईश्वर दूसरी तरह मनुष्यकी कसौटी कर ही नहीं सकता। यदि आत्मा देहसे भिन्न है तो हम देहको कष्ट देते रहे, फिर भी आत्माको प्रसन्न रहना चाहिए। शरीरकी खुराक अन्न है, आत्माकी ज्ञान और चिन्तन। यह बात प्रसंग आनेपर हर व्यक्तिको अपने लिए सिद्ध करनी पड़ती है।

परन्तु यदि तप आदिके साथ श्रद्धा, भक्ति और नम्रता न हो तो तप एक मिथ्या कष्ट है। वह दम्भ भी हो सकता है। ऐसे तपस्वीसे सुखपूर्वक भोजन करनेवाले ईश्वर-भक्त हजार गुना बेहतर हैं।

अपने तपकी कथा लिखने लायक शक्ति अभी मुझमें नहीं है, पर इतना कहे देता हूँ कि इस तपके बिना मेरा जीना असम्भव था। अभी मेरे नसीबमें फिरसे तूफानी समुद्रमें कूदना बदा है। प्रभो, दीन समझकर तू मुझे पार लगाना!

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १२-१०-१९२४

१८०. तार : मथुरादास त्रिकमजीको

[८ अक्तूबर, १९२४][1]

ईश्वरकी दया अपार है। उपवास पूरा हुआ। तबीयत ठीक है।

[गुजरातीसे]

बापुनी प्रसादी

१. साधन-सूत्रके अनुसार।

१८१. पत्र: मुहम्मद अलीको

दिल्ली
८ अक्तूबर, १९२४

प्रिय भाई,

आप मेरे लिए भाईसे भी बढकर है। गाय देख ली।[1] उसे देखनेके लिए मेरी खाटको थोडा ऊपर उठा दिया गया था। धन्य है आपका प्रेम कि आपके मनमे यह विचार आया। ईश्वर करे मेरा और आप दोनो बन्धुओका यह स्नेह-बन्धन हमारे अपने-अपने धर्मो, देश तथा मानवताके कल्याणके लिए हिन्दू और मुसलमानोको अटूट और शाश्वत स्नेह-बन्धनमे बाँध दे। हाँ, ईश्वर महान् है; वह सब-कुछ कर सकता है।

सदैव आपका,
मो० क० गांधी[2]

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ११-१०-१९२४

१८२. सन्देश: 'स्टेट्समैन'को

[९ अक्तूबर, १९२४ से पूर्व]

एकता अन्य सभी वस्तुओसे बढकर है।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, ९-१०-१९२४

१. १६-१०-१९२४के *यंग इंडिया*में छपे अपने लेख "सम्मेलन और उसके पश्चात्" में मुहम्मद अलीने लिखा था : मैंने महात्मा गांधीको उनके उपवास तोडनेपर किसी कसाईसे खरीदकर एक गाय भेंट दी थी।

२. गांधीजीने अपने हस्ताक्षर उर्दूमें किये थे।

१८३. सन्देश : अखबारोंको[1]

दिल्ली
९ अक्तूबर, १९२४

महात्मा गांधीने अखबारोंके लिए निम्नलिखित सन्देश दिया है :

ईश्वर सचमुच महिमावान् और कृपाका आगार है। उसकी महिमा और कृपाका अनुभव मैं इस समय कर सकता हूँ। उसीकी कृपासे मैं इस अग्नि-परीक्षासे सफलतापूर्वक निकल आया हूँ। इस अवसरपर मुझे पत्रों और तारोंसे जो सन्देश भेजे गये हैं, उन सबको देखनेकी अनुमति मुझे नहीं है, फिर भी जो थोड़े-से सन्देश मैंने देखे हैं, उनसे मैं अभिभूत हो गया हूँ। इन सन्देशोंमें जो स्नेहका पारावार उमड़ रहा है, उसमें भी मैं ईश्वरकी ही कृपा देखता हूँ। ऐसे स्नेहपूर्ण सन्देश भेजनेवाले सभी भाइयों और बहिनोंको मैं धन्यवाद देता हूँ। मैं उनसे आशा करूँगा कि मेरे सामने जो काम पड़ा हुआ है, उसमें भी वे सहायता देंगे। यह ईश्वरका काम है। मैं जानता हूँ कि अबसे तीन हफ्ते पहले मेरे सिर जितनी जिम्मेदारी थी, आज उससे कहीं अधिक है। मैं भली-भाँति जानता हूँ कि उपवासके साथ मेरा काम पूरा नहीं हो गया। अभी तो वह शुरू ही हुआ है और मैं चाहता हूँ कि भारतके सभी भाई-बहन इस कार्यकी सफलताके लिए ईश्वरसे प्रार्थना करें और अपना पूरा सहयोग दें।

[अंग्रेजीसे]
न्यू इंडिया, ९-१०-१९२४

१८४. पत्र : शान्तिकुमार मोरारजीको

आश्विन सुदी १४ [११ अक्तूबर, १९२४][2]

भाई शान्तिकुमार,

तुम्हारा पत्र, सूतका हार और मेवा मिल गया है। तुमने नियमित रूपसे कातनेका निश्चय किया है, यह जानकर खुशी हुई। जो निश्चय किया है, ईश्वर तुम्हें उसपर दृढ़ रहनेकी शक्ति दे।

मेरी तबीयत अच्छी होती जा रही है।

१. अपने उपवासके सम्बन्धमें यह सन्देश गांधीजीने "एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडिया" के प्रतिनिधिके अनुरोधपर दिया था।

२. जुहू और गांधीजीके स्वास्थ्यकी चर्चासे प्रकट होता है कि यह पत्र १९२४ में ही लिखा गया होगा।

जुहूमें तुमने जो प्रेम दिखाया, वह बराबर याद आता रहता है।

मोहनदासके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ४७९६) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य. शान्तिकुमार मोरारजी

१८५. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

आश्विन कृष्ण २ [१४ अक्तूबर, १९२४][1]

भाई घनश्यामदासजी,

आपके पत्र मिलते रहते हैं। जबलपुरके मामलेसे मैं घबराता नहीं हूँ। मैंने जो आत्म-प्रायश्चित करनेकी मेरी शक्ति थी वह कर लिया, इसलिए मैं शान्त रह सकता हूँ। फलका अधिकार हमको नहीं है, यह तो ईश्वरके ही हाथमें है। मेरा स्वास्थ्य ठीक होनेसे कई अग्रगण्य नेताओंको साथ लेकर दौरा करनेका मेरा इरादा तो है ही, सबसे पहले मैं कोहाट जाना चाहता हूँ। सम्भव है कि मैं ८ दिनमें तैयार हो जाऊँगा।

समय आनेपर आपकी सब भाँतिकी सहाय मैं माँग लूंगा।

आपके लोगोंसे मुझे यहाँ खूब सहाय मिल रही है।

रुपये आप जमनालालजीको या तो आश्रम साबरमतीको भेजनेकी कृपा करें।

आपका,
मोहनदास गांधी

मूल पत्र (सी० डब्ल्यू० ६०३८) से।
सौजन्य : घनश्यामदास बिडला

१. उपवास और कोहाट-यात्राके उल्लेखसे यह स्पष्ट है कि यह पत्र १९२४ में लिखा गया था।

१८६. पत्र : स्वामी श्रद्धानन्दको

आश्विन कृष्ण २ [१४ अक्तूबर, १९२४][1]

भाई साहब,

आपकी चीट्ठी मीली है। . . वाइकोमके बारेमे मै प्रबंध कर रहा हूँ। और मुझे उम्मीद है कि सत्याग्रहीयोको सहाय पहोच जायगी। आपकी स्टेटमेंट मैने ध्यानसे पढ ली है। उसको मेरे हि पास रखुगा।

आपका,
मोहनदास गाधी

सन्यासी स्वामी श्री श्रद्धानन्द
वर्न वैगन रोड, दिल्ली

मूल पत्र (जी० एन० २२०६) की फोटो-नकलसे।

१८७. असहयोगीका कर्त्तव्य

बुधवार, आश्विन वदी ३ [१५ अक्तूबर, १९२४]

ऐसा कहा जा सकता है कि काग्रेसके अगले अधिवेशनमे असहयोग स्थगित हो जायेगा। लेकिन, इससे असहयोगीका काम स्थगित नही होनेवाला है। सच तो यह है कि असहयोगका जो आभास-मात्र था, वही मुल्तवी रहेगा क्योकि जहाँ प्रेम है, वहाँ वस्तुत सहयोग और असहयोग एक ही है।

बेटा बापके साथ और बाप बेटेके साथ सहयोग करे अथवा असहयोग दोनो प्रेमके ही फल होने चाहिए। स्वार्थके वशीभूत होकर किया गया सहयोग सहयोग नही, घूस है। इसी प्रकार द्वेष-भावसे किया गया असहयोग महापाप है। ये दोनो त्याज्य है।

जो असहयोग १९२० मे शुरू किया गया, उसके मूलमे प्रेम था, भले ही लोग उसे न देख पाये हो, भले ही वे उसमे द्वेष-भावसे शामिल हुए हो। फिर भी, अगर सभी नेताओने उसके मूल स्वरूपको समझा होता और उसके अनुसार आचरण किया होता तो जो कटु परिणाम निकले, वे न निकलते।

हमने शान्तिपूर्ण असहयोगका तत्त्व नही समझा इसीलिए वैर-भाव बढा और अब हम अपनी करनीका फल भोग रहे है। हमने जिस वैर-भावसे अग्रेजोके खिलाफ असहयोग किया, वह वैर-भाव अब हमारे ही बीच पैदा हो गया है।

यह वैर-भाव सिर्फ हिन्दुओ और मुसलमानोके बीच ही नही, सहयोगियो और असहयोगियोके बीच भी आ गया है।

१. डाककी मुहरसे।

इसलिए, असहयोगके ऐसे उलटे परिणामोंको रोकनेके लिए हमें असहयोगको अभी स्थगित रखना है। असहयोगको स्थगित रखनेका मतलब सिर्फ इतना ही नहीं है कि जो वकील वकालत करना चाहें और जो विद्यार्थी फिरसे सरकारी स्कूलोंमें जाना चाहें उनके वैसा करनेमें अब शर्मकी कोई बात नहीं है। सच तो यह है कि जिन वकीलोंने असहयोगके सिद्धान्तको समझ लिया होगा, वे फिरसे वकालत करेंगे ही नहीं। इसी तरह, ऐसे विद्यार्थी भी दोबारा सरकारी स्कूलोंमें जानेवाले नहीं हैं। परन्तु असहयोगके स्थगित रहनेका परिणाम तो यह निकलना चाहिए कि हम पश्चात्ताप करें; असहयोगी सहयोगीको गले लगाये, उसे प्रेमसे जीते, उससे द्वेष न करे। भले ही वह सरकारी सहायता लेता हो, सरकारी वकील हो, सरकारी नौकर हो या विधान-सभाका सदस्य हो, असहयोगी उससे मिले-जुले और हिन्दू-मुस्लिम झगड़ेको निबटाने, अस्पृश्यताको दूर करने, विदेशी कपड़ोंका बहिष्कार सम्पन्न करने, शराब-अफीमकी बुराई दूर करने और इसी तरहके दूसरे बहुत-से कामोंमें ऐसे सभी लोगोंकी मदद ले और उन्हें मदद दे।

ऐसे काममें पहल असहयोगियोंको ही करनी है। उसमें असहयोगियोंकी सूझ-बूझ, उनके विवेक, उनकी विनय, उनकी शान्तिप्रियता, उनकी नम्रता, सबकी परीक्षा होनी है। सहयोगियोंको प्रेमसे जीतनेमें असहयोगियोंकी योग्यताकी कसौटी होगी। एक ओर उन्हें झूठी खुशामदसे बचना है और दूसरी ओर उद्धततासे दूर रहना है। इन दोनों पक्षोंको साधनेके लिए हम सबको एक होकर रहना है, यही हमारे लिए पहला पाठ है। ईश्वर हमारी सहायता करे।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, १९-१०-१९२४

१८८. पत्र : गंगाबहन वैद्यको

आश्विन वदी ३ [१५ अक्तूबर, १९२४]

पूज्य गंगाबहन,

आपका पत्र मिला। पढ़कर बड़ी खुशी हुई। मैं चाहता हूँ, आप वहाँ निश्चिन्त होकर रहें और सब-कुछ सीख लें। कोई उलझन आये तो मुझे सूचित करें। जो भी कठिनाइयाँ सामने आई हों, मुझे बतायें; मैं तुरन्त उत्तर लिख भेजूँगा। आपका अभ्यास कहाँतक पहुँचा है, लिखेंगी। बच्चे बम्बई क्यों गये?

मुझमें दिन-दिन शक्ति आती जा रही है। वहाँ आनेके लिए मैं अधीर हो रहा हूँ, लेकिन लगता है, कोहाट जानेसे पहले न आ सकूँगा।

मोहनदासके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ६०९७) से।
सौजन्य : गंगाबहन वैद्य

१८९. एन्ड्रयूजके साथ बातचीत

दिल्ली

[बुधवार, १५ अक्तूबर, १९२४][1]

सुबह भागवतका पाठ हो जानेके बाद श्री एन्ड्रयूजको बुलाया गया। . . . एन्ड्रयूज एक भजन गुनगुनाते आये और . . . ऊपर आकर बापूजीसे बोले: आज मैं आपको ऐसा भजन सुनाना चाहता हूँ जो आपने कभी न सुना होगा। बाइबिलमें एक फौजी अधिकारी ईसा-मसीहको अपने घरके एक बीमार आदमीको नीरोग करनेकी प्रार्थना करता है। ईसा-मसीह उसके घर जानेको कहते हैं। वह जवाब देता है — मैं बड़ा अधम हूँ, मैं उसके लायक नहीं हूँ। आप सिर्फ अपने श्री-मुखसे इतना कह दीजिए कि वह अच्छा हो जायेगा और वह जरूर नीरोग हो जायेगा। यह प्रसग है।

इतनी प्रस्तावनाके बाद उन्होंने अपना भजन गाया। उसका भाव तुलसीदास-जीके —

मम हृदय-भवन प्रभु तोरा।
तहँ आय बसे बहु चोरा॥
कह तुलसिदास सुनु रामा।
लूटहिं तस्कर तव धामा॥
चिन्ता यह मोहिं अपारा।
अपजस नहिं होइ तुम्हारा॥

इस भजनसे बहुत मिलता-जुलता था। उसकी कुछ कड़ियाँ सुनिए —[2]

आपके प्रिय भजनोंसे यह कितना मिलता है!' कहकर एन्ड्रयूज रुके। बापूजीने कहा —

मैंने इसे सुना है। मैंने यह १८९३ मे सुना था। तब मैं दक्षिण आफ्रिकामें[3] ईसाइयोके अनेक सम्प्रदायोके लोगोसे मिलता था। हर रविवारको उनके गिरजामे जाकर प्रार्थनामे शरीक होता था। उस समय इसे सुना याद पडता है।

फिर वे उन ईसाई मित्रोके संस्मरण सुनाने लगे। फिर बोले:

पर आपको जो ऊपर बुलाया था वह दूसरे ही कामसे। मैं चाहता हूँ कि काग्रेसका सदस्य होनेके लिए कताईकी शर्तके बारेमे आप मेरे सब विचार सुन ले।

१. साधन-सूत्रमें दी गई लेखन-तिथिके अनुसार।
२. अंग्रेजी भजनकी ये पक्तियाँ यहाँ नही दी जा रही हैं।
३ देखिए 'आत्मकथा', भाग २, अध्याय ११ ।

कल 'यंग इंडिया' में मेरा लेख[1] आपको अच्छा नहीं लगा। पर मैं कहता हूँ कि मेरी दलील लाजवाब है। आपको वह ठीक नहीं दिखाई देती, क्योंकि आप इस बातको भूल जाते हैं कि उसके अन्तमें मैंने लिखा है कि यह दलील उन लोगोंके लिए है जो देशके लिए ऐच्छिक कातना आवश्यक समझते हों। उन्हें तो कांग्रेसके सदस्योंके लिए आवश्यक २,००० गज सूत कातनेकी शर्त जरूर माननी चाहिए। यदि कोई व्यक्ति यह कहता है कि मैं अपनी मरजीसे कातूंगा तो उसे कातनेकी शर्तपर सदस्य बनानेवाले मण्डलका सभासद बननेमें कोई झिझक न होनी चाहिए। इसीसे मैंने यह कहा है कि जो देश सैनिक-शिक्षाको अत्यन्त महत्त्वकी बात मानता है — जैसे कि फ्रांस — वह सैनिक-शिक्षाको अपनी राष्ट्रीय सभाके सभासद होनेकी शर्तके तौरपर रख सकता है। यदि भारतवर्षमें कताईकी शक्ति, उपयोगिता और आवश्यकता मानी जाती हो तो फिर कताईको सभासद होनेकी शर्त मान लेना चाहिए।

आपकी दलील बहुत कमजोर है। आपका फ्रांसकी सैनिक-शिक्षासे तुलना करना मुझे भयानक मालूम होता है। मैं तो फौजमें भरती होनेके बदले जेलमें जाना पसन्द करूँगा — जिस तरह रसेल गया था और जिस तरह कि रोलाँने देश छोड़ दिया था।

हाँ, मैं भी जाना पसन्द करूँगा। पर इससे क्या? जिसके दिलमें यह बात खटकती हो वह जरूर उसका विरोध करे और जोखिम उठाये। परन्तु यदि आम तौरपर सारा देश सैनिक-शिक्षा शुरू करनेका कायल हो तो फिर उसके लिए कानून बना देनेमें क्या बाधा हो सकती है?

नहीं, आपकी यह कमजोर उपमा मुझे ठीक नहीं मालूम होती। इससे अधिक अच्छी उपमा लेनी चाहिए थी। अमेरिकाके मद्यपान-निषेधकी उपमा आप ले सकते थे। अमेरिकामें जब ८० फीसदी लोगोंने शराब छोड़नेकी तैयारी दिखाई तभी कानून बनाया जा सका। आप भी एक अखिल भारतीय कताई-मण्डल खोलिए और जब ८० फी सदी लोग कातने लग जायें तब अपनी शर्त रखिए। आज तो आप घोड़ेके पीछे गाड़ी रखनेके बदले गाड़ीके पीछे घोड़ा रखते हैं।

नहीं, मैं तो बिलकुल न्यायकी बात करता हूँ। किसी मण्डलको अपने सभासदोंसे किसी बातके करानेका हक है या नहीं? भले यह शर्त किसीको न पटती हो किन्तु इसलिए यह कहना तो ठीक नहीं है कि इस शर्तके रखे जानेका हक ही नहीं है।

अमेरिकामें कानून होनेके पहले सबको शराब पीनेका हक था। आज भी कानून-को रद करके शराब मँगानेका हक उन्हें है। मेरा सवाल यह है कि कांग्रेसमें लोक-मतका प्रतिबिम्ब पड़ता है या मुट्ठी-भर लोगोंका ही मत व्यक्त होता है? कांग्रेस एक महामण्डल रहेगी या एक छोटी-सी समिति बन जायेगी?

१. देखिए "कताई सदस्यता", १६-१०-१९२४। ऐसा जान पड़ता है कि गांधीजीने यंग इंडिया में प्रकाशित होनेसे पूर्व यह लेख श्री एन्ड्रयूजको दिखाया था।

महामण्डल ही रहेगी। आप मेरे अनुभवको गलत कर सकते है, पर यदि एक बार आप इस वातको स्वीकार कर ले कि काग्रेसको अपने सदस्योपर पावन्दी लगानेका अधिकार है तो फिर मै सव वाते सावित कर दूंगा।

आप काग्रेसको एक टोली न बना दें, उसे तो राष्ट्रकी एक स्वेच्छा नियोजित सस्था ही बनाये रखना चाहिए।

आपको काग्रेसकी ठीक-ठीक कल्पना नही है। आज तो वह एक अनिश्चित, अव्यवस्थित मण्डल है। उसके सविधानसे अधिक वाते उसमें आ जाती है। यदि काग्रेस राष्ट्रकी सच्ची प्रतिनिधि सस्था बनना चाहती हो तो उसका सविधान अधिक जीवनदायी, अधिक सच्चा और राष्ट्रकी आवश्यकताका अधिक द्योतक होना चाहिए। सख्याकी कुछ जरूरत नही। मैने तो जब चार आना फीस रखवाई तब ऐसी आशा रखी थी कि काग्रेस एक विशाल सस्था बनेगी, लेकिन उसके अनुसार काम करनेवाले कार्यकर्त्ता न निकले। आज हमारा देश आलसियो और प्रमादियोका देश हो गया है। यह मै उन मूक गरीबोकी बात नही कर रहा हूँ, जिन्हे गुलामीने कुचल दिया है, बल्कि समझदार और ज्यादा वोलनेवालोपर मै यह कथन घटाना चाहता हूँ। इन सबको मै दूसरे किस उपायसे राष्ट्र-कार्यमें लगा सकता हूँ? दूसरे किस तरीकेसे काग्रेस एक कार्य-परायण सस्था हो सकती है? २,००० गज कातनेकी फीस रखनेके प्रस्तावसे मुझे आशा है कि यह चीज बन सकेगी। एक कहेगा 'मै कुल्हाडी लेकर काटूंगा' दूसरा कहेगा 'मै कपडा सीऊँगा' और तीसरा कोई और बात कहेगा तो इसका परिणाम कुछ न निकलेगा। मै सबको एक चीजपर एकाग्र करके कुछ नतीजा निकालना चाहता हूँ।

मुझे डर है कि आप सूत कातने और खादी पहननेको एक नया धर्म बना देंगे। अमुक महाशय खादी पहनते है या विलायती कपडा, इससे मेरा क्या वास्ता? मुझे तो इस बातसे काम है कि वह आदमी कैसा है। ईसामसीहने भी कहा है कि मनुष्यका बाहरी आचार नहीं, हृदय देखो।

ईसाई और हिन्दू आदर्शमे भेद है।

आप तो यह भी कहेंगे कि अमुक प्रकारका भोजन करो तो आध्यात्मिकता बढेगी। मै ऐसा बिलकुल नहीं समझता। डरहमके बिशप वेस्टकोट जैसे सज्जनको लीजिए। उन्होंने तो शराब भी पी है और मांस भी खाया है। पर क्या वे आध्यात्मिक नहीं थे?

आप एक उदाहरणसे सामान्य नियम सावित करना चाहते है। यह नही हो सकता। आप सर्व-साधारणसे यह नही कह सकते कि जो चाहे सो खाओ, मन आये सो पियो और यह मानते रहो कि हमारा हृदय पवित्र है।

मै फिर अपनी मूल आपत्तिपर आता हूँ। कानून बनानेके पहले अमेरिकामें जितने उपाय किये गये उतने यहाँ किये जा रहे है?

मै तो रोज उपाय किया ही करता हूँ। आजकी स्थिति चार वर्षके प्रयत्नका फल है। आप यदि कांग्रेसके प्रस्तावोको देखेगे तो पता चलेगा कि मै जो प्रस्ताव करना चाहता हूँ वह कातनेकी आवश्यकताकी मूल स्वीकृतिका परिणाम है।

जब आप जेलमें गये तब भी वह तो स्वीकृत ही था?

जब मै जेल गया तब मूल प्रस्ताव रद नही हो गया था।

जबतक आप अमेरिकाके तरीकोसे काम न लेगे, तबतक आपका प्रयोग सफल नहीं हो सकता।

अमेरिकाकी हालत यहाँसे भिन्न है। वहाँ तो पहलेसे ही शराबखोरी प्रचलित थी। उन्हे यह समझानेकी जरूरत थी कि शराब न पीओ। वहाँ उन्हे ऐसा काम करना था जो वहाँ तबतक हुआ ही नही था। यहाँ तो सिर्फ इतनी ही बात है कि लोग उस बातको करे जिसे उन्होने बहुत अर्सेतक किया है और जिसे वे कुछ सालोसे भूल गये है। और दूसरी बात यह है कि यहाँ तो ---

नेहाभिक्रमनाशोऽस्ति प्रत्यवायो न विद्यते।
स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात्।।

नाश क्यों नहीं? --- है। हम सबकी शक्तियाँ भिन्न-भिन्न प्रकारकी हैं। हो सकता है कि हमें इतना जरूरी काम हो कि आधा घंटा न निकाल सके। मै इन महादेवको ही देखता हूँ। ये आधी रातको सूत कातते हैं अथवा मुहम्मद अली-जैसे भी जब आधी रातको चरखा कातते है तब मेरे मनमें आता है कि इसके क्या मानी हैं?

इन लोगोको यदि ऐसे बेवक्त कातना पडता है तो यह उनकी व्यवस्था और समय-प्रबन्धकी खामीको सूचित करता है, और कुछ नही।

आधे घंटेकी बात तो एक ओर रही। जबसे आपने सूतपर एकाग्रता शुरू की है तबसे दूसरी तमाम बातें भुला दी गई है। इस खादीके ही काममें इतनी सारी शक्ति खर्च हो जाती है कि नशीली चीजों और शराबके निषेधको तो सब भूल ही गये है।

मैने तो एक ऐसा ऐक्य-पोषक कार्यक्रम बनाया है जो सबकी समझमे आ जाये। इसमे दूसरे उपयोगी कार्योका निषेध नही है। शराबकी दुकानपर पहरा रखनेकी बात तो सिर्फ हिंसा-काण्ड होनेके डरसे ही छोड देनी पडी है, खादीके कामके कारण नही, और दूसरी बात यह कि खादीपर जोर देना जितना जरूरी है उतना दूसरे कामो-पर नही। इसका कारण यह है कि सब लोग इस बातको मानते है शराब न पीनी चाहिए। इसके लिए लोगोको नया पाठ पढानेकी आवश्यकता नही है। स्वराज्य होनेपर भी कितने ही शराब पीनेवाले तो होगे ही। उनका सवाल तो स्वराज्य प्राप्त होनेके बाद हाथमे लेना होगा।

क्या अफीम छोड़ देनेके लिए भारी आन्दोलन खड़ा करनेकी जरूरत नहीं है? क्या देश इसके महत्त्वको समझ गया है?

हाँ, मैं मानता हूँ कि समझ गया है।

मिलोंमें काम करनेवाली स्त्रियाँ अपने बच्चोंको अफीम खिलाती हैं। आप इस वातको जानते हैं?

हाँ, पर इससे यह न कहिए कि अफीमके दुर्व्यसनकी जड जम गई है और देश उसे बढने दे रहा है, और बच्चोको अफीम न खिलानेके प्रस्तावमे तो मिलोमे काम करनेवालोमे शिक्षा-प्रचार करनेका सवाल है, दवा-दारूका सवाल है, स्त्रियोको मिलोमे कितने समयतक काम करने देना चाहिए — यह सवाल है।

मुझे तो यही चीज वहुत खटकती है कि जब आपने अस्पृश्यता, हिन्दू-मुस्लिम एकता और खादीका त्रिविध कार्यक्रम रचा तब आप मद्य-निषेधको भूल ही गये।

ना, भूल नही गया। वात यह है कि देशको इस विषयमे नये सिरेसे कुछ वताना वाकी नही है।

अजी, लोग अफीम-निषेध-सम्वन्धी साहित्यमें दिलचस्पी ले और लेते रहे, वह भी असम्भव हो गया है।

सो तो यदि आप और मै दक्षिण और पूर्व आफ्रिकाके सम्वन्धमे लिखना वन्द कर देंगे तो लोग उनमे भी दिलचस्पी लेना छोड देंगे। यहाँ तो वडे वेढव लोगोको समझाना है। पर आप इस वातको भूलते है कि मद्य-निषेधका काम आज भी हो रहा है। जहाँ-जहाँ खादीकी जड जमी है, वहाँ-वहाँ उसके साथ यह शुद्धि-कार्य भी शुरु हो गया है। वोरसद, रामेसरा, वारडोलीमे जाकर यदि आप देखेंगे तो आपको इसका पता लगेगा कि वहाँ क्या-क्या हो रहा है। खादी केन्द्रके आसपास शराव-वन्दी तथा दूसरे तमाम आत्म-शुद्धिके कार्य भी हो रहे है।

पर यह बात मुझे नहीं जँचती कि आप खादी पहनने या सूत कातनेको एक धर्म-कार्य बना दें। लोग खादी न पहननेवाले और न कातनेवाले लोगोका बहिष्कार करेंगे।

हाँ, धर्म-कार्य तो यह अवश्य रहेगा। क्या आपको ऐसा लगता है कि हरएक भारतवासी यदि इसे धर्म-कार्य न वनाये तो वह देशका कोई दूसरा काम करेगा? पर इसका यह मतलव नही कि खादी न पहननेवालोका वहिष्कार किया जाये। हम खादी न पहननेवालेके गले मिले, उसके साथ प्रेम करे और प्रेम-पूर्वक यदि उसे समझा सके तो खादी पहननेके लिए समझाये — निन्दा करके हरगिज नही। मै तो यह आशा रखता हूँ कि न पहननेवालेका वहिष्कार या उसपर अत्याचार न होगा। ऐसे अत्याचार न हो इसीलिए तो मैने २१ दिनतक उपवास किया। अव भी लोग न समझेंगे? किसी भी काममे यदि वहिष्कारकी जरूरत पडे तो वह सिर्फ एक ही किस्मका हो सकता है — उसके जरिये किसी तरहकी सेवा न ले या कोई लाभ न उठाये। मै चाहूँगा कि शरावीका ऐसा वहिष्कार किया जाये। पर खादी न पहननेवाले या न कातनेवालेके साथ हरगिज नही। क्योकि शराव पीना जिस तरहका पाप है, विलायती कपडे पहनना वैसा नही।

आपके इस कथनसे मेरे दिलको वडी शान्ति मिली। आपके इस स्पष्टीकरणसे मुझे बड़ा सन्तोष हुआ। पर खादीको नैतिक योग्यताकी कसौटी बना देना मुझे अच्छा

नहीं लगता। एक मित्र मुझे लिखते है कि मैने खादी पहनना छोड़ दिया है, क्योंकि वह भले आदमी कहलानेका एक सस्ता साधन हो गया है।

यह उस मित्रकी भूल है। कोई यदि पाखण्ड करे तो क्या इससे मैं उस बातको करना छोड़ दूँ जो मुझे अच्छी लगती है। यह ऐसी बात हुई कि यदि कोई सत्यका ढोंग करे तो मैं झूठ बोलने लगूँ।

पर क्या आप खादीकी परिभाषामें से 'शुद्ध' और 'अशुद्ध' ये शब्द नहीं निकाल सकते?

कपडेको जरूर 'शुद्ध' 'अशुद्ध' कहूँगा। भारतवासीके शरीरपर विदेशी कपडा 'अशुद्ध' होगा। यदि वह विलायतमे हो तो वहाँ 'अशुद्ध' न मानूँगा। परन्तु अशुद्ध कपडेसे मनुष्य अशुद्ध नही हो सकता। उसी प्रकार शुद्ध कपड़ेसे अशुद्ध जीवन शुद्ध नही माना जा सकता। शुद्ध कपडेसे — खादीसे जो आर्थिक लाभ है वह तो जरूर होगा। इसीसे वेश्या भी शुद्ध खादी पहन सकती है और उस हदतक देशमे आनेवाला विदेशी कपडा रोक सकती है।

आप विदेशी कपड़ेको जो अशुद्ध कहते हैं, यह मेरी समझमें नही आता।

सो मैं जानता हूँ। हमारा यह मतभेद भले ही बना रहे। दिल्लीके मैदानकी हवा इकट्ठी करके शिमलामें रहनेवालोके लिए भेजे तो वह उनके लिए अशुद्ध होगी। विदेशी वस्त्र इस अर्थमे और इसी तरह अशुद्ध है।

पर यह मेरी समझमें नहीं आता। बाकी दूसरी बहुत-सी चीजोंके आपके स्पष्टीकरणसे मै बड़ा प्रसन्न हुआ।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १९-१०-१९२४

१९०. गंगाबहन वैद्यके लिए पुस्तकोंके सम्बन्धमें टिप्पणी[1]

[१५ अक्तूबर, १९२४ के पश्चात्]

पूज्य गगाबहनके लिए
तुलसीदासकी 'रामायण'
'योगवाशिष्ठ' का वैराग्य प्रकरण
'भागवत' का एकादश स्कध
'मणिरत्नमाला'
जयकृष्ण व्यास-कृत 'पचीकरण'
'रायचन्द भाईना लेखो'

१. १५ अक्तूबरके पत्रमें गाधीजीने गगाबहनसे पूछा कि उनका "अभ्यास कहाँतक पहुँचा है?" ऐसा अनुमान है कि उन्होंने यह पत्र आने पत्रका उत्तर मिलनेके बाद लिखा होगा।

('गीताजी' का गहरा अध्ययन)
'कठवल्ली उपनिषद्'
'पातजल योगसूत्र'

'मणिरत्नमाला' वहुत करके आश्रममे ही है। यह तुलसीदासकी [रचनाओका सग्रह] है और उसीका गुजराती अनुवाद है। है तो छोटी-सी, परन्तु वहुत अच्छी है। वम्वईमें तो मिलती ही है। यहाँ उसको ढूंढना, न मिले तो देवदाससे कहना। वह वम्वईसे लेकर भेज देगा।

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ६०९७ ए०) से।
सौजन्य गगावहन वैद्य

१९१. कताई सदस्यता

कताईको काग्रेसकी सदस्यताकी शर्त बनानेके मेरे प्रस्तावके बारेमे जो आपत्ति सुननेमे आई है, उसका साराश यह है "त्यागकी भावनासे स्वेच्छापूर्वक कताई करना तो वहुत ठीक, परन्तु उसे सदस्यताकी शर्त वनाना सतापकारी है।" मुझे कहना पडता है कि इस आपत्तिको सुनकर मै दग रह जाता हूँ, क्योकि आलोचकोका आक्षेप कताईपर नही, बल्कि इस वातपर है कि वह एक प्रतिबन्ध है, वधनरूप है। पर ऐसा क्यो होना चाहिए? यदि पैसेको इसकी शर्त बनाया जा सकता है अर्थात् धन-का प्रतिवन्ध लगाया जा सकता है तो फिर कामको इसकी शर्त क्यो नही बनाया जा सकता? क्या स्वय कुछ शारीरिक श्रम करनेकी वनिस्वत पैसे दे देना ज्यादा सम्माननीय है? क्या किसी मद्यपान-निषेधक सस्थामे हरएक सदस्यके लिए मद्य-त्याग-का विलकुल अनिवार्य होना सतापकारी है? क्या किसी जहाजरानी सस्थामे हरएक सदस्यसे जहाजरानीकी कुछ योग्यता रखनेकी अपेक्षा करना सतापकारी है? या उदा-हरणके लिए, फ्रासमे जहाँ युद्ध-कौशल राष्ट्रीय अस्तित्वके लिए आवश्यक समझा जाता है, हरएक सदस्यके लिए शस्त्र-विद्याका ज्ञान लाजिमी होना सतापकारी वात है? यदि इन तमाम उदाहरणोमे पूर्वोक्त कसौटियोको रखना सतापकारी नही है तो फिर भारत-की इस राष्ट्रीय सस्थामें कताई और खादीके पहनावेको, जो एक राष्ट्रीय आवश्यकता है, मताधिकारकी पात्रता या दूसरे शब्दोमे सदस्यताकी शर्त रखना क्योकर सतापकारी हो सकता है? क्या यह कताई और खादीके व्यापक प्रचारका और लोगोको इसका महत्त्व समझानेका सबसे आसान तरीका नही है? हाँ, यह वात सच है कि मेरी दलील सिर्फ उन लोगोके लिए है जो इस वातको परम आवश्यक मानते हैं कि जहाँतक वस्त्रोका सम्वन्व है, भारतको स्वावलम्बी होना चाहिए और सो भी मुख्यत. चरखे और हाथ-करघेके द्वारा।

[अग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १६-१०-१९२४

१९२. इलाहाबाद और जबलपुर

मेरे उपवास और एकता-सम्मेलनके बावजूद इलाहाबाद और जबलपुरमे दगे हुए है। यह खयाल तो किसीने भी न किया था कि सम्मेलन अथवा उपवासके फलस्वरूप दगा वगैरह होना ऐसे बन्द हो जायेगा, मानो कोई जादू हो गया हो। पर मैं इतनी आशा जरूर करता हूँ कि पत्रकार ऐसे दगोके बारेमे लिखते समय सयमसे काम लेगे और पक्षपात-पूर्वग्रह छोड देगे। मैं यह भी आशा करता हूँ कि दोनो जातियोके और तमाम दलोके अगुआ उनके असली कारणोको खोज निकालनेमे, उनका उपाय करने और सर्वसाधारणके सामने सही ब्यौरा प्रकाशित करनेमे सहयोग देगे।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १६-१०-१९२४

१९३. गुरुकुल काँगड़ी

बाढने तो इस साल चारो ओर ध्वस-लीला मचा दी है। गुरुकुल भी, जो स्वामी श्रद्धानन्दजीके धैर्य और आत्म-त्यागपूर्ण प्रयत्नोका कीर्ति-चिह्न है, गगाकी बाढका शिकार होनेसे नही बचा। उनके प्रति, उस महान् सस्थाके व्यवस्थापको और विद्यार्थियोके प्रति मैं हार्दिक सहानुभूति व्यक्त करता हूँ। मुझे आशा है कि चन्देके लिए की गई अपील पर लोग तुरन्त कार्रवाई करेगे।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १६-१०-१९२४

१९४. पत्र : वाइसरायके निजी सचिवको

रोशनआरा रोड
दिल्ली
१६ अक्तूबर, [१९२४]

प्रिय महोदय,

यदि मुझे अनुमति दे दी गई तो मैं शरीरमे पर्याप्त शक्ति आते ही अपने कुछ मुसलमान और हिन्दू मित्रोके साथ कोहाट जाना चाहता हूँ। मैं कोहाट इसलिए जाना चाहता हूँ कि वहाँके निवासियोसे हिन्दुओ और मुसलमानोके झगडोके कारणोका पता लगा सकूँ और यदि सम्भव हो तो मित्रोकी सहायतासे दोनो जातियोमे मेलजोल करा सकूँ। यदि आप मुझे यथासम्भव शीघ्र यह बता दे कि वाइसराय महोदय मुझे

और मेरे मित्रोंको ऊपर बताये गये उद्देश्यसे कोहाट जानेकी अनुमति देंगे या नहीं तो मैं आपका कृतज्ञ होऊँगा।

भवदीय,

मो० क० गांधी

अंग्रेजी पत्र (एस० एन० १५९१२) की फोटो-नकलसे तथा यंग इंडिया, ३१-१०-१९२४ से भी।

१९५. ख्वाजा हसन निजामीके साथ बातचीत

[१६ अक्तूबर, १९२४ के आसपास][1]

तब गांधीजी बोले:

मुझे कहना चाहिए कि आपका यह लेख मैंने भी पढ़ा है और मुझे भी वह ठीक नहीं लगा। इसका कारण है। आपने आलोचना की सो तो भले की, लेकिन आपने तो पूरे [एकता-] सम्मेलनका ही मजाक उड़ाया है। आलोचना जिस वृत्तिसे करनी चाहिए, उस वृत्तिसे आपने नहीं की। इसमें कुछ ऐसा भाव झलकता है, जैसे आपको एकता ही पसन्द न हो और यह सम्मेलन हुआ, यह बात ही न रुची हो। आलोचना करनेमें कोई बुराई नहीं है — जरूर करें। पर इतना तो हमें स्वीकार करना ही चाहिए कि जो लोग वहाँ इकट्ठे हुए थे, वे कोई शुभ कार्य करनेके लिए ही एकत्र हुए थे और उन्होंने उसे करनेका सच्चा प्रयत्न भी किया। लेकिन, आपने तो केवल हँसी-मजाकका ढँग अपनाया और सो भी कैसे अखबारमें? 'मुबल्लिग' में — जिसके पृष्ठ अभी भी जहरसे भरे होते हैं, जिसका ढंग अभीतक नहीं बदला है। क्या आप किसी दूसरे अखबारमें नहीं लिख सकते थे? आप 'यंग इंडिया' में लिख सकते थे? आप सम्मेलनके शुभ उद्देश्यको तो स्वीकार करते। लेकिन आपने यह लेख ऐसे अखबारको दे दिया जो जहरीली और विरोधी बातें ही लिखता है। इससे किसी-किसीके मनमें ऐसा खयाल आ सकता है कि ख्वाजा साहब कहीं एकताके भी तो विरोधी नहीं हैं।

आप अब्दुल कादर जिलानीकी ही बात कर रहे हैं न?[2] जेलमें मैंने भी इनका किस्सा पढ़ा था। जब वे बच्चे थे, तब एक बार उनके सफरपर जाते समय उनकी माँने उन्हें कुछ अशर्फियाँ दी थीं। वे बालक थे, इसलिए उन्होंने अशर्फियाँ उनके कुरतेमें ही सीकर रख दी थीं। साथ ही उन्हें एक सीख भी दी थी कि

१ महादेव देसाईकी रिपोर्टके अनुसार यह बातचीत गांधीजीका उपवास शुरू होनेके बाद पाँचवें सप्ताहमें हुई थी।

२ बातचीतके दौरान ख्वाजा हसन निजामीने बताया था कि हजरत गौस या अब्दुल कादर जिलानीने नेक पड़ोसीका व्यवहार करके किस प्रकार एक उद्दण्ड पड़ोसीको मुसलमान बना लिया था।

चाहे जो हो, जमीन-आसमान फट पडे, पर सच ही बोलना, कभी झूठ न बोलना, रास्तेमे लुटेरे मिले। वे अब्दुल कादरके साथके काफलेके एक-एक आदमीको लूटने लगे। अब्दुल कादरकी बारी आई तो उनसे पूछा कि तेरे पास क्या है। उन्होने कुरतेमें सी हुई अशरफी बताई। डाकू चकित रह गये और उन्होने न केवल उनको छोड दिया, बल्कि उनकी सचाईका यह असर हुआ कि उन्होने दूसरोकी लूटी हुई सारी चीजे भी वापस कर दी।

ऐसी मिसाले तो इस्लाममें भरी पडी है ही, पर आप [धर्मान्तिरणकी दृष्टिसे] इन्हे हिन्दुओके सामने पेश करे, यह ठीक नही है। क्या अकेले इस्लाममे ही ऐसी मिसाले मिलती है? हिन्दू-धर्ममे भी ऐसी मिसाले कदम-कदमपर मिलती है। परन्तु जिस प्रकार ऐसी मिसालोके कारण किसीको अपना धर्म छोडकर हिन्दू बननेकी जरूरत नही है, उसी प्रकार अब्दुल कादरकी जैसी मिसालोको देखकर भी किसीको इस्लाम स्वीकार करनेकी जरूरत नही है। इस्लाममे अब्दुल कादर-जैसे बहुत-से लोग हो और उन्हे देखकर सारा हिन्दुस्तान मुसलमान हो जाये तो उसकी मुझे जरा चिन्ता नही, परन्तु जिस प्रकार हिन्दुओमे अच्छे और बुरे दोनो तरहके लोग हो गये है उसी प्रकार इस्लाममें अच्छे लोग है तो बुरे लोग भी है। मै नही चाहता कि आप अब्दुल कादरकी मिसाल इस्लाम कबूल करानेके लिए पेश करे। आप हिन्दुओसे दूसरी बहुत-सी बात भी तो कह सकते है, फिर ढेढ और भगियोसे मुसलमान बन जानेको ही क्यो कहते है? आप हिन्दुओसे कह सकते है आपके बीच तो बडे-बडे उदार-चरित्र व्यक्ति हो गये है, आप तो प्राणि-मात्रमे अभेद-भाव मानते है, फिर आप किसी मनुष्यको अस्पृश्य किस तरह मान सकते है? इन्सानको अछूत बनाये रखनेमे आपको शर्म नही आती? इस प्रकार आप हिन्दू-धर्मकी सेवा कर सकते है। मै अब्दुल कादर साहबकी मिसाल पेश करके मुसलमानोसे कह सकता हूँ कि ऐसे सत्य-प्रेमी, अमन-पसन्द, दुश्मनको भी माफ करनेवाले, साधु पुरुष आपके मजहबमे पडे हुए है। ऐसा कोई काम आप कैसे कर सकते हैं जिससे उनके नामको बट्टा लगे? यह कहकर मै इस्लामकी सेवा करूँगा। फिर, यदि हम अपने धर्मको इतना स्वच्छ कर ले जिससे कि दूसरोको खुद ही उसमे आनेकी इच्छा हो तो उन्हे कौन रोक सकता है?

पर किसीकी गरीबीसे फायदा उठाकर यदि कोई किसीसे कहे कि ले भाई, मै तुझे इतना रुपया दूंगा, तेरा कर्ज उतार दूंगा, तेरे धर्मवाले तुझे परेशान करते है, आ तू हमारे मजहबमें आ जा तो यह बुरी बात है। ऐसी हालतमें वह इस्लाममे अपनी इच्छासे नही आता है, बल्कि पैसेके लालचसे आता है। मुहम्मद साहबके पास जो लोग आते थे, उन्हे क्या बढिया-बढिया खाना मिलता था? खजूर और पानी और अगर वह भी न मिले तो फाका! फिर भी उनके व्यक्तित्वसे आकर्षित होकर, उनकी रूहानी ताकतसे प्रेरित होकर बहुतेरे लोग उनके पास जाते थे और इस्लाम कबूल करते थे। यदि फिर कोई मुहम्मद साहब पैदा हो और उनके प्रभावसे सारा ससार मुसलमान हो जाये तो मै उसकी तनिक भी चिन्ता न करूँगा।

मै जो इतना कह रहा हूँ वह इसीलिए कि मै इस्लामकी खूबियाँ समझता हूँ। मै नही मानता कि इस्लामका प्रचार तलवारके बलपर हुआ है। इस्लामका

प्रचार तो फकीरोके द्वारा हुआ है। इस्लामका प्रचार हुआ है सचाई, फकीरी और बहादुरीके जरिये। यह बात तो सब लोग कबूल करेंगे कि इस्लामका बचाव तलवारसे हुआ है, पर उसके प्रचारका श्रेय तो फकीर लोग ही ले सकते हैं। इसीसे मैं कहता हूँ कि जबरदस्तीसे या लालच देकर अथवा ऐसे ही दूसरे तरीकोसे इस्लामका प्रचार करना इस्लामकी सेवा करना नही, बल्कि उसकी हानि करना है। यह भी मैं इसीलिए कहता हूँ कि मैं इस्लामको चाहता हूँ।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २६-१०-१९२४

१९६. तार: मोतीलाल नेहरूको

[१७ अक्तूबर, १९२४ या उसके पश्चात्][1]

नागपुरके मुसलमानोका तार आया है कि आप, दास या जवाहर नागपुर जायें और डा० महमूदके साथ मिलकर पच-फैसला दें। वे उसको अन्तिम निर्णय मान लेंगे। क्या आप अभी नागपुर जा सकते हैं? यदि यह असम्भव हो तो इसे जवाहरलालको दिखायें। उसे भेजें।

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १०४८९) की माइक्रोफिल्मसे।

१९७. तार: शाहजी अहमद अलीको

[१७ अक्तूबर, १९२४ या उसके पश्चात्]

मोतीलालजीको तार दिया कि स्वयं जायें या जवाहर को भेजें। दास शिमलामें स्वास्थ्य-लाभ कर रहे हैं।

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १०४८९) की माइक्रोफिल्मसे।

१. इसमें उल्लिखित तार नागपुरके मुसलमानोंकी ओरसे खिलाफत-समिति, नागपुरके शाहजी अहमद अलीने १७ अक्तूबर, १९२४को भेजा था। यह तिथि उसीके आधारपर निश्चित की गई है।

१९८. तार : डा० बी० एस० मुंजेको

[१७ अक्तूबर, १९२४ या उसके पश्चात्]

डा० मुंजे

नागपुरके मुसलमानोंका तार आया है। वे मोतीलाल, जवाहरलाल या दास [में से किसी एक] और डा० महमूदके पंच-फैसलेको मान लेंगे। मुझे भरोसा है कि हिन्दू लोग भी सहमत होंगे। दास स्वास्थ्य-लाभ कर रहे हैं इसलिए मोतीलाल या जवाहरलालसे नागपुर जानेके लिए कहा है।

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १०४८९) की माइक्रोफिल्मसे।

१९९. पत्र : एनी बेसेंटको

दिल्ली
१८ अक्तूबर, १९२४

प्रिय डा० बेसेंट,

डा० अन्सारीने कागजोंके साथ आपका पत्र मुझे आज दिया। आप संयोजकके रूपमें मेरा नाम लिख सकती हैं। स्थानके बारेमें मेरी अपनी कोई पसन्द नहीं है। यदि आयोजन नवम्बरके तीसरे सप्ताहमें रखा जाये तो मैं शामिल होनेका पूरा प्रयत्न करूँ। मेरा खयाल है, फिलहाल मन्त्री आपको ही होना चाहिए।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य . नारायण देसाई

२००. तार: मोतीलाल नेहरूको[1]

[१९ अक्तूबर, १९२४ या उसके पश्चात्]

तार के लिए धन्यवाद। जवाहरलालका समाचार सुनकर दुख हुआ। कृपया मेरी ओरसे अनुरोध करें, अपने स्वास्थ्यका खयाल रखें।

अंग्रेजी प्रति (एन० एन० १०४८९) की माइक्रोफिल्मसे।

२०१. तार: चित्तरंजन दासको[2]

[१९ अक्तूबर, १९२४ या उसके पश्चात्]

खुशी हुई कि आप अच्छे हो रहे हैं। तिथि बढ़ानेकी बात सहर्ष स्वीकार करता हूँ।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एम० एन० १०४८९) की माइक्रोफिल्मसे।

२०२. एक रास्ता

आश्विन वदी ७, १९८० [२० अक्तूबर, १९२४]

शिक्षा-परिषद्में इस आशयका एक प्रस्ताव पास हुआ था कि विद्यापीठको प्राथमिक शिक्षाको प्रमुख स्थान देना चाहिए। मेरा इरादा इस प्रस्तावके विषयमें विद्यापीठको कुछ व्यावहारिक सुझाव देनेका था, लेकिन युग बीत गया और मैं दूसरे कामोंमें व्यस्त रहनेके कारण वैसा कर नहीं सका। फिर भी, प्राथमिक शिक्षाकी बात मैं भूल नहीं सकता था।

लेकिन विद्यापीठके सामने कुछ व्यावहारिक सुझाव पेश करनेसे पहले मैं शिक्षाके विषयमें शिक्षकोंके समक्ष कुछ विचार रखना चाहता हूँ। बहुत वर्षोंसे मैं ऐसा

१. यह मोतीलाल नेहरूके १८ तारीखके तारके उत्तरमें भेजा गया था। मोतीलालजीका वह तार जो गांधीजीको १९ तारीखको मिला, इस प्रकार था: "आपका तार; जवाहरको बुखार है। कल रात नागपुरको रवाना हूँगा। सोमवारको दोपहर बाद वहाँ पहुँचूँगा।"

२. यह देशबन्धु दासके १९ अक्तूबरके निम्नलिखित तारके उत्तरमें भेजा गया था: "अभी अच्छा हो रहा हूँ। ३० तक मुझे यहीं रहने दें। मोतीलालको तार दिया है। बैठक ३१ को रखें। कोहाट जानेकी तिथि एक दिन बढ़ा दें।"

अनुभव कर रहा हूँ कि पाठ्यक्रममे हम अक्षरज्ञानपर, जितना चाहिए उससे, ज्यादा जोर देते है और उसके परिणामस्वरूप हम देख रहे है कि पाठ्य-पुस्तकोकी सख्यामे दिन-प्रतिदिन वृद्धि होती जा रही है।

हम इस भ्रममे पडे हुए है कि बालक जबतक ककहरा नही सीख ले, तब-तक उन्हे और कोई ज्ञान दिया ही नही जा सकता। मेरे जानते तो यह शिक्षा-ससारमे व्याप्त सबसे बडा भ्रम है। मेरी दृढ मान्यता है कि इस भ्रममे पडकर हम बालकोके विकासमे बाधा डालते है। मेरी यह मान्यता इस अनुभवपर आधारित है कि बालकोको अक्षरज्ञान मिलनेसे पहले भी उनका मानसिक विकास हो सकता है। इतना ही नही पहले अक्षरज्ञान देनेसे तो बालकोका विकास अवरुद्ध होता है। सात वर्षके बच्चेको ककहरा सीखनेमे रोक रखनेके बजाय अगर शिक्षक उसे मौखिक रूपसे कुछ सिखाये तो उसका कितना अधिक विकास होता है, यह हर शिक्षक एक ही मासके अनुभवसे जान सकता है। शिक्षक बातो ही बातोमे बालकोको इतिहास, भूगोल, विज्ञान आदिकी शिक्षा दे सकते है। 'रामायण' और 'महाभारत' का सार बालक एक ही वर्षमे भली-भाँति सीख सकता है। सामान्यतया तो उनकी जानकारी उसे स्कूलमे चार-पाँच वर्ष पढ चुकनेके बाद ही मिलती है। 'माँ, पानी दो' इतना पढने और समझनेमे बालकका एक वर्ष चला जाये, यह कितनी दयनीय स्थिति है? हम बालकपर अक्षरज्ञानका बोझ डालकर उसकी प्रगतिमे बाधा डालते है, उसे ज्ञानसे वचित रखते है, उसकी स्मरणशक्तिको बढनेसे रोकते है और उसे जल्दीसे-जल्दी ककहरा सिखानेकी धुनमे उसकी लिखावट बिगाड देते है, उसे बचपनसे ही किताबी कीडा बना देते है और अन्तमे यह कि गरीब हिन्दुस्तानपर बेकारकी पुस्तके खरीदनेका निरर्थक बोझ डालते है।

अगर मै शिक्षकोको समझा सकूँ तो प्राथमिक शिक्षाके लिए पाठ्य पुस्तकोको बन्द करवा दूँ या उन्हे रखूँ भी तो सिर्फ शिक्षकोके लिए ही रखूँ। ऐसी पुस्तकोकी रचना अलग पद्धतिसे ही होगी। बालकोको ककहरा सिखानेके बदले चित्र बनाना सिखाऊँ, जिससे वे प्रारम्भसे ही सुन्दर आकृतियाँ खीचना सीख ले। ककहरा सीखते-सीखते भले ही उसे दो-तीन वर्ष लग जाये, किन्तु इन तीन वर्षोमे उन्हे मौखिक रूपसे काफी व्यावहारिक और धार्मिक ज्ञान सिखाया जा सकता है। 'गीताजी' आदिमे से उसे श्लोक रटाकर उसकी स्मरणशक्ति बढाई जा सकती है। इससे उनके कानोको शब्दोको सही-सही सुनने, जीभको सही-सही उच्चारण करने और आँखोको अवलोकनकी शिक्षा मिलेगी। इस तरह बालकोमे अनेक शक्तियोका विकास एक साथ किया जा सकता है। इस बीच एक विशेष कलाके रूपमे उन्हे अक्षर-ज्ञान भी कराया जा सकता है। आजकल तो नौजवानोकी भी लिखावट इतनी खराब होती है कि उसे देखनेसे विरक्ति होती है, पढनेसे मन उकता जाता है। मैने यह वाक्य व्यक्तिगत अनुभवसे लिखा है, क्योकि मेरी लिखावट इतनी खराब है कि मुझे किसीको पत्र लिखते शर्म आती है और अपनी कच्ची और अनगढ लिखावटपर मेरा मन बराबर खिन्न होता रहता है। जिस प्रकार कच्चा अन्न खाया नही जा सकता, उसी प्रकार कच्ची लिखावट लिखनेवाला

आदमी जंगली माना जायेगा। मुझे अकसर ऐसा लगता है कि ऐसे लोगोके लेख पढे जानेका बहिष्कार होना चाहिए।

अगर हम प्राथमिक शिक्षाके सम्बन्धमे यह प्रथम और आवश्यक कदम उठा ले तो बहुत सारे खर्चसे बच जायेगे, इतना ही नही, बल्कि हम बालकोकी आयुमे वृद्धि करेगे, क्योकि इस तरह हम उनके विकासमें वृद्धि करेगे।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, (शिक्षा-अक), खण्ड ६, सख्या ७, २६-१०-१९२४

२०३. सन्देश : ट्रान्सवालके भारतीयोंको[1]

२० अक्तूबर, १९२४

आशा है, ट्रान्सवालके भारतीय और इसी तरह सघके दूसरे भागोके भारतीय भी कष्ट उठाकर दक्षिण आफ्रिकामे अपने सम्मानपूर्ण अस्तित्वके लिए अन्ततक सघर्ष करेगे और कष्ट कितना ही बड़ा क्यो न हो उसकी परवाह नही करेगे।

अग्रेजी प्रति (एस० एन० ९९९६) की माइक्रोफिल्मसे।

२०४. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

२० अक्तूबर, १९२४

परमप्रिय चार्ली,

मैंने आज बडो दादाको लिखा है। आज मुझे हर क्षण तुम्हारी याद आती रही। अहा, कैसा है तुम्हारा प्रेम!

मेरा लेख आज डाकमे डाला जा रहा है। लेख बहुत लम्बा है, इसलिए तारसे नही भेजा जा सकता।

'केयर-टेकर' का लडका आज पहलेसे अच्छा है। सरोजिनी फिर बीमार हो गई है। लीलामणिको अब भी बुखार है। कृष्टोदास बिलकुल स्वस्थ है। बेचारा मणिलाल! उसे जितना जल्दी हो सके, दक्षिण आफ्रिका लौट जाना है। इसलिए बहुत सम्भव है कि वह तुमसे मिले बिना ही रवाना हो जाये। स्वास्थ्यकी तो वह जीती-जागती तसवीर है। कैलनबेक[2] उसके साथ आते-आते रह गये।

हार्दिक स्नेह-सहित,

तुम्हारा,
मोहन

अग्रेजी पत्र (जी० एन० २६१४) की फोटो-नकलसे।

१. गाधीजीने यह सन्देश इस्माइल अहमद नामक अपने एक अनुगामीके पत्रके उत्तरमें भेजा था। श्री अहमद सूरतसे ट्रान्सवाल जा रहे थे।

२. गाधीजीके दक्षिण आफ्रिकाके साथी।

२०५. तार: पीलीभीत कांग्रेस कमेटीके मन्त्रीको[1]

[२० अक्तूबर, १९२४ या उसके पश्चात्]

मामलेका पूरा विवरण भेजें।

गांधी

यह तार मुहम्मद अलीको फोनपर पढ़कर सुना दीजिए। उनसे कहिए कि वे मुसलमानोंको तार दें। इसके बाद मुहम्मद अलीका उत्तर मन्त्रीको तार द्वारा सूचित करें। तारका हमारा उत्तर मुहम्मद अली जो-कुछ कहेंगे, उसपर निर्भर करेगा। क्या आपने मुसलमानोंको तार देनेका सुझाव दिया था?[2]

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १०४९१) की माइक्रोफिल्मसे।

२०६. तार: मोतीलाल नेहरूको[3]

[२० अक्तूबर, १९२४ या उसके पश्चात्]

आप नागपुरमें डा० महमूदके रहते वहाँ जा सकें तो मेरा खयाल है, काम चल जायेगा। तिथि बढ़ानेकी बात मंजूर करते हुए दासको तार दिया।

कृपया पता करें कि तार किसने प्राप्त किया और मुझे क्यों नहीं दिखाया गया।[4]

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १०४२९) की माइक्रोफिल्मसे।

१. यह पीलीभीत कांग्रेसके मन्त्रीके २० अक्तूबरके तारके उत्तरमें भेजा गया था, जिसमें उन्होंने स्थानिक हिन्दू-मुस्लिम तनाव दूर करनेके लिए दो नेताओंको भेजनेका अनुरोध किया था।

२. गांधीजीने ये वाक्य प्राप्त तारके कागजपर गुजरातीमें लिखे थे।

३. यह प० मोतीलाल नेहरूके २० अक्तूबरके निम्नलिखित तारके उत्तरमें दिया गया था: "स्थानीय हिन्दू-मुस्लिम वार्ताके कारण रुक गया। मुंजे जवाहरके साथ जा रहे हैं; उन्हें आपकी हिदायतोंका इन्तजार है। जवाहर पहलेसे अच्छा लेकिन सफर करनेमें असमर्थ। जरूरत हो तो मैं आज रात रवाना हो सकता हूँ। मुंजेको तार दिया है। दासका तार आया है कि दिल्लीकी बैठक ३१ को हो। तारसे निर्देश दें।"

४. यह वाक्य गांधीजीने पंडित मोतीलाल नेहरूसे प्राप्त तार वाले कागजपर ही लिख दिया था।

२०७. तार: डा० बी० एस० मुंजेको[1]

[२१ अक्तूबर, १९२४ या उसके पश्चात्]

सन्तानम्से वहाँ तुरन्त दिवालीसे पहले-पहले पहुँच जानेको कहा है।

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १०४८९-ए) की माइक्रोफिल्मसे।

२०८. तार: अबुल कलाम आजादको

[२१ अक्तूबर, १९२४ या उसके पश्चात्][2]

नागपुर के मुसलमानोंका कहना है कि आपके आये बिना समस्या ।[3] वे चाहते हैं कि आप मोतीलाल के साथ २८ तारीख से पहले-पहले वहाँ पहुँच जायें। क्या आप २८ तारीखसे पहले-पहले नागपुर प्रस्थान कर जायेंगे? मोतीलालको तदनुसार सूचित कर दें।

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १०४८९–ए) की माइक्रोफिल्मसे।

२०९. तार: मोतीलाल नेहरूको

[२१ अक्तूबर, १९२४ या उसके पश्चात्]

आपको तार दिया था। आजादको लेकर दिवालीसे पहले-पहले पहुँचे। आजादको तार दे रहा हूँ। क्या आप भी तार देकर उनसे साथ जानेके लिए कहेंगे और उसके लिए दिन निश्चित कर देंगे?

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १०४८९-ए) की माइक्रोफिल्मसे।

१. यह तार तथा इसके बादके दो तार २१ अक्तूबरको डा० मुंजेसे प्राप्त निम्न तारपर लिखे मिले हैं: "कलका तार रद। डा० महमूद रुक रहे हैं। मुसलमानोंसे बातचीत कर रहे हैं। उन्होंने आपको कल तार दिया था कि अबुल कलाम आजादको भेजें। मैंने मोतीलालजीको तार दिया है कि दिवालीके गाने-बजानेके कारण फिर दंगे हों इससे पहले ही वे उनके साथ आ जायें।"

२. देखिए पाद-टिप्पणी १।

३ साधन-सूत्रमें यह अंश पढ़नेमें नहीं आता।

४. देखिए पिछला शीर्षक।

२१०. तार: पीलीभीत कांग्रेस कमेटीके मन्त्रीको[1]

[२१ अक्तूबर, १९२४ या उसके पश्चात्]

बरेलीके हिन्दू मुसलमान नेताओंसे कहा है कि वहाँ जाये।

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १०४९१) की माइक्रोफिल्मसे।

२११. तार: कोण्डा वेंकटप्पैयाको[2]

[२१ अक्तूबर, १९२४ या उसके पश्चात्]

नेलौर खिलाफत कमेटीके मत्रीको दिवालीपर नेलौरमे उपद्रवका भय है। आप स्वस्थ हो तो किसी मुसलमानको लेकर वहाँ जाये अथवा इस कामका भार किसी औरको दे दे।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १०४९१)की माइक्रोफिल्मसे।

२१२. जी० रामचन्द्रन्‌के साथ बातचीत[3]

[मगलवार व बुधवार,
२१ व २२ अक्तूबर, १९२४][4]

आत्मशुद्धि और प्रार्थनाके सप्ताहोंमें जो लोग दिलखुश आये, उनमें शान्तिनिकेतनके एक युवा छात्र भी थे। उनका नाम रामचन्द्रन् है और वे श्री एन्ड्रूजके शिष्य

१. यह २१ अक्तूबरको प्राप्त निम्न तारके उत्तरमें दिया गया था: "ताजियेपर ईंट-पत्थर फेंकनेसे दंगा। चार मुसलमान गोलियोंसे घायल। चार हिन्दू भी गोलियोंसे घायल। बहुत लोग जख्मी। कुछ मन्दिरों और आर्यसमाज मन्दिरके अपवित्र किये जानेकी खबर। भारी उत्तेजना। छत्तीस हिन्दुओंपर मुकदमे। दण्ड विधान ३०७/३३८ के अधीन तीन मामले।"

२. इस तारका मसविदा पीलीभीत कांग्रेससे प्राप्त दूसरे तारके पीछे लिखा था। इसलिए इसकी तारीख वही है जो पीलीभीत कांग्रेसके मन्त्रीको दिये तारकी है। देखिए पिछले शीर्षककी पाद-टिप्पणी।

३. यह महादेव देसाईके हस्ताक्षरोंसे *यंग इंडिया*में दो किस्तोंमें छपी थी। शीर्षक था: "गांधीजीके साथ एक सुबह"।

४. "दिल्ली, बुधवार, २९ अक्तूबर, १९२४" की तारीखमें २-११-१९२४ के गुजराती *नवजीवन*में लिखते हुए महादेव देसाईने रामचन्द्रन्‌के "पिछले सप्ताह" प्रस्थान करनेकी चर्चा की है। इसलिए लगता है कि यह बातचीत उक्त तिथियोंको ही हुई थी।

हैं। उन्होंने बिना किसी कठिनाईके अपने गुरुसे दिल्लीमें कुछ समय और रुकनेकी अनुमति प्राप्त कर ली थी। उस दिन शामको दिल्लीसे रवाना होनेसे पहले श्री एन्ड्रयूज उन्हें लेकर ऊपरकी मंजिलमें आये और उन्होंने गांधीजीसे कहा कि "मैंने अभीतक आपसे रामचन्द्रन्‌का परिचय तो कराया ही नहीं, हालाँकि इन दिनों बराबर वह यहाँ साथ रहकर हमारी सहायता करता रहा है। यह आपसे कुछ प्रश्न पूछना चाहता है। कल यह शान्तिनिकेतन लौट जायेगा। अगर आप उससे पहले इससे थोड़ी देर बातचीत कर ले तो मुझे बड़ी खुशी होगी?" लेकिन 'कल' का दिन तो महात्माजीका मौन-दिवस, सोमवार था। इसलिए रामचन्द्रन् एक दिन और रुक गये। मंगलवारकी सुबह उन्हें कलकत्तेकी गाड़ी पकड़नी थी। इसलिए प्रातः प्रार्थनाके बाद ठीक साढ़े पाँच बजे उन्हें बुलाया गया। उन्होंने अपने सभी प्रश्न -- जिन शंकाओं और उलझनोंसे उनका मन परेशान था -- लिख रखे थे। फिर भी पहले तो उन्हें अपने-आपपर इतना भरोसा ही नहीं हो रहा था कि वे जो-कुछ पूछना चाहते हैं, पूछ भी सकेंगे। किन्तु, आखिर उन्होंने साहस बटोरा और तब बड़े आश्चर्यसे देखा कि बापूने उनसे उनके बारेमें, उनके घर-बार और अध्ययन आदिके सम्बन्धमें इतने सौजन्यसे पूछताछ की कि उनकी सारी हिचक और घबराहट हवा हो गई। उस दिन सुबह रामचन्द्रन्‌को गांधीजीसे जितनी बातचीत करनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ, उसे पूरा-पूरा दे सकना असम्भव है। यहाँ तो मैं बहुत संक्षेपमें उसका सार-मात्र दे सकता हूँ।

[रामचन्द्रन् :] आपको स्नेह और सराहनाकी दृष्टिसे देखनेवाले बहुतसे समझदार और प्रसिद्ध लोग भी ऐसा मानते हैं कि आपने जाने-अनजाने राष्ट्रीय पुनरुत्थानकी योजनामें कलाका कोई खयाल नहीं किया है। ऐसा क्यों?

[गांधीजी :] मुझे दुःखके साथ कहना पड़ता है कि इस विषयमें लोगोंने आम तौरपर मुझे गलत ही समझा है। हर चीजके दो पक्ष होते हैं — एक बाह्य और दूसरा आन्तरिक। यहाँ कुल सवाल यह है कि महत्त्व किसको दिया जाये। मैं ऐसा मानता हूँ कि बाह्य पक्षका महत्त्व उसी हदतक है जहाँतक कि वह आन्तरिक पक्षकी परिष्कृतिमें सहायक है, उससे अधिक उसका कोई महत्त्व नहीं है। इस प्रकार, सभी सच्ची कला आत्माकी अभिव्यक्ति होती है। कलाके बाह्य रूपोंका महत्त्व वहीं तक है जहाँतक उनसे मनुष्यकी आत्माकी अभिव्यक्ति होती है।

बड़े-बड़े कलाकारोंने तो स्वयं ही कहा है कि आत्माकी तृषा और आकुलताकी शब्दों, रंगों, आकृतियों आदिमें अभिव्यक्तिका नाम ही कला है।

हाँ, और ऐसी कला मेरे मनको सबसे ज्यादा छूती है। किन्तु, मैं जानता हूँ कि ऐसे बहुतसे लोग हैं जो अपने-आपको कलाकार कहते हैं और कलाकार माने भी जाते हैं, लेकिन उनकी कृतियोंमें आत्माके ऊर्ध्वमुखी स्फुरण और आकुलताका लेश भी नहीं होता।

क्या आपके मनमें इसका कोई उदाहरण है?

हाँ, है। ऑस्कर वाइल्डको ही लो। उनके विषयमे मै इसलिए कुछ कह सकता हूँ कि जिन दिनो उनकी चर्चा बहुत गरम थी, उन दिनो मै इग्लैडमे ही था।

मगर मुझे तो बताया गया है कि ऑस्कर वाइल्ड आधुनिक कालकी महानतम साहित्यिक विभूतियोमें से थे।

हाँ, और यही तो मेरी भी परेशानीका कारण है। वाइल्डने बाह्य रूपोमे ही कलाकी चरम परिणति देखी और इसलिए वे अनैतिकताको भी कलात्मक सौन्दर्य प्रदान करनेमे सफल हो गये। सच्ची कला तो वही है जो आत्म-दर्शनमे सहायक हो। जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मै तो देखता हूँ कि अपने आत्म-दर्शनके लिए बाह्य रूपोका कोई सहारा लिये बिना भी मेरा काम चल सकता है। इसलिए, मै अपने बारेमे यह दावा कर सकता हूँ कि मेरे जीवनमे सचमुच पर्याप्त कला है, यद्यपि जिन्हे तुम कला-कृतियाँ कहते हो, उन चीजोको तुम मेरे आस-पास शायद न देख सको। मेरे कमरेकी दीवारे बिलकुल सादी, सूनी हो सकती है और हो सकता है, मै अपने सिरपर कोई साया भी नही रहने दूं ताकि दृष्टि ऊपर उठानेपर अनन्त सौन्दर्यका वितान फैलाये तारक मण्डित आकाशको देख सकूं। ऊपर तारोसे जगमगाते इस आकाशकी ओर दृष्टि डालनेपर मै जिस विराट् दृश्यको देखता हूँ, वैसे विराट् दृश्यके दर्शन मुझे किस कला-कृतिमे हो सकते है? लेकिन, इसका मतलब यह नही कि जिन चीजोको सामान्यतया कला-कृतियाँ माना जाता है, उन्हे मै कोई महत्त्व ही नही देता, हाँ, यह अवश्य है कि व्यक्तिगत रूपसे मै ऐसा महसूस करता हूँ कि प्रकृतिके चिरन्तन सौन्दर्य-प्रतीकोकी तुलनामे ये कृतियाँ कितनी अधूरी है। मनुष्यकी इन कला-कृतियोका महत्त्व उसी सीमातक है जिस सीमातक ये आत्माके अन्तर्दर्शनमे सहायक है।

लेकिन कलाकार तो बाह्य सौन्दर्यके माध्यमसे सत्यके दर्शन और उसकी प्राप्तिका दावा करते है। क्या इस तरह सत्यको देखना और पाना सम्भव है?

मै इसी बातको उलटकर कहना चाहूँगा। मै सत्यमे और सत्यके माध्यमसे सौन्दर्यको देखता और प्राप्त करता हूँ। समस्त सत्य और केवल सच्चे विचार ही नही, बल्कि सत्यपरक चित्र अथवा गीत भी अतीव सुन्दर होते है। लोग सामान्यतया सत्यमे सौन्दर्यके दर्शन नही कर पाते, साधारण लोग सत्यसे ऑख चुराते है और इसलिए वे उसमे निहित सौन्दर्यको भी नही देख पाते। जिस दिन मनुष्य सत्यमे सौन्दर्य देखने लगेगा, उसी दिन सच्ची कलाका जन्म होगा।

किन्तु, क्या सत्यको सौन्दर्यसे और सौन्दर्यको सत्यसे अलग करके नहीं देखा जा सकता?

मै यह जानना चाहूँगा कि सौन्दर्य दरअसल है क्या। लोग आम तौरपर इस शब्दसे जो-कुछ समझते है, यदि सौन्दर्य वही है तो दोनोमे बडा अन्तर है। क्या यह जरूरी है कि कोई सुघड आकृतिवाली महिला सुन्दर ही होती है?

हाँ, वह सुन्दर तो होगी ही।

दुश्चरित्र होते हुए भी?

किन्तु, उस दशामें तो उसकी मुखाकृति सुन्दर हो ही नहीं सकती। उसपर तो बराबर वही भाव प्रस्फुटित होगा जो उसके भीतर है। जिसे दृष्टि है ऐसा कलाकार उसकी मुखाकृतिपर ठीक भावको भी उभार देगा।

लेकिन, ऐसा कहकर तो तुम मेरे प्रश्नको ही दुहरा रहे हो। तुम अब यह स्वीकार कर रहे हो कि कोई वस्तु अपनी बाहरी सुघडताके कारण ही सुन्दर नही हो जाती। सच्चे कलाकारके लिए वही मुखाकृति सुन्दर है, जिसपर अन्तरका सत्य झलकता हो, बाह्य रूप क्या और कैसा है, इसको वह कोई महत्त्व नही देता। तो, जैसा कि मैने कहा, सत्यसे अलग कोई सौन्दर्य नही है। दूसरी ओर, सत्य ऐसी रूपाकृतियोमे अभिव्यक्त हो सकता है जो बाहरसे किसी तरह सुन्दर न हो। कहते है, सुकरात अपने समयके सबसे सत्यपरायण व्यक्ति थे, किन्तु ऐसा बताते है कि उनकी रूपाकृति यूनान-भरमे सबसे असुन्दर थी। मेरी दृष्टिमे वे बहुत सुन्दर थे, क्योकि उनका समस्त जीवन सत्यकी अन्वेषणामे बीता और तुम्हे याद होगा कि उनकी असुन्दर रूपाकृतिके बावजूद फीडियस उनके अन्तरके सत्यमे निहित सौन्दर्यकी सराहना किये बिना नही रह सका, यद्यपि एक कलाकारके नाते वे बाह्य रूपोमे भी सौन्दर्यको देखनेके अभ्यस्त थे।

लेकिन, बापूजी, सुन्दरतम कला-कृतियोंका निर्माण तो अकसर ऐसे व्यक्तियोंने किया है, जिनके अपने जीवन सुन्दर नहीं रहे है!

इसका मतलब तो यही है कि सत्य और असत्य अकसर साथ-साथ रहते है, बुराई और अच्छाई अकसर साथ-साथ मिलती है। कलाकारमे भी सम्यक् दृष्टि और असम्यक् दृष्टिका अस्तित्व बहुधा एक साथ देखनेको मिलता है। सचमुच सुन्दर कृतियोका सृजन वह तब करता है जब उसकी सम्यक् दृष्टि क्रियाशील होती है। यदि ऐसे क्षण जीवनमे बहुत कम आते है तो कला-सृजनमे भी कम ही आते है।

यदि सिर्फ सत्यमूलक और अच्छी चीजें ही सुन्दर हो सकती हैं तो ऐसी कोई चीज जिसमें कोई नैतिक गुण न हो कैसे सुन्दर हो सकती है? . . . जो चीजें अपने आपमें न नैतिक हैं और न अनैतिक उनमें भी क्या सत्य होता है? उदाहरणके लिए, क्या सूर्यास्तमें या रातमें तारोंके बीच चमकनेवाले बंकिमचन्द्रमें भी कोई सत्य होता है?

बेशक, इनका सौन्दर्य भी सत्यमूलक है, क्योकि ये मुझे उस स्रष्टाकी महिमाका भान कराते है, जिसका हाथ इनके पीछे है। सृष्टिके मूलमें जो सत्य है, उसके बिना ये सब सुन्दर कैसे हो सकते थे? जब मै सूर्यास्तकी अद्‌भुत छटाको अथवा चन्द्रमाके सौन्दर्यको देखता हूँ तो मेरी आत्मा स्रष्टाकी आराधनामें प्रफुल्लित हो उठती है। मै इन तमाम कृतियोमे उसे और उसकी दयाको देखनेका प्रयत्न करता हूँ। किन्तु, यदि सूर्यास्त और सूर्योदय मुझे उसके चिन्तनकी प्रेरणा न दे तो मै उन्हे भी अपने लिए बाधा ही मानूंगा। जो भी वस्तु आत्माके ऊर्ध्वगमनमे बाधक है, वह मोक्षके मार्गमे अकसर बाधा डालनेवाले शरीरकी ही तरह भ्रम है, पाश है।

कलाके सम्बन्धमें आपके विचार सुनकर मैं सचमुच कृतार्थ हो गया। मैं उन्हें समझता और स्वीकार करता हूँ लेकिन अगर आप भावी पीढ़ीके सही मार्गदर्शनके लिए उन्हें सुबद्ध रूपमें प्रस्तुत कर दें तो क्या यह अच्छा नहीं हो?

ऐसा करनेकी तो मै सपनेमे भी नही सोच सकता। उसका सीधा-सादा कारण यह है कि कलाके सम्बन्धमे ज्यादा कुछ कहना मेरे लिए धृष्टता होगी। मै कोई कलाका अध्येता नही हूँ, यद्यपि उसके सम्बन्धमे ये मेरे वुनियादी विचार है। मै अपनी सीमाओसे भली-भाँति अवगत हूँ, इसलिए इस विषयपर मै न बोलता हूँ और न लिखता हूँ और यही सीमाबोध मेरा बल है। मै जीवनमे जो-कुछ भी कर पाया हूँ, उसका सबसे ज्यादा श्रेय इसी वातको है कि मुझे अपनी मर्यादाओका ज्ञान है। मेरा काम कलाकारके कामसे भिन्न है इसलिए मुझे अपने क्षेत्रसे बाहर जाकर उसकी जगह नही लेनी चाहिए।

बापूजी, क्या आप यन्त्र-मात्रके खिलाफ है?

ऐसा कैसे हो सकता है? जब कि मै जानता हूँ कि यह शरीर भी तो एक बहुत नाजुक यन्त्र ही है। चरखा तो खुद ही एक यन्त्र है और दाँत कुरेदनेकी एक छोटी-सी सीक भी तो यन्त्र ही है। मुझे यन्त्रोपर नही, बल्कि उनके प्रति अन्ध-मोहपर आपत्ति है। यह मोह उन यन्त्रोके लिए है जिन्हे वे श्रमकी बचत करनेवाले कहते है। इस तरह मनुष्य श्रमकी बचतके पीछे पडा रहता है और अन्तमे उसका परिणाम यह होता है कि हजारो लोग बेरोजगार हो जाते है और उनके लिए मारे-मारे फिरते हुए भूखकी पीडासे तडप-तडपकर अपने प्राण देनेके अलावा और कोई चारा नही रह जाता। मै भी समय और श्रमकी बचत करना चाहता हूँ, लेकिन मुट्ठी-भर लोगोके लिए नही, बल्कि सभीके लिए। सम्पत्तिका सचय मै भी चाहता हूँ, किन्तु वह चन्द लोगोके हाथोमे नही, बल्कि समस्त समाजके हाथोमे चाहता हूँ। आज यन्त्रोकी बदौलत चन्द लोग लाखो-करोडोकी पीठपर सवार है। इस सबके पीछे प्रेरणा श्रमकी बचतकी और परोपकार-वृत्तिकी नही, बल्कि लोभकी ही है। इसी वस्तु-व्यवस्थाके विरुद्ध मै अपनी समस्त शक्तिसे जूझ रहा हूँ।

तब तो, बापूजी, आप यन्त्रके खिलाफ नहीं, बल्कि उसके दुरुपयोगके खिलाफ, जिसकी मिसालें आज हम इतनी ज्यादा देख रहे हैं, लड़ रहे है?

मै वेहिचक कहूँगा कि 'हाँ', लेकिन इतना और जोडना चाहूँगा कि आज जो वैज्ञानिक तथ्यो और आविष्कारोका उपयोग लोभको तुष्ट करनेके साधनके रूपमें हो रहा है, सबसे पहले यह स्थिति समाप्त होनी चाहिए। उस हालतमे श्रमिकोपर कामका ज्यादा वोझ नही रहेगा और यन्त्र एक बाधाके बजाय सहायक साधन बन जायेगा। मै यन्त्र-मात्रको समाप्त करनेका नही, बल्कि उसे सीमित करनेका प्रयत्न कर रहा हूँ।

इसका तर्क-संगत निष्कर्ष तो यही होगा कि तमाम शक्तिचालित जटिल यन्त्रोंको समाप्त कर देना चाहिए।

हो सकता है, इन सबको समाप्त कर देना पडे, लेकिन मै एक बात स्पष्ट कर देना चाहूँगा। मानव-हितका विचार सर्वोपरि होना चाहिए। ऐसा नही होना चाहिए कि यन्त्र मनुष्यको पगु बना दे। उदाहरणके लिए, मै इस नियमके कुछ उचित और युक्तिसगत अपवाद भी रखूंगा। सिलाईकी सिंगर मशीनको ही लो। यह चन्द उपयोगी आविष्कारोमें से है और इस यन्त्रके साथ एक रोचक कहानी भी जुडी हुई है। सिंगर देखते कि उनकी पत्नी सीने और बखियानेका ऊबानेवाला काम करती रहती है और उसके प्रति प्रेमके कारण उन्होंने इस यन्त्रका आविष्कार कर डाला, ताकि वह गैर-जरूरी मेहनतसे बच सके। किन्तु, इस तरह उसने न केवल अपनी पत्नीकी, बल्कि इस यन्त्रको खरीदनेमें समर्थ हर आदमीकी मेहनत बचा ली।

लेकिन, उस हालतमें तो सिलाईकी सिंगर मशीनोके निर्माणके लिए कारखाना खोलनेकी भी जरूरत होगी और उस कारखानेमें सामान्य ढंगके शक्ति-चालित यन्त्र भी होंगे ही।

हाँ, होगे। लेकिन समाजवादमे मेरा इतना विश्वास तो है ही कि कह सकूं कि ऐसे कारखानोका या तो राष्ट्रीयकरण कर दिया जाये या उन्हे राज्यके स्वामित्वमें रखा जाये। चाहिए यह कि ये कारखाने अत्यन्त आदर्श और आकर्षक ढगसे चलाये जायें, मुनाफाखोरीके लिए नही, बल्कि मानव-समाजके हितके लिए चलाये जाये। इसमे प्रेरणा लोभकी नही, प्रेमकी होनी चाहिए। मै जो चाहता हूँ वह यह कि श्रमिको-को जिन स्थितियोमे काम करना पडता है, उन स्थितियोको बदला जाये। धनके लिए यह पागलपन-भरी आपा-धापी बन्द होनी चाहिए और मजदूरोको आश्वस्त कर देना चाहिए कि उन्हे न केवल जीवन-निर्वाहके लायक मजदूरी मिलेगी, बल्कि प्रतिदिन ऐसा काम भी मिलेगा जो मात्र नीरस श्रम ही नही होगा। ऐसी स्थिति होनेपर यन्त्रसे जितनी सहायता राज्य अथवा यन्त्रके स्वामीको मिलेगी उतनी ही सहायता यन्त्र चलानेवालेको भी मिलेगी। तब आजकी पागलपन-भरी आपा-धापी बन्द हो जायेगी और मजदूर लोग (जैसा कि मैने कहा) काम करनेकी आकर्षक और आदर्श स्थितियोमे श्रम करेगे। मेरे मनमे जो अपवाद है, उनमे से यह केवल एक है। सिलाई मशीनके आविष्कारके पीछे प्रेमकी प्रेरणा थी। व्यक्तिके हितका विचार ही सर्वोपरि है। तो इसका उद्देश्य व्यक्तिके श्रमकी बचत होना चाहिए और इसके पीछे प्रेरक तत्त्व लोभ नही, बल्कि सच्चा मानव-हित होना चाहिए। इस तरह, उदाहरणके लिए, मै टेढे तकुएको सीधा करनेवाले यन्त्रके आविष्कारका स्वागत करनेके लिए बराबर तैयार हूँ। इससे ऐसा नही होगा कि लोहार लोग तकुए बनाना छोड देगे। तकुएकी जरूरत तो तब भी वे ही पूरी करेगे, लेकिन जब तकुआ खराब हो जायेगा तो उसे सीधा करनेके लिए हर कतैयेके पास अपना-अपना यन्त्र रहेगा। तात्पर्य यह कि लोभकी जगह प्रेमसे काम लेना शुरू कीजिए और फिर देखिए कि किस तरह सब-कुछ अपने-आप ठीक हो जाता है।

स्पष्ट था कि इतनेसे रामचन्द्रन् सन्तुष्ट नहीं हुए थे। उन्होंने तो ऐसा समझा था कि गांधीजी यन्त्र-मात्रके विरुद्ध हैं और लगता था कि उनका यह रवैया ठीक

भी है। इसलिए वे इस सवालकी तहतक जाना चाहते थे। लेकिन काफी देर हो रही थी और अभी उन्हे अन्य अनेक सवाल पूछने थे। गांधीजी समझ गये और उन्होंने मुस्कराते हुए कहा :

गाडी छूट जानेकी फिक्र मत करो। तुम्हारी सारी शकाओका समाधान करनेके लिए तैयार हूँ। अभी तुम जितने सवाल चाहो, पूछ सकते हो। मै उससे जरा भी नही थकूंगा।

अभी इन नौजवान भाईके प्रश्नोंकी सूची समाप्त नहीं हुई थी। गांधीजीसे यह आश्वासन मिल जानेके बाद कि अभी तुम जितने सवाल चाहो, पूछ सकते हो, वे बिलकुल निश्चिन्त हो गये। उन्होंने साहस बटोरकर अगला प्रश्न पूछा, जिसका सम्बन्ध विवाहकी प्रथासे था।

मै तीसरा सवाल यह पूछना चाहूँगा कि क्या आप विवाह-प्रथाके विरुद्ध है!

इसका उत्तर मुझे किंचित् विस्तारसे देना पडेगा। मानव-जीवनका उद्देश्य मोक्ष है। एक हिन्दूके नाते मै मानता हूँ कि मोक्षका अर्थ जन्म-बन्धनसे मुक्ति पाना है, शरीरके बन्धनोको तोडकर ईश्वरमें लीन हो जाना है। अब विवाह तो इस सर्वोपरि लक्ष्यकी सिद्धिके मार्गमे एक बाधा ही है, क्योकि यह शरीरके बन्धनको दृढ करता है। इसमे ब्रह्मचर्य बहुत सहायक है, क्योकि यह मनुष्यको अपना जीवन पूर्णत ईश्वर-को अर्पित करनेमे सक्षम बनाता है। विवाहका उद्देश्य आम तौरपर वशवृद्धि ही तो समझा जाता और फिर किसीको विवाह-प्रथाका पक्ष-पोषण करनेकी भी क्या जरूरत है? इसका प्रचार तो स्वय ही होता रहता है। इसके प्रसारके लिए किसी प्रचार-तन्त्रकी आवश्यकता नही है।

लेकिन, ब्रह्मचर्यका पक्ष-पोषण करना और हरएकको उसका उपदेश देना क्या आप अपने लिए जरूरी मानते है?

हाँ, जरूरी ही मानता हूँ और तब तुम शायद यह कहोगे कि इस तरह तो सृष्टिका अन्त ही हो जायेगा? लेकिन नही, ऐसा कोई खतरा नही है। इसका जो बडेसे-बडा तर्क-सगत परिणाम होगा वह मानव-जातिका उन्मूलन नही, बल्कि उसका एक उच्चतर धरातलपर पहुँच जाना ही होगा।

लेकिन, क्या यह वांछनीय नहीं है कि कवि, कलाकार और महान् प्रतिभासे युक्त व्यक्ति अपनी सन्तानके माध्यमसे भावी पीढ़ीके लिए अपनी विरासत छोड़ जायें?

बिलकुल नही। उसे हर हालतमे अपनी सन्तानकी अपेक्षा शिष्य अधिक सख्यामे मिल जायेगे और उन शिष्योके माध्यमसे वह दुनियाको अपनी प्रतिभाका दान जितनी अच्छी तरह दे सकता है, उतनी अच्छी तरह और किसी तरीकेसे नही दे सकता। यह आत्मासे आत्माका परिणय होगा, शिष्य होगे परिणयकी सन्तान। यह एक प्रकारकी अलौकिक प्रजोत्पत्ति होगी। तो विवाहकी प्रथाकी रक्षाके लिए हमे कोई चिन्ता ही नही करनी चाहिए, वह तो अपने ही बल-बूतेपर जीवित रहेगी। इसका परिणाम विकास नही, पुनरावृत्ति ही होगा, क्योकि विवाह-व्यापारमें वासना ही सबसे प्रधान हो गई है।

मगर ब्रह्मचर्यपर आपका यह आग्रह श्री एन्ड्रयूजको पसन्द नहीं है।

हाँ, मुझे मालूम है। उनका यह दृष्टिकोण प्रोटेस्टैंट पथकी देन है। इस पथको बहुतसे सत्कार्योका श्रेय है, लेकिन इसमे जो-कुछ दोष थे, उनमे से एक ब्रह्मचर्यका उपहास करना भी था।

लेकिन ऐसा तो इसलिए हुआ कि इस पंथको, उस समयका पादरी-वर्ग जिन बुराइयोमें डूबा हुआ था, उनसे लड़ना था।

लेकिन इन तमाम बुराइयोका कारण यह तो नही था कि ब्रह्मचर्यमे कोई सहज दोष है। ब्रह्मचर्यके कारण ही कैथॉलिक पथ आजतक फल-फूल रहा है।

रामचन्द्रन्‌का अन्तिम प्रश्न बहु-चर्चित 'कताई-सदस्यता' के बारेमें था। उन्होने गाधीजीको प्रारम्भमें ही यह बता दिया कि वे खुद तो कातते हैं, लेकिन साथ ही यह भी स्वीकार किया कि शान्तिनिकेतनके अपने दो अन्य मित्रोके साथ-साथ उन्होने यह काम गाधीजीके उपवासका समाचार सुननेके बाद ही शुरू किया। उन्होने यह भी कहा कि वे इस बातमें विश्वास रखते है कि कताई सबको करनी चाहिए। लेकिन, यह चीज उनकी समझमें नहीं आ रही थी कि कांग्रेसको अपने सदस्योको इस कामके लिए क्यो मजबूर करना चाहिए। यहाँ तो जबरदस्तीसे नहीं, बल्कि समझाने-बुझानेके तरीकेसे काम लेना चाहिए।

अच्छा तो, इस विषयमे तो तुम श्री एन्ड्रयूजसे भी एक कदम आगे हो। वे भी यह नही चाहते कि काग्रेस अपने सदस्योको इसके लिए मजबूर करे, लेकिन कताई-सम्बन्धी नियमोसे बँधे, स्वेच्छया कताई करनेवाले किसी सगठनके सदस्य वे खुशी-खुशी बनना चाहेगे। तुमको तो शायद ऐसे किसी सगठनपर भी आपत्ति है?

रामचन्द्रन् चुप बैठे रहे।

अच्छा तो अब मैं तुमसे एक सवाल पूछता हूँ। क्या काग्रेसको ऐसा कहनेका कोई अधिकार है कि इसका कोई सदस्य मद्यपान न करे? क्या यह भी व्यक्तिकी स्वतन्त्रतापर रोक लगाना होगा? यदि काग्रेस अपने सदस्योपर मद्य-निषेधका नियम लादनेके अधिकारका प्रयोग करे तो उसपर कोई आपत्ति नही होगी। क्यो? इसी-लिए न कि मद्यपानकी बुराइयाँ जग-जानी हैं। तो मैं यह कहूँगा कि आज भारतमे, जहाँ करोडो लोग भुखमरीके किनारेपर खडे हैं और दुखके सागरमे डूबे हुए हैं, विदेशोसे कपडेका आयात करना शायद अधिक बडी बुराई है। जरा उडीसाके लाखो क्षुधा-पीडित लोगोका खयाल करो। जब मैं वहाँ गया था, मैंने वहाँके अकाल-पीडित लोगोको देखा था। एक नेक पुलिस सुपरिटेडेटके सौजन्यमे, जो एक उद्योगशाला चलाते थे, मैंने उन अकाल-पीडितोके स्वस्थ, प्रसन्न और हँसमुख बच्चोको भी देखा, जो दरी, टोकरी वगैरह बनानेमे जुटे हुए थे। वहाँ कताई नही हो रही थी, क्योकि उस समय वहाँ इन दूसरे कामोका बडा प्रचलन था। लेकिन, उनकी मुखाकृतिसे श्रमके आनन्दकी आभा छिटक रही थी। लेकिन, अकाल-पीडितोके बीच आकर मैंने क्या देखा? वे हड्डी-चमडीके ढाँचे-मात्र रह गये थे, उन्हे देखकर यही लगता था

कि वे बस मृत्युकी प्रतीक्षा कर रहे है। उनकी यह दशा इसलिए थी कि वे किसी भी हालतमे काम करनेको तैयार नही थे। अगर उन्हे काम करनेसे इनकार करनेपर कोई गोली मार देनेकी भी धमकी देता तो मेरा विश्वास है, वे कोई ईमानदारीका काम करनेके बजाय गोली मार दिया जाना अधिक पसन्द करते। कामसे यह अरूचि मद्यपानकी अपेक्षा कही अधिक बडी बुराई है। किसी मद्यसेवीसे तो तुम कुछ काम ले सकते हो। उसमे कुछ उत्साह होता है, समझदारी भी होती है। लेकिन, काम- करनेसे इनकार करनेवाले ये भूखे लोग बिलकुल पशुओ-जैसे हो गये थे। सवाल यह है कि ऐसे लोगोसे काम लेनेकी समस्याको हम कैसे हल कर सकते है? मुझे तो चरखेको घर-घर पहुँचा देनेके अलावा इसका और कोई रास्ता नही दिखाई देता। इसलिए, बाहरसे भारतमे मँगाये गये एक-एक गज कपडेका मतलब इन दीन-हीन क्षुधित लोगोके मुँहसे एक-एक ग्रास छीन लेना है। अगर मेरी ही तरह तुम भी समयके सबसे बडे तकाजेको समझ पाते — और वह तकाजा है भारतके करोडो क्षुधित लोगोको आनन्द और हर्षके साथ अपनी रोटी कमानेका एक अवसर देना — तो तुम्हे कताई सदस्यतापर कोई आपत्ति नही होती। मै तो काग्रेसको कताईकी सर्वोपरि आवश्यकताको स्वीकार करनेवाले पुरुषो और स्त्रियोकी ही सस्था मानता हूँ। फिर, उसे अपने हर सदस्यके लिए कताई अनिवार्य करके इस सस्थाकी सदस्यताकी प्रामाणिकताकी ओरसे आश्वस्त हो जानेकी कोशिश क्यो नही करनी चाहिए? और तुम समझाने-बुझानेकी बात कहते हो। समझाने-बुझानेका इससे अच्छा तरीका और क्या हो सकता है कि काग्रेसका हर सदस्य, हर महीने नियमित रूपसे एक निश्चित परिमाणमे सूत काते? अगर काग्रेसी लोग खुद ही कताई नही करेगे तो फिर लोगोसे कताई करनेको कहना उनके लिए कैसे उचित माना जा सकता है?

लेकिन कताई न करनेवाले लोगोंको आप काग्रेससे बाहर कैसे रख सकते है? हो सकता है कि वे अन्य प्रकारसे देशकी महत्त्वपूर्ण सेवा कर रहे हों।

क्यो नही रख सकते? आखिर सम्पत्तिपर आधारित मताधिकारका कारण क्या है? किसी व्यक्तिके लिए सदस्य बननेके लिए चार आने देना क्यो जरूरी है और उम्रको एक आवश्यक योग्यता क्यो माना जाता है? क्या इटलीके उस आठ वर्षीय प्रतिभाशाली वायलिन-वादकको मताधिकार दिया जा सकता है? जॉन स्टुअर्ट मिल चाहे जितने भी मेधावी रहे हो, लेकिन जब वे सत्रह वर्षके थे तब ग्रीक और लैटिनके समस्त ज्ञानके बावजूद उन्हे मताधिकार नही प्राप्त था। अल्प वयमे ही अद्भुत प्रतिभाका परिचय देनेवाले इन व्यक्तियोको मताधिकार क्यो नही दिया गया? मताधिकार चाहे किसी प्रकारका हो कुछ-न-कुछ लोग उससे वचित रहेगे ही। नही, यह ठीक है कि आज बहुतसे लोग मेरी स्थितिको स्वीकार नही करेगे, लेकिन मुझे विश्वास है कि कभी-न-कभी हो सकता है, मेरी मृत्युके बाद — वह दिन जरूर आयेगा जब लोग कहेगे कि जो हो, गाधीका कहना तो ठीक ही था।

अब सात बज चुके थे और रामचन्द्रन्‌की गाड़ी छूट चुकी थी, लेकिन उन्हें जो-कुछ मिल चुका था वह उससे हजार गुना ज्यादा कीमती था। दूसरे दिन सुबह

प्रस्थान करनेसे पूर्व उन्हें फिर गांधीजीसे बातचीत करनेका सौभाग्य मिला। इस बार बातचीत तो कम ही हुई, लेकिन उसके परिणामस्वरूप रामचन्द्रन्‌ने आखिरकार गांधीजीका दृष्टिकोण स्वीकार कर लिया।

तो बापूजी, मुख्य चीज सत्य ही है? सौन्दर्य और सत्य एक ही चीजके अलग-अलग पक्ष नहीं है—यही न?

सत्य ही वह वस्तु है, जिसकी खोज सबसे पहले करनी चाहिए और फिर सौन्दर्य और शिवत्वकी प्राप्ति तो तुम्हे उसके साथ अपने-आप हो जायेगी। मेरे लेखे, ईसामसीह एक श्रेष्ठ कलाकार थे, क्योंकि उन्होने सत्यका साक्षात्कार किया और उसे अभिव्यक्ति दी। ऐसे ही मुहम्मद साहब भी थे और उनकी 'कुरान' अरबी साहित्यकी सबसे सुन्दर, सबसे पूर्ण कृति है—कमसे-कम विद्वान् लोग तो ऐसा ही कहते है। चूंकि दोनोने सर्वप्रथम सत्यको पानेका प्रयत्न किया, इसलिए स्वभावत. उनकी अभिव्यक्तिमे प्राजलता आ गई, मगर न तो ईसामसीहने और न मुहम्मद साहबने ही कलापर कुछ लिखा। इसी सत्य और सुन्दरके लिए मैं लालायित हूँ, इसीके लिए जीता हूँ और इसीके लिए मरना चाहता हूँ।

अगर आप सिंगर सिलाई मशीन और अपनी तकलीको अपवाद बनाते है तो फिर ऐसे अपवादोका अन्त कहाँ होगा?

वहाँ, जहाँ यन्त्र व्यक्तिके लिए सहायक न रहकर उसकी वैयक्तिकतापर आक्रमण करने लगेगे। यन्त्रको मनुष्यके हाथ-पैरोको निकम्मा नही बनाने देना चाहिए।

लेकिन, बापूजी, इस समय मेरे मनमें व्यावहारिक पक्षका खयाल नहीं था। एक आदर्शके रूपमें क्या आप यन्त्र-मात्रका परित्याग नहीं चाहेंगे? जब आप सिलाई मशीनको अपवाद बना रहे है तब तो आपको साइकिल, मोटर गाड़ी आदिको भी अपवाद बनाना पड़ेगा?

नही, इन्हे अपवाद नही बनाऊँगा। क्योकि इनसे मनुष्यकी कोई बुनियादी आवश्यकता पूरी नही होती। कारण, मोटरगाडीकी तेज रफ्तारसे दूरी तय करना मनुष्यकी कोई बुनियादी आवश्यकता नही है। इसके विपरीत सूई जीवनके लिए एक आवश्यक वस्तु है—बुनियादी आवश्यकता है। लेकिन आदर्शके रूपमे तो मैं तमाम यन्त्रोका त्याग करनेको कहूँगा—ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार मैं इस शरीरको, जो मोक्षके मार्गमे सहायक नही है, त्यागकर आत्माकी मुक्तिके लिए प्रयत्न करना चाहूँगा। इस दृष्टिकोणसे तो मैं यन्त्र-मात्रका त्याग कर देना चाहूँगा, लेकिन यन्त्र रहेगे तब भी, क्योकि वे भी शरीरकी तरह ही अनिवार्य है। जैसा कि मैंने बताया, शरीर तो स्वय ही एक विशुद्धतम यन्त्र है, लेकिन यदि यह आत्माके उर्ध्वगमनमे बाधक है तो इसका त्याग करना होगा।

लेकिन यह एक अनिवार्य बुराई क्यों है? क्या आखिरकार कुछ कलाकार सौन्दर्यमें और सौन्दर्यके माध्यमसे सत्यको नही देख सकते?

हाँ, कुछ कलाकार देख सकते है। लेकिन मुझे तो यहाँ भी करोडों लोगोंको ध्यानमे रखकर सोचना है, और करोडो लोगोको हम सौन्दर्यबोधका ऐसा प्रशिक्षण नही दे सकते जिससे वे सौन्दर्यमे सत्यको देख सके। पहले उन्हे सत्यके दर्शन कराओ और बादमे वे सौन्दर्यके दर्शन भी जरूर कर लेगे। उडीसाकी बात सोच-सोचकर मै सोते-जागते हमेशा परेशान रहता हूँ। उन लाखो-करोडो क्षुधित लोगोके लिए जो-कुछ लाभदायक हो सकता है, वह मेरे लिए सुन्दर भी है। पहले हम जीवनके प्राथमिक और आवश्यक उपादान जुटा दे, फिर जीवनका लालित्य और सौन्दर्य तो उन्हे अपने-आप प्राप्त हो जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १३-११-१९२४ और २०-११-१९२४

२१३. पत्र: वसुमती पण्डितको

[२२ अक्तूबर, १९२४][1]

चि० वसुमती,

तुम्हे महादेव अथवा रामदास लिखता ही होगा, ऐसा सोचकर मैने पत्र लिखनेमे ढिलाई की है। लिखनेकी बात तो मनमे थी ही। मेरा स्वास्थ्य ठीक रहता है। साढ़े तीन सेर दूध पी जाता हूँ, लेकिन मुझे लगता है कि यह मात्रा कम करनी पडेगी। मै थोडा घूम-फिर भी लेता हूँ। यहाँ ३१ तारीखतक तो रहना ही है। उसके बाद कोहाट जाना पडेगा, ऐसा मानता हूँ। यह बात वाइसरायकी अनुमतिपर निर्भर करती है। आशा है, तुम्हारा स्वास्थ्य अच्छा होगा। क्या पाखाना नियमित रूपसे हो जाता है? मणिलाल दक्षिण आफ्रिकासे यहाँ आ गया है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ४५८) से।
सौजन्य : वसुमती पण्डित।

१. डाककी मुहरसे।

२१४. पत्र : डाह्याभाई एम० पटेलको

आश्विन वदी ९ [२२ अक्तूबर, १९२४][1]

भाईश्री डाह्याभाई,

आपका पत्र मिला। आपकी पत्रिका तो मैं भूल गया हूँ। फिर भेज दीजिए। सन्देश यह है:

सत्यपर दृढ रहें। अपने प्रत्येक कार्यमें शान्ति बरतें। अपने और देशकी खातिर चरखा चलायें, खादी पहनें, हिन्दू और मुसलमान मिल-जुलकर रहें, हिन्दू अस्पृश्योंको अपना भाई समझें और उनका स्पर्श करनेमें संकोच न करें। शराब पीनेवाले शराबका त्याग करें; अन्य व्यसन करनेवाले भी अपने-अपने व्यसन छोड़ दें, यह हम सबका कर्त्तव्य है और यदि हम ऐसा करेंगे तो हमें स्वराज्य जल्दसे-जल्द मिलेगा। 'नवजीवन' और 'यंग इंडिया' में फिलहाल जो कुछ प्रकाशित होता है, उसका मुझे भान है। मुझे लगता है कि वह सब निर्दोष है। ये अनुभव असामान्य नहीं हैं और सबके लिए उपयोगी हैं। इनके द्वारा अहिंसा और तपका पाठ मिलता है, जिसे सबको सीखना है। उनमें कुछ हदतक मेरी प्रशंसा आ जाती है, लेकिन वह अनिवार्य है और जबतक मैं सम्पादन-कार्य फिरसे अपने हाथमें न लूं, तबतक क्षम्य ही है। तथापि आपका दृष्टिकोण भी विचारणीय है। इस प्रशंसाके प्रति मुझे निर्लेप रहना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

भाई डाह्याभाई
ताल्लुका समिति
धोलका
बरास्ता अहमदाबाद

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० २६९०) से।
सौजन्य : डाह्याभाई एम० पटेल

१. डाककी मुहरसे।

२१५. पत्र: मथुरादास त्रिकमजीको

आश्विन वदी ९ [२२ अक्तूबर, १९२४][1]

चि० तारामतीके बारेमें पढ़कर दुःख हुआ।[2] उसे कष्ट हुआ और आनन्दको बड़ा कष्ट हुआ होगा, यह सोचकर मनको बड़ा क्लेश पहुँचा। जन्म-मरणके विषयमें तो मैं इतना उदासीन हो गया हूँ कि उसका असर मुझपर शायद ही होता हो। जैसे-जैसे सोचता हूँ, जन्म और मरण मुझे एक ही वस्तुके दो रूप जान पड़ते हैं। अभी कल ही अनायास एक वाक्य पढ़नेको मिला 'मनुष्य तू मृत्युसे क्यों दुःखी होता है? मरणोपरान्त तो आत्माको सद्‌गति ही मिलती है। क्या तू विचार करके इतना भी नहीं देखता कि आत्मा नहीं मरती।' बुद्धि यह सब स्वीकार करती है, लेकिन बहुत बार हृदय स्वीकार नहीं करता, यही कठिनाई है। बल तो हृदयका ही सच्चा है। बुद्धि तो तुच्छ लगती है। बुद्धि कहे कि मुझे तुमसे प्रेम है, लेकिन हृदय स्वीकार न करे तो बुद्धिका कहा किस कामका?

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी

२१६. पत्र: ना० मो० खरे को

आश्विन वदी ९ [२२ अक्तूबर, १९२४][3]

भाई पण्डितजी,

आपका सुन्दर पत्र मिला। भक्त होना क्या कोई आसान बात है? तुलसीदासने अपने आपको शठ और सूरदासने पापी और अपंग कहा है। फिर भला हमारी क्या बिसात? हम सावधान रहें, इतना ही काफी है। आपका पत्र आपकी सावधानीका सूचक है। सँभलकर चलनेवाला और अपने आपको धोखा न देनेवाला व्यक्ति आगे बढ़ता ही जायेगा, क्योंकि वह हमेशा अपनी भूलोंकी ओर नजर रखता हुआ उनसे बचनेका प्रयत्न करता रहता है।

बापूके आशीर्वाद

भाई पण्डितजी
सत्याग्रह आश्रम, साबरमती

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० २५४) से।
सौजन्य: लक्ष्मीबाई खरे

१. साधन-सूत्रमें दी गई तारीखके अनुसार।
२. तारामतीने एक मृत शिशुको जन्म दिया था।
३. डाककी मुहरसे।

२१७. तार: चक्रवर्ती राजगोपालाचारीको[1]

[२२ अक्तूबर, १९२४ या उसके पश्चात्]

आपको डाकसे विवरण-सहित एक हजार भेज रहा हूँ।

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १०३२२) की फोटो-नकलसे।

२१८. प्रेमका नियम

एक भाईने मुझसे कहा है कि जहाँ मैं स्वराज्यवादियो, लिबरलो तथा अन्य लोगोको खुश करनेका प्रयत्न कर रहा हूँ वहाँ ऐसा लगता है कि अपरिवर्तनवादियोका त्याग करता जा रहा हूँ और मुझमे जो परिवर्तन हो रहा है, उससे वे चकित-से है। इन भाईका कहना है कि मैं अपरिवर्तनवादियोके दृष्टिकोणसे अपनी स्थिति बताऊँ और मेरे रवैयेमे जो परिवर्तन होता दीख रहा है, उसे समझाऊँ। उनका अनुरोध है कि बम्बईमे एक्सेलिसयर थिएटरकी सभामे मैंने सहयोग अथवा सत्याग्रहके जिस सौम्य पक्षकी रूप-रेखा बताई थी[2], उसकी स्पष्ट व्याख्या करूँ।

स्थितिको स्पष्ट करनेके लिए सबसे पहले तो मैं यह बता देना चाहता हूँ कि मेरे अपने विचारोमे कोई परिवर्तन नही हुआ है। अहिंसात्मक असहयोग और उससे फलित बहिष्कारोमे अब भी मेरा पूरा विश्वास कायम है। लेकिन अब मैं दिनके उजालेकी तरह साफ-साफ देख रहा हूँ (मगर उस दिन जुहू-तटपर नही देख पाया था) कि देशने कुल मिलाकर अहिंसाका मर्म और इसलिए उसके सामने जो असहयोग प्रस्तुत किया उसका मर्म भी नही समझा है। इसलिए मैं इस चीजको भी उतना ही साफ-साफ देख रहा हूँ कि यदि असहयोगको, उसके प्रभावकारी सिद्धान्त अहिंसाके बिना जारी रखा गया तो उससे देशकी हानि होगी। बहुत-कुछ हानि तो यह कर चुका है, क्यो कि इसके कारण देश परस्पर-विरोधी दलोमे विभक्त हो गया है। इन परिस्थितियोमें राष्ट्रीय कार्यक्रमके रूपमे असहयोगको कुछ कालके लिए स्थगित ही कर देना चाहिए। असहयोगका उद्गम सत्याग्रह है और सत्याग्रह और कुछ नही, प्रेम है। संसार प्रेमके नियमसे ही संचालित होता है—हम इस नियमको कोई दूसरा नाम भी दे सकते है, बस यह याद रखना है कि यह ऐसा तत्त्व है जो हमे एक-दूसरेके प्रति खीचता है और हमे बाँधकर एक बनाता है। मृत्युके रहते हुए भी जीवनका प्रवाह कायम है। ध्वंसका क्रम निरन्तर चल रहा है पर उसके बावजूद

१. यह २२ अक्तूबरको प्राप्त निम्नलिखित तारके उत्तरमें भेजा गया था: "सत्याग्रह निधिमें से वाइकोमके लिए एक हजार मासिक देनेकी सिफ़ारिश करें। तत्काल आवश्यक है।"

२. देखिए "भाषण: एक्सेल्सियर थियेटर बम्बईमें", ३१-८-१९२४।

सृष्टिका क्रम बना ही हुआ है। असत्यपर सत्यकी विजय होती ही है। प्रेम घृणापर विजयी होता ही है और ईश्वर शैतानके विरुद्ध सदा विजय पाता रहता है।

मैने जिस असहयोगकी कल्पना की थी, वह सबको प्रेम-सूत्रमे पिरोनेवाली चीज थी। लेकिन, काग्रेसकी भीतरी फूटसे और उससे भी ज्यादा हिन्दू-मुस्लिम वैमनस्यसे यह स्पष्ट हो गया है कि असहयोग पिरोनेवाली नही, बिखरानेवाली चीज साबित हुआ है। इसलिए अब मुझे इसे स्थगित करनेकी सलाह देकर और अपनी ओरसे पूरा समर्पण करके इसके सौम्य पक्षको दिखानेकी कोशिश करनी है। ऐसा करनेके लिए मुझे अपरिवर्तनवादियोको खुश करनेकी जरूरत नही है। उनका तो दावा है कि वे अहिंसा और उसके फलितार्थोको जानते-समझते है। उन्होने सब-कुछ छोडकर रचनात्मक कार्यक्रममें अपना विश्वास जमा रखा है। मै उस कार्यक्रममे रच-मात्र भी कमी नही करता। उसके विपरीत, मैं जो भी कदम उठा रहा हूँ, सबका उद्देश्य उसे बल देना ही है। हिन्दू-मुस्लिम समस्या सर्वोपरि महत्त्वका सवाल है। हम चाहते है कि इसके समाधानमे पूरे देशका लोक-मत तत्पर हो। अपना उद्देश्य पानेके लिए हमे थोडा झुकना है। हम व्यक्तिगत रूपसे असहयोगके छोटेसे-छोटे अशको भी कायम रखे, किन्तु साथ ही हमे चाहिए कि जो लोग इसमे विश्वास नही रखते, हम उनका मार्ग इसके लिए सुगम बनाये कि वे हमे और रचनात्मक प्रयत्नोमें देशको सहायता दे। गत चार वर्षोके अनुभवोने हमे राह दिखा दी है। हमने बहुत-कुछ पाया है, लेकिन खोया भी बहुत है। हमे इन उपलब्धियोको स्थायी बनाना है और जो-कुछ खोया है, उसे प्राप्त करना है। जन-जागृति हमारी सबसे बडी उपलब्धि है। इसे कायम रखना है। पारस्परिक वैर-वैमनस्यका उदय हमारी सबसे बडी क्षति है। हमे इस क्षतिको जल्दी ही पूरा करना है। जबतक हम असहयोगके उग्र पक्षको स्थगित नही करते, ऐसा नही हो सकता। अगर अपरिवर्तनवादी लोग किसी लायक है तो उनका कर्त्तव्य अपने अहभावको मिटाकर चुप-चाप काम करते जाना है। उन्हे शक्ति अथवा पद या नामके लिए झगडना नही चाहिए। परिणाम कुछ निकले या न निकले, उन्हे चुपचाप काम करते जाना चाहिए। अगर स्वराज्यवादी और लिबरल लोग काग्रेसमे शामिल हो जाये तो उन्हे अपने इन सहयोगी भाइयोकी मर्जीपर चलना चाहिए।

इसे करनेका तरीका दिखानेका सबसे अच्छा उपाय यह है कि मै स्वय यह करके दिखाऊँ। इसलिए अभी तो मै स्वराज्यवादियो और लिबरलोके सामने अपनी सामर्थ्य-भर अधिकसे-अधिक समर्पण करनेमे लगा हुआ हूँ। अपरिवर्तनवादियोके सामने समर्पित करनेको मेरे पास कुछ है नही, क्योकि ऐसा माना जाता है कि उनसे मेरा कोई मतभेद नही है।

मुझे किसी पक्ष-विशेषके आदमीके रूपमे नही रहना है और मै अपरिवर्तन-वादियोको भी ऐसा ही करनेकी सलाह देता हूँ।

स्वराज्यवादियोके सामने जो कठिन कार्य है, उसमें हमे बाधा नही डालनी है। जब कभी ऐसा प्रसग आये कि अपरिवर्तनवादियोके लिए तीव्र सघर्ष किये बिना बहुमतको अपने पक्षमे करना असम्भव हो जाये, उन्हे खुशी-खुशी और शोभनीय ढगसे स्वराज्यवादियोके सामने झुक जाना चाहिए। जहॉ-कही वे सत्ता या पदपर

हो वहाँ उनकी यह स्थिति मत पानेके कौशलके बलपर नही, बल्कि अपनी सेवाकी बदौलत ही होनी चाहिए। मत देनेवाले लोग तो है ही, लेकिन मत प्राप्त करना है तो याचना किये बिना प्राप्त कीजिए। क्या यह देख सकना बिलकुल आसान नही है कि सेवाके लिए न सत्ताकी आवश्यकता है, न पद-प्रतिष्ठाकी ? मै तो चाहता हूँ कि हममे से हर आदमी केवल देशका सेवक बन जाये। मैं चाहूँगा कि अपरिवर्तनवादी लोग ऐसा व्यवहार करे कि स्वराज्यवादी, लिबरल तथा अन्य सब उनकी आवश्यकता महसूस करे। लेकिन, वे ऐसा करे या न करे, मुझे तो अपने विश्वासके अनुसार बरतना ही है। ईश्वरने अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीकी पिछली बैठकमे मुझे तौलकर देखा और पाया कि मुझमें कमी है। मेरे अहकारने कहा कि स्वराज्यवादियोसे मुझे अभी और जूझना चाहिए। लेकिन, मेरा तृप्तिहीन सेवाभाव मुझसे कहता है कि मुझे न स्वराज्यवादियोका विरोध करना चाहिए, न लिबरलोका और न अग्रेजोका ही। मुझे हरएकको दिखा देना चाहिए कि मैं जो कहता हूँ, वही हूँ —— अर्थात् मैं हरएकका मित्र और सेवक हूँ। मेरा धर्म ईश्वरकी, और इसलिए मानवताकी सेवा है। लेकिन, अगर मैं एक भारतीयके नाते भारतकी और हिन्दूके नाते भारतीय मुसलमानोकी सेवा नही करता तो मैं न ईश्वरकी सेवा कर सकता हूँ, न मानवताकी। स्वेच्छासे सेवाका अर्थ है शुद्ध प्रेम। इसलिए अगले वर्ष मुझे इस बातके लिए अपनी शक्ति-भर पूरा प्रयत्न करना है कि अपने छोटेसे-छोटे काममे भी मैं अपने हृदयका सम्पूर्ण प्रेम उडेल सकूँ।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २३-१०-१९२४

२१९. तार : अबुल कलाम आजादको[1]

[२३ अक्तूबर, १९२४ या उसके पश्चात्]

मौ० अ० क०

कलकत्ता

मुहम्मद जानेमे असमर्थ। डा० महमूदसे कहे।

गांधी

अग्रेजी प्रति (एस० एन० १०४८९) की माइक्रोफिल्मसे।

१. यह जबलपुरसे सुन्दरलालका २३ अक्तूबरका तार प्राप्त होनेके बाद भेजा गया था। वह तार इस प्रकार था. "समझौतेकी कोशिश कर रहा हूँ। मौलाना अबुल कलाम आजादको तत्काल सीधे जानेके लिए या अगर यह न हो तो मौलाना मुहम्मद अली अथवा उतने ही प्रतिष्ठित किसी अन्य मुसलमानको भेजनेके लिए तार दें। अविलम्बनीय। तार द्वारा उत्तर दें।"

२२०. तार: वाइसरायके निजी सचिवको

२४ अक्तूबर, १९२४

वाइसरायके निजी सचिव
वाइसरीगल कैम्प

मेरे १६ तारीखके पत्रका[1] जवाब क्या मुझे तारसे भेज सकेंगे?

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १५९१२) की फोटो-नकलसे।

२२१. पत्र: सी० एफ० एन्ड्र्यूजको

२५ अक्तूबर, १९२४[2]

परमप्रिय चार्ली,

तुम्हारे स्नेह-सिक्त सन्देश प्रति दिन मिल रहे हैं। तुम्हें भी ऐसा मान लेना चाहिए कि मैं भी अपना स्नेह-सन्देश प्रति दिन भेजता ही हूँ। मैं बिलकुल ठीक हूँ। पत्र लिखते समय यग-परिवार मेरे पास ही है। मैं इस बंगलेमें आवश्यकता हुई तो नवम्बरके शुरूके भी कुछ दिनतक ठहरूँगा। रघुबीरसिंहने बहुत कृपा की है।

सस्नेह,

तुम्हारा,
मोहन

अंग्रेजी पत्र (जी० एन० २६२०) की फोटो-नकलसे।

१. देखिए "पत्र: वाइसरायके निजी सचिवको", १६-१०-१९२४।
२. डाककी मुहरसे; साधन-सूत्रमें "१९२५" है।

२२२. हिन्दू और मुसलमान

एकता सम्मेलन तो एकताका आरम्भ-काल ही है। उसके प्रस्ताव अपूर्ण, उसमे उपस्थित लोग अपूर्ण, सो उसका आरम्भ भी अपूर्ण ही रहा है। फिर भी यह सम्मेलन वहुत महत्त्वपूर्ण था। इसकी जडे गहरी जायेगी। इसके रोपे कोमल वृक्षकी रक्षा करना, उसे पानी सीचना हमारा काम है।

गहरा विचार करनेपर हमे दिखाई देगा कि यह जटिल प्रश्न एक ही तरहसे हल हो सकता है। कोई कानूनको अपने हाथोमे न ले। मै मानता हूँ कि वह सामनेवाला घर मेरा है, सिर्फ इतनेसे ही उसपर कब्जा करके बैठ जाना जगलीपन है। मुझे अपना हक पचायतमे या अदालतमे साबित करना चाहिए और पचके अथवा अदालतके निर्णयको शिरोधार्य करना चाहिए। जहाँ इस नियमका पालन नही होता, उस समाजका नाश होता है। यदि दोनो पक्ष इस सुनहले नियमके अधीन हो जाये तो फिर कुछ कहनेकी जरूरत ही नही रहती। परन्तु जहाँ एक पक्ष मार-पीट ही करना चाहता हो वहाँ भी यदि दूसरा पक्ष उक्त नियमका पालन करे तो इतना काफी है। अन्तमे उस पक्षकी हानि नही होगी, यह निश्चित बात है। फर्ज कीजिए कि मेरे घरपर एक तीसरे ही शख्सने कब्जा कर लिया। इस हालतमे किसी भी सुव्यवस्थित समाजमें पच लोग मुझे मेरा हक फिरसे वापस दिलायेगे ही। इससे घटिया किस्मके समाजमे यह काम अदालत करती है। पचोका दण्ड होता है लोक-मत, अदालतका दण्ड होता है कैदखाना या बन्दूक। हर प्रकारकी व्यवस्थामे मारपीट न करनेवालेको अपना हक फिरसे वापस मिल सकता है।

जबतक हम इस अनिवार्य नियमके अधीन न होगे तबतक हमारे बीच झगडे होते ही रहेगे, इसमे कोई शका न करे। और तबतक ऐसे झगडे होते रहेगे, तबतक शान्तिपूर्ण उपायोके द्वारा हम कभी स्वराज्य न ले सकेगे। इसे स्वयसिद्धि-सा ही समझिए। हो सकता है कि हिन्दू और मुसलमान दोनोमे से किसीको भी स्वराज्य दरकार न हो और स्वराज्यसे ज्यादा पसन्द झगडे ही हो। ऐसे लोगोको तो समझाना ही बेकार है। परन्तु जो स्वराज्य चाहते है उनका काम तो पूर्वोक्त नियम स्वीकार किये विना चल ही नही सकता। हम लोगोको, जिन्हे कि स्वराज्यके विना जीवित रहना कठिन है, मारपीटके जगली कानूनके अधीन कभी भी नही होना चाहिए।

परन्तु पचायतमे या अदालतमे जानेके दृढ निश्चयके बावजूद कुछ ऐसे प्रसग आ सकते है, जब मनसे या बेमनसे मार-पीटमे शरीक होना अथवा भाग जाना या शान्तिके साथ मृत्युको स्वीकार करना जरूरी हो जाता है। मै भजन-कीर्तन करता हुआ मसजिदके सामनेसे निकलूँ और मुझपर कोई हमला करे तो मुझे क्या करना चाहिए? मेरे ही घरमे कोई कब्र बनाने लग जाये तो मुझे क्या करना चाहिए अथवा कोई गरीब मुसलमान खानगी तौरपर अपने घरमे गो-वध करे और उसपर हिन्दू

लोग टूट पड़े तो उसे क्या करना चाहिए? इन तीनो मिसालोमे इतना समय नही है कि कानूनकी राह देखी जाये। तब सम्बन्धित लोगोको क्या करना उचित है?

यदि वे शान्तिके साथ मरना जानते हो तो यह उत्तम उपाय है। पंचोसे निर्णय करानेका उपाय भी इस उपायकी बराबरी नही कर सकता। परन्तु सभी लोग ऐसा बलिदान नही कर सकते। तब क्या उन्हे मौकेपर से भाग जाना चाहिए? यह तो कायरका लक्षण है। तब आम तौरपर एक ही इलाज रह जाता है। ऐसे समय उन लोगोको मारपीट करके भी अपनी रक्षा करनी ही चाहिए। सुव्यवस्थित तन्त्रमे यह हक हरएक व्यक्तिको है और होना भी चाहिए।

परन्तु ऐसे अवसर क्वचित् ही आते हैं। अच्छे आदमीकी सौमे शायद एक-आध बार ही ऐसी कसौटी होती है। सामान्यतया देखा यह गया है कि जो आदमी शान्त बैठा रहता है, उसकी कसौटी ईश्वर नही करता। यदि हम निष्पक्ष दृष्टिसे देखेंगे तो सौमे निन्यानवे उदाहरण हमे ऐसे दिखाई देंगे जहाँ कि मारपीटमे दोनो पक्ष थोड़े-बहुत जिम्मेदार होते हैं। इन तमाम मिसालोमे यदि एक पक्ष भी दोष रहित रहनेका निश्चय करे तो रह सकता है और जो ऐसा दोष-रहित रह जायेगा उसीकी जीत समझिए।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २६-१०-१९२४

२२३. तार: वाइसरायके निजी सचिवको[1]

२७ अक्तूबर, १९२४

वाइसरायके निजी सचिव
वाइसरीगल कैम्प

तारके लिए धन्यवाद। मेरा विचार दिल्लीसे अपने साथियोके साथ १ नवम्बरको अथवा उसके बाद यथासम्भव शीघ्र रवाना होनेका है। उसके बाद मैं दो या तीन दिन रावलपिंडीमें ठहरकर कोहाट जाना और वहाँ तीन-चार दिन रहना चाहता हूँ।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १५९१२) की फोटो-नकलसे।

१. यह वाइसरायके निजी सचिवके २६ अक्तूबरके निम्न तारके जवाबमें भेजा गया था. "आपने अपने १६ अक्तूबरके पत्रमें यह नहीं बताया है कि आप कोहाट कब जाना चाहते हैं। कृपा करके तार द्वारा अपना उत्तर भेजें।"

२२४. पत्र: लाला लाजपतरायको

२७-२८ अक्तूबर, १९२४[1]

प्रिय लालाजी,

आपने शायद इस २४ तारीखका 'मिलाप' पढा होगा। इसमे एक लडकीका बयान छपा है, जिसमे उसने अली भाइयोपर अपराधका आरोप किया है। वह बयान मैंने मौलाना मुहम्मद अलीको दिखा दिया। उनके उत्तरकी एक नकल साथ भेज रहा हूँ। क्या आप इस अखबारके सम्पादकसे मिलकर यह पूछेगे कि उनके पास इस बयानमें लगाये गये आरोपोको सिद्ध करनेके लिए क्या और भी प्रमाण है? मेरे विचारसे उन्हे वक्तव्यको छापनेसे पहले उसकी एक नकल मौलाना साहबको भेज देनी चाहिए थी। मेरे विचारसे अब जो करना चाहिए वह यह है कि सम्पादक महोदय सम्बन्धित लोगोसे इन आरोपोको या तो सिद्ध करनेके लिए कहे या जहाँतक जरूरी हो वहाँतक उन्हे वापस ले लेनेको कहे। पचोके रूपमें बयानकी सचाईकी जाँच करने दे तो हमे इस मामलेको अपने हाथमे ले लेना चाहिए। यदि यह बयान, अली भाइयो और दूसरोपर लगाये गये आरोपोको छोडकर भी, अन्य बातोमे काफी हदतक सही हो तो भी यह मामला ऐसा है जिसकी जाँचकी सुविधा दी जाये तो हमें अवश्य ही इसकी जाँच करनी चाहिए। अगर आप मुझसे सहमत हो और 'मिलाप' के सम्पादक हमारी सहायता करे तो मै बोर्डके सदस्योसे बातचीत करूँगा।

मैंने अपने और अपने साथियोके लिए कोहाट जानेकी अनुमति माँगी है। यदि अनुमति मिल गई तो मै पहली नवम्बरके आसपास यहाँसे रवाना होना चाहता हूँ। क्या आप चल सकते है? यदि आपका स्वास्थ्य इस योग्य न हो तो आप किसका नाम सुझाते है? यदि आपके आनेसे आपका स्वास्थ्य बिगडनेकी तनिक भी आशका हो तो मै नही चाहता कि आप आये। मेरा अन्तर्मन तो कहता है कि मै आपसे इस बातके लिए कहूँ ही नही, लेकिन चूँकि ऐसी खबर है कि आप इस समय पहलेसे ठीक है, इसलिए मुझे लगता है कि आपसे निवेदन तो कर ही दूँ।[2] दो-तीन दिन रावलपिंडीमें और इतने ही दिन कोहाट भी ठहरनेकी सोच रहा हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

अग्रेजी पत्र (एस० एन० १५९३७) की फोटो-नकलसे।

१ देखिए "पत्र: लाजपतरायको", २८-१०-१९२४।

२. मूल वाक्यमें कुछ शब्द पढ़े नहीं जा सके हैं। उन्हें अनुमानसे यथास्थान भरकर इसका अनुवाद किया गया है।

२२५. पत्र : देवदास गांधीको

दीपावली [२७ अक्तूबर, १९२४][1]

चि० देवदास,

तुम्हारा पत्र मिला। श्री कैलनबैकका तार नही मिला। तुमने आजके पत्रमे जो-कुछ लिखा है, वही तुम्हारे पिछले पत्रमे भी था। तुम 'यग इडिया' के लिए जो टिप्पणियाँ चाहते हो, उन्हे भेजनेके लिए मै अभी भी तैयार नही हो पाया हूँ। मेरा ज्यादा समय तो शरीरकी सार-सँभालमे ही चला जाता है। पाँच बार खाता हूँ, जिसका मतलब हुआ ढाई घटे। १ घटा सोना, १ घटा मालिश कराना, २ घटे घूमना, आधा घटा नहाना — इस तरह सात घटे तो इसी प्रपचमे निकल जाते है। फिर यह मान्यता भी है कि रातको कोई काम नही करूँ, उसे मै आज पहली बार तोड रहा हूँ। सवेरेके सात बजेतक तो बिस्तरमे ही पड़ा रहता हूँ। अब बताओ कि कामके लिए कितने घटे बचे? २१ दिन उपवासके पश्चात् मेरी स्थिति बालको-जैसी हो गई जानो। मुझे अपनी देख-भाल इसी तरह होने देनी पड रही है जिस तरह बच्चोकी की जाती है। इसके बावजूद उपवास मुझे प्रिय है, उसके बिना जीना दुश्वार हो जाता।

बापूके आशीर्वाद

देवदास
सत्याग्रह आश्रम

गुजराती पत्र (जी० एन० २१२७) की फोटो-नकलसे।

२२६. तार : अब्दुल बारीको[2]

[२७ अक्तूबर, १९२४ या उसके पश्चात्]

मौलाना अब्दुलबारी साहब
फिरगी महल, लखनऊ

आपका तार मिला। कुछ विश्वसनीय गवाह यहाँ भेजे जाने चाहिए।

गांधी

अग्रेजी प्रति (एस० एन० १०४९२) की माइक्रोफिल्मसे।

१. डाककी मुहरसे।

२. यह अब्दुल बारीके २७ अक्तूबरके तारके जवाबमें भेजा गया था। इस तारमें अब्दुल बारीने लखनऊमें हिन्दू-मुस्लिम तनावसे सम्बन्धित एक मामलेके बारेमें गवाही लेनेकी जरूरत बताई थी और गांधीजीसे पूछा था कि क्या वे गवाही लेना चाहेंगे।

२२७. तार : वाइसरायके निजी सचिवको[1]

[२८ अक्तूबर, १९२४]

तारके लिए धन्यवाद। यद्यपि मैं वाइसराय महोदयके निर्णयको मान लेता हूँ फिर भी मैं यह कहना चाहता हूँ कि रावलपिंडीमें पड़े हुए हिन्दू शरणार्थियोंको कोहाट जानेके लिए तबतक उत्साहित करनेका मेरा कोई इरादा नहीं था जबतक कोहाटके मुसलमान प्रसन्नतापूर्वक उनका स्वागत करनेके लिए तैयार और उत्सुक न हों। यदि मुझे कोहाट जानेकी अनुमति दे दी जाती तो मेरा विचार यह था कि अपने मुसलमान मित्रोंकी सहायतासे मैं मुसलमानोंके साथ अपने मित्रतापूर्ण सम्बन्धोंका, जो मेरा विश्वास है कि मेरे और इनके बीच हैं, उपयोग एक प्रेमपूर्ण समझौता करवानेके लिए करता। मेरा खयाल यह था और अब भी है कि कोहाटमें दोनों जातियोंमें हार्दिक एकताकी स्थापना अधिकारियोंकी अपेक्षा गैर-सरकारी लोग अधिक अच्छी तरह करा सकते हैं। अधिकारी चुपचाप कई गैर-सरकारी तरीकोंसे इस काममें निस्सन्देह सहायता दे सकते हैं। किन्तु मेरा अबतकका सतत अनुभव यह है कि अधिकारी लोग दोनों पक्षोंको एक-दूसरेपर प्रहार करनेसे तो रोक सकते हैं, पर पारस्परिक शत्रुताकी भावना दूर करके उनमें फिरसे मित्रता नहीं करा सकते। चूँकि मैंने लोगोंको यह विश्वास दिलाया था कि मैं जल्दी ही कोहाट जाऊँगा इसलिए यदि वाइसराय महोदयकी अनिच्छा न हो तो मैं यह पत्र-व्यवहार प्रकाशित करना चाहता हूँ।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १५९१२) की फोटो-नकल तथा **यंग इंडिया**, ३१-१०-१९२४ से भी।

१. निजी सचिवके २८ अक्तूबरके तारके उत्तरमें। तारमें कहा गया था कि लॉर्ड रीडिंगकी रायमें गांधीजीका कोहाट जाना समझदारीका काम नहीं होगा।

२२८. पत्र : लाला लाजपतरायको

(पिछले पत्रके सिलसिलेमे[1])

२८ अक्तूबर, १९२४

प्रिय लालाजी,

आपको पहला पत्र लिखनेके बाद वाइसरायके निजी सचिवने मुझे सूचित किया है कि कोहाटकी वर्तमान अवस्थाको देखते हुए मुझे वहाँ जानेकी अनुमति नही दी जा सकती। मैं सारे पत्र-व्यवहारको शीघ्र ही प्रकाशित करनेकी आशा करता हूँ। अब मुझे क्या करना चाहिए? मेरा खयाल है, अब रावलपिंडीमे मेरा कोई उपयोग नही रह गया। मैं बेचारे शरणार्थियोको कोई तसल्ली तो दे नही सकता। मेरे सामने अब सवाल यह है कि हिन्दू-मुस्लिम प्रश्नके सम्बन्धमे मुझे पंजाब अभी जाना चाहिए या बादमें, इसका निर्णय आप ही करें।

बगालमे स्थिति कितनी विषम है। पता नही ३० तारीखको यहाँ स्वराज्य परिषद्की बैठक हो रही है या नही। मुझे अबतक तो मोतीलालजीका कोई पत्र नही मिला है। श्री दास कल कलकत्ता चले गये।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अग्रेजी पत्र (एस० एन० १५९३८) की फोटो-नकलसे।

२२९. पत्र : वसुमती पण्डितको

कार्तिक सुदी २ [२९ अक्तूबर, १९२४][2]

चि० वसुमती,

तुम्हारा पत्र मिला। मेरे हजारो आशीर्वाद सदा तुम्हारे साथ हैं। मैं तुम्हारे लिए सुखकी कामना नही करता, लेकिन यह कामना अवश्य करता हूँ कि तुममें दु खको भी सुख माननेकी शक्ति आये। सुख किसे कहना चाहिए, यह कौन जानता है। जो दु.ख प्रतीत होता है, कौन जाने, वही सुख हो। इस भावका एक श्लोक है, जिसका अर्थ यह है कि विपत्ति विपत्ति नही है, सुख सुख नही है, ईश्वरका

१. देखिए "पत्र : लाजपतरायको", २७/२८-१०-१९२४।

२. डाककी मुहरसे। कार्तिक सुदी २, वि० सं०, ३०-१०-२४ को पड़ी थी। इसलिए यह गलत मालूम पड़ती है। यहाँ "कार्तिक सुदी १" होना चाहिए था।

विस्मरण ही विपत्ति है और उसका स्मरण ही सुख है।[1] तुम्हे वही सुख प्राप्त हो। तुम्हे हजीरा जानेका विचार छोडना नही है। अगर वहाँ पाखाना साफ न होता हो तो हजीरा जानेका विचार करना ही ठीक है। तुम लिखना। फिर उसीके मुताबिक व्यवस्था करूँगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

अगर मै रामदासका पता अंग्रेजीमे लिखूं तो उसके नामके साथ "स्क्वायर" जोडूंगा। लेकिन, तुम देखोगी कि आज मैने "श्रीमती" शब्द छोड दिया है।

वह शब्द "निरिक्षण" नही, 'निरीक्षण' है।

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ४५९) से।
सौजन्य वसुमती पण्डित

२३०. सन्देश : संयुक्त प्रान्त राजनीतिक परिषद्, गोरखपुरको[2]

दिल्ली
३० अक्तूबर, १९२४

बगालमे सरकारने जो राजनीति अब ग्रहण की है उससे सबको दुःख हो रहा है, होना ही चाहिए। परन्तु वह दुःख राजनीतिकी अराजकताके कारण नही है, बल्कि उसका शीघ्र उत्तर देनेकी हमारी अशक्तिके कारण है। मुझे आशा है और मै चाहता हूँ कि हम इस सकटके समय धैर्यका त्याग न करे। क्रोध और अधैर्यके वश होकर हम सच्चे उपायकी खोज न कर सकेंगे, ऐसा मेरा दृढ मन्तव्य है। अमली कार्यका उत्तर अमली कार्य ही हो सकता है। हम दावा करते है कि सरकारकी अशान्त नीतिका उत्तर हम शान्त नीतिसे ही दे सकते है। अशान्त कार्यका उत्तर शान्त कार्यसे ही दे सकते है। यदि यह बात सत्य है तो हमे सोचना चाहिए कि हम किस तरह शान्त कार्यको कर सकते है। थोडा खयाल करके ही हम देख सकते है कि हमारे अमली कार्यमे बाधा डालनेवाली सबसे बडी वस्तु है, हिन्दू-मुसलमानके बीचमे अन्तर पड जाना, सर्व-साधारणको एकत्र करनेमे बाधा डालनेवाली वस्तु चरखा और खद्दरके प्रति हमारी उदासीनता और हिन्दू-जातिको नष्ट करनेवाली वस्तु अस्पृश्यता है। इस त्रिदोषको जबतक हम नही मिटाते तबतक मेरी अल्पमति मुझको यही

१. मूल श्लोक इस प्रकार है :
विपदो नैव विपद सम्पदो नैव सम्पद।
विपद् विस्मरण विष्णो सम्पद् नारायणस्मृति ।

२. यह 'सरकारी अराजकताकी दवा' शीर्षकसे छपा था।

कहती है कि हमारे भाग्यमे सरकारी अराजकता, हमारी परतत्रता और हमारी कगाली बढी ही हुई है। इसलिए मैं कौमको कोई दूसरी सलाह नही दे सकता। अगर हम इन तीन कार्योमे सफलता प्राप्त करे तो जो शक्ति हमने सन् १९२०–२१ मे दिखाई थी उससे भी प्रचण्ड शक्ति आज दिखा सकते है और बगालकी ही क्या, सारे भारतवर्षकी विपत्तिको हम दूर कर सकते हैं।

मोहनदास गांधी

हिन्दी नवजीवन, २-११-१९२४

२३१. पत्र : मोतीलाल नेहरूको

दिल्ली
३० अक्तूबर, १९२४

प्रिय मोतीलालजी,

जबसे वाइसराय महोदयने यह धडाका किया है, मै बराबर यही सोचता रहा हूँ कि इस परिस्थितिमे हम क्या कर सकते है और अपनी लाचारीके भानने मुझे बेचैन कर दिया है। यही हमारा निष्कर्ष है। हमे उतावली या क्रोधमे कुछ नही करना चाहिए। इसलिए अभी तो हमे इस तूफानको अपने सिरपर ही झेलना है। कुछ दिनोके लिए हमे सिर्फ अपने विचार प्रकट करते रहनेसे पुराने तरीकेको फिरसे अपना लेना चाहिए और भारतका समस्त जनमत इस बातपर केन्द्रित करना चाहिए कि सरकार बिलकुल ही मनमाने तरीकोसे काम ले रही है। इसलिए हमे इस सिद्धान्त-पर ही प्रहार करना चाहिए कि सरकार असाधारण तरीकोसे काम ले सकती है। इस उद्देश्यको ध्यानमे रखते हुए हमे सरकारसे १८१८ के विनियम ३ को भी रद करनेको कहना चाहिए। अगर सरकार यह कहती हो कि सरकारको असाधारण परिस्थितियोमे असाधारण अधिकारोकी जरूरत होती है तो हमारा कहना यह है कि ये अधिकार वह निर्वाचित प्रतिनिधियोकी सम्मतिसे ही प्राप्त कर सकती है। मै जानता हूँ कि इतना कर पाना भी हमारे लिए कठिन है और यह बात मुझे बहुत खटकती है। लेकिन, अभी तो मुझे और कोई रास्ता दिखाई नही देता।

इतना तो जो-कुछ अखिल भारतीय पैमानेपर करना है, उसके बारेमे। अब, अगर मुझे आपका अर्थात् व्यक्तिश आपका और स्वराज्यवादियोका साथ मिल जाये तो मै कार्य समिति या अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीसे यह कहूँ कि वह, जिन तीन वस्तुओकी बात हुई है, उन्हीके सम्बन्धमे जमकर प्रयत्न करे। अगर काग्रेस सुबद्ध तथा अनुशासित हो जाये तो उसके बलपर मै फिर सरकारकी कार्रवाईका जवाब जनताकी कार्रवाईसे देनेकी कोशिश करूँ। लेकिन, जबतक ऐसा नही होता, जबतक हिन्दू और मुसलमान एक मत नही होते और जबतक हम खादी तथा अस्पृश्यताके सम्बधमे कुछ ठोस कार्य करके नही दिखाते तबतक मुझे तो कारगर तरीकेसे कोई

प्रत्यक्ष कार्रवाई कर सकनेकी सम्भावना नही दिखाई देती। बगालकी गिरफ्तारियोके समयसे ही मेरे मनमे बार-बार यह विचार आ रहा है कि अगर स्वराज्यवादियोने मेरे प्रस्तावोका उत्साहपूर्वक समर्थन नही किया तो मुझे काग्रेससे अलग हो जाना चाहिए। मै तो बस ऐसा सुबद्ध सगठन तैयार करना चाहता हूँ जो हर पुकारपर उत्साहके साथ उठ खडा हो। यह सगठन चाहे जितना छोटा हो, मुझे इसकी परवाह नही है। दूसरी तमाम अहिंसात्मक प्रवृत्तियाँ चालू रहे। उनकी उपयोगिता मै एक हदतक समझ सकता हूँ। लेकिन मेरा निश्चित मत है कि अगर कोई व्यक्ति एक अनुशासित और प्रभावकारी सगठन तैयार करनेकी ओर ध्यान नही देता तो उन प्रवृत्तियोसे कोई लाभ होनेवाला नही है। मुझे यह सोच-सोचकर बडा दुःख और अपमानका अनुभव होता है कि आज हम सरकारकी चुनौतीका कोई कारगर जवाब नही दे सकते, मेरा खयाल है, आप मुझसे जो-कुछ जाननेकी अपेक्षा रख सकते है, मैने सब बता दिया है। मै आपको निम्नलिखित तार भेज रहा हूँ[1]

जब दास साहब दिल्लीसे गुजर रहे थे, उन्हे मैने एक छोटा-सा पत्र भेजा था। आप उनसे कह दे कि मै दिल्लीमें कुछ इस कारण नही पडा हुआ हूँ कि मुझे यहाँ से निकलनेकी इच्छा नही है। बात दरअसल यह है कि इससे पहले मै अखबार देखता ही नही था। लेकिन गिरफ्तारियोके बादसे मेरी नजरमे जो भी अखबार आते है, सबमे उनसे सम्बन्धित एक-एक बातको मै बडी उत्सुकतासे पढता और सुनता हूँ।

आप नागपुर जा सके, इस बातसे मुझे बडी प्रसन्नता हुई और यह जानकर तो और भी कि आपने दोनो पक्षोको अपनी और मौलाना साहबकी पचायत स्वीकार करनेको राजी कर लिया।

आशा है आप सकुशल होगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

१. साधन-सूत्रमें नहीं दिया गया।

२३२. पत्र : गंगाबहन वैद्यको

कार्तिक सुदी २ [३० अक्तूबर, १९२४][1]

पूज्य गगाबहन,

मैं बराबर आपको लिखनेकी सोचता रहा, लेकिन लिख नही पाया। खोई हुई शक्ति प्राप्त करनेमे मैं इतना जुट गया हूँ। आपके दु खमे पूरा हिस्सा बँटाना चाहता हूँ। आप जो ज्ञान और शक्ति प्राप्त करना चाहती है, उसमे पूरी मदद देनेकी मेरी इच्छा है। अधीर तो न ही हो। वातावरण अच्छा हो तो कुछ ज्ञान और शक्ति तो जाने-अनजाने, अनायास ही मिल जाती है। आपका समाचार चि० देवदास और चि० मगनलाल भेजते ही रहते हैं।

इस वर्ष आपकी सारी शुभेच्छाएँ पूरी हो, इसके लिए आपको मेरा बहुत-बहुत आशीर्वाद।

बापू

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ६०३९) से।
सौजन्य : गगाबहन वैद्य

२३३. पत्र : देवदास गांधीको

कार्तिक सुदी २ [३० अक्तूबर, १९२४]

चि० देवदास,

स्वामीने शिकायत की है कि तुम अपने स्वास्थ्यका पूरा खयाल नही रखते। मैं चाहता हूँ, तुम शरीरकी सार-सँभाल करते हुए अपना काम करो। चिन्ता तो बिलकुल नही करना।

पूज्य गगाबहनका पत्र दे देना। मन तो होता है कि बहुत लिखूँ, लेकिन जबतक शरीरकी खास सार-सँभाल करनी है, तबतक ज्यादा तो लिख ही नही सकता। वाइसरायकी ओरसे अस्वीकृति[2] आ गई है, इसलिए अगर मैं वहाँ तुरन्त पहुँच जाऊँ तो कोई आश्चर्य नही।

अब मेरा घूमने जानेका समय हो गया है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (जी० एन० २०४७) से।

१. खोई हुई शक्तिकी पुन. प्राप्तिके उल्लेखसे प्रकट होता है कि पत्र सन् १९२४ में उपवासके बाद लिखा गया होगा।

२. कोहाट जानेकी अनुमति माँगी थी, उसकी अस्वीकृति।

२३४. पत्र : मणिबहन पटेलको

कार्तिक सुदी २ [३० अक्तूबर, १९२४][1]

चि० मणि,

तुम्हारा पत्र मिला। अधिक बार लिखो तो बहुत अच्छा।

बापूको[2] आज लिखा है। चिन्ता छोड देनेको कहा है।

तुम फिर हजीरा जानेका विचार नही करोगी? पास होनेके लिए बधाई चाहिए क्या? चाहिए तो समझ लेना, बधाई दे दी। डाह्याभाई एक विषयमे[3] असफल हो गया। कोई बात नही। असफल होनेका अर्थ है, उस विषयमें अधिक प्रवीण बनना। असफल होनेवाले विद्यार्थी अकसर निराश हो जाते हैं। यह भूल है। जो आलसी हो या जिनकी नजर नौकरीपर हो वही निराश हो सकते हैं। जो अध्ययनशील हैं उनके लिए तो असफलता अधिक प्रयत्नका सुअवसर होती है।

बापूके आशीर्वाद

चि० मणिबहन
मार्फत — वल्लभभाई पटेल
खमासा चौकी, अहमदाबाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो ४ — मणिबहेन पटेलने

२३५. दो दृश्य

जब मैं १९२१ मे पुरी गया था, वहाँ मुझे कई ऐसी चीजे देखनेको मिली, जिन्हे मैं आसानीसे भूल नही सकता। लेकिन, उनमे से दो ऐसी थी, जिन्हे मैं कभी नही भूल सकता। एकका खयाल तो मेरे मनमे दिन-रात बना रहता है।

उन दिनो पुरीमे एक बडे परोपकारी पुलिस सुपरिंटेंडेंट थे। वे एक अनाथालय चलाते थे। उन्होंने मुझे वह अनाथालय दिखाया। उसमे बहुत-से स्वस्थ, प्रसन्न और हँसमुख बच्चे थे। वे तरह-तरहके कामोमे लगे हुए थे। कोई चटाई बुन रहा था तो कोई टोकरी बना रहा था, कोई कात रहा था तो कोई कपडा बुन रहा था। सुपरिंटेंडेंटने मुझे बताया कि वे सबके-सब अकाल पीडितोके बच्चे थे और

1. साधन-सूत्रमें तिथि १० नवम्बर, १९२४ दी गई है। लेकिन कार्तिक सुदी २, ३० अक्तूबर, १९२४ को पडी थी।

2. सरदार वल्लभभाई पटेल, मणिबहनके पिता।

3. गुजरात विद्यापीठकी स्नातक परीक्षा।

उनमें से कुछके शरीरमे तो, जब उन्हे लाया गया था, हड्डी-चमड़ीके अलावा और कुछ रह ही नही गया था।

इसके बाद वे मुझे उस पवित्र पुरातन मन्दिरके बिलकुल पासके एक खुले क्षेत्रमे ले गये, जहाँ पुरीके इर्द-गिर्दके बारह मीलके भीतरके इलाकेमे रहनेवाले अकाल-पीडित लोग इकट्ठे किये गये थे। व्यवस्थाके लिए उन्हे पक्तियोमे बाँट दिया गया था। उनमे से कुछकी जाने तो बेशक गुजरातियोके दान और अमृतलाल ठक्करकी प्रेमपूर्ण सेवाके कारण ही बची थी। ठक्करने गुजरातियोसे प्राप्त पैसेसे चावल खरीदकर इनके बीच बाँटा था। उनकी प्राण-शक्ति क्षीणसे-क्षीणतर होती जा रही थी। वे निराशाकी जीती-जागती तसवीरे थे। आप उनकी पसलियाँ आसानीसे गिन सकते थे, एक-एक नस साफ देख सकते थे और माँसपेशियाँ और माँस तो दिखाई ही नही दे रहा था। जो-कुछ देख सकते थे, वह सिर्फ झुलसी, झुर्रीदार चमडी और हड्डियाँ ही थी। उनकी आँखोमे कोई चमक नही थी। ऐसा लगता था, मानो वे मरना चाहते हो, उन्हे जो मुट्ठी-भर चावल मिल जाता था, उसके अलावा और किसी चीजमे उनकी कोई रुचि नही थी। पैसेके लिए काम करनेको भी वे तैयार नही थे। शायद प्रेमवश तैयार हो जाते। कुछ ऐसा लगता था, मानो वे खाने और जीनेकी जिल्लत उठानेको भी तभी तैयार थे, जब आप स्वय उन्हे मुट्ठी-भर चावल दे देते। ये पुरुष और स्त्रियाँ, हमारे ये भाई और बहन, तिल-तिलकर घुलते हुए धीरे-धीरे मौतके मुँहमे जा रहे है — यह मेरे जानते सबसे ज्यादा दु खद घटना है। उनकी किस्मतमे सतत उपवास ही बदा हुआ है और जब वे कभी-कभी मुट्ठी-भर चावल पाकर अपना उपवास तोडते है तो ऐसा लगता है मानो वे, हम जो आरामकी जिन्दगी जी रहे है, उसका उपहास कर रहे हो।

सुपरिटेडेटसे मैने पूछा "इन लोगोको अनाथोकी तरह क्यो नही रखा जा सकता?" "वे काम नही करेगे और न वहाँ रहनेको ही तैयार होगे"— यह था सुपरिटेडेटका जवाब। वे शायद इतना और कह सकते थे कि अगर ये हजारो स्त्री-पुरुष काम करनेको तैयार भी हो जाये तो भी इन सबके लिए किसी अनाथाश्रममे व्यवस्था कर सकना मेरे लिए सम्भव नही है।

चिरकालसे भूखकी ज्वालामे तड़पते रहने और तिल-तिलकर मरनेकी यह समस्या भारतके अलावा दुनियाके और किसी देशमे नही है। मनुष्यको उसकी समस्त जातीय गरिमासे वचित करनेकी यह प्रक्रिया और कही नही दिखाई देती। इसलिए इसका समाधान भी मौलिक होना चाहिए। इस समाधानको ढूँढनेके लिए हमे इस भारी दुर्घटनाके कारणोका पता लगाना होगा। ये लोग भूखकी ज्वालामे इसलिए तडप रहे है कि बाढ अथवा वर्षाकी कमीके कारण उडीसामे वर्षोसे अकालकी स्थिति है, उनके पास कठिन समयमे सहारा देनेवाला और कोई धधा नही है। इसलिए वे बराबर बेकार रहते है। यह बेकारी इतने दिनोसे चली आ रही है कि उन्हे बेकार रहनेकी आदत पड गई है। उडीसाके हजारो लोगोके लिए बेकारी और भुखमरी एक आम स्थिति हो गई है। लेकिन, जो बात उडीसाके साथ लागू होती है, वही बात कुछ कम पैमानेपर भारतके दूसरे बहुत-से हिस्सोपर भी लागू होती है।

हम वाढको रोकनेके उपाय खोज सकते हैं। लेकिन उसमे वर्षो लगेगे। हम लोगोको खेती-वाडीके अच्छे तरीकोसे काम लेनेको भी प्रेरित कर सकते है। लेकिन, उसमे और अधिक समय लगेगा और जव हम वाढोको रोक देगे और करोडो लोगोके वीच खेतीके आधुनिक तरीकोका प्रचार कर देगे तव भी अगर किसान काम करना चाहेगे तो उसके लिए उनके पास काफी समय शेप रह जायेगा। लेकिन, इन सुवारोमे कई पीढियोका समय लग जायेगा। इस वीच करोडो भूखे लोग भूखके भेडिएको अपने दरवाजोसे दूर कैसे रखे? उत्तर है—चरखेके वलपर। लेकिन, तव समस्या यह आती है कि जो लोग काम करनेको तैयार ही नही है, उनसे चरखा भी कैसे चलवाया जाये? उत्तर है—हम कार्यकर्त्ताओके प्रयत्नोसे, शिक्षित और अच्छे खाते-पीते लोगो द्वारा उसे अपना लेनेके जरिये। जब ऐसे हजारो लोग, जिन्हे खुद अपने लिए कताई करनेकी जरूरत नही है, प्रत्यक्ष और सच्चे उदाहरण प्रस्तुत करेगे तो भूखे स्त्री-पुरुप भी सहज ही उनका अनुकरण करनेको प्रेरित होगे। इसके अलावा, जब हम खुद कताई करना शुरू करेगे तभी हमे ऐसे पर्याप्त कुशल कतैये मिल सकेगे जो आवश्यक प्रारम्भिक प्रशिक्षण दे सकेगे, सही ढँगके चरखे चुन सकेगे, मरम्मत आदि कर सकेगे, और अन्तमे, विना कोई पारिश्रमिक लिये प्रेम और सेवा-भावसे कताई करनेके कारण खादी भी अवश्य सस्ती हो जायेगी। हम अधिक अच्छे किस्मका सूत भी कात सकेगे। इसलिए यदि हम अपने अकाल-पीडित भाइयोसे तादात्म्य स्थापित करना चाहते हैं तो हम कताई सदस्यतापर आपत्ति करनेके वजाय उसे सर्वसाधारणकी निरन्तर वढती हुई कष्टकर गरीवीकी समस्याके समाधानका सवसे अचूक तरीका मानकर उसका स्वागत करेगे।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ३१-१०-१९२४

२३६. हितोंका संघर्ष

आखिर जिसकी आशका थी वह होकर रही। वाइसरायने जो वम विस्फोट किया है, उसका पूर्वाभास हमे अग्रेजी अखवारोसे मिल गया था। यह उनकी ओरसे हिन्दुओके नव-वर्षपर वगालको और वगालके माध्यमसे सारे देशको दिया गया उपहार है। वाइसराय महोदयके इस कदमसे हमे कोई आश्चर्य अथवा भय नही होना चाहिए। रौलट अधिनियम मर चुका है, लेकिन उसके पीछे जो भावना थी, वह तो वरावर तरोताजा वनी हुई है। जवतक अग्रेजोके हित भारतीय हितोके विरुद्ध हैं तवतक वैप्लविक अपराध या उनका खतरा कायम ही रहेगा और जवतक यह स्थिति वनी हुई है तवतक जवावमें रौलट अधिनियमके नये-नये सस्करण सामने आते ही रहेगे। अहिंसात्मक असहयोग इसका एक उपाय था। लेकिन, हममे इसे दीर्घकालतक और काफी दूरतक आजमाकर देखनेका धैर्य नही था। अव हम इसपर विचार करे

कि अंग्रेजोके हित भारतीयोके हितोके विरुद्ध कैसे है। लकाशायरकी मिले भारतकी आर्थिक प्रगतिके लिए सबसे अधिक बाधक है। स्पष्ट है कि भारतके हितका तकाजा है कि वह लकाशायरका या कोई भी अन्य विदेशी कपडा या सूत गज-भर भी न मँगाये। लेकिन, लकाशायरके मिल-मालिक राजी-खुशीसे और बिना सघर्षके भला इस अनैतिक व्यापारको क्यो छोडेगे ? मै इसे अनैतिक इसलिए कहता हूँ कि इसने भारतीय किसानोको बरबाद कर दिया है और उन्हे भुखमरीके कगारपर लाकर छोड दिया है। भारतको मोटी-मोटी तनख्वाहे पानेवाले अंग्रेज अधिकारियोके एक विशाल वर्गका असह्य खर्च उठाना पडता है। स्पष्टत उसके हितका तकाजा है कि ये अधिकारी चाहे जितने भी कार्य-कुशल हो, इनके स्थानपर भारतीयोको ही रखा जाये, चाहे वे कितने भी अकुशल क्यो न हो। आदमी उधारके फेफडेसे साँस नही ले सकता। भारत अंग्रेज सिपाहियोके लिए प्रशिक्षण-स्थलका काम करता है और इसलिए भारत सरकारके सम्पूर्ण राजस्वके अर्धांशसे भी अधिकको खपा लेनेवाले फौजी बजटके लिए पैसा जुटानेको करके रूपमे उसका रक्त-शोषण ही किया जाता है। यहाँ फिर भारतके हितका साफ तकाजा यह है कि वह अपनी रक्षा आप ही करना सीखे — भले ही फिलहाल वह यह काम भी ठीकसे नही कर पाये। वह अपनी बाह्य या आन्तरिक सुरक्षाके लिए विदेशियोपर — वे विदेशी चाहे जितने भी समर्थ और नेकनीयत हो — निर्भर करे, इसका मतलब अपना तीन-चौथाई पौरुष गँवा देना है।

जो उचित है, उसे करनेके लिए अंग्रेज ज्यादा अच्छी स्थितिमें हैं, क्योकि वे शासक हैं। जो लोग सरकारी नौकरीमें नही है उन्हे — अर्थात् सामान्य अंग्रेज स्त्रियो और पुरुषोके विशाल समुदायको — अंग्रेजी हुकूमतके भयकर परिणामोको समझना चाहिए। कहते हैं, शान्ति और सुरक्षा अंग्रेजी हुकूमतका सहज वरदान है। किन्तु, यह वरदान स्वतन्त्रताके अपहरण और निरन्तर बढती गरीबीके मुकाबले कुछ नही है। वाइसरायने अपनी कार्रवाईका बडा लम्बा-चौडा कारण बताया है। लेकिन, फिर भी मैं कहूँगा कि परमश्रेष्ठ अपनी स्वेच्छाचारितापूर्ण कार्रवाइयोका औचित्य सिद्ध नही कर पाये हैं। बेशक हिंसात्मक कार्रवाई करनेवालोको सजा दी जानी चाहिए। मैं अराजकताका पक्ष-पोषक नही हूँ। मैं जानता हूँ कि इससे देशकी कोई भलाई होनेवाली नही है। लेकिन, अपराध करनेके लिए या अपराध करनेका प्रयत्न करनेके लिए सजा देना एक बात है और अधिकारियोको बिना वारटके और सो भी सिर्फ सन्देहपर किसीको गिरफ्तार करनेका मनमाना अधिकार देना बिलकुल दूसरी बात है। अभी जो-कुछ हो रहा है, वह इतना ही है कि सन्दिग्ध लोगोको आतंकित किया जा रहा है। लेकिन, पिछला अनुभव बताता है कि जब-कभी सरकार उतावलेपन और घबराहटमे कोई काम करती है तो दोषी लोगोसे कही अधिक सख्यामे निर्दोष लोग ही सजा पाते हैं। हर व्यक्तिको मालूम है कि पजाबमें १९१९ में[1] जिन लोगोको सजा दी गई उनमे बहुत ज्यादा सख्या ऐसे लोगोकी थी जिन्होने कभी भी वे अपराध किये ही नही थे, जिन्हे करनेका उनपर आरोप लगाया गया था। जब-कभी कोई

१. साधन-सूत्रमें '१९१८' है।

सरकार सत्ताका मनमाना उपयोग करती है तो उसका मतलब यही होता है कि जनमत उसके साथ नही है।

देशबन्धु दासने वगाल कौंसिलमे अपने कार्योसे यह साफ बता दिया है कि जनमत वगाल सरकारके साथ नही है। इस सरकारी मान्यताको कभी भी स्वीकार नही किया जा सकता कि उन्होने आतकवादका कोई सिलसिला कायम कर दिया है। इस आरोपके समर्थनमे कोई प्रमाण नही है। आतकवादके बलपर सर्वसाधारणके बीच चुनाव नही जीते जा सकते और न किसी बडे दलको ही एक करके रखा जा सकता है। उनमे ऐसी कोई सहज खूबी अवश्य है जिसके कारण जनताने उन्हे वगालके अपने विशाल दलका निर्विवाद अधिनायक बना रखा है। कारण स्पष्ट है। वे सत्ता जनताके लिए चाहते है। वे शासकोके सामने घुटने नही टेकते। वे इस तिहरे भारसे वगाल और भारतको मुक्ति दिलानेके लिए व्यग्र है। जिस क्षण वे कोई और राग अलापना शुरू करेगे, ज्यो ही वे कहेगे कि वे जनताकी आजादी नही चाहते, त्यो ही वह आतक-नीति, जिसका उनपर आरोप लगाया जाता है, उनके किसी काम नही आयेगी और वे अपना सारा प्रभाव खो बैठेगे। यह ठीक है कि देशबन्धुसे मेरे कुछ मतभेद है, किन्तु उनके कारण मै उनकी ज्वलन्त देशभक्ति या महान् त्यागकी ओरसे अपनी आँखे बन्द नही कर सकता। उन्हे अपने देशसे उतना ही प्रेम है जितना कि हममे से अच्छेसे-अच्छे व्यक्तिको हो सकता है। जो लोग उनके दाहिने हाथका काम करते थे, उन्हे उनसे अलग कर दिया गया है। वे सबके-सब बहुत प्रतिष्ठित लोग है। उनमे जनताका विश्वास है। उन्हे यह लाभ क्यो नही मिलना चाहिए कि उनपर सामान्य रीतिके अनुसार अदालतमे खुला मुकदमा चलाया जाये? ऐसे लोगोको असाधारण अधिकारोके अधीन मनमाने तौरपर गिरफ्तार करना वर्तमान शासक-प्रणालीकी बुराईको सबसे अच्छी तरह खोलकर रख देता है। मुट्ठी-भर लोगोका करोडो लोगोके बीच सगीनो, गोला-बारूद और असाधारण अधिकारोके बलपर रहना गलत और असभ्य आचरण है। इसमे सन्देह नही कि इससे सख्यामे अधिक लोगोपर अपनी सत्ताकी धाक जमानेकी उनकी क्षमता प्रकट होती है, किन्तु साथ ही यह सभ्यताकी पतली परतके नीचे छिपी उनकी बर्बरताका भी द्योतक है।

आज वगालियोकी कसौटी हो रही है। उनसे मै आदरपूर्वक यही कहूँगा·

यदि आप निर्दोष है और मै मानता हूँ कि आपमे से अधिकाश निर्दोष ही है, तो अगर आप अपने कारावासको सही भावनासे स्वीकार करेगे तो उससे आपके देशका और स्वय आपका भी कल्याण ही हो सकता है। आप कष्ट-सहनके बिना स्वतन्त्रता नही पा सकते।

जो लोग सचमुच विप्लववादी है और हिंसामे विश्वास रखते है, उनसे मेरा यह निवेदन है

आपके देश-प्रेमका मै आदर करता हूँ, लेकिन साथ ही मै कहना चाहूँगा कि आपके प्रेममे विवेक नही है। मेरे विचारसे भारतको हिंसा बलके नही, बल्कि बदलेमे अपना हाथ उठाये बिना शुद्ध कष्ट-सहनके द्वारा ही स्वतन्त्रता दिलाई जा सकती है।

यह सबसे अचूक और सबसे जल्दी सफलता दिलानेवाला तरीका है। लेकिन, अगर आप हिंसात्मक तरीकेमें अपने विश्वासपर कायम ही रहना चाहते हैं तो मेरा अनुरोध है कि आप खुले तौरपर यह कहनेका साहस करें कि आप इस तरीकेमें विश्वास रखते हैं और उसका परिणाम, चाहे वह मृत्यु ही क्यों न हो, झेलनेकी हिम्मत दिखायें। इस तरह आप अपना साहस और ईमानदारी सिद्ध करेंगे और बहुत-से लोगोंको अनिच्छापूर्वक कष्ट सहनेसे बचा लेंगे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ३१-१०-१९२४

२३७. सफलताकी कुंजी[1]

[३१ अक्तूबर, १९२४]

यरवदा जेलमें कुछ उर्दू-साहित्य मेरे हाथ लग गया था। उसके द्वारा इस्लामका हार्द जाननेका मुझे अपूर्व लाभ मिला। मौलाना अबुल कलाम आजादकी दी हुई पुस्तक 'हिन्दुस्तानी शिक्षक' तो मेरे पास थी ही। उसे पढ़कर और भी आगे पढ़नेकी मेरी उत्सुकता बढ़ी। शुएब कुरैशीके पास जो पुस्तक मुझे पढ़ने लायक मालूम हुई, मैंने मँगा ली थी। लेकिन मैं तो बड़ा अधीर हो उठा था, इसलिए भारतीय भाषाओंकी पुस्तकोंके लिए जेल-पुस्तकालय छानने बैठ गया। आनन्द और आश्चर्यके साथ मैंने पाया कि वहाँ उर्दू, मराठी, तमिल, कन्नड और गुजराती पुस्तकें भी थीं। जाहिर है कि पुस्तकें थोड़ी ही थीं, लेकिन उस समय मेरे कामके लायक पुस्तकें वहाँ मौजूद थीं। मुझे जो सूची मिली थी उसमें मुसलमान कैदियोंके लिए कुछ उर्दू धार्मिक पाठ्य-पुस्तकें भी थीं। मैंने उनको माँग लिया। वे पुस्तकें लाहौरकी किसी संस्थाकी तरफसे प्रकाशित की गई थीं। मैं बड़ा प्रसन्न हुआ। मेरे मनमें विचार आया कि इससे मेरा उर्दूका ही ज्ञान न बढ़ेगा, बल्कि इन पाठ्य-पुस्तकोंके द्वारा मुझे यह भी देखनेको मिलेगा कि मुसलमान बालकोंको क्या-क्या सिखाया जाता है। दूसरी पाठ्य-पुस्तकमें कितने ही बड़े उपयोगी और शिक्षाप्रद पाठ हैं। एक पाठमें पैगम्बर साहबके कुछ जीवन-प्रसंगोंका वर्णन है। पैगम्बर साहबकी नम्रता, उदारता, शत्रु-मित्रके प्रति सम-भाव, क्षमाशीलता, समयकी पाबन्दी और ईश्वरके डरका परिचय देनेवाली — मनुष्यको भला और धर्मनिष्ठ बनानेवाले सब गुणोंको दिखानेवाली कथाएँ उसमें हैं। उदाहरणके तौरपर, जो यहूदी साहूकार पैगम्बर साहबको गाली देने और उनकी निन्दा करनेके लिए गया था, उसके साथ उनका बर्ताव लीजिए। हजरत उमरको लगा कि उसमें मुर्शिदका बड़ा अपमान हो रहा है। वे उसे सहन न कर सके। लेकिन पैगम्बर साहबने, अपने मुरीदको बुरा-भला कहकर कहा कि उसकी असली

१. मूल अंग्रेजी लेख मुहम्मद अलीके साप्ताहिक **कॉमरेड**में प्रकाशित हुआ था। इसके अन्तिम दो अनुच्छेदोंका मिलान **अमृतबाजार पत्रिका** द्वारा **कॉमरेड**से उद्धृत मूल अंग्रेजी पाठसे कर लिया गया है।

रकम तो उसको दे ही दो लेकिन अपने कुसूरके प्रायश्चित्त स्वरूप उसे थोडी रकम और दो। इस अपूर्व वर्तावका परिणाम ऐसा हुआ कि जिसकी हजरत उमरने उस वक्त जरा भी आशा न की थी। कहा जाता है कि उस यहूदीने इस्लाम-धर्म स्वीकार कर लिया। इसी पाठमे एक गैर-मुस्लिमकी वात भी आती है। एक वार पैगम्वर साहवको एक पेडके नीचे अकेले, विना हथियार सोते देख, एक शख्स उनके पास गया और कहने लगा—'वोल, मुहम्मद! इस वक्त तुझे कौन वचा सकता है?' उत्तर मिला—'अल्लाह'। वह थर-थर काँपने लगा, उसके हाथसे तलवार गिर पडी। पैगम्वर साहवने तलवार उठा ली और फिर उससे पूछा—'अव तू कह, तुझे कौन वचा सकता है?' उस नास्तिकने काँपते-काँपते जवाव दिया 'तेरे सिवा कोई नही।' पैगम्वर साहवने उसकी जान नही ली, उदारतासे उसे माफी वख्श दी। वह गैर-मुस्लिम उसी क्षण मुसलमान वन गया।

शत्रुओं और विरोधियोके प्रति नम्रताके ये एक-दो उदाहरण ही नही है। मौलाना शिवलीके लिखे पैगम्वर साहवके जीवन-चरितमें ऐसे वडे-वडे प्रसगोके वर्णन है। तवलीग या शुद्धिका तरीका वताते है—आदर्श आचरण। यही मेरे नम्र विचारके अनुसार सच्चा और उचित धर्म-प्रचार है। आदर्श आचरण द्वारा प्रचार करना ही निर्दोष, निष्कलक, अचूक और समर्थ प्रचार है।

केवल यह दिखानेके लिए मैं यह नही लिख रहा हूँ कि किस तरह प्रचार करना चाहिए। मेरा उद्देश्य तो है पैगम्वर साहवके जीवनसे सवको शिक्षा-ग्रहण कराना। यदि हम हार्दिक एकता स्थापित करना चाहते हैं तो पैगम्वर साहवकी क्षमाशीलता और सहिष्णुताका अनुकरण करना होगा।

यदि इस लेखको पढनेवाले हिन्दू-पाठकोपर पैगम्वर साहवके जीवन-प्रसगोका असर न हो तो उन्हे 'रामायण' और 'महाभारत' के पन्ने उलटने चाहिए। उसमे उन्हे उदारतायुक्त सहिष्णुताके अनेक उदाहरण मिल जायेगे। हमे वडे-वडे विधि-निषेधात्मक प्रस्तावोकी आवश्यकता नही है। अपने स्वार्थको लक्ष्य वनाकर वात करनेकी भी जरूरत नही है। हम लोग यदि केवल अपने-अपने धर्मोके मूल तत्त्वोके अनुसार ही काम करे तो हम समझ जायेगे कि गत दो वर्षोमे हममे से कितने ही लोग धर्म-द्रोही और ईश्वर-द्रोही वन गये है। एक-दूसरेपर अपना अधिकार करनेके लिए वल-प्रयोग करके हम स्वय अपनी आत्माके साथ वलात्कार कर रहे है। दोनो कौमें अपना कर्त्तव्य करनेके वजाय, कर्त्तव्य-पालनके द्वारा अधिकार प्राप्त करनेके वजाय, केवल अधिकारपर ही जोर दे रही है और अपना कर्त्तव्य भूल गई है।

भारतवर्ष एक पक्षी है। हिन्दू और मुसलमान उसके दो पख है। आज ये दोनो अपग हो गये है और पक्षी आकाशमे उडकर स्वतन्त्रताकी आरोग्यप्रद, शुद्ध हवा लेनेमे असमर्थ हो गया है। इस प्रकार देशको अशक्त-असमर्थ वना देना न हिन्दुत्वका सिद्धान्त है, न इस्लामका। क्या मुसलमानोको दुर्वल वना देना हिन्दुओका धर्म है? क्या हिन्दुओको दुर्वल वना देना मुसलमानोका और मुसलमानोकी मदद न करना हिन्दुओका धर्म है? क्या धर्मको स्वातन्त्र्य और मानवकी सभी उत्तमोत्तम उपलब्धियोका विनाश करके एक विनाशकारी शक्ति वनना चाहिए? हिन्दू हो या

मुसलमान हो, पारसी हो या ईसाई, यहूदी हो या दूसरी कोई कौम हो, लेकिन हिन्दुस्तानी कहलानेवाले सब लोगोमे परस्पर सहिष्णुताका होना ही एकता और स्वातन्त्र्यकी एकमात्र शर्त है। हिन्दुओको और मुसलमानोको यह समझानेके लिए ही 'कॉमरेड' और 'हमदर्द' फिर शुरू हुए हैं। 'कॉमरेड' और 'हमदर्द'को शुरू करके मौलाना मुहम्मद अली अपने सिरपर अवश्य ही एक बडी जिम्मेदारी ले रहे हैं। किन्तु वे खुदासे डरनेवाले व्यक्ति हैं, उनको खुदापर भरोसा है। ईश्वर, हमे जो प्रगाढ अन्धकार लगता है, उसमे प्रकाश दिखाता है। इसलिए उनकी प्रार्थनाके साथ मैं भी ईश्वरसे यह प्रार्थना करूँगा कि उनके कार्यको सफलता मिले, उनकी कलमसे हमेशा शत्रु और मित्र, सबके लिए उचित शब्द ही निकले, वे खुद और उनके सहायकगण कभी क्रोध या आवेशमे आकर कुछ न लिखे। 'कॉमरेड' और 'हमदर्द'मे लिखा एक-एक शब्द अपने देश और उसके द्वारा मानव-जातिके लिए कल्याणकारी सिद्ध हो और इस अनेक धर्मवाले देशमे उनके दोनो अखबार विभिन्न धर्मावलम्बियोके बीच शान्ति और सद्भावना बढाये।

अली भाइयो और मेरे दरम्यान जो दिली दोस्ती है, उसे जाहिर करनेका एक भी मौका मैंने नही गँवाया है। वे पक्के मुसलमान होनेका दावा करते हैं और हैं भी; मैं पक्का हिन्दू होनेका दावा करता हूँ; किन्तु इस बातसे हमारे दरम्यान सच्चा प्रेम और पूर्ण विश्वास कायम रहनेमे कभी कोई बाधा नही पडी। यदि ऐसी दोस्ती कुछ मुसलमानो और हिन्दुओके बीच रह सकती है तो फिर गणितके सीधेसे नियमके अनुसार करोड़ो हिन्दुओ और करोड़ो मुसलमान भी, यदि वे चाहे तो, ऐसी दोस्ती अपने बीच पैदा कर सकते हैं। मुझे भरोसा है कि 'कॉमरेड' और 'हमदर्द' हर तरीकेसे और मुख्यत इस्लामकी श्रेष्ठतम और उच्चतम विशेषताओको पेश करके, इसी प्रकारकी दोस्तीको बढावा देंगे। ईश्वर उनके इस प्रयासमें शीघ्र ही पूर्ण सफलता प्रदान करे।

हिन्दी नवजीवन, २-११-१९२४

२३८. सन्देश : गुजराती पत्रकारोंको[1]

मुझे लगता है कि हमारे देशमें जिसको दूसरा कोई काम नही मिलता वह यदि थोडा भी लिखना जानता हो तो अखबारनवीसी करने लग जाता है। इन दिनो मेरे सिर उत्तर भारतके बहुत-से उर्दू अखबार पढनेका काम आ पडा है। उनसे मेरे उपर्युक्त विचारकी बहुत पुष्टि होती है। गुजरातीके अखबारोके सम्बन्धमे भी मेरा अनुभव कुछ ऐसा ही है। ऐसी हालतमे अखबारोके सम्पादक एकत्र होकर यदि अपनी लेखनीपर कुछ अकुश रखना तय कर सके तो यह अभीष्ट है। इसमे दो मत हो ही नही सकते। सम्पादकका पद आजीविकाके लिए नही, बल्कि केवल लोक-सेवाके

१. अहमदाबादमें गुजराती पत्रकारोंका एक सम्मेलन होनेवाला था। यह सन्देश उसीके लिए दिया गया था।

ही लिए है—ऐसी जवाबदेही जो सस्था हमे सिखाती हो वह स्वागत योग्य है। मै आशा करता हूँ कि हमारी सस्था ऐसी ही सिद्ध होगी।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २-११-१९२४

२३९. मेरा असंतोष

'यग इडिया' मे मैंने वाइसराय साहबके 'बम' के बारेमे जो-कुछ लिखा[1] है, उससे मुझे जरा भी सन्तोष नही हुआ है। कड़वा लेख सत्यसे भरा होनेपर भी किसी कठोर कार्यका जवाब नही होता। बगालमे सरकारने जो राजनीति अपनाई है, वह एक कठोर कार्य है। उसका जवाब किसी-न-किसी कार्यके ही द्वारा दिया जा सकता है। अगारेको हम जिस तरह पानीसे ही बुझाते है, उसी तरह इस अगारे-रूपी कार्यका भी शमन हम शान्तिपूर्ण कार्यके द्वारा ही कर सकते है।

पर वह शान्ति लाये कहाँसे? "शान्तिमय असहयोग" और "सविनय अवज्ञा", ये तो आज शब्द-मात्र रह गये है। यदि आज हिन्दू-मुसलमान आपसमे न लडते होते, यदि आज हिन्दुस्तानमे लाखो नर-नारी सूत कातते होते, यदि आज अस्पृश्यताके मैलको हिन्दुओने धो डाला होता तो वाइसराय साहबका यह बम फूट ही नही सकता था।

पर हम शान्तिको भूल गये है। जरा भी बहाना मिला कि हिन्दू-मुसलमान आपसमे लडने लग जाते है। चरखेका प्रचार भी नगण्य ही हुआ है। विदेशी कपडा अभीतक हमें प्रिय है। अस्पृश्यताका प्रायश्चित्त थोडे ही हिन्दुओने किया है। ऐसी हालतमे सरकारके आतकका जवाब देनेके लिए लोगोके पास कोई भी साधन नही है। सरकारने देशबन्धु दासके पर काट लेनेका प्रयत्न किया है और बगाल तथा दूसरे प्रान्त भी टुकुर-टुकुर देख रहे है! विरोध और नापसन्दगी जाहिर करनेवाले लेखोका तो ढेर लग गया है, पर उससे अधिक करनेकी शक्ति हममे दिखाई नही देती।

यही है, मेरा असन्तोष।

जब कार्यकी दवा मुझे कार्यके रूपमे मिल जाती है तब तो मुझे मौन रह कर बैठ जाना ही अधिक प्रिय है। मै यदि सम्पादक न होता तो शायद चुप ही रह जाता। पर मैंने सोचा कि एक सम्पादककी हैसियतसे मुझे अपनी राय जरूर प्रकाशित करनी चाहिए। इसीसे मैंने 'यग इडिया' में वह लेख लिखा। शायद आगे भी मुझे बोलना या लिखना पडे।

पर यह सब मेरे लिए अतिशय कष्टकर है। १९२१ मे जब सरकारने ऐसी नीति चलाई थी, तब मुझे जरा भी चिन्ता नही हुई थी, क्योकि उस समय मै यह समझता था कि हमारे पास तो अक्सीर इलाज है और उसका प्रयोग भी हम जानते

१. देखिए "हितोंका सघर्ष", ३१-१०-१९२४।

है। पर अब यह साबित हुआ है कि हम उसका प्रयोग करना नही जानते — इसीसे मैं दुःखी हो रहा हूँ। मैं चाहता हूँ कि पाठकोको भी इस बातका इतना ही दुःख हो। एकताके सूत्रमे बँधे और शुद्ध बन चुके स्वावलम्बी भारतको कौन दुःख दे सकता है? उसे तो दूसरा कुछ करनेकी जरूरत ही नही रहेगी।

पर यह सीधी-सी बात मैं किसे, किस तरह समझाऊँ? मैं तो मुसलमानको गले लगाकर, अस्पृश्यको स्पृश्य समझकर तथा सूत कातकर रास्ता दिखानेकी कोशिश कर रहा हूँ। मुझे तनिक भी सन्देह नही कि बगालके दुःखका निवारण इसीमे है, हिन्दुस्तानका छुटकारा इसीमे है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २-११-१९२४

२४०. टिप्पणी

गुजरात नहीं हारा

इस बार तो आन्ध्र प्रदेश गुजरातको मात नही दे पाया, लेकिन इसमें गुजरातके लिए प्रसन्न होनेकी कोई बात नही है। "जहाँ पेड नही होते, वहाँ एरण्ड ही पेड माना जाता है", इस न्यायसे गुजरात प्रथम स्थानका उपभोग कर रहा है। गुजरातको सच्ची शक्तिका विकास करना है और इसके लिए १,७०० कतैये ही पर्याप्त नही है। गुजरातकी नब्बे लाखकी आबादीमें से कताई-यज्ञ करनेवाले केवल १,७०० लोग निकले, यह काफी नही है। ये तो दो प्रतिशत भी नहीं हुए। कमसे-कम दस हजार कतैये हो, तब कही लगभग दस प्रतिशत होगे। मैं जानता हूँ कि कार्यकर्त्ता इसके लिए बहुत प्रयत्न कर रहे है। अतः, किसीको दोष नही दिया जा सकता। यदि इसमे दोष किसीका है तो वह हमारी परिस्थितिका है। इस दोषको समझना हमारा कर्त्तव्य है। यदि हम उसे समझ लेगे तो उसे दूर करनेका विशेष प्रयत्न करेगे। हम नियमित रूपसे कातनेवाले लोगोको समझ लेना चाहिए कि केवल इसीमे — खादीके प्रचारमे और विदेशी कपडेके त्यागमे ही — हमारा आर्थिक और इसलिए राजनैतिक उद्धार निहित है। तभी हम इस अमूल्य काममे दृढ़तासे लगे रहेगे और अपनी लगनसे औरोको भी प्रभावित कर सकेगे।

कातनेवाले भाइयो और बहनोको यह भी जान लेना चाहिए कि मासकी १५ तारीखतक तो अखिल भारतीय खादी बोर्डको सूत मिल जाना चाहिए। १५ तारीख तो सभी स्थानोसे केन्द्रमे सूत पहुँच जानेकी तिथि है। किन्तु, कतैयोको अपना हिसाब महीनेकी आखिरी तारीखको ही कर लेना चाहिए और इसी कारण हमने अग्रेजी मास अपनाया है, क्योकि बहुत-से प्रान्तोमे अलग-अलग सवत्सर चलते है और मुसलमान भाई हिसाब-किताब हिजरी सन्के अनुसार रखते है। अतः अग्रेजी मासके अनुसार हिसाब करनेमे ही आसानी है। गुजरातको तो अपना सब सूत इकट्ठा करके

प्रतिमास ५ अथवा ७ तारीखतक केन्द्रको पहुँचा देना चाहिए। यदि प्रत्येक व्यक्ति अपना कार्य नियमित रूपसे करे तो बहुत सारा समय बच जाये। लेकिन जब बहुत लोगोंको कोई कार्य सामूहिक रूपसे करना हो, तब यदि काम नियमित रूपसे नही किया जाये तो सब-कुछ अस्त-व्यस्त हो जाता है और बहुत समय नष्ट होता है। अत मुझे उम्मीद है कि प्रत्येक कतैया, प्रत्येक उप-समिति और प्रत्येक प्रान्तीय कमेटी अपना दिन निश्चित कर लेगी तथा उसके अनुसार नियमपूर्वक अपना सूत भेजेगी।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २-११-१९२४

२४१. तार: चित्तरंजन दासको

[२ नवम्बर, १९२४]

आपका तार मिला। रविवार[1] को पजाब मेलमे चलूंगा। आपके यहाँ ठहरूँगा। आशा है भीड-भाड़ न होने देगे। अब भी स्वास्थ्य ऐसा नही है कि अधिक श्रम, शोरगुल, भीड़-भाड़ तथा अन्य प्रदर्शन सह सकूं।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, ३-११-१९२४

२४२. तार: घनश्यामदास बिड़लाको

दिल्ली

२ नवम्बर, १९२४

घनश्यामदास बिडला
कैनिंग स्ट्रीट
कलकत्ता

मंगलवारको सुबह पजाब मेलसे कलकत्ता पहुँच रहा हूँ।

गाधी

अंग्रेजी तार (सी० डब्ल्यू० ५९९८) से।
सौजन्य: घनश्यामदास बिडला

१. २ नवम्बर।

२४३. सन्देश : 'बंगाली' को[1]

२ नवम्बर, १९२४

मेरे पास देने योग्य कोई सन्देश नही है। मैं क्या कहूँ? मैं सोच रहा हूँ। मैं इस अन्धेरेमें प्रकाश पानेका प्रयत्न कर रहा हूँ।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, ७-११-१९२४

२४४. पत्र : हिन्दी साहित्य सम्मेलनको

कलकत्ता

कार्तिक सुदी ७ [३ नवम्बर, १९२४]

आपके तार आये। भाई मनजीत सिंहने खूब समझाया। परन्तु मुझको समझानेकी आवश्यकता ही क्या है? हिन्दी भाषाके लिए मेरा प्रेम भारतवर्षके सब हिन्दी प्रेमी जानते हैं। मेरा आना असभवित है, मेरे पास इतना काम पड़ा हुआ है, जिसको मैं पहुँच नही सकता हूँ। इसीलिए मुझको क्षमा कीजिए। मैं इन कामोंसे निकलना चाहता हूँ।

आपका,

मोहनदास गांधी

आज, ११-११-१९२४

२४५. तार : हिन्दी साहित्य सम्मेलनको[2]

[३ नवम्बर, १९२४ के पश्चात्]

मुझसे आग्रह करनेकी जरूरत नही है। अगर मैं आ सकता तो खुशीसे आता, परन्तु आना असम्भव है। सफलता चाहता हूँ।

आज, ११-११-१९२४

१. यह विपिनचन्द्र पालके एक तारके उत्तरमें दिया गया था।

२. मूल अंग्रेजी तार उपलब्ध नहीं है।

२४६. तार: जफर अली खाँको[1]

[५ नवम्बर, १९२४ या उसके पश्चात्]

मौलाना जफर अली खाँ
'जमीदार'
लाहौर

मोर्चेपर वापसीका स्वागत। आशा है आप स्वस्थ होंगे। हिन्दू-मुस्लिम एकताके लिए ठोस कामकी आपसे उम्मीद है।

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ११७१२) की फोटो-नकलसे।

२४७. समयकी पाबन्दी

समग्र राष्ट्रके रूपमें हमपर आमतौरपर एक आरोप लगाया जाता है कि हम समयकी पाबन्दी नहीं रखते, साधारणतया हम समयसे पीछे रहते हैं। जो देर करता है, वह तो स्पष्ट ही समयसे पीछे रहता है, लेकिन यह कहना भी उतना ही सही है कि जो समयसे चार घंटे आगे रहता है, दरअसल वह भी समयसे पीछे ही रहता है। सो इस तरह वह दूसरी सैंकडों बातोंकी उपेक्षा करके ही तो समयसे चार घंटे आगे हो पाता है। जब कोई ग्रामीण ट्रेन पकड़ना चाहता है तो वह निश्चित समयसे घंटों पहले स्टेशन पहुँच जाता है। वह गाड़ी भले ही पकड़ ले, लेकिन बहुत-सी अन्य बातोंके सम्बन्धमें, जो शायद ज्यादा महत्त्वपूर्ण हों, वह समयसे पीछे ही होगा। हम शिक्षित लोग हर मामलेमें देर करनेके आदी हैं। हमारी सभाएँ समयपर हों, इसकी हम जरूरत ही नहीं समझते। नियत समयपर कार्यवाही शुरू न करना तो बिलकुल आम बात है। अकसर एक ही आदमीकी अनुपस्थितिको सैंकड़ों और कभी-कभी तो हजारों लोगोंको प्रतीक्षा-रत रखनेका पर्याप्त कारण मान लिया जाता है। हम इतनी प्रतीक्षा कर सकते हैं, इससे प्रकट होता है कि हममें कितना अधिक धैर्य और क्षमा है। लेकिन साथ ही यह चीज हमारी प्रगतिकी दृष्टिसे बहुत अनिष्टकर है।

समयकी पाबन्दीका यही अभाव अब अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके कताई-सम्बन्धी प्रस्तावको कार्यान्वित करनेके सिलसिलेमें दिखाई दे रहा है। वैसे पढ़नेमें तो यह प्रस्ताव बहुत सीधा-सादा है, लेकिन उसे कार्यान्वित करनेके लिए अखिल भारतीय खादी बोर्डको अपनी तमाम शक्ति और साधन खपाने पड़ रहे हैं। सूतको एकत्र

१. ५ नवम्बर, १९२४को जमींदार कार्यालयसे गांधीजीको निम्नलिखित तार मिला था: "आज मौलाना जफ़र अली खाँ रिहा कर दिये गये। कल शाम वे लाहौर पहुँच रहे हैं।"

करने, एक स्थानसे दूसरे स्थानको भेजने और उसका वर्गीकरण करनेके लिए एक बड़े सगठन और बहुत ज्यादा सगठन-शक्तिकी जरूरत है और जब कार्यकर्त्ता समयकी पाबन्दी रखते हुए काम नही करते तो कठिनाई दस गुनी बढ जाती है। हर महीनेकी पन्द्रह तारीख सूत भेजनेका आखिरी दिन है। यह तारीख कताई करनेवालोको ज्यादा समय देनेके लिए नही, बल्कि विभिन्न समितियोके मन्त्रियोको पर्याप्त समय देनेके लिए निश्चित की गई थी। सारा काम ठीक ढगसे तभी चल सकता है जब कताई करनेवाले निश्चित तारीखको सूत दे दे और कार्यकर्त्ता लोग निर्धारित तिथितक उसे एकत्र कर ले। हर प्रान्त अपने लिए तिथियाँ निश्चित कर सकता है, ताकि वह सूतके पैकेट अखिल भारतीय खादी बोर्डको समयपर भेज सके। अगर अखिल भारतीय खादी बोर्डकी व्यवस्थाके अनुकूल पडे तो हर प्रान्तको चाहिए कि वह पैकेटोको किस्तोमे भेजनेके बजाय हर महीने, जितना भेजना हो, एक ही साथ भेज दे। जबतक सारा काम, जिस नियमिततासे घड़ीकी सुई चलती है, उसी नियमिततासे नही किया जाता तबतक इसका सम्यक् सगठन कर पाना असम्भव है। जब हजारो छोटी-मोटी बातोपर भी ध्यान देना जरूरी हो, तब समय सबसे महत्त्वका विषय बन जाता है। जिस तरह रेलवेमे समयका पालन करनेमे जरा-सी चूक होनेपर भारी अनर्थ हो सकता है, उसी तरह अखिल भारतीय खादी बोर्डकी समय-सूचीका ध्यान रखनेमे तनिक-सी चूकका परिणाम भी खादीको सार्वजनीन बनानेकी सम्भावनाके लिए उतना ही घातक सिद्ध हो सकता है। सच तो यह है कि सबकी सहमतिसे बनी समय-सूचीका नियमपूर्वक और पूरी बारीकीके साथ पालन किये बिना कोई सगठन सम्भव ही नही है। अत मुझे भरोसा है कि कताईके सगठनमे लगे हुए तमाम कार्यकर्त्ता उस समय-सूचीका पालन धार्मिक निष्ठाके साथ करेगे, जिसे उन्होने स्वीकार या निर्धारित किया हो।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ६-११-१९२४

२४८. टिप्पणी

अध्यक्षीय पुरस्कार

आन्ध्र और उसके पीछे बगाल, ये दोनो प्रान्त गुजरातके साथ लगभग बराबरीकी होड कर रहे है। अध्यक्षीय पुरस्कार जीतनेके लिए उनके पास अब सिर्फ एक महीनेका समय रह गया है। मुझे आशा है कि इनमे से कोई-न-कोई प्रान्त पुरस्कार ले ही जायेगा। लेकिन साथ ही मै अपनी इस आशाको नही छिपाऊँगा — यह आशा भी उतनी ही बलवती है कि गुजरात आसानीसे हार नही मानेगा। पर सबको पुरस्कारकी शर्ते अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए। इनसे प्राप्त सूतकी मात्रामे वह सूत नही शामिल किया जायेगा जो निश्चित समयके बाद मिला होगा। इसमे किसीके द्वारा भेजे गये उस पैकेटको भी नही शामिल किया जायेगा, जिसमें न्यूनतम मात्रामे अर्थात् कमसे-कम दो हजार गज एक-सा कता और ठीकसे बटा हुआ सूत न होगा।

मौलाना मुहम्मद अली बडी उम्मीदमे है कि गुजरात हार जायेगा और आन्ध्र या बगाल उनका इनाम ले जायेगा। गुजरातके खिलाफ उनके मनमें कोई भाव नही है। पर बेशक, वे चाहते है कि उनका इनाम इनमे से कोई ले और वे मानते है कि उचित होडमे यदि गुजरात हार भी जायेगा तो उसे कोई दु ख नही होगा। यदि गुजरातकी पराजयकी बदौलत कतैयोकी सख्यामे अच्छी खासी वृद्धि हो तो उसकी यह हार उसकी जीत ही होगी। मौलाना साहब नही चाहते कि कोई प्रान्त सयोग-वश ही जीत जाये। बल्कि जीत सच्चे और कडे परिश्रमके फलस्वरुप होनी चाहिए।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ६-११-१९२४

२४९. केनियाकी शिकायत

एक केनियावासी भाई लिखते है [1]

पत्र-लेखकने उपर्युक्त पत्र प्रकाशनार्थ नही, सिर्फ मेरी जानकारीके लिए लिखा है। फिर भी, उपनिवेशोमे रहनेवाले बहुत-से भारतीयोके मनमे ऐसे विचार उठते होगे और यह स्वाभाविक भी है। किन्तु, तनिक ज्यादा सोचकर देखनेपर मालूम होगा कि यहाँसे याचकोका [उनके पास] जाना भी स्वाभाविक ही है। राजनीतिक कष्ट तो दोनो स्थानोमे है। चूँकि हिन्दुस्तानमे हमे राजनीतिक कष्ट है, इसलिए प्रवासी भारतीयोको भी यह कष्ट भोगना ही पडता है। अगर हिन्दुस्तानमे यह दु ख दूर हो जाये तो विदेशोमे भी उनका दु ख सहज ही दूर हो जाये। हिन्दुस्तान-में नेता लोग प्रवासी भारतीयोके लिए ज्यादा नही करते, क्योकि वे कर नही सकते। उन्हे इच्छा तो बहुत है, लेकिन लाचार आदमी क्या करे! रोगीकी खानेकी इच्छा किस कामकी? अपगको अपनी दौडनेकी इच्छा छोडनी ही पडती है। भारत तो दो दृष्टियोसे अपग है — राजनीतिक दृष्टिसे और आर्थिक दृष्टिसे। ऐसी अपग मातासे उसके प्रवासी पुत्र ऐसा तो नही कह सकते "माँ, तुम तो मेरी कोई मदद करती नही और मुझसे पैसे माँगती हो — यह कैसा न्याय है?" मगर माता तो कहेगी ही "तुमपर दु ख है, यह तो मैं जानती हूँ, लेकिन मैं ठहरी विधवा। तुम्हारी क्या मदद करूँ? फिर, मैं गरीब भी हूँ। तू चार पैसे कमानेके लिए परदेश गया है। मैं समझती हूँ, तुम्हारी रोटियोमे मेरा भी कुछ हक-हिस्सा है। इसीलिए तुम्हारी आशा रखती हूँ।" ऐसी विचित्र स्थिति है हिन्दुस्तानकी। अपने २० वर्षके प्रवासके अनुभवसे मैने ऐसा ही देखा है। दक्षिण आफ्रिकामे हमे हिन्दुस्तानकी ओरसे कोई मदद नही मिल सकती थी, फिर भी हम वहाँसे स्वदेशको पैसा भेजते थे। हमे राजनीतिक कष्ट तो अवश्य था; पर आर्थिक कष्ट नही था। हिन्दुस्तानमे जहाँ एक रुपया देने या खर्च करनेमे मुश्किल पडती है, वहाँ दक्षिण आफ्रिकामे हम पूरी गिन्नी खर्च कर सकते थे। हिन्दुस्तानसे गया कोई भी याचक हमारे पाससे खाली हाथ

१. पत्र यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

नही लौटता था। पाठक ऐसा न समझे कि उस समय हिन्दुस्तानसे कुछ अधिक राजनीतिक मदद मिलती थी। जैसा आन्दोलन आज केनियाके सम्बन्धमे चल रहा है, वैसा ही आन्दोलन तब दक्षिण आफ्रिकाके विषयमे चल रहा था और आज भी चल रहा है — अर्थात् देशकी सहानुभूति व्यक्त करते हुए कुछ सभाओंका आयोजन और विधान सभाओमे भाषण आदि। फिर, हिन्दुस्तानसे दक्षिण आफ्रिकाको जो पैसे भेजे गये, उनके विषयमें भी पाठक किसी भ्रममे न पडे। हिन्दुस्तानसे दक्षिण आफ्रिकाको पैसा तभी भेजा गया जब दक्षिण आफ्रिकावासी भारतीयोके हाथसे उनकी अपनी धन-सम्पत्तिके भी निकल जानेकी स्थिति आ गई थी और उन्होने जो बहुत सारा चन्दा किया था, वह भी अपने सघर्षमे खर्च कर दिया था। हिन्दुस्तानसे भेजे गये पैसेमे से बची हुई एक मोटी रकम फिर हिन्दुस्तानको वापस भेज दी गई थी। इसके सिवा, उस समय भी हिन्दुस्तानकी कुछ सस्थाओका खर्च दक्षिण आफ्रिकावासी भारतीय ही उठाते थे। दक्षिण आफ्रिकामे भारतीयोकी विजयका कारण भी वहाँ रहनेवाले भारतीयोका प्रबल सत्याग्रह ही था। हजारो लोग जेल गये, जिनमे स्त्रियाँ भी शामिल थी, कुछकी जाने गईं; कुछ निर्वासित कर दिये गये; बहुत-से लोग कगाल हो गये; एक बाला जेलमे हुए रोगके कारण बादमे मृत्युको प्राप्त हुई[1], दो युवकोको प्राण गँवाने पडे[2] — एकको जेलम हुए कष्टोके कारण और दूसरेको देश-निकालेके दौरान हुए कष्टोके कारण, कुछको कोडे सहने पडे। इतना सब झेलने और आठ वर्षके सत्याग्रहके बाद उन्हे वह चीज मिल पाई जिसके लिए वे लड रहे थे। किन्तु, इसके बावजूद, लडना तो आज भी बाकी है ही। जिस हथियारसे विजय मिली, उसी हथियारसे अपनी उपलब्धि कायम रखी जा सकती है तथा नई पाई जा सकती है, यह अनिवार्य नियम है। जिस प्रकार क्षत्रिय जीतमे मिले हुए प्रदेशको शत्रुके सबल हो जानेपर या स्वय दुर्बल हो जानेपर खो बैठता है, उसी प्रकार सत्याग्रही भी स्वय दुर्बल हो जानेपर अथवा शत्रुके सबल हो जानेपर अपनी विजयमे मिली चीज खो देता है। दक्षिण आफ्रिकामे अथवा किसी भी अन्य देशमे रहनेवाले भारतीयोके दु खका इलाज स्वय उन्हीके हाथमे है। उनमे चरम दु.ख सहने और शुद्ध होने और शुद्ध रहनेकी जितनी ज्यादा शक्ति आयेगी, वे अपने स्वाभिमानकी रक्षा उतनी ही ज्यादा कर सकेगे। प्रवासी भारतीयोको इतना तो याद रखना ही चाहिए कि वे विदेश कमानेके इरादेसे जाते है। राजनीतिक दु ख सहकर भी वे यहाँकी अपेक्षा वहाँ अधिक कमाते है। जब ये दु ख भोगकर भी वे यहाँकी अपेक्षा अधिक कमाते है तब इन दु.खोके कम हो जानेपर तो वे और भी ज्यादा कमायेंगे। इस बीच वे गरीब हिन्दुस्तानको यथाशक्ति पैसेकी मदद देनेमे पीछे न रहे, यही इष्ट है। वे प्रत्येक याचकको ठोक-बजाकर देखे। सस्था तथा संचालकके गुण-दोषोकी जाँच करनेके बाद यदि दोनोकी पात्रता सिद्ध हो जाये तो प्रवासियोका धर्म है कि वे धनसे ऐसी सस्थाओकी मदद करे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ९-११-१९२४

२५०. गांधीजी और स्वराज्यवादियोंका संयुक्त वक्तव्य

कलकत्ता
६ नवम्बर, १९२४

नीचे हम उस वक्तव्यका पाठ दे रहे हैं जो इसी ६ तारीखको कलकत्तामें श्री गांधी, श्री चित्तरंजन दास और पण्डित मोतीलाल नेहरूके हस्ताक्षरोंसे जारी किया गया है:

यद्यपि भारतके सभी दलोका उद्देश्य स्वराज्य ही है, फिर भी चूँकि देश ऐसे अलग-अलग गुटोमें बँट गया है जो विरोधी दिशाओमे काम करते जान पडते है, चूँकि ऐसे परस्पर विरोधी कार्योसे स्वराज्यकी दिशामें राष्ट्रकी प्रगतिमे बाधा पहुँचती है, चूँकि ऐसे सभी दलोको यथासम्भव काग्रेसके भीतर लाना और सयुक्त मचपर खडा करना वांछनीय है, चूँकि काग्रेस स्वय भी दो विरोधी पक्षोमे बँटी हुई है जिससे देशके हितकी हानि हो रही है, चूँकि इस सर्वसामान्य उद्देश्यकी सिद्धिकी दृष्टिसे इन दलोको फिरसे एक कर देना वाछनीय है, चूँकि बगालकी सरकारने गवर्नर-जनरलकी स्वीकृतिसे वहाँ दमनकी नीति शुरू कर दी है, चूँकि नीचे हस्ताक्षर करनेवाले लोगोकी रायमें दरअसल इस दमनका लक्ष्य किसी हिंसावादी दलको नही, बल्कि बगालकी स्वराज्य पार्टीको और इस प्रकार सविधान-सम्मत तथा अनुशासनबद्ध प्रवृत्तिको कुचलना है और चूँकि इन परिस्थितियोको देखते हुए यह जरूरी हो गया है कि इस दमन-नीतिके विरुद्ध राष्ट्रकी सयुक्त शक्ति लगा देनेके उद्देश्यसे तत्काल सभी दलोको सहयोग देनेके लिए निमन्त्रित किया जाये और उनका सहयोग प्राप्त किया जाये, इसलिए हम नीचे हस्ताक्षर करनेवाले लोग सभी दलोके और अन्तत बेलगाँव काग्रेसके स्वीकारार्थ निम्नलिखित बातोकी सिफारिश करते है

काग्रेसको राष्ट्रीय कार्यक्रमके रूपमे अपना असहयोगका कार्यक्रम स्थगित कर देना चाहिए, लेकिन जहाँतक उसका सम्बन्ध भारतके बाहर बने हुए कपडेका इस्तेमाल करने अथवा उसे पहननेके वर्जनसे है, इस कार्यक्रमको जारी रखा जाये।

काग्रेसको यह निश्चय भी करना चाहिए कि काग्रेसके विभिन्न कार्योको, जब जैसी जरूरत दिखाई दे उसके मुताबिक, काग्रेसके अलग-अलग पक्ष करे। पर हाथ-कताई, हाथ-बुनाई और उनकी तमाम पूर्ववर्ती क्रियाओका प्रचार और हाथ-कते सूतसे हाथ-बुनी खादीका प्रचार, विभिन्न जातियोके बीच और विशेषकर हिन्दुओ और मुसलमानोके बीच एकताको बढावा देना और हिन्दुओ द्वारा अस्पृश्यता-निवारण — इस सबके लिए काग्रेसके भीतर मौजूद तमाम पक्ष प्रयत्न करे। पुन उसे निश्चय करना चाहिए कि केन्द्रीय तथा प्रान्तीय विधानसभाओसे सम्बन्धित कार्यको, काग्रेसकी ओरसे और उसके एक अभिन्न अगके रूपमें स्वराज्यवादी दल चलाये। तथा इस कामके लिए यह दल अपने नियम स्वय बनाये तथा कोष एकत्र करने और उसकी व्यवस्था करनेका काम

भी स्वय करे। चूँकि अनुभवसे यही ज्ञात हुआ है कि जबतक भारतमे सब लोग सूत न काते तबतक भारत कपडेकी आवश्यकताकी पूर्तिके सम्बन्धमे आत्मनिर्भर नही हो सकता और चूँकि हाथसे सूत कातना जनसाधारण और काग्रेसजनोके बीच स्पष्ट और सुदृढ़ सम्बन्ध स्थापित करनेका सर्वोत्तम और अत्यन्त ठोस तरीका है, इसलिए हाथ-कताई और हाथ कते सूतसे बनी चीजोको लोकप्रिय बनानेके उद्देश्यसे काग्रेसको अपने सविधानकी धारा ७ को रद करके उसके स्थानमें निम्नलिखित धारा रखनी चाहिए.

जो व्यक्ति १८ वर्षका न हो, जो राजनीतिक समारोहो और काग्रेसके जलसोमें अथवा कांग्रेसका कार्य करते समय हाथ-कते सूतसे हाथ-बुनी खादी न पहने और प्रति मास अपने हाथका कता अथवा बीमारी, अनिच्छा या ऐसे ही किसी अन्य कारणसे स्वय न कात सकनेपर किसी दूसरेसे कतवाकर, २,००० गज एक-सा सूत न दे, वह किसी भी काग्रेस कमेटी या काग्रेस सगठनका सदस्य नही बन सकता।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १३-११-१९२४

२५१. भाषण: कलकत्ता नगर-निगम द्वारा दिये मानपत्रके उत्तरमें[1]

कलकत्ता
६ नवम्बर, १९२४

कलकत्ता नगर-निगमके महापौर महोदय,
पार्षदगण और बहिनो तथा भाइयो,

मैं खडा होकर नही बोल रहा हूँ, इसके लिए क्षमा करेंगे। ऐसा मैं शिष्टताके अभावके कारण नही, बल्कि इसलिए कर रहा हूँ कि इतने बडे श्रोता-समुदायके सामने खडे होकर बोलनेकी शक्ति मुझमे नही है। आपने जो मानपत्र भेंट किया है और उसमे जो अत्यत ही उदार तथा स्नेहपूर्ण उद्‌गार व्यक्त किये है, उनके लिए मैं हृदयसे आपको धन्यवाद देता हूँ। इस विशाल नगरसे — इस प्रासादपुरीसे — मैं अपरिचित नही हूँ। नगर-कल्याण सम्बन्धी कर्त्तव्यके निर्वाहका कितना महत्त्व है, यह भी मुझे मालूम है। मुझे अकसर ऐसा लगता रहा है कि नगर-कल्याणके कार्यका क्षेत्र यद्यपि राजनीतिक कार्य जितना विशाल नही होता और उसमे चमक-दमक तो और भी कम होती है, फिर भी वह कुछ कम आवश्यक अथवा कम फलप्रद नही। मैंने बहुत बार मन-ही-मन सोचा है कि अगर मैं किसी नगर-निगमका सदस्य होऊँ तो क्या करूँगा; और वर्षों पूर्व जब मैं कलकत्ताकी गन्दी बस्तियोमे घूमा करता था और

१. मानपत्र टाउन हॉलमें एक विशाल जनसमुदायके समक्ष भेंट किया गया था और उसे महापौर श्री चित्तरजन दासने पढ़ा था।

उनकी कुरूपता तथा गन्दगीकी तुलना प्रासादोके सुन्दर तथा साफ-सुथरे परिवेशसे किया करता था तब अपने-आपसे यही कहा करता था कि कलकत्ता नगर-निगमकी योग्यता और सफलताका माप-दण्ड इन प्रासादोकी सख्या और सुन्दरता नही बल्कि उन गन्दी वस्तियोकी दशा ही होनी चाहिए। तब मुझे यही लगता था कि नगर-निगमने अपने कर्त्तव्यकी अवहेलना की है। बादमे मुझे यहाँकी कुछ गोशालाएँ देखनेका भी अवसर मिला। वहाँका दृश्य देखकर तो मेरा दिल दहल गया। न केवल पशुओको बहुत ही बुरी दशामे रखा जाता था, बल्कि ग्वाले लोग दूधकी आखिरी बूँदतक निकाल लेनेके लिए ऐसे निर्दयतापूर्ण अकथनीय तरीके अपनाते थे कि दूधके साथ-साथ खूनतक उतर आता था। ये छुटपुट चीजे मैं आपके ध्यानमे इसी आशासे ला रहा हूँ कि इस नगरमे जहाँ भी गदगी हो उसे दूर करने और यहाँ रहनेवाले इतने सारे लोगोको सस्ता और शुद्ध दूध सुलभ हो, इसकी पक्की व्यवस्था करनेके लिए आपके कार्य-कालमे गोशालाओको नगरपालिकाके अधिकार-क्षेत्रमे लानेकी दिशामे कोई बडा कदम उठाया जायेगा। मेरे विनम्र विचारसे नगर-निगमका यह बुनियादी कर्त्तव्य है कि वह ऐसी व्यवस्था करे जिससे लोगोको शुद्ध वायु और जल, सस्ता और शुद्ध दूध और फल तथा करदाताओके बच्चोको नि शुल्क शिक्षा प्राप्त हो सके। मेरी यही इच्छा है कि यहाँका निगम भारतके सभी नगरोसे आगे बढकर इस दिशामें कदम उठाये।

आपने १८१८ के विनियम ३ के अधीन अपने मुख्य कार्यपालक अधिकारीकी गिरफ्तारीकी ओर ध्यान आकृष्ट किया है। आपके साथ मेरी पूरी सहानुभूति है। ऐसा तो कभी सोचा भी नही जा सकता कि जो सरकार सभ्य मानी जाती है उसके अधीन श्री सुभाष चन्द्र बोस-जैसे व्यक्तिको, बल्कि किसी भी व्यक्तिको, मनमाने ढगसे गिरफ्तार करके जेलमें बन्द रखा जाये और उनके मामलेकी सुनवाईकी भी गुजाइश न रखी जाये, बल्कि दरअसल उन्हे गिरफ्तारीका कारण जाननेका भी अवसर न दिया जाये। अराजकतावादी गतिविधियोके सम्बन्धमे मेरे विचार सर्वविदित हैं। मैं अपने पूरे हृदयसे उनका विरोधी हूँ। मेरा विचार है कि उनसे भारतकी कोई भलाई नही हो सकती, लेकिन यह अवसर ऐसा नही कि इस विषयपर मैं अपने विचार व्यक्त करूँ। लेकिन इस सम्बन्धमें इतना और कह देनेके लिए आप मुझे क्षमा करेंगे कि सरकार द्वारा उठाये गये ये असाधारण कदम मुझे उतने ही घृणित लगते हैं, जितनी कि अराजकतावादी गतिविधियाँ। मैं आशा तो यही करता हूँ कि सरकार अपने कदम वापस ले लेगी और अपने मनमाने गैरकानूनी तरीकोसे बाज आयेगी। आशा है श्री सुभाष चन्द्र बोस मुक्त कर दिये जायेंगे और उन्हे निगममें अपना कार्यभार सँभालकर पुन वह सेवा-कार्य करनेका अवसर मिलेगा, जैसा कि मुझे सभी सूत्रोके अनुसार ज्ञात हुआ है, वे बहुत ही योग्यता, कार्य-क्षमता और ईमानदारीके साथ कर रहे थे (वन्दे मातरम्)।

[अग्रेजीसे]

अमृत बाजार पत्रिका, ७-११-१९२४

२५२. भाषण : कलकत्ताके कताई-प्रदर्शनमें[1]

६ नवम्बर, १९२४

आप सबको चरखे चलाते देखकर मुझे बहुत खुशी हो रही है। आशा है, आपमे से जो लोग अभी कताई नही कर रहे हैं, वे भी तत्काल यह काम शुरू कर देगे। सस्कृतमे एक कहावत है कि किसी बातका अनारम्भ तो बुद्धिमानी है, लेकिन एकबार कार्यारम्भ कर देनेपर उचित सफलता मिलनेतक बीचमे ही उसे नही छोड़ देना चाहिए।

जिन लोगोने कताई शुरू कर दी है और जो लोग शुरू करनेवाले है उन्हे कमसे-कम स्वराज्य प्राप्तितक कताई करते जानेका सकल्प कर लेना चाहिए। आज आपके इस मौन स्वागतसे मै बहुत प्रसन्न हुआ हूँ।

[अग्रेजीसे]

अमृत बाजार पत्रिका, ७-११-१९२४

२५३. अपरिवर्तनवादियोंके साथ बातचीत[2]

७ नवम्बर, १९२४

प्रारम्भमें अपनी वृत्ति समझाते हुए गांधीजीने कहा :

खुद मुझे अपने कार्यके औचित्यके सम्बन्धमे तनिक भी शका नही है। अबतक मै कार्याकार्यके भँवरमे पडा हुआ था, लेकिन अब मेरा मन हलका हो गया है। मुझे पूरा विश्वास है कि मैंने जो किया, उससे भिन्न कुछ कर ही नही सकता था। अहिसावादीका धर्म ही यह है कि वह इतना त्याग करे कि फिर उसके पास त्यागनेको कुछ रह ही नही जाये। इसलिए मैं इस अन्तिम निष्कर्षपर पहुँचा हूँ अर्थात् मुझे इस सीमातक त्याग करना है कि प्रतिपक्षीको ऐसा लगे कि अब तो हद हो गई — इतना कि विरोधी मेरे त्यागको देखकर स्तम्भित रह जाये। फिर यह मेरा पहला अनुभव नही है। दानका धर्म ही यह कहता है कि इतना दो कि लेनेवाला खा-खाकर अघा जाये। वैसे मैंने यहाँ जो दान किया है वह उस तरहका दान नही है और न उस तरहका त्याग ही है। मैंने तो जो दिया है, उसे मैं कही ज्यादा तो नही तोल रहा हूँ या उसे उधार तो नही दे रहा हूँ, इसका विचार करके ही दिया है। मैं धीरे-धीरे, क्रमश, एक-एक इच करके पीछे हटा हूँ। हाँ, कुछ लोग ऐसा मानते जरूर है कि मैंने, जितना उन्होने सोचा था, उससे आगे बढकर दिया है।

१. इस प्रदर्शनका आयोजन 'बगाल कैमिकल फैक्टरी' के कर्मचारियोंने किया था।

२. गाधीजी कलकत्तेमें बगालके अपरिवर्तनवादियोंसे मिले थे और उन्होंने उन्हें स्वराज्यवादियोंके साथ संयुक्त वक्तव्यपर अपने दस्तखत करनेके कारण समझाये थे।

यदि आप एक बार ऐसा समझ जाये कि अभी असहयोग नही चल सकता तो यह बात आपकी समझमे तुरन्त आ जाये कि मै जिस हदतक आगे बढा हूँ, उस हदतक बढे बिना चारा नही था। जहाँ भी जाता हूँ, हिंसाके सिवाय कुछ दिखाई ही नही देता है। गहराईमे, लोगोके हृदयमे हिंसा ही भरी हुई है—इतनी कि असहयोगको राष्ट्रीय पैमानेपर चालू रखना गुनाह माना जायेगा। लेकिन "राष्ट्रीय" असहयोग और "व्यक्तिगत" असहयोगमे भेद है। इसलिए व्यक्ति तो जिस हदतक असहयोग कर रहे थे, उस हदतक उसे जारी ही रखेगे। सच तो यह है कि यदि वे उसे छोड देगे तो उनका मूल असहयोग अर्थहीन कहा जायेगा।

सदस्यताके लिए कताईकी चर्चा बहुत हुई है। आपको लगता है कि मैने बहुत ज्यादा दे दिया है, खादीको एक औपचारिकता-मात्र बना दिया है। लेकिन ऐसी कोई बात है नही। इतिहासपर नजर डालिए तो मालूम होगा कि हम बढकर कहाँसे-कहाँ आ गये है। पहले शुद्ध, मिश्र आदि अनेक प्रतिज्ञाएँ थी। फिर मिलके कपडेको तिलाजलि दी गई और खादी आई। बादमे चरखा दाखिल हुआ और फिर स्वयसेवको-के लिए खादी अनिवार्य हो गई। आगे चलकर कताईका ज्ञान प्राप्त करना अनिवार्य हो गया और उससे भी आगे चलकर सबके कातनेपर जोर दिया गया। फिर कार्य-कर्त्ताओके लिए कताईको अनिवार्य बनानेका प्रस्ताव हुआ और आज हमने कताईको सदस्यताकी शर्तमें रख दिया है।

हाँ, हर सदस्य नही कातेगा। लेकिन, आज जो कातते है वे इसे बन्द करने-वाले नही है। उलटे, आज जितने लोग कातते है, उनसे ज्यादा लोग ही कातेगे। पैसा खर्च करके कितने लोग कतवा सकेगे? इसलिए अधिकाश लोग तो अपना ही काता सूत भेजेगे। जिन्होने खुद दृढ निश्चय नही किया हो, उनसे हम जबरदस्ती कैसे कतवा सकते है? किन्तु, वे यदि दूसरोसे सूत कतवाकर लाये तो इतनेसे ही हमे सन्तोष मानना चाहिए और तनिक बारीकीसे विचार करके देखे तो मानना पडेगा कि काग्रेसके हर सदस्यको कातना चाहिए, ऐसा कोई सिद्धान्त तो नही ही था। मुझे यह भी बता देना चाहिए कि यह विचार बहुत-से लोगोका नही, सिर्फ मेरा ही था। बल्कि अगर कहूँ कि यह मेरा आदर्श था तो अनुचित नही होगा। हाँ, बहुत समय पहले लकासे एक भाईने मुझे पत्र लिखकर यह जरूर पूछा था कि हरएक सदस्यके लिए कताई अनिवार्य क्यो नही कर दी जाती। लेकिन, उस समय मैने इस सुझावको असम्भव मानकर उसपर विचार भी नही किया। बादमें मुझे वह सम्भव लगा और मैने उसे देशके सामने रखा। इसलिए, अगर मैने कुछ छोडा है तो अपने आदर्शमे से, अपनी सोची बातमे से ही कुछ छोडना पडा है। बस, इतना ही।

आपको लगता है कि खादीको मैने एक औपचारिकता-मात्र बना दिया। नही, यह आशका भी निराधार है। खादी पहननेका प्रस्ताव एक बात है और खादी न पहने तो काग्रेसका सदस्य न बन सके, यह दूसरी बात है। मत देनेका काम एक निश्चित काम है, इसलिए इसकी शर्त भी निश्चित होनी चाहिए, उसे दु साध्य नही होना चाहिए। कारपोरेशनके डिप्टी मेयर (उप-महापौर) श्री सुहरावर्दी कल सिरसे

पैरतक खादी पहनकर आये थे। वे नियमित रूपसे खादी नही पहनते, लेकिन कलका अवसर उन्हे खादी पहनने लायक लगा। अब ऐसे लोगोसे मैं कैसे कहूँ कि आप अदालतमे भी खादीका ही चोगा पहनकर खड़े हो? मैं तो सिर्फ यह आशा ही रख सकता हूँ कि जब ये राष्ट्रीय प्रसगोंपर खादी पहनेंगे तो खानगी मौकोपर सिर्फ जिदके कारण विदेशी या मिलके कपड़े नही पहनने लग जायेंगे। जो खादी पहनते है, वे तो पहनते ही रहेगें। जो कभी खादी नही पहनते, उन्हें भी अमुक प्रसगो पर खादीके वस्त्रोसे शुद्ध होकर काग्रेस मन्दिरमे प्रवेश करनेका मौका मिलेगा। आज तो काग्रेसमे जो प्रतिनिधि आते हैं, वे भी कहाँ खादी पहनते हैं? आज तो ९० प्रतिशत लोग खादीकी नही, बल्कि मिलकी ही धोती पहनकर काग्रेसमे आते हैं। इस शर्तके दाखिल हो जानेपर ऐसा तो नही होगा।

फिर यह सवाल उठा कि स्वराज्यवादियोंके साथ एका क्यों किया जाये। गांधीजीने अपने लेखमे इस सवालकी सविस्तार चर्चा की है।[1] उन्होंने अपनी उक्त दलीलको यह कहकर समाप्त कर दिया कि:

सरकारने स्वराज्यवादियोको लोक-हितका खयाल करके पकड़ा है, यह बात तो मनको जँचती ही नही। मेरा यह विश्वास क्षण-क्षण बढता जा रहा है और दृढसे-दृढतर होता जा रहा है कि उन्हे तो स्वराज्यवादी दलको कुचलनेके लिए ही पकडा गया है।

उपसंहार करते हुए उन्होंने कहा:

मुझे विश्वास है कि मेरा त्याग, 'यग इडिया' मे मैंने अपने जो आदर्श बताये है, उनमे से बहुत थोडेका ही त्याग है। मैंने किसी तत्त्व या सिद्धान्तका त्याग नही किया है। लेकिन अगर आपको ऐसा लगे कि मैंने तत्त्वका त्याग किया है, आपको ऐसा लगे कि मेरा त्याग अनुचित है तो आप मेरा पूरा विरोध करे। मैंने श्याम-बाबूको अपना उद्देश्य बताया था। आज मेरा उद्देश्य समस्त अव्यवस्थाको मिटाकर सुव्यवस्था कायम करना है, विवादको मिटाकर मेल-जोल कराना है, निष्प्राण जनताको एकताके सूत्रमे बाँध, उसमें शक्ति और निर्भयता लाना है। अगर मैंने कोई ऐसा दल खडा किया हो जो सिर्फ अन्ध-श्रद्धाको ही पोषण करता हो तो उसमें देशका अहित ही है। आम लोगोको मैं क्षमा कर सकता हूँ, लेकिन आप तो लेखक, वक्ता और बहस-मुबाहिसा करनेवाले लोग ठहरे। आपसे अपनी बुद्धि जैसा कहे, वैसा ही करे। ऐसा नही कि मुझसे भूल नहीं हो सकती। हाँ, मैं आपसे ज्यादा अनुभवी हूँ, इसलिए मैं शायद कम भूल करूँ। लेकिन सम्भव है कि जो कभी-कभी ही भूल करता हो वह जब भूल करे तो भयंकर भूल ही करे। सम्भव है कि स्वराज्यवादियोके कार्यको मैं अनुचित महत्त्व देता होऊँ। हिन्दू-मुस्लिम एकतापर जरूरतसे ज्यादा जोर देता होऊँ। इस हालतमे आप बेशक कोई नया रास्ता चुन लें और उसीका अनुसरण करे। ऐसा करके आप लोग अपने-आपको सम्मान देंगे। त्याग दो प्रकारके होते

१. देखिए "समझौता" और "समझौतेपर टिप्पणियाँ", १३-११-१९२४।

हैं। एक तो है अपने व्यक्तिगत मतका त्याग और दूसरा है सिद्धान्तका त्याग। स्वर्गीय गोखले कहा करते थे कि जनकल्याणके लिए अपने व्यक्तिगत मतका त्याग तो किया जा सकता है, लेकिन सिद्धान्तका नही। इसे ध्यानमे रखकर आप खुशी-खुशी जो रास्ता चाहते हो, अख्तियार करे।

इसके वाद खूब सवाल-जवाव हुए।

प्रश्न: अव कांग्रेस गरीवोंकी नहीं, पैसेवालोंकी ही रहेगी। कारण, पैसेवाले तो चाहे जहाँसे सूत खरीद लेगे।

उत्तर—नहीं, वह पूरी तरह गरीवोकी ही रहेगी। गरीवोको रुई देनेका काम काग्रेसका होगा और मेहनत देनेका काम गरीवोका। सामान्य वर्गके लोग भी सूत खरीदेगे नही, वल्कि स्वय कातेगे। जिनके लिए कातना अरुचिकर होगा और जो आलसी होगे, वे भले ही दूसरोसे कतवा ले।

आपने इस दुष्ट सरकारके साथ असहयोग आरम्भ किया और अव उसे धीरे-धीरे छोड़ते चले जा रहे है। इतना ही नहीं, अव तो आप दुष्टताके साथ सहयोग करनेकी भी सीख दे रहे हैं। स्वराज्यवादियोने ऐसे-ऐसे प्रपंच और झूठ चलाये है कि उनके साथ सहयोग कैसे किया जा सकता है?

मैंने ऐसा तो कभी कहा ही नही कि आप सव जगह असहयोग करे। असहयोग तो वही करना चाहिए जहाँ असहयोग न करनेका मतलव प्रतिपक्षीके दुष्टतापूर्ण कार्यमे भाग लेना हो। आप जो आक्षेप कर रहे है, वे अगर सही हो तो भी हमें उनके झूठमे तो हिस्सेदार वनना नही है और आप यह भूल जाते है कि हमने सरकारके साथ तीस वर्पतक सहयोग करनेके वाद ही असहयोगका सहारा लिया। स्वराज्यवादियो अथवा अपने भाइयोके साथ असहयोग करनेका तो कोई प्रसग ही नही आया। हमने उनके साथ इतना सहयोग ही कहाँ किया है कि उनके साथ असहयोग कर सके? आज तो हिन्दुओं और मुसलमानोके हृदयको वदलना ही मेरा काम है। मै सवसे इसी काममे मदद माँगता हूँ। उनका हृदय-परिवर्तन हो जाये तो तुरन्त स्वराज्य प्राप्त करनेकी मेरी आशा कई गुना वढ जायेगी।

आप तो नरमदलवालोको भी लेना चाहते है और हिंसावादियोके लिए भी रास्ता खोल देना चाहते है। यह क्या है और इन सवके वीच मेल कैसे वैठ सकेगा?

मुझे तो सत्यके लिए ही जीना है और सत्यके लिए ही मरना है। मै चाहता हूँ कि लोग और कुछ नही तो कमसे-कम सच्चे और ईमानदार तो वने। मै जो आदर्श स्थिति चाहता हूँ उसे यदि सवसे स्वीकार कराऊँ तो उससे ईमानदारी तो नही वढेगी, लेकिन पाखण्ड पैदा होगा। आज मैंने जिस प्रस्तावपर सही की है, उससे प्रामाणिकता वढेगी। मै सिर्फ इतना ही चाहता हूँ कि लोग छोटीसे-छोटी वातकी ही प्रतिज्ञा करके उसका पूरी तरह पालन करे। इसीलिए मै कहता था कि काग्रेसके सकल्पमे से "शान्तिपूर्ण और उचित" शब्द निकाल दिये जाये। अहिंसाकी प्रतिज्ञा लेकर हिंसाके रास्तेपर चलनेसे क्या यही अच्छा नही है कि अहिंसाकी प्रतिज्ञा ही न ली जाये? मेरे आदर्श अगर देशको पसन्द हो तो वह उन्हें स्वीकार करे, अगर

उसे वे स्वीकार नही हों तो फिर मैं उन्हें अपनी जेबमें रखे रहूँगा। फिर भी, जिन वस्तुओंका त्याग नही किया जा सकता, उनका त्याग तो मैंने नही किया। अगर कोई हिन्दू मुझसे आकर कहे कि मुझे हिन्दू-मुस्लिम एकताको उद्देश्यके रूपमे नही रखना चाहिए तो क्या मैं उसे स्वीकार कर लूं? उसी तरह अगर कोई सदस्यताकी शर्तोंमे मिलके कपडोंके उपयोगकी छूट देनेको कहे तो उसे भी मैं स्वीकार नही कर सकता था। कारण, वैसा करके तो मैं खादीका विनाश ही कर देता।

एक समय आप ऐसा कहते थे कि किसी सहयोगी वकीलसे तो ईमानदार बूट पालिश करनेवाला अच्छा है। लेकिन आज तो आप वकीलों और श्रीमन्तोंके बननेके लिए तैयार हैं।

हाँ, आप ठीक कहते हैं। मैंने जो कहा था, वह शब्दश ठीक था। आज असहयोग है कहाँ? अगर असहयोग पूर्ण रूपसे व्याप्त हो, अगर बूट पालिश करनेवाले जैसे लोग भी पूरा असहयोग कर रहे हो तो वे सहयोगियोको अलग रख सकते हैं। लेकिन, मैं कोई काग्रेसका मालिक नही हूँ। अगर मैं नेता होना चाहूँ तो सदस्योंके लिए अशक्य शर्तें रखकर नही, बल्कि सहजसाध्य शर्तें रखकर ही हो सकता हूँ। अगर झगडा-तकरार नही होता, कटुता नही फैली होती तो मैं अपनी गाडी पहलेकी ही तरह चलाता। लेकिन, ऐसा कुछ रहा नही, इसलिए मुझे लगा कि अभी मुझे चुप ही रहना चाहिए और लडाईकी बात भूल जानी चाहिए।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १६-११-१९२४

२५४. भाषण: हावड़ा नगरपालिका द्वारा दिए मानपत्रके उत्तरमें[1]

७ नवम्बर, १९२४

अध्यक्ष महोदय, पार्षदगण और भाइयो,

आज सायकाल आपने जो सुन्दर मानपत्र भेट किया है, उसका अगर लम्बा उत्तर न दूं तो क्षमा कर दीजिए। अभी तो समयसे मेरी होड लगी हुई है। मुझे दिल्ली जानेके लिए डाकगाडी पकड़नी है। बाहर बहुत बडी भीड मेरा इन्तजार कर रही है और पता नही स्टेशन पहुँचनेमें मुझे कितना समय लग जायेगा। इसलिए यदि भाषण समाप्त करके मैं तुरन्त सभा-भवन छोड दूं तो कृपया क्षमा कर दीजिए। इस मानपत्रके लिए और इसमें आपने मेरे बारेमे कृपापूर्वक जो उद्गार व्यक्त किये है उनके लिए मैं आपको हृदयसे धन्यवाद देता हूँ। इस मानपत्रका मैं जो सबसे सक्षिप्त और उपयुक्त उत्तर दे सकता हूँ वह है कलकत्ता नगर निगम द्वारा

१. मानपत्र हावड़ा टाउन हॉलमें भेंट किया गया था।

भेंट किये गये मानपत्रके उत्तरमें कही बातोंको दुहरा देना। लेकिन यदि उसमें कुछ जोड़ना हो तो मैं आशा करता हूँ कि यह काम देशबन्धु दास कर लेंगे। मेरे कल सायंकालके भाषणसे अधिक वे जो-कुछ भी आपसे कहेंगे, उसे और नगरपालिकाके काम-काज तथा उसकी सीमाके अन्दर रहनेवाले लोगोंके कल्याणके सम्बन्धमें कहे गये उनके एक-एक वाक्यको मैं अपना ही वाक्य मानूंगा। मैं एक बार फिर आपके उद्‌गारों तथा आपके मानपत्रके लिए आप सबको धन्यवाद देता हूँ और आशा करता हूँ कि हम भारतको शीघ्र ही अपनी मनोवांछित स्थितिमें देखेंगे। धन्यवाद।

[अंग्रेजीसे]

अमृत बाजार पत्रिका, ८-११-१९२४

२५५. भेंट: एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिसे[1]

कलकत्ता
७ नवम्बर, १९२४

यह पूछनेपर कि आपके और स्वराज्य पार्टीके बीच हुए समझौतेका देशपर क्या प्रभाव होगा श्री गांधीने कहा:

अभीसे निश्चित तौरपर तो कुछ नहीं कहा जा सकता, लेकिन मुझे आशा है कि अपरिवर्तनवादी लोग उसे हृदयसे स्वीकार कर सकेंगे और जो लोग १९२० में कर्त्तव्य मानकर कांग्रेससे अलग हो गये थे वे अब पुनः वापस आ जाना ठीक मानने लगेंगे।

श्री गांधीने यह आशा भी व्यक्त की कि इस नये परिवर्तनसे खद्दरके उत्पादनमें भी वृद्धि होगी।

बंगालकी स्थिति तथा विनियम ३ और विशेष अध्यादेशके अधीन की गई गिरफ्तारियोंके बारेमें पूछनेपर उन्होंने कहा:

दमनके परिणामस्वरूप भारतके राजनीतिक दलोंमें एकता पैदा होनी चाहिए, क्योंकि स्थितिका यथाशक्य ध्यानपूर्वक अध्ययन करनेके बाद भी मेरा यह विचार कायम है कि यह दमन स्वराज्य दलपर ही किया गया एक प्रहार है। दूसरे शब्दोंमें, यह सरकारका दृढतापूर्वक विरोध करनेके उस संकल्पपर प्रहार है जिसने सरकारको परेशानीमें डाल रखा है, भले ही वह विरोध कितना ही सवैधानिक क्यों न हो। यदि सभी दल मिलकर इस दमन-नीतिका स्पष्ट शब्दोंमें विरोध करें तो सरकारको इस बातका अहसास हो जायेगा कि जनमत पूरी तरह उसके विरुद्ध है। जहाँतक खुद मेरा सम्बन्ध है, मुझे बहुत खेद है कि इस कठिन समयमें असहयोग या यदि अधिक सही शब्दका प्रयोग करें तो सविनय अवज्ञाके लिए उपयुक्त वातावरण नहीं है, वरना मैं समझता हूँ, बंगाल सरकारने जो तरीके अपनाये हैं वे तो ऐसे हैं कि

१. भेंट कलकत्तासे प्रस्थान करनेसे पहले हुई थी।

पूर्ण अहिंसामे विश्वास रखनेवाले लोग जो भी कडीसे-कडी सीधी कार्रवाई कर सकते है, उन्हे करनी चाहिए थी। यह सरकारकी मनमानीका भी उत्तर होगा और विप्लव-वादी दलको भी यह दिखानेका एक कारगर उपाय होगा कि उसका तरीका निरर्थक है। सरकारने जैसी दमन-नीति अपनाई है उसे और विप्लववादी दलके तरीके, दोनो को ही मै अराजकता मानता हूँ। सरकारकी कार्रवाईसे खतरेकी ज्यादा सम्भावना है, क्योकि वह कार्रवाई अधिक सगठित रूपसे और कानूनके नामसे की जाती है। किन्तु, मै यह स्वीकार करता हूँ कि जबतक हम आपसमे ही झगड़ रहे है और वातावरण-मे हिंसाकी भावना व्याप्त है, तबतक सविनय अवज्ञा असम्भव है। इससे कोई फर्क नही पडता कि हिंसाके शिकार फिलहाल हम ही बने हुए है। किन्तु, यदि हिन्दुओ और मुसलमानोने अपना आपा नही खो दिया होता और काग्रेसके भीतर मतभेद न होता तो मै दिखा देता कि हिंसक तरीकोकी अपेक्षा सविनय अवज्ञा लाख गुनी अधिक कारगर और कार्य-साधक है। चूँकि सविनय अवज्ञाके लिए यह आवश्यक है कि वह अहिंसात्मक हो तथा खुले तौरपर और कठोर सत्यनिष्ठासे की जाये, इसलिए यह एक ऐसा अस्त्र है जिसका उपयोग अत्यन्त प्रामाणिक व्यक्ति ही कर सकते है।

यह पूछनेपर कि भारतमें रहनेवाले उन यूरोपीयोंका रवैया क्या होना चाहिए जिनका सरकारसे सम्बन्ध नहीं है, श्री गांधीने कहा :

मेरे विचारसे उनका रास्ता बिलकुल साफ है। जहाँतक मुझे मालूम है, अराजकतावादी गतिविधियोका विरोध करने और उन्हे डुबानेमे सारा भारत उनसे सहयोग करेगा, किन्तु उनसे भारतीय दृष्टिकोण तथा भारतीयोंकी आकाक्षाओको समझनेकी अपेक्षा की जाती है। उनसे यह अपेक्षा की जाती है कि वे सत्ताके मनमाने प्रयोगका विरोध करनेमे भारतीयोका साथ देगे और भारतीयो द्वारा अपने स्वतन्त्रताके अधिकारको प्रतिष्ठित करनेके प्रयासमे उनसे सहयोग करेगे।

[अंग्रेजीसे]

न्यू इंडिया, ८-११-१९२४

२५६. समयका मूल्य

हमारे सम्बन्धमे ऐसा कहा जाता है कि हम समयके मूल्यको नही जानते। इस कथनमे बहुत सत्य है। मै जानता हूँ कि हमारे महान् नेता भी समयकी कीमत पूरी तरह नही समझते। कदाचित् ही कोई सभा नियत समयपर आरम्भ होती है। हजारो लोग धैर्यपूर्वक समयके अपव्ययको सहन करते है।

लेकिन वस्तुत देखा जाये तो अंग्रेजी कहावतके अनुसार समय ही पैसा है, क्योंकि समयके बिना काम — मजदूरी नही होती और मजदूरीके बिना सम्पत्तिका निर्माण नही होता। खानमे दबे हुए जवाहरातकी कीमत कुछ भी नही है। उनकी खोजमे जो समय लगता है, अर्थात् उसमे जो श्रम करना पडता है, उसीकी कीमत है। जितनी आसानीसे लोहा मिलता है, यदि उतनी ही आसानीसे सोना भी मिलने

लगे तो, यद्यपि सोना बहुत सुन्दर होता है, तथापि उसकी आज जितनी कीमत है उतनी कीमत न रहे। सूर्यकी किरणें सोनेसे करोडो गुना ज्यादा सुन्दर हैं, लेकिन वे हमें इस देशमे जितनी चाहे उतनी मिलती हैं, इसलिए हम उनका कोई मूल्य नही समझते। लेकिन जहाँ सूर्यके प्रकाशका अभाव होता है, वहाँ लोग उसे प्राप्त करनेके लिए दाम देते हैं।

हमारी सभाओकी कार्यवाही समयानुसार नही चलती। इससे हमारा जितना समय नष्ट होता है और समयके नष्ट होनेसे समाजको जो नुकसान होता है, उसका हमें कोई भान नही है। किन्तु सार्वत्रिक स्वेच्छा-कताईसे हमे इस चीजकी पर्याप्त तालीम मिल रही है। जबतक प्रत्येक कातनेवाला और प्रत्येक मण्डल अपना-अपना कार्य समयपर नहीं करता तबतक हजारो और लाखो कातनेवालोके सूतको एकत्र करना, जाँचना और वर्गोमें बाँटना — यह सब असम्भव नही तो कठिन अवश्य हो जायेगा।

गुजरात पहले नम्बरपर आता है, इससे हमे खुशीसे फूल उठनेका कोई कारण नही है। जहाँ बहुत थोडा काम होता हो, वहाँ कुछ अधिक काम करनेवाला भी छाजता है, लेकिन जबतक वह आवश्यक सीमातक नही पहुँच जाता तबतक उसका यह छाजना व्यर्थ है। गुजरातमे अभीतक दो हजार कातनेवाले भी नही तैयार हुए है। लेकिन यदि दो हजार भी हो जाये तो भी उनकी क्या गिनती है? हमारा उद्देश्य सबको खादीधारी बना देना है, घर-घर सूत कातनेका यज्ञ आरम्भ करवाना है। इस उद्देश्यका विचार करते हुए गुजरातके आँकड़ोका मूल्य नगण्य प्रतीत होता है।

यदि हम इस कार्यको बहुत आगे बढाना चाहते हो तो हमे समयका मूल्य समझना-सीखना ही होगा। इसीलिए मैंने सुझाव दिया है कि प्रत्येक कातनेवालेको धर्म मानकर नित्य आधा घटा सूत कातना चाहिए। यदि उसे बिना नागा किये नित्य आधा घटा कातना हो तो उसे पहलेसे ही समय निर्धारित कर लेना चाहिए। यदि वह ऐसा करेगा तो देखेगा कि उसका एक भी दिन बिना सूत काते नही जायेगा तथा वह निश्चित दिन और नियत समयपर अपना सूत, जहाँ भेजना हो, वहाँ भेज सकेगा।

इससे सबका समय बचता है। इस तरह उपसमितियाँ निश्चित दिन और निश्चित समयपर सूत इकट्ठा करके प्रान्तीय समितियोको और प्रान्तीय समितियाँ उसे निश्चित समयपर मुख्य समितिको भेज सकती हैं। यदि ऐसा हो तो समयकी कितनी बचत हो और काममें कितनी सुविधा हो जाये?

गुजरातमें खासी व्यवस्था आती जा रही है। लेकिन अभी भी बहुत-कुछ करना बाकी है। कातनेका यह काम एक दिनके लिए अथवा एक वर्षके लिए नही है। इसका सम्बन्ध तो हिन्दुस्तानके अस्तित्वके साथ है। इसके बिना स्वराज्य नही मिल सकता और स्वराज्यकी रक्षा भी नही की जा सकती। यहाँ यदि कोई स्वराज्यका अर्थ आर्थिक स्वतन्त्रता करना चाहे तो भले ही करे। हमारे कार्यके लिए यह सीमित अर्थ ही पर्याप्त है। मेरा यह दृढ विश्वास है कि-यदि हम आर्थिक स्वतन्त्रता प्राप्त कर लेगे तो और सब-कुछ स्वत ही प्राप्त हो जायेगा।

अत· कताईकी प्रगति सुदृढ होनी चाहिए और उसमे दिन-प्रतिदिन वृद्धि होनी चाहिए। कताईके इस कार्यमे हमारी त्याग-शक्ति, देश-भक्ति समयके मूल्यको जाननेकी शक्ति, योजना-शक्ति, श्रद्धा और दृढता आदि सबकी कसौटी निहित है।

काग्रेसका अधिवेशन होनेमे अब कोई देर नही है। उसके पहले अब हमारे पास केवल दो महीने ही रह गये है। हमे सारा सूत पूरे हिसाबके साथ पन्द्रह तारीखसे पहले-पहले अखिल भारतीय खादी बोर्डको भेज देना चाहिए। मै तो कातनेवालोकी सख्यामे बहुत ज्यादा वृद्धि देखना चाहता हूँ। सख्याकी इस वृद्धिकी चाबी भी समयानुसार कार्य करनेमे ही निहित है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ९-११-१९२४

२५७. पत्र : सतीश चन्द्र मुखर्जीको

९ नवम्बर, १९२४

प्रिय सतीश बाबू,

आप चले गये, यह जानकर बड़ा दु.ख हुआ। मै तो सोच रहा था कि आपसे मिलकर सभी तरहके विषयोपर खूब जमकर बातचीत करूँगा। आशा है, ऐसा कोई विशेष गम्भीर समाचार नही मिला होगा, जिसके कारण आपको इस तरह अचानक जाना पडा। आशा है, कृष्टोदास इसका कारण नही था। मेरी तो सलाह है कि उसके बारेमे आप चिन्ता न करे। मैने उसे चाँदपुर जानेकी अनुमति तभी दी, जब मुझे लगा कि उसके लिए वहाँ जाकर अपने परिजनोसे मिलना अब ठीक है। उसने मुझसे पक्का वादा कर रखा है कि वह आगामी १८ तारीखसे पहले-पहले या ज्यादासे-ज्यादा १८ तारीखतक लौट आयेगा। मै डा० अन्सारीके घर, दरियागजमें टिका हुआ हूँ। आशा है श्री गरोडियाके घर आपका समय आनन्दपूर्वक बीता होगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत सतीश चन्द्र मुखर्जी
११०, हाजरा रोड
कलकत्ता

अग्रेजी पत्र (जी० एन० ५६०८) की फोटो-नकलसे।

२५८. पत्र : कृष्टोदासको

९ नवम्बर, १९२४

प्रिय कृष्टोदास,

तुम समझ सकते हो कि यह जानकर मुझे कितना दुःख हुआ होगा कि हमारे दिल्ली पहुँचनेसे दो ही घंटे पहले सतीश बाबू यहाँसे जा चुके थे। मैं बड़ा परेशान रहा और अब भी हूँ। मैंने बहुत सारे विषयोंपर उनसे जमकर बातचीत करनेकी उम्मीद लगा रखी थी। स्वराज्यवादियोंके साथ हुए समझौतेपर भी बातचीत करनी थी। मैं निश्चित तिथिसे पहले ही यहाँ तुम्हारी राह देखूंगा। हमें १९ तारीखको यहाँसे बम्बईके लिए चल देना होगा। आशा है, तुम्हारे पिताजी स्वस्थ-सानन्द होंगे और चाँदपुरमें तुम मजेमें होगे। हम लोग डा० अन्सारीके घर टिके हुए हैं।

तुम्हारा,
बापू

श्रीयुत कृष्टोदास
११०, हाजरा रोड
भवानीपुर
डाकघर — कालीघाट
कलकत्ता
बंगाल

अंग्रेजी पत्र (जी० एन० ५६०९) की फोटो-नकलसे।

२५९. भेंट : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिसे

दिल्ली
१० नवम्बर, १९२४

कलकत्तेमें स्वराज्य दलके नेताओं और गांधीजीके बीच हुए समझौतेके प्रश्नपर एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिने इसी १० तारीखको दिल्ली लौटनेपर गांधीजीसे भेंट की थी। इस भेंटका निम्न विवरण प्रकाशित किया गया है:

प्रतिनिधिने उनसे पूछा कि आपने और श्री दास और श्री नेहरूने जिस समझौते पर हस्ताक्षर किये हैं, यदि उसका उद्देश्य नरमदलीय और दूसरे लोगोंको कांग्रेसमें फिर सम्मिलित होनेका निमन्त्रण देना है तो आप सबने इसकी अपील निकालनेसे पहले उनसे सलाह क्यों नहीं की? श्री गांधीने उत्तर दिया:

इससे पहले कि स्वराज्यवादी और अपरिवर्तनवादी किसी संयुक्त कार्रवाईपर सहमत हो सके ऐसी सलाह करना असम्भव था; क्योंकि इस प्रकारकी अपील कांग्रेसके दोनों पक्षोंकी संयुक्त अपील होनी चाहिए। असल बात यह है कि अपरिवर्तनवादियोंसे भी कोई सलाह नहीं की गई है। यह सच है कि मैं बंगालमें अपरिवर्तनवादियोंसे मिला था और मैंने उनसे स्थितिके सम्बन्धमें बातचीत की थी, जैसे कि उदाहरणके लिए मैं श्री सत्यानन्द बोससे मिला था और मैंने उनसे भी इस विषयमें विचार-विनिमय किया था। किन्तु मैंने उन लोगोंकी स्वीकृति प्राप्त करनेकी कोशिशतक नहीं की थी। इसका सीधा-सादा कारण यह था कि मेरे पास ऐसी कोई व्यवस्था न थी जिसके जरिये एक समुदायके रूपमें अपरिवर्तनवादियोंकी इच्छा जान सकूँ और उनसे विधिवत् कोई वचन ले सकूँ। इसलिए मैंने सबसे अच्छा यही समझा कि मैं अपनी व्यक्तिगत राय दे दूँ और उसे समुचित विचारके लिए देशके सम्मुख रख दूँ। आप देखेंगे कि यह समझौता उन सब दलोंके नाम एक सिफारिशके रूपमें है जो कांग्रेसमें शामिल हैं अथवा कांग्रेसके बाहर हैं। सलाह करनेका समय तो अब आया है। अपरिवर्तनवादी अपनी राय अगली अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठकमें व्यक्त कर सकेंगे। मौलाना मुहम्मद अलीने कांग्रेस-अध्यक्षकी हैसियतसे इस सम्मेलनके लिए सब दलोंके प्रतिनिधियोंको, जिनमें 'यूरोपियन एसोसिएशन' के प्रतिनिधि भी शामिल हैं, निमन्त्रण भेज दिये हैं।

स्वराज्य दल और मैंने जो सिफारिश की है वह सम्मेलनमें सब दलोंके सामने रखी जायेगी कि वे उसपर सहानुभूतिपूर्वक विचार करें। समझौतेसे यदि कोई वचन-बद्ध है तो वह स्वराज्य दल और व्यक्तिगत रूपसे मैं स्वयं ही हूँ, अन्य कोई भी व्यक्ति या दल नहीं। हर एक व्यक्ति हमें समझानेके लिए स्वतन्त्र है और यदि कोई ऐसा दूसरा समझौता हो जिससे सब दल किसी एक कार्यक्रमके बारेमें एक मंचपर इकट्ठे हो सकें और जिससे हमें अपने समान लक्ष्यकी ओर आगे बढ़नेमें आसानी हो और जो एक ओर तो बंगाल सरकारकी दमन-नीतिका कारगर उत्तर हो और दूसरी ओर गुमराह अराजकतावादियोंकी इच्छासे भी मेल खा सके और इस प्रकार उन्हें सही मार्गपर ला सके तो मुझे पूरा भरोसा है कि उस समझौतेके मार्गमें न तो स्वराज्य दल बाधक होगा और न स्वयं मैं ही। समस्त नेताओंसे मेरा अनुरोध है कि वे मौलाना मुहम्मद अलीका निमन्त्रण स्वीकार कर लें और बम्बईके आगामी सम्मेलनकी कार्रवाईमें सहायता और मार्गदर्शन करें।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १३-११-१९२४

२६०. पत्र : मुहम्मद अलीको

११ नवम्बर, १९२४

प्रिय भाई,

महादेव तो मुझे 'नवजीवन'के प्रवन्धकका पत्र दे ही नही रहा था, लेकिन मेरे जोर देनेपर दे दिया। उसे मैंने पढ लिया है। मेरे मनको गहरी चोट लगी, वहुत अपमानित-सा महसूस किया। मुझे ऐसी उम्मीद नही थी कि 'नवजीवन'की ओरसे आपको ऐसा भी पत्र भेजा जा सकता है। मै किसी तरह अपनेको इस पत्रकी जिम्मेदारीसे अलग नही कर सकता। लेकिन मैं देख रहा हूँ कि इस तरहकी अपूर्णता-का बोझ मुझे जीवन-भर ढोना ही पडेगा। अपूर्ण व्यक्ति जिन्दगीके साथ मानो जुआ खेलता रहता है और इस तरह वरावर नुकसान उठाता रहता है। यही कारण है कि ससारके कुछ श्रेष्ठतम व्यक्तियोंने भी सबसे नाता तोडकर सिर्फ अपने स्रष्टाके सान्निध्यमे ही रहना पसन्द किया है। स्वामीसे सम्वन्व तोड लेनेको न मेरा जी चाहता है, न मुझमें उतनी हिम्मत है। वह भला आदमी है, वहादुर और ईमानदार है। जाति अथवा धर्मको लेकर उसके मनमे कोई पूर्वग्रह नही है। लेकिन उसमे कुछ-एक चीज ऐसी है जिनके कारण कभी-कभी वह दूसरोको चोट पहुँचानेवाले काम कर जाता है। आप मेरी खातिर उसे क्षमा कर दे और यदि क्षमा कर दे तो आप मुझे यह भी अवश्य लिख भेजे कि आपके विचारसे 'नवजीवन' आपका कुल कितनेका देनदार है। इससे मैं वहुत-सी परेशानियोसे वच जाऊँगा।

यह मै इसलिए लिख रहा हूँ कि जव हम लोग मिलते है तव तो वस राज-नीति और दर्शनकी ही चर्चाओमे डूव जाते है। चर्चाके लिए हमे घरेलू मामले वडे मामूली लगते है। लेकिन मेरे जीवनमे उनका स्थान प्रमुख है। वे मुझे अपनी लाचारियाँ पहचानना सिखाते है।

आपका,
मो० क० गांधी

[अग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य नारायण देसाई

२६१. पत्र : फूलचन्द शाहको

कार्तिक सुदी १५ [११ नवम्बर, १९२४][1]

भाईश्री फूलचन्द,

आपके पिछले पत्रका मुझे स्मरण है। मैं खुद ही आपको लिखूँगा, इस आशासे मैंने महादेवसे पत्र लिखनेके लिए नही कहा। इसी बीच मेरा कार्यक्रम अनियमित हो गया और बादमे मैं कलकत्ता ही चला गया। आपका पत्र ऐसा था कि उसका उत्तर तुरन्त भेज देना चाहिए था। अब तो आपको यही सन्तोष दे सकता हूँ कि आपसे क्षमा माँग लूँ। वल्लभभाईको लिख रहा हूँ कि वे आपको ५,००० रुपये दे दें। जैसा कि आप लिखते है, इतने पैसेमे आपका काम चल जायेगा। मेरा खयाल है कि मैं इस महीनेके आखिरी हफ्तेमे आश्रम पहुँच ही जाऊँगा। आप उस समय मुझसे मिलियेगा, ताकि मैं आपको सब-कुछ और अच्छी तरह समझा सकूँ।

हम शिवलालभाईकी जमीनके बारेमे भी बातचीत करेंगे और वढवानकी पाठशालाको बाहरी सहायतासे चलाना कहाँतक उचित है, इस नैतिक प्रश्नपर भी विचार करेंगे। यह प्रश्न अनेक पाठशालाओंपर लागू होता है।

बापूके अशीर्वाद

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० २८२३) से।
सौजन्य : शारदाबहन शाह

२६२. पत्र : लक्ष्मीको

कार्तिक सुदी १५ [११ नवम्बर, १९२४]

[चि० ल०][2] क्ष्मी,[3]

तुम्हारा दूसरा पत्र मिल गया था। तुम्हारी लिखावटमे अभी और सुधार होना चाहिए। मुझे और दूदाभाईको नियमित रूपसे पत्र लिखनेकी आदत डालो।

आशा है, प्रसन्न होगी। इसी महीनेकी [अंग्रेजीके अनुसार] आखिरी तारीख तक वहाँ पहुँचनेकी आशा करता हूँ।[4] तुम कातने और प्रात.काल जल्दी उठनेके

१. डाककी मुहरसे।

२. मूलमें यहाँ कुछ कटा-फटा है।

३. दूदाभाई और दानी बहनकी पुत्री; ये लोग मई, १९१५ में साबरमती आश्रमकी स्थापनाके तुरन्त बाद ही वहाँ आकर बस गये थे।

४. गांधीजी २६ नवम्बर, १९२४ को साबरमती आश्रम पहुँचे थे।

नियमका पालन करोगी। मैं सबके मुँहसे यह बात सुनना चाहता हूँ कि अब तो लक्ष्मी समझदार हो गई है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ६१००) से।
सौजन्य : छगनलाल गांधी

२६३. तार : वी० सुब्रह्मण्यमको[1]

[११ नवम्बर, १९२४ के पश्चात्]

पत्र मिला।[2] आपके साथ मेरी हार्दिक सहानुभूति है। मेरा खयाल है 'यंग इंडिया' में अधिकांश प्रश्नोंके उत्तर मिल जायेंगे। अगले अंकमें और भी खुलासा हो जायेगा।[3] व्यक्तिशः मैं असहयोगीके रूपमें सदाकी भाँति दृढ़ हूँ।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ११७१६) की माइक्रोफिल्मसे।

२६४. पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको[4]

दरियागंज
दिल्ली
१२ नवम्बर, १९२४

प्रिय मित्र,

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी तथा अन्य सार्वजनिक संस्थाओंके प्रतिनिधियोंके बीच होनेवाली आगामी परिषद्के सम्बन्धमें मौलाना मुहम्मद अली द्वारा भेजा निमन्त्रण-पत्र आपने पढ़ा[5] ही होगा। आशा है, आप परिषद्में शामिल हो सकेंगे। उसका उद्देश्य यह है कि यदि किसी तरह सम्भव हो तो बंगालमें चलनेवाले दमनके सम्बन्धमें हर तरहके विचारकी अभिव्यक्तिका मौका दिया जाये। जहाँतक मैं समझ पाया हूँ इस दमनका लक्ष्य अराजकतावादी गतिविधियाँ नहीं, बल्कि सरकारको

१. मन्त्री, प्रान्तीय खादी-बोर्ड, सीतानगरम्, जिला गोदावरी, आन्ध्र।
२. ११ नवम्बरका पत्र।
३. स्वराज्य दलके नेताओंके साथ जारी किये गये संयुक्त वक्तव्यके सम्बन्धमें।
४. यह एक गश्ती पत्र जान पड़ता है, जो जी० ए० नटेसन (जी० एन० २२२१) और डा० सप्रूके नाम (जी० एन० ७५९२) भी लिखा गया था।
५. जी. एन. साधन सूत्रमें यहाँ 'देखा' शब्द है।

परेशानीमें डालनेवाले सवैधानिक सुधारोके आन्दोलनको कुचल देना है। परिषद् बुलाने-का एक उद्देश्य इस बातका भी पता लगाना है कि अन्य मामलोमे अपना पृथक अस्तित्व रखते हुए भी राष्ट्रीय विकासमे सहायक एक सर्वसामान्य रचनात्मक कार्य-क्रमको पूरा करनेके लिए काग्रेसके मचपर सभी दलोंका मिल-जुलकर काम करना सम्भव है या नही। मुझे भरोसा है कि यदि आप परिषद्मे शामिल हो सके तो सभी दलोको सन्तोषप्रद लगनेवाले एक निष्कर्षपर पहुँचनेमे आपका सहयोग और परामर्श परिषद्के लिए बड़ा मूल्यवान् साबित होगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
लेटर्स ऑफ श्रीनिवास शास्त्री

२६५. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

दिल्ली
१२ नवम्बर, १९२४

प्रिय जवाहरलाल,

मुझे तो बेशक यह जरूरी लगता है कि कार्यकर्त्ताओंका एक उडन-दस्ता हो। उसमे हिन्दू और मुसलमान दोनो हो, जो खबर पाते ही सकट-ग्रस्त क्षेत्रोमे जाँच-पडतालके लिए चल पडे। हम हमेशा इस बातका इन्तजार नही कर सकते कि कोई विशिष्ट व्यक्ति ही जाये। अब उदाहरणके लिए उसी मामलेको लो जो कल तुम्हारे पास भेजा गया है। जो बयान दिये गये है, वे यदि सच हो तो अपराधियोका पर्दाफाश कर देना चाहिए, यदि वे झूठे हो तो अखबारके सवाददाताओके खिलाफ कार्रवाई की जानी चाहिए। जाँच तत्काल और पूरी-पूरी की जानी चाहिए। इस कामके लिए मैं महादेवको तैयार कर रहा हूँ और प्यारेलालको भी राजी कर रहा हूँ। प्यारेलालके मनमे व्यर्थ ही सशय है। क्या मजर अली यह काम कर सकेगे? इसके लिए उन्हे वेतन भी दिया जा सकता है। पारिश्रमिक स्वीकार करनेमे उन्हे कोई आपत्ति नही होनी चाहिए। इसके कारण उनके कताईके काममे रुकावट डालना भी जरूरी नही होगा। उनका कार्यक्षेत्र सिर्फ सयुक्त प्रान्ततक ही सीमित रखा जा सकता है, हालाँकि मैं तो चाहूँगा कि जबतक इस क्षेत्रमे कार्यकर्त्ताओकी एक पूरी टोली न उतर आये तबतक ऐसी कोई सीमा न बाँधी जाये। आशा है, कल तुम्हारे पास जो मामला भेजा है, उसकी जाँचके लिए तुम किसीको तत्काल भेज दोगे। तुम्हारे पास कुछ हफ्ते पहले जो मामला भेजा गया था, उसका क्या हुआ?

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

[पुनश्च]

मैं यह माने लेता हूँ कि यदि पहले नही तो गुरुवारको तो तुम पिताजीके साथ बम्बई आ ही जाओगे। उसी दिन सुबह मैं वहाँ पहुँच रहा हूँ। श्रीमती नायडू कल सुबह यहाँसे प्रस्थान करेगी।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।

सौजन्य नारायण देसाई

२६६. पत्र : शुएब कुरैशीको

१२ नवम्बर, १९२४

प्रिय शुएब,

श्रीमती नायडूने मुझे बताया है कि आजकल तुम्हारा मन बहुत खिन्न रहता है और मनुष्य तथा ससारपर से विश्वास उठ जानेके कारण तुम दोनोसे कतराने लगे हो। यदि ऐसा हो तो यह तुम्हारे लिए उचित नही है। मैंने तुम्हे सदासे एक धर्मात्मा व्यक्तिके रूपमें जाना है और औरोसे भी ऐसा ही सुना है। तुम अत्यधिक सवेदनशील हो, यह तो मैंने खुद ही देखा है। इस सवेदनशीलतापर काबू पाना बहुत ज्यादा मुश्किल नही है। लेकिन मनकी खिन्नतापर विजय पाना उतना सहज नही है। पर तुम ऐसे क्यो हो गये हो? हमे तो बहुत लम्बी और विकट लडाई लडनी है। अगर ईश्वरकी मर्जी हुई तो यह जल्दी भी खत्म हो सकती है। लेकिन यदि लडाई लम्बी और विकट ही हो तो क्या कोई सिपाही इसपर शिकवा-शिकायत कर सकता है? नही, उसे तो ऐसा नही ही करना है। यदि दूसरे लोग लडखडाये तो जिसमे आस्था है, वह उसी अनुपातमें और दृढ होता जाता है। अत, मैं तो तुमसे यही अपेक्षा रखता हूँ कि हमारे चारो ओर जो कमजोरियाँ और उलझने दिखाई दे रही है, उनका खयाल रखते हुए तुम और भी दृढ बनो और अधिक सकल्पके साथ जुट जाओ। इसलिए उदासी छोडो। अपना हृदय मुक्त रखो।

कृष्टोदासने मुझे बताया कि तुमने अभीतक गुलबर्गा-रिपोर्ट पूरी करके लौटाई नही। उसे भेज दो या २० तारीखको जब मैं वहाँ आऊँ तबतक उसे तैयार कर रखना। मैं १८ तारीखको एक्सप्रेससे रवाना होनेकी उम्मीद रखता हूँ। शायद हकीम साहब और डा० अन्सारी भी मेरे साथ होगे।

कृष्टोदास एक हफ्तेके लिए पीछे रह गया है। उसके कुटुम्बके लोग उससे मिलनेको बहुत बेकल थे। इसलिए वह चाँदपुर चला गया। वह १८ तारीखको या उससे पहले ही लौट आयेगा।

श्रीमती नायडू कान्फ्रेसकी तैयारी करनेके लिए कल रवाना होगी। शायद तुम्हे मालूम न हो कि मैं डा० अन्सारीके घर टिका हुआ हूँ।

तुम्हारा,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

२६७. पत्र : लाला लाजपतरायको

द्वारा डा० अन्सारी
दरियागज
१२ नवम्बर, १९२४

प्रिय लालाजी,

पत्रके उत्तरमे विलम्बके लिए आप क्षमा करेगे। आप जानते ही है कि मुझे कलकत्ता भागना पड़ गया था और वहाँ मुझे मिनट-भरकी भी फुरसत नही मिल पाई कि कुछ लिखूँ। अब भी मुझमे पूरी शक्ति नही आ पाई है।

रावलपिण्डी आकर मैं क्या करूँगा? अब देखता हूँ, हिन्दुओने तो कमिश्नरकी शर्तें भी स्वीकार कर ली है। मैं उन्हे कोई राहत नही पहुँचा सकता, वहाँ सत्यकी जानकारी पा सकना भी मेरे लिए मुश्किल है। उन्हे कोई भौतिक सुख-सुविधा भी मैं नही दे सकता। यह काम तो बहुत-सी सस्थाएँ कर रही हैं। जो एक काम मैं उपयोगी ढंगसे कर सकता हूँ, उससे भी मैं लाचार कर दिया गया हूँ। अगर आप अब भी समझते हो कि मुझे रावलपिण्डी आना ही चाहिए तो मैं आ जाऊँगा। लेकिन अब तो बम्बईकी बैठकके बाद ही यह सम्भव होगा।

फिर हमारे मिलनेकी भी बात है। डा० सत्यपालका[1] कहना है कि पजाब राजनैतिक परिषद्[2] दिसम्बरके पहले हफ्तेमे होनेवाली है। क्या आप तबतक वहाँ रहेगे? हम लोग उसी अवसरपर मिलेगे या उससे पहले? मुझे तो मगलवारको यहाँसे चल देना है। क्या आप बम्बई जा रहे है? आपका स्वास्थ्य यह गवारा करेगा? अगर आप बम्बई न जा रहे हो और चाहते हो कि मैं दिसम्बरसे पहले ही आपसे मिलूँ तो कृपया तार द्वारा सूचित करे। आगामी १८ तारीखको अर्थात्

१. पंजाबके कांग्रेसी-नेता, जिन्हें १० अप्रैल, १९१९ को निर्वासित किया गया था।
२. मूलमें पी० पी० कान्फ्रेंस है, जो अनुमानतः उक्त शब्दोंका ही संक्षिप्त रूप है।

मगलवारको मुझे यहाँसे बम्बई रवाना हो जाना है। सोमवार मेरा मौनवार है, उस दिन तो मैं कुछ करता नहीं हूँ। इस हालतमें मेरे लिए जो सम्भव है वह यही कि शुक्रवारकी रातको यहाँसे चलूँ, शनिवार आपके साथ विताऊँ और उसी दिन रातमें चलकर रविवारको यहाँ लौट आऊँ। अगर यह नहीं हुआ तो फिर हमारा मिलना दिसम्बरके आरम्भमें ही हो सकेगा — मतलब यह कि अगर हम बम्बईमें नहीं मिल सके तब। अब आप जो उचित समझें आज्ञा दें।

मेरे तथा दास और मोतीलालके हस्ताक्षरोंसे प्रकाशित वक्तव्यपर मैं आपके विचार जानना चाहूँगा। परिस्थिति ज्यादासे-ज्यादा जटिल है और सबसे बुरी बात तो यह है कि यद्यपि हर आदमी समाधानके लिए मेरी ही ओर देखता है, किन्तु मुझे लगता है कि मेरे लिए कहीं कोई स्थान ही नहीं। मेरे इतने सारे शिक्षित देशभाइयोंको मेरी योजना निरी अव्यावहारिक लगती है, जबकि मुझे देशके लिए एक-मात्र यही योजना व्यावहारिक जान पड़ती है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[पुनश्च]

उक्त अंश लिखनेके बाद आपका गत ११ तारीखका पत्र मिला। इसे पढ़नेके बाद आपको यदि लगे कि मुझे बम्बई जानेसे पहले ही रावलपिण्डी आ जाना चाहिए तो तार द्वारा सूचित करें। मैं तुरन्त चल पड़ूँगा और यदि आप लाहौरमें मुझे मिल जायें तो हम लोग रास्तेमें भी बातचीत करते जायें। अभी मेरा स्वास्थ्य जैसा है, उसे देखते हुए यह सब मुझपर बहुत कठिन गुजरेगा, लेकिन अगर इससे गुजरना ही पड़ा तो ऐसा नहीं है कि इसे बरदाश्त नहीं कर पाऊँगा। पत्र मिलते ही तार द्वारा सूचित करें कि मैं क्या करूँ — सीधा पिण्डी पहुँच जाऊँ या एक दिनके लिए आपके पास आ जाऊँ। अगर आप मुझे पिण्डी भेजें तो मैं वहाँ सिर्फ एक दिन रुक पाऊँगा, क्योंकि मंगलवारकी रातमें तो मुझे बम्बई रवाना हो ही जाना है।

मेरा ऐसा कोई इरादा नहीं है कि समझौता बम्बईमें ही सम्पन्न हो जाये। आपके इस विचारमें मैं पूरी तरह सहमत हूँ कि इसमें जल्दबाजी नहीं करनी है। किसी भी निष्कर्षपर पहुँचनेसे पहले स्थितिकी पूरी जाँच-पड़ताल हो जानी चाहिए। कान्फ्रेंस स्वराज्यके सवालपर भी विचार करने नहीं जा रही है। हो सकता है, उसकी रूप-रेखा तैयार करनेके लिए कोई छोटी-सी समिति नियुक्त करनी पड़े, जो अपनी योजना फिर ऐसी ही किसी कान्फ्रेंसके विचारार्थ प्रस्तुत करे। लेकिन, मुख्यत कान्फ्रेंसका काम यह तय करना होगा कि दमनका उत्तर किस प्रकार दिया जाये और सभी दल कांग्रेसमें किस तरह शामिल हों। आज जो सज्जन मुझसे मिलने आये उन्होंने बताया कि अब आप पहलेसे अच्छे हैं और इस समय बम्बईकी आबो-हवा आपको पंजाबकी कड़ी आबोहवाकी बनिस्बत ज्यादा रास आ सकती है। लेकिन इसका फैसला तो सबसे अच्छी तरह आप ही कर सकते हैं कि अभी आपको बाहर

निकलना चाहिए या नहीं। मैं नहीं चाहूँगा कि कान्फ्रेंसकी खातिर आप अपना स्वास्थ्य खतरेमें डालें।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

२६८. पत्र : शान्तिकुमार मोरारजीको

दिल्ली
कार्तिक बदी १, [१२ नवम्बर, १९२४][1]

चि० भाई शान्तिकुमार,

चि० बहन माधुरीके विवाहका निमन्त्रण-पत्र मिला है। ईश्वर उसे और उसके पतिको दीर्घायु करे और उनकी शुभेच्छाओंको पूर्ण करे।

दादीजी तथा पिताजीको मेरा प्रणाम कहना।

मोहनदासके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ४६९७) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य. शान्तिकुमार मोरारजी

२६९. पत्र : वसुमती पण्डितको

द्वारा डा० अन्सारी
दरियागंज
कार्तिक बदी १ [१२ नवम्बर, १९२४][2]

चि० वसुमती,

तुम्हारा पत्र मुझे कलकत्तेमें मिला था। मैं रविवारको वापस आया। मुझको लिखे पत्रोंमें गलतियाँ हों तो कोई चिन्ता नहीं करनी चाहिए। वैसे तो चाहे किसीको लिखे पत्रमें गलतियाँ रह जायें, उससे क्या फर्क पड़ता है? भाषा तो विचारका वाहन है। जबतक विचारमें दोष न हो तबतक सब-कुछ ठीक ही है। विमानमें बैठा राक्षस वन्दनीय नहीं है। लेकिन सन्त तो खटारेमें बैठे रहनेपर भी वन्दनीय

१. १२-११-१९२४ को गांधीजी दिल्लीमें थे।
२. डाककी मुहरसे।

ही है। हजीरा तो जितनी जल्दी हो सके पहुँच जाओ। मुझे १८ तारीखको बम्बईके लिए निकल जाना है। वहाँ तीन-एक दिन लगेंगे। फिर आश्रम जाऊँगा।

बापूके आशीर्वाद

चि० वसुमती
द्वारा — मेसर्स स्ट्रॉस ऐंड कम्पनी

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ४६०) से।
सौजन्य . वसुमती पण्डित

२७०. तार: अबुल कलाम आजादको[1]

[१२ नवम्बर या उसके पश्चात्]

मौलाना अबुल कलाम आजाद

गुरुवारकी सुबह बम्बई पहुँचनेकी कोशिश करें। मैं भी तभी पहुँच रहा हूँ।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ११७१८) की फोटो-नकलसे।

२७१. समझौता

स्वराज्यवादियोंको जितना-कुछ देना मेरे लिए सम्भव था, वह सब दे सकनेकी, बल्कि मैंने या मेरे मित्रोंने जितना सोचा था उससे भी ज्यादा देनेकी शक्ति ईश्वरने मुझे दी, इसके लिए मैं ईश्वरका बड़ा आभारी हूँ और स्वराज्यवादियोंने मेरी जितनी मान ली, उनके लिए मैं उनके प्रति भी कृतज्ञ हूँ। मैं जानता हूँ कि रचनात्मक कार्यक्रमपर जितना जोर मैं देता हूँ उतना जोर बहुत-से दूसरे लोग नहीं देते। सदस्यताकी शर्तोंमें सख्ती लानेका प्रस्ताव बहुत-से लोगोंके लिए एक कड़वा घूंट था,

१. यह तथा पाँच ऐसे ही तार पाँच अन्य व्यक्तियोंको भेजे गये थे। ये लोग थे — कोण्डा वेंकटप्पैया, चक्रवर्ती राजगोपालाचारी, जमनालाल बजाज, गंगाधरराव देशपांडे और जयरामदास दौलतराम। ये सभी तार १२ नवम्बरको, मोतीलाल नेहरूका निम्नलिखित तार प्राप्त होनेके बाद भेजे गये थे: "महादेवका पत्र मिला। आपने और दाससे परामर्श करनेके बाद निमन्त्रण पत्र भेजनेमें बहुत देर हो जायेगी। मेरा सुझाव तारसे मुहम्मद अली द्वारा उल्लिखित संस्थाओंके प्रतिनिधियों और प्रमुख व्यक्तियोंको भी अपनी, दास और मेरी ओरसे निमन्त्रित कर दें।"

लेकिन एकताकी और देशकी खातिर वे उसे पी गये। इसके लिए उनका जितना भी अभिनन्दन किया जाये, थोडा होगा।

यह समझौता स्वराज्यवादियोको अपरिवर्तनवादियोकी बराबरीकी स्थितिमे ला रखता है। अगर मत लेनेकी झझट और उससे जुडी दूसरी तमाम परेशानियोसे बचना था तो इसके अलावा और कोई रास्ता नही था। अहिसाका मतलब है — जहाँतक अपने सिद्धान्तोपर आँच नही आती हो वहाँतक दूसरोकी अधिकसे-अधिक सुनना और मानना। स्वराज्यवादियोका कहना है कि उनका दल एक वर्धमान दल है। इस बातसे तो कोई इनकार नही कर सकता कि सरकारपर उनका कुछ असर हुआ है। उस असरके महत्त्वके बारेमें मतभेद हो सकता है, लेकिन इस तथ्यमें तो सन्देहकी कोई गुजाइश नही है कि उनका असर हुआ है। उन्होने सकल्प और दृढता दिखाई है, अनुशासन और सगठनका परिचय दिया है और अपनी नीतिको कार्यान्वित करनेमे वे सरकारसे सघर्ष मोल लेनेकी सीमातक भी जानेमें नही झिझके है। अगर कौसिल-प्रवेशकी वाछनीयताको एक बार स्वीकार कर लिया जाये तो मानना पडेगा कि भारतीय विधान-सभाओमे उन्होने एक नई भावना भर दी है। मुझ-जैसे लोगोके लिए यह बात खेदजनक अवश्य है कि उनकी इसी चमक-दमकसे राष्ट्रका ध्यान अपने-आपसे हट जाता है, लेकिन जबतक हमारे योग्यतम व्यक्तियोको कौसिल-प्रवेशमे विश्वास है तबतक तो हमे उसका अच्छेसे-अच्छा उपयोग करना ही चाहिए। यद्यपि मै एक कट्टर अपरिवर्तनवादी हूँ, फिर भी मुझे न केवल उनके दृष्टिकोणके प्रति सहिष्णुता बरतनी चाहिए और उनके साथ मिल-जुलकर काम करना चाहिए, बल्कि जहाँ-कही सम्भव हो, उनके साथ अपने सम्बन्ध मजबूत भी करने चाहिए।

यदि अपरिवर्तनवादी लोग महत्त्वपूर्ण मतभेदोका निबटारा मतदानके द्वारा नही करना चाहते तो वे काग्रेसका काम पारस्परिक सहमति और सहिष्णुताके आधारपर ही चला सकते है, बशर्ते कि लडनेकी इच्छा न होनेके कारण वे काग्रेसके नियत्रणसे अपने हाथ पूरी तरह खीच ले। यह बात सभी मानते है कि दोनोमे से किसी भी दलका काम एक-दूसरेके बिना नही चल स ता। देशमे दोनोका एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। लिबरलो और बेसेट-समर्थकोके अलग हो जानेसे काग्रेस कमजोर हो गई थी। उस समय दरार पड़ना अवश्यम्भावी हो गया था, क्योकि वे सब सिद्धान्तत असहयोगके विरुद्ध थे। अगर सम्भव हो तो अब आगे हमे और दरार नही पडने देनी चाहिए। इसलिए गम्भीरतापूर्वक सोचे-समझे बिना सिर्फ दृष्टिकोणके भेदको हठपूर्वक सिद्धान्तका भेद मानकर उसपर हमें झगडना नही चाहिए।

यदि असहयोग कार्यक्रम स्थगित कर दिया जाता है — और मुझे विश्वास है कि कर दिया जाना चाहिए — तो स्वभावत स्वराज्य दलकी गतिविधियोपर अँगुली उठानेका कोई कारण नही रह जाता। यह कहना अथवा इस बहसमे पडना बेकार है कि अगर काग्रेसवालोने कौसिलोकी बात कभी सोची ही नही होती तो क्या होता। हमें तो स्थितिपर, जैसी वह आज है, उसी रूपमे विचार करना है और फिर या तो अपने-आपको उसके अनुकूल ढालना है या अगर सम्भव हो तो उसीको अपने अनुकूल बनाना है।

अन्तमे, बगालकी स्थितिका तकाजा था कि अपरिवर्तनवादी लोग स्वराज्य दलको यथाशक्ति अधिकसे-अधिक समर्थन दे।

अपरिवर्तनवादियो तथा दूसरे लोगोने मुझसे पूछा, 'लेकिन आप कोई ऐसा वक्तव्य देनेमे कैसे शरीक हो सकते है, जिसमे कहा गया हो कि सरकारने यह प्रहार वास्तवमे आतकवादियोपर नही, बल्कि स्वराज्यदलपर किया है? क्या आप सरकारके साथ अन्याय नही कर रहे है?' उनके इस रवैयेसे मुझे बडी प्रसन्नता हुई और साथ ही गर्वका भी अनुभव हुआ। प्रसन्नता इसलिए कि मैने इन प्रश्नकर्त्ताओमे, जिस सरकारको ये नापसन्द करते है, उसके साथ भी न्याय करनेकी सच्ची इच्छा देखी; और गर्व इसलिए कि ये लोग मुझसे सही निर्णय और पूर्णतम न्यायकी अपेक्षा रखते है। मैने उनके सामने यह स्वीकार किया कि विगत अनुभवोके कारण मेरे मनमे सरकारके खिलाफ बहुत पूर्वग्रह है, ब्रिटेनके अखबारो और ब्रिटिश पूंजीसे निकलनेवाले भारतीय अखबारोमे जो-कुछ पढा, उससे मैने यही समझा कि सरकार स्वराज्य दलपर प्रहार करने जा रही है, बडे-बडे नेताओपर हाथ साफ करना सरकारकी घोपित नीति है और यद्यपि यह सम्भव है कि गिरफ्तार लोगोमे कुछ-एक अराजकतावादी प्रवृत्तिवाले लोग भी हो, फिर भी तथ्य यही है कि उनमे बहुत बडी तादाद स्वराज्यवादियोकी है और अगर सरकारका यह दावा सही हो कि अराजकतावादियोका दल बहुत बडा है तो बडे ताज्जुबकी बात है कि सरकारको अपना हाथ साफ करनेके लिए मुख्यत स्वराज्यवादी लोग ही क्यो मिले। मैने उनसे यह भी कहा कि अगर अराजकतावादियोका कोई बहुत विस्तृत और सक्रिय सगठन है तब तो अत्यन्त उग्र प्रवृत्तिवाले लोगोके स्वराज्य दलके अन्दर नही, बल्कि बाहर ही होनेकी सम्भावना है, और कहते है, पुलिसने रातमे जो तलाशियाँ ली, उनमे उसे कोई हथियार वगैरह नही मिले। मेरे समाधानके लिए उत्तरमें उन्होने जो-कुछ कहा, उससे मेरे मतमें तनिक भी फर्क नही पडा और मुझे तो लगता है कि अगर मै प्रश्नकर्त्ताओको अपनी मान्यतासे सहमत नही करा पाया तो कमसे-कम इस बातकी प्रतीति तो करा ही दी कि मेरी जो भी मान्यता है उसके खासे कारण मौजूद है और अब यह सिद्ध करना तो सरकारका काम है कि उसके मनमे बगालके स्वराज्य दलके खिलाफ सचमुच कोई दुरभिसन्धि नही थी।

लेकिन प्रस्तावके अनुसार असहयोगको स्थगित कर देनेसे व्यक्तिगत तौरपर असहयोग करनेवालोपर कोई रोक नही लगेगी। उन्हे न केवल अपने-अपने मतोपर कायम रहनेका अधिकार है, बल्कि यदि वे व्यक्तिगत असहयोग छोड देंगे तो यही कहा जायेगा कि उनमे कोई सत्व नही है। उदाहरणके लिए, असहयोग-कार्यक्रमके स्थगित कर दिये जानेका मतलब मेरे लिए यह नही हो सकता कि मै सरकारको लौटाये अपने पदक फिर वापस माँग लूं या फिरसे वकालत शुरू कर दूं अथवा अपने बच्चोको सरकारी स्कूलोमे दाखिल करा दूं। इस प्रकार असहयोग-कार्यक्रमके स्थगित कर दिये जानेसे जहाँ आस्थावान असहयोगियोके लिए अपना असहयोग जारी रखनेकी स्वतन्त्रतामें कोई खलल नही पडेगा, वहाँ कांग्रेसके आह्वानपर एक नीतिके तौरपर

असहयोग करनेवालोंको इस बातकी छूट मिल जायेगी कि यदि वे चाहे तो बिना किसी अपयश-अपवादकी आशकाके असहयोग बन्द कर दें। इसके सिवा यदि असहयोगको स्थगित करनेकी बात मजूर कर ली जाती है तो फिर किसी काग्रेसीको काग्रेसकी नीति या उसके कार्यक्रमके अगके रूपमे असहयोगका प्रचार करनेकी छूट नही रह जायेगी। उलटे, यदि वह चाहे तो जबतक असहयोग स्थगित रखनेकी नीति कायम रहती है तबतक लोगोको असहयोग न करनेके लिए जरूर कह सकता है और समझा सकता है।

फिर कताई-सदस्यताकी बात लीजिए। मैं तो खादीका और ज्यादा उपयोग तथा उत्पादन चाहता था — चाहता था कि सभी अवसरोपर खादी ही पहनी जाये और सभी काग्रेस-जन, यदि वे बीमारी या ऐसी ही किसी दूसरी असमर्थतासे लाचार न हों तो हर महीने कमसे-कम २,००० गज सूत अवश्य काते। लेकिन इस शर्तको नरम बना दिया गया है और अब सिर्फ राजनीतिक समारोहोके अवसरपर और काग्रेसका काम करते समय ही खादी पहनना लाजिमी रखा गया है और यहाँतक छूट दे दी गई है कि अनिच्छा होनेपर सदस्य दूसरोसे सूत कतवाकर दे सकते है। लेकिन यहाँ भी मेरे लिए इस हदतक आग्रह करना सम्भव नही था कि बातचीत टूट जाये। प्रथम तो महाराष्ट्र पार्टीके सामने कुछ सवैधानिक अड़चन थी, जिसके कारण वह सदस्यताकी शर्तमे कताई और खादी पहननेकी बातको किसी भी तरहसे स्थान देनेको तैयार नही थी और दूसरे एक दलके रूपमे स्वराज्य दल इन दोनो बातोंको उतना महत्त्व नही देता। मेरी तरह वह इन्हें स्वराज्य-प्राप्तिके लिए अथवा भारत-से विदेशी कपडेका बहिष्कार करनेके लिए अनिवार्य नही मानता। इसलिए, इस परिवर्तित रूपमे भी खादी और हाथ-कताईको सदस्यताकी शर्तोंमें शामिल करनेपर सहमत होना स्वराज्यवादियोकी दृष्टिसे उनके द्वारा दी गई एक बहुत बडी रियायत थी। अतः, एकताकी खातिर उन्होने जो रियायत दी है, उसे मैं कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार करता हूँ। जो लोग सदस्यताकी शर्तमें इस परिवर्तनसे नाराज हैं, उन्हे याद रखना चाहिए कि नाम-मात्रकी चवन्निया-सदस्यताकी स्थितिसे निकलकर इस ठोस और प्रभावकारी सदस्यताकी स्थितिमे पहुँच जाना एक बहुत बडी प्रगति है। उन्हे याद रखना चाहिए कि सदस्यताकी नई शर्त हर काग्रेस-जनसे कपडोकी आवश्यकताकी पूर्तिसे भारतको आत्म-निर्भर बनानेकी वाछनीयतामे अपने विश्वासका ठोस सबूत देनेको कहती है। और यह सबूत भी किसी और तरहसे नही, बल्कि भारतके पुराने उद्योग हाथ-कताईका पुनरुद्धार करके और इस प्रकार समाजके सबसे जरूरतमन्द वर्गके बीच धनका वितरण सम्भव बनाकर।

कहते है, शर्तोमे इस तरह ढील देनेसे हर आदमी नाजायज फायदा उठायेगा और यज्ञके भावसे कताई करनेका विचार बिलकुल समाप्त हो जायेगा और सदस्यगण खादी तो सिर्फ राजनीतिक समारोहोंके अवसरपर और काग्रेसका काम करते समय ही पहनेगे। यदि इस परिवर्तनका परिणाम ऐसा बुरा हुआ तो यह मेरे लिए बहुत दुःखकी बात होगी। किन्तु, ऐसे अनर्थकी आशका रखनेवाले लोग यह भूल जाते है

कि हर काग्रेस-जन कताई करे, यह चीज अब भी सिर्फ एक व्यक्तिका विचार-मात्र थी। अब लाचार होकर उसने अपने प्रस्तावमे परिवर्तन करना स्वीकार कर लिया है। लेकिन इसके फलस्वरूप यह विचार, परिवर्तित रूपमे ही सही, सदस्यताकी शर्तोमें शामिल कर लिया गया है। इसलिए यह निश्चय ही एक स्पष्ट उपलब्धि है और इससे खादी पहननेवालो और स्वेच्छासे कातनेवालोकी सख्यामें भी अवश्य वृद्धि होगी।

इसके अतिरिक्त यह भी याद रखना चाहिए कि सुधारोको सिफारिशी, बल्कि बन्धनकारी प्रस्तावोमे भी शामिल करना एक बात है और उन्हे सदस्यताकी शर्तका अग बनाना बिलकुल दूसरी बात है। सदस्यताकी किसी भी शर्तमें कोई अनिश्चितता नही होनी चाहिए और उसे ऐसा होना चाहिए जिससे उसपर आसानीसे अमल किया जा सके। कारण, उसपर अमल न करनेका मतलब है सदस्यतासे च्युत हो जाना। सभी अवसरो और सभी उद्देश्योके लिए खादी पहनना, शायद, हममे से योग्यसे-योग्य व्यक्तियोके लिए भी सम्भव न हो।

लेकिन व्यवहारमें आप देखेंगे कि जब काग्रेसके समारोहोके अवसरपर हमे खादी पहननी पडेगी तो हममें से अधिकाश लोगोके लिए, जो तरह-तरहकी कई पोशाकें रखनेमे असमर्थ है, सभी अवसरोपर खादी ही पहनना जरूरी हो जायेगा। किसी भी उत्साही काग्रेस-जनके लिए हरएक अवसर काग्रेसके कार्यका ही अवसर है और जिसके पास लगातार चौबीसो घटे काग्रेसका काम न हो, वह स्त्री अथवा पुरुष तो बहुत ही सामान्य कोटिका काग्रेस-जन हुआ। हमारी सदस्य सूचीमे हजारो मतदाता या प्राथमिक सदस्य होने चाहिए। उन सबके पास कई पोशाके नही हो सकती और न दूसरो द्वारा कता सूत खरीदनेके लिए पर्याप्त पैसा ही हो सकता है। उन्हे स्वय कताई करनी पडेगी और इस प्रकार वे हर रोज कमसे-कम अपना आधे घटेका श्रम राष्ट्रको दिया करेंगे और काग्रेसका जो स्वयसेवक कताई नही करेगा, उसको काग्रेसकी सदस्यताके प्रत्याशियोको कताईकी आवश्यकता समझानेमें बहुत मुश्किल पडेगी। इसलिए सब-कुछ इस प्रस्तावको ईमानदारी और वफादारीके साथ कार्यान्वित करनेपर ही निर्भर करता है।

जैसा कि स्वय इस समझौतेमे कहा गया है, यह एक जोरदार सिफारिश-भर है। इसपर मैंने अपनी व्यक्तिगत हैसियतसे हस्ताक्षर किया है। देशबन्धु दास और पण्डित मोतीलाल नेहरूने स्वराज्य दलकी ओरसे हस्ताक्षर किये है। इसलिए यह मेरी तथा स्वराज्य दलकी ओरसे सभी काग्रेस-जनो तथा दूसरोके विचारार्थ और स्वीकारार्थ एक सिफारिश है। मै चाहता हूँ कि इस सिफारिशपर सिर्फ इसके गुण-दोषके आधारपर ही विचार किया जाये। मेरा अनुरोध है कि इसपर कोई भी विचार करते समय अपने मनमें मेरा खयाल बिलकुल न लाये। अगर इस सिफारिशको सिर्फ इसके गुणदोषपर ही विचार करके स्वीकार नही किया जाता तो वह राजनीतिक एकता प्राप्त करना भी मुश्किल होगा, जो हम चाहते है और जो हमारे लिए आवश्यक है, और तब विदेशी कपडेका बहिष्कार भी कठिन होगा, जिसके बिना हमारा निस्तार नही और जो सबके कातने और सबके खादी पहननेसे ही सम्भव है। यदि असहयोगको स्थगित

करनेका प्रस्ताव या स्वराज्यवादी दलको कांग्रेसमे पर्याप्त और हार्दिक मान्यता देनेकी बात अथवा खादी पहनना और स्वय कातना या दूसरेसे कतवाना, इसे सदस्यताकी शर्त बनानेवाला सुझाव कांग्रेस-जनो और दूसरे आमन्त्रित लोगोको ठीक नही लगे तो उन्हे इन सबको अस्वीकार करके अपना कोई हल राष्ट्रके सामने पेश करनेमे तनिक भी सकोच नही करना चाहिए। गुण-दोषके अतिरिक्त अन्य किसी भी बातका खयाल करके अपने चिर-पोषित गहरे विश्वासोकी उपेक्षा नही की जा सकती और न करनी ही चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १३-११-१९२४

२७२. समझौतेपर टिप्पणियाँ

काम कैसे करना चाहिए

इन टिप्पणियोमे, मैं स्वराज्यवादी दल और मेरे बीच हुए समझौतेके बारेमें, जितना मैंने अग्रलेखमें[1] लिखा है, उसके आगे लिखना चाहता हूँ। यदि आगामी बैठक-मे हमारी सिफारिश मजूर कर ली गई तो कांग्रेस-सगठनमे क्रान्तिकारी परिवर्तन हो जायेगा, इसके सदस्य सालमे एक या दो बार यन्त्रवत् मतदान-भर करनेवालोके बजाय, दिन-प्रतिदिन काम करनेवाले लगनशील कार्यकर्त्ता बन जायेगे और इससे प्रमुख राष्ट्रीय कार्यमे वास्तविक योग मिलेगा। इससे कांग्रेस उत्पादन, सग्रह और वितरणकी एक विशाल शाला बन जायेगी। यह काम उद्यमशीलता, समयकी पाबन्दी, देशभक्ति, आत्म-त्याग, ठोस ईमानदारी और अपेक्षित कौशलके साथ कोई एक ठीक पद्धति अपनाये बिना सगठित नही किया जा सकता। यद्यपि कांग्रेस द्वारा इस प्रस्तावके स्वीकार किये जानेतक चार आना देकर कोई भी व्यक्ति कांग्रेसका सदस्य बन सकता है, तथापि यदि आगामी बैठक इन प्रस्तावोका अनुमोदन कर दे तो प्रत्येक प्रान्तको सगठन-कार्य इस तरह आरम्भ करना होगा, मानो कांग्रेसकी महासभाने कताई-सदस्यता स्वीकार कर ली है। कहनेका मतलब यह है कि वर्तमान सदस्योको प्रस्तावित रद्दोबदलकी जान-कारी देते हुए और कातना सीखने तथा चरखा प्राप्त करने आदिके लिए आवश्यक सुविधाएँ जुटाते हुए, उनके बीच प्रचार-कार्य किया जाना चाहिए। इस प्रश्नपर विचार करना होगा कि सूत किस प्रकार एकत्र किया जाये और कैसे उसका विनिमय किया जाये। आज हमारे देशमे सात हजारसे अधिक स्त्री-पुरुष स्वेच्छासे कताई कर रहे है और उनकी सख्या बढ भी रही है। इतना सब कांग्रेस कार्यकारिणी समितियोंके सदस्योपर लागू होनेवाले एक प्रस्तावके अलावा इस सस्थाके किसी आम प्रस्तावके बिना ही, सिर्फ इस पत्रके इन स्तम्भो द्वारा जनताको प्रेरणा देकर कर लिया गया है। अत. यह मानना युक्तियुक्त होगा, यदि कांग्रेसने कभी कताई-सदस्यताके प्रस्ताव-

१. देखिए पिछला शीर्षक।

को स्वीकार कर लिया तो हम कुछ ही महीनोमें एक लाखकी सख्यातक पहुँच जायेंगे। यदि प्रति सदस्य प्रति मास २० नम्वरके ५ तोला सूतका औसत उत्पादन माना जाये, तो इसका अर्थ होगा — प्रति मास ३१२५ मन सूत, या ४५ इच चौडाई और ६ गज लम्बाईकी १२,५०० धोतियाँ या साडियाँ। और यदि हम इस बातकी ओर ध्यान दे कि कताईतक की प्रक्रियामें इस मालपर सारा श्रम नि शुल्क रहेगा तो स्पष्ट हो जायेगा कि ये धोतियाँ वाजारमे अपने ढगके किसी भी मालसे होड ले सकती हैं। बस, यदि समूचा राष्ट्र एक इसी राष्ट्रीय कार्यपर अपना सारा प्रयत्न केन्द्रित कर सके तो तनिक भी कठिनाईके विना और अत्यन्त प्रामाणिक तथा अहिंसात्मक उपायोसे विदेशी कपडेका वहिष्कार किया जा सकता है।

आगामी बैठक

लेकिन सव-कुछ आगामी बैठकपर निर्भर है। यह केवल अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीकी ही नही वरन् सभी प्रान्तीय कमेटियो और सघोके प्रतिनिधियोकी बैठक होगी। मैं आशा करता हूँ कि ये प्रतिनिधि मौलाना मुहम्मद अलीके आमन्त्रण-को उदारतापूर्वक स्वीकार करेगे। इस सयुक्त बैठकको न केवल स्वय काग्रेसकी भीतरी फूट मिटानेके प्रश्नपर वरन् अन्य प्रतिष्ठित नेताओको काग्रेसमे शामिल होनेके लिए प्रेरित करनेके प्रश्नपर भी निर्णय लेना होगा। वगालके दमनका उत्तर देनेके लिए भी कोई कारगर नीति तय करनी हैं। अपने लक्ष्यतक पहुँचनेके तरीकेके बारेमे हमारे बीच जो भी मतभेद हो, पर सत्ताके निरकुश प्रयोगका अन्त करनेकी वाछ-नीयताके वारेमे सभी एकमत है।

देशके लिए तवतक कोई स्वतन्त्रता हो ही नही सकती जवतक कि करोडो मनुष्योके जीवन, उनकी सम्पत्ति और उनके सम्मानका दारोमदार किसी एक व्यक्तिकी मर्जीपर हो, फिर वह व्यक्ति चाहे कितने ही ऊँचे पदपर आसीन हो। यह कृत्रिम, अस्वाभाविक और असभ्य व्यवस्था है। इसका खात्मा स्वराज्यकी आवश्यक पूर्व-शर्त है।

हमारी बेबसी

बेवसी तो जाहिर ही है। लगता है, प्रस्ताव पास करनेके सिवाय और कुछ भी हमारे वसका नही रह गया है। किन्तु यदि हम सव मिलकर रचनात्मक कार्य-क्रममे जुट सके तो यह अपने-आपमे आत्मविश्वास और कुछ करनेकी शक्तिको पुन प्राप्त करनेकी दिशामे एक कदम होगा। यह वात सवको विलकुल स्पष्ट समझ लेनी चाहिए कि यदि हिन्दू और मुसलमान फिरसे होश सँभाल ले, यदि हिन्दू अछूतो-को अपने भाई मानने लगे और यदि हम कताई और खद्दरको इतना लोकप्रिय वना दे कि वह लगभग विदेशी वस्त्रोका स्थान लेनेके योग्य हो जाये तो हमे अपने लक्ष्यके प्रति लोगोका ध्यान आकर्षित करनेके लिए और कुछ करनेकी आवश्यकता नही रहेगी। इससे भी वडी वात यह है कि फिर न तो हमे हिंसाको प्रोत्साहन देनेके लिए गुप्त समितियोकी आवश्यकता पडेगी, न खुली अहिंसात्मक अवज्ञाकी।

ऐसी वाञ्छनीय परिणति तभी सम्भव हो सकेगी जब हम एक और पूर्णतया कृतसकल्प होकर रचनात्मक कार्यक्रमको सफल बनानेके लिए निरन्तर प्रयास करेगे। इसलिए दमनके इस विस्फोटका या समूचे राष्ट्रकी इतनी पुरानी और बेबस गुलामीके कारगर इलाजका मेरा अपना यही तरीका है।

अन्य बातें ?

श्री एन्ड्रयूजने मेरे उपवासके दिनोमे भी मेरा ध्यान 'मॉडर्न रिव्यू'मे प्रकाशित एक टिप्पणीकी ओर आकर्षित किया था, जिसमे मादक पेय और औषधियोके परित्यागको आन्दोलनके रचनात्मक कार्यक्रममे शामिल न किये जानेपर आश्चर्य प्रकट किया गया था। अन्य मित्रोने और भी बहुत पहले इस कार्यक्रममें राष्ट्रीय पाठशालाओका उल्लेख न होनेकी ओर मेरा ध्यान आकर्षित किया था। मैं इन मित्रोको बता दूं कि यह रचनात्मक कार्यक्रम समझौतेका एक अग है और इसमे वही चीजे शामिल की गई है जिनके बिना स्वराज्य मुझे असम्भव-सा लगता है। सरकारकी सहायता न पानेवाली और सरकारसे असम्बद्ध पाठशालाएँ है और उन्हे बनाये रखना चाहिए। वे कार्यक्रमको पूरा करनेमे हमारी सहायता करती है। मादक पेय और औषध-सम्बन्धी सुधार बिना किसी शोर-गुलके निश्चित रूपसे आगे बढ रहा है। उसे छोड़ा नही जा सकता। अब उसके बारेमे कोई धूम-धाम नही दिखाई देती, क्योकि हमने इस कारण धरना देना छोड दिया है कि उससे हिसा भडकती थी। इसी तरह हम गैरसरकारी पचनिर्णयको प्रोत्साहित करनेके विचारका भी त्याग नही करेगे। बात सिर्फ यह है कि स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए इनमे से कोई भी चीज उतनी नितान्त आवश्यक नही है, जितनी कि समझौतेमे शामिल की गई वे तीन चीजे है और फिर समझौतेमे शामिल इन बातोके बारेमे राष्ट्रीय कार्यकर्त्ताओमे कोई मतभेद भी नही है, जैसा कि इन तीन बातोके बारेमे है। यहाँ मैंने राष्ट्रीय पाठशालाओ और गैरसरकारी पचनिर्णयके साथ-ही-साथ मादक पेय तथा औषध-सम्बन्धी सुधारका उल्लेख किया है। इससे यह मतलब न समझा जाये कि मैं इन तीनोको समान महत्त्वका मानता हूँ। मादक पेय तथा औषध-सम्बन्धी सुधारकी समस्या सर्वाधिक राष्ट्रीय महत्त्वकी समस्या है। यदि किन्ही भी प्रामाणिक उपायोसे हम आज ही मदिरापान और अफीमके व्यसनसे पूर्ण रूपसे मुक्त हो सकते तो मैं उन्हे फौरन अपना लेता और उनके प्रयोगकी सलाह दे देता। किन्तु हमारे पास ऐसा कोई अक्सीर इलाज है ही नही। देशके प्रशासनमें जबतक हमारी राय कुछ निर्णयात्मक महत्त्व न रखने लगे, तबतक इस बुराईको निर्मूल करनेके लिए धरना देनेके सिवाय और कुछ करनेमें हम असमर्थ हैं। प्रसन्नताकी बात यह है कि यद्यपि यह दोष बुरा है, पर राष्ट्रीय दोष नही बन पाया है। यह दोष एक छोटे जन-समुदायतक ही सीमित है, यद्यपि दुर्भाग्यवश उसकी सख्या बढती जा रही है। अत यदि हमारे हाथमे सत्ता हो तो मैं जानता हूँ मदिरा अथवा अफीमके निषेधका कोई विरोध नही हो। यह तो हमारी सरकार ही है जो मद्य और मादक वस्तुओके अभिशापसे राष्ट्रको मुक्ति दिलानेके मार्गमे रोडा बन रही है। बात यह नही है कि हम कानून बनाकर पियक्कडोको

सयमी बना देंगे। किन्तु तब हम मद्य और मादक वस्तुओका सेवन करनेवालोको दण्डित तो कर सकेंगे और शराब और अफीमकी सभी दुकानो तथा अड्डोको बन्द करके मादक वस्तुओके सेवनको यथासम्भव कठिन तो बना सकेंगे और यह सब करना भी चाहिए।

क्या यह जोर-जबरदस्ती है?

काग्रेसके प्रत्येक सदस्यके लिए हाथ-कताई अनिवार्य बनानेके विरुद्ध श्री स्टोक्सका प्रबल प्रतिवाद पाठकोने पढा होगा। मुझे साफ दिखाई दे रहा है कि व्यक्ति-स्वातन्त्र्यकी रक्षाके लिए उनके मनमें इतना उत्साह है कि वे किसी चीजके स्वेच्छासे स्वीकार किये जाने और जोर-जबरदस्तीके बलपर उसके थोपे जानेके बीच कोई अन्तर नही देख पाते। जोर-जबरदस्तीका मतलब तो यह होता है कि विरोधकर्त्ताओको जुर्माने या जेलके भयसे उसी बातको माननेपर विवश होना पडे, जिसका वे विरोध करते हो। जिस निगमके वे सदस्य है, उसके बाहर रहकर भी वे उस बाध्यता अथवा दण्डसे बच नही सकते। किन्तु जब कोई व्यक्ति काग्रेस-जैसी किसी सस्थामें, जिसमे शामिल होना-न-होना व्यक्तिकी अपनी मर्जीपर निर्भर करता है, प्रवेश करता है, तब वह स्वेच्छासे ही ऐसा करता है और स्पष्ट या अस्पष्ट रूपसे स्वीकार कर लेता है कि वह सस्थाके नियमोका पालन करेगा। बहुमतकी इच्छाके आगे अल्पमतका झुकना सामान्यत इन नियमोमें शामिल रहता है। प्रत्येक सदस्यका प्रत्येक कार्य उसकी स्वेच्छापर निर्भर है, यह तो इसी बातसे स्पष्ट है कि जब भी बहुमत कोई ऐसा नियम पारित करे जो उसके अन्त करणके अनुकूल न हो तो वह सस्थासे अपना सम्बन्ध विच्छेद कर सकता है। श्री स्टोक्सका तर्क समस्त निगमित या सामूहिक स्वशासनके विरुद्ध पडता है। प्रत्येक मताधिकारके साथ कुछ शर्तें जुडी रहती है और हर प्रकारके सशर्त मताधिकारका कुछ लोग विरोध तो करते ही है। तब क्या विरोधी बहुमत द्वारा पारित शर्तोको बहुमत द्वारा जोर-जबरदस्तीके बलपर थोपा हुआ कह सकते है? स्पष्ट है कि नही, क्योकि यदि वे वैसा कहे तो फिर कोई भी सामूहिक कार्यवाही हो ही नही सकती।

१९२० मे जब काग्रेसने नई नीति (क्रीड) स्वीकार की थी तब एक अल्पमत था, जिसने सिद्धान्तके नाते उसका विरोध किया था और इसलिए जब वह बहुमतसे पारित कर दी गई तो वह काग्रेससे अलग हो गया था। पुरानी नीतिके अधीन तो और अधिक व्यक्ति काग्रेसके बाहर रह जाते थे, क्योकि वे अन्त करणसे उसका अनुमोदन नही कर पाते थे। मेरी राय यह है कि दोनो ही स्थितियोमें बहुमतको नियम पारित करनेका अधिकार था। पहली स्थितिमें शर्तें लगाना समझदारीका काम था और दूसरी स्थितिमें उनका शिथिलीकरण नासमझीका काम था, यह तो अपनी-अपनी रायकी बात है। और इसलिए प्रस्तुत प्रस्ताव, कताईको काग्रेसके मताधिकारकी एक शर्त बनानेकी दृष्टिसे एक ऐसी अविवेकपूर्ण नीति तो हो सकता है, जो मेरे सोचे हुए उद्देश्यको ही विफल बना दे, किन्तु मेरा कहना है कि इसमे कोई सहज बुराई नही है, सिद्धान्तत भी इसमें कोई दोष नहीं है और इसे जोर-जबरदस्ती कहना तो अनजानेमें

भाषाका दुरुपयोग करना है। इसकी खूबियोंके बारेमें मेरे मनमें कोई आशंका नहीं है। यदि हाथकी कताई देशको आत्मनिर्भर बनानेका एक कारगर उपाय है तो उसे मताधिकारका अंग बनाना ही चाहिए। राष्ट्रीय इच्छा और संकल्पको व्यक्त करनेका यह सबसे अच्छा तरीका है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १३-११-१९२४

२७३. टिप्पणियाँ

राष्ट्र ऋण

एक पत्र-लेखक लिखते हैं :

> आपको शायद मालूम होगा कि १९२२ में गयामें कांग्रेसके खुले अधिवेशनमें चक्रवर्ती राजगोपालाचारी द्वारा पेश किया गया एक प्रस्ताव, जिसमें कहा गया था कि भारत सरकार ३१-१२-१९२२ के बादसे राष्ट्रकी ओरसे जितने भी ऋण ले उनकी देयतासे इनकार किया जाय, पारित हुआ था। कहनेकी जरूरत नहीं कि हमारे देशके सार्वजनिक जीवनसे सम्बद्ध अनेक उत्तरदायी व्यक्ति उक्त प्रस्तावपर आपकी राय जाननेको उत्सुक हैं।

मैं खुद स्वीकार करता हूँ कि मुझे उक्त प्रस्तावके बारेमें जानकारी नहीं है। किन्तु अब जब वह मेरे ध्यानमें लाया गया है, मुझे उसका अनुमोदन करनेमें कोई संकोच नहीं। उस प्रस्तावको पारित करनेके लिए मैं श्री राजगोपालाचारी और कांग्रेस, दोनोंको बधाई देता हूँ। आज हम शक्तिहीन हो सकते हैं और हैं भी, किन्तु संसारको जानना ही चाहिए कि भारतके धनकी बरबादी और फिजूलखर्चीके बारेमें हम क्या सोचते हैं। स्वर्गीय लॉर्ड सैलिसबरी इसे रक्त-स्रावकी प्रक्रिया कहा करते थे। मेरा तो खयाल है कि स्वराज्यकी योजना कोई भी हो, उसमें भारत सरकार अथवा इंडिया ऑफिस द्वारा किये गये वादोंकी निष्पक्ष जाँच और पिछली सरकारके वित्तीय सौदोंका नये सिरेसे समायोजन करनेका आग्रह भी शामिल रहेगा। अतः मैं इस प्रस्तावको आवश्यक और सम्माननीय मानता हूँ। आज उसका मजाक उड़ाया जा सकता है। किन्तु जब हमें हमारे अधिकार प्राप्त हो जायेंगे, तब हम ठीक समय पर अपना यह मत व्यक्त कर देनेके तथ्यका उल्लेख गर्वके साथ करेंगे। कारण, कांग्रेसकी सीमाओंके बारेमें मैंने जो-कुछ भी कहा है उसके बावजूद, इस बातसे कौन इनकार कर सकता है कि वह राष्ट्रका सर्वाधिक प्रतिनिधित्व करनेवाली संस्था है? यह हमारा काम है कि हम उसे इतनी अधिक प्रातिनिधिक बना दें कि उसकी ओर सब आकर्षित हों और उसकी बातोंकी कद्र की जाये।

राष्ट्रीय क्षति

'यंग इंडिया' के अनेक पाठक श्रीयुत दलबहादुर गिरिको केवल नामसे ही जानते हैं। कुछने तो शायद उनका नाम भी नहीं सुना होगा। तथापि वे सबसे बहादुर राष्ट्रीय कार्यकर्त्ताओंमें से थे। अभी-अभी 'यंग इंडिया' के लिए लिखते समय मेरे पास कालिम्पोंगसे एक तार आया है, जिससे मुझे इस अपेक्षाकृत अज्ञात देशभक्तकी मृत्युका समाचार मिला है। मैं उनके कुटुम्बके प्रति अपनी समवेदना प्रकट करता हूँ। वे एक सुसंस्कृत गोरखा थे और दार्जिलिंग तथा आसपासके इलाकेमें गोरखा लोगोंमें अच्छा काम कर रहे थे। १९२१में हजारों लोगोंके साथ वे भी अपने असहयोग-सम्बन्धी कार्योंके लिए बन्दी बनाये गये थे। कारावासमें वे बुरी तरह बीमार पड़ गये थे। कुछ ही महीने पहले उन्हें रिहा किया गया था। मुझे मालूम हुआ है कि वे अपने पीछे बहुत बड़ा परिवार छोड़ गये हैं, जिसकी जीविकाके साधन नहीं हैं। बंगालके समाचारपत्रोंमें उनके लिए एक अपील प्रकाशित हुई थी। मैं आशा करता हूँ कि बंगालकी प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी स्वर्गीय श्रीयुत दलबहादुर गिरिके परिवारके बारेमें सारी जानकारी प्राप्त करेगी और जो सहायता आवश्यक होगी, अवश्य देगी।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया १३-११-१९२४

२७४. सम्मति : मॉडर्न स्कूलकी दर्शक-पुस्तिकामें

दिल्ली

१३ नवम्बर, १९२४

इन आर्वाचीन पाठशालाओंको देखकर मुझे बहोत आनंद हुआ। पाठशालाकी स्वच्छता प्रशंसनीय है। मुझे केवल एक संशय है। अर्वाचिनत्वकी बाढमें यदि प्राचीन-त्वका नाश हो जायगा तो भारतवर्षके इन युवकोंको और युवतीयोंको बडी हानि होगी। ईतनी सूचना करनेकी मैं धृष्टता करता हुँ क्योंकि इस पाठशालाकी उत्पत्तिमें मैं हेतुकी पवित्रता देखता हु और ईस संस्थाकी मैं उन्नति चाहता हुँ।

मोहनदास गांधी

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।

सौजन्य : नारायण देसाई

२७५. पत्र : कर्नल मेलको

स्थायी पता :
साबरमती
१३ नवम्बर, १९२४

प्रिय कर्नल मेल,

श्री प्रागजी के० देसाई[1] आजकल हैदराबाद सेन्ट्रल जेलमे कैदी है। उन्हे मै अच्छी तरह जानता हूँ, दक्षिण आफ्रिकामे भी वे मेरे साथ थे। उन्हे सूरतमे कुछ दिन पहले भारतीय दण्ड संहिताकी धारा १२४–क के अधीन सजा सुनाई गई थी।

मुझे बताया गया है कि

(१) श्री देसाईका वजन कम हो गया है।

(२) उन्हे दूसरे कैदियोसे अलग रखा गया है और इसलिए जो लोग उनकी निगरानी रखते है, उनके अलावा और किसी भी आदमीसे उनका कोई सम्पर्क नही है।

(३) उन्हे जो सब्जियाँ दी जाती है, उनमे आम तौरपर घास-पात मिली होती है और वे खाने लायक नही होती।

(४) उन्होने सूत कातनेकी अनुमतिके लिए अर्जी दी है, लेकिन उन्हे तैयार सूतकी बटाईका ही काम दिया जाता है। अगर अधिकारी लोग उन्हे पूनियाँ देनेको तैयार न हो तो अनुमति मिलनेपर मै पूनियाँ भेजनेकी व्यवस्था कर सकता हूँ।

उक्त सूचनाओको अखबारमे प्रकाशित करनेके बजाय मै आपके पास ही भेज रहा हूँ ताकि आप कृपया उनके बारेमे जरूरी जाँच-पड़ताल करे।

यहाँ मै यह बता दूँ कि श्री देसाई शाकाहारी है और जब वे जेलसे बाहर थे तब भी उनका शरीर कोई बहुत तन्दुरुस्त नही था। इसलिए मेरे विचारसे उन्हे हल्के लेकिन पौष्टिक आहारकी जरूरत है — जैसे दूध और डबलरोटी वगैरह।

आपका सच्चा,

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ११७२१) की फोटो-नकलसे।

१. सूरतसे प्रकाशित नवयुगके सम्पादक।

२७६. पत्र : रोमाँ रोलाँको

१३ नवम्बर, १९२४

प्रिय मित्र,

आपका कृपा-पत्र मिला। कुमारी स्लेड[1] उसके कुछ समय वाद पहुँची। कैसी अमूल्य निधि आपने मुझे सौंपी है। मैं आपके इस अगाध विश्वासके योग्य बननेकी कोशिश करूँगा। मैं कुमारी स्लेडकी हर तरहसे सहायता करनेकी कोशिश करूँगा, ताकि वे पूर्व और पश्चिमके बीच एक लघु सेतु बन सकें। मैं स्वयं इतना अपूर्ण हूँ कि किसीको शिष्य बना ही नहीं सकता। मेरे (सत्यके) अन्वेषणमें वे मेरी सहयोगिनी होंगी और मैं चूँकि उम्रमें बड़ा हूँ, इसलिए आध्यात्मिक अनुभूतिमें किंचित् आगे हूँ, अत आपके साथ-साथ मैं भी उनके अभिभावकका गौरव-पद प्राप्त करना चाहूँगा। कुमारी स्लेडमें अपने-आपको नये परिवेशके अनुकूल ढालनेकी अद्भुत क्षमता दिखाई देती है। हम लोग अबतक उनसे काफी घुल-मिल भी गये हैं। उनसे चन्द दिन पहले आश्रममें एक फ्रांसीसी बहन भी आई हैं। कुमारी स्लेडसे मैंने कह दिया है कि उनके बारेमें वे ही आपको लिख दें। शेष बातें आपको उन्हींसे मालूम हो जायेंगी।

अंग्रेजी प्रति (सी० डब्ल्यू० ८८४९) से।
सौजन्य आर० के० प्रभु

२७७. भाषण : रामजस कालेज, दिल्लीमें

१३ नवम्बर, १९२४

इसके बाद महात्माजीने बैठे हुए ही छात्रोंके सामने भाषण दिया। समयसे बहुत पहले ही आ जानेके लिए उन्होंने क्षमा माँगी और कहा कि मुझे बी अम्माँके अन्तिम संस्कारमें शामिल होना है इसलिए मैं जल्दी आ गया। मैं छात्रोंसे कहूँगा कि वे इस मामलेमें मेरे उदाहरणका अनुकरण न करें बल्कि समयका मूल्य समझनेकी आदत डालें। श्री गोखलेकी समयकी अद्भुत पाबन्दीका उल्लेख करते हुए गांधीजीने कहा कि भारतीयोंमें समयकी पाबन्दीका गुण नहीं है। इसकी आदत खास तौरसे डालनी चाहिए।

गांधीजीने राय साहब केदारनाथ द्वारा कालेजके लिए किये गये महान् त्यागका उल्लेख किया और कहा कि मुझे दुःख है कि कुछ समय पहले जब प्रिन्सिपल गिड-

१. मीराबहन।

वानीने मुझे निमन्त्रित किया था उस समय मैं कालेजमें नहीं आ सका था। मुझे इस बातपर आश्चर्य था कि राय साहब केदारनाथने यह कालेज शहरसे दूर पहाड़ी पर क्यों बनवाया है। जब मुझे सुकुमार बाबूने रास्तेमें बताया कि कालेजके संस्थापकका आदर्श ब्रह्मचर्य है और वे छात्रोंको सिनेमा और थियेटरोंसे दूर रखना चाहते हैं तो मैं कायल हो गया। हिन्दू सभ्यतामें ब्रह्मचर्यका अभिन्न स्थान है जबकि पश्चिमी सभ्यतामें उसका अभाव है। यह कहा जा सकता है कि पश्चिमके लोग समृद्ध हुए हैं, लेकिन मैं पूछता हूँ कि पश्चिमकी सभ्यता कितनी पुरानी है। मिस्र, बैबिलोन, यूनान और अन्य महान् सभ्यताएँ नष्ट हो गईं, लेकिन भारतीय सभ्यता अब भी जीवित है। इसका कारण यह है कि भारतीय सभ्यतामें कोई ऐसी चीज है जो उनके पास नहीं थी। भारतीय सभ्यतामें निहित यह चीज उसकी ब्रह्मचर्यके आदर्शकी उपासना ही है।

इसके बाद गांधीजीने भागवतमें से जिह्वा-संयमके बारेमें एक श्लोक सुनाया और कहा कि जिह्वापर नियन्त्रणका अर्थ है भोजन और वाणीपर नियन्त्रण। छात्रोंका जिह्वापर विशेष रूपसे पूरा नियन्त्रण होना चाहिए।

तत्पश्चात् उन्होंने सत्संगके बारेमें बोलते हुए सलाह दी कि प्रत्येक छात्रको संसारकी अच्छीसे-अच्छी पुस्तक और अच्छेसे-अच्छे विचारोंका संग करना चाहिए और कहा कि जब मैं विद्यार्थी था उस समय मेरे एक सहपाठीने मुझे रेनॉल्डके उपन्यास पढ़नेकी राय दी थी। लेकिन मैंने उन्हें कभी नहीं पढ़ा। महात्माजीने कहा, "जो भी चीज बुरी है, उससे असहयोग करो।"

अपने भाषणके अन्तमें उन्होंने प्रार्थनाकी प्रभावकारिताके बारेमें बताया। उन्होंने कहा कि जब मैं जेलमें था तब मुझे प्रार्थनाकी प्रभावकारिता विशेष रूपसे अनुभव हुई। जब मनमें प्रार्थनापूर्ण विचार होते हैं उस समय संसारकी सब चीजें अच्छी और अनुकूल लगती हैं। जीवनमें प्रगति करनेके लिए प्रार्थना एक अनिवार्य चीज है। राम या खुदाका नाम लेनेसे बुरे विचार मनसे निश्चय ही दूर हो जाते हैं और नई शक्ति और उत्साह प्राप्त होता है।

उन्होंने कहा कि मैं अभी भी बहुत कमजोर हूँ और इस समय इससे ज्यादा बोलनेकी इच्छा नहीं है।

फूलोंकी वर्षा और 'वन्देमातरम्' तथा 'महात्मा गांधीकी जय' के नारोंके साथ महात्माजीने शामको लगभग ३.३० बजे कालेजसे प्रस्थान किया।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, १५-११-१९२४

२७८. पत्र : मगनलाल गांधीको

[१३ नवम्बर, १९२४ के पश्चात्][1]

चि० मगनलाल,

डा० मेहता और अवन्तिका वहनपर ब्रह्मचारीने जो दावा किया है, उसका क्या हुआ?

हमारे यहाँ क्या एक धुनकी [प्रतिदिन] आठ घंटे नही चल सकती? क्या उसमे हमारे अच्छी धुनाई करनेवाले, तुलसी मेहर, नवीन आदिका उपयोग नही हो सकता? हममे एक खास हदतक पूनियाँ तैयार करनेकी भी क्षमता होनी चाहिए। इस विषयपर तो वातचीत हुई ही नही।

दलवहादुर गिरिका देहान्त हो गया। वे अपनी विधवा और वच्चोको वेसहारा छोड गये है। देहावसानसे पहले वे उन्हे यहाँ आ जानेको कह गये थे। मैंने कहला भेजा है कि विधवा वहन यहाँ आ सकती है। हमे उनका भरण-पोषण करना ही होगा। कल उनका तार आया है कि उन्हे आनेका किराया मिल जाये तो वे आनेको तैयार है। मैंने किरायेका पैसा दास वावूसे ले लेनेके लिए तार किया है। मेरी गैरहाजिरीमे आई तो उन्हे दिक्कत तो होगी, लेकिन आयें तो निभा लेना।

वापू

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ६१९५) से।
सौजन्य . राधावहन चौधरी

२७९. सन्देश : 'वर्ल्ड टुमारो' को

दिल्ली
१४ नवम्बर, १९२४

'वर्ल्ड टुमारो'
३९६, ब्रॉडवे
न्यूयार्क
सयुक्त राज्य अमेरिका

अहिंसाके अपने अध्ययन और अनुभवसे मैं इस निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि यह ससारकी सवसे वडी शक्ति है। यह सत्यको साक्षात्कार करनेका सवसे अचूक उपाय है और इसी उपायसे उसे सवसे जल्दी प्राप्त भी किया जा सकता है, क्योकि कोई

१. दलवहादुर गिरिका देहान्त, जिसका उल्लेख पत्रमें किया गया है, १३ नवम्बर, १९२४ को हुआ था। देखिए "टिप्पणियाँ", १३-११-१९२४ का उपशीर्षक "राष्ट्रीय क्षति।"

और उपाय है ही नही। अहिंसा अपना काम इतनी खामोशीसे करती रहती है कि उसके प्रभावका प्रायः पता ही नही चलता, लेकिन उसका काम निश्चतरूपसे जारी रहता है। हमारे चारो ओर निरन्तर चलनेवाली विनाश-लीलाके बीच प्रकृतिकी एक यही प्रक्रिया है जो रचनात्मक है। ऐसा मानना मैं अन्धविश्वास समझता हूँ कि वह मात्र व्यक्तिगत जीवनमे ही फलप्रद हो सकती है। निजी अथवा सार्वजनिक जीवनका ऐसा कोई क्षेत्र नही है, जिसमे इस शक्तिका उपयोग किया जा सकता हो। किन्तु अपने अहंको पूर्णतः शून्य बनाये बिना ऐसी अहिंसाकी साधना असम्भव है।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

२८०. पत्र : आर० शर्माको

साबरमती
१४ नवम्बर, १९२४

प्रिय भाई,

मुझे निम्नलिखित बातोके बारेमें, जिन दिनो असहयोग पूरे जोरपर था, उन दिनोके और आजके आँकड़े चाहिए। ये आँकड़े यथासम्भव शीघ्र भेज दे तो कृपा हो।

खिताब छोडनेवालोकी सख्या।

सरकारी स्कूल और कालेज छोडनेवाले लड़के-लड़कियोकी सख्या।

वकालत छोडनेवाले लोगोकी सख्या।

प्रयोगमे लाये जा रहे चरखोकी सख्या।

हाथ-कते सूतसे बने कपड़ेकी मात्रा।

हाथ-करघोकी सख्या।

राष्ट्रीय स्कूलो तथा कालेजोंकी संख्या और उनमें पढ़नेवाले लडके और लड़कियोकी तादाद।

अस्पृश्योके बीच किस प्रकारका और कितना काम किया गया।

नशाबन्दी (शराब और अफीम) के लिए किस प्रकारका और कितना काम किया गया, इसका विवरण।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी पत्र (एस० एन० ११७२३) की फोटो-नकलसे।

२८१. पत्र : काका कालेलकरको

कार्तिक वदी ३ [१४ नवम्बर, १९२४][1]

भाईश्री काका,

शिक्षकके लिए लेख[2] लिखनेके बाद बच्चोंकी शिक्षाके बारेमें मेरा मन और सक्रिय हो उठा है। हम आश्रमके बच्चोंके लिए यह प्रयोग क्यों न शुरू करें? यानी कि अगर उसमें बताया विचार आपके गले उतरा हो तो बच्चा घड़ेको घड़ेके रूपमें पहचानता तो है, लेकिन वह उसका चित्र नहीं खींचता। उसी तरह वह अक्षरको पढ़े तो लेकिन लिखे नहीं। कोई बात पढ़नेसे पहले वह उसे सुनता है और जैसा सुनता है वैसा ही उच्चारण करता है — बोलता है। लक्ष्मी, रसिक वगैरह बच्चोंको लिखना छुड़वाकर पहले चित्र बनाना ही क्यों न सिखाया जाये? काफी-कुछ उन्हें जबानी ही क्यों न सिखाया जाये? अभी तो वे हाथका उपयोग चित्र खींचनेमें ही करें। इसके लिए शिक्षकोंको चित्र बनानेके मूल तत्त्व जान लेने चाहिए। अब मैं गहरा जाने लगा हूँ, इसलिए यहीं रुक जाता हूँ। अभी तो इतनेपर ही विचार कीजिए। विशेष मिलनेपर।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

२८२. पत्र : चक्रवर्ती राजगोपालाचारीको

१४/१५ नवम्बर, १९२४

प्रिय राजगोपालाचारी,

स्वामीका तार आया है कि आपने समझौतेकी जो तीव्र आलोचना की है, उसे वह मेरे पास भेज रहा है। मेरी यही कामना है कि यह आपके व्यथित हृदयके लिए मरहमका काम करे। मुझे या तो लोगोंसे अपना रास्ता स्वीकार कराना है या फिर उन्हींका रास्ता स्वीकार कर लेना है। यदि मुझसे दोनोंमें से एक भी नहीं बना तो फिर मुझे सार्वजनिक जीवनसे अलग हो जाना है। बारडोलीमें मैंने अहिंसाके क्षेत्रमें एक दिशामें सबसे साहसपूर्ण प्रयोग किया था। यह समझौता दूसरी दिशामें सबसे

१. साधन सूत्रके अनुसार।
२. देखिए "एक रास्ता", २०-१०-१९२४।

साहसपूर्ण प्रयोग है। बारडोलीके बारेमे मुझे पश्चात्ताप नही, क्योकि मुझमे अपने कदम वापस लेनेका साहस था और यह जो कदम उठाया है, आशा है, उसके बारेमे पश्चात्ताप करनेका और भी कम कारण होगा। 'यग इडिया' मे प्रकाशित मेरे लेखसे आपको शायद थोडी शान्ति मिले। बडा अच्छा होता, अगर आप बम्बई आते। लेकिन इसपर मैं जोर नही दूँगा।

'करेन्ट थॉट' मे[1] 'हिस्ट्री ऑफ सत्याग्रह इन साउथ आफ्रिका' का वालजी गोविन्दजी देसाई कृत अनुवाद छपा है। कृपया उसे पढकर उसकी आलोचना वी० जी० देसाईको या मुझे भेज दे। वी० जी० देसाईका पता होगा शाही बाग, अहमदाबाद। आशा है, आप मजेमे होगे। खुश रहो, मस्त रहो, गमको पास मत फटकने दो।

आपका,
मो० क० गाधी

[अग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य: नारायण देसाई

२८३. पत्र: जीवतराम बी० कृपलानीको

१५ नवम्बर, १९२४

प्रिय प्रोफेसर,

तुमने जो बमगोला फेका, उसका रुख किशोरलालने मेरी ओर कर दिया है। मुझपर तो उन कारणोका कोई असर नही हुआ, जिन कारणोसे प्रेरित होकर भाई किशोरलाल और दूसरोकी समझमे, सचमुच, तुमने वह बम फेका था। किशोरलालने अब पत्रका वह हिस्सा वापस ले लिया है और क्षमा माँग ली है। यह अध्याय तो यही समाप्त होता है। जो भी हो, मैं तुम्हे इतनी अच्छी तरह जानता हूँ कि तुमको कभी गलत समझ ही नही सकता। बहुत-सी बाते हमारी इच्छाके विरुद्ध, अनजाने ही हमपर असर डालती है। इसलिए लिखित शब्दोकी तहमे जाकर लिखनेवालेके मनको पढनेकी कोशिश करना हमेशा खतरनाक होता है। इसलिए तुमने अपने इस्तीफे-के जो कारण बताये, उन्हे मैं अशत स्वीकार किये लेता हूँ और इसीलिए तुमसे यह कहना चाहता हूँ कि इस्तीफा देनेसे पहले तुम्हे मुझको लिखना चाहिए था और बैंकरसे बातचीत कर लेनी चाहिए थी। बनारसके बारेमे तो मैं बिलकुल भूल ही गया था, क्योकि मेरा खयाल था, वहाँकी सभी जिम्मेदारियोसे बैंकरने मुझे मुक्त कर दिया है। तुम्हारा पत्र मैंने उन्हीको भेज दिया है और मैं चाहता हूँ कि तुम उनसे मिलकर सारी परिस्थितिपर बातचीत कर लो। फिर इसका मतलब यही हुआ कि

१. एस० गणेशन द्वारा प्रकाशित एक मासिक पत्रिका।

वनारसके सम्वन्धमें तुम जिस चिन्तासे परेशान हो, वह प्रशासनिक नही, वल्कि आर्थिक जिम्मेदारीकी चिन्ता है।

कीकी वहनसे कह दो कि मैं उसे वरावर याद करता हूँ। जल्दी ही उससे मिलनेकी उम्मीद रखता हूँ और आशा करता हूँ कि अगर उसे शरीरसे पहले की अपेक्षा ज्यादा मजवूत और अच्छा न पाऊँ तो कमसे-कम सदाकी भाँति प्रसन्न अवश्य देखूँगा।

तुम्हारा,
वापू

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य. नारायण देसाई

२८४. पत्र: स्वामीजीको

कार्तिक वदी ४ [१५ नवम्बर, १९२४]

स्वामीजी,

आपके प्रश्न मीले हैं।

१ तपवलका आर्थिक उपयोग करनेसे उसका नाश होता है।

२ यज्ञ वल पानेके लिये कीया जाता है। ऐसी स्थितिमें वाह्य रक्षाकी आवश्यकता रहती है।

३ रामके कार्योके वर्णनमे मुझे ऐसा प्रतीत नहि हुआ कि उन्होने शरीरवलसे विजय पाया।

४ कृष्णकी कथामे वहोतसी वाते केवल रूपक है [उनसे] कृष्णका आत्मवल दृष्टिगोचर होता है न [कि] शरीरवल।

आज भी हम देखते हैं कि पृथ्वीमें शरीरवलसे युक्तिवल वढता है। युक्तिवल और शरीरवल आत्मवलके सामने तुच्छ सा मालुम होता है।

आपका,
मोहनदास गांधी

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य. नारायण देसाई

२८५. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

१६ नवम्बर, १९२४

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारे लिए ये चन्द शब्द इस मंगल-कामनाके साथ लिख रहा हूँ कि मातृभूमिकी सेवा और आत्म-साक्षात्कारके हेतु यह शुभ दिन[1] बार-बार आता रहे।

सम्भव हो तो पिताजीके साथ जरूर आना।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स

२८६. वक्तव्य : कोहाटके प्रश्नपर[2]

दिल्ली
१६ नवम्बर, १९२४

श्री गांधीने रावलपिंडी जाने और कोहाटकी समस्याके समाधानके बारेमें निम्न-लिखित वक्तव्य दिया है :

मैंने देखा है, अखबारोंमें मुझसे यह अनुरोध किया गया है कि मुझे रावलपिंडी जाकर कोहाटके शरणार्थियोंसे मिलना चाहिए? मेरे पास सीधे उनके यहाँसे भी इसी आशयके सन्देश आये हैं। मुझे बड़ा दुःख है कि इस समय मैं उनकी बात रखनेमें असमर्थ हूँ। मेरा स्वास्थ्य अभीतक ऐसा नहीं हो पाया है कि लगातार यात्राएँ कर सकूँ, और बंगालके दमनके सम्बन्धमें होनेवाले सम्मेलनमें शरीक होनेके लिए बम्बईकी यात्रा तो मैं किसी भी हालतमें स्थगित ही नहीं कर सकता। लेकिन बम्बईसे लौटकर मैं तुरन्त रावलपिंडी जानेकी उम्मीद करता हूँ। फिलहाल, मैं शरणार्थियोंको इतना भरोसा दिला देना चाहता हूँ कि उनका ध्यान मुझे बराबर रहा है। उपवासके बाद ज्यों ही मैं जरा चलने फिरने लायक हुआ, मैंने कोहाट जानेकी पूरी तैयारी की और उसके लिए इजाजत माँगी। अगर मुझे इजाजत मिल गई होती तो मैं अपना सबसे पहला फर्ज मानकर कुछ हिन्दू और मुसलमान मित्रोंके साथ

१. जवाहरलाल नेहरूका जन्म-दिन, १४ नवम्बर।

२. यह यंग इंडिया, २०-११-१९२४ में "टिप्पणियाँ", शीर्षकके अन्तर्गत "कोहाट रिफ्यूजीज" उप-शीर्षकसे भी छपा था।

वहाँ जा पहुँचता। तब मुझे लगता था कि मैं कुछ उपयोगी सेवा कर सकता हूँ और अपने मित्रोके सहयोगसे हिन्दुओ और मुसलमानोके बीच फिरसे मेल-जोल कायम करानेमे अपना तुच्छ योगदान कर सकता हूँ। लेकिन जब कोहाट जानेपर रोक लगा दी गई, तो मुझे लगा कि रावलपिंडी जानेसे कुछ नही बनेगा। मुझे मालूम था कि बहुत-से मित्र शरणार्थियोकी सहायतामे लगे हुए है और पण्डित मालवीयजी उनका खास खयाल रख रहे है। जैसा ऊपर बताया है, शरणार्थियोने मुझसे आनेका अनुरोध किया है और उनके इस अनुरोधका खयाल करके मैं रावलपिंडी जाऊँगा भी, लेकिन मुझे लगता है कि वहाँ जाकर भी मैं उन्हे सात्वना देनेके अलावा शायद और कोई सेवा नही कर पाऊँगा। लेकिन, मैं शरणार्थियोसे इस तथ्यकी ओर ध्यान देनेको कहूँगा कि कोहाटका सवाल सारे भारतका सवाल है। भारतके हिन्दू और मुसलमान, दोनोकी ही इसके उचित, सम्मानपूर्ण और सही समाधानमे बडी दिलचस्पी है। इसलिए वे जो भी समाधान स्वीकार करे वह स्थानीय हितोको देखते हुए नही, बल्कि राष्ट्रीय हितोको ध्यानमें रखकर स्वीकार करे। उनकी बुद्धिमानी इसीमे होगी कि कोई भी समझौता स्वीकार करनेसे पहले वे हिन्दू और मुसलमान नेताओकी सहमति ले ले, मैं तो सरकारको यही सलाह देना चाहूँगा। यह देखकर मुझे बडी प्रसन्नता हुई कि उन्होने समझौतेकी उन शर्तोको, जो कहते है, उनके सामने रखी गई थी, अस्वीकार कर दिया। सरकारने घोषणा की है कि वह एकताके पक्षमे है। वह जो-कुछ करे, उसमे अगर वह जनताको भी शरीक रखे और दोनो सम्प्रदायोके लोगोके सामने समझौतेकी जो भी शर्ते रखे, उनपर जनताकी भी स्वीकृति ले ले तो यह उसकी सदाशयताका ही परिचायक होगा।

[अंग्रेजीसे]
न्यू इंडिया, १७-११-१९२४

२८७. सन्देश : तमिलनाड परिषद्, तिरुवन्नामलईको[१]

[१७ नवम्बर, १९२४ से पूर्व]

आशा है, यह परिषद् स्वराज्यवादियो और अपनी निजी हैसियतसे मेरे बीच हुए समझौतेको समझेगी और उसकी खूबियाँ पहचानेगी। अहिंसाको ठीकसे समझ लेनेसे इस समझौतेकी कुजी प्राप्त हो जायेगी। इस समझौतेका असहयोगपर कोई असर नही पडता। जो भी हो, मुझे उम्मीद है कि परिषद्के परिणामस्वरूप खद्दरका उपयोग बढ़ेगा।

[अंग्रेजीसे]
अमृतबाजार पत्रिका, १९-११-१९२४

१. यह परिषद् १७ नवम्बरको तिरुवन्नामलईमें हुई थी। उसमें समझौतेका समर्थन किया गया था और खद्दर पहननेपर खास जोर दिया गया था।

२८८. पत्र : सतीशचन्द्र मुखर्जीको

१७ नवम्बर, १९२४

प्रिय सतीश बाबू,

आपके तारका उत्तर दे दिया है। कृष्टोदासको क्या करना चाहिए, इसका सबसे अच्छा निर्णय तो आप ही कर सकते हैं। वचन देनेके बारेमें मेरे क्या विचार हैं, आप जानते हैं। कृष्टोदासने बिलकुल साफ कहा था कि वह १८ तारीख या उससे पहले लौट आयेगा। यदि उसका आना किसी भी तरह सम्भव था तो उसे अपना वादा पूरा करना चाहिए था। लेकिन, मैं स्वीकार करता हूँ कि जो वादा वह आपके जरिये या आपकी सहमतिसे न करे, वह वादा उसपर अन्तिम रूपसे बन्धनकारी नहीं हो सकता। गुरु और शिष्यके सम्बन्धोंके बारेमें मेरी मान्यता बहुत ऊँची है। इस-लिए आपको जो तार भेजा, उसे भेजनेमें मुझे तनिक भी हिचकिचाहट नहीं हुई। मैं जानता हूँ कि कृष्टोदासका कल्याण आँख मूँदकर आपकी आज्ञाका पालन करनेमें ही है। इसलिए मैं तो आप दोनोंके बीच पड़नेका साहस नहीं कर सकता। आप भेजेंगे तो वह आयेगा तो अवश्य ही, और रही मेरी बात, सो मैं तो चाहता ही हूँ कि वह आ जाये। मेरा प्राय निश्चित मत है कि उसकी वर्तमान मन स्थितिका कारण जरूरतसे ज्यादा संवेदनशीलता ही है।

मैं २० तारीखको बम्बई पहुँच रहा हूँ, शायद २३ तक वहाँ रहूँगा, महीनेके अन्ततक साबरमतीमें रहूँगा और ३ या ४ दिसम्बरको रावलपिंडी पहुँचूँगा।

आपके भेजे तेलका इस्तेमाल मैं रोज करता हूँ और उसके साथ ही आपको याद करता हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी पत्र (जी० एन० ५६०६) की फोटो-नकलसे।

२८९. पत्र : लाजपतरायको

१७ नवम्बर, १९२४

प्रिय लालाजी,

आपका पत्र मिला और भरूचा तथा लाला अमीरचन्दकी मार्फत भेजे सन्देश भी। मैं आपकी माग पूरी नही कर रहा हूँ, आशा है, इसके लिए मुझे क्षमा करेंगे। अपनी असमर्थताके कारण मैंने अब सार्वजनिक रूपसे बता दिये है। कुछ ऐसे क्षण जरूर होते है, जब स्वास्थ्यको खतरेमे डालना, बल्कि उसकी बलि चढा देना भी जरूरी हो जाता है। लेकिन, मुझे नही लगा कि यह वैसा ही क्षण है। मैं अच्छी तरह खाता-पीता हूँ, अच्छी नीद सोता भी हूँ, कुछ दूर घूम भी लेता हूँ, बगालकी यात्रा कर सकता हूँ और बम्बईकी यात्रा तो कर ही रहा हूँ। मै जानता हूँ कि रावलपिंडीकी यात्रासे मैं मर नही जाता और फिर सिपाहीके लिए तो रण-क्षेत्रकी मृत्यु सदा स्वागत करने लायक होती है। लेकिन, क्या उससे कुछ लाभ होता? मैं अपनी मर्यादा जानता हूँ। मेरा तरीका तो रोगी अगको शल्य-चिकित्सा द्वारा निकाल देनेका है, दवा-दारूके जरिए रोगके शमन करनेका नही। पर शरणार्थी लोग इस समय ऐसे ऑपरेशनके लिए तैयार नही होगे, मुझे तो यही आशका है, और यदि वे तैयार भी हो तो फिर चन्द दिनोमे कुछ बनने-बिगडनेवाला नही। ये थोडे-से दिन तो शायद उन्हे ऐसी चिकित्साके लिए राजी करनेमे ही लग जायेंगे। फिलहाल तो इतना ही काफी होगा कि उनकी देख-भाल की जाये, उन्हे चिन्तन और शोधनके लिए थोडा अवसर दिया जाये, और थोडी पुष्टिकारक दवा दी जाये। रावलपिडीके बारेमे इतना ही[1] . . .।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य नारायण देसाई

२९०. पत्र : अमीरचन्द सी० बम्बवालको

[१८ नवम्बर, १९२४ से पूर्व][2]

प्रिय मित्र,

हालाँकि मेरा खयाल है कि हम लोगोकी भेंट नही हुई है, फिर भी पण्डित मालवीयजीके जरिये मैं आपको जानता हूँ। वे आपकी बहुत प्रशसा कर रहे थे और मुझको बता रहे थे कि आप कितने बहादुर, ईमानदार और आत्मत्यागी है। उन्होने यह भी बताया कि शरणार्थियोकी सेवा करनेमें आपने अपने स्वास्थ्यकी तनिक भी

१. साधन-सूत्रमें पत्रका शेषाश नहीं दिया गया है।
२. यह तिथि गाधीजीके बम्बई रवाना होनेकी तिथिके आधारपर की गई है।

परवाह नहीं की। लेकिन इस पत्रका उद्देश्य आपको और आपकी मार्फत शरणार्थियो-को यह बताना है कि अभी जो मैं रावलपिडी नही आ सकता, इसके लिए मुझे कितना दुःख है। मैं तो कोहाट जाना चाहता था, लेकिन फिलहाल तो यह योजना विफल ही हो गई और इसलिए मुझे रावलपिंडी जानेकी जल्दी नही रही। मुझे मालूम था कि पण्डितजी आपके निकट सम्पर्कमे है और साथ ही मैं यह भी जानता था कि जबतक मैं ठीक किस्मके लोगोको साथ लेकर कोहाट न जाऊँ तबतक समझौता करानेमे किसी प्रकार सहायक नही हो सकता। लेकिन देखता हूँ, रावलपिंडीमे भी मेरी उपस्थिति आवश्यक समझी जाती है, पर मेरा वहाँ जाना सम्भव नही हो पाया। मैं अवसर मिलते ही आ जाऊँगा और दिसम्बरके पहले हफ्तेतक तो अवश्य ही आ जाऊँगा। अभी बम्बई जानेमें मैं देर नही कर सकता। इस बीच मैं आपको यह बता देना चाहता हूँ कि इस परिस्थितिके विषयमे मेरे क्या विचार है। जाहिर है कि मेरा यह विचार इतनी दूरसे परिस्थितिको जैसा मैं समझ पाया हूँ, उसीपर आधारित है। कोहाटकी समस्याको अखिल भारतीय समस्या मानकर चलना चाहिए। कारण, शरणार्थियोका क्या होता है, इस बातमे भारतके सभी लोगोकी दिलचस्पी है। इसलिए शरणार्थियोको चाहिए कि वे सरकारको सूचित कर दे कि उन्हे हिन्दू और मुसलमान नेताओसे जो सलाह मिलेगी, उसीके मुताबिक वे अपना रास्ता चुनेगे और इसलिए सरकारको उन्हे आमन्त्रित करना और उन्हीके जरिये मामलेका निपटारा करवाना चाहिए। आशा है, शरणार्थी लोग गिरफ्तारी आदिकी धमकियोसे डर नही जायेगे। मुझे उम्मीद है कि कल या परसो पण्डितजी और लालाजी आपके बीच होगे। आप चाहे तो यह पत्र उनके सामने रख दे और अगर वे मेरे विचारसे सहमत न हो तो आप सब लोग इसपर कोई ध्यान न दे। अगर पण्डितजी और लालाजी सहमत न हो तो मेरे विचार शरणार्थियोके सामने रखनेकी भी कोई जरूरत नही।

हृदयसे आपका,

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।

सौजन्य : नारायण देसाई

२९१. पत्र : कनिकाके राजाको

स्थायी पता साबरमती,
१८ नवम्बर, १९२४

प्रिय राजा साहब,

आपके २५ अक्तूबर, १९२४ के पत्रके[1] लिए और आपकी शुभकामनाओंके लिए धन्यवाद। मेरे पास जो कागजात हैं उनके आधारपर मेरे सचिवने जो टिप्पणी तैयार की थी उसका उत्तर मैंने पढ़ लिया है। इस समस्यासे निपटनेका सबसे सन्तोषजनक तरीका यही है कि मैं या मेरी तरफसे कोई आदमी राज्यमें जाकर निजी तौरपर तहकीकात करे, ताकि मैं उस विषयपर अधिकारपूर्ण कुछ कह या लिख सकूँ। मैं इसी आशयका पत्र लिखनेवाला था कि तभी मुझे श्री एन्ड्रयूजसे यह चीज मिली। आप शायद जानते होंगे कि उपवासके समयसे ही वे 'यंग इंडिया' के सम्पादनमें मेरी सहायता कर रहे हैं। कतरनको प्रकाशनार्थ भेजा गया था लेकिन श्री एन्ड्रयूज मुझे दिखाये बगैर उसे छापनेको तैयार नहीं थे। उसे पढ़नेपर मैंने तय किया कि छापनेसे पहले उसको आपके पास भेज दूँ। इसी बीच मैंने देखा कि अन्य अखबारोंने उस खबरको पहले ही छाप दिया है। यदि आप अन्यथा न मानें तो मैं श्री एन्ड्रयूजको आपके पास भेजना चाहूँगा ताकि वे सब चीजें अपनी आँखोंसे देख सकें। वे कहते हैं कि आपको वे भली-भाँति जानते हैं और उन्होंने कृपापूर्वक जाना भी स्वीकार कर लिया है। यदि श्री एन्ड्रयूज वहाँ जाते हैं तो वे स्थितिको सँभालकर यदि कोई बुराई है तो उसे दूर करनेमें आपकी सहायता कर सकेंगे और तब जो लोग मुझसे रैयतपर अत्याचार होनेकी बराबर शिकायतें कर रहे हैं, उन्हें मैं सन्तुष्ट कर सकूँगा। श्री एन्ड्रयूजको भेजनेके मेरे प्रस्तावके बारेमें कृपया आप अपना जवाब तार द्वारा साबरमती भेजें।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ११७३३) की फोटो-नकलसे।

१. एस० एन० १५९३२।

२९२. टिप्पणियाँ

बी-अम्माँ

यह मानना मुश्किल है कि बी-अम्माँका देहान्त हो गया है। बी-अम्माँकी उस राजसी मूर्तिको या सार्वजनिक सभाओंमें उनकी बुलन्द आवाजको कौन नहीं जानता? बुढ़ापा होते हुए भी उनमें जवानों-जैसी ताकत थी। खिलाफत और स्वराज्यके लिए उन्होंने अथक यात्राएँ कीं। इस्लामकी कट्टर अनुयायी होते हुए भी उन्होंने देख लिया था कि इस्लामका कार्य, जहाँतक मनुष्यके वसकी वात है, भारतकी आजादीपर निर्भर है। इतने ही विश्वासके साथ उन्होंने यह भी महसूस कर लिया था कि हिन्दुस्तानकी आजादी विना हिन्दू-मुस्लिम एकता और खादीके असम्भव है। इसलिए वे अविराम एकताका प्रचार करती रहीं। यह उनके लिए एक अटल सिद्धान्त हो गया था। उन्होंने अपने तमाम विदेशी और मिलके कपड़ोंका परित्याग कर दिया था और खादीका ही उपयोग करती थीं। मौलाना मुहम्मद अली मुझे बताते हैं कि बी-अम्माँने उन्हें यह हुक्म दे रखा था कि उनके जनाजेपर सिवा खादीके और कुछ न होना चाहिए। उनकी बीमारीके दिनोंमें जब कभी मुझे उनके नजदीक जानेका सौभाग्य प्राप्त होता तब वे हमेशा स्वराज्य और एकताकी बातें पूछतीं। उसके बाद ही प्रायः वे खुदासे दुआ करतीं 'या खुदा, हिन्दुओं और मुसलमानोंको ऐसी अक्ल बख्श कि जिससे ये एकताकी जरूरतको समझें और रहम करके स्वराज्य देखनेके लिए मुझे जिन्दा रहने दे।' इस बहादुर और शरीफ आत्माकी यादगार कायम रखनेका सबसे अच्छा तरीका यही है कि हम उस अनुष्ठानके प्रति उनके उत्साह और उमंगका अनुकरण करें जो हम सबका अनुष्ठान है। हिन्दू-धर्म भी एकता और स्वराज्यके बिना उतना ही खतरेमें है जितना कि इस्लाम। परमात्मा हिन्दुओं और मुसलमानोंको बी-अम्माँ-जैसी सहज बुद्धि दे, ताकि वे इस बुनियादी बातकी कद्र कर सकें। परमात्मा उनकी आत्माको शान्ति दे और अली-भाइयोंको शक्ति दे कि वे उनके सौंपे कार्यको जारी रखें।

बी-अम्माँकी मृत्युकी रातके उस प्रभावोत्पादक और गम्भीर दृश्यका वर्णन किये बिना मैं नहीं रह सकता। उस समय मुझे उनके पास ही रहनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था। यह सुनते ही कि अब वे अपने जीवनकी अन्तिम साँसें ले रही हैं, मैं और सरोजिनी देवी वहाँ दौड़े गये। उनके परिवारके कितने ही लोग आसपास जमा थे। परिवारके मित्र और चिकित्सक डा० अन्सारी भी मौजूद थे। वहाँ रोने-सुबकनेकी आवाज सुनाई नहीं देती थी, अलबत्ता मौलाना मुहम्मद अलीके गालोंपर आँसू टपक रहे थे। बड़े भाईने बड़ी कठिनाईसे अपने-आपको रोक रखा था, हालाँकि उनके चेहरेपर एक असाधारण गम्भीरता छाई हुई थी। सब लोग अल्लाहका नाम ले रहे थे। एक सज्जन अन्त समयकी प्रार्थना कर रहे थे। कॉमरेड प्रेस बी-अम्माँके

कमरेसे इतना नजदीक है कि आवाज सुनाई पड़ सकती है, परन्तु एक मिनटके लिए वहाँके काममें व्यवधान न पडा और न मौलानाने ही अपने सम्पादकीय कर्त्तव्योमे खलल आने दिया। सार्वजनिक कर्त्तव्य तो कोई भी मुल्तवी नही किया गया। मौलाना शौकत अली तो ख्वावमें भी यह माननेको तैयार नही थे कि मैं अपना रामजस कालेज जाना मुल्तवी करूँ और एक सच्चे सिपाहीकी तरह वे मुजफ्फरनगरके हिन्दुओको दिये गये वादेके अनुसार नियत समयपर उनसे मिले, हालाँकि उन्हे वी-अम्माँकी मृत्युके लगभग तुरन्त वाद ही उनसे मिलने जाना पडा। यह सव जैसा कि होना चाहिए था, वैसा ही हुआ। जन्म और मरण दो भिन्न दगाएँ नही है, वल्कि एक ही दगाके दो भिन्न-भिन्न पहलू है। न मृत्युसे दुखी होनेकी जरूरत है, न जन्मसे खुशी मनानेकी।

स्वर्गीय पारसी रुस्तमजी

रुस्तमजी जीवनजी घोरखोदूकी मृत्युका दु खद समाचार मुझे डर्वनसे भेजे गये उनके पुत्रके तारसे मिला है। मेरे लिए यह एक व्यक्तिगत क्षति है। वे एक महत्त्वपूर्ण मुवक्किल, प्रियमित्र और निष्ठावान कार्यकर्त्ता थे। वे जितने सच्चे भारतीय थे, उतने ही सच्चे पारसी भी थे और उतने ही खरे आदमी भी थे। वे एक चुस्त पारसी थे, लेकिन उनका पारसी-धर्म मानवताके समान ही व्यापक और उदार था। वे विना किसी भेद-भावके सभीको मित्र वना लेते थे। उनका व्यवहार सरकारी अधिकारियोके साथ मीठा होता था, लेकिन अवसर पडनेपर वे दृढ रुख अपना सकते थे। उनका मौखिक वचन वैसा ही भरोसेके काविल होता था जैसी कि उनकी हुण्डियाँ। वे शेरकी तरह वहादुर थे। वे आसानीसे कोई वचन नही देते थे, लेकिन एक वार दे देने पर वे उसे निभानेका पूरा प्रयत्न करते थे। एक वार अपनेको सत्याग्रही घोषित कर देनेके वाद, फिर वे आन्दोलनकी कठिनतम घड़ियोमें भी एक क्षणके लिए विचलित नही हुए, उस समय भी नही जवकि ऐसा लगता था कि सघर्षका कभी अन्त ही नही आनेवाला है। जिस समय उन्होने [सत्याग्रहकी] शपथ ली, उस समय वे जवानीकी उम्र पार कर चुके थे और व्यावसायिक व्यस्तताएँ भी उनकी कम नही थी। लेकिन उन्होने आपत्तियोकी परवाह नही की। उन्होने विना किसी शिकायतके सव नुकसान सहे। उन्होने लगभग अपनी सामर्थ्यसे ज्यादा दिया, लेकिन कभी विना विचारे नही। वे निष्पक्ष और समान भावसे दान देते थे। उन्होने मसजिदो, मदरसो और राष्ट्रीय स्कूलो, सभीको दान दिया। वे समस्त दक्षिण आफ्रिकामे पारसी रुस्तमजीके नामसे विख्यात थे और कितने ही नौजवान इन्ही पारसी रुस्तमजीके ही कारण उन्नति कर सके थे। व्यक्तिगत तौरपर मैं उनका वहुत ऋणी हूँ। दक्षिण आफ्रिकामें मेरे वहुत-से मित्र है, लेकिन उनसे ज्यादा सौहार्द मैंने किसीमे नही देखा। जव क्रुद्ध भीड मेरे पीछे पडी थी, उस समय उन्होने मुझे अपने यहाँ आश्रय दिया था। उनका घर मेरे और मेरे स्वजनोके लिए शरणस्थल था। लोग आश्चर्य करते है कि मैं पारसियोका इतना पक्ष क्यो लेता हूँ। मैं पक्षपात नही करता, लेकिन मैं ईश्वरका धन्यवाद करता हूँ कि मैं पारसियोके सराहनीय गुणोंकी साक्षी दे सकता हूँ। जवतक मुझे पारसी रुस्तमजीकी याद रहेगी तवतक मेरे मनमें पारसियोके लिए आदर मिश्रित

सराहना रहेगी। अगर यहाँ हमारे सार्वजनिक जीवनमे कई रुस्तमजी होते तो हमें अपने वाछित लक्ष्यको प्राप्त करनेमे देर नही लगती। परमात्मा उनकी आत्माको शान्ति प्रदान करे और उनके दोनों पुत्रोंको बुद्धि और शक्ति दे कि वे अपने नेक पिताके चरण-चिह्नोपर चल सके।

अन्धविश्वासपूर्ण रिवाज

हालमे प्राप्त एक पत्रके कुछ अश मै नीचे दे रहा हूँ, जिन्हे पढकर पाठकोको भी वैसा ही दु ख होगा जैसा मुझे हुआ है।

> "मै यहाँ वन्य-प्रान्तके बीचों-बीच बसे गाँवोंमें हूँ जहाँ कुल संख्यामें से ९० प्रतिशत गोंड रहते है। दौरा करते हुए मै सिलागोटा नामक गाँवमें पहुँचा। यह गॉव मध्य प्रान्तके छत्तीसगढ़ खण्डमें खैरागढ़ राज्यकी डोंगरगढ़ तहसीलमें है। पिछले रविवारको यहाँ आसपासके गाँवसे लोग काफी बड़ी संख्यामें इकट्ठे हुए। इनमें से बहुत-से लोग शायद १५ मीलसे अधिक दूरसे आये थे। मैंने इस जमावका कारण पूछा और पता लगा कि पिछले दो वर्षोंसे ये लोग प्रत्येक रविवार गांधी-दिवसके रूपमें मनाते आ रहे है। उस दिन ये लोग कोई काम नहीं करते। ऐसा मानते है कि उपस्थित जन-समुदायमें से कुछ पुरुषों या स्त्रियोंमें आपकी आत्मा आती है और वे लोग दैवी-प्रेरणा प्राप्त लोग होते है। ये भविष्य बताते है और बाँझ स्त्रियोंको सन्तान होनेका आश्वासन देते है। मै जानता हूँ कि इस खबरसे आपको तकलीफ पहुँचेगी। क्या आप इस प्रथाको रोकनेके लिए अपना कोई कार्यकर्त्ता नहीं भेज सकते? यदि आपकी पूजा करनेकी यह प्रथा अभी नहीं रोकी गई तो मै समझता हूँ कि वह दिन दूर नहीं जब ये लोग सचमुच आपकी प्रतिमा मन्दिरमें रख देंगे और आपकी पूजा शुरू कर देंगे।"

हमारे देशमे पहले ही काफी अन्धविश्वास हैं। अब गाधीकी पूजाके रूपमे इसमे और कुछ जोडा जाये, इसे रोकनेके लिए कुछ भी उठा नही रखना चाहिए। व्यक्तिगत रूपसे मुझे हर प्रकारकी अन्धभक्तिसे नफरत है। मै व्यक्ति से अलग उसके गुणोकी पूजामे विश्वास करता हूँ और ऐसा उन गुणोको धारण करनेवालेकी मृत्युके बाद ही सम्भव है। काया कुछ नही है। यह तो नाशवान् है। गुण जीवित रहते है और वे किसी-न-किसी व्यक्तिमे प्रकट होते हैं। बेचारे गोड मेरे बारेमे या मेरे कार्यके बारेमे कुछ नही जानते। मै जानता हूँ कि मुझमे किसीको कुछ भी दे सकनेकी ताकत नही है। किसी व्यक्तिमे मेरी आत्माके आनेकी कल्पना ही मेरे लिए असह्य है। इस प्रथासे हानि ही पहुँच सकती है और इससे फरेबकी गुजाइश होती है। मै अपने सह-कार्यकर्त्ताओसे अनुरोध करता हूँ कि पत्र-लेखकने जिस पूजाका उल्लेख किया है उसे वे समाप्त करवाये। गोड-जैसे सीधे-सरल लोगोको अन्धविश्वासपूर्ण कार्य करनेमें प्रोत्साहन देना पाप है।

आगामी पंजाब सम्मेलन

श्री भरूचाने जो खादी-विक्रेताके रूपमें अब तेजीसे विशेषज्ञता प्राप्त करते जा रहे है, खादीकी विक्रीके लिए पजाबका सफल दौरा करनेके बाद मुझसे शिकायत की है कि *अगले माहके आरम्भमें जो सम्मेलन होनेवाला है*, उसकी हलचल और तैयारीके कारण खादीकी विक्रीमे बाधा पडनेकी सम्भावना है। मै तो ऐसी आशा करता था कि इससे विक्री बढेगी। परिषदो-सम्मेलनोकी तैयारियोका मतलब खादीकी और अधिक माँग होना चाहिए। पजाबमे तो विशेषरूपसे यही होना चाहिए। जब खादी देशके अन्य भागोमे लगभग नष्ट हो गई थी, उस समय भी पजाब खादीका उत्पादन और उपयोग कर रहा था और आज पजाब जितनी खादीका उत्पादन करता है उसकी खपत करना भी उसके लिए कठिन हो रहा है। मै यही आशा करता हूँ कि मुझे विदेशी या मिलके भी बने कपडे पहने हुए स्त्री-पुरुषोसे खचाखच भरे पण्डालका लज्जोत्पादक दृश्य नही देखना पडेगा। पजाबको चाहिए कि वह श्री भरूचाकी आशकाको अनुचित सिद्ध कर दे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २०-११-१९२४

२९३. कसौटीपर

मेरे और स्वराज्यवादियोके बीच जो समझौता हुआ है, उसपर अपरिवर्तनवादी लोगोको बडा गहरा असन्तोष है। यह कोई आश्चर्यकी बात नही है। मैने बार-बार यह स्वीकार किया है कि मै तो अहिंसा-शास्त्रका एक तुच्छ अन्वेषक मात्र हूँ। उसकी निगूढ गहराइयाँ कभी-कभी मुझे भी उतना ही स्तम्भित कर देती है, जितना स्तम्भित मेरे साथी कार्यकर्त्ताओको कर देती है। मै देखता हूँ कि अभी तो यह समझौता सिवा मेरे और स्वराज्यवादियोके, किसीको सन्तुष्ट करता नही जान पडता। बहुत-से अग्रेज सज्जन मानते है कि मैने बडे लज्जास्पद ढगसे स्वराज्यवादियोके सामने समर्पण कर दिया है। बहुत-से अपरिवर्तनवादी इसे मित्रद्रोह नही तो एक भारी भूल अवश्य मानते है। एक मित्र लिखते है कि इससे विद्यार्थी-वर्ग तो बिलकुल किकर्त्तव्य-विमूढ रह गया है। विद्यार्थी पूछते है कि यदि असहयोग आन्दोलन स्थगित कर दिया जाता है तो फिर वे राष्ट्रीय स्कूलोमे क्यो रहे। असहयोगमे सबसे ज्यादा हानि उन्हीकी हुई है और इस समझौतेमें उनका खयाल बिलकुल भुला दिया गया है। आन्ध्रसे एक मित्रने मुझे पत्र भेजा है। यह ध्यान देने लायक है और ऐसा है जिसका युक्ति-सगत उत्तर देना जरूरी है।

समर्पण तो मैने किया ही है, लेकिन यह विवेकपूर्ण समर्पण है और एक अग्रेजी पत्रमें जो यह कहा गया है कि यह हिंसावादी दलके सामने समर्पण है, सो सही नही है। मै नही मानता कि स्वराज्यदल हिंसावादियोका दल है। मै जानता हूँ कि ऐसे

आरोप तो दादाभाई नौरोजी और न्यायमूर्ति रानडे तकपर लगाये गये थे। उनपर सन्देह किया गया और उनके पीछे खुफिया विभागके लोग तैनात कर दिये गये थे। लाला हरकिशनलालका सम्बन्ध किसी हिसावादी दलसे उतना ही था जितना कि खुद सर मायकेल ओ'डायरका हो सकता था, फिर भी उस निरकुश सरदारने उन्हे गिरफ्तार कराकर जेल भिजवा दिया। यदि स्वराज्य दलकी इस विपत्तिके समय मै उनका साथ न देता तो मै देशके प्रति अपने कर्त्तव्यसे च्युत होता। कोई इस बातको निर्भ्रान्त रूपसे दिखा दे कि हिसात्मक कार्रवाइयोसे स्वराज्य दलका कुछ भी सम्बन्ध है, तो निश्चय ही जितनी कडी भाषाका प्रयोग करना मेरे लिए सम्भव है उतनी कडी भाषामे मै उसकी भर्त्सना करनेको तैयार हूँ। ऐसा सबूत मिल जानेपर मै उससे अपना सारा सम्बन्ध तोड लूँगा। लेकिन जबतक ऐसा नही होता, तबतक तो मुझे उनका साथ देना ही पडेगा, यद्यपि मै कौसिल-प्रवेशकी उपयोगितामे या कौसिलमे सघर्ष चलानेके उनके कुछ ऐसे तरीकोमे विश्वास नही रखता।

परन्तु स्वराज्य दलको काग्रेसका एक अभिन्न अग मान लेनेका मतलब यह नही है कि लोग व्यक्तिगत तौरपर भी असहयोग करना छोड दे। इसका मतलब सिर्फ इस बातकी स्वीकृति है कि स्वराज्य दल काग्रेसका एक जबरदस्त और वर्धमान अग है और यदि वह जोर-आजमाई किये बिना काग्रेसमें गौण स्थान ग्रहण करनेको तैयार हो और यदि ऐसी जोर-आजमाईसे बचना आवश्यक अथवा समयोचित भी हो तो स्वराज्य दलको विधिपूर्वक निश्चित रूपसे मान्यता दिये बिना काम चल ही नही सकता। लेकिन हर काग्रेस-जनके बारेमें सिर्फ इसीलिए कि वह काग्रेसका सदस्य है, यह नही माना जाता कि वह काग्रेसके कार्यक्रमकी तमाम मदोको मानता है। मै मानता हूँ कि मेरी अपनी स्थिति इससे कुछ भिन्न है। इस समझौतेके प्रणयनमे मेरा हाथ रहा है और मुझे इस बातका दुख भी नही है। सही हो या गलत, लेकिन देश मुझसे कुछ मार्गदर्शनकी आशा रखता है और मै इस निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि स्वराज्यदलको अपरिवर्तनवादियोकी ओरसे हर प्रकारकी विघ्न-बाधासे मुक्त रहकर अपने कार्यक्रमके अनुसार कार्य करनेका पूरा-पूरा अवसर देना देशके लिए हितकर ही होगा। यदि अपरिवर्तनवादी लोगोको पसन्द नही हो तो उनके सामने स्वराज्यवादियोकी गतिविधियोमे शरीक होनेकी कोई मजबूरी नही है। उन्हे इस बातकी पूरी छूट है कि वे केवल रचनात्मक कार्यक्रमको ही कार्यान्वित करे, वे और स्वराज्यवादी दोनो इसीको पूरा करनेके लिए बाध्य भी है। वे व्यक्तिगत तौरपर असहयोग चलाते रहनेके लिए भी स्वतन्त्र हैं। लेकिन काग्रेस द्वारा असहयोगके स्थगित किये जानेका मतलब यह अवश्य है कि असहयोगी काग्रेससे कोई समर्थन या शक्ति नही प्राप्त कर सकते। उन्हे स्वय अपने अन्दरसे शक्ति जुटानी पडेगी और यही उनकी कसौटी और परीक्षा है। यदि उनकी आस्था कायम रही तो यह उनके लिए भी अच्छी बात है और असहयोगके लिए भी। यदि असहयोग स्थगित कर देनेके साथ ही वह समाप्त हो जाता है तो सार्वजनिक जीवनमे एक शक्तिके रूपमे असहयोगका कोई स्थान नही रह जायेगा। पर एक मित्र कहते है कि जब खुद आप ही डाँवाडोल हो रहे है तब

फिर औरोंके बारेमें क्या कहा जाये? मैं कभी भी डाँवाडोल नही हुआ हूँ। असहयोग-में मेरा विश्वास आज भी उतना ही ज्वलन्त है, जितना कि हमेशा रहा है। कारण, तीस सालसे भी अधिक समयसे यह मेरे जीवनका एक सिद्धान्त रहा है। परन्तु मैं अपना निजी सिद्धान्त औरोंपर नही लाद सकता, एक राष्ट्रीय संस्थापर तो हरगिज नही। तो मैं सिर्फ इतना ही कर सकता हूँ कि राष्ट्रको उसकी सुन्दरता और उपयोगिता-का कायल करनेकी कोशिश करूँ। यदि मैं राष्ट्रके मनकी थाह लेते हुए यह देखूँ कि जहाँतक कांग्रेस उसके मनोभावको प्रकट करती है उसे तनिक सुस्ता लेनेकी जरूरत है तो मुझे रुकनेको कहना ही पड़ेगा। हो सकता है कि मैं कांग्रेसकी मनोदशाका अनुमान लगानेमें गलती कर बैठूं। लेकिन जिस दिन ऐसा होगा, कांग्रेसमें मेरा कोई वजन ही नही रह जायेगा। ऐसा हो भी तो यह कोई बहुत-बडे संकटकी बात नही होगी। लेकिन अगर राष्ट्र अन्य उपायोंसे प्रगति कर रहा हो और मैं अपनी हठ-धर्मिताके कारण उसके मार्गमें बाधा बनकर खडा हो जाऊँ तो यह अवश्य ही बहुत बड़े संकटकी बात होगी। हाँ, अगर ये उपाय निश्चित रूपसे दुर्वृत्तिपूर्ण और हानिकर हों तब तो मुझे विरोध करना ही पड़ेगा। उदाहरणके लिए जो वास्तवमें हिंसात्मक हों, ऐसे उपायोंके खिलाफ तो अकेला होनेपर भी मुझे उठना ही पडेगा। लेकिन मैंने यह स्वीकार किया है कि अगर राष्ट्रकी इच्छा हो तो उसे वास्तविक हिंसाके जरिये भी स्वराज्य प्राप्त करनेका अधिकार है। लेकिन उस हालतमें मेरी जन्मभूमि होते हुए भी यह वह देश नहीं रह जायेगा, जिससे मुझे प्रेम होगा — ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार यदि मेरी माता सन्मार्ग छोड़ दे तो उसपर मैं गर्व नहीं करूँगा। लेकिन स्वराज्य दल तो एक व्यवस्थायुक्त प्रगति चाहनेवाला दल है। हो सकता है कि वह मेरी तरह अहिंसाकी कसमें न खाता हो, पर अहिंसाको वह एक कार्य-साधक नीतिके तौरपर अवश्य मानता है और हिंसाका विरोध करता है, क्योंकि वह उसे हानिकर न भी मानता हो तो भी अनुपयोगी अवश्य मानता है। कांग्रेसमें उसका एक प्रमुख स्थान है। न जाने, पर यह सम्भव हो सकता है कि यदि इसकी शक्तिकी परीक्षा की जाये तो उसमें इसकी स्थिति, शायद, सबसे प्रबल सिद्ध हो। मेरे लिए यह बिल्कुल आसान है कि मैं कांग्रेससे हट जाऊँ और उस दलको कांग्रेसका कार्य-संचालन करने दूँ। लेकिन ऐसा तो मैं उसी हालतमें कर सकता हूँ और करूँगा जब कि मैं देख लूँगा कि मेरा और उसका किसी बातमें मेल नही बैठता। परन्तु जबतक मुझे उसके उद्धारकी जरा भी आशा है तबतक मैं उसका पल्ला उसी तरह पकडे रहूँगा जिस तरह बालक अपनी माताकी गोदसे चिपका रहता है। मैं उससे अपना सम्बन्ध तोड़कर अथवा उसकी भर्त्सना करके या कांग्रेससे अलग होकर उसको कमजोर हरगिज नहीं बनाऊँगा।

मैंने "उद्धार" शब्दका प्रयोग बुरे भावसे नही किया है। मेरे पास भी शुद्धि और तब्लीगकी अपनी विधि है। दुनियाने अबतक ऐसी उत्तम विधि नही देखी है। जिस जमीनपर मैं खड़ा हूँ, उसका और अपने बलका ज्ञान रखते हुए मैं अपने-आपको इस बातके लिए स्वराज्य दलके सुपुर्द करता हूँ कि वह मुझपर जितना चाहे

उतना असर डाले। इससे मुझे उसकी तमाम खूबियोंका पूरा-पूरा ज्ञान हो जायेगा और मैं अपना यह इरादा भी छिपाना नहीं चाहता कि उसके प्रभावमें आकर मैं स्वयं उसीपर अपनी कार्य-विधिके पक्षमे प्रभाव डालनेकी आशा रखता हूँ। यदि इस प्रक्रियामे वही मेरी शुद्धि कर दे, मुझे अपने मतका बना ले, तो वाह वाह! फिर तो मैं बुलन्द आवाजमे अपने मतान्तरणकी घोषणा करूँगा। यह बुद्धिसे-बुद्धिको जगाकर, हृदयसे-हृदयका स्पर्श करके शुद्धीकरणका एक उदाहरण होगा। यह मतान्तरणकी अहिंसक विधि है और असहयोगियोंको चाहिए कि वे मेरे साथ शक्ति लगाकर देखें। साथ ही वे व्यक्तिगत रूपसे अपने आचार-विचारपर भी दृढ़ बने रहे। यदि उनका असहयोग प्रेमसे उद्भूत होगा तो मैं विश्वास दिलाता हूँ कि वे स्वराज्यवादियोंको अपने मार्गपर अवश्य ले जायेंगे और यदि न भी ला पाये तो निजी तौरपर कुछ हानि तो होगी ही नही। यदि देश उनके साथ है और यदि स्वराज्यवादी लोग उनका अनुसरण नही करते तो उनका स्थान अपने-आप गौण हो जायेगा। और यदि उन्होंने बारह महीनेकी निर्धारित अवधिमें अपनी श्रेष्ठता सिद्ध कर दी तो वे कांग्रेसके निर्विवाद कर्त्ता-धर्त्ता बन जायेंगे और असहयोगियोंको अल्पसंख्यकोंके दर्जेसे ही सन्तोष मानना पड़ेगा। वे चाहे तो अल्पसंख्यकोंकी उस सम्भावित सूचीमें मेरा नाम सबसे पहले लिख ले।

विद्यार्थियोंके साथ भी समस्या वही है। असहयोग भले ही स्थगित कर दिया जाये, लेकिन राष्ट्रीय पाठशालाएँ बन्द नहीं की जायेंगी। वे तो अब एक निश्चित तथ्यके रूपमे वर्तमान हैं। वे असहयोगके अच्छेसे-अच्छे परिणामोंमें से हैं। इसलिए विद्यार्थियोंसे आशा की जाती है कि वे झण्डेको लहराये रखेंगे और देशको दिखा देंगे कि कांग्रेसके असहयोग कार्यक्रम रद कर देनेपर भी वे फूलती-फलती रहेंगी। दृढ़ताके साथ खड़े रहनेके लिए अनुकूल परिस्थितियोंकी आवश्यकता तो उसे होती है, जिसकी आस्था नकली हो। सच्ची आस्थावाला व्यक्ति तो वही है जो बुरीसे-बुरी परिस्थितियोंमे भी अपनी टेकपर डटा रहता है।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २०-११-१९२४

२९४. संदेश : 'बॉम्बे क्रॉनिकल'को

[२१ नवम्बर, १९२४ से पूर्व]

चरखेके बिना स्वराज्य सम्भव नही है।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २१-११-१९२४

२९५. भाषण: कांग्रेस कार्य समितिकी बैठकमें[1]

२१ नवम्बर, १९२४

कांग्रेस कार्य समितिकी बैठक २१ नवम्बरको सुबह साढ़े आठ बजे गांधीजीके निवासपर हुई। निम्नलिखित सदस्य उपस्थित थे:

मुहम्मद अली, मो० क० गांधी, शौकत अली, डा० अन्सारी, कोण्डा वेंकटप्पैया, गंगाधरराव देशपाण्डे, वल्लभभाई झ० पटेल और शंकरलाल बैंकर।

विषय-सूचीमें जो नेमी और प्रशासनिक ढंगके गैर-महत्वपूर्ण विषय थे, उन्हें निपटानेके बाद कांग्रेस कार्य समितिने विषय-सूचीके विषय २ और ३ पर विचार आरम्भ किया। ये विषय थे, (१) देशकी वर्तमान राजनीतिक स्थिति और (२) कांग्रेसके सम्मुख प्रस्तुत किया जानेवाला कार्यक्रम।

गांधीने सुझाव दिया कि इस प्रश्नपर चूंकि दो मत नहीं हैं इसलिए यह उचित ही होगा। सम्मेलनके सामने एक ऐसा प्रस्ताव पेश किया जाये जो सम्मेलनमें भाग लेनेवाली सभी पार्टियोंको स्वीकार्य हो। उन्होंने तर्क दिया कि यदि हमने अन्य सवाल उठाये, जैसे कि कांग्रेसका सिद्धान्त और सदस्यताके लिए कताईकी आवश्यकता तो ऐसे मतभेद उत्पन्न हो सकते हैं जो सम्मेलन बुलानेके मुख्य उद्देश्यको ही हानि पहुँचायेंगे। अतः गांधीने सुझाव दिया कि कार्य समिति द्वारा तैयार किया गया कोई प्रस्ताव रखनेका जोखिमभरा कदम उठानेके बजाय हमें सम्मेलनसे ही कहना चाहिए कि वह एक सर्वदलीय समिति नियुक्त करे जो सरकारकी दमनकारी नीतियोंपर विचार करे। कार्य समितिने सर्वसम्मतिसे यह सुझाव मान लिया।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, १९२४

१. यह बैठक बम्बईमें हुई थी।

२९६. भाषण : सर्वदलीय सम्मेलन, बम्बईमें

२१ नवम्बर, १९२४

बंगाल अविनियमपर पहला प्रस्ताव पेश करनेके लिए कहे जानेपर श्री गांधीने तद्विषयक प्रस्ताव पेश करनेके बजाय यह प्रस्ताव रखा कि अन्तिम प्रस्ताव तैयार करनेके लिए एक प्रातिनिधिक समिति नियुक्त की जाये और उस प्रस्तावको सम्मेलनमें अगले दिन पेश किया जाये।

> यह निश्चय किया जाता है कि सम्मेलनमें भाग लेनेवाले दलोंके नेताओंकी एक छोटी समिति तत्काल नियुक्त की जाये जो बंगाल सरकार द्वारा भारत सरकारकी सहमति और स्वीकृतिसे अपनाये गये दमनकारी कार्योंके सम्बन्धमें सम्मेलनके सम्मुख प्रस्तुत करनेके लिए एक प्रस्तावका मसविदा तैयार करे। यह समिति [सम्मेलनके] अध्यक्षको रात्रिमें १० बजे या उससे पहले अपना मसविदा दे दे।[१]

श्री गांधीने कहा :

अध्यक्ष महोदय, बहनो और भाइयो,

मौलाना मुहम्मद अलीके निमन्त्रणपर हम सब यहाँ कुछ चीजोंपर विचार करनेके लिए एकत्र हुए हैं जिनमें से एक, और शायद सबसे अधिक तात्कालिक महत्त्वकी चीज यह है कि भारत सरकारकी सहमति और स्वीकृतिसे बंगाल सरकारने जो दमनकारी नीति अपनाई है उसके सम्बन्धमें यदि कोई कदम उठाना सम्भव है तो उसकी सलाह हम इस सम्मेलनको दें। मौलाना मुहम्मद अली और कांग्रेस कार्य समितिसे तथा साथ ही स्वराज्य दलसे जिनका सम्बन्ध है, उनकी यह इच्छा थी कि दमनकारी नीतिके बारेमें इस सम्मेलनमें उपस्थित सभी दलोंकी सहमतिसे एक प्रस्ताव रखा जाये और वह सर्वसम्मतिसे पास किया जाये।[२] जिनपर हममें मतभेद हैं

१. यह अनुच्छेद 'बॉम्बे क्रॉनिकल' के २२-११-१९२४ के अंकसे लिया गया है।

२. अगले दिन अन्तिम रूपसे जो प्रस्ताव स्वीकार किया गया उसका पाठ निम्नलिखित है:

(क) भारतके सभी वर्गों और जातियोंका तथा सभी प्रकारके राजनीतिक विचारोंका प्रतिनिधित्व करनेवाले इस सम्मेलनका दृढ़ मत है कि आतंकवादी संगठन भारतके लोगोंको कभी स्वराज्य नहीं दिला सकते और यदि ऐसे संगठन हैं तो वह पूरे जोरसे उनकी निन्दा और भर्त्सना करता है, लेकिन साथ ही यह सम्मेलन गवर्नर जनरल द्वारा १९२४ का दण्ड-विधि संशोधन अध्यादेश लागू किया जाना अत्यन्त अनुचित मानता है और उसकी निन्दा करता है क्योंकि यह अध्यादेश एक असाधारण कदम है और वैयक्तिक स्वतन्त्रतापर सीधा हमला है, जिसका विधिकरण बिना विधानमण्डलकी स्वीकृतिके नहीं किया जाना चाहिए था और क्योंकि कार्यपालिका इसका सरलतासे जबरदस्त दुरुपयोग कर सकती है जिसके परिणामस्वरूप निर्दोष

हम यहाँ उन मुद्दोपर जोर देनेके लिए नही (हर्षध्वनि), बल्कि जिन मुद्दोपर हम एक हो सकते है, उनकी तलाशके लिए इकट्ठे हुए है (हर्षध्वनि), और यह देखनेके लिए आये है कि जिन प्रश्नोपर हममें सहमति है उनके सम्बन्धमे हम सयुक्त होकर एक साथ काम कर सकते है या नही। इनमे से एक मुद्देका सम्बन्ध बगालके असाधारण अध्यादेश और १८१८ के विनियम ३ के अधीन की गई कार्रवाईसे है। जहाँतक मै जानता हूँ, ज्यादातर लोगोकी इच्छा किसी ऐसे निर्णयपर पहुँचनेकी है जिसपर इस हालमे उपस्थित सभी दलोके प्रतिनिधियोकी सहमति हो। दुर्भाग्यवश मै इस सम्मेलनमे आनेवाले सभी दलोके प्रधानोसे परामर्श नही कर सका हूँ। मुझे श्रीमती बेसेटसे मिलनेका सौभाग्य और सुख मिला, लेकिन इरादा होते हुए भी मै माननीय वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीसे नही मिल सका।

इसके बाद श्री गांधीने पिछली रात श्री जिन्नाके साथ अपनी भेंटका जिक्र किया और कहा कि श्री जिन्नाने मुझे आश्वासन दिया है कि इस प्रश्नपर समझौता होनेमें कोई कठिनाई नहीं होगी। प्रस्ताव अप्रत्याशित रूपसे सम्मेलनके सामने नहीं लाया गया है। श्री गांधीने कहा कि मै प्रस्ताव करूँगा कि विभिन्न दलोके प्रतिनिधियोकी एक समिति बनाई जाये और यह समिति प्रस्ताव [के मसविदे] पर फौरन विचार करना शुरू कर दे और आज रातके १० बजेतक एक सर्वसम्मत निर्णयपर पहुँच जाये और उक्त प्रस्तावको कल सम्मेलनके सामने प्रस्तुत किया जाये।

[अंग्रेजीसे]

न्यू इंडिया, २२-११-१९२४

व्यक्ति फँसाये जा सकते हैं और वैधानिक राजनीतिक गतिविधियोंमें हस्तक्षेप किया जा सकता है, जैसा कि ऐसे ही कानूनी कदमोके बार-बारके अनुभवसे प्रत्यक्ष सिद्ध हो चुका है।

(ख) यह सम्मेलन आग्रह करता है कि इस अध्यादेशको तुरन्त वापस ले लिया जाये और उसके अधीन गिरफ्तार किये गये लोगोंपर यदि जरूरी हो तो साधारण कानूनके अनुसार मुकदमा चलाया जाये।

(ग) यह सम्मेलन यह भी आग्रह करता है कि १८१८ का विनियम ३ जो सरकारको अपराध करनेवाले व्यक्तियोंको बिना वारट, बिना मुकदमा और बिना कारण बताये गिरफ्तार करने और कैद करनेका अधिकार देता है, फौरन वापस ले लिया जाये।

(घ) यह सम्मेलन अपना यह दृढ विश्वास प्रकट करता है कि भारतकी वर्तमान राजनीतिक स्थिति जनताको उसके चिर-अपेक्षित उचित अधिकारोंसे वचित रखनेके कारण है और स्वराज्यकी यथाशीघ्र स्थापना ही इसका एक-मात्र इलाज है।

२९७. भाषण: सर्वदलीय सम्मेलन, बम्बईमें

२१ नवम्बर, १९२४

श्री गांधीने बहसका जवाब देते हुए कहा कि श्री रामस्वामी मुदालियरके संशोधनमें[1] जो सवाल उठाया गया है वह एक बड़ा सवाल है और सभी दलोंकी एकताके बड़े सवालको लेनेसे पहले मैं छोटे सवालका निपटारा करना चाहूँगा। उन्होंने संशोधनकी टीका करते हुए उसे बेतुकी बात बताया। श्री गांधीने पूछा कि यदि इस सवालपर हममें सहमति नहीं हो सकी तो इसकी क्या आशा है कि हम एक ज्यादा बड़े सवालपर सहमत हो सकेंगे? उन्होंने श्रोताओंको विश्वास दिलाया कि समिति यदि उचित समझेगी तो या तो बंगाल अध्यादेशका समर्थन करेगी और या वह उसकी भर्त्सना करेगी। उन्होंने श्रोताओंको बंगालके प्रति और यहाँतक कि सरकारके प्रति भी जिसने सम्मेलनसे सहायताकी माँग की है, अपने कर्त्तव्यका स्मरण दिलाया।

[अंग्रेजीसे]

न्यू इंडिया २२-११-१९२४

२९८. भेंट: एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिसे

बम्बई

२१ नवम्बर, १९२४

श्री गांधीने एसोसिएटेड प्रेसके एक प्रतिनिधिको आज शाम बताया कि स्थानीय अखबारकी इस खबरमें कोई सचाई नहीं है कि उन्होंने लिबरल पार्टीवालोंसे कहा है कि वे कताई सदस्यता हटा लेने और "स्वराज्य" शब्दका अर्थ औपनिवेशिक स्वराज्य तक सीमित रखनेको तैयार हैं। श्री गांधीने श्री चिन्तामणि तथा अन्य नरमदलीय नेताओंसे वस्तुतः जो कहा था वह यह था कि यदि वे ऐसा चाहते हों तो उन्हें कांग्रेसमें शामिल हो जाना चाहिए और अपनी राय स्वीकार करवानेका प्रयत्न करना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

न्यू इंडिया, २२-११-१९२४

१. मत लिये जानेपर संशोधन भारी बहुमतसे गिर गया।

२९९. भाषण: सर्वदलीय सम्मेलन, बम्बईमें

२२ नवम्बर, १९२४

सदनका मत जाननेके बाद सम्मेलनके अध्यक्षने सभी दलोंकी एकता विषयक प्रस्तावपर बहसकी अनुमति दे दी। श्री गांधीसे प्रस्ताव पेश करनेको कहा गया तो उन्होंने निम्नलिखित शब्दोंमें उसे पेश किया:

यह सम्मेलन एक समिति नियुक्त करता है जिसमे दीवान बहादुर टी० रगाचारियर, दीवान बहादुर एस० रामचन्द्र राव, सर पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास, माननीय वी० एस० श्रीनिवास शास्त्री, सर तेजबहादुर सप्रू, श्री सी० वाई० चिन्तामणि, श्रीमती एनी बेसेंट, पण्डित मालवीय, श्री आर० पी० पराजपे, सर पी० एस० शिवस्वामी अय्यर, श्री चित्तरजन दास, श्री मुहम्मद याकूब, श्री एम० एच० किदवई, श्री मुहम्मद अली, श्री मुहम्मद अली जिन्ना, श्री शिन्दे, श्री भूलाभाई देसाई, श्री टी० वी० पार्वती, श्रीमती सरोजिनी नायडू, हकीम अजमलखाँ, श्री अबुल कलाम आजाद, श्री जे० बी० पेटिट, श्री एस० श्रीनिवास आयगार, बाबू भगवानदास, श्री न० चि० केलकर, श्री जोजेफ बैप्टिस्टा, सरदार मगलसिंह, लाला लाजपत राय, श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचारी, श्री विपिन चन्द्र पाल, लाला हरकिशनलाल, यूरोपियन एसोसिएशनके अध्यक्ष, एग्लो-इडियन एसोसिएशनके अध्यक्ष, क्रिश्चियन एसोसिएशनके अध्यक्ष, अब्राह्मण सघके अध्यक्ष (और कुछ अन्य, जिनके नाम बादमे जोडे गये) सदस्य होगे। यह समिति भारतीय राष्ट्रीय काग्रेसके साथ देशके अन्य राजनीतिक दलोको फिरसे मिलाने और स्वराज्यकी एक योजना तैयार करनेका सर्वोत्तम रास्ता क्या हो — इसपर विचार करेगी। यह हिन्दू-मुस्लिम और उनके राजनीतिक पहलुओंकी हदतक — ऐसे ही दूसरे सवालोके हल-पर विचार करेगी। यह समिति ३१ मार्च, १९२५ से पहले-पहले रिपोर्ट दे देगी, सम्मेलनकी बैठक ३० अप्रैलसे पहले-पहले ही बुलाई जायेगी और रिपोर्ट सम्मेलन आरम्भ होनेसे एक पखवाडा पहले प्रकाशित कर दी जायेगी।

श्री गांधीने कहा: वर्षों बाद सभी दल एक साथ मिले है। समय और महत्त्वकी दृष्टिसे यह प्रस्ताव सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण और अत्यन्त जरूरी है। सरकार आज श्री चितरंजन दासका सर भी ले ले तो भी बंगालका काम रुकेगा नहीं और न भारतका। लेकिन यदि हमें राजनीतिक स्वाधीनता न मिली तो हमारा नाश हो जायेगा। प्रस्तावपर बोलते हुए उन्होने कहा कि इस प्रश्नपर देशके सर्वोत्तम मस्तिष्क विचार करेंगे। मैं जन्मजात आशावादी हूँ। मुझे लगता है कि एकताके लिए नहीं बल्कि स्वराज्यके लिए हमें ठीक निर्णय लेना ही होगा। श्री गांधीने डा० किचलूका तार पढ़कर सुनाया जिसमें बिना सिद्धान्तोकी बलि दिये एकताकी इच्छा प्रकट की थी। उन्होंने इसके बाद कहा मुझे इस रास्तेमें दुर्गम बाधाएँ दिखाई पड़ती है। मैं

लोगोंको कताई सदस्यताके बारेमें राजी नही कर सका हूँ। मै कुछ समय चाहता हूँ जिसमें या तो मैं दूसरोंको अपनी बात समझा सकूँ या दूसरे मुझसे अपनी बात मनवा लें। हम सबको एक व्यावहारिक और वास्तविक एकता स्थापित करनेके लिए मिलकर रास्ता ढूंढ़ना चाहिए। मैंने जिस समितिका प्रस्ताव किया है वह सोच-विचार करनेके बाद अपनी. रिपोर्ट तैयार करेगी। हालाँकि एकताके लिए और ज्यादा इन्तजार करना कष्टदायी है लेकिन यह अपरिहार्य है। कोई नहीं कह सकता कि समिति किसी स्वीकार्य निर्णयपर -पहुँच ही जायेगी। हमारे चारो ओर जो बादल छाये हुए हैं उनके बावजूद मैं आशा करता हूँ कि समिति इस अँधेरेको चीरकर एक व्यावहारिक कार्यक्रम बना सकेगी।

[अंग्रेजीसे]

न्यू इंडिया, २४-११-१९२४

३००. एकको सो देशको

बगालकी लाज सारे हिन्दुस्तानकी लाज है। एक हिन्दुस्तानीकी लाज सारे देशकी ही लाज है — जिस दिन हम ऐसा समझने लगेगे उस दिन स्वराज्य हमसे दूर न रह जायेगा। यह भावना फैली हुई तो खूब है, परन्तु अब भी उसका उतना प्रचार नही हुआ है, जितना कि होना चाहिए। यदि मेरा भाई सकटमे हो, यदि उसकी लाज बिना कारण जा रही हो तो मैं केवल सहानुभूतिका प्रस्ताव पास करके ही न बैठ जाऊँगा, बल्कि उसकी मददके लिए जा पहुँचूंगा। अभी हममें देशके प्रति ऐसी भावना जाग्रत नही हुई है। कश्मीरसे लेकर कन्याकुमारीतक, आसामसे लेकर सिन्धतक किसी भी हिन्दुस्तानीको दु खमे पडा देखकर जब करोडोके मनमें यह भावना उत्पन्न होगी कि हमारा सगा भाई दु खमे है तब बगाल-सरकारकी राजनीतिको निर्मूल करनेका उपाय हमे सहज ही मिल जायेगा।

आज हम अँधेरेमे भटक रहे हैं, क्योकि हमारी भ्रातृ-भावना इतनी प्रज्वलित नही है। जब शुद्ध भावनाका उदय होगा तब उसका प्रकाश हमे अपना रास्ता सहज ही दिखा देगा। हम आज शिथिल हो रहे हैं। जब भ्रातृ-भावनाकी वाष्प हमारे हृदयसे भभककर निकलेगी तब हमारी गतिमे प्रबल वेग आ जायेगा, आज हम बिखरे हुए दिखाई देते हैं, हम आपसमे ही लड रहे हैं। जब हमारा मानस तीव्र भातृभावना-रूपी सरेससे चिपकना शुरु हो जायेगा तब हम एक-दूसरेसे इस तरह गले मिलेगे और चिपक जायेगे कि हम अनेक होते हुए भी एक दिखाई देगे।

यदि हमारा भाई भूखो मरता हो और हमे मालूम हो कि चरखा चलानेसे उसे आजीविका मिल सकती है परन्तु वह आलस्यके कारण नही चलाता और यदि हम खुद कातकर उसे पदार्थपाठ पढाये तो वह कातेगा, तो हम जरूर चरखा चलायेगे। ऐसी हालत आज हिन्दुस्तानमे करोड़ो लोगोकी है। फिर भी उन्हे पदार्थपाठ पढानेके

लिए आधा घंटा चरखा चलाना हमें भारी पडता है, क्योंकि हममें अभी एक-दूसरेके प्रति भ्रातृ-भावना नही है।

यदि हम सब लोग विदेशी कपडेका त्याग कर दे और चरखा चलाकर भारत की कपडेकी जरूरत पूरी कर दे तो इस देशमे इस सल्तनतका स्वार्थ बहुत हदतक समाप्त हो जाये। यह जानते हुए भी हममे से बहुत-से लोग कातनेसे इनकार करते हैं, क्योकि हमारी भ्रातृ-भावना इतनी तीव्र नही हुई है। सच पूछिए तो बहुत-से शहरोमें हिन्दुओ और मुसलमानोके बीच भ्रातृ-भावना है ही नही। ऐसी हालतमें करोडो कण्ठोसे यह घोष निकल ही नही सकता कि 'यह हमारा देश है'। और जबतक ऐसी स्थिति नही आती तबतक स्वराज्यकी आशा रखना बेकार है। जिस रास्तेसे स्वराज्य मिलेगा, उसी रास्तेसे बगालमे चल रही राजनीति भी बन्द हो सकती है, यह बात हम सब समझ सकते है। अराजकतावादियोकी अराजकता स्वराज्यके लिए है। वह निरर्थक ही सही। मगर अराजकताके रोगका कारण स्वराज्यका अभाव ही है। सरकारकी अराजकताका भी वही कारण है। सरकार अपनी सत्ता भरसक छोडना नही चाहती। यदि स्वराज्य हो तो ऐसी अराजकता नही हो। इसीसे मैं कहता हूँ कि यदि चरखा स्वराज्यका साधन है, यदि हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य स्वराज्यका साधन है तो सरकारकी दमन-नीति दूर करनेका साधन भी वही है।

यदि हिन्दुओ और मुसलमानोके बीच भ्रातृ-भावना नही है तो अस्पृश्य हिन्दुओ और दूसरे हिन्दुओंके बीच भी यह भावना कहाँ है? भाई-भाईके बीच अस्पृश्यता हो ही नही सकती। एक भाई अच्छे-अच्छे पकवान खाये और दूसरा उसकी जूठन, यह नही हो सकता। फिर भी अस्पृश्यता दूर करनेमे कितनी कठिनाइयाँ पेश आती हैं, यह तो अस्पृश्यता-निवारणके काममें लगे हुए लोग ही जानते है।

जहाँ ऐसी स्पष्ट स्थिति मौजूद है, जहाँ रोग और उसके इलाजका ज्ञान है, वहाँ उस इलाजको काममे न लाना और अधीर होकर दूसरे इलाजकी खोजमे पडना, यह तो रोगीका नाश करनेके समान है।

कुछ लोग कहते है — लोग तो धूम-धडाका चाहते है। धूम-धडक्केसे कुछ काम भले ही बनता हो, परन्तु दुनियामें आजतक किसी भी देशने सिर्फ इसीके बलपर आजादी हासिल नही की है। हिन्दुस्तान तो कभी भी हासिल नही कर सकता। धूम-धडक्केको छोडकर अपने धधेमें जुट जाना ही हमारा असली फर्ज है। जो लोग इस बातको जानते है, वे यदि औरोका मुँह न देखते रहकर अपना-अपना फर्ज अदा करने लग जाये तो हम उस हदतक स्वराज्यके नजदीक पहुँच चुके, ऐसा माना जायेगा। इसीलिए, देशमें और लोग चाहे जो करते रहे, जो इस बातको जानते है वे यदि अपने कर्त्तव्यमे दृढ रहेगे तो सारा देश उनके रास्ते चलेगा, इसमें मुझे जरा भी शक नही है। कारण, इस देशकी मुक्तिका कोई दूसरा उपाय नही है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २३-११-१९२४

३०१. गुजरातका धर्म

मुझे उम्मीद है कि मैंने जो असहयोग मुल्तवी करनेकी सलाह काग्रेसको दी है, गुजरात उसका यह अर्थ नही करेगा कि उसे भी असहयोग त्याग देना है। जिस प्रकार उसमे व्यक्तियोको यह सलाह नही दी गई है कि वे असहयोग छोड दे उसी प्रकार प्रान्तोको भी यह सलाह नही दी गई है।

यदि काग्रेस असहयोगको मुल्तवी रखेगी तो उसका इतना ही मतलब है कि वह परिस्थितिपर विचार करके जनताको उतनी सुविधा दे देगी। लेकिन जहाँ असहयोगमें लोगोको और लोकनायकोको श्रद्धा है, जहाँ वैमनस्य नही है और जहाँ किसी प्रकारकी अव्यवस्था नही है, वहाँ असहयोगको मुल्तवी करनेके प्रस्तावका कोई भी बुरा असर नही होना चाहिए। इसके विपरीत ऐसे प्रान्तोके लोगोको चाहिए कि वे अपने-अपने कार्यको और भी दृढ बनाये तथा शोभान्वित करे।

उदाहरणके लिए, गुजरातकी राष्ट्रीय पाठशालाएँ कायम रहे और उनमे वृद्धि हो, जिन वकीलोने वकालत छोड दी है, वे अपने निश्चयमे दृढ बने — इसके साथ ही जहाँ अभी भी वैर-भाव हो वहाँ प्रेम-भावका प्रवेश हो। जो लोग कौसिलोमे जाये अथवा फिरसे वकालत शुरू करे उनके साथ कोई तनिक भी द्वेष न करे, उनकी निन्दा न करे। सभी अपनी-अपनी अन्तरात्माकी आवाजका अनुसरण करके असहयोगी अथवा सहयोगी बने। काग्रेसके प्रस्तावका परिणाम यह होना चाहिए कि पुराने प्रस्तावके बन्धनके कारण चलनेवाला असहयोग न चले — वह एक युक्ति अथवा प्रयोगके रूपमे जारी न रहे, बल्कि धर्मका स्थायी रूप ग्रहण कर ले। कहनेका अभिप्राय यह है कि जहाँ-जहाँ सरकारकी नीति कुल मिलाकर हानिकर हो वहाँ-वहाँ अहिसात्मक असहयोग धर्म है, यह जानकर जनता अथवा व्यक्तिको असहयोग करना चाहिए। मतलब यह कि किसी प्रस्तावके बन्धनके बिना भी, जिनकी इच्छा असहयोगपर कायम रहनेकी हो, वे उसपर कायम रह सकते है।

हम कह सकते है कि काग्रेसका प्रस्ताव चालनगाडीके समान है। इतने अनुभवके बाद हमे यह देखना है कि कितने लोग चालनगाडीके बिना — काग्रेसके सहारेके बिना — टिके रह सकते है। यदि कुछ लोग टिके रहे तो हम समझ सकेगे कि हममे से कितने लोगोने प्रेममय असहयोगके सिद्धान्तको समझा है। मेरा दृढ विश्वास है कि ऐसे व्यक्ति तो बहुत है, किन्तु साथ ही मेरी यह मान्यता भी है कि ऐसे प्रान्त भी एकाधिक है और महागुजरात उनमे से एक है।

प्रान्तके रूपमे महागुजरातने ही सबसे पहले असहयोग आरम्भ किया था। मेरी इच्छा है कि वह उसे गौरवान्वित करे। अब तो असहयोग तभी निभ सकेगा जब वह निर्मल होगा। उसमे नम्रता, विवेक, प्रेम, शान्ति, विचार, गम्भीरता, दृढता और सत्य झलक उठना चाहिए। शान्तिमय असहयोग प्रकृतिका अनुसरण करेगा। जिस प्रकार हम प्रकृतिमे अदृश्य रूपसे चलनेवाली पोषक क्रियाओको केवल उनके परिणामोसे

ही जानते हैं, उसी प्रकार शान्तिपूर्ण असहयोगके महत्त्वको हम उसके परिणामोंसे ही जान सकते हैं। "ईश्वर" एक भारी शक्ति है, लेकिन उसे किसने देखा है? हम उसे उसके परिणामोंसे ही जानते हैं। बिजलीको किसने देखा है? लेकिन हम उसे तारों, चक्कियों और इंजनोंके जरिये जानते हैं। हम मिट्टीमें दबे बीजको नहीं देख पाते। यदि हम उसे खोदकर देखने बैठें तो वह उगेगा ही नहीं। लेकिन उसके परिणामके रूपमें अनाज, घास और फलोंके पौधों और पेड़ोंको हम देखते हैं। प्रेममय असहयोग इन सब अदृश्य वस्तुओं और शक्तियोंसे भी कहीं अधिक सूक्ष्म, परन्तु प्रबल शक्ति है। असहयोगीका आचरण भी उतना ही अदृश्य और सूक्ष्म होना चाहिए। उसमें दम्भ, ढोंग, अहंकार और आडम्बरके लिए गुंजाइश नहीं है। वह असहयोग करेगा किन्तु सहयोगीको दुःख हो, ऐसा प्रेमवश नहीं होने देगा। अंग्रेज अधिकारियोंके हृदयको भी वह प्रेमसे जीतनेका प्रयास करेगा। उनका तिरस्कार नहीं करेगा। जब वह उक्त अधिकारीके अनुकूल नहीं हो सकता तब भी उसका व्यवहार विनय और विवेकसे युक्त होगा।

जो ऐसे असहयोगको नहीं पहचान सकता अथवा इसका पालन नहीं कर सकता, उसके लिए तो मूल स्थिति यानी सहयोग करना ही योग्य है। जो असहयोग पिता पुत्रसे और पुत्र पितासे कर सकता है, वही सच्चा असहयोग है। मैंने सन् १९२० में हिन्दुस्तानको उसी धार्मिक असहयोगसे परिचित करानेका प्रयत्न आरम्भ किया था। मैं जानता हूँ कि यह व्यापार बहुत बड़ा था और बड़ा है। मेरे पास पूँजी कम थी और अब भी कम है। प्रयत्न करनेका अधिकार हर किसीको है। उस अधिकारसे ही मैंने यह प्रयत्न शुरू किया है। जिन्होंने उसे शुद्ध रूपसे समझा है, उनसे मैं सहायताकी प्रार्थना करता हूँ। मैंने आज असहयोग मुल्तवी करनेका जो सुझाव दिया है उसमें भी प्रेममय असहयोग निहित है। जैसा कहते हैं, प्रेमपंथ तो पावककी ज्वाला है। उसे देखकर बहुत-से लोग भाग खड़े हुए हैं। जिसे भागना हो वह भले ही भागे, लेकिन इस ज्वालाको जो सहन करेगा उसे विजयश्री अवश्य प्राप्त होगी।

प्रेम रहित असहयोगको मैं नहीं जानता और न उसे जाननेकी मेरी इच्छा ही है। हिन्दुस्तानकी स्वतन्त्रताके लिए, हिन्दू-धर्म अथवा इस्लामकी रक्षाके लिए, हिन्दू-मुस्लिम एकताके लिए और अस्पृश्यता-निवारणके लिए मेरे पास इसके अलावा और कोई दवा नहीं है। मैं वैरसे वैरका निवारण असम्भव मानता हूँ और मैं जो हमेशा चरखेको आगे रखता हूँ उसका भी एक कारण उसमें निहित अहिंसा है। मौलाना मुहम्मद अलीने इस्लामी साहित्यमें से चरखेकी स्तुतिमें कहे गये वचनोंको एकत्र करके अपने 'हमदर्द' में प्रकाशित किया है। पाठक 'नवजीवन' के इस अंकमें उनका अनुवाद देखेंगे। वे उनपर विचार करें।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २३-११-१९२४

३०२. विद्यार्थी क्या करें?

"जब असहयोग स्थगित रहनेवाला है, तब विद्यार्थियोका क्या होगा? उनकी क्या स्थिति होगी? क्यो नही वे फिर सरकारी स्कूलोमे चले जाये? अगर उनसे ऐसा कहा जाता है कि वे वापस न जाये तो यह कैसी निर्दयता है? उन्होने सबसे अधिक बलिदान किया है। क्या आप अब उनसे और भी बलिदान कराना चाहते है? क्या इस तरह हमेशा बेचारे गरीबोका ही बलिदान दिया जाता रहेगा? अगर इस तरह स्वराज्य लेना हो तो न जाने स्वराज्य मिलनेपर हम-जैसे गरीबोका क्या हाल होगा। असहयोग स्थगित रखनेकी बात सुनकर तो विद्यार्थियोके होश ही उड गये है।"

कुछ विद्यार्थी इस तरहकी बाते कह रहे है। आज जो परिवर्तन हो रहे है, उन्हे समझना जब प्रौढ़ असहयोगियोके लिए भी मुश्किल हो रहा है तब विद्यार्थियोको घबराहट हो, इसमें क्या आश्चर्य? उनके बलिदानके विषयमे दो मत नही हो सकते। फिर भी उपर्युक्त विचार-सरणीमे भूल तो है ही।

प्रस्ताव असहयोग-मात्रको स्थगित रखनेका नही, बल्कि कांग्रेस द्वारा असहयोगके प्रसारको स्थगित रखनेका है। जिस वस्तुको जनताका एक प्रमुख हिस्सा — जिसे उस वस्तुमे पहले विश्वास था — त्याग दे उस वस्तुको सार्वजनिक रूपमे कायम नही रखा जा सकता और न वह सार्वजनिक मानी ही जा सकती है। यह भी नही हो सकता कि जिस वस्तुको कांग्रेस छोड दे, उसे सारी जनता भी छोड दे। कांग्रेसको कितनी ही चीजें बेमनसे, अनिच्छासे छोड़नी पडती है। लेकिन वह चाहती तो यही है कि अगर जनता उसे न छोड़े तो अच्छा।

पैसेकी कमीके कारण अगर कांग्रेस आज जगह-जगह ऐसी कुछ आदर्श पाठशालाएँ न खोल सके जिनमे हिन्दू-मुसलमान आदि भिन्न-भिन्न धर्मोके बच्चे एक साथ पढ सके तो इसका मतलब यह नही कि दूसरे लोग भी ऐसी पाठशालाएँ न खोले। सच तो यह है कि ऐसी पाठशाला कोई खोलेगा तो कांग्रेस उसे धन्यवाद देगी। उसी प्रकार यदि आज कांग्रेस असहयोगको स्थगित रखती है तो उसका कारण यह नही है कि असहयोगके सिद्धान्तोंमे उसकी श्रद्धा नही रही, बल्कि यह है कि जनताके प्रतिनिधियो-का एक बहुत बडा हिस्सा आज असहयोगको चलानेमे असमर्थ है। फिर भी, कांग्रेसकी इच्छा तो यही हो सकती है कि अगर जनताका कोई भी हिस्सा असहयोग चलाकर उसकी शक्ति सिद्ध कर दिखाये तो वह उसे धन्यवाद देगी।

कांग्रेस यह नही चाहेगी कि जिन लोगोने वकालत छोड रखी है, वे उसे फिरसे शुरू कर दे। लेकिन, जो वकील लाचार होकर वकालत करेंगे, कांग्रेस उनकी निन्दा नही करेगी। उसी प्रकार कांग्रेस कभी भी यह नही चाहेगी कि जिन विद्यार्थियोने असहयोग कर रखा है, वे फिरसे सरकारी स्कूलोमे जाये। किन्तु, यदि वे ऊब-थक कर या किसी दूसरे कारणसे सरकारी स्कूलोमे जायेंगे तो कांग्रेस उनका तिरस्कार भी नही करेगी। परन्तु, उन्हे सुविधा देनेके लिए और उन्हे असहयोगी पाठशालाओंमें

बनाये रखनेके लिए वह आवश्यक प्रयत्न अवश्य करेगी और वर्तमान पाठशालाओंको कायम रखेगी। असहयोग 'स्थगित' ही रखना है, उसे कोई सदाके लिए बन्द नहीं कर देना है। उसे फिरसे आरम्भ करनेपर क्या सरकारी स्कूलोंमें गये विद्यार्थी पुनः उनका त्याग कर देंगे? असहयोगके दूसरे पहलुओंके सम्बन्धमें चाहे जो परिवर्तन हो, लेकिन राष्ट्रीय पाठशालाओंको चलते ही रहना चाहिए, वे चलती रहेंगी भी, किन्तु अगर वे न चल पाईं तो जनताकी नाक कट जायेगी।

इतना ही नहीं, कालक्रमसे राष्ट्रीय पाठशालाओंमें वृद्धि भी होनी चाहिए। स्वराज्य मिलनेपर असहयोगी वकील फिरसे अदालतोंमें वकालत शुरू कर देंगे, किन्तु असहयोगी पाठशालाएँ तो तब भी कायम ही रहेंगी। दूसरी पाठशालाएँ ही इन पाठशालाओंकी शिक्षा-पद्धतिका अनुकरण करेंगी। ऐसा नहीं कि असहयोगी पाठशालाएँ पिछली सरकारी पाठशालाओंका अनुकरण करेंगी। यह स्वराज्य चाहे आज न मिले, चाहे उसे पानेमें युग बीत जाये, लेकिन जब स्वराज्य आयेगा और उस समय जो असहयोगी पाठशालाएँ जीवित पाई जायेंगी, वे आदर्श-रूप होंगी और जनता उनपर न्यौछावर हो जायेगी।

अतएव, मुझे कहना होगा कि असहयोगको स्थगित रखनेके मेरे 'सुझावसे जहाँ-जहाँ लोगोंमें घबराहट पैदा हो गई है, वहाँ-वहाँ मुझे असहयोगके प्रति अश्रद्धा दिखाई देती है। जिसे अपने सिद्धान्त या कार्यके प्रति श्रद्धा होगी, वह दूसरोंकी अश्रद्धासे या दूसरोंके अलग हो जानेसे क्यों डरेगा, क्यों घबरायेगा, क्यों अपने निश्चयसे डिगेगा? श्रद्धालु लोगोंमें दूसरोंकी अश्रद्धा देखकर दुगुनी दृढ़ता आ जाती है। जिस प्रकार रक्षकोंसे सुरक्षित व्यक्ति उन रक्षकोंके हट जानेपर असावधानी छोड़कर सावधान हो जाते हैं, उसी प्रकार श्रद्धालु व्यक्ति अपने साथियोंको भागते देखकर दृढ़तापूर्वक अकेले ही सिंहकी भाँति जूझते हैं और पर्वतके समान अडिग बने रहते हैं।

फिर, यह तो सच ही है कि विद्यार्थियोंने बहुत बलिदान किया है। लेकिन, बलिदानके मर्मको समझना जरूरी है। यज्ञ करनेवाला दूसरोंकी दयाका भूखा नहीं रहता। उसकी स्थिति दयनीय नहीं होती, वह तो स्तुत्य होती है। जो यज्ञ अनिच्छा-पूर्वक या दुःखी मनसे किया जाये वह यज्ञ, यज्ञ नहीं है। बलिदानीके मनमें तो उल्लास, हर्ष और उमंग होती है। बलिदान करनेवाला तो और अधिक बलिदान करनेकी शक्तिकी कामना करता है, वह त्यागसे घबराता नहीं, क्योंकि उसके लिए तो त्यागमें ही सुख है। उसे यह विश्वास रहता है कि अभी जो चीज कष्टकर प्रतीत हो रही है, वह अन्तमें सुखद ही सिद्ध होगी। जिन्होंने असहयोग किया है, उन्होंने कुछ खोया नहीं है, पाया ही है। जो अपनी गन्दगी निकाल देता है, वह शुद्ध हो जाता है। जो त्याज्य है, उसे त्यागना तो अपने सिरका बोझ ही हलका करना है। जो नित्य आधे घंटेतक चरखा चलाता है, वह बलिदान करता है अर्थात् आलस्य और स्वार्थका त्याग करता है, क्योंकि ये दोनों त्याज्य हैं। जिसने सरकारी स्कूल छोड़ा है, उसने बलिदान किया है, क्योंकि इस तरह उसने त्याज्य वस्तुका त्याग किया है। त्याग करते समय उसका मुँह उतरा नहीं होगा, बल्कि उसके मुखमण्डलपर आनन्दकी आभा छिटकी हुई होगी।

मीराबाई राजभोगका त्याग करके नाची थी और राजभोगके बीच रहकर रोई थी। हमारी दृष्टिसे वह भारी बलिदान था। मीराबाईके लिए त्याग ही भोग था — आनन्द का विषय था। सुधन्वा उबलते तेलके कडाहेमे नाच-नाचकर नारायण नामका जाप कर रहा था। इसीसे प्रीतमने गाया है कि जो किनारेपर खडा है वह कॉप रहा है, "जो धारामे कूद पडा है, वह परमानन्दका अनुभव कर रहा है।" इसीसे निष्कुलानन्दने कहा है कि वैराग्यके बिना त्याग टिक नही सकता।

जबतक किसी वस्तुके प्रति हममे राग है, तबतक उसका सच्चा त्याग सम्भव नही है। भूखसे मरते हुए कगालोको निराहारी त्यागी नही कहा जा सकता। वे तो लाचार होकर ही भूखे रहते है। उनका राग तो ज्योका-त्यो बना हुआ है। वे चौबीसो घटे खाते ही रहते है, क्योकि उनका मन खानेमे ही लगा हुआ है। जिस असहयोगी विद्यार्थी का मन सरकारी स्कूलोमे लगा हुआ है, किन्तु लोक-लाजके भयसे अथवा ऐसे ही किसी दूसरे कारणसे जिसका शरीर-भर राष्ट्रीय पाठशालामे है, वह त्यागी नही है, वह असहयोगी भी नही है। उसकी स्थिति तो सचमुच दयनीय है। जहाँ मन है, शरीरको भी वही रखनेवालेका उद्धार सम्भव है। किन्तु जो शरीर और मनको अलग-अलग रखता है वह स्वय अपनेको, ससारको और ईश्वरको भी धोखा देता है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २३-११-१९२४

३०३. भाषण: अ० भा० कांग्रेस कमेटी, बम्बईमें[1]

२३ नवम्बर, १९२४

मैंने अपनी निजी हैसियतमे और अपनी आन्तरिक भावनाओको ध्यानमे रखते हुए समझौतेपर हस्ताक्षर किये थे। जब मैंने समझौतेपर हस्ताक्षर किये उस समय मेरे मनमे ऐसा कोई विचार नही था कि अपरिवर्तनवादियोको मै अपने पक्षमे रख ही सकूँगा। मै सभामे उपस्थित सभी लोगोसे अनुरोध करूँगा कि मै जो-कुछ कह रहा हूँ, उससे वे अभिभूत न हो जाये। अगर मेरी बात किसीकी बुद्धिको ठीक प्रतीत हो तो मै अवश्य चाहूँगा कि वह इस समझौतेको स्वीकार कर ले, लेकिन अगर मै अपनी बात उसकी बुद्धिको नही जँचा सकूँ तो उसकी भावनाओका सहारा मै नही लेना चाहता। इस समझौतेकी सफलता हम सबोके हार्दिक सहयोगपर ही निर्भर है। मैंने असहयोग या सविनय अवज्ञा-सम्बन्धी अपने विचार बदले नही है और यदि मै आज आगे न बढता, या जो स्थिति मैंने हमेशा अपनाई है, उससे पीछे हटता हुआ प्रतीत होता हूँ तो देखनेमें ही ऐसा लगता है। वास्तवमें जहाँतक मेरा सवाल है, अहिंसाके

१. यह भाषण गांधीजीने उस प्रस्तावको पेश करते हुए दिया था, जिसमें कलकत्ता-समझौतेका समर्थन किया गया था; प्रस्ताव बहुमतसे पास हो गया। साधन-सूत्रमें इस रिपोर्टको "साराश" बताया गया है।

एक सिपाहीकी तरह, जिसके होनेका मैं दावा करता हूँ, मैं आगे ही बढ़ रहा हूँ। एक अहिंसक सिपाहीके नाते मैं जानता हूँ कि मेरी स्थिति क्या है और मुझे क्या करना चाहिए। मैं शायद आज तत्काल और आग्रहके साथ कोई ऐसा निर्णय नहीं दे सकता जिसे सब लोग स्वीकार कर ले। समझौतेका ऐसा अर्थ निकाला जा सकता है जो निश्चिय ही न मेरे मनमे था और न स्वराज्य दलके मनमे। स्वराज्यवादी सरकारकी सहायता नही करना चाहते, बल्कि इसके विपरीत अपनी पूरी योग्यता और बुद्धि द्वारा वे उस प्रणालीका अन्त करना चाहते है, जिसके अधीन हम वर्षोंसे कराह रहे है — वह प्रणाली जिसे मैं भ्रष्ट और आसुरी कहनेमे झिझका नही हूँ। उस प्रणालीके विरुद्ध मैंने जिन विशेषणोका प्रयोग किया है उनमे से एक भी मैं वापस लेनेको तैयार नही हूँ। यह एक ऐसी प्रणाली है, जो यदि सुधारी नही जा सकती तो बिना किसी हिचकके अविलम्ब समाप्त कर दी जानी चाहिए। आज मैंने यदि यह समझौता किया है तो इस प्रणालीको नष्ट करनेका उद्देश्य सिद्ध करनेके लिए ही किया है। अगर मैं देखूँ कि सारे देशके विरुद्ध संघर्ष करके मैं इस अन्यायको समाप्त कर सकता हूँ तो मैं आज वैसा कर डालूँ। मैं कहता हूँ कि मैं ऐसा कर सकता हूँ। यदि मैं देखूँ कि मैं वैसा नही कर सकता तो मैं फौरन अपने कदम पीछे हटा लूँगा।

कहा जाता है कि यह समझौता मेरी तरफसे रियायतके रूपमें किया गया है। हाँ, यह रियायत दोनो ही पक्षोकी ओरसे की गई है। दोनो ही पक्ष कुछ देना और कुछ लेना चाहते है। मेरा विश्वास है कि इस दुनियाके इतिहासमे या मानवके इतिहासमें वास्तवमे कोई चीज ऐसी नही है जो पारस्परिक रियायतपर आधारित न हो, और यह समझौता करनेके लिए मैंने जो उपाय अपनाया है, उससे मिलती-जुलती चीज न हो। अपरिवर्तनवादियोंके दृष्टिकोणसे इस समझौतेमें सबसे पहली चीज जो ध्यान देनेकी है वह यह कि इस समझौतेमे स्वराज्य दलको अपरिवर्तनवादियोके साथ बराबरीका दर्जा प्राप्त हुआ है। मैं यह कहनेका साहस करता हूँ कि अपरिवर्तनवादियो-के साथ बराबरीका दर्जा पाना उनका अधिकार है। यह रियायत करनेमें मैंने ऐसा कुछ नही किया है जो युक्तियुक्त और उचित न हो। यदि मुझे इस सदनको विभाजित करवाना होता या यदि मैं किसी तरह अपनेको यह विश्वास दिला सकता कि कांग्रेसको विभाजित करना देशके हितमे होगा तो मैं कुछ और ही करता। मैं कौंसिल-प्रवेश कार्यक्रमकी उपयोगितामे विश्वास नही करता, लेकिन फिर भी मुझे देशके हितमें वैसा करना पड़ा। मैंने जो-कुछ किया है वह देशके हितमें है, मेरे अपने सिद्धान्तोके हितमे है और असहयोगके हितमें है।

मैं स्वराज्यवादियोकी उपेक्षा करनेकी स्थितिमें नही हूँ। मैं जानता हूँ कि उनके दलकी ताकत बढ़ रही है। मैं जानता हूँ कि वे जनताके एक बहुत बड़े और सशक्त वर्गका प्रतिनिधित्व करते है, जो कौंसिल-प्रवेशके पक्षमें है। मैं यह भी जानता हूँ कि उनके पास देशके सर्वोत्तम दिमागवाले लोग है। एक ऐसे वर्गका जो कौंसिलोंपर कब्जा करना चाहता है, सहयोग लिये बिना मुझे भय था कि मैं कोई प्रगति नही कर सकूँगा। स्वराज्यवादियोके अलावा लिबरल दलवाले है, इंडिपेंडेंट दलवाले है और कनवेंशन

दलवाले हैं। ये सभी अपरिवर्तनवादी कार्यक्रमके खिलाफ खडे हैं। स्वराज्य दल अपने ढगका एक अग्रगामी दल है। स्पष्टत उन्होने कौसिलो और विधान सभाओके वातावरणको प्रभावित किया है। मै उनकी राजनीतिक भावनाओकी अवहेलना नही कर सकता था, कोई नही कर सकता। जहाँतक "खद्दर"का सवाल है, उन्होने औपचारिक और राजकीय समारोहोके अवसरपर "खद्दर" पहननेकी मेरी अपीलका विरोध नही किया है। उन्होने "खद्दर" सम्बन्धी मेरी अपीलको सदाके लिए ठुकराया नही है। मै एक तरहसे यह स्वीकार करता हूँ कि असहयोगकी लडाईका या सविनय अवज्ञा आन्दोलनका नेतृत्व करना मै तबतक असम्भव समझता हूँ जबतक हमारे साथ देशका प्रबुद्धवर्ग अर्थात् देशके प्रबुद्ध लोगोका एक ऐसा बहुत बडा समूह न हो, जिसकी सहानुभूति हमारे पक्षमे हो और यहाँतक कि वह सक्रिय रूपसे हमारे साथ सहयोग करे। इसकी अपेक्षा हम तबतक नही कर सकते जबतक कि कुछ मामलोमे हम उनकी बात न माने। कौसिल-प्रवेशके बारेमे रियायत देनेमे हम देखते है कि कौसिल कार्यक्रमके कार्यकर्त्ता हमारे साथ हो जाते है और ये बुद्धिमान लोग है, ऐसे लोग है जिन्हे मै व्यावहारिक लोग कहूँगा। काग्रेस एक राष्ट्रीय सभा है। हमे काग्रेसको इस तरह विकसित करना है ताकि वह हर तरहकी रायका प्रतिनिधित्व कर सके। हमारे लिए यह सम्भव नही है कि काग्रेसको हम हमेशा एक ही तरहकी रायका प्रतिनिधित्व करनेवाली सस्था बनाये रखे। ऐसा करना अबुद्धिमत्तापूर्ण होगा। हमे सहिष्णुता बरतनी होगी, अगर और किसी चीजकी खातिर नही तो कमसे-कम इसलिए कि काग्रेसमे सभी दलोका प्रतिनिधित्व हो, सभी दल जनतामे राजनीतिक चेतना जगानेका काम करे। अगर हमे काग्रेसमे सभी दलोका प्रतिनिधित्व प्राप्त हो जाये, अगर हम काग्रेसको विभाजित करना नही चाहते, अगर हम यह मानते हैं कि काग्रेस शिविरमे स्वराज्यवादियोकी सख्या काफी बड़ी है तो यह स्पष्ट है कि जब हमने समझौता किया है तब हम यह भी माने कि काग्रेसमे जो दर्जा हमारा है, वही उनका भी है। काग्रेसके नामका इस्तेमाल करनेका उन्हे भी वैसा ही अधिकार है, जैसा हमे है। किसी भी अर्थ और किसी भी रूपमे भारतके सभी लोगोकी राजनीतिक समानतापर कोई आँच नही आनी चाहिए — मेरी रायमे काग्रेस, जैसी कि आज वह है, और जैसी कि कल वह होनी चाहिए, का यही अर्थ है।

अगला मुद्दा यह है। जैसा कि मेरा विश्वास है, स्वराज्य दलसे हमे जो मिला है, उससे ज्यादा हम नही पा सकते थे। जहाँतक सदस्यताकी शर्तका प्रश्न है, मेरा खयाल फिर भी यही है कि बहुत-से स्वराज्यवादियोकी आम शिकायत या आपत्ति खद्दरके खिलाफ है। अपरिवर्तनवादी खद्दरकी सम्भावनाओमे, उसकी क्षमता और सामर्थ्यमे विश्वास करते हैं। मुझे खद्दरकी सामर्थ्यमे पूरा विश्वास है। मै इस विश्वासको चाहूँ भी तो मनसे निकाल नही सकता। सोते हुए, सपनेमें, खाना खाते समय हर वक्त मै चरखेकी ही बात सोचता हूँ। चरखा मेरी तलवार है। मेरे लिए यह भारतकी स्वाधीनताका प्रतीक है। मै ऐसा सोचे बगैर रह नही सकता। लेकिन स्वराज्यवादियोका ऐसा खयाल नही है। उनमे से बहुतोको भावनात्मक आपत्ति है। चूँकि ऐसा है, इसलिए

मुझे एक रियायत देनी पड़ी। मेरा विश्वास है कि स्वराज्यवादियोंका जिस प्रकार कौंसिल-प्रवेश एक कार्यक्रम है, उसी प्रकार कताई भी उनके कार्यक्रमका अंग होना चाहिए, और हमें मताधिकारमें "खद्दर" और चरखेकी शर्त शामिल करनी चाहिए। यह एक सर्वथा नया विचार है। मैं ऐसा नहीं मानता कि चरखेसे भारतको कोई बहुत ठोस चीज मिल जायेगी। लेकिन क्या चरखा चलाना कोई पाप है? तथापि मैं ऐसा मानता हूँ कि सिर्फ इसी मुद्देपर संगठनको विभाजित कर देना हमारे लिए गलत होगा। मुझे चरखेसे प्रेम है, लेकिन हमारे ऐसे देश भाई भी हैं जिन्हें सूत कातना सचमुच पसन्द नहीं है। उन्हींके लिए मैं कताई-सदस्यताके मामलेमें झुका हूँ। इसीलिए कुछ अनिच्छुक स्वराज्यवादियोंकी बात रखनेके लिए मुझे कताई-सदस्यताके प्रश्नपर वैसी रियायत करनेमें कोई हिचक नहीं हुई। मैं सदस्यताके लिए कताईकी इस शर्तको कांग्रेसमें एक जीवन्त चीज बना देना चाहता हूँ। मैं उसे स्वराज्यवादियोंकी सहायतासे सफल बनाना चाहता हूँ। ऐसा कहनेमें मुझे कोई हिचक नहीं है। इसके लिए उत्साहकी जरूरत है, इसके लिए लगनकी जरूरत है। मेरा ऐसा ही खयाल है। जहाँतक अपरिवर्तनवादियोंका सम्बन्ध है, मैं सोचता हूँ कि वे मेरे कियेपर व्यर्थ ही आपत्ति नहीं करेंगे — जो-कुछ मैंने किया है उसका समर्थन करनेको वे अनिच्छुक नहीं होंगे। वे ऐसा नहीं मानेंगे कि इस समझौतेसे किसी अनिष्टकी सम्भावना है। अपरिवर्तनवादी और स्वराज्यवादी, आप सभीको मैं समझौतेमें उल्लिखित कताई-सदस्यताको स्वीकार करनेकी दावत देता हूँ। मेरी अपील अपरिवर्तनवादियोंसे है और उतनी ही स्वराज्यवादियोंसे भी। मैं आपसे कहूँगा कि कताई-सदस्यता सम्बन्धी प्रस्तावको आप अस्वीकृत न करें। और कुछ नहीं तो अनुशासनकी खातिर ही तथा एक सिद्धान्तके रूपमें इसे स्वीकार कर लीजिए।

मैंने इस भावनाके साथ यह समझौता किया है, कि हम इस समझौतेकी हर धाराको पूरी तरह सफल बनाना चाहते हैं। हम चाहते हैं कि अपने इस रथको आगे बढ़ानेमें हम अपना पूरा-पूरा जोर लगा दें और देखें कि अगले १२ महीनोंमें हम स्वराज्यको अपनी पकड़में न भी ला सकें तो भी कुछ और करीब ला सकते हैं या नहीं। अगर कांग्रेसके सभी दल कन्धेसे-कन्धा मिलाकर काम करें तो मुझे यह सोचनेमें कोई हिचक नहीं है कि स्वराज्य दूर नहीं है। अगर हम अनुशासनकी खातिर हृदयसे इस समझौतेपर अमल करें तो स्वराज्य बहुत निकट होगा। यदि आप अनुशासनकी खातिर भी इस समझौतेपर अमल नहीं कर सकते, यदि आप इस समझौतेकी प्रत्येक पंक्तिको स्वीकार और उसपर अमल नहीं कर सकते तो विश्वास कीजिए कि देशके लिए ज्यादा अच्छा यही होगा कि इसके पहले कि देशके विश्वस्त नेता लोग उस समझौतेको तैयार करें, आप उसे अस्वीकृत कर दें। अगर आप सोचते हैं कि आप स्वराज्यके योग्य हैं तो समझौतेको स्वीकार कर लीजिए, अन्यथा अस्वीकृत कर दीजिए। यदि वह आपकी बुद्धिको नहीं जँचता हो तो उसे अस्वीकृत कर दीजिए। मैं आपकी भावनाको छूकर अपनी बात नहीं मनवाना चाहता। मैं आपकी बुद्धिपर ही निर्णय छोड़ना चाहता हूँ।

स्वराज्यवादी मूर्ख नही है, वे देशप्रेमी है। उनके अपने कर्त्तव्य है जिनको अपनी योग्यता-भर उन्हे निभाना है। अगर वे समझते है कि कौसिलोमे जाकर सरकारसे लड़ना जरूरी है तो उन्हे कौसिलोमे जाने दीजिए और कौसिलोसे काम लेने दीजिए। वे अपरिवर्तनवादियोके प्रति द्वेष-भावना होनेके कारण कौसिलोमे नही जा रहे है। वे वहाँ महज तकरीरे करनेके लिए भी नही जा रहे है। उनके सामने एक उद्देश्य है। मान लीजिए कि आप उन्हे कौसिलोमे नही जाने देते तो फिर वे क्या करेगे ? क्या वे बेकार पडे रहेगे ? अपरिवर्तनवादियोको विश्वास होना चाहिए कि स्वराज्यवादियोकी उपयुक्त जगह कौसिलोके अन्दर है, उसके बाहर नही।

चरखेको कौशलपूर्वक चलानेकी जरूरत है। भाइयो और बहनो, आपको उसी धीरजके साथ चरखा चलाना चाहिए जो जॉबमे[1] था। जो तरीके हम अपनाते है, उनसे हमे स्वराज्य मिले या न मिले, लेकिन हमे प्रयोग तो करना चाहिए। हम सब ईमानदार लोग है। हमारे कुछ दोस्त कौसिलोमें जाना चाहते है तो जाये, किसी तरह हो, हम कुछ आगे तो बढे। अपरिवर्तनवादियोका कर्त्तव्य है कि वे स्वराज्य-वादियोको चरखेका महत्त्व सिद्ध करके बताये। अपरिवर्तनवादियोके प्रचारका यही तरीका होना चाहिए। मैने स्वराज्यवादियोसे समझौता किया है ताकि वे चरखेको एक जीवन्त चीज बना सके। मै अपरिवर्तनवादियो और स्वराज्यवादियोसे अपील करता हूँ कि वे चरखेके इस प्रचारको सफल बनाये। समझौता करते समय मै होशमे था। मैने अपना विवेक खो नही दिया था। मै पागल नही हूँ। मै एक समझदार और व्यावहारिक आदमी हूँ। अगर जरूरत हो तो देशके सामने, स्वराज्यवादियोके सामने, लिबरलोके सामने और अग्रेजोके सामने भी घुटने टेक सकता हूँ, क्योकि यह मेरा सिद्धान्त है। अगर मै सफल नही होता तो फिर कब्र ही मेरे लिए उपयुक्त जगह होगी।

एक चीज आपके सामने बिलकुल साफ होनी चाहिए। वह यह कि आपको यह समझौता या तो ज्योका-त्यो स्वीकार करना होगा या फिर उसे अस्वीकृत कर देना होगा। वह जैसा है, वैसा ही उसे स्वीकार कर लीजिए या नामजूर कर दीजिए। किसी समझौतेमे सशोधनकी गुजाइश नही होती। मेरे जो मित्र सशोधनका सुझाव देते है वे भूल जाते है कि मेरे रास्तेमे अनेक कठिनाइयाँ है। वे उन कठिनाइयोको पूरी तरह समझते नही। अगर समझौतेको अस्वीकृत करना है तो अस्वीकृतिके कारण ज्यादा जोरदार होने चाहिए — ऐसे कारण होने चाहिए जो स्पष्ट, निर्भ्रान्त हो अर्थात् यदि यह समझौता आपकी अन्तरात्माके विपरीत हो तो आप उसे अस्वीकृत कर दीजिए। मेरी विनम्र रायमे अनिच्छुक लोगो द्वारा किसी चीजकी पुष्टिका कोई मतलब नही होता। अगर आप अविश्वासके साथ शुरूआत करनेवाले हो तो सम-झौतेको अस्वीकृत कर दीजिए। हमे सन्देह और अविश्वासको अपने मनसे निकाल देना चाहिए।

एक शब्द और। मै स्वराज्यवादियोको अपना एजेट नही समझता। मै उन्हे अपना सहयोगी मानता हूँ। मैने इस समझौतेकी कानूनी व्याख्या समझनेके लिए

१. धीरजके लिए प्रसिद्ध बाइबलका एक पात्र।

कुछ स्वराज्यवादियोंकी सलाह ली। मैंने अनुभव किया कि मैं अपरिवर्तनवादियोंकी शक्तिको नुकसान पहुँचाये बिना इस समझौतेपर हस्ताक्षर कर सकता हूँ। हम सभी-के रास्तेमें कठिनाइयाँ हैं, उनको ठीक-ठीक आँका नहीं जाता। अगर सन्देह हो, तनाव हो तो मैं आपको सलाह दूँगा कि आप सर्वसम्मतिसे इस समझौतेको अस्वीकृत कर दीजिए, अन्यथा सर्वसम्मतिसे इसे पास कर दीजिए। मैं समझता हूँ कि यदि आप इसे स्वीकार कर लें तो यह देशके हितमें होगा। किसीको समझौता स्वीकार करनेके लिए बाध्य नहीं किया जाना चाहिए। अगर आप समझते हैं कि इसे अस्वीकृत कर देना चाहिए तो आप इसपर ज्यादा सोच-विचार मत कीजिए, उसे तत्काल अस्वीकार कर दीजिए। इसके गुण-दोषोंपर विचार करके इसे स्वीकार कीजिए। यदि आप इस समझौतेके गुणोंसे सन्तुष्ट हों तो इसे स्वीकार करनेमें हिचकिए मत। लेकिन इसपर विचार करना स्थगित करके समय नष्ट मत कीजिए। यह बुरा होगा। अगर आप सोचते हों कि काम करनेके लिए कोई तन्त्र होना चाहिए तो इसे स्वीकार कर लीजिए। विलम्ब मत कीजिए। हर क्षणका यथासम्भव उपयोग कीजिए।

आप देशके ईमानपर भरोसा कीजिए, आप सभी दलोंके ईमानपर भरोसा कीजिए। आप दूसरोंका भरोसा कीजिए और उन्हें अपनेपर भरोसा करने दीजिए। जो लोग अनिच्छुक हैं उन्हें समझा-बुझाकर अपनी बात मनवाइए। समझौतेपर हस्ताक्षर करनेका मुझे कोई खेद नहीं है। मैं समझता हूँ कि मैंने ऐसा करके बिलकुल उचित किया है। इस समझौतेमें जो भी चीज शामिल करना उचित और सम्भव था, उसे मैंने छोड़ा नहीं है। मैंने समझौतेमें जो-कुछ शामिल किया है उससे मैं किसी दलको या देशको बाँधना नहीं चाहता। अगर आप समझते हों कि समझौतेको सर्वसम्मतिसे स्वीकार करना देशके हितमें है तो आप वैसा करें। खिलाड़ियोंकी भावनासे समझौतेको स्वीकार कीजिए। मैं फिर कहता हूँ कि समझौतेको ज्योंका-त्यों स्वीकार किया जाना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

द स्टोरी ऑफ माई लाइफ, खण्ड २

३०४. भाषण: शोक सभामें[1]

बम्बई
२३ नवम्बर, १९२४

महात्मा गांधीने तब गुजरातीमें भाषण दिया। आरम्भमें ही उन्होंने खड़े होकर न बोलनेके लिए श्रोताओंसे क्षमा माँगी। उन्होंने कहा कि कमजोरीके कारण खड़े होकर बोलना मेरे लिए सम्भव नहीं है। इसके सिवा मेरी आवाज भी अब वैसी नहीं है जैसी कि तीन साल पहले थी और यदि आपको मेरी बात सुननेमें कोई कठिनाई हो तो आप मुझे माफ करें।

बी-अम्माँका जिक्र करते हुए उन्होंने कहा कि दुनियामें जब कोई बड़ा व्यक्ति मरता है तो हम आम तौरपर ऐसी ही सभाएँ करते हैं जैसी कि आज शाम कर रहे हैं और अपना दुख प्रकट करते हैं। मैं नहीं समझता कि बी-अम्माँकी मृत्युपर इस प्रकार दुख व्यक्त करनेकी जरूरत है या अली भाइयोंको किसीकी सहानुभूतिकी जरूरत है। बी-अम्माँकी मृत्यु तो ऐसी पवित्र थी कि मेरी समझमें हम सबको ऐसी ही मृत्युकी कामना करनी चाहिए। उनके कर्म अच्छे थे और मनुष्य तथा ईश्वर दोनोंको स्वीकार्य थे। उन्होंने अपना जीवन ईश्वर और उसके बन्दोंके लिए अर्पित कर दिया था और आजादीकी लड़ाई लड़नेके लिए भारतको उन्होंने अपने दो बहादुर बेटे दिये। अतः बी-अम्माँ मरकर भी अपने कार्योंके रूपमें जीवित हैं। यह सौभाग्यकी बात है कि मनुष्योंके दुष्कृत्य भुला दिये जाते हैं और उनका अनुकरण नहीं किया जाता, लेकिन अच्छे कार्योंको याद रखा जाता है और उनका अनुकरण पीढ़ियोंतक होता है और वे सदैव जीवित रहते हैं। बी-अम्माँ ईश्वरको और अपने देशको प्यार करती थीं और ऐसा वे जीवनके अन्तिम क्षणतक करती रहीं। उनके अन्त समय मैं उनके पास मौजूद था। उनका ईश्वर-प्रेम देखकर मैं बहुत प्रभावित हुआ। जिस प्रकार एक धर्म-प्रेमी हिन्दू परिवारमें मृत्यु-शय्यापर पड़ा हुआ व्यक्ति रामका नाम लेता है उसी प्रकार बी-अम्माँ भी आखिरी साँसतक अल्लाहका नाम जपती रहीं। जीवन-भर उनका यह पक्का विश्वास रहा कि जबतक हिन्दू और मुसलमानोंमें एकता नहीं होगी तबतक भारत स्वतन्त्रता नहीं पायेगा। उस दिन तीसरे पहर मेरी पण्डित मोतीलाल नेहरूसे बात हुई थी। उन्होंने मुझे अमरीकासे मिला एक पत्र दिखलाया

१. यह सभा बी-अम्माँ और पारसी रुस्तमजीकी मृत्युपर शोक प्रकट करनेके लिए बम्बई प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी, बम्बई स्वराज्य दल, केन्द्रीय खिलाफत समिति, राष्ट्रीय स्त्री सभा, पारसी राजकीय सभा और नेशनल होमरूल लीगके संयुक्त तत्त्वावधानमें हुई थी, सभाकी अध्यक्षता श्रीमती सरोजिनी नायडूने की थी।

जिसमें वम्बईके एक भूतपूर्व गवर्नर लॉर्ड सिडेनहम द्वारा एक स्थानपर यह कहा बताया गया था कि भारत ससार-भरकी कुजी है अर्थात् आर्थिक प्रभुत्व और शोषणके लिए भारत मुख्य देश है। इस्लाम दुनियाके कई देशो, जैसे मोरक्को, चीन आदि में है, लेकिन भारतमें मामला दूसरा है। जबतक हिन्दू और मुसलमान एक नहीं होते तबतक उनको स्वतन्त्रता नहीं मिल सकती। बी-अम्माँ बड़ी दूरदर्शी थीं और जब भी मै दिल्लीमें उनसे मिलने जाता था, वे हमेशा यही प्रार्थना करती थीं कि ईश्वर हिन्दुओ और मुसलमानोको एक होनेकी सद्बुद्धि दे और वे हमेशा भारतके लिए स्वराज्यकी कामना करती थीं। उनके भाग्यमें भारतमें स्वराज्य देखना नहीं था, लेकिन उन्होंने भारतको दो जवाँमर्द बेटे दिये थे कि वे हिन्दू और मुसलमानोको एक करें और इस प्रकार स्वराज्य हासिल करे। उनकी स्मृतिको स्थायी बनानेका सबसे अच्छा तरीका यह नहीं है कि हम उनके नामपर हाल, मूर्तियाँ या भवन खड़े करे बल्कि यह है कि हममें से हर स्त्री और पुरुष हिन्दू-मुस्लिम एकता स्थापित करने और स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए अपनी शक्ति-भर प्रयत्न करनेकी प्रतिज्ञा करे और इस प्रकार बी-अम्माँके चरण-चिह्नोका अनुसरण करे।

इसके बाद महात्माजीने दक्षिण आफ्रिकामें पारसी रुस्तमजीकी मृत्युके रूपमें भारतको होनेवाली महान् क्षतिका जिक्र किया। उन्होंने कहा, वे एक उदात्त व्यक्ति थे और वम्बईके नागरिकोको उनकी भारत-सेवा कभी नहीं भूलनी चाहिए, क्योंकि वे मूलतः वम्बईमें खेतवाडीके ही रहनेवाले थे। अन्तमें महात्माजीने श्रोताओसे कहा कि वे एक औपचारिक प्रस्ताव पास करके ही न चल दें बल्कि भारतकी इन दो महान् विभूतियो, बी-अम्माँ और पारसी रुस्तमजीके जीवनका अनुकरण करें।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २४-११-१९२४

३०५. तार: ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको[1]

बम्बई
२४ नवम्बर, १९२४

आपकी क्षतिसे गहरा शोक हुआ। साहस और विश्वास रखें।

बापू

अंग्रेजी प्रति (जी० एन० २३४७) की फोटो-नकलसे।

१ यह तार श्री चाँदीवालाकी पत्नीकी मृत्युका समाचार पानेपर भेजा गया था।

३०६. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

कार्तिक कृष्ण १३ [२४ नवम्बर, १९२४][१]

भाई ब्रिजकिसन,

तुमारे दु:खकी खबर मुझको कल रात्रीको मीली। आज तार[२] दिया है। ईश्वर तुमको धीरज दे। जन्म मृत्यु एक ही वस्तु है यह बात यदि हम समज ले तो मृत्युका खेद क्यो करे? सच्चा मित्र कभी मरता नहि है। अपनी धर्मपत्नि एक मित्र हि है। उसके गुणका हम अहोनिश स्मरण करते रहे तो मृत्युको अवकाश हि नहि है। एक पत्नि-व्रतका पालन करनेकी दृढता ईश्वर तुमको देवे।

बापूके आशीर्वाद

मूल पत्र (जी० एन० २३४८) की फोटो-नकलसे।

३०७. ईश्वर हम सबकी सहायता करे!

साबरमती
२६ नवम्बर, १९२४

बहुत प्रार्थना, बहुत हृदय-मन्थनके बाद और सो भी डरते और काँपते हुए, मैंने अगली कांग्रेसकी अध्यक्षता करना स्वीकार किया है। मैं ऐसे समय अध्यक्षता करने जा रहा हूँ जब मेरे, और कुछ उल्लेखनीय अपवादोको छोड़कर, भारतके समस्त शिक्षित समुदायके बीच भेदकी जबरदस्त खाई दिखाई दे रही है और कुछ-एक ऐसे शिक्षित भारतीय नौजवानोके अलावा, जिनकी कोई प्रसिद्धि नही है, देशका पूरा बौद्धिक वर्ग मेरी विचार-पद्धति और कार्य-विधिके विरुद्ध खड़ा जान पड़ता है। फिर भी चूँकि मैं जनसाधारणके बीच लोकप्रिय जान पड़ता हूँ और बहुत-से शिक्षित देशभाइयोके विचारसे मैं भी देशको उतना ही प्यार करता हूँ जितना कि वे स्वय करते है, इसलिए उनकी इच्छा है कि हमारे देशके इतिहासकी इस विकट घड़ीमे मैं कांग्रेसका दिशा-दर्शन करूँ।

मुझे लगता है कि मै उनकी इच्छाका विरोध न करूँ, बल्कि इसके विपरीत देशके हितके लिए — मैं आशा करता हूँ कि ऐसा ही होगा — मैं उन्हे अपना उपयोग करने दूँ। अन्तिम निष्कर्षपर पहुँचनेके लिए मैं अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके निर्णयकी प्रतीक्षा कर रहा था। उसकी बैठकमे स्वराज्यवादी मौन रहे और वाणीके द्वारा जो कहा जा सकता था वह सब बड़े प्रभावपूर्ण ढगसे उन्होने अपने मौनके द्वारा ही

१ और २ देखिए पिछला शीर्षक।

कह दिया। मैं जानता हूँ कि उनमें से बहुत-से लोगोंके मनमें सदस्यता सम्बन्धी शर्तोंमें प्रस्तावित परिवर्तनके प्रति कोई उत्साह नहीं है। लेकिन शान्ति और एकताकी खातिर उन्होंने मौन रहकर ही इस परिवर्तनके पक्षमें अपना मत दे दिया। अपरिवर्तनवादी लोग बड़े दुःखी और निराश थे, इस समझौतेपर वे दाँत पीस रहे थे, क्योंकि उन्हें लगा कि इस तरह तो जिन आदर्शोंको उन्होंने अपने मनमें बड़े प्यारसे सँजो रखा था, उनको ताकपर रखा जा रहा है। उन्होंने विरोध किया, किन्तु समझौतेके खिलाफ मत नहीं दिया।

यह स्वराज्यवादियों और अपरिवर्तनवादियों, दोनोंके लिए श्रेयकी बात है, लेकिन काम करनेकी दृष्टिसे यह कोई बहुत उपयुक्त वातावरण नहीं है, विशेषकर ऐसी हालतमें जब किसीसे बहुत अपेक्षा की जा रही हो। लेकिन, यही वह उपयुक्त प्रसंग है, जबकि [मैं अहिंसामें अपने विश्वासकी सच्ची कसौटी कर सकता हूँ] यदि मेरे मनमें अपरिवर्तनवादियों, स्वराज्यवादियों, लिबरलों, राष्ट्रीय स्वशासनवादियों, इंडिपेंडेन्टों, — इन सबके प्रति और इन्हींके प्रति क्यों, अंग्रेजोंके प्रति भी — समान प्रेमभाव है तो मेरे लिए भी और इस उद्देश्यके लिए भी सब-कुछ शुभ ही होगा।

मैं देशकी आँखोंमें धूल नहीं झोंकूँगा। मेरे लिए तो धर्म-विहीन राजनीति कोई चीज ही नहीं है। लेकिन जब मैं धर्मकी बात कहता हूँ तो मेरा मतलब रूढ़ियों और अन्धविश्वासोंसे नहीं है, उस धर्मसे नहीं है जो हमें घृणा करना और एक-दूसरेसे झगड़ना सिखाता है, मेरा मतलब तो सहिष्णुताके सार्वजनीन धर्मसे है। नैतिकताविहीन राजनीति ऐसी चीज है जिससे बचना चाहिए। इसपर आलोचक कहता है, "तब तो मुझे सार्वजनिक जीवनसे अलग ही हो जाना चाहिए।" लेकिन मेरा अनुभव ऐसा नहीं रहा है। मेरी कोशिश तो यह है कि मैं समाजमें ही रहूँ और फिर भी उसकी बुराइयोंसे अछूता रहूँ। जो भी हो, अभी तो कांग्रेससे भाग खड़ा होना मेरे लिए कायरता होगी — और अध्यक्ष-पद न स्वीकार करना मेरे लिए भाग खड़ा होना ही होगा, विशेषकर ऐसी हालतमें जब हर कोई मेरा मार्ग सुगम बनानेकी कोशिश कर रहा है।

अपने उद्देश्य और मानव-समाजमें मुझे पूरा विश्वास है। और भारतका मानव-समाज किसीसे भी घटकर नहीं है, शायद बढ़कर ही है। सच तो यह है कि यह उद्देश्य ही मानव-स्वभावमें विश्वासकी पूर्व-अपेक्षा रखकर चलता है। मार्ग यद्यपि अन्धकारपूर्ण प्रतीत होता है, लेकिन अगर ईश्वरके मार्ग-दर्शनमें मेरा विश्वास है और यह स्वीकार करनेके लिए मुझमें पर्याप्त विनय है कि उसके अचूक मार्ग-दर्शनके बिना मैं कुछ नहीं कर सकता तो निश्चय ही वह मेरे पथपर प्रकाश करेगा, मेरा मार्ग-दर्शन करेगा।

यद्यपि असहयोग और सविनय अवज्ञामें मेरी निष्ठा आज भी अटल है किन्तु मैं मानता हूँ कि इस समय राष्ट्रीय स्तरपर असहयोग या सविनय अवज्ञा करनेके लिए उपयुक्त वातावरण नहीं है। इसलिए मेरा प्रयत्न यही होगा कि जाति रंग अथवा धर्मका कोई भेदभाव रखे बिना पारस्परिक सहिष्णुताके आधारपर सभी

दलोको एक साथ ला खडा करूँ और इस प्रकार, सम्भव हो तो, दिखा दूँ कि मेरी असहयोगकी कल्पना घृणा या विद्वेषसे प्रेरित या इनपर आधारित नही थी। मै सभी दलोके सिर यह भार लाद दूँगा कि वे असहयोग और सविनय अवज्ञाको असम्भव कर दिखाये — लेकिन आलोचना और दमनके जरिये नही, बल्कि स्वराज्य प्राप्त करके। इसलिए समस्त दलोके प्रतिनिधियोसे मैं निवेदन करना चाहूँगा कि वे मौलाना मुहम्मद अलीके निमन्त्रणको स्वीकार करे और यदि काग्रेस अधिवेशनमे प्रतिनिधियोकी हैसियतसे शामिल न हो सकते हो तो दर्शकोके रूपमे उपस्थित होकर काग्रेसको अपने सलाह-मशविरेका लाभ दे।

काग्रेस-जनोके सिरपर एक भारी कर्त्तव्य निभानेकी जिम्मेवारी है — चाहे वे काग्रेस-जन स्वराज्यवादी हो या अपरिवर्तनवादी, हिन्दू हो या मुसलमान, ब्राह्मण हो या अब्राह्मण। उन्हे अपनी वेश-भूषामे ही इस बातका प्रमाण देना है कि वे काग्रेसके कार्यक्रमपर अमल कर रहे है, उन्हे अपने दैनिक व्यवहारमे उसका पालन करना है। उन्हे सेवकोकी हैसियतसे, दूसरोसे सेवा माँगनेवाले स्वामियोकी हैसियतसे नही, काग्रेस-अधिवेशनमे शामिल होना है। उन्हे सभी वस्त्रोका त्यागकर सिर्फ खादी पहननी पडेगी और इस प्रकार गत चार वर्षोसे वे जिस खादीकी सीख दूसरोको देते रहे है, उसमे अपने विश्वासका परिचय देना होगा। एक-दूसरेके प्रति अधिकसे-अधिक सहिष्णुता बरतकर और एक-दूसरेकी धार्मिक क्रियाओका आदर करके उन्हे विभिन्न धर्मो और सम्प्रदायोकी एकतामे अपने विश्वासका प्रमाण देना पडेगा। हिन्दुओको काग्रेसमे शामिल होनेवाले अस्पृश्योका दूसरोकी अपेक्षा ज्यादा खयाल करके अस्पृश्यता-निवारणमे अपने विश्वासका परिचय देना होगा।

हमारी बहुत-सी समस्याएँ है — हिन्दू-मुस्लिम-वैमनस्य, बगालका दमन, अकालियोपर किये जा रहे क्रूरतापूर्ण अत्याचार, जिनकी छायासे भी छूत मानी जाती है, ऐसी जातियोकी ओरसे चलाया जा रहा वाइकोम आन्दोलन, और सबसे बढकर स्वराज्यकी प्राप्ति। प्रतिनिधिगण तथा दर्शक लोग, बेशक, मुझसे इन तमाम समस्याओका समाधान प्रस्तुत करनेकी अपेक्षा करे। मेरे पास कोई बना-बनाया समाधान नही है। समाधान तो प्रतिनिधियो और दर्शकोके ही पास है। मै तो दिशा-दर्शक स्तम्भकी तरह सिर्फ रास्ता ही दिखा सकता हूँ। उस दिशा-दर्शनको स्वीकार अथवा अस्वीकार करना तो काग्रेसवालोका काम होगा। ईश्वर हम सबकी सहायता करे!

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २७-११-१९२४

३०८. पत्र: सतीशचन्द्र मुखर्जीको

[२६ नवम्बर, १९२४][1]

प्रिय सतीश बाबू,

कृष्टोदासको भेजे गये आपके लम्बे तारके लिए धन्यवाद। उसके प्रत्येक शब्दसे मेरे प्रति आपका प्रेम झलकता है। उसमें जो-कुछ कहा गया है उसके बारेमें बहस नहीं करूँगा। लेकिन मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि मैंने जान-बूझकर गलती नहीं की है। दुर्योधन जानता था कि वह गलती कर रहा है। मैं बुराईके साथ समझौता नहीं कर रहा हूँ। लेकिन मैं वही कर रहा हूँ जो पाण्डवोंने किया था। उन्होंने जिस हदतक सम्भव था उस हदतक दुर्योधनके साथ समझौतेकी बात की। "तुम सब कुछ रखो। हमें केवल पाँच छोटे-छोटे गाँव दे दो, फिर तुम स्वतंत्र हो।" लगभग ऐसी ही घटना 'बाइबिल' में भी मिलती है। यदि एक भी भला व्यक्ति सोडममें होता तो नगरकी रक्षा हो जाती। लेकिन मेरे दिमागमें क्या चल रहा है इसका काफी संकेत मैंने आपको दे दिया है।

कृपया इसी प्रकार आगे भी सावधान करते रहें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी पत्र (जी० एन० ५६०७) की फोटो-नकलसे।

३०९. पत्र: सी० एफ० एन्ड्रयूजको

२६ नवम्बर, १९२४

मेरे सबसे प्यारे चार्ली,

महादेवको लिखा तुम्हारा पत्र मैंने आज ही पढ़ा है। रोलाँकी बात ध्यानसे पढ़ ली। उन्होंने जो चेतावनी दी है, उसके लिए क्या तुम कृपया उन्हें धन्यवाद दे दोगे? तुम बम्बई नहीं आये, यह बहुत अच्छा किया। तुम्हें सबसे पहले शान्तिनिकेतनकी ही चिन्ता करनी चाहिए। तुमने रुस्तमजीके बारेमें टिप्पणी देखी[2] क्या तुम उनके बारेमें कुछ लिखोगे नहीं? उनकी बहुत-सी सीमाओंके बावजूद वे मेरे

१. डाककी मुहरसे।

२. देखिए "टिप्पणियाँ", २०-११-१९२४ का उप-शीर्षक "स्वर्गीय पारसी रुस्तमजी"।

लिए एक बहुत बढिया व्यक्ति थे। बर्मा और मिस्रके बारेमे मैंने आज तुम्हे तार दिया है। दोनोकी हालत, लगता है, ठीक नही है। लेकिन मुझे पर्याप्त जानकारी नही है।

सप्रेम,

मोहन

अंग्रेजी पत्र (जी० एन० २६१७) की फोटो-नकलसे।

३१०. पत्र: बाबू भगवानदासको

[२६ नवम्बर, १९२४ या उसके पश्चात्][1]

प्रिय बाबू भगवानदास,

मैं बनारसमे किसी ऐसे व्यक्तिको नही जानता जिसे यह निम्नलिखित नाजुक काम सौंप सकूँ। सुलतानपुर निवासी मंगलदत्तने कुछ महीने पहले इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया था। उसने अपना हिन्दू नाम राम नारायण बताया था ताकि उसकी पहचान न हो सके। कहा जाता है कि वह दिल्लीके एक अनाथालयसे १० मुसलमान अनाथ बच्चोको उडा ले गया है। उसे लगा कि धर्मान्तर स्वीकार करके उसने भूल की है और वह अपने असली नामसे डा० सुखदेवके जरिये आर्यसमाजी बन गया। वह डा० सुखदेवके साथ कुछ समयतक ठहरा था। कहा जाता है कि अब वह सुलतानपुर (जिले)मे है। साथ ही मैं, उसके नाम डा० सुखदेवका एक पत्र रख रहा हूँ। क्या आप कृपया इस बातका पता लगा सकते है कि यह व्यक्ति मिल सकता है या नही? क्या वह दिल्ली आकर मुझसे मिलेगा? अगर आप उससे मिले तो उसके विरुद्ध लगाये गये आरोपके बारेमे पूछ सकते है। हकीम साहबको पक्का शक है कि मुसलमान बच्चोंका अपहरण करनेके लिए ही उसने इस्लाम कबूल करनेका ढकोसला रचा था। वे इसमे आर्यसमाजियोका हाथ देखते है। मुझे लगता है कि हिन्दू होनेके नाते सचाईका पता लगाना और बच्चोका पता लगानेमे अनाथालयके अधिकारियोंकी सहायता करना हमारा कर्त्तव्य है। इस मामलेमे कोई कार्रवाई नही की जा रही है क्योंकि मैं इसमे दिलचस्पी ले रहा हूँ। मुझे बताया गया है कि सुलतानपुर बनारसके बहुत निकट है। क्या आप किसी विश्वसनीय व्यक्तिको वहाँ भेज कर मंगलदत्तके बारेमे स्थानीय लोगोसे पूछताछ करवानेकी कृपा करेंगे? वह एक शादीशुदा व्यक्ति बताया जाता है। मैं ४ दिसम्बरके लगभग पंजाब जानेवाला हूँ।

१. गांधीजी साबरमती २६ नवम्बरको पहुँचे थे। इसीसे अनुमानतः यह पत्र उन्होंने २६ नवम्बर या उसके बाद ही लिखा होगा।

आप लाला लाजपतरायकी मार्फत पत्र भेज सकते है। उसके बाद डा० अन्सारी, दिल्लीकी मार्फत। १ दिसम्बरतक मैं साबरमतीमें हूँ।

हृदयसे आपका,

[पुनश्च]

आप देखेंगे कि मैं स्वराज्य योजनाको भूला नहीं हूँ।

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १०४९५) की माइक्रोफिल्मसे।

३११. क्या हममें एकता होगी ?

पिछले हफ्ते बम्बईमें जो [सर्वदलीय] सम्मेलन हुआ, उसके परिणामस्वरूप सभी दलोंके बीच तत्काल एकता स्थापित नहीं हो पाई। इससे प्रकट होता है कि यह काम कितना कठिन है। दूसरी ओर एकता स्थापित करनेके उपायोंपर विचार करनेके लिए एक समिति भी नियुक्त कर दी गई, जिससे प्रकट होता है कि सम्मेलन इस विषयमें सर्वथा निराश हो अथवा इसे असम्भव मानता हो, ऐसा भी नहीं है। सच तो यह है कि जब श्री जयसुखलाल मेहताने यह प्रस्ताव पेश किया कि समिति १५ दिसम्बरतक अपनी रिपोर्ट दे दे तो काफी लोगोंने इसका समर्थन किया। उन सबको तत्काल सफलता पानेकी पूरी आशा थी। किन्तु, जो बहुत-से लोग टटोल-टटोलकर कदम रखनेवाले थे, उन्होंने रिपोर्ट पेश करनेके लिए ३१ मार्चका दिन निर्धारित किया। यदि उन्होंने इस काममें जो कठिनाई है, उसे महसूस करते हुए ऐसा किया हो तो प्रकारान्तरसे उन्होंने कोई स्वीकार्य समाधान ढूंढनेका भार भी समितिके सिर डाल दिया है। अखबारोंमें लिखनेवाले लोग जनमतका सही दिशा-दर्शन करके समितिको काफी सहायता पहुँचा सकते हैं। जिन सस्थाओंका समितिपर प्रभाव पड सकता है, उनमें लिबरल दल, इंडिपेंडेंट दल और नेशनल होमरूलवालोंका दल मुख्य हैं। डा० बेसेंटके नेतृत्वमें नेशनल होमरूलवालोंने तो उन बातोंको लगभग स्वीकार ही कर लिया है जो मेरे और स्वराज्यवादी दलके बीच हुए समझौतेमें तय हुई थी और जिनकी पुष्टि अब अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीने भी कर दी है। लिबरलों और इंडिपेंडेंटोंके मार्गकी कठिनाइयाँ प्राय एक-सी हैं। इन कठिनाइयोंका सम्बन्ध कांग्रेसके ध्येय और निष्ठा-विषयक बुनियादी सिद्धान्त (क्रीड)से, कौंसिल-विषयक सारा कार्य स्वराज्यवादी दलको सौंप देनेसे और कताई-सदस्यताकी शर्तोंसे है। कहते हैं, कांग्रेसका सिद्धान्त गोलमोल-सा है। मैं इस आरोपको साहसपूर्वक अस्वीकार करता हूँ। तथ्य है कि इसमें वर्तमान परिस्थितियोंको स्वीकार किया गया है। इसका मतलब यह है कि सम्भव हो तो साम्राज्यमें रहकर और आवश्यक हो तो उससे सारा सम्बन्ध तोडकर भी स्वराज्य प्राप्त किया जाये। इसका उद्देश्य अंग्रेजोंके सिरपर इस बातकी जिम्मेदारी लादना है कि वे हमारे लिए साम्राज्यमें बराबरीके साझेदार बनने और बने रहनेकी स्थिति उत्पन्न कर दिखायें। इसमें इस बातकी निर्भीक घोषणा की गई है कि जरूरी

हुआ तो यह देश सर्वथा स्वतन्त्र राष्ट्रके रूपमे भी अपने पैरोपर खडा हो सकता है। साम्राज्यके अन्तर्गत स्वराज्य स्वतन्त्रताकी ही स्थिति है, क्योकि इसका अर्थ साम्राज्यमे स्वेच्छासे शामिल रहना है और यह है कि यदि भारतको वाछनीय प्रतीत हो तो वह उससे अलग भी हो सकता है। इसका स्वरूप तो स्वतन्त्र राष्ट्रोके बीच राजी-खुशीकी साझेदारीवाला ही होना चाहिए। यह बात हमारे लिए इतनी महत्त्वपूर्ण है कि इसे हम छोड ही नही सकते। जो लोग आज काग्रेसका नेतृत्व कर रहे है, वे यदि काग्रेसके मूल सिद्धान्तमे ऐसा कोई परिवर्तन करना भी चाहे जिससे उसका मतलब सिर्फ साम्राज्यके अन्तर्गत स्वराज्य और इसलिए पराधीन राज्य रह जाये तो काग्रेस-जनोका बहुत भारी बहुमत इस अपमानजनक स्थितिको स्वीकार नही करेगा। इस सिद्धान्तको लिबरलो और इडिपेडेटो द्वारा अभीप्सित दिशामें बदलनेका प्रयत्न करनेका मतलब वर्तमान राष्ट्रीय भावनाके विरुद्ध चलना होगा। वे जो कर सकते है वह यही कि वे काग्रेसमे शामिल हो जाये और फिर जिस प्रकार मौलाना हसरत मोहानी काग्रेसके सिद्धान्तमे ऐसा परिवर्तन करानेका प्रयत्न कर रहे है जिससे उसका एकमात्र उद्देश्य ब्रिटेनसे सारे सम्बन्ध तोड लेना ही हो जाये, उसी प्रकार वे भी काग्रेसवालोको परिवर्तनकी उपयोगिता या आवश्यकताकी प्रतीति करानेका प्रयास करे। मेरा तो सादर निवेदन है कि वर्तमान सिद्धान्तमे कोई भी चीज अनैतिक अथवा हानिकर नही है। इसके विपरीत, ऐसा मान लेना कि कमसे-कम फिलहाल तो हम स्वतन्त्रताके लिए सक्षम नही है, नैतिक दृष्टिकोणसे बहुत ही आपत्तिजनक हो सकता है। जिस राष्ट्रमे सच्ची आकाक्षा हो, वह स्वतन्त्रताके लिए अक्षम हो ही नही सकता। जो भी हो, मुझे विश्वास है, इस बातको सभी दल स्वीकार करेगे कि काग्रेसके पीछे ऐसे सदस्य-समूहका बल है जो समय-समयपर अपनी ही करानेपर कटिबद्ध हो सकता है और यह बात बहुत अच्छी है।

कांग्रेसमे स्वराज्यवादियोका स्थान क्या हो, इसका निर्णय तो, दरअसल, उन्हीके हाथमे है। आज काग्रेसमे उनका और अपरिवर्तनवादियोका बोलबाला है। यदि काग्रेस असहयोग स्थगित कर देती है तो स्वराज्यवादी, शायद स्वत ही प्रमुखता प्राप्त कर लेगे और यदि दोनो दल राष्ट्रके हितको ध्यानमे रखकर काग्रेसको विभाजनसे बचानेका फैसला करते है तो दोनोको इस सगठनका सयुक्त और समान साझेदार मानना चाहिए। कलकत्तेके समझौतेमे मैंने इसी सीधे-सादे और स्वाभाविक तथ्यको स्वीकार किया है। यदि कोई भी दल कुछ अधिक पाना चाहता है तो इसका तरीका यही है कि वह काग्रेसमे शामिल होकर स्वराज्यवादियोको तर्क द्वारा अपना दृष्टिकोण समझाये या काग्रेसके सदस्योको अपनी बात बताये **और कांग्रेसके लिए अपने पक्षका समर्थन करनेवाले नये सदस्य भी बनाये।** काग्रेसके सदस्योकी सख्या बढानेकी गुजाइश बहुत अधिक है और यदि अपनी विचार-पद्धतिके अनुकूल पुरुष और स्त्रियाँ मिल सके तो काग्रेस मण्डलो और कमेटियोका गठन तो लगभग हर आदमी कर सकता है।

तीसरी आपत्ति सदस्यताकी शर्तपर है। अगर इसमे नवीनता नही होती तो इसपर न केवल लोगोको कोई आश्चर्य नही होता, बल्कि वे सदस्यताकी सर्वोत्तम

कसौटीके रूपमे आगे वढकर इसे स्वीकार करते। यदि पूँजीपतियो या शिक्षित लोगोके वजाय आज मजदूरोका प्रभाव ही सवसे अधिक होता और सदस्यताके लिए सम्पत्ति अथवा शिक्षा-सम्वन्धी कसौटी सुझाई जाती तो शक्तिशाली मजदूर वर्ग इस सुझावका मजाक उडाता, वल्कि उसे अनैतिक भी वताता। कारण, तव वे यह दलील पेश करते कि जहाँ पूंजी और शिक्षा कुछ ही लोगोके पास है, शारीरिक श्रमकी क्षमतासे तो सभी सम्पन्न हैं। हो सकता है यह जो मैंने श्रमके एक प्रकारको अर्थात् हाथ-कताईको कसौटी वनानेका सुझाव रखा है, वह विलकुल महत्त्वहीन हो या वहुत विचित्र हो, लेकिन यह न अनैतिक है और न राष्ट्रके लिए किसी प्रकार हानिकर ही। यदि हजारो स्त्री-पुरुष राष्ट्रके लिए श्रम करे — भले ही प्रतिदिन आधा घटा ही क्यो न करे — तो यह चीज मेरी समझमे राष्ट्रके लिए निश्चित उपलब्धि है और खादी पहननेकी शर्तके कारण भी किसी दलको काग्रेसमें प्रवेश करनेमे कोई वाधा नही होनी चाहिए। काग्रेसमे खादीको पिछले तीन सालसे वहुत ज्यादा महत्त्व दिया जाता रहा है।

नि सन्देह, खादी पहननेको सदस्यताकी कसौटी वनानेके विपयमे सिद्धान्तके आधारपर तो कोई ऐसी अकाट्य आपत्ति की ही नही जा सकती, जिसका निवारण ही न किया जा सके। यदि वस्तु-स्थितिको समझनेमे मुझसे वहुत गलती न हुई हो तो मेरा खयाल है कि अगर खादी पहनने और हाथ-कताईको सदस्यताकी शर्त नही वनाया जाता तो कुछ अच्छेसे-अच्छे कार्यकर्त्ताओको भी काग्रेसमे रहनेसे कोई मजा नही आयेगा। इस समय काग्रेसमें दो दल हैं। एकको स्वराज्य पानेके साधनके रूपमे कौसिल-कार्यक्रममे कोई विश्वास नही है और जवतक देश शान्तिपूर्ण अवज्ञा या असहयोगके लिए तैयार नही हो जाता तवतक वह खादी-सम्वन्धी प्रवृत्तियोसे ही सन्तुष्ट है। दूसरा यह तो कहता है कि खादीके आर्थिक महत्त्वमे उसका विश्वास है, किन्तु साथ ही यह भी मानता है कि कौसिल-प्रवेशसे यदि स्वराज्य न मिल सके तो इस तरह कमसे-कम उस दिशामे कुछ प्रगति तो की ही जा सकती है और नौकरशाहीकी मनमानीपर थोडा अकुश भी रखा जा सकता है। मुझे तो स्वराज्यवादियोके साथ झगडेसे वचनेका रास्ता यही दिखाई देता है कि उन्हे अपनी राह जाने दिया जाये और वे खादी कार्यक्रममे जितना सहयोग दे सकते है, उतना सहयोग उनसे प्राप्त किया जाये। मैं लिवरलो और इडिपेंडेंटोसे अनुरोध करता हूँ कि इस वस्तुस्थितिको समझे, जिसे कोई एक व्यक्ति नही वदल सकता। हाँ, एक वात हो सकती है स्वराज्यवादी, लिवरल और इडिपेडेट साथ वैठकर वातचीत करे और यदि वे इस निष्कर्पपर पहुँचे कि खादीमे अव कोई दम नही रह गया है और यह सिर्फ मेरी एक सनक-भर है और तव यदि वे मुझे अपनी गलती न भी समझा सके तो मैं खुशी-खुशी उनके रास्तेसे हट जाऊँगा। फिर वे शौकसे इस राष्ट्रीय सगठनको अपने कब्जेमे ले सकते हैं और जिस वातमे देशका सवसे वडा हित समझे उसके लिए इसका उपयोग कर सकते हैं, मैं उनके मार्गमे वाधक न वनूंगा। एक प्रमुख स्वराज्यवादीने मुझसे कहा है कि खादी-कार्यक्रमका विफल होना अवश्यभावी है और स्वराज्यवादियोका

इसमे कोई विश्वास नही है। मैंने उनसे कहा कि आपकी इस धारणासे मैं सहमत नही हूँ, स्वराज्यवादियोने इस कार्यक्रमको हृदयसे स्वीकार किया है और वे उत्साहपूर्वक इसे कार्यान्वित करेगे। लेकिन मान लीजिए इन भाईकी भविष्यवाणी अच्छे-खासे कारणोपर आधारित हो और खादीकी आराधना हमारे सार्वजनिक जीवनमें भेद पैदा करनेवाला तत्त्व हो तो उस हालतमे देशका भ्रम जितनी जल्दी दूर हो जाये उतना ही अच्छा होगा। लेकिन ऐसा हो जानेपर भी जबतक उसमे से मेरा विश्वास नही उठ जाता तबतक मुझे तो उससे लगे रहनेकी अनुमति मिलनी ही चाहिए। हाँ, मुझे राष्ट्रकी तमाम प्रवृत्तियोकी राह रोककर खडे रहनेकी छूट नही मिलनी चाहिए। इसलिए मै सच्चे हृदयसे आश्वासन देता हूँ कि यह समिति सभी दलोको एकताके सूत्रमे बाँधनेके लिए जो भी समुचित उपाय वाछनीय समझेगी, मै उसके रास्तेमे हठपूर्वक कोई बाधा नही डालूँगा। मै अपने-आपको जानबूझकर ऐसी स्थितिमे रख रहा हूँ जिससे स्वराज्यवादी, लिबरल और इडिपेडेट लोग अपनी-अपनी बातोसे मुझे प्रभावित कर सके। मै बहुत विनम्रतापूर्वक उनके दृष्टिकोणको जानने-समझनेका प्रयास कर रहा हूँ। इसमे मेरा अपना कोई निजी उद्देश्य तो है नही। देशकी स्वतन्त्रताके लिए उन्हीकी तरह मै भी उत्सुक हूँ। हाँ, वहाँतक पहुँचनेका मेरा रास्ता उनसे भिन्न है। लेकिन, अगर मुझसे बन पड़े तो मै खुशी-खुशी उनका रास्ता अपना लूंगा। तो सभी दल ऐसा रास्ता ढूंढ निकालनेके लिए ईमानदारी और लगनके साथ कोशिश करे। एक सयुक्त मच खोज निकालनेके लिए वे समितिकी कार्यवाहीके प्रति विश्वास और सकल्पका रवैया अपनाये। उसकी चर्चाओके प्रति अपना मन पूर्वग्रहोसे मुक्त रखे।

एक भाईने पूछा है कि जबतक सर्वदलीय समितिकी जाँचके परिणाम सामने नही आते, तबतक काग्रेसियोको क्या सदस्यताकी शर्तमे परिवर्तनका विचार स्थगित न रखना चाहिए। मेरा नम्र निवेदन है कि जो कार्यक्रम काफी सोच-विचारकर तय किया गया है, उसे यो ही स्थगित नही किया जा सकता। सिर्फ इस भयके कारण कि लिबरल और इडिपेडेट खादी कार्यक्रमको शायद स्वीकार न करे, तीन महीनेके ठोस कामको बरबाद नही होने दिया जा सकता। लेकिन, अगर समिति इस नतीजेपर पहुँचे कि खादी कार्यक्रम अव्यावहारिक है और उससे सचमुच एकतामें बाधा पडती है तो एक विशेष अधिवेशन बुलाकर सदस्यताकी शर्तमे आसानीसे फेर-बदल किया जा सकता है। मेरे विचारसे तो देश-हितका तकाजा यही है कि हर दल अपने-अपने विश्वास और मान्यताके अनुसार काम करता रहे, लेकिन साथ ही बराबर ऐसा मानकर चले कि उससे गलती हो सकती है और ऐसा होनेपर वह पश्चात्ताप करने और सही रास्तेपर लौट आनेको भी सदैव तैयार रहे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २७-११-१९२४

३१२. अपरिवर्तनवादियोंकी दशा

अपरिवर्तनवादियोकी हालत सचमुच दयाजनक है और यह खयाल मुझे खिन्न कर देता है कि यदि सोलह आना नही तो बहुत अशमे, मै ही इसका कारण हूँ। इस परिस्थितिमे मुझे आश्वासन मिलता है तो केवल इसी विचारसे कि मै तमाम अपरिवर्तनवादियोमे सबसे ज्यादा सुदृढ अपरिवर्तनवादी हूँ। मै समझता हूँ, इस विचार-से उन्हे भी आश्वासन मिलना चाहिए। पर अपरिवर्तनवादी किसे कहना चाहिए ? 'अपरिवर्तनवादी' कोई अच्छा शब्द नही। इसका कुछ भी मतलब नही होता। पर इसका प्रयोग उन लोगोके लिए होता आया है जो कलकत्तेमे १९२० में पास[1] हुए मूल असहयोग-प्रस्तावको मानते है। उसका कार्यकारी भाग है, अहिसा। १९२० के पहले भी हम अपने दिलोमें असहयोग कर रहे थे क्योकि हमारा दिल तो सरकारके खिलाफ ही था। हाँ, अपने ऊपरी आचरणके द्वारा हम जरूर उससे सहयोग करते हुए दिखाई देते थे। १९२० मे यह हालत बदल गई। हमने मन, वचन और कर्ममें सहयोग स्थापित करनेकी कोशिश की। हमने देखा कि यह सहयोग केवल अहिंसाके द्वारा ही हो सकता है और हमने यह भी देखा कि जितना सम्भव हो उतनी अधिक मात्रामे यदि हम सरकारसे अपना सहयोग हटा लेते है तो उसे हमारे सामने घुटने टेक देने पडेगे। इसलिए अपरिवर्तनवादी वह है जो अपने शासकोका बुरा तो नही चाहता — पर उनकी प्रणालीको नष्ट करना चाहता है और इसलिए जिसने उस शासन-प्रणालीके कहे जानेवाले लाभोका अर्थात् विधान-परिषदो, अदालतो, शिक्षालयो, उपाधियो और लुभावने विदेशी कपडोका त्याग कर दिया है। यह उसका निषेधात्मक अग था। उसका विधायक अग था स्वतन्त्र शिक्षालयो-पचायतोकी स्थापना और हाथ-कती और हाथ-बुनी खादीका उत्पादन। इस नीतिके अन्तर्गत काग्रेसने केन्द्रीय विधान सभाका स्थान ले लिया था और स्वयसेवकोका ठोस काम करना ही उनकी ऊँचीसे-ऊँची उपाधि थी। परन्तु न तो पूर्वोक्त पाँच सरकारी सस्थाओको हम नष्ट ही कर सके और न नव-स्थापित सस्थाओका परिणामकारी फल ही दिखाई दिया। इससे हमारे कुछ लोगोका दिल टूट गया और उन्होने देखा कि अब तो विधान-परिषदोका उपयोग ही राष्ट्रकी सेवा करनेका एक मार्ग रह गया है। अब अपरिवर्तनवादियोको, यदि सच-मुच उनका विश्वास अहिंसामे था तो चाहिए था कि वे अपने साथियोकी श्रद्धाहीनता पर बिगड न उठते। उन्हे चाहिए था कि उन्हे भी प्रामाणिकता और देशभक्तिका उतना ही श्रेय देते जितनेका दावा वे अपने लिए करते थे। किन्तु उन्होंने तो जोर-शोरके साथ अपने उन साथियोका जो कि अब स्वराज्यवादी कहे जाते है, विरोध किया। यदि वे सचमुच अहिसा-परायण होते तो वे सहिष्णुताका आश्रय लेकर उनके मतभेदके प्रति अपना आदर प्रकट करके उन्हे उनके रास्ते जाने देते। पर उनकी

१. देखिए खण्ड १८।

इस असहिष्णुतामें उनका दोष न था। वे तो यह जानते भी न थे कि वे असहिष्णु हो रहे है, पर बजाय इसके कि वे अपने पैरोपर खडे रहते और अपने ही कार्यक्रम-पर अटल श्रद्धा रखते, उन्होने स्वराज्यवादियोसे बल प्राप्त करना चाहा, जिस तरह कि हम सब अपनी कमजोरियोको दूर करनेकी इच्छा न रखकर या उसमे असमर्थ होकर, अपने शासकोंसे बल प्राप्त करना चाहते है। अपनी सहायता आप न कर सकनेकी यह मनोदशा अब भी कायम है और मेरे और स्वराज्यवादियोके बीच हुए उस समझौतेसे उनके असन्तोषका यही कारण है। भले ही स्वराज्यवादी वैसे न हो जैसा होनेका वे दावा करते हैं या वैसे ही हो जैसे कि हममे से कुछ लोग मानते है, किन्तु क्या अपरिवर्तनवादियोके मनमे सचमुच स्वराज्यवादियोंके प्रति प्रेम है? यदि उनके अन्दर वह प्रेमभाव है तो वे स्वराज्यवादियोंकी गतिविधिपर चिन्तित और दुखी न होगे।

फिर अधिकाश अपरिवर्तनवादियोके पास सिवा खादीके दूसरा कोई काम नही है, जिसमे उनका सारा समय लग सके। हिन्दू-मुस्लिम एकता और अस्पृश्यताके विषयमे उनका मनोभाव शुद्ध होना चाहिए। पर इन बातोके लिए सबको कोई अमली काम मिलना कठिन है। राष्ट्रीय शिक्षालयोमे भी कुछ ही लोगोके लिए काम मिल सकता है और सो भी उनमे उसके लिए विशेष प्रकारकी योग्यता होनी चाहिए। पर खादी एक ऐसी चीज है, यदि इसमे विश्वास हो तो सभी उपलब्ध स्त्री, पुरुष और युवकोका सारा समय इसमे लग सकता है। यदि वे वास्तवमे अहिसा-परायण है तो उन्होने यह भी जान लिया होगा कि जबतक आरम्भिक रचनात्मक काम न हो जायेगा तबतक सविनय अवज्ञा असम्भव है। सविनय अवज्ञाका अर्थ है असीम कष्ट-सहनकी क्षमता — सो भी प्रतिपक्षीका सहार करनेकी उत्तेजनाके नशेके बिना। यह तबतक नही हो सकता जबतक कि हमारा वायुमण्डल कुछ हदतक शान्तिपूर्ण न हो और जबतक कि हमे इस बातका खासा यकीन न हो जाये कि हिन्दू-मुसलमान, ब्राह्मण-अब्राह्मण और उच्च हिन्दू और अछूत आपसमे लड न पडेगे और जबतक हम हाथ-कताई और हाथ-बुनाईका रहस्य इस हदतक नही समझ लेते कि उसकी सहायताके बलपर हम सार्वजनिक सहायताके बिना कार्यकर्त्ताओके निर्वाहके विषयमे निश्चिन्त हो सकते हैं। ऐसे लोगोकी सख्या चाहे अँगुलियोपर गिननेलायक हो, चाहे बहुत। यदि हमारी सख्या अधिक होगी तो इससे हमे वायुमण्डलकी शान्तिका निश्चय हो जायेगा। यदि हमारी सख्या कम होगी तो फिर हमे अपने आसपास फैले दावा-नलको बुझाते हुए मर मिटना होगा। यदि ऐसे अपरिवर्तनवादी असहयोगी है भी तो उन्हे इस समझौतेपर झगडा करनेका कोई कारण नही है, क्योकि यह और कुछ नही ऐसे अटल और अदम्य अपरिवर्तनवादियोको खोज निकालनेकी ही एक विधि है। जिनका प्रेम-भाव कडीसे-कडी कसौटीपर भी सौ टंच साबित हो और त्रिविध रचनात्मक कार्यक्रमके प्रति जिनकी श्रद्धा, आवश्यकता पडनेपर, तमाम देशकी श्रद्धाहीनताके बाद भी टिकी रहे, उन्हे किसीकी भी सहानुभूतिकी जरूरत नही है, बल्कि जो-कुछ सहानुभूति और पुष्टि वे दे सकते हो उसकी जरूरत तो मुझे है और मै उसके लिए प्रार्थना करता हूँ। यह वे कर सकते है सर्वथा अहकार-शून्य, मौन

और अटूट सेवाके द्वारा — ऐसी सेवाके द्वारा जिसे करते हुए वे कभी कोई शिकायत नहीं करेंगे और न किसी पुरस्कारकी आशा करेंगे। उनका पारितोषिक तो उनके कार्यका सिर्फ उनकी अन्तरात्माके द्वारा किया गया अनुमोदन ही होगा। पाठक इस बातका यकीन रखें कि ऐसे कार्यकर्त्ता भी देशमें हैं। उन्हें 'यंग इंडिया' के पृष्ठोंके द्वारा प्रसिद्धि या परिचयकी आवश्यकता नहीं है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २७-११-१९२४

३१३. टिप्पणियाँ

यदि मैं वाइसराय होता

दो अंग्रेजोंने, जो बंगालमें चलाई जा रही दमन-नीतिके पैरोकार थे, मुझसे पूछा कि "यदि आप लॉर्ड रीडिंग या लॉर्ड लिटनकी जगह होते तो क्या करते?" मैंने उनके प्रश्नका उत्तर तुरन्त दिया। परन्तु मैंने देखा कि उससे उन मित्रोंको संतोष न हुआ। उन्होंने समझा कि मेरे लिए इस तरह जवाब देना आसान है, क्योंकि मैं दरअसल तो उनकी जगहपर हूँ ही नहीं। फिर भी चूँकि अपने जवाबपर सब तरहसे विचार करनेके बाद भी वह मुझे ठीक मालूम हुआ है और चूँकि दूसरे कितने ही अंग्रेज ऐसे हो सकते हैं जो उन सज्जनोंकी तरह बंगालके दमनको ठीक मानते होंगे इसलिए मैं अपना उत्तर जरा विस्तारके साथ यहाँ देता हूँ :

यदि मैं वाइसराय अथवा बंगालके गवर्नरकी जगह होता तो पहला काम मैं यह करता कि समाजके विश्वासपात्र भारतीयोंको बुलाता और उनके सामने अपने तमाम कागज-पत्र रख देता और वे जो सलाह देते उसके मुताबिक चलता। मैं सुभाषचन्द्र बोसको भी बुलाता और उनपर अपना सन्देह प्रकट करता और वे जो स्पष्टीकरण देते उसे प्रकाशित करता। फिर जिन प्रतिष्ठित भारतवासियोंकी राय मैं लेता उन्हींसे पूछकर मैं देशबन्धु दासको बुलाता और उनके दलके जिन लोगोंपर मुझे शक होता उनकी सारी जिम्मेदारी मैं उनके सिरपर डाल देता। इस तरह मैं खामोशीके साथ शान्तिकी रक्षाकी व्यवस्था कर देता अथवा अपना भ्रम दूर कर लेता। यह कमसे-कम है जो मैं करता और वह भी तब, जब मुझे अपनी विधान-सभापर विश्वास न होता या उसे बुलानेके लिए वक्त न होता। फिर इससे भी आगे चलकर मैं अपनी इस अत्यन्त दयनीय स्थितिका विचार करता और उसकी असत्यताको तुरन्त समझ जाता। इस प्रकार उस विषम प्रसंगका इलाज करके मैं मूल रोगकी खोज करता, जिसका यह प्रसंग एक लक्षणमात्र है। इसके लिए मैं देशके प्रतिनिधि भारतीयोंको बुलाता और इस बातको जाननेकी कोशिश करता कि ये नवयुवक जो कि सुयोग्य और यों दूसरी तरहसे शान्तिमय हैं, क्यों निर्दय होकर बे-गुनाह लोगोंकी हत्या कर डालते हैं और बिना सोचे-समझे खुद अपनी भी जान खतरेमें

डालते हैं? तब मुझे इस बातका पता चलता कि वे अपने स्वार्थ-साधनके लिए ऐसा नही करते हैं; बल्कि अपने देशके लिए आजादी चाहते हैं। इसलिए मैं उस असली कारणका इलाज करनेमे उन प्रतिनिधियोकी सलाहके मुताबिक चलता। हाँ, इस बातका जरूर खयाल रखता कि विदेशियोके न्यायोचित हितोका घात न होने पावे। इतना कर चुकनेपर मैं इस विचारसे सन्तोष मानकर निश्चिन्त रहता कि ऐसे भावी विषम प्रसगोका उपाय करनेकी जिम्मेदारी मेरी विधान-सभाकी भी उतनी ही होगी जितनी कि मेरी है।

मैं जानता हूँ कि मैंने इसमे कोई नई बात नही बताई, पर उसका गुण यही है कि वह पुरानी है। वर्तमान शासन-पद्धति भय-प्रदर्शनकी नीतिपर ही जीवित रह रही है और एकके बाद एक, सभी वाइसराय भारतीयोके साथ परामर्श करनेकी इस स्पष्ट आवश्यकताकी ओरसे आँखे मूँदते रहे हैं। इस दुराग्रहसे पूर्वोक्त सलाहकी व्यर्थता नही साबित होती। उलटे, उस तन्त्रका ही निकम्मापन सिद्ध होता है जिसके अन्दर इस तरह लोकमतकी व्यवस्थित अवगणना हो सकती है। ऐसी हालतमे यदि वाइसरायको, न केवल जनतासे वह समर्थन नही मिलता, जिसकी वह आशा करते हैं बल्कि लगभग सारे देशकी आलोचना और निन्दाका शिकार होना पडता है तो इसमे क्या आश्चर्य है।

एक गलतफहमी

सरकारी कर्जकी अदायगीके दायित्वके अस्वीकारके सम्बन्धमे गया कांग्रेस द्वारा पास किये गये प्रस्तावपर मेरी टिप्पणीसे[1], मैं देखता हूँ कि कुछ गलतफहमी पैदा हो गई है। यह टिप्पणी ऐसे समय प्रकाशित हुई जब हम लोग एकताकी बात सोच रहे हैं। यह एक दुर्भाग्यपूर्ण बात थी। सचाई यह है कि उक्त टिप्पणी एक सज्जनके पत्रके उत्तरमे तीन महीने पहले ही लिखी जा चुकी थी। लेकिन सप्ताह-दर-सप्ताह मेरे सहायक लोग ऐसी दूसरी चीजोके प्रकाशनको प्राथमिकता देनेके लिए, जो उनकी नजरमे ज्यादा महत्त्वपूर्ण थी, इसे रोककर अलग रखते रहे और अन्तमे जब यह टिप्पणी छपी तो वे टिप्पणीके, जो निश्चित तौरपर बेकारके विवादको जन्म देनेवाली थी और दूसरे लेखोके, जिनमे सहमतिके मामलोपर जोर दिया गया था, बीचकी असगतिको नजरमे नही रख सके। इसलिए जहाँ मैं इस समय इस टिप्पणीके प्रकाशनको अवसरकी दृष्टिसे अनुपयुक्त मानता हूँ, वहाँ मैं यह जरूर कहूँगा कि यह अब भी सरकारी कर्जके बारेमे मेरे मतको व्यक्त करती है। गया प्रस्तावका जो भी अर्थ हो, मेरी टिप्पणी स्पष्ट है। मैं नही चाहता कि वर्तमान सरकार द्वारा लिये गये सारे ऋणोके दायित्वसे इनकार कर दिया जाये, लेकिन मैं यह जरूर कहता हूँ कि जब सत्ताका अन्तिम हस्तान्तरण होगा, तब सरकारके ऐसे सभी ऋणोकी पूरी जाँच-पडताल करना जरूरी होगा और वे ही ऋण मान्य होगे जो इस पडतालमे खरे उतरेंगे। उदाहरणके लिए, मान लीजिए कि सरकार देशके खनिज साधनोके समुप-

१. देखिए "टिप्पणियाँ", १३-११-१९२४ का उपशीर्षक 'राष्ट्र ऋण'

योजनके लिए किसी विदेशी सिंडीकेटको दस करोड रुपया देती है [और इसलिए उसपर उतने पौंडका कर्ज हो जाता है] तो यह स्वराज्य सरकारके लिए सिर्फ न्याय ही नही बल्कि कर्त्तव्य-रूप होगा कि वह उस कर्जको अदा करनेमे इनकार कर दे। दरअसल तो मैं शायद एक वातमे गया प्रस्तावसे एक कदम और आगे वढ जाता हूँ। मैं न केवल इस प्रस्तावके दिनसे सरकार द्वारा किये गये लेन-देनकी जाँच करनेकी माँग करूँगा, वल्कि जिसमे अनैतिकताकी गध आती जान पडेगी, ऐसे हर लेन-देनकी जाँच करनेकी माँग करूँगा। क्योकि यह सरकार दावा करती है और यह माना जाता है कि यह न्यायके साथ, ईमानदारीसे और भारतके करोडो लोगोके प्रति न्यासीके रूपमे व्यवहार करती है। अत जहाँ न्यासीके कर्त्तव्यका भग हुआ हो या व्यवहारमे कोई दूसरी अशुद्धता पाई जाये वहाँ चिर भोगाधिकारके आधारपर उस सरक्षणका दावा नही किया जा सकता जो कि ईमानदारीकी भावनासे किये गये लेन-देनको प्राप्त होता है।

[अग्रेजीसे]

यंग इडिया, २७-११-१९२४

३१४. राष्ट्रवादके सम्बन्धमें सचाई[1]

भारतीयोकी नयी पीढ़ीके लिए जिनके सामने महायुद्धके बाद विश्वकी वदली हुई स्थिति आ खड़ी हुई है, स्पष्ट ही यह वात अत्यन्त महत्त्व रखती है कि वे उस अनुभवके प्रकाशमें पश्चिमी राष्ट्रवादकी सचाई और पूर्वपर उसे लागू करनेके वारेमें नये सिरेसे विचार करें। . . .

सचाई यह है कि मलाया और वर्माकी अपनी हालकी यात्राओके दौरान मैंने सभी ओर भारतीयोके प्रति —— जैसी विदेशियोके प्रति होती है —— शत्रुताकी भावना जागती हुई देखी। . . . मेरे लिए इसका अर्थ था कि यूरोपीय ढंगके राष्ट्रवादके पीछे केवल यूरोप ही नहीं, वल्कि सारी दुनिया पागल हुई जा रही है। . . .

महात्मा गांधीके उपवाससे पहले ही इन चीजोने मुझे उद्विग्न कर दिया था; लेकिन उपवासके दौरान मेरे मनमें यह खयाल भी आया कि जिस प्रकार यूरोपमें विरोधी धर्मोके वीच चलनेवाले युद्धकी परिणति विरोधी राष्ट्रोके वीच युद्धमें हुई थी, उसी प्रकार अगर हम पहलेसे ही सचेत नहीं हुए तो हिन्दू-मुसलमानोके वीच जो तनाव है वह भी वैसा ही रूप ले सकता है। . . .

. . . शोककी वात है कि यूरोपमें श्रम और पूँजीके वीच जैसा संघर्ष चल रहा है, वैसा ही वर्ग-संघर्ष हमें मानना पड़ता है कि भारतमें है। 'अस्पृश्यता' से एक वर्ग और दूसरे वर्गके वीच अत्यन्त संकीर्ण और नृशस शत्रुभावना सूचित होती है।

१. सी० एफ० एन्ड्रयूजके इस लेखसे जिसपर गांधीजीने अन्तमें अपनी टिप्पणी दी है, कुछ अश ही उद्धृत किये गये हैं।

. . . क्या हम अपने विकासके सभी नये क्षेत्रोंमें भारतकी विश्वैक्यकी भावनाका प्रतिनिधित्व कर रहे हैं? या हम फिर पश्चिमकी कुछ अत्यन्त प्रतिगामी विशेषताओंकी नकल-भर कर रहे हैं? क्या हमारी स्वदेशीकी कल्पना दूसरोंके प्रति शत्रुभाव और द्वेषभावनासे धुँधली पड़ती जा रही है?. . .

सबसे बड़ी कसौटी अहिंसा है . . .

चूँकि मैं हमेशा यह महसूस करता रहा हूँ कि असहयोग-जैसे खतरनाक नामके बावजूद हमारे राष्ट्रीय आन्दोलनके पीछे बुनियादी तौरपर अहिंसा या प्रेमकी भावना रही है, इसीलिए अच्छी-बुरी सभी परिस्थितियोंमें मैं आन्दोलनके साथ रहा हूँ और जब वातावरणमें हिंसाकी भावना दिखाई पड़ती थी, तब भी मैं आन्दोलनका समर्थन और बचाव करता रहा हूँ। . . .

जबतक भारतीय स्वदेशी आन्दोलन मुख्यत खादी अथवा उन वस्तुओंतक सीमित रहता है जो भारतमें बन सकती हैं और बननी चाहिए तबतक उसमें अनुदारता या जाति-द्वेष आनेका कोई भय नहीं है। यह बहिष्कारात्मक नहीं है बल्कि रक्षात्मक है। वह अंग्रेजों अथवा अन्य विदेशियोंके विरुद्ध नहीं है बल्कि भारतीयोंके हितकी दृष्टिसे आवश्यक है। जैसे माँ दुनियाके प्रति किसी तरहका विरोध भाव रखे बिना उससे अपने बच्चोंकी रक्षा करती है वैसे ही भारतको अपने प्राथमिक उद्योगोंकी रक्षा करनी चाहिए। उग्र राष्ट्रवाद, जो साम्राज्यवादके नामसे प्रसिद्ध है, एक अभिशाप है, किन्तु अहिंसात्मक राष्ट्रवाद समूह-जीवन अथवा सभ्य जीवनकी एक आवश्यक शर्त है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २७-११-१९२४

३१५. पत्र : छगनलाल गांधीको[1]

[२७ नवम्बर, १९२४ के पश्चात्][2]

चि० छगनलाल,

इसकी पहुँच मथुरादासको भेज देना। दाभोलकरका पैसा किस कामके लिए है? हमें भी इन दोनों रकमोंको तथा हमारे पास अमानतके रूपमें पड़ी हुई ऐसी ही अन्य रकमोंको, यदि उन्हें ब्याजपर न चढ़ाया हो तो अब चढ़ा देना चाहिए।

बापू

गुजराती पत्र (एस० एन० ११७४३) की फोटो-नकलसे।

१ और २. यह पत्र मथुरादास त्रिकमजीके २७-११-१९२४ के पत्रके जवाबमें लिखा गया था। मथुरादास त्रिकमजीने अपने इस पत्रके साथ, गांधीजीके जेल जानेके बादसे अपने पास पड़ी हुई दो रकमोंके ब्याजका रु० १५३-०-८ पा० का एक चेक भी भेजा था।

३१६. तार: जवाहरलाल नेहरूको[1]

साबरमती
२८ नवम्बर, १९२४

नेहरू
इलाहाबाद

बच्चेकी मृत्युसे दुःख हुआ। ईश्वरेच्छा बलीयसी।

गांधी

[अंग्रेजीसे]
ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स

३१७. तार: डा० सत्यपालको[2]

[२९ नवम्बर, १९२४ या उसके पश्चात्]

मोतीलालजी या मौलाना असमर्थ हों तो मैं अध्यक्षता करूँगा।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ११७४४) की फोटो-नकलसे।

१. श्री जवाहरलाल नेहरूका पुत्र जन्मके लगभग एक सप्ताह बाद ही मर गया था। यह तार उसी अवसरपर भेजा गया था।

२. यह डा० सत्यपालके तारके जवाबमें भेजा गया था, जो २९ नवम्बर, १९२४को प्राप्त हुआ था। डा० सत्यपालने गांधीजीको सूचित किया था कि मोतीलालजी सम्मेलनकी अध्यक्षता नहीं कर सकेंगे और अनुरोध किया था कि गांधीजी अध्यक्षता करना स्वीकार कर लें क्योंकि पंजाबकी हालत कुशल मार्ग-दर्शनकी अपेक्षा रखती है और उनके स्वीकार न करनेपर सम्मेलन विफल हो जायेगा। साथ ही गांधीजीसे यह अनुरोध भी किया गया था कि पंजाबकी समस्याओंको हल करनेके लिए वे अन्य नेताओंको भी ले आयें।

३१८. तार: अबुल कलाम आजादको

[२९ नवम्बर, १९२४ या उसके पश्चात्][1]

मौलाना अबुल कलाम आजाद
रिपन स्ट्रीट
कलकत्ता

मोतीलालजी कहते है वे नही आ सकेंगे। कृपया आप शामिल हो। पजाबमे आपकी उपस्थिति विशेषरूपसे अपेक्षित।

गांधी

अग्रेजी प्रति (एस० एन० ११७४४) की फोटो-नकलसे।

३१९. टिप्पणियाँ

बी-अम्माँ

बी-अम्माँकी मृत्युके सम्बन्धमे मैं 'यग इडिया'मे लिख चुका हूँ।[2] उनका धर्मप्रेम अगाध था। धर्मपर उनकी आस्था अनुकरणीय थी। उनके देशप्रेमका मूल धर्मप्रेममे था, और उनकी हिन्दू-मुस्लिम ऐक्यकी इच्छाका कारण भी उनका धर्मप्रेम ही था। बादमे चलकर तो उनकी स्थिति ऐसी हो गई थी कि धर्म, देश और साम्प्रदायिक एकता, तीनों उनके लिए एक ही चीज बन गये थे। उन्होंने देखा कि अगर भारत स्वतन्त्र नही होगा तो इस्लाम भी सुरक्षित नही रहेगा। हिन्दुस्तानकी स्वतन्त्रता विभिन्न जातियोके बीच एकतापर निर्भर करती है और यह जातीय एकता हिन्दू-मुस्लिम ऐक्यके बिना असम्भव है। ऐसा उन्होने अपनी आँखोसे देखा था। इसीलिए इस नेक बहनको मरते दमतक इन्ही-तीनो बातोकी रट लगी हुई थी। उनके अन्तिम दिनोमे उनके दर्शन करनेका सुअवसर मुझे कई बार मिला। "हिन्दुस्तानमे कब एकदिली होगी?" "स्वराज्य कब मिलेगा?" "क्या तबतक मैं जीवित रहूँगी?"—वे मुझसे ऐसे ही सवाल पूछती थी।

आत्मा अमर है, लेकिन ऐसी शुद्ध आत्माको देखकर तो हम उसके अमरत्वकी स्पष्ट कल्पना कर सकते है। आज बी-अम्माँका शरीर नही रहा, लेकिन उनके कार्यो और वचनोका नाश तो, जबतक हिन्दुओ और मुसलमानोकी हस्ती है, तबतक नही हो सकता। जो माता अपने वारिसके रूपमे अली भाइयो-जैसे बेटे छोड गई

१. देखिए पिछले शीर्षककी पाद-टिप्पणी।

२. देखिए "टिप्पणियाँ", २०-११-१९२४, उपशीर्षक 'बी-अम्माँ'।

है, उसका नाश असम्भव है। मैं इन भाइयोंकी मातृ-भक्तिको जैसे-जैसे याद करता हूँ, वैसे-वैसे उनके प्रति मेरा प्रेम बढता जाता है। इन वृद्धा बहनकी बात दोनो भाइयोके लिए परमादेशके समान थी। वे मानते है कि आज वे जो-कुछ है, बी-अम्माँकी ही बदौलत है।

बी-अम्माँकी मृत्युकी रात अविस्मरणीय है। उस दिन शौकत अली मेरी प्रार्थनामें उपस्थित थे। इसी बीच टेलीफोनपर खबर मिली कि बी-अम्माँकी तबीयत ज्यादा खराब है। इसपर मौलाना साहब डा० अन्सारीको साथ लेकर तुरन्त चल पडे। प्रार्थनाके बाद मुझे खबर मिली। मैं सरोजिनी देवीको साथ लेकर उनके यहाँ पहुँचा। सारा परिवार बी-अम्माँको घेरकर बैठा हुआ था। सभी अल्लाहके नामका जाप कर रहे थे। मौलाना मुहम्मद अलीकी आँखोसे आँसू टपक रहे थे, लेकिन उनके मुँहसे मैंने अल्लाहके सिवा दूसरा कोई शब्द नही सुना। मौलाना शौकत अली आँसुओको रोके हुए थे, लेकिन उनकी मुख-मुद्रासे उनका दु:ख झलकता था। फिर भी, उनका बुद्धिविवेक मन्द नही पडा था। आसपास क्या हो रहा है, इसका उन्हे पूरा ध्यान था। मैं दुर्बल हूँ, मुझे ज्यादा समयतक वहाँ नही बैठना चाहिए — ऐसा सोचकर उन्होने जोर डालकर मुझे वहाँसे विदा किया। मेरे पास उनकी ऐसी सजगता तथा विनयके बहुत सारे उदाहरण है।

उस छोटी-सी कोठरीमे मैंने जैसा धैर्य तथा भगवद्भाव देखा, उससे मृत्युके समयके हमारे यहाँके रोने-पीटनेके रिवाजकी तुलना किये बिना मैं नही रह सका। मैंने बहुत-से हिन्दुओका मरण देखा है। मैंने अकसर देखा है कि रोगीके शरीरमे अभी प्राण शेष ही रहता है कि उसके लिए राम-नामका जाप करनेके बजाय रोना-धोना शुरू हो जाता है। सभी धर्मोमे मृत्युके बाद रोने-धोनेकी मनाही है। हिन्दू धर्म जन्म और मरणको एक ही स्थितिके दो रूप मानता है। फिर भी, मैंने रोने-धोनेकी जगली और नास्तिक प्रथा हिन्दुओके अलावा और किसी धर्मके अनुयायियोमे नही देखी। मैं पारसियोकी मृत्युके समय उपस्थित रहा हूँ, यहूदियो, ईसाइयो और मुसलमानोके मरते समय हाजिर रहा हूँ। लेकिन रोना-धोना तो मैंने कही नही देखा। बी-अम्माँकी मृत्युके समय लोगोको केवल ईश्वरपर ही आस्था रखते देखकर मुझे बड़ा सन्तोष मिला। मैं चाहता हूँ कि विवेकशील हिन्दू परिवार रोने-धोनेके घातक, जगली और निरर्थक रिवाजको अधर्म मानकर तुरन्त बन्द कर दे।

बी-अम्माँके सम्पर्कमें मुझे और भी बहुत-सी बाते देखनेको मिली। उन्होने मृत्युपर्यन्त खादीका ही उपयोग किया और सो भी महीन नही, बल्कि मोटी और सामान्य प्रकारकी। उनकी आज्ञा थी कि उनके कफनमें भी शुद्ध खादीका उपयोग किया जाये। मैंने उनकी इस आज्ञाका पालन होते भी देखा। अली भाइयोके घर मैंने छोटे-बडे, सबको खादीका ही उपयोग करते देखा।

इन दोनो भाइयोने अथवा घरके अन्य लोगोने अपना काम एक क्षणको भी बन्द नही किया। मौलाना मुहम्मद अलीका लिखनेका काम बन्द नही हुआ। 'हमदर्द' और 'कॉमरेड'के बारेमें वे आदेश-निर्देश देते ही रहे। मौलाना शौकत अलीने अपना

काम एक दिन भी नही रोका। उन्हे दूसरे ही दिन मुजफ्फरनगर जाना था। उन्होने उस करारको मुकम्मिल निभाया। मुझे उसी दिन रामजस कालेज जाना था। जिस समय मुझे कालेज जाना था कब्रिस्तान जानेके लिए भी वही समय रखा गया था, इसलिए मेरा विचार उक्त कार्यक्रमको रद कर देनेका था। लेकिन उन्होने यह भी नही करने दिया। मुझे यह कहकर विदा कर दिया कि कब्रिस्तान जाते समय कथा देनेके लिए आपको बुला लेगे। इस सबसे कर्त्तव्य परायणता, विवेक और ईश्वरके प्रति आस्थाका परिचय मिलता है। मैने तिलक महाराजके बारेमे भी ऐसा ही सुना है। उन्हे चाहे जितना दु:खद समाचार मिले, वे अपनी दिनचर्यामे कोई परिवर्तन नही करते थे। अग्रेजोमे तो ऐसी कर्त्तव्य-परायणता मैने बहुत देखी है। जिसमे ऐसा धीरज नही है, वह मनुष्य कहलाने लायक नही — ऐसा कहनेमे कोई अत्युक्ति नही है।

पारसी रुस्तमजी

बी-अम्माँकी मृत्युसे, जैसा कि मौलाना शौकत अलीने कहा है, हिन्दुस्तानका एक सच्चा सिपाही कम हो गया है। पारसी रुस्तमजीकी मृत्युसे भी एक सच्चा सिपाही कम हो गया है। इतना ही नही, मेरा तो एक परम मित्र ही कम हो गया है। पारसी रुस्तमजी-जैसे आदमी मैने थोडे ही देखे है। शिक्षा उन्होने नहीके बराबर प्राप्त की थी। वे थोडी ही अंग्रेजी जानते थे। गुजरातीका ज्ञान भी मामूली था। बहुत पढनेका भी शौक न था। वे जवानीमे ही व्यापारमे पड गये थे। केवल अपने परिश्रमके बलपर एक मामूली गुमाश्तेकी हालतसे एक बडे व्यापारीके दर्जेपर जा पहुँचे थे। फिर भी उनकी व्यवहार-बुद्धि तीव्र थी, उनकी उदारता हातिमकी जैसी थी; उनमे सहिष्णुता तो इतनी अधिक थी कि खुद कट्टर पारसी होते हुए भी हिन्दू, मुसलमान, ईसाई आदिके प्रति वे एक-सा प्रेम रखते थे। किसी भी चन्दा चाहनेवाले या हाथ फैलानेवालेको उनके पाससे खाली हाथ जाते हुए मैने देखा ही नही। अपने मित्रोके प्रति उनकी वफादारी इतनी सूक्ष्म थी कि कितने ही लोग उन्हीको अपना मुख्तियारनामा दे जाते थे। मैने देखा है कि बडे-बडे मुसलमान व्यापारी अपने नाते-रिश्तेदारोको छोडकर पारसी रुस्तमजीको अपना प्रतिनिधि बनाते थे। कोई भी गरीब पारसी रुस्तमजीकी दुकानसे खाली हाथ नही लौटता था। पारसी रुस्तमजी अपनोके प्रति जितने उदार थे, खुद अपने प्रति उतने ही कजूस थे। मौज-शौकका तो नाम भी नही जानते थे। अपने लिए या स्वजनोके लिए विचारपूर्वक खर्च करते थे। उन्होने घरमे अन्ततक बहुत सादगी कायम रखी। गोखले, एन्ड्रयूज, सरोजिनी देवी आदि रुस्तमजीकी दुकानपर ही ठहरते थे। छोटीसे-छोटी बात भी पारसी रुस्तमजीके ध्यानसे बाहर नही रहती थी। गोखलेके असख्य अभिनन्दन-पत्र इत्यादिके बडे-बडे पैंतालीस अदद पैक कराने, उनकी फेहरिस्त बनाने, उन्हे जहाजपर चढाने आदिका सारा भार पारसी रुस्तमजीपर न होता तो किसपर होता?

अपनी प्रिय धर्मपत्नीकी मृत्युपर उनके नामसे जेरबाई ट्रस्ट कायम करके अपनी सम्पत्तिका बड़ा भाग उन्होने धर्म-कार्यके निमित्त दे दिया था। अपनी सन्तानको उन्होने कभी भी अनुचित लाड़-प्यार और ऐशो-आराम नही दिया, बल्कि उन्हे सादगीसे रहना

सिखाया और उनके लिए इतनी ही सम्पत्ति रख छोडी है, जिससे वे भूखो न मरे। अपने वसीयतनामेमे उन्होंने अपने तमाम रिश्तेदारोको याद किया है।

जैसा ऊपर बताया गया है, वैसी ही तत्परता और दृढताके साथ उन्होने सार्वजनिक हलचलोमें भी योग दिया था। सत्याग्रहके समय अपना सर्वस्व होम कर देनेके लिए तैयार हो जानेवाले नेटालके व्यापारियोमे पारसी रुस्तमजी सबसे आगे थे। अगीकृत कार्यको वडेसे-बडा सकट उपस्थित हो जानेपर भी न छोडनेकी उनकी प्रकृति थी। जितना सोचा था, उससे अधिक दिनोतक जेलमे रहना पडा तो भी वे हिम्मत न हारे। लडाई आठ सालतक चली, कितने ही मजबूत सिपाही हिम्मत हारकर बैठ गये, पर पारसी रुस्तमजी अडिग रहे। अपने पुत्र सोराबजीको भी उन्होने लडाईमे होम दिया।

इस सज्जन हिन्दुस्तानीसे मेरा परिचय १८९३ मे हुआ। पर ज्यो-ज्यो मैं सार्वजनिक कामोमे पड़ता गया त्यो-त्यो पारसी रुस्तमजीमे मौजूद अमूल्य गुणोकी कद्र करना मैं सीखता गया। वे मेरे मुवक्किल थे। सार्वजनिक कामोमें वे मेरे साथी थे और अन्तमें वे मेरे मित्र बन गये। वे अपने दोषोका वर्णन भी मेरे सामने बालककी तरह आकर कर देनेमें नही हिचकिचाते थे। मुझपर उनका ऐसा विश्वास था कि मैं चकित हो जाता था। १८९७ मे जब गोरोने मुझपर हमला किया, तब मेरे और मेरे बाल-बच्चोका आश्रय-स्थान रुस्तमजीका मकान था। गोरोने उनके मकान, मालमता आदिमे आग लगा देनेकी धमकी दी। पर उससे रुस्तमजी तनिक भी विचलित नही हुए। दक्षिण आफ्रिकामे जो नाता उन्होने जोडा, उसे मृत्यु-पर्यन्त कायम रखा। यहाँ भी वे सार्वजनिक कामोके लिए पैसा भेजते रहते थे। दिसम्बरमे काग्रेस अधिवेशनके समय उनके यहाँ आनेकी सम्भावना थी। पर ईश्वरको कुछ और ही मजूर था। सेठ रुस्तमजीकी मृत्युसे दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोकी बहुत बडी क्षति हुई है। सोराबजी अडाजानिया चले गये, फिर अहमद मुहम्मद काछलिया गये, अभी कुछ ही दिन पहले पी० के० नायडू गये और अब पारसी रुस्तमजी भी चले गये। अब दक्षिण आफ्रिकामें इन सेवकोकी कोटिके भारतीय शायद ही रहे हो। ईश्वर निराधारोका रखवाला है। वह दक्षिण आफ्रिकाके भारतवासियोकी रक्षा करेगा, परन्तु पारसी रुस्तमजीकी जगह तो हमेशा खाली ही रहेगी।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ३०-११-१९२४

३२०. विरोधी मित्र

जितना हम अनुकूल मित्रोसे सीखते है, बहुधा उससे अधिक विरोधी मित्रोसे सीखते है। शर्त सिर्फ यह है कि हममे अपनी आलोचना सुनने और समझनेकी सहिष्णुता और धीरज होना चाहिए। मुझे विश्वास है कि ये दोनो बाते मुझमे है। इसीसे मै अपने कुछ आलोचकोसे बहुत-सी बाते सीख पाया हूँ। ऐसे एक आलोचकका पत्र नीचे दे रहा हूँ।[1]

मै मानता हूँ कि यह पत्र निर्मल भावसे लिखा गया है। लेखकको गुस्सा तो अवश्य आ गया है, पर उन्होने वही लिखा है, जो वे मानते है। उन्होने काकतालीय-न्यायसे काम लिया है। उन्होने मुझको तार किया था। उसका जवाब उन्हे न मिला। बस, इसीसे उन्हे मेरी सारी करनी निन्द्य मालूम होती है। मै तो यह मानता आया हूँ कि पत्रोके जवाब मै बहुत नियमपूर्वक देता हूँ और अपने आसपास मैने जिन साथियोको इकट्ठा किया है, वे दुष्ट नही बल्कि सत्यका अनुसरण करनेका प्रयत्न करनेवाले है। परन्तु कोई मनुष्य नियमका कितना ही पाबन्द क्यो न हो, वह अपने तमाम पत्रो और तारोका जवाब नही दे सकता। उपवासके समय मिले तमाम पत्रो और तारोको देखना मेरे लिए अशक्य था। इसी तरह मेरे साथियोके लिए भी ऐसे प्रत्येक पत्र और तारका जवाब देना अशक्य था। समझमे आने लायक ऐसी सीधी-सी बात भी उक्त पत्र-लेखक न समझ सके, यह दु खकी बात है।

असहयोग चल रहा है और इधर भारतमे व्यापार भी मन्द है, इसलिए उसकी मन्दीका कारण है, असहयोग। और असहयोगका प्रवर्तक मै हूँ, इसलिए उसकी जिम्मेवारी मेरे सिर है। यह है पत्र-लेखककी दलील। मै इससे उलटी दलील पेश करना चाहता हूँ। लोगोने असहयोगको पूरा-पूरा नही अपनाया, उन्होने चरखा-धर्मका पूरा पालन नही किया, इसीसे दुनिया-भरमे आज व्यापारमे जो मदी चल रही है, उसे भारतको भी भोगना पड रहा है। लोग असहयोगका मर्म न समझ पाये, क्योकि पत्र-लेखककी तरह अधीर और उतावले लोग इस देशमे बहुत है। इसीसे भारतको दु ख सहन करना पड रहा है। यदि वे धीरज रखकर असहयोगका मर्म समझे और उसका पालन करे तो हिन्दुस्तान आज ही मुक्त हो जाये।

फिर, इस सज्जनने बेचारी खादीपर भी प्रहार किया है। उसका जवाब तो बहुत बार दिया जा चुका है। फिर भी, लेखक तथा उनके-जैसे दूसरे अश्रद्धालु लोगोके लिए पुन लिखता हूँ। अकेली खादी ही मैली नही होती, हर तरहका सफेद कपडा मैला होता है। हाँ, खादीके मोटी होनेसे उसे धोनेमें जरा तकलीफ होती है। पर अगर हम पश्चिमी दुनियाकी ऐशो-आरामकी जिन्दगीके असरमे आकर नाजुक न हो

१. इस पत्रका अनुवाद यहाँ नही दिया जा रहा है। इसमें उठाये गये मुख्य मुद्दोंकी चर्चा गांधीजीने जवाब देते हुए ही कर दी है।

गय होते तो खादीको धोनेमें हम कष्ट नही, उलटा आनन्द मानते। फिर, खादी पहननेवाला कपडे कम पहनता है, इसलिए कुल मिलाकर धुलाई आदिमे कष्ट भी कम ही होता है। इससे आगे वढूँ तो मै यह भी कहूँगा कि जिन्हे मोटी खादी कष्टकर मालूम होती है वे महीन सूत कातकर कपडा वुनवा ले। इससे खादी मलमल-जैसी वारीक हो जायेगी और उसका खर्च मलमलसे कम पडेगा, क्योकि कातनेतक की क्रियाका तो कुछ भी खर्च न पडेगा। जवसे स्वेच्छया कताईकी हलचल शुरू हुई है, तवसे जो महीन खादी पहनना चाहता हो, उसे महीन खादी मिल सकनेकी सुविधा भी हो गई है। जो अपने आलस्यवश महीन सूत न कातेगे, उन्हे खादीपर मोटेपनका दोप लगानेका अधिकार नही हो सकता। यदि स्वेच्छया कताईकी प्रवृत्ति कायम रही और खूब फैल गई तो वाजारमे भी जितनी चाहिए उतनी महीन खादी मिल सकेगी।

चरखेकी हलचलका उद्देश्य है आमदनी वढाना। वह अन्नपूर्णा है। पत्र-लेखक भाई वकील है। उन्हे गरीवोकी दशाकी कल्पना नही हो सकती। यदि वे गरीव गाँवोमे घूमे तो उन्हे मालूम हो जायेगा कि एक पैसा भी कगालके लिए स्वागत-योग्य होता है। करोडो मजदूरोको दिनमे एक आना भी नही मिलता। उनके लिए तो चरखा कामधेनु हो जाता है। इसके एक साक्षी तो आचार्य राय है।

पत्र-लेखक द्वारा [सविनय-] अवज्ञाके सम्वन्धमे किया गया कटाक्ष भी विचार करने योग्य है। उसमे बहुत सत्याश है। जिस प्रकार लोगोने असहयोगके प्रथम पद 'शान्तिमय'को नही समझा, उसी प्रकार अवज्ञाके प्रथम पद 'सविनय'को भी नही समझा। और इसमें कोई सन्देह नही कि इसीसे वुरे परिणाम सामने आये है। वहुत-से लोगोने मान लिया है कि चाहे जिस कानूनकी, चाहे जिस-किसीको अवज्ञा करनेका अधिकार है। यह सविनय अवज्ञा नही, वल्कि उद्धततापूर्ण, अविनयपूर्ण और विनाश-कारी अवज्ञा है। यह तो कुछ अशोमे सशस्त्र विद्रोहसे भी ज्यादा हानिकर है। लेकिन इसमे सविनय अवज्ञाकी खामी नही मानी जायेगी, यह तो अवज्ञा करनेवालोकी नासमझीका दोष है। नये आन्दोलनमे ऐसी नासमझी हुआ ही करती है। अपूर्ण मनुष्योके वीच जब अपूर्ण मनुष्य काम करता है तब ऐसी अपूर्णताएँ होती ही है। परन्तु यदि सुधारक और समाज ये दोनो पक्ष निर्मल भावसे और अज्ञानवश भूल करे तो यह ईश्वरीय नियम है कि वह भूल अपने-आप सुधर जाती है। जहाँ-जहाँ मुझे दोप दिखाई देता है, वहाँ-वहाँ मै प्रायश्चित्त करता हूँ। लोग भी सच्चे दिलसे अपनी भूल सुधारते है। लेकिन उनके वीच एक दल ऐसा है, जो जान-बूझकर वीचमे पडता है और लडाईको नुकसान पहुँचाता है। इसका इलाज यही है कि इन नये दिखाई देनेवाले सिद्धान्तोका अधिक प्रचार किया जाये, इनको अधिक समझा जाये। फिर भी, हम सवको सावधान करनेके लिए लेखकके उद्गारोका मैं स्वागत करता हूँ।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ३०-११-१९२४

३२१. अब क्या करें?

खादी एक-एक कदम आगे बढती जा रही है। अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीने मताधिकारमे खादीको शामिल करनेके सुझावको स्वीकार कर लिया है। हमे आशा रखनी चाहिए कि काग्रेस भी उसे स्वीकार कर लेगी। परन्तु काग्रेस चाहे स्वीकार करे या न करे, जिन लोगोको कातनेकी शक्तिपर विश्वास है, वे तो सूत कातकर ही अपनी सदस्यताको सुशोभित करेगे। स्वराज्यवादियोने शुभ हेतुसे ही कताई और खादीके लिबासको मताधिकारमें स्थान दिया है। परन्तु उन्हे उत्साह मिले, उनका विश्वास दृढ हो, इसके लिए अपरिवर्तनवादियोको आगे बढकर औरोको भी आगे बढ़ाना चाहिए। अभी तो गुजरातमे कोई २००० स्वेच्छापूर्वक कातनेवाले हैं। कतैयोकी इस सस्थाको भी कायम रखनेमें हमे मेहनत पड़ रही है, हमारी योजना-शक्तिकी आजमाइश हो रही है, हमारी कुशलताकी कसौटी हो रही है। इसलिए उसको बहुत आगे बढानेमे भी तो हमारी तमाम शक्तियोकी परीक्षा होगी। जब बहुत सारे कार्यकर्त्ता इसकी सतत तैयारी करते रहेगे, तभी हमे सफलता मिलेगी। हजारो लोग अपनी मेहनत तो दे सकेगे, लेकिन रुई न देगे, न उन्हे मिल ही सकेगी। वे सब अपने लिए पूनियाँ भी तैयार न करेगे। इसलिए हर गाँव और हर तालुकेमे अच्छे धुननेवाले होने चाहिए। हर गाँवमे, हर तालुकेमे, अच्छे चरखे और धुनाईके कमठे बनानेवाले होने चाहिए। समितियो या उपसमितियोको कपासका सग्रह रखना चाहिए। जो प्रान्त यह सब काम अच्छी तरह कर सकेगा, उसीके बारेमे माना जा सकेगा कि उसमे व्यावहारिक शक्ति, तत्रको चलानेकी शक्ति आ गई है। यदि हम इतना भी न कर सके तो फिर स्वराज्य-तन्त्रका संचालन करनेकी शक्ति कहाँसे लायेगे? स्वराज्य मिलनेपर ये शक्तियाँ अपने-आप नही आ जायेगी; बल्कि हम देखेगे कि उन शक्तियोको प्राप्त करनेमे ही स्वराज्य छिपा हुआ है। हमारे कताईके पेशेको नष्ट करके ईस्ट इडिया कम्पनीने हमपर अपना कब्जा जमाया। अब उसी चीजके जीर्णोद्धारमे हमारा उद्धार है।

आजतक सूत उन्ही लोगोने काता है जो चरखे, पूनियाँ आदि प्राप्त कर सके है। अब यदि हम बहुत सारे लोगोसे आधे घंटेकी मेहनतकी आशा रखते हो तो समितियोको ये सब सुविधाएँ जुटानी पडेगी। यदि हमारे अन्दर सच्ची जागृति हो तो हजारो लोगोको इस अल्प परिश्रमसे सम्पादित होनेवाले महायज्ञमे हाथ बँटाना चाहिए और यदि यह बात सच हो कि चरखेके बिना स्वराज्य नही, तो फिर उसमे हजारो लोगोका शामिल होना कोई आश्चर्यकी बात न होनी चाहिए। मेरी दृष्टिसे तो चरखा ही स्वराज्य प्राप्त करनेका सबसे सुगम उपाय है। वह दूसरी तमाम प्रवृत्तियोको तेज प्रदान कर सकेगा और बिना उसके दूसरी तमाम प्रवृत्तियाँ निरर्थक साबित होगी।

लोगोंमे सचमुच शक्ति है या नहीं, लोग सचमुच स्वराज्य चाहते हैं या नहीं, इसका अन्दाजा लगानेका हमारे पास दूसरा कोई शान्तिमय उपाय है ही नही। बड़े-बड़े सम्मेलनोंमे लाखो आदमियोंके जमा होनेसे स्वराज्य-शक्ति सिद्ध नही होती। हजारो लोगोंके चन्दा देनेसे भी वह शक्ति नही आती। जहाँ पैसेका उपयोग करनेवाले न हो, वहाँ पैसेकी क्या कीमत? बहुतोंके हिन्दी या अंग्रेजी पढनेसे भी स्वराज्य नही मिल सकता। परन्तु चरखा चलानेमे यह शक्ति किस तरह निहित है, यह बात मैं कई बार अनेक प्रकारसे बता चुका हूँ।

यदि चरखा सफल न हुआ तो मेरा निश्चित मत है कि तब भारतके लिए आजादी हासिल करनेका एकमात्र उपाय खूँरेजी ही रह जाता है। केवल विधानसभाओंके द्वारा कभी भी सच्ची स्वतन्त्रता नही मिल सकती। यह बात तो हरएक भारतवासीको सूत्र-रूपमें समझ रखनी और रट रखनी चाहिए। फिर तो सिर्फ शक्तिका ही रास्ता रह जाता है। एक तो है शान्तिमय शक्तिका रास्ता। उसमे हमे खुद कष्ट-सहन करना होगा, हमे कुछ रचनात्मक काम करना होगा।

दूसरा है हिंसक शक्तिका रास्ता। उसमे हमें प्रतिपक्षीको दण्ड देना होगा। इस रास्तेको अभी तो सब लोगोंने त्याज्य माना है। हिंसक रास्तेपर चलकर फिलहाल तो भारत कुछ भी नही कर सकता। यह इतनी सीधी-सी बात है कि एक बच्चा भी समझ सकता है।

इसलिए जहाँतक मेरी दृष्टि जाती है, वहाँतक यदि मुझे चरखा ही चरखा दिखाई दे तो पाठक मुझे माफ करेंगे और जो बात मुझे दिखाई देती है यदि वही उन्हे भी दिखाई दे तो मैं उन्हे इस भव्य यज्ञमे अपना पूरा योग-दान करनेके लिए निमन्त्रण देता हूँ।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, ३०-११-१९२४

३२२. विविध विषय

खादी भण्डार

बम्बईमे गुजरात प्रान्तीय समितिका खादी भण्डार कालबादेवीकी सडकपर है। समितिकी सुविधाके विचारसे इस भण्डारको श्री जमनालालजीने अपने हाथमे ले लिया है। पहले श्री जमनालालजीका विचार इस भण्डारको अधिक समयतक चलानेका न था। लेकिन भण्डार एकाएक बन्द कर देनेसे ज्यादा नुकसान होनेका भय था और जहाँ यह भण्डार है वहाँ फिलहाल ऐसे भण्डारकी जरूरत महसूस होती है, इस कारण यह अभी चालू रखा गया है। इस भण्डारको चलानेमे लाभ कमानेकी दृष्टि नही है। इसलिए मैं इस मुहल्लेमे रहनेवाले ऐसे लोगोंको जिन्हे खादी-प्रवृत्तिमे श्रद्धा है, सलाह देता हूँ कि वे खादी भण्डारमें जाये और यदि उन्हे उसका माल और मालके दाम अनुकूल जान पड़े तो उसे प्रोत्साहन दे।

स्वर्गीय दलबहादुर गिरि

स्वर्गीय दलबहादुरजी गिरिके नामपर दानमें दो रकमें प्राप्त हुई हैं। बहन जरबानु प्यारेलालने अपनी ओरसे १०० रुपये भेजे हैं और कलकत्ताके एक सज्जनने भिन्न-भिन्न सज्जनोंसे चन्दा करके ८० रुपये भेजे हैं। यह सम्भव है कि स्वर्गीय दलबहादुर गिरिके परिवारके लोग आश्रममें आ जायें। यदि ऐसा हुआ तो इस रुपयेका उपयोग उनके पोषणके लिए किया जायेगा। अगर वे आश्रममें नहीं आयें तो वे जहाँ भी रहेंगे, यह रकम वहाँ भेज दी जायेगी। उन्हें थोड़ी-सी मदद तो बंगाल प्रान्तीय समितिकी ओरसे भी दी गई है। इस परिवारकी जैसी भी हालत होगी मैं पाठकोंको उससे अवगत करता रहूँगा। इस बीच किसीको मुझे अधिक धन भेजनेकी जरूरत नहीं है। अगर जरूरत होगी तो मैं पाठकोंको सूचना दूँगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ३०-११-१९२४

३२३. भाषण: गुजरात राष्ट्रीय विद्यापीठ, अहमदाबादमें

३० नवम्बर, १९२४

गुजरात राष्ट्रीय विद्यापीठके छात्रोंके सामने भाषण करते हुए श्री गांधीने कहा कि कांग्रेस द्वारा असहयोगको स्थगित करनेके प्रस्तावका मतलब राष्ट्रीय शिक्षा संस्थाओंको बन्द करना या उन्हें सरकारी विश्वविद्यालयोंसे सम्बद्ध करना नहीं है। इन संस्थाओंका अस्तित्व तो अब वास्तविक तथ्य बन चुका है और अब यह प्रान्तीय कांग्रेस कमेटियोंके ऊपर है कि वे उन्हें बरकरार रखें। मैं तो कांग्रेस द्वारा इस आशयका एक प्रस्ताव पास किये जानेका सुझाव दूँगा कि इन संस्थाओंको बनाये रखा जाये। यही नहीं, मैं तो यह सुझाव भी दूँगा कि जहाँ जनता इच्छा प्रकट करे, वहाँ ऐसी नई संस्थाएँ स्थापित भी की जायें। अगर कहीं ऐसे छात्र हों जो एक राष्ट्रीय आवश्यकताके रूपमें असहयोगमें विश्वास नहीं रखते थे, लेकिन जिन्होंने कांग्रेसके प्रस्तावके प्रति निष्ठाभावके कारण ही सरकारी शिक्षा संस्थाओंको छोड़ दिया था तो वे किसी कलंकका भय रखे बिना सरकारी संस्थाओंमें फिरसे जानेको स्वतन्त्र हैं। असहयोग आन्दोलनके प्रस्तावित स्थगनसे देशको पक्के असहयोगियोंकी शक्ति जाननेका अवसर मिलेगा। एक राष्ट्रीय कार्यक्रमके रूपमें असहयोग स्थगित हो सकता है, लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि व्यक्ति और यहाँतक कि प्रान्त भी असहयोगको स्थगित कर दें। शर्त इतनी ही है कि यदि वे उसे जारी रखना चाहते हों तो उन्हें विद्वेष या आन्तरिक कलह उत्पन्न किये बिना ही चलाना चाहिए। प्रत्येक मानव जीवनकी ही तरह इस आन्दोलनमें भी उतार-चढ़ावके दौर आ सकते हैं, लेकिन

यह स्थायी है और जबतक सरकारकी मौजूदा प्रणाली रहेगी तबतक वह अमुक व्यक्तियोंमें या व्यक्ति-समूहोंमें किसी-न-किसी रूपमें जारी रहेगा।

एक प्रश्नका उत्तर देते हुए श्री गांधीने कहा कि जिस हदतक राष्ट्रीय स्कूल हिन्दू-मुस्लिम एकताके वांछित स्वरूपके, तथाकथित अछूतों और सवर्ण हिन्दुओंके बीच सही सम्बन्धोंके या चरखेका क्या अर्थ है, इसके जीते-जागते विज्ञापन हैं, उस हदतक वे राष्ट्रीय राजनीतिके अंग हैं। भविष्यका इतिहासकार असहयोगी शिक्षा संस्थाओंकी प्रगतिका माप इन संस्थाओंमें इन्हीं तीन बातोंकी प्रगतिसे करेगा। इन तीन बातोंको स्वराज्यवादी और अपरिवर्तनवादी दोनों समान रूपसे अपना ध्येय मानते हैं। जो फर्क है वह महज इनपर जोरके बारेमें है। आपको ऐसा नहीं मानना चाहिए कि स्वराज्यवादियोंने खद्दर-कार्यक्रममें कोई विश्वास न होते हुए भी उसे स्वीकार किया है। जबतक कोई सबूत न हो तबतक यह विश्वास करना अन्याय होगा कि किसी दलने कोई बात यों ही सिर्फ कहनेके लिए कह दी है। खद्दरको टाल देनेका कोई सवाल ही नहीं है। मुझे यह कहनेमें कोई हिचक नहीं है कि जिन छात्रोंको खद्दर कार्यक्रममें विश्वास नहीं है, वे राष्ट्रीय पाठशालाओं और विद्यालयोंमें रहकर अपना समय बरबाद कर रहे हैं।

[अंग्रेजीसे]

न्यू इंडिया, १-१२-१९२४

३२४. पत्र : मगनलाल गांधीको

गुरुवार [१ दिसम्बर, १९२४ से पूर्व][1]

चि० मगनलाल,

उस राज [मिस्त्री]का मामला तुमने समझ लिया होगा।

१ अगर वह पंच-फैसलेके लिए तैयार हो तो मावलंकरसे सलाह-मशविरा करना और वकीलसे वैसी व्यवस्था करनेके लिए अनुरोध करना।

२ अगर इसके लिए तैयार न हो तो कानूनकी रीतिके अनुसार जो जवाब देना उचित हो मावलंकरसे पूछकर देना।

३ अगर अदालतमें हाजिर होनेकी जरूरत पड़े तो हाजिर हो जाना और वादीसे आवश्यक सवाल-जवाब करना। जवाब धीरजके साथ देना। मुद्देसे बाहर मत जाना।

४ मामला हमारे पक्षमें ही तय होगा, ऐसी सम्भावना है। अगर ऐसा न हो तो अपील करना।

५ फैसला अगर हमारे पक्षमें हुआ तो हमें खर्च भी मिलेगा। वह तो हम ले नहीं सकेंगे, क्योंकि अगर फैसला हमारे पक्षमें हुआ तो खर्चकी रकम वसूल

१. श्री मगनलाल गांधीने इसके प्राप्त होनेकी तिथि १ दिसम्बर, १९२४ लिखी है।

करनेके लिए हमें अदालतमे जाना पडेगा, सो हम कैसे कर सकते है? इस मामलेसे हमे एक नसीहत मिलती है कि कारीगरोसे हमे जो काम लेना हो, उसे लिखित रूपमें तय करके लिया जाये। ठेकेकी शर्ते पूरी तौरपर लिखी होनी चाहिए। वकीलका नाम मुझे सूचित करना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च.]

आनन्दानन्द अब बहुत उकताया हुआ है, थक भी गया है। उससे बात करना। अगर छगनलाल वहाँका कामकाज देख सके और आनन्दानन्दको विश्रामका अवसर दिया जा सके तो छगनलाल वहाँका काम सम्हाल ले। छगनलालकी गैर-हाजरीमे उसका काम कौन करता है? आनन्दानन्दको थोडा-आराम देना जरूरी है। उसे दूसरा काम दिया जा सकता है। मुझे लगता है कि आनन्दानन्दमे काम करनेकी बहुत शक्ति है। 'नवजीवन'के सम्बन्धमे रुपये-पैसेकी तथा अन्य चिन्ताओसे उसने मुझे पूरी तरह मुक्त रखा है और उसका स्तर भी खूब ऊपर उठाया है। तुमने उसे देखने-परखनेकी कोशिश की है या नही सो मुझे नही मालूम। जो भी हो, इस विषयमे विचार करते समय महादेव, नरहरि वगैरहसे भी राय लेना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ६०९८) से।
सौजन्य राधाबहन चौधरी

३२५. पत्र: मगनलाल गांधीको

[१ दिसम्बर, १९२४][1]

चि० मगनलाल,

खीमजीके मुकदमेमे हमे हारना हरगिज नही है। इसके लिए वे उपाय अवश्य किये जाये जो तुम्हे योग्य जान पडे। झूठी सौगन्ध खानेकी बातको लेकर मुकदमा चलानेकी जरूरत नही। लेकिन यदि तुम्हारी अनुपस्थितिके सम्बन्धमे हलफनामा माँगा जाये तो उसे दाखिल कर देना। इसके सम्बन्धमे वल्लभभाई तुम्हे विस्तृत रूपसे सलाह देगे।

धुनकीके विषयमे जो उचित जान पडे सो करना। मै यह जरूर चाहता हूँ कि जो आश्रमवासी धुनना अच्छी तरह जानते हो, उन्हे कुछ और समय देकर ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए कि एक धुनकी सारा दिन चला करे। वे यह काम अभ्यासकी खातिर करे और दूसरे, यह जतलानेके लिए भी कि यही हमारा धन्धा है। तीसरे अपनी शक्तिके अनुसार पूनियाँ जुटानेके लिए। ये तीनो बाते इस समय अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

१. मगनलाल गांधी द्वारा दी गयी तारीख।

छोटेलालसे जो-कुछ कहना चाहिए था, वह उससे मैंने कल रातको कह दिया है। छगनलालको तो कहा ही है। लेकिन मुझमे ऐसी शक्ति नही है कि जो बात मै एक बार कह दूँ उसका प्रभाव लोगोंपर हमेशा बना रहे। मुझे लोगोंके समीप निरन्तर बने रहनेकी जरूरत रहा करती है। मै आश्रममे लम्बे समयतक रहकर आश्रमके कामकी देखभाल करना चाहता तो हूँ लेकिन ईश्वर मेरी यह इच्छा पूरी कब होने देता है? उसपर किसका बस है?

बापू

[पुनश्च]

इसके साथ शम्भुशंकरको उत्तर है।

गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ६०४४) से।
सौजन्य राधाबहन चौधरी

३२६. पत्र : रमाबाई पट्टणीको

साबरमती
मार्गशीर्ष सुदी ५ [१ दिसम्बर, १९२४][1]

प्रिय बहन,

आपका स्नेहपूर्ण पत्र मिला। ८–९ जनवरीको परिषद्में[2] शरीक होना है। उसके बाद आप मुझे कुछ दिनोंके लिए किसी शान्त स्थलमें ले जा सकती है। मुझे ज्यादासे-ज्यादा १४ तारीखको यहाँ पहुँच जाना है। मेरे वहाँ पहुँचनेके बाद सब प्रबन्ध हो ही जायेगा। खादी-प्रचारमे आप-जैसी बहनोंकी मददकी आशासे ही मुझे काठियावाडमे आने और परिषद्का अध्यक्ष-पद ग्रहण करनेका लोभ हो आया। यदि मेरी यह आशा फलीभूत हुई तो किसी शान्ति स्थलपर जाकर मुझे जितनी शान्ति मिल सकती है, उसकी अपेक्षा इससे कही ज्यादा शान्ति मिलेगी। आशा है, आपका स्वास्थ्य अच्छा होगा।

मोहनदास गांधीके वन्देमातरम्

लेडी रमाबाई पट्टणी
भावनगर

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ३१८३) से।
सौजन्य महेश पट्टणी

१. रमाबाई पट्टणीने अपने २४ नवम्बरके पत्रमें गांधीजीको उनके बेलगाँव कांग्रेससे वापस आनेपर, बापजमें कुछ दिन शान्तिके साथ बितानेका निमन्त्रण दिया था। गांधीजीने यह पत्र उसीके उत्तरमें लिखा था।

२. काठियावाड राजनीतिक परिषद्।

३२७. पत्र : प्रभाशंकर पट्टणीको

मार्गशीर्ष सुदी ६ [२ दिसम्बर, १९२४][1]

सुज्ञ भाईश्री,

मैं यह पत्र आपको पंजाब जाते हुए गाड़ीमें लिख रहा हूँ। आपका पत्र मिला है। देशी राज्योंके बारेमें मैं कांग्रेसकी नीतिको स्पष्ट कर दूँगा। काठियावाड़ [राजनीतिक] परिषद्के पश्चात् मैं कुछ समय आपके आश्रयमें रहकर शान्ति-लाभकी आशा कर रहा हूँ।

मोहनदास गांधीके वन्देमातरम्

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ३१८२) से।
सौजन्य : महेश पट्टणी

३२८. पत्र : अब्बास तैयबजीको

गाड़ीमें
[२ दिसम्बर, १९२४]

भाई साहब,

आपका पत्र मिला। बीमार पड़नेका अधिकार केवल मुझे है, अन्य सेवकोंको बीमार न पड़ना चाहिए। उम्मीद है कि आपका पैर अब बिलकुल ठीक हो गया होगा। आपकी शिकायत समझता हूँ। मैं आपको कौंसिलमें जानेकी तकलीफ नहीं दूँगा। सबको मेरा वन्देमातरम्।

मोहनदास गांधीके वन्देमातरम्

गुजराती पत्र (एस० एन० ९५५०) की फोटो-नकलसे।

१. डाककी मुहरसे।

३२९. टिप्पणियाँ

बेलगाँवमें

मै चाहता हूँ कि कार्यकर्त्तागण यह समझ ले कि मै काग्रेसके आगामी अधिवेशनका वैसा ही सभापति होऊँगा जैसा कि एक कामकाजी आदमी एक कामकाजी सभाका सभापति होता है। काग्रेसका प्रदर्शनात्मक पहलू तो उसकी प्रदर्शनी तथा ऐसी ही अन्य चीजोमे दिखाई देगा। किन्तु यदि हम लोग सचमुच कुछ ठोस काम करना चाहते हैं तो हमें पहलेसे उसका एक कार्यक्रम ही बना लेना चाहिए और सबको उसमे शरीक होकर सहायता देनी चाहिए। यह तभी हो सकता है जब वे समझौतेको समझे, पसन्द करे और पूरे दिलसे मान ले। मुझे यह पसन्द नही है कि स्वराज्यवादी हो या अपरिवर्तनवादी, कोई भी इसे केवल अपनी वफादारीकी भावनाके कारण मान ले। यह समझौता दिखानेके लिए नही है। दूसरोपर असर डालनेके लिए नही, किन्तु अपने ही लोगोपर असर डालनेके लिए यह समझौता हुआ है। केवल ऊपरी मनसे मजूर करना तो कुछ न करनेसे भी बदतर होगा। मजूरीके साथ आन्तरिक विश्वास और सहयोगका होना आवश्यक है। कुछ स्वराज्यवादियोने सदस्यताकी शर्तको न बदलनेकी प्रार्थना की है। सिवा इसके मैंने स्वराज्यवादियोकी ओरसे अबतक इस समझौतेका कोई विरोध नही पाया है। किन्तु अपरिवर्तनवादी तो मुझपर बडे रोष और दु खके साथ अपनी नाराजगी प्रकट कर रहे हैं। जहाँतक मुझसे हो सकता है, मै इन पृष्ठोमे, स्थितिको समझानेका और शकाओके समाधानका प्रयत्न करता हूँ। तब भी मै यह जानता हूँ कि पूरी तौरसे खुलकर बाते करनेके समान ससारमे और कुछ भी नही है। अ० भा० काग्रेस कमेटीकी बैठकमें मैंने घटे-भरतक अपरिवर्तनवादियोसे बात की थी। पर उस एक घटेमे क्या होना था? इसलिए २० दिसम्बरका दिन, बेलगाँवमे अपरिवर्तनवादियोसे मिलकर विचार करनेके लिए अलग निकालकर रख देता हूँ। मै उस दिन सुबह बेलगाँवमे पहुँच जानेकी उम्मीद रखता हूँ। मैंने श्रीयुत गगाधरराव देशपाडेको लिखा है कि मेरे स्वागतमे किसी प्रकारकी धूमधाम न की जाये। इसमे समय नष्ट करना ठीक नही है। मै सभी अपरिवर्तनवादियोसे, जो चर्चामे भाग लेना चाहते है, इस खानगी सभामे आनेका अनुरोध करता हूँ। साथ ही मैं उन्हे इतना पहले बेलगाँवमें भीड लगा देनेसे रोकना भी चाहता हूँ। २६ ता० के पहले काग्रेसकी बैठक शुरू नही होगी। खिलाफत परिषद् भी २४ ता० से पहले शुरू नही होगी। नेशनल कन्वेशन भी इससे पहले न हो सकेगा। इसलिए मै यह उचित समझता हूँ कि हरएक प्रान्त अपने दो-दो, तीन-तीन प्रतिनिधि चुनकर भेजे जिन्हे और लोगोके भी विचारोकी पूरी जानकारी हो। २० तारीखको तीसरे पहरका सारा समय विचार-विनिमयके लिए दिया जा सकता है। यदि जरूरत पडी तो २१ तारीखको भी बहस चल सकती है। मै देशबन्धु दास और पण्डित मोतीलाल नेहरूसे स्वराज्य-

वादियोके साथ भी अपनी ऐसी चर्चाकी आवश्यकताके विषयमे पत्र-व्यवहार कर रहा हूँ। यदि वे उचित समझें तो मैं बड़ी खुशीसे २१ तारीखका एक हिस्सा केवल स्वराज्यवादियोंको ही दूँगा। जहाँतक प्रतिनिधियोकी उपस्थितिका सम्बन्ध है, मैं आशा करता हूँ, दोनो दलोंकी ओरसे पूरी-पूरी उपस्थिति होगी। क्योंकि जहाँतक स्वयं मेरा सम्बन्ध है, मै दलबन्दीके आधारपर बहुमत द्वारा तो कोई भी महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव पास कराना नही चाहता, किन्तु मैं प्रतिनिधियोके रुखको जरूर जान लेना चाहता हूँ। यदि वे केवल उपेक्षा और उदासीनताके कारण या त्रस्त होकर कांग्रेस अधिवेशनमे न आयेंगे तो वे अपने कर्त्तव्यके पालनमे चूकेंगे। जिसे राष्ट्रीय कार्यमें अपना समय देना नामजूर हो उसे प्रतिनिधि नही बनना चाहिए। जहाँतक मनुष्यके बसकी बात है, कांग्रेस अधिवेशनमे उपस्थित होना और अगले वर्षके लिए कांग्रेसकी नीति निर्धारित करनेमे सहायता देना उनका कर्त्तव्य है।

अडयारमें हाथ-कताई

पाठकोको मैडम डी मैंजियरली द्वारा डा० बेसेंटको लिखा गया पत्र और उसपर डा० बेसेंटकी टिप्पणी पढ़कर खुशी होगी। इसे मैं 'थियोसॉफिस्ट' के चालू अकसे नीचे उद्धृत कर रहा हूँ:[१]

विश्वासघात?

देशमे कुछ ऐसे लोग है जिन्हे देशकी नीतिमत्ताका ध्यान रहता है। यह एक शुभ चिह्न है। एक मित्र जो कि स्वय लिबरल दलवाले नही है, पूछते हैं कि अ० भा० कांग्रेस कमेटी द्वारा स्वराज्यवादियों और गांधीजीके बीच हुए समझौतेका स्वीकार किया जाना क्या सर्वदलीय परिषद्के साथ विश्वासघात नही है? मेरी नम्र रायमें इसका उत्तर है—'हरगिज नही'। क्योकि यह समझौता ही तो इस निमन्त्रणका आधार है। उसके पहले कांग्रेसके दोनों दलोंका मिल जाना आवश्यक था। जबतक कांग्रेसका अधिवेशन न हो तबतक अ० भा० का० कमेटी ही उस एकताको प्रदर्शित कर सकती है। जहाँतक कांग्रेसके दोनों दलोका सम्बन्ध है, यह समझौता अन्तिम है। पर किसी बाहरी दलके चाहनेपर इसका विरोध करने, यहाँतक कि पुनर्विचार तक करनेकी गुंजाइश है। उस विरोधका सफल होना तभी सम्भव है जब वह दोनों दलोंको युक्तियुक्त जँचे। किसी दलसे यह नही कहा जा रहा है कि एकताके नामपर वह अपने-अपने सिद्धान्तोंको छोड़ दे। अ० भा० का० कमेटी द्वारा पुष्ट किया गया समझौतेवाला प्रस्ताव ऐसा कोई आखिरी निर्णय नही है कि या तो यही मजूर कीजिए या कुछ भी नही। समझौतेके अतिरिक्त भी ऐसी कितनी ही बातें है जिनपर सभी दलोंको विचार करना पड़ेगा। कांग्रेसवालोसे यह आशा नही की जानी चाहिए कि वे

१. पत्र और टिप्पणी यहाँ नहीं दिये जा रहे हैं। मैडम डी मैंजियरलीने डा० बेसेंटको अपने पत्रमें सूचित किया था कि डा० बेसेंटकी अनुपस्थितिमें जब वे लन्दन गई हुई थीं, उन्होंने अड्यारमें कताई सीख ली है और उनकी देखा-देखी लोगोंने भी उसे सीखा है और अब वे आसपासके गाँवोंमें ग्रामोद्योगोंको बढ़ावा देनेका कार्यक्रम चला रही हैं।

अपने सिद्धान्तो व नीतिको सर्वदलीय परिषद्के निर्णयतक मुल्तवी रखेंगे। पर हाँ, उनसे यह उम्मीद जरूर की जाती है कि वे प्रत्येक प्रश्नपर बिना पहलेसे कोई धारणा बनाये खुले दिमागसे विचार करेंगे। उन्हे परिषद्मे प्रस्तुत प्रत्येक बातपर विचार करनेके लिए तैयार रहना है। इस बहुत ही जरूरी शर्तको मानकर सभी दलोंके लिए यह बेहतर होगा कि वे अपने सिद्धान्त, नीति तथा इरादोको जाहिर कर दें। मनमे किसी प्रकारका दुराव नही रहना चाहिए। समझौतेके प्रस्तावको स्वीकार किये बिना आगे बढना एक प्रकारका दुराव ही होता। हिन्दू-मुसलमानोमे अच्छा सम्बन्ध स्थापित करनेके लिए जिस सहिष्णुताके भावको पैदा करनेकी जरूरत है और जिसकी कोशिश भी की जा रही है, सहिष्णुताका वही भाव यहाँ भी हमारा लक्ष्य होना चाहिए। हमारे अन्दर गहरे मतभेदोके होते हुए भी यदि हम सबका ध्येय एक ही हो तो हमे मेल-जोलसे रहना और परस्पर आदरभाव रखना है। यह दुर्भाग्यकी बात होगी, लेकिन हो सकता है, हम लोगोको यह दिखाई दे कि हम सबका लक्ष्य एक नही है, स्वराज्यका कोई भी पहलू सबको एकसा मान्य नही है या हम सबके हित एक ही नही हैं। उस हालतमे मैं कहूँगा कि कांग्रेसके मचपर सभी दलोका एक होना असम्भव है। परन्तु इसका अर्थ यही होगा, मानो इस दरिद्र भारतके लिए स्वराज्य असम्भव है। क्योकि अन्तमे तो स्वराज्य प्राप्त होनेपर भी सभी दलोको एक ही स्वराज्य ससदमे काम करना पडेगा। कांग्रेसको ऐसी ससदका पूर्वरूप या नमूना बनाना ही हमारा हेतु है।

एक बड़ी चूक

पण्डित मोतीलालजी कहते हैं कि हालमे अ० भा० का० कमेटीकी बैठकमें दिये गये मेरे व्याख्यानकी[1] जो रिपोर्ट अखबारोमें छपी है उसमे एक आवश्यक अग छूट गया है। वह है स्वराज्यदलके अपनी सहायताके लिए प्रार्थना करनेके औचित्यपर प्रकट किये गये मेरे विचारोसे सम्बन्ध रखनेवाला अग। बेशक वह अग आवश्यक था और मैं उसका छपना जरूरी समझता था। इसलिए मैं खुशीसे उसका भाव यहाँ देता हूँ

> स्वराज्यवादियोको अपनी ताकत बढानेका, अपना सगठन करनेका तथा देशसे, जिसमे अपरिवर्तनवादी भी शामिल हैं, समर्थनकी अपील करनेका पूरा अधिकार है। यदि असहयोग स्थगित कर दिया गया और कांग्रेसमे स्वराज्यवादियोको भी वही दर्जा मिला जो कि अपरिवर्तनवादियोका है, तब तो अपरिवर्तनवादी ऐसे प्रचारका विरोध नही कर सकेंगे। अवश्य ही उस हालतमे ऐसा विरोध करना अनुचित होगा। मेरी समझमे असहयोगको स्थगित करनेका सही तात्पर्य यही होगा। इसका मतलब यह नही है कि कट्टर अपरिवर्तनवादी स्वराज्य दलमे मिल जायें। देशबन्धुने मुझे स्वराज्य दलमे शामिल हो जानेको कहा था और यह कहनेका उन्हे पूरा अधिकार भी था। मैंने उनसे कहा कि जबतक मुझे स्वराज्य दलके कार्यक्रममें विश्वास नही है, तबतक मैं स्वराज्यदलमे योग नही

१. देखिए "भाषण: अ० भा० कांग्रेस कमेटी, बम्बईमें", २३-११-१९२४।

दे सकता। मै बाहर रहकर ही उन्हे सहायता दे सकता हूँ। इसी प्रकार कोई भी सच्चा अपरिवर्तनवादी उन्हे योग नही दे सकता। परन्तु जो सिर्फ इसलिए अलग खडे है कि काग्रेसका कार्यक्रम उन्हे मना करता है, वे अपरिवर्तनवादियोकी ओरसे किसी तरहकी बाधाके बिना स्वराज्य दलमे मिल सकते है। अपरिवर्तनवादी विधान सभाओका जबानी विरोध नही कर सकते। बल्कि उनके द्वारा चरखेपर अविराम कार्य ही उनका सच्चा प्रचार-कार्य होगा। स्वराज्यवादियोके पास तो चरखा और विधान सभाएँ दोनो वस्तुएँ है, किन्तु अपरिवर्तनवादियोका अवलम्ब तो केवल चरखा ही है।

प्रागजी देसाई

यह पता चलनेपर कि श्री प्रागजी देसाई, जिन्हे सूरतके 'नवयुग' नामक पत्रके सम्पादकके नाते कुछ दिन हुए कठिन श्रमके साथ दो वर्षकी कैदकी सजा दी गई थी, कमजोर होते जा रहे है और उन्हे समुचित भोजन नही दिया जा रहा है, मैंने जेलके मुख्य अधीक्षकको पत्र लिखकर[1] श्री देसाईकी हालतके बारेमे पूछताछ की। उन्होने निम्नलिखित उत्तर दिया है

> मैंने श्री पी० के० देसाईके बारेमें लगाये गये आरोपोंकी जाँच की है।
>
> (१) यह सच है कि जेलमें दाखिलेके वक्त उनका वजन १३८ पौंड था और अब घटकर १२८ पौंड हो गया है। लेकिन चूँकि वे कुछ ज्यादा स्थूलकाय है, अतः इसे शिकायतका आधार मानना कठिन है। उनकी लम्बाईके आदमीका जो सामान्य वजन होना चाहिए उससे वे १७ पौंड ज्यादा हैं।
>
> (२) उन्हें शेष कैदियोंसे अलग नहीं रखा गया है। एक रातवाला कैदी चौकीदार सदा उनके साथ रहता है और दोनों साथ-साथ काम करते है। कैदियोंसे उनका फासला इतना है कि वे उन्हे देख सकते हैं।
>
> (३) सुपरिंटेंडेंट इस बातसे इनकार करता है कि कैदियोको नियमतः घासपात मिली और अखाद्य सब्जी खानेको दी जाती है। चूँकि हैदराबाद जेलमें एक बड़ा और बहुत अच्छा बाग है इसलिए ऐसा होनेका कोई कारण भी नहीं हो सकता।
>
> (४) उन्हें सख्त (सादी नहीं) कैदकी सजा दी गई थी इसलिए वे जेलमें क्या काम करेंगे इसका चुनाव करनेकी अनुमति उन्हे नहीं दी जा सकती।
>
> (५) हैदराबाद सेन्ट्रल जेलके वर्तमान मेडिकल अफसर भारतीय चिकित्सा सेवाके एक भारतीय अधिकारी है जिनपर सब कैदियोंके स्वास्थ्य और शारीरिक स्थितिकी आवश्यकतानुसार भोजनकी समुचित व्यवस्था करनेके मामलेमें पूरा

१. देखिए "पत्र: कर्नल मेलको", १३-११-१९२४।

भरोसा किया जा सकता है। उनके अनुसार श्री देसाई कमजोर या दुर्बल नहीं दिखाई पड़ते।

अन्तमें मैं कहना चाहूँगा कि तीन सप्ताह पहले मैंने हैदराबाद जेलका निरीक्षण किया था और उस अवसरपर श्री देसाईको भी देखा था। आपने जिन चीजोंका उल्लेख किया है उनमें से किसी बातकी शिकायत उन्होंने मुझसे नहीं की। उनकी एक ही प्रार्थना थी कि चूँकि हैदराबादकी जलवायु उन्हें अनुकूल नहीं पड़ रही है इसलिए उन्हे स्थानान्तरित कर दिया जाये। ऐसी कोई बात माननेका कारण नहीं था, इसलिए मैंने इसपर कोई कार्रवाई करना जरूरी नहीं माना।

यह बिलकुल सच है कि श्री देसाईने कोई शिकायत नही की, क्योकि उन्हे लगा कि सारे अधिकारी भारतीय है और उनके खिलाफ शिकायत नही करनी चाहिए। वे असुविधा सहन करना चाहते थे। मैं जानता था कि वे कठोर श्रमकी सजावाले कैदी है, लेकिन एक कठोर श्रमवाला कैदी भी ऐसा काम माँग सकता है जिसके लिए वह अधिक उपयुक्त हो। मुझे जेलोके वर्तमान मुख्य अधीक्षकको अच्छी तरह जाननेका सौभाग्य प्राप्त है, क्योकि वे मेरी कैदके आखिरी महीनोमें उसी जेलमें सुपरिंटेंडेंट थे। वे सख्त हैं, लेकिन न्याय-प्रिय और शान्त स्वभावके व्यक्ति हैं। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि श्री देसाईको अनावश्यक कष्ट नही झेलना पडेगा।

दक्षिण आफ्रिकामें भारतीय

नेटाल सरकार अभी भी भारतीय प्रवासियोके पीछे पडी हुई है। वह जैसे-तैसे किसी भी तरह परेशान करके उन्हे उस उपनिवेशसे भगा देनेपर तुली हुई है। इस सिलसिलेमे उन्होने हाल ही मे एक ऐसा कानून बनाया है जो अन्य चीजोके अलावा भारतीय करदाताओसे नगरपालिका-मताधिकार छीन लेता है। भारतीयोके विरुद्ध मताधिकारके दुरुपयोगका कोई आरोप कभी नही रहा है। यह माना जाता है कि वे नियम-पालक नागरिक हैं। लेकिन मशा तो उनको ऐसी अपमानजनक स्थितिमे डालनेका है कि आत्मसम्मानी भारतीयोके लिए नेटालमे रहना असम्भव हो जाये। हम यही आशा करते हैं कि पहलेकी भाँति गवर्नर जनरल इस अत्याचारी कानूनको स्वीकृति देना नामजूर कर देगे।

कताई क्लब

श्रीयुत नम्बूद्रीपादने मुझे त्रिचूरमे स्थापित एक कताई क्लबकी गतिविधियोका विवरण भेजा है। इतनी जल्दी इस क्लबकी गतिविधियोके बारेमे विश्वासपूर्वक कुछ कह सकना सम्भव नही है। लेकिन ऐसे क्लबोका सगठन अत्यन्त वाछनीय चीज है। ये क्लब लोगो द्वारा स्वेच्छा-प्रेरित कताईके विकासमें मदद दे सकते हैं और नौसिखियोके लिए तो सहायक ही सिद्ध होगे। त्रिचूर क्लबमे करीब २५ सदस्य हैं। ये समय-समयपर प्रतियोगिताएँ आयोजित करते हैं। प्रत्येक सदस्य अ० भा० खादी बोर्डके

लिए प्रति माह २,००० गज सूत कातनेको वचनबद्ध है। मैं आशा करता हूँ कि ऐसे क्लब सारे देशमें स्थापित किये जायेंगे।

शिक्षाके बारेमें बड़ो दादाके विचार

बड़ो दादाने 'यंग इंडिया' में प्रकाशनके लिए निम्नलिखित टिप्पणी मुझे भेजी है:

> १८ वीं शताब्दीके एक विख्यात अंग्रेज कविने कहा है:
>
> अल्प ज्ञान खतरनाक चीज है।
>
> इसमें मैं इतना और जोड़ता हूँ कि हमारे देशवासियोंमें जो शिक्षा फैल रही है वह अल्प ज्ञानसे भी बुरी है। भारतीयोंके हृदयमें जिस सच्चे ढंगका ज्ञान बसा हुआ है, वह तो ईश्वरका और प्राचीन कालके उन ऋषियोंका वरदान है जिन्होंने ईश्वरोपासनामें अपना सारा जीवन लगा दिया। यह ज्ञान सकारात्मक ज्ञान है, जबकि वर्तमान शिक्षा, जिसमें हृदयका सम्पूर्ण अभाव है, निषेधात्मक ज्ञान प्रदान करती है। निषेधात्मक ज्ञान प्राप्त करना सकारात्मक ज्ञानको खोनेके बराबर है -- १०० तो -- १ से भी सौगुना कम है। इसलिए वर्तमान भारतमें अत्यन्त उच्च आधुनिक शिक्षा प्राप्त कोई व्यक्ति भारत माताके उस सच्ची शिक्षा प्राप्त बेटेके मुकाबले वास्तवमें अज्ञानी ही है जिसने भले ही कभी स्कूल या कालेजकी ड्योढ़ी भी न लाँघी हो।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४-१२-१९२४

३३०. ध्वजको झुकाया तक नहीं

अपरिवर्तनवादियोंकी उलझन ज्योंकी-त्यों बनी हुई है। उनमें से कई अच्छेसे-अच्छे लोग, जिनकी सम्मति और सहकारिताको मैं अन्य सभी चीजोंसे अधिक मूल्यवान् समझता हूँ, किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो गये हैं। उन्हें लगता है कि मैंने एक ऐसे समझौतेके लिए जिसकी तुलना अनेक टुकड़ोंको जोड़कर तैयार की हुई चीजसे की जा सकती है, अपने जीवनव्यापी सिद्धान्तोंको छोड़ दिया है। इस आशयका एक पत्र मैं नीचे उद्धृत करता हूँ:

> अखबारी रिपोर्टके अनुसार आपने कहा है कि स्वराज्य दलवालोंके साथ लड़ाई करनेकी शक्तिके अभावमें आप फिलहाल धीरजसे काम ले रहे हैं और चुप बैठे हैं। परन्तु ऐसा क्यों? सत्य और अहिंसाका तकाजा तो यह है कि आप हम लोगोंको एकत्र रखकर, स्वराज्य दलके या कांग्रेसके बाहर हमारी पताका फहराते रहिए -- किसीके प्रति शत्रुभावसे नहीं, बल्कि जैसा कि हजरत मुहम्मदने किया था, उसी तरह। उनके अनुयायी घटते-घटते केवल तीन ही

रह गये थे और उन्हे सिर्फ परमात्माकी ही शक्तिका भरोसा करना पड़ा था। निस्सन्देह विपक्षियोसे हार मानने तथा उनकी सहायता करनेमें आपका तो व्यक्तिशः लाभ ही हैं, परन्तु हमारे कार्यको इससे बडी गहरी हानि पहुँचती है; क्योंकि आप तो असहयोगियोको संयुक्त रूपसे न तो अपनी ध्वजा फहराते रहनेके लिए कहते हैं और न फहराने ही देते हैं। अध्यात्म-प्रेमी कोई भी व्यक्ति ऐसी राजनीतिमें दिलचस्पी नहीं रख सकता, जो न तो सत्य और अहिंसाकी वृद्धि ही करती है और न उनसे पोषण ही ग्रहण करती है। कोई भी बनावटी एकता ईश्वरको आकर्षित नहीं कर सकती, क्योंकि ऐसी हालतमें किसी सरकारके साथ लड़ाई अधार्मिक हो जाती है। इसके अलावा स्वराज्य दलवालोकी अमलदारीमें आतुर आदर्शवादियोकी हिंसात्मक प्रवृत्तियोको शुद्ध करनेके लिए ऐसी कोई शक्ति नही रह जायेगी, जैसी कि आपके उच्च नैतिक आदर्शवादकी और धर्मकी भावनासे प्रेरित प्रयत्नकी अमलदारीमें थी। अब तो उन्हे [असहयोगियोको] निरी निष्फलता तथा पूर्ण निराशाका ही मुकाबला करना होगा।

इन मित्रके विचार बहुत-से असहयोगियोके विचारोका प्रतिनिधित्व करते हैं। वे खुद भी इस आन्दोलनकी ओर इसकी धार्मिकताके ही कारण झुके थे। इसलिए मैंने उनके इस सन्देशको बार-बार गौरसे पढा है। लेकिन मेरा खयाल है कि उन्होने अपनी यह राय, मेरे भाषणोको मनमाने तौरपर काट-छाँटकर तैयार की गई और अकसर गलत रिपोर्टोंपर ही कायम की है और यही मेरे लिए आशाप्रद बात है। वे खुद परिषद्में उपस्थित न थे। वे बम्बईमे भी नही थे। किसी हलचलकी गतिविधिको केवल अखबारोके विवरणके आधारपर समझ लेना अत्यन्त कठिन है। मैंने वह रिपोर्ट नही देखी जिसका जिक्र मित्र महाशयने किया है। "स्वराज्य दलके साथ लडने" की बातका अर्थ, यदि इन शब्दोको उनके सदर्भसे विच्छिन्न कर दिया जाये तो मेरे अभीष्ट आशयसे उलटा भी लगाया जा सकता है। अब मैं इसका खुलासा किये देता हूँ। मेरा मतलब यह है कि यदि स्वराज्य दलवालोको मेरे विचारोके सम्बन्धमें गलतफहमी है, यदि अपरिवर्तनवादी अहिंसाकी लडाई, जिसके मूलमे ही विनयकी भावना पडी हुई है, जिस भावसे छेडी जा सकती है, उसे समझ नही पाते, यदि सरकार इस लडाईका ऐसा लाभ उठाती है जिसका मैंने विचार भी नही किया है या यदि ऐसे सग्रामके लिए आवश्यक वायुमण्डलका अभाव है तो जाहिर है कि मैं स्वराज्य दलवालोसे लड नही सकता। पर वास्तवमे हुआ ऐसा है कि ये सब बाते थोडी या बहुत हमारे सामने हैं। इसके सिवा यह भी याद रखना चाहिए कि मेरे नजदीक अपने कार्यकी सुरक्षा सख्या-बलपर कभी अवलम्बित नही रही है। मेरी योजनाओके जल्दी कार्यरूपमें परिणत किये जानेके रास्तेमें शायद मेरी यह मानी जानेवाली सर्वप्रियता ही सबसे बडी बाधा होती आई है। जिन लोगोने बम्बई और चौरीचौराके दगोमे भाग लिया था, यदि वे मेरे लिए बिलकुल अजनबी होते और उन्होने अपनेको अहिसाका हामी न बतलाया होता तो मुझे इन दोनोंमे किसीके

लिए भी प्रायश्चित्त न करना पड़ता। इसलिए जबतक लोगोकी भीड़ मेरी ओर दौड-दौड़कर आती रहती है तबतक मुझे अवश्य अपने कदम बहुत सावधानीसे उठाने होगे। एक बडी सेनाको साथ रखकर सेनापति उतनी तेजीसे कूच नही कर सकता जितना वह चाहता है। उसे अपनी सेनाके भिन्न-भिन्न अगोका खयाल रखना ही पड़ता है। मेरी स्थिति ऐसे सेनापतिकी स्थितिसे बहुत भिन्न नही है। यह कोई अच्छी स्थिति नही है, परन्तु यह है ऐसी ही। अकसर यह स्थिति ताकत देनेवाली होती है। परन्तु कभी-कभी तो यह स्पष्टत बाधक हो जाती है। "स्वराज्य दलवालोके साथ अभी लडाई करनेकी शक्तिके अभाव" से मेरा जो तात्पर्य था, शायद वह अब स्पष्ट हो गया होगा।

मैंने किसी तरह भी असहयोगकी "ध्वजाको कभी नीचा नही किया है"। मैंने तो उसे तनिक भी झुकायातक नही है, क्योकि किसी भी असहयोगीको यह नही कहा गया कि वह अपने उसूलसे हटे। ससारके बडे पैगम्बरो या धर्म-प्रचारकोका उदाहरण पेश करनेमे सर्वदा जोखिम रहती है। इस ससारमे, "चतुर्दिक् अन्धकारके बीच", मै प्रकाशकी ओर जानेका रास्ता टटोल रहा हूँ। अकसर मै भूल करता हूँ और मेरे अनुमान गलत हो जाते है। लेकिन चूँकि इस सम्बन्धमे पैगम्बर साहबका नाम लिया गया है, इसलिए पूरी नम्रताके साथ मै कहना चाहता हूँ कि मै भी अपने लिए यह आशा करता हूँ कि यदि दो ही मनुष्य मेरे साथी रह जाये या कोई भी न रहे तो उस हालतमे भी मै कच्चा नही निकलूँगा। ईश्वरपर ही तो मेरा कुल भरोसा है। और मै मनुष्योपर भी इसीलिए भरोसा रखता हूँ कि ईश्वरपर मेरा पूरा भरोसा है। यदि मुझे ईश्वरका सहारा न होता तो मै [शेक्सपियर द्वारा वर्णित एथेन्सके] टिमनकी तरह मनुष्य-जातिसे घृणा करने लगता। लेकिन यदि बडे-बडे धर्म-प्रचारकोके जीवनसे हम कुछ शिक्षा ग्रहण करना चाहते है तो हम लोगोको यह भी याद रखना चाहिए कि हजरत मुहम्मदने उन लोगोके साथ सधि की थी जिनसे उनका मत बहुत ही कम मिलता था और 'कुरानशरीफ' मे जिनका वर्णन बहुत ही निन्दापूर्ण शब्दोमे किया गया है। असहयोग, हिजरत, प्रतिरोध और हिंसातक भी हजरत मुहम्मदके उनके अपने जीवन-सग्रामके भिन्न-भिन्न रूप थे, जिसका सर्वस्व सत्य ही था।

ये मित्र ऐसा मानते मालूम होते है कि एक व्यक्तिको तो आध्यात्मिक लाभ हो सकता है पर उसके आसपासवालोको हानि। मै यह बात नही मानता। मै अद्वैतमे विश्वास करता हूँ, मै मनुष्यकी मूलभूत एकतामे भी और केवल मनुष्योकी ही क्यो सभी जीवधारियोकी एकतामे विश्वास करता हूँ। इस कारण मेरा तो ऐसा यकीन है कि एक मनुष्यके आध्यात्मिक लाभके साथ सारी दुनियाका लाभ होता है। उसी तरह एक मनुष्यके अध पतनके साथ इस हदतक सारे ससारकी अधोगति होती है। गरज यह कि अपने प्रतिपक्षियोकी सहायता करके मै साथ-ही-साथ अपनी और अपने असहयोगियोकी सहायता भी करता ही हूँ। मैने किसी भी पक्के असहयोगीको यह नही कहा है कि वे व्यक्तिश या सयुक्त रूपसे, अपनी पताका न फहराये।

उलटे, मैं तो उनसे ऐसी ही उम्मीद रखता हूँ कि वे हर तरहकी दिक्कतोंके रहते हुए भी अपनी ध्वजाको पूरी ऊँचाईपर फहराते रहेंगे। परन्तु इसका यह मतलब नही है कि राष्ट्रका या काग्रेसका असहयोग जारी है। यदि हम वास्तविकताकी उपेक्षा नही करना चाहते है तो हमे यह मानना होगा कि राष्ट्र या काग्रेस जहाँतक वह राष्ट्रकी प्रतिनिधि है, असहयोगके कार्यक्रमपर अमल नही कर रही है। इसलिए असहयोगको कुछ व्यक्तियोतक ही परिमित रहना पड़ेगा। असहयोगी वकील, उपाधि छोडनेवाले, पुराने शिक्षक और असहयोगी विधान सभासद, ये सभी पूर्ण रूपसे असहयोगी रहते हुए भी काग्रेसमे रह सकते है। कताई और खादीका प्रचार, उनका अपना विशेष कार्यक्रम रहेगा। इन दोनोको अभी काग्रेसने छोडा नही है। इस मामलेमें जहाँतक यह काम उनके विश्वाससे सगत है, स्वराज्य दलवाले अपरिवर्तनवादियोको खूबीके साथ पूरी तरह अपना रहे हैं। अपरिवर्तनवादियोकी तरह वे विदेशी कपडोंको जल्दीसे-जल्दी हटानेके लिए, सबके द्वारा कताईकी बातको आवश्यक नही समझते। फिर भी अपरिवर्तनवादियोका या चाहे तो यो कहिए कि मेरा सहयोग लेनेके लिए उन्होंने यह देखकर कि सिद्धान्तत वे कताईके खिलाफ नही है, सदस्यताकी शर्तोंमे इसको शामिल करना मजूर किया है। यहाँ यह याद रखना अच्छा होगा कि कताई-को सदस्यताकी शर्तोंमे शामिल करना एक असाधारण बात है। स्वय उत्साही कातने-वाले होनेपर भी श्री स्टोक्सके समान सिद्धान्तवादी मनुष्य भी इसका दिलोजानसे विरोध करते है। हमारे कितने ही प्रख्यात देशवासी इसकी हँसी उडाते हैं। तब तो स्वराज्य दलवालोका इसे स्वीकार करना कोई मामूली बात नही है। इसलिए यदि वे अपनी बातोके पक्के निकले (और इसमें सन्देह करनेका मेरे पास कोई कारण नही है) तो असहयोगियोको किसी अलग सगठनकी जरूरत नही रह जाती। अपरि-वर्तनवादियोको कौंसिलोंके कार्योंमे योग देनेकी आवश्यकता नही और उनके लिए यह उचित भी नही है। इसलिए कौंसिलो-सम्बन्धी कार्यक्रमका पूरा अधिकार और फलत उसकी पूरी जिम्मेदारी स्वराज्य दलवालोपर ही है। इसके लिए काग्रेसके नामका व्यवहार करनेका उन्हे पूरा अधिकार होगा, पर वे उसमे अपरिवर्तनवादियोके नामका उपयोग नही करेंगे। काग्रेस अब एक सयुक्त सगठन होगा जिसकी कुछ बातोंकी जिम्मेदारी सयुक्त ही रहेगी और उसके कुछ खास-खास काम दल-विशेषको दिये जायेंगे।

यदि एकता, अछूतोद्धार और चरखा, ये इस देशकी राजनीतिके अग है तो अपरिवर्तनवादियोको जितना सत्य, जितनी अहिंसा और जितनी आध्यात्मिकता चाहिए वह सब उन्हे इनमे मिल ही जाती है। सरकारके साथ अपरिवर्तनवादीकी लडाईका रूप मुख्यत यही है कि वह अपनेको शुद्ध करके अपनी शक्तिका विकास करे। लेकिन उसे अपने किसी भी कार्यसे स्वराज्यवादियोकी शक्तिको किसी भी प्रकार आघात नही पहुँचाना चाहिए, बल्कि उसे तो स्वराज्यवादियोको अपनी ही तरह ईमानदार समझना चाहिए। औरोको हटाकर अपने ही अन्दर शुद्धताका अभिमान करनेमें अपरि-वर्तनवादियोको सबसे पीछे रहना चाहिए। यदि मान भी लिया जाये कि स्वराज्य-

वादियोकी कार्य-प्रणाली बुरी है तो भी उन्हे इस तरह काम नही करना चाहिए, मानो आधुनिक शासन-प्रणाली उससे बहुत ज्यादा खराब नही है। अहिंसामे विश्वास रखनेवाले व्यक्तिको भी यह तो कहना ही पडता है कि किन्ही दो प्रतिस्पर्धियोमे से कौन कम बुरा है और किसका पक्ष न्याययुक्त है। जापान और रूसके दरम्यान टाल्स्टायने अपना फैसला जापानके पक्षमे दिया था। इग्लैंड और डच दक्षिण आफ्रिकाके दरम्यान डब्ल्यू० टी० स्टेडने[1] बोअरोका साथ दिया था और इग्लैंडकी पराजयके लिए ईश्वरसे प्रार्थना की थी। इसी तरह स्वराज्यवादियो और सरकारके बीच, मुझे अपनी राय कायम करनेमे एक क्षण की भी देर नही लग सकती। स्वराज्यवादियोने हमारे १९२० वाले कार्यक्रमके खिलाफ बगावत की थी, इसलिए उनके सम्बन्धमे हमारी धारणाके कलुषित हो जानेका खतरा है। अच्छा, थोडी देरके लिए मान लीजिए कि स्वराज्यवादी वाकई वैसे बुरे है जैसा कि सरकार हमे जँचाना चाहती है तो भी उनकी सरकार मौजूदा सरकारसे लाखो दरजे अच्छी रहेगी, क्योकि इस सरकारके पास तो आचारकी स्वतन्त्रता या वास्तविक प्रतिकारके बिलकुल ही स्वल्प यत्नको भी कुचलनेके अनन्त साधन तैयार रखे हुए है। मै किसी बनावटी एकताको अपना लक्ष्य नही बना रहा हूँ। मै तो सिर्फ यही चाह रहा हूँ कि काग्रेसमे तमाम दलोके प्रतिनिधि रहे जिससे कि हम एक-दूसरेकी रायको बरदाश्त करना सीखें, एक-दूसरेको अच्छी तरह समझ सके, एक-दूसरेपर अपने कामोका असर डाल सके और यदि हम सबके लिए किसी एक ही कार्यविधिकी तजवीज न कर सके तो कमसे-कम एक सर्वमान्य स्वराज्यकी योजना तो तैयार कर सके।

हाँ, मै इन मित्रकी आखिरी बातोसे जरूर सहमत हूँ। निस्सन्देह कौंसिलोका कार्यक्रम आतुर आदर्शवादियोको उनके दुष्कृत्योसे दूर नही रख सकता। यह शक्ति तो केवल अहिंसात्मक असहयोगमे ही है, क्योकि वह स्वार्थ-त्यागके उच्चसे-उच्च भावको जाग्रत करता है और यह त्यागभाव ही उन्हे उनके मार्गकी भूलोसे बचा सकता है। मै प्रतिज्ञाके साथ कहता हूँ कि मैने ऐसा कोई काम नही किया है जिससे किसी पक्के असहयोगीकी ताकत कम हो जाये। मैने तो अपने ही साथ-साथ उनको भी आँचमे तपाया है। जरा वे निर्मल प्रेमकी बलिवेदीपर पूरी शक्ति-भर अपना बलिदान तो करे, फिर देखे कि सारी काग्रेस एक मनसे उनका अनुसरण करती है या नही। पर ऐसा प्रेम अपना काम अदृश्य रूपसे ही किया करता है। जो शक्ति जितनी ही उत्तम होती है, उतनी ही वह सूक्ष्म और निःशब्द होती है। प्रेम ही ससारमें सबसे अधिक सूक्ष्म शक्ति है। यदि असहयोगीके पास वह शक्ति है तो यह उसके तथा औरोके लिए अच्छा ही है।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४-१२-१९२४

१. प्रसिद्ध अंग्रेज पत्रकार; ग्रेट ब्रिटेनमें शान्ति-आन्दोलनके एक उत्साही समर्थक।

३३१. स्थगित करें या त्याग दें?

असहयोग स्थगित किया जाये या त्याग दिया जाये, इस प्रश्नका उत्तर पूर्णत उत्तर देनेवालेकी मन स्थितिपर निर्भर है। जिसका असहयोगमें कभी विश्वास नही रहा वह तो स्वभावत यही चाहता है कि उसे सदाके लिए त्याग दिया जाये। जिसका मेरी तरह उसमे सदा विश्वास रहा है और जिसने उसपर जब कभी और जहाँ कही आवश्यकता हुई उसका आचरण किया है और इसलिए जो उसपर आरूढ है, वह तो कठिनाईसे ही केवल उसको स्थगित करनेके लिए राजी किया जा सकता है और निश्चय ही वह ऐसा करनेके लिए इस आशासे ही राजी होगा कि कभी-न-कभी वह सन्देह या अविश्वास करनेवालोंको अपने पक्षमे ला सकेगा और इस कार्यक्रमको राष्ट्रीय रूपमे अमलमे लाकर सफल बना सकेगा। इसलिए असहयोगका स्थगन ऐसी तटस्थताकी अवस्था है जिसको सभी दल स्वीकार कर सकते है। जो लोग अहिंसात्मक असहयोगकी शक्ति और आवश्यकतामे विश्वास करते है उनको यह आशा रखनेकी छूट होनी चाहिए कि यदि इस कार्यक्रमको अवसर आनेपर फिर हाथमे लेनेकी आवश्यकता हुई तो राष्ट्र इसपर फिर अमल करेगा और जिनका इसमें विश्वास नही है वे स्थगनकी इस अवधिमे, इसमे जो दोष मानते है उनका प्रचार करनेके लिए और कांग्रेसजनोसे अपने विचारोको मनवानेके लिए स्वतन्त्र होंगे। असहयोगके स्थगित होनेसे उन्हे यह एक बढिया अवसर मिलता है। मेरी राय तो यह है कि जो कांग्रेस पूरी असहयोगी रही है वह असहयोगको स्थगित करनेसे आगे जा भी नही सकती, उससे ऐसी आशा नही की जा सकती। मैं 'पूरी असहयोगी कांग्रेस' इसलिए कहता हूँ कि स्वराज्यवादी भी असहयोगमे विश्वास रखनेका दावा करते है। यदि यह कोई रहस्य हो तो मैं आपको एक रहस्य बताता हूँ। अबसे तीन महीने पहले जो पहला मसविदा तैयार किया गया था उसकी भूमिकामें असहयोगमे पुन विश्वास प्रकट किया गया था। वह भूमिका स्वराज्यवादियोको पूरी तरह मान्य थी। किन्तु वह पीछे सबकी सलाहसे इसलिए निकाल दी गई कि नरम दलवालो और दूसरे लोगोको कार्यक्रममे शामिल होनेमे आसानी हो जाये। कुछ मित्रोंने यह कहा था कि नरमदलीय और राष्ट्रीय होमरूलवादी उस भूमिकाके पक्षमें मत देनेमें आनाकानी कर सकते है। असलमें समझौतेका अन्तिम मसविदा तैयार करनेमें भाग लेनेवाले सभी लोगोंने इस बातकी विशेष सावधानी रखी थी कि जो लोग कांग्रेससे बाहर रहे है उनकी जरूरतें समझ ली जायें और पूरी की जायें। मैं जानता हूँ कि ऐसा होनेपर भी समझौतेसे विभिन्न राजनीतिक दलो और समुदायोको पूरा सन्तोष नही मिलता है। इस दोषका कारण यह नही है कि इसको दूर करनेका उद्योग नही किया गया या दूर करनेकी इच्छा नही थी, बल्कि इसका कारण यह है कि स्वराज्यवादियोको और मुझे अपने-अपने सिद्धान्तोका अथवा इसकी अपेक्षा मर्यादा शब्द अधिक अच्छा प्रतीत हो तो अपनी मर्यादाओका, ध्यान रखना पड़ा था।

इसके अतिरिक्त हमे कांग्रेसके बहुसंख्यक निर्वाचकोका ध्यान भी था। इस तथ्यको मै जितना दुहराऊँ उतना ही कम है। यह सच है कि कांग्रेसके निर्वाचकोने अभी तक अपनी बातका, जब उन्हे करना चाहिए था तब भी, विशेष आग्रह नही किया है। किन्तु मैंने यह देखा है कि नेताओके विरोधी प्रयत्नोके बावजूद वे कभी-कभी अपनी बातपर जोर दे सकते हैं। हम सबको इन्ही निर्वाचकोपर अपना प्रभाव डालना है और इन्हीके प्रभावमे रहकर काम करना है। मेरी रायमे समझौतेके उपाय ढूंढनेमे यदि प्रत्येक दल मिलकर काम करना चाहता है तो उसे अपनी माँग उतनी ही रखनी चाहिए जिससे उसकी अन्तरात्माको सन्तोष-भर हो जाये, उससे तनिक भी अधिक नही।

आखिर बिना किसी कारणके कोई भी असहयोग नही करना चाहता। स्वतन्त्रताकी तुलनामे कारागार कोई पसन्द नही करता। किन्तु जब स्वतन्त्रता जोखिममे हो तब असहयोग कर्त्तव्य बन सकता है और कारागार महल। जो लोग हर हालतमे असहयोगसे बचना चाहते है उन सबका यह कर्त्तव्य है कि वे असहयोगियोके लिए असहयोगका आश्रय लेना अनावश्यक बना दे। इसका एक सर्वोत्तम उपाय यह है कि सब दल एक हो जाये, सब दल स्वराज्यकी एक मान्य योजना तैयार करे और साथ ही यदि सम्भव हो तो उस योजनाको अमलमे लानेका कोई स्वीकार्य तरीका भी ढूंढ निकाले।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४-१२-१९२४

३३२. राजद्रोहात्मक किसे कहें?

अध्यापक रामदास गौड़की पोथियोमे जो-कुछ अन्य प्रचलित पुस्तकोमें है, उसके सिवा और कुछ नही है, यह मानकर भी इलाहाबाद हाईकोर्टने उन्हे राजद्रोहात्मक कहा है। मुद्दईको उनसे ३००) खर्च भी दिलाया जायेगा। वे पोथियाँ छपनेके ३ वर्ष बाद जब्त की गई है। मै इतना तो मानता हूँ कि केवल समय बीत जानेके कारण सदोष वस्तु निर्दोष नही हो जाती है। किन्तु यह पूछना भी तो अनुचित नही है कि सरकारने इस दोषको इतने दिनोतक क्यो चलने दिया? यह अनुमान अनुचित नही है कि सरकारने ऐसा समय चुना है जब कि असहयोग उतारपर है। अब विचारणीय प्रश्न यह है कि इस स्थितिमे अध्यापक रामदास गौड़ व वे माता-पिता या पाठशालाएँ जो उन पोथियोका व्यवहार करते है, क्या करे? इस प्रश्नका उत्तर देना आसान नही है। हम लोग असहयोग मुल्तवी करने जा रहे है और इस कारण सविनय अवज्ञा भी। इसलिए अब इस तरहके काम कांग्रेससे नैतिक समर्थन नही पा सकते। प्रत्येक व्यक्ति या संस्था अपने दायित्वपर ही कुछ कर सकती है। फैसलेमे पोथियोके उद्धृत अशोके तीन भाग किये गये है:

(१) वे अंश जो सरकारके प्रति द्वेष उत्पन्न करानेवाले कहे जाते है।

(२) वे अंश जो पश्चिमी सभ्यता और इसलिए यूरोपीयोंके प्रति द्वेष उत्पन्न करानेवाले कहे जाते है।

(३) वे अंश जो भिन्न-भिन्न धर्मावलम्बी मनुष्योंके प्रति द्वेष उत्पन्न करानेवाले कहे जाते है।

प्रथम तो मै यह कहूँगा कि पूर्वापर सम्बन्ध तोडकर जहाँ-तहाँसे उद्धृत अंशोंके सहारे कोई भी पुस्तक आपत्तिजनक ठहराई जा सकती है। जहाँतक मुझे मालूम है जजोंको इसके सिवा और प्रकारका मसाला नही मिला था। दूसरे यों तो प्राय प्रत्येक भारतीय समाचारपत्र राजद्रोही कहा जा सकता है, क्योंकि वे कानूनके द्वारा स्थापित सरकारके प्रति (पद्धतिके प्रति, मनुष्योंके प्रति नही) अप्रीतिका प्रचार करते है। प्राय प्रत्येक भारतवासीने इस सरकारके खिलाफ अपनी आवाज उठाई है और वे या तो उसे सुधारना चाहते है या मिटा ही देना चाहते है। जहाँतक पश्चिमी सभ्यताका सम्बन्ध है, हिन्दू-धर्मग्रन्थोंमे से ऐसे अनेक वचन पेश किये जा सकते है जिनमें आधुनिक जीवन-पद्धतिकी अत्यन्त कठोर आलोचना और निन्दा की गई है। मेरी पुस्तिका, जिसमे से पश्चिमी सभ्यता-सम्बन्धी अंश उद्धृत किये गये है, लडकोंको बेधडक दी जाती है। सम्भव है कि मुझसे निन्दा करनेमे भूल हुई हो। किन्तु मेरी यह पुस्तिका जातिके प्रति घृणाका प्रचार करनेके लिए नही, बल्कि प्राणिमात्रके प्रति प्रेम पैदा करनेके लिए लिखी गई थी। मै ऐसा एक भी उदाहरण नही जानता कि एक भी आदमीपर उसके पढनेसे बुरा असर हुआ हो। देश, विदेश सभी जगह बहुत-सी भाषाओंमे उसके अनुवाद हुए है। बम्बई सरकारने एक बार उसे जब्त कर लिया था।[1] अब वह जब्ती, व्यवहारमे हट गई है। यह तो आश्चर्यजनक है कि अध्यापक रामदास गौडको तो सजा हो और मै अछूता ही छोड दिया जाऊँ। तीसरे आरोपके अर्थात् विभिन्न धर्मावलम्बियोंके बीच विद्वेष पैदा करनेके समर्थनमें तो केवल एक ही उद्धरण पेश किया है। मुझे उसके सन्दर्भका पता नही। लेकिन यह तो स्पष्ट है कि केवल उस एक अंशके लिए पोथियाँ जब्त नही हुई है। मै जानता हूँ कि अध्यापक महोदयकी अन्तरात्मा शुद्ध है। उनका हेतु किसी भी व्यक्तिके प्रति द्वेषकी भावना उत्पन्न कराना नही है। मै यह भी जानता हूँ कि पुस्तकोंकी बिक्रीसे उन्होंने कोई लाभ नही उठाया है। यदि मै उनके स्थानमें होता तो पुस्तकोंकी बिक्री यथावत् जारी रहने देता। सरकारने उनकी तमाम बची हुई प्रतियाँ तो अवश्य ही जब्त कर ली होंगी। किन्तु जहाँ वे पोथियाँ पहलेसे ही पढाई जा रही है, वहाँ मै तो उन्हे वैसे ही पढाने देता, जबतक कि लडकोंके माता-पिता या पाठशालाओंके सचालक कोई दूसरा निश्चय न जाहिर करते।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४-१२-१९२४

१. यह संकेत हिन्द स्वराज्यकी ओर है। देखिए खण्ड १०, पृष्ठ १९४-९५।

३३३. फीजीकी वह रिपोर्ट

सम्पादक
'यंग इंडिया'
महोदय,

लगभग तीन वर्ष पहले भारत सरकारने एक आयोग फीजी द्वीपसमूहका भेजा था जिसका उद्देश्य वहाँ रहनेवाले भारतीयोंकी दशाकी जाँच करना . . . था। कमीशन . . . ने सितम्बर १९२२ में अपनी जाँचकी रिपोर्ट भारत-सरकारको दे दी। अतः भारत-सरकारको इस रिपोर्टको मिले दो वर्षसे ऊपर हो चुके हैं। केन्द्रीय विधान सभाके पिछले अधिवेशनमें श्री गयाप्रसाद सिन्हाने इस रिपोर्टके बारेमें भारत-सरकारसे कुछ प्रश्न किये। उनमें से तीन ये थे:

(ग) भारत-सरकार इस रिपोर्टको कब प्रकाशित करनेका इरादा रखती है।

(घ) क्या यह सही है कि औपनिवेशिक कार्यालयने रिपोर्टमें प्रकट किये गये कुछ विचारोंके खिलाफ आपत्ति उठाई है?

(ङ) क्या सरकार इस विषयपर भारत-सरकार और औपनिवेशिक कार्यालयके बीच जो पत्र-व्यवहार हुआ है उसे पटलपर रखनेकी कृपा करेगी?

श्री जे० डब्ल्यू० भोरने सरकारकी ओरसे उत्तर दिया:

(ग) रिपोर्टके प्रकाशनका सवाल विचाराधीन है।

(घ) और (ङ) इन प्रश्नोंके जवाबके लिए प्रश्न (ग) के उत्तरको ध्यानमें रखते हुए माननीय सदस्य जोर नहीं देंगे, मैं ऐसी आशा करता हूँ।

श्री भोर द्वारा श्री गयाप्रसाद सिन्हासे . . . उत्तरके लिए जोर न देनेके अनुरोधसे हमारे मनमें सन्देह पैदा होता है।

. . . भारतीय जनताको यह माँग करनेका अधिकार है कि आयोगकी रिपोर्ट अविलम्ब प्रकाशित की जाये।

आपका,
बनारसीदास चतुर्वेदी[1]

मैं आशा करता हूँ कि श्री सिन्हाको विधान सभाकी आगामी बैठकमें अपने प्रयत्नमें अधिक सफलता मिलेगी।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ४-१२-१९२४

१. श्री बनारसीदास चतुर्वेदीके इस पत्रके कुछ अंश छोड़ दिये गये हैं।

३३४. पत्र : कर्नल मरेको

स्थायी पता :
साबरमती
[४ दिसम्बर, १९२४ के आसपास][1]

प्रिय कर्नल मरे,[2]

श्री पी० के० देसाईके सम्बन्धमें आपके उत्तरके लिए धन्यवाद। मैं जानता हूँ कि उन्होंने आपसे शिकायत नहीं की थी क्योंकि वे उन सरकारी अधिकारियोंके बारेमें कुछ नहीं कहना चाहते थे जो भारतीय हैं। मुझे ज्ञात था कि श्री देसाई कठोर श्रमकी सजा पाये हुए कैदी हैं। लेकिन मैंने सोचा कि जैसा यरवदामें था, आप उन्हें चरखेपर सूत बटनेकी नहीं लेकिन सूत कातनेकी इजाजत देनेमें आपत्ति नहीं करेंगे।

मेरे स्वास्थ्यके बारेमें आपकी पूछताछके लिए आपको धन्यवाद। कर्नल मैडॉक द्वारा अत्यन्त सफल ऑपरेशन किये जानेके बाद मैं बिलकुल ठीक हो गया दिखता हूँ।

मुझे नहीं मालूम था कि कर्नल मेल सेवा-निवृत्त हो चुके हैं।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ११७२९) की फोटो-नकलसे।

३३५. क्या अस्पृश्यताका बचाव हो सकता है?[3]

[५ दिसम्बर, १९२४][4]

मेरी रायमें श्री एन्ड्र्यूजने बाबू कालीशंकर चक्रवर्तीके साथ बहुत लिहाज बरता है। यह ठीक है कि बंगालमें अस्पृश्योंकी दशाके मुकाबले दक्षिणके अस्पृश्योंकी दशा कहीं ज्यादा खराब है, लेकिन बंगालमें भी वह काफी खराब है और उसका कोई बचाव नहीं हो सकता। अस्पृश्यताका बचाव करनेवालोंकी अपेक्षा नामशूद्र लोग अस्पृश्यताके दुष्परिणामोंके बारेमें ज्यादा अधिकारपूर्वक कह सकते हैं। हमें अंग्रेज शासकोंसे यह

१. कर्नल मरेका पत्र, जिसके जवाबमें यह पत्र लिखा गया था, ४-१२-१९२४ के *यंग इंडिया*में छपा था। देखिए "टिप्पणियाँ", ४-१२-१९२४, उप-शीर्षक "प्रागजी देसाई"।

२. जेलोंके प्रधान अधीक्षक।

३. सी० एफ० एन्ड्र्यूज द्वारा इस शीर्षकसे लिखे लेखको यहाँ नहीं दिया जा रहा है। उस लेखमें श्री एन्ड्र्यूजने बाबू कालीशंकर द्वारा अस्पृश्यताके बचावमें लिखे एक पत्रका जवाब दिया था। गांधीजीने श्री एन्ड्र्यूजके उसी लेखपर अपनी उक्त टिप्पणी दी है। बाबू कालीशंकरने अस्पृश्यताकी तुलना अहिंसक असहयोगसे करके उसका बचाव करनेकी कोशिश की थी।

४. देखिए "पत्र : सी० एफ० एन्ड्र्यूजको", ५-१२-१९२४।

सीधा-सादा तथ्य सीख लेना चाहिए कि अत्याचारी लोगोको अपने कुकृत्योकी निर्दयताका कोई भान नही होता। हिन्दू-धर्मकी अस्पृश्यता तो शायद आधुनिक साम्राज्यवादियोकी अस्पृश्यतासे भी खराब है। हमने उसे जिस कडाईसे वशानुगत बना दिया है, वह उसके साम्राज्यवादी सस्करणमे अभी नही दिखाई पडती। अच्छा हो यदि बाबू कालीशकर कृपया याद रखे कि अग्रेज साम्राज्यवादी अपनी अस्पृश्यताके लिए वही बचाव पेश करते है जो हिन्दुओमे विद्यमान अस्पृश्यताके लिए वे स्वय करते है। इसलिए ज्यादा अच्छा रास्ता यही है कि इन दोनोमे कौन ज्यादा खराब है, यह पता चलानेके बजाय हम अपनी प्रथाकी बुराईको माने और उसका उन्मूलन करनेका प्रयत्न करे।

[अग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ११-१२-१९२४

३३६. केनियाके हैरी थुकू[1]

[५ दिसम्बर, १९२४][2]

बेचारा हैरी थुकू! श्री एन्ड्रयूजको प्रेषित उसकी अपीलसे और मेरे द्वारा इन स्तम्भोमे उसके प्रकाशनसे सत्ता-लोलुप लोगोके शिकार बेचारे हैरी थुकूको कोई राहत नही मिल पायेगी। फिर भी, यदि वह कभी इन पक्तियोको देख पाये तो इस खयालसे शायद उसे कुछ सात्वना मिलेगी कि दूर देश भारतमे भी लोग उसके निर्वासन और मुकदमेका हाल सहानुभूतिके साथ पढेगे। उसे शायद यह जानकर भी कुछ सन्तोष मिल सकता है कि बहुत-से लोग, जो शायद उसीकी तरह निर्दोष है, आज बिना मुकदमा चलाये बगालकी जेलोमे बन्द है और उन्हे ऐसी कोई आशा भी नही है कि निकट भविष्यमे उनपर मुकदमा चलाया जायेगा।

[अग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १८-१२-१९२४

१. यह सी० एफ० एन्ड्रयूजके एक लेखकी टिप्पणीके रूपमें लिखा गया है। लेख यहाँ नही दिया जा रहा है। उसमें श्री एन्ड्रयूजने पूर्व आफ्रिकाके हैरी थुकू नामक एक तेजस्वी वतनी युवकके साथ किये गये अत्याचारका विवरण दिया था। थुकूसे श्री एन्ड्रयूजकी मुलाकात नैरोबीमें हुई थी, जहां उनके आगमनपर उसने उनके भाषणके लिए एक सभाका आयोजन किया था। एक ही वर्ष बाद श्री एन्ड्रयूजने अखबारोंमें पढ़ा कि एक वारदातमें वतनी लोगोंपर गोरी सरकारने गोलियाँ चलाई और थुकूको गिरफ्तार करके बिना मुकदमा चलाये किसुमायू भेज दिया गया। थुकूने उस समय श्री एन्ड्रयूजसे मदद माँगी थी और कहा था कि ब्रिटिश प्रजाजनकी हैसियतसे उसका यह अधिकार है कि उसपर मुकदमा चलाये बिना उसे सजा न दी जाये। फिर, इस लेखके प्रकाशनसे कुछ समय पूर्व उसने अपनी अपील दुहराई थी और बताया था कि उसे क्यों निर्वासित किया गया। उसकी माँग थी कि गोरे मालिकोंके बागानोंमें कुमारी आफ्रिकी लड़कियोंसे काम न लिया जाये, क्योंकि इससे अनैतिकता फैलती है। उसकी यह भी माँग थी कि वतनी लोगोंको कोड़े लगाना बन्द होना चाहिए।

२. देखिए अगला शीर्षक।

३३७. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

५ दिसम्बर, १९२४

परम प्रिय चार्ली,

मैंने महादेवसे तुम्हें यह कह देनेको कहा था कि तुम जिस तरह 'यंग इंडिया' के लिए लिख रहे हो, उस तरह न लिखो। मैं देवदासके पास रखी एक लेखकी पाण्डुलिपि देख गया हूँ। लेख बहुत प्रयत्नसे लिखा गया है और मैं देख सकता हूँ कि तुमको उसके लिए कितनी मेहनत करनी पड़ी होगी और जिस बातसे मुझे चिन्ता होती है वह यह है कि तुम इसे अपना अपरिहार्य कर्त्तव्य मानते हो। मैं हर हफ्ते नये लेख लिखता हूँ, हालाँकि अभी लिखा हुआ इतना पड़ा है। इसलिए तुम चिन्ता न करो। तुम इस दायित्वसे मुक्त हो। लेकिन तुमको जब प्रेरणा होगी तब तो लिखोगे ही। मैंने साबरमतीमें तुम्हारे दो-तीन लेख नष्ट कर दिये थे। अब मुझे याद नहीं कि वे कौन-से लेख थे। मैंने अभी-अभी हैरी थुकू और 'अस्पृश्यता' शीर्षकके दो लेखोंको अपनी टिप्पणियाँ देकर (ऐसा कह सकूँ तो) 'पास' कर दिया है। मेरे पास अभी दो अंकोंके लिए पर्याप्त सामग्री है। मैंने तुम्हारी मिस्र-सम्बन्धी टिप्पणी नष्ट कर दी है, क्योंकि उसमें विषयके साथ न्याय नहीं हो पाया था। ब्रिटेनका अल्टीमेटम मुझे बहुत बर्बरतापूर्ण लगा था। लेकिन मुझे मिस्रके बारेमें कोई जानकारी नहीं है, इसलिए मैं इस विषयपर कलम नहीं उठाऊँगा। उसके बारेमें मुहम्मद अलीने जो-कुछ लिखा है, वह पढ़ो और बताओ कि कैसा लगा।

यह पत्र मैं लाहौरसे लिख रहा हूँ। मैं १४ तारीखको या उससे पहले आश्रम पहुँचने और वहाँ चार दिन रह सकनेकी आशा करता हूँ। क्या तुम बेलगाँव तार दे सकते हो? अगर ठीक न समझो तो तार भेजनेकी जरूरत नहीं।

सप्रेम।

तुम्हारा,
मोहन

अंग्रेजी पत्र (जी० एन० २६१५) की फोटो-नकलसे।

३३८. भाषण : अमृतसरके स्वर्ण मन्दिरमें

५ दिसम्बर, १९२४

महात्मा गांधीको अकाल तख्तकी ओरसे एक सरोपा भेंट किया गया। उसे स्वीकार करनेके लिए वे 'सत श्री अकाल' के नारोंके बीच खड़े हुए। फिर उन्होंने धीमे स्वरमें बैठे-बैठे भाषण किया। उस समय चारों ओर एकदम सन्नाटा छाया हुआ था, इसलिए उनकी आवाज कमजोर होते हुए भी बिलकुल साफ सुनाई पड़ रही थी। उन्होंने कहा, सरदार मंगलसिंहने कहा है कि उनका बयान सुनकर मेरी आँखोंमें आँसू भर आये। लेकिन वास्तवमें ऐसा नहीं हुआ। मैं इन कष्टोंपर इसलिए आँसू नहीं बहाता क्योंकि मुझे मालूम है अभी तो हमारे ऊपर इनसे भी बड़ी विपत्तियाँ आनेवाली हैं। मेरे आँसू बहानेसे कोई फायदा नहीं होगा, क्योंकि तब मैं काम नहीं कर पाऊँगा। मेरा दिल पत्थरका बन गया है और मैं चाहता हूँ कि आप लोग भी अपने दिलोंको इसी तरह मजबूत बनायें। मैं जानता हूँ कि पंजाबके नये शासक (सर मेलकम हेली) दूसरी ही तरहके मनुष्य हैं और मैंने उन्हें ठीक-ठीक पहचान लिया है। मैं जानता हूँ कि वे क्या करना चाहते हैं; परन्तु मैं अकालियोंको आगाह करता हूँ कि आप उनके भाषणोंके धोखेमें न आयें। मुझे यकीन है कि अगर जनता अपनी सारी शक्तियाँ एक साथ समेटकर प्रयत्न करे तो भारतको आजाद करानेमें देर नहीं लगेगी और तब गुरुद्वारेकी समस्याका भी निबटारा जल्दी ही हो जायेगा। जब मैं उस दुःखद घटनाके तुरन्त बाद ननकाना साहब गया था, तब मैंने सिखोंसे जो-कुछ कहा था, उसे मैं आज भी दोहराना चाहता हूँ। मैंने कहा था कि अगर सिख लोग इस वृहत्तर गुरुद्वारेको –– अपनी मातृभूमिको –– आजाद करानेका प्रयत्न करें तो वे अपने गुरुद्वारोंको बिना किसी ज्यादा झंझटके आजाद करा सकते हैं। हिन्दुओं, मुसलमानों और सिखोंको अलग-अलग दिशाओंमें अपनी ताक़त नहीं लगानी चाहिए। मैंने सरदार मंगलसिंहको गुरुद्वारोंके सवालके बारेमें सब-कुछ बता दिया है; परन्तु मैं यहाँ एक बात और कहना चाहता हूँ। आप अपनी लड़ाईको सत्याग्रह कहते हैं। सचमुच देखा जाये तो सत्याग्रह और असहयोग दो अलग-अलग चीजें नहीं हैं। सत्याग्रहका अर्थ है 'सत्यका बल'। इस बलको कोई भी दूसरी ताकत कुचल नहीं सकती, क्योंकि अगर इसको कमजोर किया जा सके तब तो ईश्वरको भी कुचला जा सकता है और मेरा विश्वास है कि ईश्वरको कुचलना नितान्त असम्भव है। सत्यका बल केवल अपवित्रतासे ही कमजोर हो सकता है; परन्तु सत्यमें अपवित्रताके लिए कहीं कोई गुंजाइश नहीं है। इसी तरह सत्याग्रहमें अपवित्रताके लिए कोई गुंजाइश नहीं होती। इसमें आपको किसी भी चीजको छिपाना नहीं चाहिए। पैसा हो या कागज

हो — कोई चीज आपको जनतासे नहीं छिपानी चाहिए। सत्याग्रहकी एक यही शर्त है कि हर काम पूरी सचाईसे किया जाये। मैंने मुसलमानोको हिन्दुओंके और हिन्दुओंको मुसलमानोंके खिलाफ और सिखोंको दूसरोंके तथा दूसरोंको सिखोंके खिलाफ शिकायतें करते सुना है। हिन्दू और मुसलमान और एक ही समाजके सम्प्रदायतक एक-दूसरेके खिलाफ लड़ रहे हैं। सत्याग्रहकी लड़ाईमें आपको सभी मतभेद दूर कर देने चाहिए; आपको अवसरका ध्यान रखना चाहिए। वही अच्छा सैनिक या सेनापति होता है जो अपने उद्देश्यकी सिद्धिके लिए उत्तम अवसरका ध्यान रखता है। अगर जरूरत पड़े तो आपको समय देखकर दूसरेके सामने सिरतक झुका देना चाहिए। सर मेलकम हेली आपके दूसरे सम्प्रदायोंको एक करके आपको कुचलना चाहते हैं, यद्यपि उन्होंने अपने भाषणोंमें कहा है कि वे सिखोंको कमजोर नहीं करना चाहते और साथ ही वे गुरुद्वारोंके सुधारके भी पक्षमें हैं; लेकिन आप जानते हैं कि उनके दिलमें क्या है।

महात्माजीने अन्य विषयोंकी चर्चा करते हुए कहा : मेरा असहयोगका सिद्धान्त तभी खतम होगा जब भारत आजाद हो जायेगा। उन्होंने अकालियोंसे अनुरोध किया कि वे सत्यपर अटल रहें और इसी आदर्शको लेकर अपनी लड़ाई चलायें।

[अंग्रेजीसे]

ट्रिब्यून, ७-१२-१९२४

३३९. भाषण : अमृतसरकी सार्वजनिक सभामें[1]

५ दिसम्बर, १९२४

महात्मा गांधीने दोनों मानपत्रोंका एक साथ उत्तर देते हुए कहा कि इन मानपत्रोंको स्वीकार करनेमें मुझे काफी झिझक महसूस हुई है और उसका कारण अब मुझे इसी सभामें नजर आ गया है। जब मैं पहली बार अमृतसर आया था और देशका दौरा किया था तब मैंने लोगोंको महात्मा गांधीकी जयके नारे लगाते सुना था। इन नारोंको सुनकर मुझे खुशी नहीं होती, क्योंकि मैं देखता हूँ लोग मेरे नामपर तरह-तरहके अनुचित काम करने लगे हैं। मैं आप लोगोंसे अनुरोध करता हूँ कि आप मेरा नाम भूल जायें और हिन्दू-मुसलमानकी जयके नारे लगायें। महात्माजीके ऐसा कहनेपर श्रोताओंने यह नारा लगाया। इसके बाद उन्होंने कहा कि अच्छा तो यह हो कि लोग चरखेकी जयका नारा लगायें, क्योंकि मेरी जय कहनेसे कोई फायदा

१. जलियाँवाला बागमें डा० सन्तराम सेठकी अध्यक्षतामें आयोजित सभा। गांधीजीके स्वागतमें मुस्लिम लीग, खिलाफत समिति, स्थानीय कांग्रेस कमेटी, केन्द्रीय सिख लीग, हिन्दू सभा, नागरिक सभा, महाराष्ट्र समाज और गुजरात मित्र-मण्डलने सम्मिलित रूपसे मानपत्र दिया था। इसके अतिरिक्त एक और मानपत्र जेलसे लौटे अमृतसरके स्वयंसेवकों और नवयुवकोंने दिया था।

होनेवाला नहीं है। मैं तो ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि अगर वह मुझे जिन्दा रखना चाहता है तो वह मेरा उपयोग किसी अच्छे और पुनीत कामके लिए करे। मैं प्रभुसे यह भी प्रार्थना करता हूँ कि हिन्दू और मुसलमान अपने मतभेदोंको भुला दें। वे अपने-अपने धर्मपर दृढ़ रहते हुए भी एक-दूसरेके धर्मके प्रति सारी कटुता छोड़ सकते हैं। हिन्दू लोग 'कुरान'के खिलाफ एक शब्द बोले बिना भी शुद्धिका प्रचार कर सकते हैं। एक मानपत्रमें इन झगड़ोंकी जिम्मेदारी नेताओंपर डाली गई है। बात सही है, क्योंकि लड़नेवाले गुण्डे नहीं हैं। मैं साबित कर सकता हूँ कि इस गड़बड़ीके लिए मैं जिम्मेदार हूँ और नेता लोग जिम्मेदार हैं। लेकिन मैं आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप नेताओंके बहकावेमें न आयें, क्योंकि जनताने ही तो उनको अपना नेता बनाया है।

इसके बाद महात्मा गांधीने कहा कि मुझसे कहा गया है कि मैं यहाँ कुछ दिन रुकूँ और इन मतभेदोंको दूर कराऊँ। पर इस कामको तो यहाँके लोग ही ज्यादा अच्छी तरह कर सकते हैं। मैं इसे नहीं कर पाऊँगा और न मेरे पास यहाँ रुकनेके लिए समय ही है। यदि इस तरहकी गड़बड़ीसे कोई स्थान बचा रहना चाहिए तो वह अमृतसर ही है। मैं मानता हूँ कि मेरा सारा असर खत्म हो गया है। अब तो आपको ही यह काम करना है। हिन्दू और मुसलमान दोनों ही अब मेरी नहीं सुनते। मुझपर इलजाम लगाया जाता है कि मैं मुसलमानोंके साथ अनुचित पक्षपात करता हूँ। परन्तु हिन्दू यह नहीं जानते कि उनको डाँटने-फटकारनेका तो मुझे पूरा हक है, जबकि मुसलमानोंके धर्मकी पूरी जानकारी न होनेके कारण मैं उनके खिलाफ कुछ नहीं कह सकता, क्योंकि ऐसा करना किसी प्रकार हानिकर हो सकता है और उससे उनकी धार्मिक भावनाओंको ठेस लग सकती है। लेकिन खुद एक हिन्दू और कट्टर सनातनी होनेके नाते, मैं अपने धर्मको समझता हूँ और उसके खिलाफ बखूबी बोल सकता हूँ। मुझपर इलजाम लगाया गया है कि मैं आर्य समाजकी नुक्ताचीनी करता हूँ और मैं रावलपिंडीके सनातन धर्म सम्मेलनमें तो शामिल नहीं हुआ, परन्तु खिलाफत सम्मेलनमें शरीक होने आ गया हूँ। मैं मानता हूँ कि मैं अपने धर्मके प्रति सच्चा रहते हुए भी अन्य धर्मोके प्रति अपने आदर-भावके कारण उनकी तरफदारी करता हूँ। मेरा आपसे अनुरोध है कि आप सत्यका पालन करें। असत्यको मैं हिंसा मानता हूँ। यदि मैं असत्य भाषण करूँ तो मुझे जानसे मार देना चाहिए। हिन्दू लोग पूछते हैं कि अगर काबुलियोंने भारतपर हमला कर दिया तो हम क्या करेंगे। मेरी यही सलाह है कि आप काबुलियोंसे भय न खाइए, क्योंकि वे आपके भाई हैं। आपको काबुलियोंकी इज्जत करनी चाहिए और उनके आगे सिर झुकाना चाहिए। आपको संयम और सहिष्णुतासे काम लेना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

ट्रिब्यून, ७-१२-१९२४

३४०. भाषण: अमृतसरके खिलाफत सम्मेलनमें

६ दिसम्बर, १९२४

महात्माजीने "हिन्दू-मुसलमानकी जय" के कर्ण-भेदी नारोके बीच खड़े होकर कहा कि मुझे मजबूर होकर[1] आपकी कार्यवाहीमें बाधा डालनी पड़ रही है। मुझे हिन्दू-मुसलमान समस्याके बारेमें अन्य नेताओसे सलाह-मशविरा करने लाहौर जाना है। यह कहना गलत है कि दगोके लिए गुण्डे जिम्मेदार है। इसके विपरीत इसके लिए नेता — जैसे, डा० किचलू, अली भाई, हकीम साहब और अन्य नेता लोग — भी समान रूपसे जिम्मेदार है। दिमागी तौरपर तो वे उनमें हिस्सातक लेते है। मै चाहता हूँ कि दोनो जातियोका हृदय-परिवर्तन हो और दोनोके बीच पहले-जैसा सौहार्द स्थापित हो जाये। अध्यक्ष (श्री जफर अली) ने मेरी प्रशंसा करनेके लिए कुछ हिन्दू नेताओके बारेमें जो बातें कहीं, वे मुझे बम-विस्फोट जैसी मालूम हुई है और वे ठीक भी नहीं है। मै कोई बड़ा आदमी नहीं हूँ और अपनी प्रशंसा सुनना पसन्द नहीं करता। मुझे पण्डित मालवीयजीके खिलाफ कही गई बातोसे बड़ा आघात लगा है और उनसे मेरा दिल टूट गया है। मै कभी विश्वास ही नहीं कर सकता कि मालवीयजी मुसलमानोके दुश्मन है और हिन्दू-मुसलमान एकताके मार्गमें बाधक है। मै मालवीयजीके बारेमें आपकी राय बदलना चाहता हूँ। हिन्दू लोग मालवीयजीको अत्यन्त सम्मान और प्रेमकी दृष्टिसे देखते है, इसलिए आपको मालवीयजीकी बुराई करनेसे समस्याके हलमें कोई मदद नहीं मिलेगी। लोग मुझसे कहीं ज्यादा मालवीयजी-पर आस्था रखते है। मुझे तो लोग मुसलमान मानने लगे है। अलबत्ता, उनकी यह धारणा गलत है।

हिन्दुओंके लिए मालवीयजीका साथ छोड़ देना उसी तरह असम्भव है जिस तरह मुसलमानोके लिए, मेरे कहनेसे हकीम अजमल खाँ और अली भाइयोका साथ छोड़ना। मै आपको याद दिला दूँ कि बी-अम्माँकी मृत्युसे हिन्दुओको भी दुःख हुआ है। मुसलमानोसे मेरा अनुरोध है कि वे अपने पैगम्बरकी यह सीख याद रखें कि उनको अपने दुश्मन तकके साथ भाई-चारेका बरताव करना चाहिए; और उसपर भरोसा रखना चाहिए, क्योंकि इससे एक-दो सालके अर्सेमें उसका हृदय-परिवर्तन हो जायेगा। मैंने जो-कुछ पण्डित मालवीयके बारेमें कहा है, वह लाला लाजपतरायपर भी उतना ही लागू होता है। मै उनके हृदयको बड़ी अच्छी तरह जानता हूँ। मै

१ गांधीजीने यह भाषण जफर अलीके इस कथनके उत्तरमें दिया था कि मदनमोहन मालवीय, लाजपतराय और अन्य हिन्दू नेता बाहरसे तो हिन्दू-मुस्लिम एकताकी बात करते है किन्तु मनसे उसकी इच्छा नहीं करते।

जब भी लाहौर जाता हूँ, लालाजीके साथ ही ठहरता हूँ और मैं कह सकता हूँ कि लालाजी हिन्दू-मुसलमान एकताके जबरदस्त हिमायती हैं। पर साथ ही मैं आप सबको यह भी जता देना चाहता हूँ कि जो हिन्दू किसी मुसलमानके साथ दोस्ताना ताल्लुक पसन्द नहीं करता उसे भी मैं दुश्मन नहीं बनाना चाहता; और इसी तरह किसी हिन्दूके प्रति वैसा ही रुख रखनेवाले मुसलमानके प्रति भी मेरा दृष्टिकोण यही है। हिन्दुओंने मुझसे कहा है कि उनको अफगानोंके हमलेका डर है। मुझे खुद तो उसका जरा भी डर नहीं है, क्योंकि वे ज्यादासे-ज्यादा यही कर सकते हैं कि मेरा सिर धड़से अलग कर दें, किन्तु वे मुझे मेरे धर्मसे च्युत तो नहीं कर सकते। हिन्दुओंका यह डर बिलकुल बेबुनियाद है। इस सूबेमें कई उर्दू अखबार ऐसे हैं जो, मेरी रायमें, जहर फैलाते हैं और आगे बढ़कर हिन्दू-मुसलमान एकताकी जड़ें काटते हैं। सचमुच ऐसे अखबारोंपर नजर भी डालना शर्मनाक है। अगर मुसलमान इस्लामको बचाना चाहते हैं तो उनको हिन्दुओंके साथ एक हो जाना चाहिए। हिन्दुओंसे मैं कहना चाहता हूँ कि वे सारे मुसलमानोंको हिन्दुस्तानसे बाहर नहीं निकाल सकते। उनको अपना अस्तित्व बनाये रखनेके लिए मुसलमानोंके साथ एक हो जाना चाहिए। भारत [की परतन्त्रता] अन्य कई स्वतन्त्र देशोंकी स्वाधीनता नष्ट करनेके लिए जिम्मेदार है और हमें आजादी मिलनेसे भारतका विदेशी शोषण खत्म हो जायेगा और हिन्दू-मुसलमान एकता स्थापित हो जायेगी। नेताओंका काम यही है कि वे दोनों जातियोंमें दिली एकता कायम करें और कमजोरों और बलवानोंके बीच दोस्ताना सम्बन्ध बनायें। ईश्वर इस लक्ष्यको प्राप्त करनेमें और अपने हृदयोंको परिवर्तित करनेमें हमें सहायता दे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, १२-१२-१९२४

३४१. दीक्षान्त भाषण: पंजाब कौमी विद्यापीठमें[1]

६ दिसम्बर, १९२४

महात्मा गांधी बोलनेके लिए खड़े हुए तो जन-समुदायने जय-जयकारके तुमुल-नादसे उनका स्वागत किया। कमजोरीके कारण उन्हें बैठे-बैठे भाषण करना पड़ा। मंचपर एक कुर्सी रख दी गई थी। गांधीजीने उसीपर आसन ग्रहण किया। उन्होंने हिन्दीमें भाषण दिया।[2] भाषणका एक-एक शब्द भवनमें हर जगह साफ सुनाई पड़ रहा था।

१. लाहौरके ब्रैडलॉ हॉलमें हुए उसके तीसरे दीक्षान्त समारोहमें; मदनमोहन मालवीय और शौकत अली भी मौजूद थे।

२. हिन्दी भाषण उपलब्ध नहीं है।

गांधीजीने अपना भाषण नये स्नातकों द्वारा की गई प्रतिज्ञाका उल्लेख करते हुए शुरू किया और ईश्वरसे प्रार्थना की कि वह उन्हें उनके देश या धर्मको हानि पहुँचा सकनेवाली हर चीजसे बचनेकी शक्ति प्रदान करे। उन्होंने कहा, मैं आपको डिग्री हासिल करनेपर बधाई देता हूँ। आप आगे चलकर जो भी काम हाथमें लें, हर समय अपने देशको स्वराज्य दिलानेका अपना उद्देश्य ध्यानमें रखें।

मुझसे रजिस्ट्रारने कहा है कि मैं बेलगाँवमें कोई ऐसा सुझाव लोगोंके सामने रखूँ जिससे देश-भरकी इन राष्ट्रीय संस्थाओंमें और अधिक शक्तिका संचार हो। कह नहीं सकता कि मैं बेलगाँवमें क्या सुझाव दूँगा। मैंने 'यंग इंडिया' में लिखा था कि मेरे और शिक्षित समुदायके बीचकी दूरी दिन-दिन बढ़ती जा रही है।[1] फिर भी मैं निराश नहीं हूँ। यह दूरी अवश्यंभावी है। रजिस्ट्रारने शिक्षाकी चालू पद्धतिके उद्देश्यके बारेमें लॉर्ड मैकॉलेका कथन उद्धृत किया है। इसमें शक नहीं कि लॉर्ड मैकॉलेका उद्देश्य पूर्ण रूपसे फलीभूत नहीं हो पाया है जैसा कि लालाजीने[2] कहा है, इस बातको हर आदमी मानता है कि हमारी सभ्यता युगों पुरानी है। इसलिए हमको सदा गुलाम बनाये रखना असम्भव है।

मैं पिछले चालीस वर्षोंसे शिक्षाकी चालू पद्धतिके परिणामोंपर दृष्टि रखता आया हूँ। एक समय था, जब मैं भी उसपर मुग्ध था और मैंने दक्षिण आफ्रिकाके कई लोगोंको बैरिस्टर बनानेमें मदद दी थी। लेकिन मेरा भ्रम दूर हो गया। मैंने एक अमेरिकी लेखककी वह सम्मति पढ़ी है कि भविष्य उन देशोंके ही हाथमें है, जिनकी सन्तान शारीरिक श्रमकी महत्ताको समझेगी और उसे अपनी शैक्षणिक पद्धतिका एक अंग बना लेगी।

टाल्स्टायने इसे 'ब्रेड-लेबर' — 'रोटीका श्रम' कहा है। भगवद्गीतामें भी कहा गया है कि जो मनुष्य आवश्यक दैनिक यज्ञ किये बिना खाता है, वह वास्तवमें चोर[3] है। समाजकी खातिर किया गया शारीरिक श्रम ही यह यज्ञ है। मेरी इस व्याख्याका समर्थन एक अन्य विद्वान्ने भी किया है। कुरान और पारसी धर्म-शास्त्रमें भी मुझे यही बात मिली है। पुराने जमानेके खलीफा लोग भी अपने जीवन-यापनके लिए श्रम किया करते थे और अपना शेष समय धार्मिक कार्योंमें लगाते थे। इसलिए मेरी तो यही राय है कि जो मनुष्य श्रम-रूपी तपस्या नहीं करता उसे जीनेका कोई अधिकार नहीं। केवल अपने दिमागमें विभिन्न तथ्य ठसाठस भर लेना और फिर उनको जहाँ-तहाँ बाँटते रहना शिक्षा नहीं है। गुजरात विद्यापीठमें लोगोंने अपने आदर्शके रूपमें इस वाक्यको चुना है — "विद्या वही है जो मुक्ति दिलाये"।[4] यहाँ रजिस्ट्रारने अभी

१ देखिए "ईश्वर हम सबकी सहायता करे!", २६-११-१९२४।

२ लाला लाजपतराय, विद्यापीठके कुलपति।

३. ३, १२।

४. सा विद्या या विमुक्तये।

बताया कि कुछ स्कूली बच्चोंके माता-पिता अपने बच्चोंको शारीरिक श्रमकी शिक्षा देनेपर आपत्ति करते हैं। वे कहते हैं कि हमारे बच्चोंको अपने आगामी जीवनमें श्रम तो करना नहीं है। हिन्दू और मुसलमान भी सरकारी नौकरियोंके पीछे इसलिए झगड़ रहे हैं कि वे शारीरिक श्रम नहीं करना चाहते। मै इसे हराम समझता हूँ।

आपको जो शिक्षा मिल रही है, वह सिर्फ दिमागकी शिक्षा है, हृदयकी नहीं। हृदयकी शिक्षाका मतलब है धार्मिक शिक्षा और धार्मिक शिक्षाका अर्थ केवल शास्त्रोका पठन-पाठन नहीं है। उसका अर्थ है ईश्वरकी वास्तविक अनुभूति और ईश्वरके अतिरिक्त अन्य किसीके सामने भी भयसे न झुकना। यदि कोई ऐसी सच्ची शिक्षा, अर्थात् हृदयकी शिक्षा एक बार प्राप्त कर ले तो उसके हृदयमें किसी मनुष्यका या शक्तिशाली सरकारका भी भय नहीं रह जायेगा, क्योंकि तब उसको अनुभूति हो जायेगी कि ईश्वर उसके साथ है। उन्होंने विद्यार्थियोंसे पूछा, क्या आपको ऐसी शिक्षा मिली है? क्या आप छोटेसे-छोटा काम करनेके लिए भी तैयार हैं? अगर आप मानते हैं कि देशकी स्वतन्त्रताके लिए चरखा चलाना अत्यावश्यक है तो क्या आप यज्ञ समझकर प्रतिदिन चरखा चलाते हैं? यदि ऐसा हो तभी कहा जा सकता है कि आपको सच्ची शिक्षा मिली है।

उन्होंने आगे कहा कि मुझे विश्वास है कि यदि भारतका प्रत्येक पुत्र और भारतकी प्रत्येक पुत्री प्रति-दिन कमसे-कम आधा घंटा भी सूत कातने लगे और उसे कपड़े तैयार करने और गरीबोमें बाँटनेके लिए कांग्रेसको देने लगे तो हम अपने देशको स्वतन्त्र करा सकते हैं। परन्तु हमारे अन्दर अभीतक ऐसी राष्ट्रीय चेतना पैदा नहीं हुई है। यदि आप अपने देशके भूखे और नंगे लोगोके सबसे निचले वर्गके लिए स्वराज्य लेना चाहते हैं तो आपको सूत कातना शुरू कर देना चाहिए। मैं आपको शेक्सपियर या मिल्टनकी रचनाएँ पढ़नेसे या वैदिक ऋचाओका पाठ करनेसे या 'कुरान' का अध्ययन करनेसे नहीं रोकता; लेकिन जैसा कि 'कुरान' में हजरत मुहम्मदने कहा है, निचले वर्गके लोगोंकी उपेक्षा करनेवाले ईश्वरसे बहुत दूर हैं। और यही बात राष्ट्रीय शिक्षाके लिए अत्यावश्यक है। मेरी समझमें तो यही सच्ची शिक्षा है।

इस समय मैंने राष्ट्रीय कार्यक्रमके रूपमें असहयोगको स्थगित करनेकी जो सलाह दी है, उसका कारण यह नहीं है कि मैं शिक्षाकी इस दूषित पद्धतिको बरकरार रखना चाहता हूँ। महाकवि तुलसीदासने मुझे सीख दी है कि धर्म और अधर्मके बीच किसी भी तरहका सौहार्द, स्नेह या एका नहीं हो सकता। इसलिए जबतक मेरा विश्वास है कि यह सरकार शैतानी सरकार है और यह कमजोर जातियोंके अहंकारपूर्ण शोषणपर खड़ी है, तबतक इससे असहयोग करना मेरा कर्त्तव्य है और मैं इस मार्गपर दृढ़ रहूँगा, चाहे मुझे इसपर अकेले ही चलना पड़े। यहाँ यदि कोई अराजकतावादी हों तो मैं उन्हे बतला देना चाहता हूँ कि मैं अहिंसापूर्ण असहयोग

करना चाहता हूँ हिंसापूर्ण नहीं और मेरा असहयोग इस शासन-प्रणालीके विरुद्ध है, इस प्रणालीको चलानेवाले व्यक्तियोंके विरुद्ध नहीं।

व्यक्तिके नाते मुझे लॉर्ड रीडिंग या सर मेलकम हेलीसे कोई शिकायत नहीं है, हालाँकि मैंने सुना है, सर मेलकम हेली इस समय पंजाब-भरमें बड़ी तेजीसे अपना जाल फैला रहे हैं। मैं यह नहीं कहता कि सर मेलकम हेली जानते हैं कि वे ऐसा कर रहे हैं। लेकिन मैंने लम्बे अर्सेतक इस सरकारके रंग-ढंगका अध्ययन बड़ी बारीकीसे किया है और इसलिए मैं यह बात जानता हूँ। इसके अतिरिक्त सर मेलकम यह जान भी कैसे सकते हैं? जूता पहननेवाला ही तो जान सकता है कि जूता कहाँ काट रहा है।

लेकिन जो असहयोग स्वयं दूषित हो, वह अपनाने योग्य नहीं है और हिन्दुओं और मुसलमानोंके बीच आज असहयोगकी ऐसी ही भावना वर्तमान है, वह घृणा और भयपर आधारित है और उसमें शान्ति और प्रेम लेश-मात्र भी नहीं है। आप सब ईश्वरसे यही प्रार्थना करें कि वह ऐसे असहयोगसे आपको बचाये।

लाहौर या बेलगाँवमें अध्यक्षताके लिए मेरे सहमत होनेका यह मतलब नहीं लगाया जाना चाहिए कि मुझमें बड़प्पनका भाव आ गया है। इसके विपरीत मैं तो यह समझता हूँ कि मैं छूछे कारतूसके समान शक्तिहीन हो गया हूँ। मैं जानता हूँ कि भारतके शिक्षित लोगोंका एक बड़ा भाग मेरे साथ नहीं है। वे महात्मा गांधीकी जयके नारे भले ही लगायें, परन्तु उससे मुझे खुशी नहीं हो सकती। इसके बदले यदि वे मेरे ऊपर थूक भी दें, किन्तु मैं जैसा कहूँ वैसा करें तो मुझे सचमुच खुशी होगी।

अन्तमें गांधीजीने पूछा कि क्या पंजाबी लोग चरखेको अपनायेंगे। पंजाबी हिन्दुओंसे यह सुनकर मुझे दुःख पहुँचता है कि वे खद्दर पहनना इसलिए हराम समझते हैं कि उसे मुसलमान बुनकर बुनते हैं। उनका पारस्परिक असहयोग इस सीमातक पहुँच चुका है। मैं खुद चाहता हूँ कि मुसलमान बुनकर अपना धन्धा फिर अपना लें। मेरा आपसे यही आग्रह है कि आप सभी लोग चरखेको पूरे उत्साह और अटूट विश्वाससे अपनायें। दूसरी तरफ मुसलमान चाहते हैं कि खद्दर मलमल-जैसा महीन और मैंचेस्टरके कपड़े-जैसा सस्ता हो। ऐसे हिन्दुओं और मुसलमानों, दोनोंको मैं आगाह कर देना चाहता हूँ कि वे जबतक खद्दरका सन्देश नहीं सुनेंगे, तबतक स्वराज्य नहीं मिल सकता।

[अंग्रेजीसे]

ट्रिब्यून, ९-१२-१९२४

३४२. तेरह आदेश

ईसाई धर्ममे दस पालनीय आदेश बताये गये है। भाई अमृतलाल ठक्करको मैंने उनके प्रेमके कारण अन्त्यजोका धर्म-गुरु कहा है। उनकी सेवावृत्तिकी कोई सीमा नही है। अब उन्होने भीलोके गुरुका पद सँभाला है और अनुभवसे जो उन्हे जरूरी लगा है उसे उन्होने, आदेशके रूपमे कहिए या उपदेशके रूपमे, बडे-बडे सुन्दर अक्षरोमे छपवाया है। ये आदेश भील भाइयोकी भाषामें ही छपवाये गये है। यहाँ सब आदेश उद्धृत करनेकी तो जरूरत नही है, किन्तु उनमे से कुछ आदेश उद्धृत करता हूँ। उदाहरणके तौरपर पहला आदेश यह है.

> हँडिया[1] मत पिओ। हँडिया पीनेसे बच्चे ठण्ड और भूखो मरेगे।
>
> आदेश ३: नित्य स्नान करो, इससे तुम्हारा जी हल्का रहेगा, तुम्हे दाद-खुजली नही होगी तथा तुमपर बाबादेवकी कृपा रहेगी।

लगता है भील परमेश्वरको बाबादेव कहते है।

> आदेश ५: पानी छाना हुआ और ताजा पीओ। बाबादेव तुम्हे नारू नहीं होने देगे।
>
> आदेश ६: [लड़कीके विवाहमे] लड़कीकी कीमत न लो। लडकीकी कीमत लेनेसे तुम्हे दु ख उठाना पड़ेगा।
>
> आदेश ९: चोरी-चकारी न करो। नही तो बाबादेव अन्न-सकट पैदा कर देगे।

तेरहवाँ और अन्तिम आदेश यह है:

> प्रतिदिन सूर्यास्त होनेपर बाबारामका स्मरण करो। बाबारामके समान अन्य कोई नही है। गुरुजीकी शपथ।

इनमें से बहुतसे आदेश तो ऐसे है जो हमपर भी लागू होते है। इन आदेशोके सम्बन्धमे ध्यान देने योग्य बात यह है कि प्रत्येक आदेशका पालन करनेके लिए सक्षेपमे कोई-न-कोई सुन्दर कारण दिया गया है।

भगवान करे, भाई अमृतलाल ठक्करकी सेवा फलीभूत हो और भील भाइयोका भविष्य उज्ज्वल हो।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ७-१२-१९२४

१. मूलमें 'हरो' है। आदिवासियों द्वारा प्रयुक्त और तैयार की जानेवाली एक प्रकारकी शराब।

३४३. किस आशासे ?

पाठक यह तो समझ ही लेंगे कि अपने दूसरे काम-काजके बीच मैंने जो काठियावाड राजनीतिक परिषद्का अध्यक्ष-पद स्वीकार कर लिया है वह छोटी या बड़ी आशासे ही किया होगा।

काठियावाडमें एक डुबकी लगा आनेका लोभ तो मुझे बराबर रहता है, लेकिन इस इच्छाको तो मैं दूसरे मौकेपर और अध्यक्ष-पदका भार उठाये बिना भी पूरा कर सकता था। मैं वहाँ जा तो रहा हूँ इस आशासे कि काठियावाडपर जो खादीके प्रति उदासीनता बरतनेका आरोप लगाया जाता है, उससे वह मुक्त हो जाये। मेरे पास आनेवाले भाइयोंने मुझे भरोसा दिलाया है कि सोनगढको मैं पूरी तरह खादी-नगरके ही रूपमें देखूंगा और परिषद्में आनेवाले हजारों लोग तो खादी पहनकर ही आयेंगे।

जो-कुछ मिल जाये, वह तो लाभ ही है, ऐसा समझकर मैं इतनेको ही स्वीकार कर लूंगा, किन्तु साथ ही जैसा उत्तर तिलक महाराजने स्वर्गीय श्री मॉन्टेग्युको[1] दिया था, मैं भी वैसा ही कहूँगा "जो मिलेगा उसे स्वीकार करके अधिकके लिए लडूंगा।" काठियावाडमें पैदा हुई रुई बाहर जाये और उस रुईसे जो कपडा बनकर बाहरसे आये उसे काठियावाडके लोग पहनें, यह बात तो बराबर असह्य मानी ही जायेगी, किन्तु रुईकी ही तरह काठियावाडकी जनता भी आजीविकाके अभावमें बाहर जाये, यह कैसे देखा जा सकता है?

काठियावाडके बुनकरोंको रोजगार न मिले, काठियावाडकी गरीब बहनोंको कताईके अभावमें दुःख उठाना पडे, यह कैसी विडम्बना है? इसमें मुझे राजा-प्रजा दोनोंका दोष दिखाई देता है। अगर राजा लोग चाहें तो अपने राज्योंमें पैदा होनेवाली रुईका उपयोग वहीं करवाकर हाथ कताई और उससे सम्बन्धित अन्य कलाओंका पुनरुद्धार करा सकते हैं।

एक समय था जब काठियावाडके कुशल बुनकरोंको मैंने पोरबन्दरमें कहाँ नहीं देखा? आज उनका धन्धा लगभग नष्ट हो गया है। यह मेरे ही समयकी बात है कि काठियावाडी अतलस और अहमदाबादी अतलसके बीच होड चलती थी और उसमें काठियावाड जीतता था। काठियावाडके खत्रियोंको मंदिरमें भी वैंधाईकी रीतिसे रंगनेका काम अपने साथ लाकर अपने समयका सदुपयोग करते मैंने स्वयं अपनी आँखों देखा है। आज वे सब कहाँ है? एक समयमें काठियावाड़की जरीकी साडियाँ प्रख्यात थीं। उन्हें बुननेवालोंको मैंने देखा है। किन्तु आज वे कहाँ हैं? चालीस वर्ष पहले मैं राजकोटके इर्दगिर्द काठियावाडके रंगरेजोंको देखा करता था, और [उनकी कारीगरीके नमूनेको देखकर मनमें जगनेवाली] लड़कपनकी यह निर्दोष इच्छा कि

१. ई० एस० मॉन्टेग्यू (१८७९-१९२४), भारत-मन्त्री, १९१७-२२।

'कितना अच्छा हो, अगर पिताजी मुझे इस रंगका साफा खरीद दे,' मुझे आज भी याद है। कौन जाने, आज ये रंगरेज कहाँ होगे।

कौन जानता है कि हाथ-कताईके लोपके साथ-साथ उससे सम्बन्धित और भी कितने धन्धे लुप्त हो गये है? उनकी गिनती कौन कर सकता है? कताईके लोपके साथ ही कलाका भी लोप हो गया है, इसका एहसास हमे कहाँ है? इस कलाके साथ ही करोडो किसानोके घरोंकी ज्योति बुझ गई है, इसका विचार भी हम शहरी लोग कहाँ करते है? चरखेमे जो बरकत थी, वह चरखेके साथ ही चली गई! जिन घरोमे चरखेको फिरसे स्थान मिल गया है, उनमे बरकत फिरसे आ रही है। अलबत्ता, अभी वह वहाँ पूरी तरह स्थिर नही हुई है, क्योकि उन घरोमे चरखेपर अभी पूरी श्रद्धा पैदा नही हुई है। "मेरे सूतकी खपत नही हुई तब मेरा क्या होगा? इन कांग्रेसियोका क्या भरोसा? ये लोग आज कुछ करते है तो कल कुछ। इनकी पीठपर सरकार तो है नही?" ऐसी अनिश्चित स्थितिसे वे घबराते है। 'दूधका जला छाछ भी फूंक-फूंककर पीता है,' आज हमारी दशा ऐसी ही दयनीय है।

ऐसी स्थितिमे मैं अपने मनमे इस आशाको सँजोये हुए हूँ कि काठियावाड़ खादीके कार्यको हाथमे लेकर उसकी शोभा बढ़ायेगा।

दूसरी आशा भी उतनी ही निर्दोष, उतनी ही तीव्र और उसी प्रकार धार्मिक है। धर्म-तत्त्व तो कदाचित् इस दूसरी आशामे अधिक ही हो। काठियावाडकी अस्पृश्यतासे तो विदुरका साग खानेवाले, ग्वाल-बालोके साथ खेलनेवाले, गाये चरानेवाले, गोपियोके निर्मल मनको हरनेवाले, उनके पवित्र हृदयोके स्वामी कृष्ण भी हार गये है। जिसे कृष्णने चीथडोमे लिपटे सुदामाको आनन्दित हो गलेसे लगा लिया था, क्या अन्त्यजोके स्पर्शसे वह अपनेको अपवित्र हुआ मानेगा?

लेकिन उसी कृष्णके सौराष्ट्रमे आज अन्त्यजोको चारो ओरसे दुतकारा जाता है। उनका स्पर्श दोषपूर्ण माना जाता है और कुछ भले काठियावाडी तो उन्हे गाली देने और मारने-पीटनेमे भी नही चूकते। इनका सहायक, इनका मित्र कौन होगा? मुझे उम्मीद है कि जो लोग परिषद्मे उपस्थित होगे वे इस दोषसे मुक्त रहेंगे, इतना ही नही, बल्कि वे अन्त्यज-सेवाकी प्रतिज्ञा लेगे।

मुझे सयोजकोको बता देना चाहिए कि यदि मण्डपमे किसी भी स्थानपर अन्त्यजोका प्रवेश निषिद्ध होगा तो जहाँ अन्त्यजोको जगह दी जायेगी, उन्हे अध्यक्षको भी वही जगह देनी होगी और अध्यक्षको वहाँ बैठकर अत्यन्त प्रसन्नता होगी। हिन्दू-धर्ममें अस्पृश्यता नही है। जिस धर्ममें अस्पृश्यता है, वह धर्म नही है, अधर्म है, मेरा ऐसा दृढ विश्वास है। मनुष्य दूसरे मनुष्यका स्पर्श करके दूषित नही होता, बल्कि अपने अन्तरमें निहित मलिन वृत्तिका स्पर्श करके तथा उसे पोषित करके ही दूषित होता है।

लेकिन राजनीतिक परिषद्के सदस्य शायद सोचेगे कि इन बातोका राजनीतिक परिषद्से क्या सम्बन्ध है? मै अनेक बार बता चुका हूँ कि राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक — ये तीनो कोई अलग-अलग प्रवृत्तियाँ नही है; अपितु इन तीनोका

परस्पर सम्बन्ध है। "राजनीतिक" शब्द राजा और प्रजाके सम्बन्धोंका सूचक है, "सामाजिक" शब्द समाजकी आन्तरिक व्यवस्थाका सूचक है और "धार्मिक" शब्द व्यक्तिके कर्त्तव्यका सूचक है। लेकिन "यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे," इस न्यायके अनुसार जो बात व्यक्तिके लिए ठीक है वही समाजके लिए भी ठीक है और जो समाजके लिए ठीक है वही राजा-प्रजाके सम्बन्धोंके लिए भी है। जहाँ धर्म नही है वहाँ जय नही, क्षय है। भले ही उससे जयका आभास होता हो, लेकिन उसे मृगजलके समान समझना चाहिए। जैसी प्रजा होगी, वैसा ही राजा और जैसा व्यक्ति होगा वैसा ही समाज होगा। सबका मूल व्यक्ति है और व्यक्तिका अस्तित्व केवल धर्मपर निर्भर है। इसीसे ऋषि-मुनियोंने कहा है "जहाँ धर्म है वही जय है[1]।"

परिषद्में हम राजा-प्रजाके सम्बन्धोंपर अवश्य विचार करेंगे, लेकिन समाजके कर्त्तव्यपर स्पष्ट रूपसे विचार किये बिना राजा-प्रजाके धर्मका सम्यक् विचार मैं असम्भव मानता हूँ।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ७-१२-१९२४

३४४. कपास बचाओ

सूत कातनेमें सबसे पहली बात कपासका संग्रह है। उससे भी पहली चीज है कपासकी बुवाई। परन्तु यहाँ हम उसके विषयमें विचार नही करेंगे, क्योंकि कपास तो सारे हिन्दुस्तानमें काफी परिमाणमें बोई जाती है। दुःखकी बात सिर्फ यह है कि इतनी कपासकी बुवाई होनेके बावजूद हमारे किसान भाई इसका सदुपयोग न जाननेके कारण इसका संग्रह करनेके बजाय, इसे अच्छे भावके लालचमें बेच दिया करते हैं। वे यह भूल जाते हैं कि अच्छे भावका बदला उन्हे बादमें मँहगाईके रूपमें चुकाना पडता है।

लेकिन इस विषयपर कभी फिर विचार करेंगे। इस समय तो इतना ही कह देना काफी है कि कपासकी फसल आना अभी बाकी है और उसके विदेशोंमें भेजे जानेके लिए बेचनेके पहले समझदार किसान उसका संग्रह कर ले और सयाने-समझदार स्त्री-पुरुष ऐसा करनेके लिए नासमझ लोगोंको समझायें।

जिस तरह हम लोग १९२१ में चन्दे उगाहा करते थे, उसी तरह अब हमें चाहिए कि कपास उगाहे और उसे कतवायें-बुनवायें। इस बातमें मुझे कोई सन्देह नही कि पैसा उगाहनेकी बनिस्बत यह काम ज्यादा लाभदायक है, क्योंकि पैसा तो सूदसे ही बढता है और सूद आलसियोंका धन है। कच्चा माल मेहनतसे बढता है और मेहनत उद्यमीका धन है। हम मध्यवर्गी लोगोंने शारीरिक श्रमका मूल्य समझा ही नही। शारीरिक श्रममें हम सभीको लगा सकते हैं। इसलिए, यदि हमारे पास

१. यतो धर्मः ततो जयः।

कपासका संग्रह हो और उसपर काम करनेवाले देश-सेवक मिल जायें तो उन देश-सेवकोंकी संख्याके अनुपातमें हम कपासका मूल्य जितना बढ़ाना चाहे, बढ़ा सकते हैं।

यदि कपास दानमें मिले और उसपर काम करनेवाले लोग अपनी मेहनत भी दानमें दे तो खादीको हम पानीके दाम बेच सकते है; यह बात आसानीसे समझमें आ सकती है। किन्तु वस्तुतः ऐसा नही होगा, क्योंकि उसका प्रबन्ध करनेमें, उसे कतवानेमें, कितने ही सेवकोको केवल आधा घंटा ही नही, बल्कि अपना सारा समय देना पड़ेगा; और यह स्पष्ट ही है कि वे बिना भत्तेके काम न कर सकेंगे। पर अगर आधे घंटेकी मेहनत देनेवाले हजारो भाई हमें मिल जायें तो थोड़े-से वैतनिक कार्यकर्त्ताओंसे ही हम बहुत काम कर सकते हैं। मगर इन सारे कार्योंके विषयमें विचार करनेसे पहले हमारे पास कपासका बड़ा संग्रह होना चाहिए। इसीलिए मेरी सलाह है कि कमेटियाँ कपासका जितना हो सके उतना संग्रह करें। संग्रह करनेवालो-को चाहिए कि जिस प्रकार पैसेका हिसाब रखा जाता है उसी तरह उसका हिसाब भी रखें। कपासका एक भी डोड़ा बेकार न जाये, एक भी गाला हवामें न उड़े।

हमें उसका संग्रह करनेके उपायोंपर भी विचार करना होगा। यह भी जानना जरूरी होगा कि रुईकी गाँठें किस तरह बाँधी जायें। इस तरह कताईसे सम्बन्धित ये सारी क्रियाएँ समझमें आ जायेंगी। और जब इन सभी क्रियाओंका उद्देश्य सारी जनताका कल्याण होगा तो इनमें कितनी शक्ति आ जायेगी, यह समझदार पाठक सहज ही सोच सकते हैं।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ७-१२-१९२४

३४५. अध्यक्षीय भाषण: पंजाब प्रान्तीय सम्मेलनमें[1]

७ दिसम्बर, १९२४

गांधीजीने बताया कि उन्होंने सम्मेलनकी अध्यक्षता कैसे स्वीकार की। इस सिलसिलेमें उन्होंने लालाजीके नाम पण्डित मोतीलालजीका पत्र पढ़कर सुनाया। मोती-लालजीने इस पत्रमें लिखा था कि मैं व्यस्तताके कारण लाहौर आकर सम्मेलनकी अध्यक्षता नहीं कर सकूँगा। उन्होंने उसमें यह भी लिखा था कि मैं सम्मेलन वगैरहसे तंग आ गया हूँ और मुझे लगता है कि वे केवल दिखावा-मात्र हैं। महात्माजीने कहा कि मैं पण्डितजीके इस विचारसे पूर्णतः सहमत हूँ। मैं और हकीमजी सम्मेलनमें शरीक होने नहीं, बल्कि आजकी ज्वलन्त समस्याका हल खोज निकालनेके लिए आये हैं। सुना है, 'तंजीम' का कहना है कि यह सम्मेलन सिर्फ हिन्दुओंका सम्मेलन है और मुसलमानोंको उससे अलग रहना चाहिए। मैंने 'तंजीम' के [इस लेखका] वह खास अनुच्छेद तो नहीं देखा है, परन्तु मैं आपको बताना चाहता हूँ कि डा० किचलू,

१. लाहौरके ब्रैडलॉ हॉलमें हुए प्रान्तीय सम्मेलनके ग्यारहवें अधिवेशनमें।

खिलाफत सम्मेलनके अध्यक्ष डा० अन्सारी, मौलाना मुहम्मद अली और शौकत अली खिलाफत सम्मेलन छोड़कर यहाँ लाहौरमें नेताओंके सम्मेलनमें शरीक होने आये हैं।

महात्माजीने हिन्दुओ और मुसलमानोके बीच फैली तनातनीके सवालपर आते हुए कहा, इस तनावकी जड़ पंजाबमें ही है। देशके अन्य सभी भागोंके उपद्रवोका मूल पंजाबमें ही मिल सकता है। इसलिए पंजाबके हिन्दू और मुसलमान जिस दिन एक हो जायेंगे, उसी दिन देश-भरमें हिन्दुओ और मुसलमानोकी एकता कायम हो जायेगी। असहयोग असफल नहीं हुआ है — असहयोगमें असफलता होती ही नहीं — हम लोग तो हिन्दुओ और मुसलमानोके दंगोंके कारण असफल हुए हैं। मैं तो समझता हूँ कि ये मतभेद न होते तो कौंसिलमें प्रवेशका भी कोई प्रश्न खड़ा न होता। १९२१ में लगता था कि हममें एकता है; लेकिन वह सच्ची एकता नहीं थी। वह एकता तो क्षणिक आवेशके परिणामस्वरूप उत्पन्न हुई थी; और यह बहुत अच्छा हुआ कि आज हमें चुनौती देते हुए यथार्थ हमारे सामने आ गया है।

हकीमजी, डा० अन्सारी और अली भाई खिलाफत सम्मेलनमें शरीक होने नहीं आये है। वे प्रान्तीय सम्मेलनमें भाग लेने भी नहीं आये हैं। वे तो यहाँ हिन्दू-मुस्लिम समस्याका कोई हल खोजनेमें सहायता देनेके लिए आये हैं। मेरे पास तो इसका बस एक ही हल है और वह यह है कि एक जाति दूसरेकी सभी राजनीतिक माँगोको पूरी तरह मान ले। अब यहाँ कोई पूछ सकता है कि सिखो-जैसी एक अल्प-संख्यक जाति हिन्दुओं और मुसलमानोके हकमें अपने सारे राजनीतिक अधिकार कैसे छोड सकती है? मुझे इस बातमें किंचित् भी सन्देह नहीं कि संसारके सामने अहिंसाका अनुपम उदाहरण प्रस्तुत करनेवाली और अनोखे त्यागका सबूत देनेवाली यह जाति इस त्यागको करनेमें, जो वस्तुतः एक तुच्छ-सा त्याग है, कोई कठिनाई महसूस नहीं करेगी।

लेकिन जब मैं हिन्दुओसे ही यह हल स्वीकार नहीं करा पाया हूँ तब सिखो और मुसलमानोके सामने क्या मुँह लेकर ऐसा प्रस्ताव रख सकता हूँ? मैं एक सनातनी हिन्दू हूँ और इस नाते मैं अपने हिन्दू भाइयोंके सामने यह हल रख रहा हूँ। कहा जाता है कि इससे तो हिन्दुओके साथ बुरी तरह विश्वासघात होगा और मुसलमान तथा सिख हिन्दुओके इस त्यागका अनुचित लाभ उठायेंगे। मेरा कहना है कि हमें ऐसी विषम स्थितियोका सामना करनेके लिए तैयार रहना चाहिए, क्योंकि मैं चाहता हूँ कि आप भी मेरी तरह विश्वास रखें कि विश्वासघातीका ही नाश होगा, विश्वासघातका शिकार बननेवालेका नहीं। हमें बिलकुल बुनियादी बातोमें किंचित् भी झुकनेकी जरूरत नहीं। बल्कि मैं तो आपसे यह कहूँगा कि उनके लिए आप अहिंसा अथवा हिंसाकी तलवार उठाकर संघर्ष करें। प्राचीन कालका एक उदाहरण मैं आपके सामने रखता हूँ। पाण्डवोंने अपना सर्वस्व त्याग दिया था, जिसमें राज्य भी शामिल था; और बदलेमें अपने निर्वाह और निवास-भरके लिए माँग की थी। उन्होने

सर्वस्व त्यागकर भी कुछ खोया नहीं था। गैर-बुनियादी बातोंके बारेमें झुक जाना उचित है — यही कुंजी मैं आपको दे रहा हूँ। इस कुंजीसे समस्त संसारको वशमें किया जा सकता है। गांधीजीने उन बुनियादी बातोंका, जिनके बारेमें झुकना नहीं चाहिए, उल्लेख करते हुए कहा कि यदि मुसलमान आपके मन्दिरोंपर हमला करें, और आपको उनमें पूजा करनेके अधिकारका उपयोग न करने दें तो आप उनसे मृत्युपर्यन्त संघर्ष कर सकते हैं। लेकिन कौंसिलों और नगरपालिकाओंमें तथा नौकरियोंमें ज्यादा स्थान पानेके लिए लड़ना आपके लिए ठीक नहीं है।

मैं एक व्यावहारिक राजनीतिज्ञकी हैसियतसे उन बहादुर पंजाबियोंको सचमुच दयाका पात्र समझता हूँ, जिन्होंने अपनी सहज बुद्धिको तिलांजलि देकर इन छोटी-छोटी चीजोंकी लड़ाईमें साम्प्रदायिक एकता तकको बलि चढ़ा दी है। मैं तो यहाँ हिन्दुओंसे यही कहने आया हूँ कि आप ईश्वरपर कुछ ज्यादा भरोसा रखें और अपने मनसे भय निकाल दें। आपके सम्मुख अपने मन्दिरोंको और अपनी औरतोंकी आबरूको बचानेका रास्ता यही है कि आप इनके लिए लड़ते हुए जान दे दें और उनको भाग्यके भरोसे छोड़कर भाग न जायें। यदि आप अपनी बहू-बेटियोंकी आबरू बचानेके लिए लड़ते हुए बहादुरीसे जान नहीं दे सकते तो आपके लिए अच्छा यही होगा कि आप अपने आस-पासकी किसी नदीमें डूबकर आत्म-हत्या कर लें। परन्तु जहाँ गैर-बुनियादी या गैर-जरूरी बातोंका सवाल है वहाँ तो समर्पण कर देना ही एकमात्र उपाय है। मुसलमानोंका प्रेम प्राप्त करनेका यही एक रास्ता है। अंग्रेजों और मुसलमानों — दोनोंका गुलाम बननेसे तो मुसलमानोंकी गुलामी स्वीकार करना कहीं अधिक अच्छा है। मेरे अन्तरमें कितनी मर्मान्तक पीड़ा हो रही है, काश मैं आपको यह दिखा पाता। पता नहीं, इस मर्मान्तक पीड़ाकी आगको कौन बुझा सकेगा।

कुछ हिन्दू कहते हैं कि उनको मुसलमानोंने ही हमेशा सताया है। मैं उनके सामने कुछ उदाहरण रखता हूँ। बदायूँ और कुछ अन्य स्थानोंपर हिन्दुओंने भी बदला लेनेकी कोशिश की है। मैंने इसका जो ब्यौरा सुना, उसमें काफी नमक-मिर्च लगाया हुआ था। लेकिन अच्छी तरह पूरी जाँच करानेके बाद मुझे पता लगा है कि बदला लेनेकी कुछ-न-कुछ कार्रवाई तो अवश्य की गई। मैं आपको बता दूँ कि किसी भी हिन्दू शास्त्रमें यह नहीं लिखा है कि यदि मन्दिर तोड़ा जाये तो उसका बदला लेनेके लिए मसजिद तोड़ दी जाये या किसी हिन्दू औरतकी बेइज्जती की जाये तो उसका बदला मुसलमान औरतकी बेइज्जती करके लिया जाये। मैं आपके सामने इन उदाहरणोंको हिन्दुओं और मुसलमानोंकी तनातनी बतानेके लिए नहीं रख रहा हूँ। मैं सिर्फ इतना कहना चाहता हूँ कि हिन्दू भी बदला लेनेकी कार्रवाई करनेमें पीछे नहीं रहे हैं। परन्तु ये साम्प्रदायिक तनावके प्रमाण नहीं, बल्कि इस बातके सबूत हैं कि इन्सानके अन्दर शैतान मौजूद है। उसे शैतानियतसे नहीं निकाला जा सकता। उसे तो सत्प्रयत्नोंसे ही निकाला जा सकता है।

मैं अन्तमें यही कहना चाहता हूँ कि शान्तिपूर्ण असहयोगका एकमात्र मार्ग चरखा ही है। मेरी तरह ही सभीको — मौलाना शौकत अलीको और सरदार मंगलसिंहको भी — चरखा चलाना चाहिए। मैं चाहता हूँ कि यह काम जितना स्त्रियाँ करें उतना ही पुरुष भी करें। इसमें लज्जाकी कोई बात नहीं। लंकाशायरकी मिलोंके तकुए पुरुष ही चलाते हैं, स्त्रियाँ नहीं। काहिल आदमी ही चरखा चलानेसे कतराता है। मैं तो चरखेको ही भारतकी एकमात्र अर्थनीति और राजनीति मानता हूँ। अपरिवर्तनवादियो और स्वराज्यवादियोंके बीच समझौतेके हिस्सेके रूपमें कताई सदस्यताका प्रस्ताव भी आपके सामने आयेगा। "अनिच्छुक" लोगोंके लिए उसमें यह गुंजाइश रखी जा रही है कि वे दूसरोंसे अपने हिस्सेका सूत कतवा सकते हैं। लेकिन वह तो श्री केलकर, हकीमजी और नरमदलीय लोगोंके लिए है। मुझ जैसे सामान्य मनुष्यों और मेहनतकश लोगोंका तो नित्य-प्रतिका कर्त्तव्य है कि हम चरखा चलायें। मेरा आपसे यही अनुरोध है कि आप समझौतेका समर्थन तभी करें जब आप सूत कातने और खद्दर पहननेकी बात हृदयसे मानते हों। आप उसका समर्थन सिर्फ मेरे व्यक्तित्वका खयाल करके न करें।

[अंग्रेजीसे]

ट्रिब्यून, ९-१२-१९२४

३४६. भाषण: पंजाब प्रान्तीय सम्मेलनमें[1]

७ दिसम्बर, १९२४

महात्मा गांधीने सम्मेलनकी कार्रवाईका समापन करते हुए कहा कि लोग राष्ट्रीय नारोंको बड़ी अहमियत देते हैं, लेकिन उनका कोई अधिक महत्त्व नहीं है। यह समय नारे लगानेका नहीं, काम करनेका है। अगर आप मेरी बताई तीन शर्तें पूरी कर दें तो भारत निश्चय ही अपने लक्ष्यकी ओर आगे बढ़ेगा। वे तीन शर्तें हैं — हिन्दू-मुस्लिम एकता, खद्दर और कताई तथा अस्पृश्यता-निवारण। स्वराज्य हासिल करनेके लिए संकल्प और शक्तिकी जरूरत है। आपमें संकल्प तो है, परन्तु आप अपनी शक्ति आपसी झगड़ोंमें नष्ट कर रहे हैं।

महात्माजीने आगे कहा, मैं दोनों जातियोंमें एकता पैदा करनेकी कोशिश कर रहा हूँ। मैंने लाहौरमें हिन्दू और मुसलमान दोनों जातियोंके नेताओंसे अनौपचारिक तौरपर बातचीत की है, परन्तु अभी कोई निबटारा नहीं हो पाया है। किन्तु इस समस्याके समाधानकी दिशामें कई कदम जरूर उठाये जा चुके हैं। खद्दर और अस्पृश्यताका संक्षेपमें उल्लेख करनेके बाद महात्माजीने कहा, मुझे अब भी विश्वास है

१. यह सम्मेलन लाहौरमें हुआ था।

कि मैंने बारडोलीमें जो कदम उठाया था, वह ठीक था। उसके कारण देशकी एक भारी विपत्ति टल गई है।

इसके पश्चात् महात्मा गांधीने अहिंसाके फलितार्थ बताये और कहा कि मैं अहिंसाको धर्म मानता हूँ, परन्तु यदि कुछ लोग इसे एक नीतिके रूपमें भी स्वीकार करें तो उन्हें तबतक इसका पालन सचाईसे करना चाहिए जबतक वे इसे स्वीकार करें।

महात्माजीने अन्तमें अपनेको अध्यक्ष चुननेके लिए सम्मेलनके संयोजको और अन्य लोगोंके प्रति आभार प्रकट किया।

[अंग्रेजीसे]

ट्रिब्यून, १०-१२-१९२४

३४७. भाषण : रावलपिंडीमें

९ दिसम्बर, १९२४

आरम्भमें, उन्हें जो मानपत्र भेंट किया गया था, उसका उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा कि जबतक मुझको अथवा शौकत अलीको सारे हिन्दुस्तानकी ओरसे बोलनेका अधिकार था, तबतक तो हममें से एकको ही मानपत्र देनेसे काम चल जाता था; लेकिन आज :

मुसलमानोकी ओरसे बोलनेका मेरा अधिकार जाता रहा और शौकत अलीको हिन्दुओकी ओरसे बोलनेका अधिकार नही रहा। यह दुर्भाग्यकी बात है। लेकिन जबतक यह दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति कायम है, तबतक आपको हम दोनोको मानपत्र देना चाहिए।

उन्होंने कोहाटकी दुर्घटनापर बोलते हुए कहा :

यह दुर्घटना कैसे हुई और इसमे सबसे अधिक अपराध किसका था, आज यह सब बतानेकी मेरी इच्छा नही है। इसका एक कारण यह है कि मेरे पास पूरे तथ्य नही है। लेकिन इतना तो साफ ही है कि वहाँसे आकर दो-तीन हजार हिन्दुओने यहाँ रावलपिंडीमे शरण ली है। उन्हे कोहाट छोड़ना पड़ा, इसकी जिम्मेदारी तो हिन्दू और मुसलमान दोनो कौमोंपर है और जबतक वे यहाँ पड़े है तबतक दोनो कौमोकी बदनामी है। यह बदनामी मिटे, इसलिए शौकत अली, किचलू, जफर अली और मैं यहाँ आये है। अभी हमे इसमे सफलता नही मिली है। इसका कारण यह है कि तीसरी शक्ति भी अपना काम कर रही है। इस शक्तिका काम झगडा कराना न भी हो तो झगडेको बढाना तो है ही, और मेरी जानकारीमे अभीतक ऐसा कोई प्रसग नही आया है जब उसने कोई झगडा शान्त किया हो। सच तो यह है कि यदि सरकारने अपने कर्त्तव्यका पालन किया होता तो कोहाटकी दुर्घटना घटित ही न होती और हिन्दू वहाँसे भागते ही नही। वहाँके अधिकारी या तो नामर्द बन गये अथवा उन्होने अपने कर्त्तव्यके विरुद्ध व्यवहार किया। सरहदी लुटेरे तो

सबको लूटते हैं; इसलिए विश्वासपूर्वक यह कहना मुश्किल है कि यह उपद्रव केवल हिन्दुओंको लूटनेके लिए खडा किया गया। लेकिन मैं यह जरूर कहूँगा कि लूटने और माल-मिल्कियत जलानेका काम करनेवाले सरहदके लोग नही, बल्कि सरहदके अधिकारी हैं। मैं तो चाहता हूँ कि यह सल्तनत जिस तरह कोहाटमें अपने फर्जको भूल गई उसी तरह हमेशा भूलती रहे। यह सल्तनत बिलकुल बैठ जाये और हिन्दू-मुसलमान एक-दूसरेसे जी-भरकर लडें और एक-दूसरेको लूटे तो भी मुझे कोई दु:ख नही होगा। जबतक दोनो कौमोंके दिलमें मैल है, कमजोरी है, कायरता है, तबतक वे आपसमे लडकर खूनकी नदी बहायेंगी। लेकिन अन्तमे दोनो कौमोंके नेता समझ जायेंगे कि हम अधर्म कर रहे हैं और तब लडाई बन्द करके बैठ जायेंगे। लेकिन आज तो हम तीसरी शक्तिका सहारा लेकर लडते हैं। यदि हम उसका सहारा लेकर लडेंगे तो हमारी किस्मतमे हमेशाके लिए उनकी गुलामी लिखी हुई समझिए। यदि आप हिन्दू-मुस्लिम-एकताके महत्त्वको समझते हों तो इस तीसरी शक्तिका सहारा लेना छोड दें। मैं आपसे इतना ही कहता हूँ कि अगर सरकार आपके ऊपर गुस्सा दिखाये और मुसलमानोंकी ही मदद करे तो आप रामका नाम लेते हुए मर मिटिए। आज तो सरकारी अधिकारी आपको ये ताने देते हैं कि "शौकत अलीके पास जाओ", "गांधीके पास जाओ।" मुझे दु:ख है कि आज हम कुछ कर नही सकते, क्योंकि हमारे पास तलवार नही है। मैंने तलवार फेंक दी है और शौकत अलीने म्यानमे रख ली है। अत: हमे आपको इतनी ही सलाह देनी है कि यदि आपको स्वराज्य लेना हो तो आप आजाद-दिल बनें। इन्सान अपनेको आप ही मिटा सकता है, उसे कोई दूसरा इन्सान नही मिटा सकता। आप कहेंगे कि इस सलाहका परिणाम तो बरबादी ही होगा, इससे मदद क्या मिली तो मैं कहूँगा कि मैं तो बरबाद होनेकी, कुर्बानी करनेकी ही बातें करता हूँ।

सरहदके हिन्दुओंसे मैं यह कहूँगा कि जहाँकी ९५ प्रतिशत आबादी मुसलमान है, वहाँ वे सरकारकी सलाहपर कदापि वापस न जायें।[1] अगर जायें तो उसी स्थितिमें जायें, जब सरहदके मुसलमान उनसे अनुरोध करें, उनकी इज्जत-आबरू रखने और हमेशा उनकी रक्षा करनेका आश्वासन देकर उन्हें वापस ले जाना चाहें। आप वहाँ कई पीढियोंसे रहते आये हैं। उन लोगोंको मनाये बिना आप वहाँ कैसे रह सकेंगे? आपने वहाँ कमाई की है, दुकानें खोल रखी हैं। उनके साथ सलाह-मसलहत किये बिना आप वहाँ सुख और शान्तिसे कैसे रह सकेंगे? सरकार किसी भी बडी कौमके विरुद्ध संरक्षण नही दे सकती। यदि हमें स्वराज्य मिल जाये और शौकत अली कमान्डर-इन-चीफ तथा मैं वाइसराय हो जाऊँ और मुझसे कोई यह कहे कि आप एक कौमकी रक्षा करें तो मैं भी यही कहूँगा कि ९५ प्रतिशत आबादीवाली कौमसे मैं आपकी रक्षा नही कर सकता। जहाँ मुसलमान ५ प्रतिशत होंगे, वहाँ मैं उनसे भी यही बात कहूँगा। सरहदमें इज्जत और मुहब्बतसे रहनेका एकमात्र रास्ता यही है।

१. मूलमें यह वाक्य जैसा है, उसके अनुसार इसका अनुवाद होगा "वहाँ वे सरकारकी सलाह लेने कदापि न जायें", किन्तु सन्दर्भको देखते हुए उक्त अनुवाद ठीक प्रतीत होता है।

मैं जानेसे पहले आपसे इतना और कहना चाहता हूँ कि यदि आप अपनी रक्षा करना चाहते है तो आप सरकारसे कहे कि जबतक मुसलमानोके साथ हमारा निबटारा नही हो जाता, जबतक मुसलमान हमे बुलाकर नही ले जाते तबतक हम यहाँसे हिलनेवाले नही है। यदि कोहाटी लोग मेरी यह सलाह माननेके लिए तैयार हो तो मैं उनसे यह खुला करार करता हूँ कि "बेलगाँव कांग्रेसके बाद मैं यहाँ आकर कोहाटियोके बीच जमकर रहनेके लिए तैयार हूँ, [उनके उद्देश्यको लेकर] सारे हिन्दुस्तानका दौरा करनेके लिए तैयार हूँ।" लेकिन यदि वे सरकारके कहनेसे कोहाट जायेंगे तो यह उनके लिए और हिन्दू तथा मुसलमान, दोनोके लिए भारी हानिकारक बात है। यदि सरकार उनकी सारी माल-मिल्कियत उन्हे दिला दे और तीन करोडकी क्षतिपूर्ति कर दे तो भी उससे रक्षाका आश्वासन लेकर वहाँ जानेमें हिन्दू और मुसलमान दोनोका नुकसान है। यदि आप मेरी सलाहके बावजूद वहाँ जायेंगे तो कांग्रेसमें भी मेरा काम मुश्किल हो जायेगा। ईश्वर आपको मुसलमानोके साथ एकतासे रहनेकी शक्ति दे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १४-१२-१९२४

३४८. मेरी पंजाब-यात्रा

इच्छासे नहीं

अपनी इच्छासे नही बल्कि आवश्यकतावश, मैंने पंजाब प्रान्तीय सम्मेलनका सभापति होना स्वीकार किया।[1] पंजाबी किसी बाहरके आदमीको और यदि सम्भव हो तो मौलाना अबुल कलाम आजादको सभापति बनाना चाहते थे। मौलाना साहब इसके लिए राजी न थे। उनका कहना था कि मैं परिषद्में सहर्ष हाजिर हो जाऊँगा। परन्तु मैं समझता हूँ कि मैं अलग रहकर अधिक उपयोगी हो सकूँगा। मौलानाकी बात लोगोकी समझमें आ गई। उसके बाद पण्डित मोतीलालजीसे अनुरोध किया गया। उन्होने कहा कि यदि कोई खास बाधा न हुई तो मैं सभापतिका स्थान ग्रहण कर सकूँगा और यदि पण्डित मोतीलालजी सभापति होनेमे असमर्थ रहें तो सभापति-पदका भार मेरे सिर डाला जानेवाला था। बदकिस्मतीसे, एक अनपेक्षित घटना हो गई जिससे वे न आ सके। इसके जो कारण उन्होने बतलाये है, वे सार्वजनिक महत्त्वके हैं, इसलिए मैं उन्हे उन्हीके शब्दोमे यहाँ देता हूँ।

जी ऊब उठा

लालाजीके पास भेजे हुए पत्रमे वे लिखते है :

"पंजाब प्रान्तीय सम्मेलनके सभापति पदकी मेरी स्वीकृतिके सम्बन्धमें काफी गलतफहमी पैदा हो गई है। मैं और महात्माजी दोनो इस बातमें सहमत

१. देखिए "अध्यक्षीय भाषण: पंजाब प्रान्तीय सम्मेलनमें", ७-१२-१९२४।

थे कि मौलाना अबुल कलाम आजाद ही सबसे योग्य सभापति होंगे और यदि हम लोग उन्हें राजी न कर सके तो उस हालतमें मैं उनका स्थान ग्रहण करूँगा, पर इसी बीच मुझे अपनी पुत्रवधुकी गम्भीर बीमारीकी सूचना मिली और मुझे फौरन एक प्रसूति विशेषज्ञ साथ लेकर जाना पड़ा। मौलाना साहब मेरे साथ ही सभाभवनसे बाहर आये और मैंने उनसे साफ कह दिया था कि अब मैं पंजाब और नागपुरके कार्यक्रम पूरे नहीं कर सकूँगा। मैंने उनसे यह भी कहा था कि अब आपको ही पंजाब सम्मेलनका सभापति होना चाहिए और नागपुरके लिए कोई दूसरा समय ठीक कर लेना चाहिए। वहाँसे चलते समय मैं ऐसा समझता था कि महात्माजीसे इस विषयपर बातचीत करके यदि वे स्वयं सभापति होनेपर राजी न हो तो इस कामके लिए किसी औरको ठीक करेंगे। यहाँ पहुँचनेपर हम लोगोंने एक दिन बड़ी चिन्तामें काटा। नवजात शिशुको बचानेकी कोशिश करते रहे, परन्तु आखिर बच्चा जाता रहा। बच्चेकी हालत साधारणतः अच्छी थी, परन्तु ज्वर होनेके कारण पूरी तरह सन्तोषजनक न थी। इसी गड़बड़ीमें मुझे कलकत्तेके समाचार मिले जिनमें वहाँ होनेवाली घटनाओंकी सूचना दी गई थी और मुझे खबर मिलते ही तुरन्त रवाना होनेके लिए तैयार रहनेको कहा गया था।

ज्यों ही जवाहरकी पत्नीके सम्बन्धमें कोई भय न रहा, मैंने प्रयागके हिन्दू-मुसलमानोंके झगड़ोंकी ओर अपना ध्यान फेरा। मैंने ऐसा निश्चय किया कि जबतक मुझे कलकत्तेसे सूचना न मिले तबतक मैं अपनी सारी शक्ति इसी सवालको हल करनेमें लगाऊँ। स्थिति मुझे बहुत ही बुरी मालूम पड़ी। बहुत दिनोंतक शहर और सूबेसे अलग रहनेके कारण मेरे ऊपर चारों ओरसे कड़ी शिकायतोंकी बौछार हो रही थी। मैंने लोगोंको विश्वास दिलाया कि मैं उनके लिए पूरे पन्द्रह दिन काम करके उनकी काफी क्षति-पूर्ति कर दूँगा।

मैं अपने इस आश्वासनको पूरा करनेमें फौरन ही जुट पड़ा। पहले जब मैं अपनी यात्राओंमें थोड़ी-थोड़ी देरके लिए यहाँ आया था तब नामधारी अग्रगण्य हिन्दुओं और मुसलमानोंसे मेरा जी ऊब उठा था। इस बार मैंने ऊपरसे काम करनेके बदले नीचेसे ही काम शुरू करनेका निश्चय किया। मैं बहुत समयसे सोचता आ रहा था कि एक हिन्दू-मुस्लिम संगठन खड़ा किया जाये; मैंने प्रयागसे ही इस कामका आरम्भ करनेका विचार किया। इस दिशामें मैंने सबसे पहले विश्वविद्यालयके अध्यापकों और विद्यार्थियोंसे सम्पर्क स्थापित किया। विश्वविद्यालयमें एक संघ है। उसकी एक शाखा सामाजिक सेवाके लिए है। दोनोंके काफी सदस्य हैं। अध्यापकोंके साथ मिलनेपर यह निश्चय किया गया कि समाज सेवा-विभागको ही हिन्दू-मुस्लिम संगठनका केन्द्र बनानेका प्रयत्न किया जाये। इसके अनुसार एम० ए० वर्गके दो विद्यार्थी—एक हिन्दू और एक

मुसलमान — चुने गये। जातिगत मामलोंमें उनकी निष्पक्षता प्रमाणित हो चुकी थी। संगठनके लिए विद्यार्थियोंमें से सदस्य बनानेका काम उन्हे दिया गया। साथ ही साथ, इसी तरह प्रत्येक मुहल्ला संगठित किया जा रहा है। कलसे मैं हरएक मुहल्लेमें जानेवाला हूँ और साथ ही मैं विद्यार्थियोंके दलोंको खास-खास समयपर आनन्द-भवनमें बुलाकर उनसे बातें करूँगा। जब यह प्रारम्भिक काम हो जायेगा, तब मैं सारे विद्यार्थी-वर्गसे एक साथ मिलूँगा और एक दो सार्वजनिक सभाओंमें भाषण करूँगा। यदि समय मिला तो मैं लखनऊ जाकर भी ऐसा ही करूँगा।

आप देखेंगे कि उपर्युक्त कार्यक्रममें ठोस कामकी योजना है और इसके अन्दर बाहरी दिखावेको बिलकुल स्थान नहीं है जो अभाग्यवश आजकल हमारे सार्वजनिक कामोंका एकमात्र रूप रह गया है। यदि सच पूछिए तो अब सभा-सम्मेलनोंकी ओरसे मेरा मन बिलकुल हट गया है, ये सिर्फ चन्दरोजा दिखावे हैं जिनसे कभी कोई भी वास्तविक फल नहीं निकलता। नागपुरके झगड़ोंके फैसलेका समय आ गया है और नागपुरसे आये हुए पत्रोंसे मालूम होता है कि इसकी सख्त जरूरत है कि पंच (मैं और मौ० अबुल कलाम आजाद) वहाँ मिलकर बेलगाँव कांग्रेसके पहले यह झगड़ा तय कर दें। इसके लिए १५ तारीख निश्चित करनेका प्रस्ताव करते हुए, मैंने मौलाना अबुल कलाम आजादको कलकत्ते दो तार दिये हैं, परन्तु उनका जवाब नहीं आया है।

मैंने आपको इतना इसलिए लिखा है कि मैंने अपने लिए जो काम तजवीज किया है उसका आपको ठीक-ठीक खयाल हो जाये। मुझे आशा है कि आप मुझसे इस बातमें सहमत होंगे कि इस हालतमें मेरा पंजाब जाना उतना लाभदायक न होगा।

पण्डितजीके समान ही मैं भी इन सम्मेलनोसे घबराता हूँ। इसलिए नही कि वे हमेशा बेकार ही होते है। हमारे आन्दोलनके क्रममें एक मजिल ऐसी थी जब उनकी बड़ी जरूरत थी। परन्तु सम्मेलनोमे आजकल जो हो रहा है उसे देखते हुए तो यही कहना पड़ता है कि उनकी उपयोगिता प्राय. कुछ नही रह गई है। यदि उनसे कोई और नुकसान न हो तो भी समय और रुपयेका अपव्यय तो होता ही है। इनके द्वारा सार्वजनिक सेवाका जो भाव जागृत हुआ है उसे कार्यके रूपमे सुदृढ़ करनेके लिए छोटी-छोटी समितियाँ ही अधिक उपयोगी होगी। ये समितियाँ तभी उपयोगी हो सकती है जब उनके सदस्य आपसमे मेल-मिलाप रखनेवाले, सर्व-सामान्य प्रजाजनकी इच्छाओका ध्यान रखनेवाले तथा अपने ठोस और असली कामके द्वारा उनसे अपना सम्बन्ध बनाये रखनेवाले हो। इन सम्मेलनोका त्याग, हम जनताकी विमनस्कता वा मन्दताके कारण नही, बल्कि इसलिए करे कि हम जनताको उनके बजाय और ज्यादा उपयोगी काममे लगा सकते है। उदाहरणके लिए, यह बड़ी नासमझीकी बात होगी कि हम खादीके काममे लगे हुए लोगोंको बुलाकर उनसे ऐसे

विपयोपर प्रस्ताव पास करायें जिनपर लोग एकमत है। इसी तरह जो लोग अकाल-पीडित स्थानोमें सहायता पहुँचानेकी व्यवस्था करनेमे लगे हो, उन्हे भी ऐसे कामके लिए वुलाना उचित न होगा। स्वय पण्डितजी भी प्रयागमे अपने शान्ति-दलको सगठित करनेके अविक उपयोगी काममें सलग्न है और यदि वे सच्चे हिन्दू-मुस्लिम सगठन कायम करनेमे सफल हो तो यह देशके लिए प्रथम श्रेणीकी सेवा होगी। वीचवालोंके द्वारा नही, वल्कि जडसे ही काम शुरू करनेका उनका जो सकल्प है, उसके फल-स्वरूप हिन्दू-मुस्लिम जनतामे सद्भाव फैले विना नही रह सकता।

मेरा असली काम

यह सम्मेलन मेरे लिए एक आनुपगिक वस्तु थी। मेरा असली काम तो हिन्दुओ और मुसलमानोके प्रतिनिधियोसे मिलना ही था। इसलिए अमृतसरकी खिलाफत परिपद्मे उपस्थित जनतासे सम्मेलनके दूसरे दिनकी वैठकको, उस दिनके तीसरे पहरतक मुल्तवी करनेका अनुरोध करनेमे मुझे कोई हिचकिचाहट न हुई। मेरा ऐसा करनेका तात्पर्य यह था कि ८ तारीखको सवेरे ये लोग प्रतिनिधियोकी वा-जाव्ता सभामें योग दे सके। मुझे यह देखकर वडी खुशी हुई कि उपस्थित सज्जनोंने मेरी यह राय मान ली। मौलाना जफर अली खाँ (सभापति), डाक्टर किचलू तथा अन्य सज्जन वडी असुविधा उठाकर भी उस सभाके लिए लाहौर आये।

परिणाम

पाठकको यह वतलानेकी आवश्यकता नही कि यह सभा खास इसी उद्देश्यसे की गई थी कि हिन्दुओ और मुसलमानोकी आपसी तनातनीको रोकने और इन दोनो जातियोके वीच असली अमन कायम करनेके उपायोपर विचार किया जाये। वाहरसे आनेवाले मुसलमानोमे हकीम साहव अजमलखाँ, अली वन्धु और डाक्टर अन्सारी, तथा हिन्दुओमे पण्डित मदन मोहन मालवीय उपस्थित थे। चर्चा मुख्यत झगडोके राजनीतिक कारणोके सम्वन्धमे हुई। क्योकि पजावके पढे-लिखे लोगोके वीच इस मनोमालिन्यके सव नही तो प्रधान कारण राजनीतिक ही मालूम होते है। लालाजीने वडे दु खके साथ मुझसे कहा कि पहले जहाँ शिक्षित हिन्दुओ और मुसलमानोमे सामाजिक सद्भाव था वहाँ अव मन-मुटाव वढता जा रहा है। इसलिए वैठकमे इस वात पर विचार किया गया कि क्या लखनऊमें हुए समझौतेमे कुछ सशोधन किया जाना चाहिए। पजावके मुसलमानोका खयाल है कि लखनऊवाले समझौतेको आरम्भमे हो गई एक वडी भूल न माना जाये तो भी अव वह हमारे लिए नाकाफी हो गया है। उनका कहना है कि जवतक साम्प्रदायिक द्वेप वढ रहा है और पारस्परिक अविश्वास मौजूद है तवतक —

१. साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व रखा जाये और उसका आधार जनसख्या हो। निर्वाचक-मण्डल कमसे-कम सवका एक ही या जरूरत हो तो अलग-अलग भी रहे।

वे लोग इस वातपर एकमत मालूम पडते थे कि पृथक् निर्वाचनकी वात छोटी-छोटी जातियोके चाहनेपर ही दाखिल की जाये।

२. किसी भी सम्प्रदाय या पथके साथ रिआयत न होनी चाहिए अर्थात् किसीको भी अपनी सख्याके अनुपातसे अधिक प्रतिनिधि भेजनेका अधिकार न होना चाहिए।

३. इस सिद्धान्तके अनुसार विधान-सभाओके लिए जो व्यवस्था तय पाई जाये वही स्थानीय सस्थाओके लिए भी लागू होनी चाहिए।

४. भिन्न-भिन्न सम्प्रदायोको सरकारी नौकरियाँ उनकी सख्याके हिसाबसे मिलनी चाहिए; अलबत्ता, इसमे उम्मीदवारोकी कार्य-क्षमताका खयाल अवश्य रखा जाये। इसलिए यदि किसी विभागमे किसी जातिको एक भी पद न मिला हो तो आगे जितनी नियुक्तियाँ हो, आया वे नई हो या खाली जगहोको भरनेके लिए हो, वे उसी जातिमे से होनी चाहिए ताकि उसके सख्याबलके अनुसार उसे समुचित प्रतिनिधित्व प्राप्त हो जाये। दूसरे शब्दोमे इसका मतलब यह है कि किसी वर्ग-विशेषके साथ खास रिआयत या मेहरबानी न होनी चाहिए। उपस्थित मुसलमान सज्जनोने यह स्पष्ट कर दिया कि हम सिर्फ अपनी व्यक्तिगत राय दे रहे हैं। अपनी इन बातोसे किसी औरको नही, केवल अपनेको ही बद्ध करते हैं और यदि कोई जाति किसी खास रिआयतका दावा करेगी तो वे अपनी रायपर पुनर्विचार कर सकेंगे।

५ इसका जो कोई उपाय तय हो वह ऐसा हो जो सारे देशपर घटित हो सकता हो और जिसका निश्चय सारे देशकी सहमतिसे हुआ हो।

सिख भाइयोका यह कहना था कि पजाबमे हमारी एक खास स्थिति और महत्त्व है, अत हमारे साथ विशेष व्यवहार होना चाहिए, अर्थात् यदि पजाबमे जातिगत प्रतिनिधित्वकी प्रणाली चलाई जाये तो हमे अपने सख्या-बलके आधारपर अधिक प्रतिनिधि भेजनेका अधिकार मिलना चाहिए। उन लोगोने कहा कि यदि जातिगत प्रतिनिधित्व बिलकुल ही छोड़ दिया जाये और यदि एक भी सिख विधान-सभाओंमें या और किसी सस्थामे न गया तो भी हमें सन्तोष रहेगा।

हिन्दू लोग चाहते थे कि जातिगत प्रतिनिधित्व कतई नही होना चाहिए और यदि हो भी तो निर्वाचक-मण्डल सयुक्त रहना चाहिए। हिन्दू लोग किसी एक बात पर स्थिर नही हो पाये। पजाबके हिन्दुओको यह डर मालूम होता था कि मुसलमानोकी इस माँगके मूलमे कोई गहरा दाँव-पेच है। असलमे उनके मनमे इस तरहका एक अस्पष्ट भय है कि यदि पजाबके शासन-प्रबन्धमे मुसलमानोका बहुमत हुआ तो लडाकू मुसलमान जातियोके नजदीक ही रहनेके कारण, खासकर पजाबको और सारे भारतको बड़ा भारी खतरा रहेगा।

वहाँकी भिन्न-भिन्न जातियोकी यथार्थ स्थिति यह है। मैंने उसे भरसक सक्षेपमे और ठीक-ठीक देनेका प्रयत्न किया है। ऐसी हालतमें किसी निर्णयपर जल्दी पहुँचनेके लिए जोर देना सम्भव न था। मै यह आशा कर रहा हूँ कि बेलगाँवमे भिन्न-भिन्न जातियोके प्रतिनिधियोका इससे ज्यादा बा-जाब्ता सम्मेलन होगा और वहाँ सब-कुछ विचारकर इस टेढ़े सवालका एक सर्वसामान्य हल सारे राष्ट्रके लिए निकल आयेगा।

सम्मेलन

सम्मेलनके बारेमें सिर्फ यही एक बात उल्लेखनीय है कि विषय-समितिमें और सम्मेलनमें, दोनों जगह, प्रतिनिधियोंने मेरी बड़ी सहायता की। मुझसे भिन्न मत रखनेवालोंने भी बड़े धैर्यसे काम लिया। मैंने यह बात इसलिए बतलाई है कि सभापतिकी आज्ञा मानना, अच्छे सार्वजनिक जीवनके विकासके लिए बड़ा आवश्यक है। निस्सन्देह सभापतिके चुनावमें सबसे अधिक ध्यान रखना चाहिए परन्तु जब कोई मनुष्य सभापति बना दिया जाये, तब उसके साथ पूरी शिष्टता बरतनी चाहिए और उसकी आज्ञाका पालन होना चाहिए। किसी बागी, ढुलमुल या पक्षपाती सभापतिके साथ पेश आनेका यही उपाय है कि उसके खिलाफ विनयपूर्वक अविश्वाससूचक प्रस्ताव पेश किया जाये और उसे अपने स्थानसे हटा दिया जाये। सुसगठित समाजमें, व्यक्तिकी नहीं, बल्कि पदकी इज्जत की जाती है। किसी व्यक्तिके शासनमें और सुसगठित राज्यमें यही बड़ा फर्क है कि दूसरेमें इज्जत पदकी की जाती है, जो राज्य द्वारा अर्थात् जनता द्वारा निर्मित होता है। इस तरह शासक या अध्यक्ष कोई भी क्यो न हो, राज्य बराबर चलता रहता है। दूसरे शब्दोंमें इसका अर्थ यह होता है कि सुसंगठित राज्यका हरएक आदमी अपनी जिम्मेदारी और अपने अधिकारोंको जानता है। प्रत्येक नागरिकके अपने स्वत्वोंको दूसरोंके स्वत्वोंके अधीन माननेके लिए तैयार रहनेपर ही राज्यकी स्थिरता निर्भर है। ऐसा नागरिक जानता है कि अपना फर्ज अदा करनेपर स्वत्व आपसे-आप आते हैं। राज्यकी ओरसे प्रत्येक सदस्य द्वारा किये गये त्यागका योगफल ही राज्य है। लेकिन यद्यपि मैं प्रतिनिधियोंको उनकी सावधानी और सज्जनताके लिए धन्यवाद देता हूँ, मैं यह भी कहूँगा कि अब भी हमारी सभाओंके सदस्योंमें आत्मसंयमकी कमी अज्ञात रूपसे बनी हुई है। आम या खास सभाओंके लिए यह अनिवार्य है कि उनमें उपस्थित सज्जन, सबके-सब, एक साथ न बोलें या आपसमें कानाफूँसी न करें, बल्कि जो-कुछ कहा जाये उसको ध्यानपूर्वक सुनें। यदि श्रोता ध्यान न दें तो सभाओंका कोई मूल्य नहीं रह जाता। पाठक मेरे इस कथनके औचित्यको तो देखेंगे ही, साथ ही वे यह भी देख सकेंगे कि मैं यह सब स्वार्थकी दृष्टिसे भी कह रहा हूँ। मैं बेलगाँवके लिए क्षेत्र तैयार कर रहा हूँ। जो सज्जन बेलगाँवकी कांग्रेसमें और परिषदोंमें शामिल होनेवाले हैं, वे कृपया इस बातका ध्यान रखें।

रविवार तारीख ७को सवेरे ८ से ११ बजे और सन्ध्या समय ४ से ८ बजे तक, कुल ७ घंटेतक काम होता रहा। विषय-समितिको ६ घंटे लगे। किसीके आनेकी प्रतीक्षा करनेमें समय नष्ट न हुआ, इसलिए सभाका काम बड़ी फुर्तीसे हो सका। परिषद् सम्बन्धी सभी काम निश्चित समयपर किये गये।

दीक्षान्त-समारोह

इसके पहलेका दिन यानी ता० ६ दिसम्बर भिन्न-भिन्न दलोंके प्रतिनिधियोंसे मिलने, जुलूसमें शामिल होने — यह जरूरी मगर परेशानीका काम था — और राष्ट्रीय

विश्वविद्यालयके दीक्षान्त समारोहमे[1] सफल विद्यार्थियोको उपाधियाँ बाँटनेमें गया। कुलपतिकी हैसियतसे लाला लाजपतरायने विद्यार्थियोसे हिन्दुस्तानीमे यह शपथ लिवाई कि "मै शपथके साथ प्रतिज्ञा करता हूँ कि मै अपने जीवनमे ऐसा कोई काम न करूँगा जिससे मेरे धर्म और देशको नुकसान पहुँचे।" उपाधि पानेवाले विद्यार्थियोमे एक लडकी और एक मुसलमान भी था। यह रस्म बहुत प्रभावपूर्ण थी। परन्तु उपाधि-वितरण करते समय मै अपने इन विचारोको नही रोक सका कि मेरी स्थिति वैसी ही है जैसे गोल सुराखमे किसी चौकोर वस्तुकी होती है। शिक्षाके विषयमे मेरे विचार क्रान्तिकारी है, इस कारण समालोचकोको उनका अजीब मालूम होना ठीक ही है। मै स्वराज्यकी दृष्टिसे ही राष्ट्रीय शिक्षाका विचार कर सकता हूँ। इसलिए मै तो यह चाहूँगा कि विद्यालयोके विद्यार्थी भी कताईकी कला और उसकी बाकी सारी प्रक्रियाओको भी अच्छी तरह जाननेकी ओर ध्यान दे। उन्हे खादीके अर्थशास्त्रका तथा उसके साथकी अन्य बातोका भी ज्ञान होना चाहिए। उन्हे यह जानना चाहिए कि एक मिलकी स्थापनामे कितना समय और कितनी पूँजी लगेगी। उन्हे जानना चाहिए कि मिलोका बेहद बढ जाना सम्भव है या नही और उसमे क्या-क्या रुकावटे आ सकती है। उन्हे यह भी जानना चाहिए कि धनका वितरण मिलोके द्वारा कैसे होता है और हाथ कताई और बुनाई द्वारा किस तरह। उन्हे यह समझ लेना चाहिए कि कताईको और इस तरह भारतीय वस्त्रोत्पादनको किस तरह नष्ट किया गया। उन्हे यह स्वय समझना चाहिए और दूसरोको समझा सकना चाहिए कि अगर भारतके लाखों किसानोकी झोपडियोमे कताई होने लगे तो उसका क्या प्रभाव पडेगा। उन्हे यह जानना चाहिए कि हमारी इस गृह-कलाका पूर्ण पुनर्जीवन किस तरह हिन्दू और मुसलमानोके टूटे दिलोको जोड़कर एक कर सकता है। ये विचार या तो समयके पीछे या आगे है। लेकिन इस बातका कोई विशेष महत्त्व नही कि वे समयसे आगे है या पीछे। मै तो यह जानता हूँ कि एक-न-एक दिन सारा शिक्षित भारत उन्हे अपनायेगा।

मार्शल लॉके कैदी

पाठकको श्री रतनचन्द और बुग्गा चौधरीका स्मरण होगा। वे दोनो मार्शल लॉके कैदी थे। उन्हे फाँसीकी सजा दी गई थी और उनकी ओरसे पण्डित मोतीलालजीने प्रिवी कौसिलमे अपील की थी। पाठकोको यह भी याद होगा कि अपीलके खारिज हो जानेपर भी फासीकी सजा, आजन्म कारावास दण्डमे परिवर्तित कर दी गई थी। श्री बुग्गा चौधरी अण्डमानसे मुल्तान जेल लाये गये है पर मै सुनता हूँ कि रतनचन्द अब भी अण्डमानमे ही रखे गये है। श्री बुग्गाकी सास मुझसे मिलने आई थी। उन्होने मुझसे कहा कि श्री बुग्गा आत्रवृद्धि और बवासीरसे पीडित है और इधर तीन महीनेसे उन्हे बुखार भी आ रहा है। असहयोगके ज्वारके दिनोमे मै कहा करता था कि ये कैदी जल्द ही छोड़ दिये जायेगे। इस बार मुझे बडा दु:ख

१. देखिए "दीक्षान्त भाषण: पंजाब कौमी विद्यापीठमें", ६-१२-१९२४।

हुआ, जब मैं उस सासको जामाताके शीघ्र मुक्त होनेकी आशा न दिला सका, यद्यपि वह दामाद बीमार है और ५ वर्षतक सजा काट चुका है। इन दोनो सज्जनोके मुकदमेमें दी गई गवाहियोंको देखनेपर मैंने अपना यह विश्वास प्रकट किया था कि सबूतोंमे ऐसी कोई बात नही है जिसके आधारपर इन्हें हत्याके अपराधमे सजा दी जा सके। सबको याद होगा कि प्रिवी कौंसिलने मामलोंकी जाँच नही की। न्यायाधीश महाशयोंने केवल जाब्तेकी बातोंके आधारपर ही अपील खारिज कर दी थी।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ११-१२-१९२४

३४९. एक चेतावनी

अगले कुछ महीने ऐसे है, जब सब गृहस्थ दोमें से एक रास्ता चुनेंगे। अगर वे अपने घरेलू उपयोगके लिए जान-बूझकर या लापरवाहीके कारण कपास जमा नही करेंगे तो परोक्ष रूपसे और बहुत-से लोग तो प्रत्यक्ष रूपसे भी भारतमें पैदा होनेवाली अधिकांश कपासको देशसे बाहर भेजने और कुछ हिस्सा मिलोंको बेचनेके लिए जिम्मेदार होंगे। इसके विपरीत वे अपने घरोंमें कपास जमा करके हाथ-कताईको प्रोत्साहन दे सकते हैं और इसके फलस्वरूप एक-एक गृहस्थ हाथ-कताईके ठोस काममें जिस हदतक योग दे, उस हदतक स्वराज्यको निकट ला सकते हैं। कपासके मौसममें इन दो रास्तोंमें चुनाव करनेका अवसर भारतके हर व्यक्तिके सामने हर साल आता है। कांग्रेसी लोग इस क्षेत्रमे दुहरा काम कर सकते हैं। वे हर गृहस्थको अपने घरमें पर्याप्त कपास जमा करनेके बुनियादी कर्त्तव्यका पालन करना सिखा सकते है और यह देखते हुए कि अभीतक सभी गृहस्थ अपने कर्त्तव्यके प्रति जागरूक नही है, वे इस कर्त्तव्यमे चूकनेवालोंकी खातिर स्वयं भी काफी कपास जमा कर सकते है। यह कपास वे माँगकर भी जमा कर सकते है और खरीदकर भी। हम थोड़ी-बहुत सफलताके साथ कई मुट्ठी-फंड चला चुके है। फिर कोई कारण नही कि कपास पैदा करनेवाले सभी क्षेत्रोंमें घर-घर जाकर कपास न माँगी जाये। जहाँ-कही इस तरह सामूहिक रूपसे कपासका चन्दा किया जाये, वहाँ चन्देमें प्राप्त कपासका वैसा ही इन्तजाम करना चाहिए जैसा कि चन्देमे आये पैसेका करते है। दाताओंको रसीदे दी जानी चाहिए और हिसाबकी बहियोंमे उनका पूरा लेखा-जोखा रखना चाहिए। संग्रह करनेका काम बहुत सुचारु रूपमे होना चाहिए। कपासका वर्गीकरण करने और उसे सुरक्षित रखनेके लिए खास होशियारीकी जरूरत होगी। अगर यह अवसर चूक गये तो फिर दूसरा अवसर अगले मौसममे ही मिलेगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ११-१२-१९२४

३५०. मेरा पथ

यूरोप और अमेरिकामे आजकल मेरे प्रति लोगोका ध्यान खिच रहा है। यह मेरे लिए सौभाग्य और दुर्भाग्य दोनो ही है। सौभाग्य तो इसलिए है कि पश्चिममे भी लोग मेरे सन्देशपर विचार कर रहे है और उसे समझ रहे है। मेरा दुर्भाग्य यह है कि कोई तो अनजानमे उसकी महत्ता ज्यादा बढा देते है और कोई जान-बूझकर उसका रूप विकृत कर देते है। हर सत्य अपने-आप प्रभावकारी होता है, उसमे अपना सहज बल होता है। इसलिए जब मै देखता हूँ कि लोग मेरे सन्देशको गलत रूपमे पेश कर रहे है तब भी मै विचलित नही होता। एक यूरोपीय मित्रने कृपापूर्वक मुझे जो चेतावनी भेजी है, उससे मालूम होता है कि यदि उन्हे मिली जानकारी सही है तो बुरी नीयतसे हो अथवा भूलसे हो, रूसमे मेरे मतके विषयमे बडी गलतफहमी फैली हुई है। यह है उनके पत्रका एक हिस्सा :

> कहा जाता है कि बर्लिन स्थित रूसी राज्य-प्रतिनिधि क्रेसटिन्स्कीको विदेश मंत्रीकी ओरसे कहा जायेगा कि वे अपनी सरकारकी ओरसे गांधीका स्वागत करें और इस स्थितिसे फायदा उठाकर गांधीके अनुयायियोंमें बोलशेविक मतका प्रचार करनेका उद्योग करें। इसके सिवा क्रेसटिन्स्कीको यह काम भी दिया जायेगा कि वे गांधीको रूसमें आनेके लिए निमन्त्रण दें। एशियाकी दलित-पीड़ित जातियोंमें बोलशेविक साहित्यके प्रचारके लिए धन खर्च करनेका भी उन्हें अधिकार दिया गया है। ओरिएन्टल-क्लब तथा उनके कार्यालयके लिए गांधीजीके नामपर उन्हें एक बड़ी रकम मुहैया की जायेगी जिसमें से उनके (गांधीजीके या मास्कोवालोंके?) मतको माननेवाले विद्यार्थियोंको सहायता दी जायेगी। अन्तमें, इसमें तीन हिन्दू भरती किये जायेंगे। यह सारी चीज रूसी समाचार-पत्रोंमें, उदाहरणके लिए, १८ अक्तूबरके 'रूल' नामक पत्रमें प्रकाशित हुई है।

इस मजमूनसे उस खबरका कुछ रहस्य मिल जाता है जिसमे मेरे जर्मनी और रूस जानेके लिए आमन्त्रित किये जानेकी सम्भावना बताई गई थी। यह कहनेकी तो जरूरत ही नही है कि न तो मुझे ऐसा कोई निमन्त्रण ही मिला है और न इन महान् देशोमे जानेकी मेरी कोई इच्छा ही है। क्योकि मै जानता हूँ कि मेरे प्रतिपादित सत्यको अभी खुद भारतवर्षने भी पूरे तौरसे ग्रहण नही किया है और वह अभी यथेष्ट रूपमे प्रस्थापित भी नही हो पाया है। भारतमे जो काम मै कर रहा हूँ, वह अभी प्रयोगावस्थामे ही है। ऐसी हालतमे मेरे लिए विदेशोमें जाकर कोई साहसिक कार्य करनेका समय अभी नही आया है। यदि भारतमें ही यह प्रयोग प्रत्यक्ष रूपमे सफल हो जाये तो मै पूर्ण रूपसे सन्तुष्ट हो जाऊँगा।

मेरा रास्ता साफ है। हिंसात्मक कामोमें मेरा उपयोग करनेका कोई प्रयत्न सफल हो ही नही सकता। मेरे पास कोई गुप्त उपाय नही है। मै सत्यको छोडकर किसी कूटनीतिको नही जानता। [मेरा एक ही शस्त्र है—अहिंसा।] सम्भव है कि मै अनजाने, कुछ देरके लिए गलत रास्ते भटका लिया जाऊँ, किन्तु यह हमेशाके लिए नही चल सकता। अतएव मैने अपने लिए ऐसी कैद निश्चित कर ली है, जिसके दायरेके भीतर ही मुझसे काम लिया जा सकता है। इसके पहले भी मुझसे अनुचित काम निकालनेके अनेक प्रयत्न किये गये है। जहाँतक मुझे मालूम है, वे हर बार निष्फल ही हुए है।

बोलशेविज्मको मै अभीतक ठीक-ठीक नही समझ सका हूँ। मै इसका अध्ययन भी नही कर सका हूँ। मै यह भी नही कह सकता कि रूसके लिए अन्तमे यह लाभकारी होगा या नही। तो भी इतना तो मै अवश्य जानता हूँ कि जहाँतक इसका आधार हिंसा और ईश्वर-विमुखतापर है, उससे मुझे विरक्ति ही होती है। मै यह नही मानता कि हिंसात्मक छोटे रास्तोसे सफलता मिलती है। जो बोलशेविक मित्र मेरी ओर ध्यान दे रहे है, उन्हे यह समझ लेना चाहिए कि मै ऊँचे उद्देश्योकी चाहे जितनी प्रशंसा करूँ और उनके प्रति सहानुभूति दिखलाऊँ किन्तु [श्रेष्ठसे-श्रेष्ठ कार्यके लिए भी मै हिंसात्मक पद्धतिका अटल विरोधी ही हूँ।] अतएव हिंसावादियोके और मेरे मिलापके लिए कोई गुंजाइश नही है। इतना होनेपर भी [मेरा अहिंसा-धर्म मुझे अराजकतावादियो और अन्य सभी हिंसावादियोके साथ सम्पर्क रखनेका न केवल निषेध नही करता है बल्कि वैसा करनेपर मजबूर करता है।] किन्तु इस सम्पर्कमें मेरा उद्देश्य केवल यही होता है कि उन्हे मै उस राहसे बचाऊँ जो मुझे गलत दिखाई देती है। क्योकि मुझे अपने अनुभवसे विश्वास हो गया है कि स्थायी कल्याण असत्य और हिंसाका फल कभी हो ही नही सकता। यदि मेरा यह विश्वास केवल एक भ्रान्ति ही हो तो भी शायद लोग यह तो मान ही लेगे कि यह एक मनोहारिणी भ्रान्ति है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ११-१२-१९२४

३५१. कला और राष्ट्रीय विकास[1]

नवीन राष्ट्रीय जीवनके अभ्युदयके साथ-साथ प्रायः महान् साहित्य और कलाका भी सृजन देखनेमें आता है; इन दोनोंके इस सम्बन्धका अन्वेषण मानव इतिहासके अध्ययनका एक सबसे रोचक विषय है। संगीतको भी, जो साहित्य और कलाके ही परिवारका है, इसी प्रकारकी भूमिका निभानी पड़ती है।...

अभी इस प्रश्नपर विचार करना शेष है कि भारतकी वर्तमान राष्ट्रीय जागृतिसे महान् साहित्य और कलाके सृजनकी आशा की जा सकती है या नहीं। भारतके कई प्रान्तोंमे अभी यह आन्दोलन इतना नया है कि हम इस क्षेत्रमें तत्काल कोई परिणाम देखनेकी आशा नहीं कर सकते। लेकिन, जिसने भी बंगालके आधुनिक इतिहासका बारीकीसे अध्ययन किया होगा, उसे इस बातमें क्षण-भरको भी कोई सन्देह नहीं हो सकता कि वहाँ इस सृजन-युगका उदय हो चुका है। इस नवोदयकी साहित्यिक एवं कलात्मक, दोनों ही प्रकारकी कृतियोंमें जन-मानसकी समस्त भावनाएँ बोल उठी है।...

भारतके दूसरे हिस्सोंमे इस राष्ट्रीय आन्दोलनको आज मुख्यतः वहाँकी मातृभाषाओंके साहित्यमें गुंजित विलक्षण नवोत्थानके स्वरमें देखा जा सकता है।...

दूसरी ओर राष्ट्रीय कार्यक्रममें एक ऐसी वस्तु है, जो पता नहीं क्यों, अभीतक सौंदर्यके विभिन्न रचनात्मक रूपोंमें नहीं ढल पाई है। वह वस्तु है खादी ... जो विविधतासे रहित और सर्वथा एक-सी श्वेत होनेके कारण कलात्मक रूचिको तुष्ट नहीं कर पाती। प्राचीन भारतमें वनस्पतियोंसे तैयार होनेवाले विविध रंगोंको एक बार फिर दैनिक उपयोगमें लाया जा सकता है। इस निरभ्र उज्ज्वल आकाशवाले देशको रक्त-वर्ण, हेम-वर्ण, नीलवर्ण आदि मौलिक और कान्तिपूर्ण रंगों और उनके अनेक वर्णान्तरोंसे, जिनमें केवल सूर्यकी किरणें ही सामंजस्य उत्पन्न कर सकती हैं, वंचित नहीं करना चाहिए।...

ऐसा कोई खतरा नही है कि रगोकी रुचि नष्ट हो जायेगी। मसूलीपट्टमवाले तथा अन्य स्थानोके लोग इस चीजका पूरा ध्यान रख रहे है। राष्ट्रमे सतुलित सुरुचिका विकास होनेसे भड़कीलेपनकी रुचि खत्म हो सकती है और होनी भी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ११-१२-१९२४

१. सी० एफ० एन्ड्र्यूजका यह लेख जिसपर अन्तमें गांधीजीने टिप्पणी लिखी है, यहाँ अंशतः ही उद्धृत किया गया है।

३५२. भेंट : 'ट्रिब्यून' के प्रतिनिधिसे

लाहौर
११ दिसम्बर, १९२४

श्री गांधी आज सुबह रावलपिंडीसे बम्बई मेल द्वारा साबरमतीको रवाना हुए। वे शामको लाहौरसे गुजरे। लाहौर रेलवे स्टेशनपर 'ट्रिब्यून' के विशेष प्रतिनिधिने उनसे कोहाटके मामलेमें भारत सरकारके प्रस्तावके सम्बन्धमें भेंट की। श्री गांधीने कहा:

मैं मौलाना शौकत अली, मौलाना जफर अली और डा० किचलूके साथ रावलपिंडीमे करीब-करीब हरएक शरणार्थीसे मिला। मैंने राय बहादुर सरदार माखनसिंहसे भी मुलाकात की है। मैंने भारत सरकारका प्रस्ताव पढ लिया है और मुझे इसमे जरा भी सन्देह नही है कि वह एक चुनौती है। मैंने लोगोको आग्रहपूर्वक यह सलाह दी है कि वे समझौतेकी कोई भी शर्त स्वीकार न करे। हिन्दू और मुसलमान नेताओंकी राय लिये बिना अभी इस अवस्थामे तो मैं प्रस्तावमें कही गई बहुत-सी बातोकी सत्यता-असत्यताके बारेमे कोई राय नही देना चाहता। दुर्भाग्यसे रावलपिंडीमे कोहाटके मुसलमानोका कोई भी जिम्मेदार प्रतिनिधि नही था। लेकिन इतना तो मैं बिलकुल साफ देख रहा हूँ कि भारत सरकार मात्र-विभागीय जाँचके बाद इन निष्कर्षोपर पहुँची है और जिन लोगोने यह जाँच की, उनकी नियुक्तिके सम्बन्धमे इन शरणार्थियो या मुसलमानोका कुछ भी हाथ नही था और न शरणार्थियोको अपना पक्ष सिद्ध करनेका कोई अवसर ही दिया गया। हम अपने अनुभवसे जानते है कि किस प्रकार ऐसी जाँच अकसर गुमराह करनेवाली सिद्ध हुई है और उनमें एक ही पक्षकी बात दी गई है।

शरणार्थियोको प्रस्तावसे गहरा सदमा पहुँचा है। उनको उम्मीद थी कि इस मामलेकी पूरी-पूरी खुली और स्वतन्त्र जाँच कराई जायेगी और उसमे हिन्दुओ और मुसलमानो दोनोको अपनी-अपनी बात कहनेका मौका दिया जायेगा। लेकिन ऐसा-कुछ नही हुआ और पण्डित मालवीयजीको दिये गये वाइसरायके उत्तरसे तो यही लगता है कि यह प्रस्ताव इस मामलेमे भारत सरकारका अन्तिम निष्कर्ष और अन्तिम निर्णय है।

ऐसी परिस्थितियोमें यदि शरणार्थी अपने आत्म-सम्मानकी ओर ध्यान दें तो वे तबतक कोहाट नही जा सकते जबतक उनके और कोहाटके मुसलमानोके बीच कोई वास्तविक और स्थायी समझौता नही हो जाता। ऐसा समझौता बाहरसे नही थोपा जा सकता और चाहे जो भी शर्ते सम्बन्धित हिन्दुओ या मुसलमानो द्वारा स्वीकृत बनाई जाती हो, मैं तो यही समझ सकता हूँ कि वे प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपसे दबावमे आकर स्वीकार की गई हैं। मुझे उम्मीद है कि कोहाटके मुसलमान शरणार्थियोसे जैसे भी होगा मिलेगे और उन्हे दोस्ती तथा पूरी सुरक्षाका वचन देकर

कोहाट लौटनेका न्यौता देंगे। मैं इस पूरे मामलेके बारेमे पहलेसे कोई राय निश्चित नही कर लेना चाहता। मुझे उम्मीद है —और मेरे मुसलमान साथियोको भी यही आशा है— कि कोहाटके मुसलमान हमे कोहाटकी दुर्भाग्यपूर्ण घटनाओके बारेमे सही फैसलेपर पहुँचनेका अवसर देंगे। लेकिन इतनी बात तो बिलकुल साफ है कि हिन्दू आज रावलपिंडीमे शरणार्थी बने हुए है और यदि वे कोहाटके मुसलमान निवासियोसे सुरक्षाका पूरा वादा लिये बिना कोहाट लौट गये तो उनके अस्तित्वपर ही बन आनेका खतरा है। यदि मुसलमान लोग हिन्दुओका स्वागत अपने मित्रोके रूपमे करनेके लिए अनिच्छुक है तो सरकार चाहे जो भी आश्वासन दे, मैं उसे आश्वासन नही समझता। वहाँ उनकी विशाल बहुसख्या है और बिलकुल पासमे ही कई मुसलमान कबीले मौजूद है, और इसलिए हर भारतीय —चाहे वह हिन्दू हो या मुसलमान— कोहाटके मुसलमानोसे यही आशा करता है कि वे यदि हिन्दू-मुस्लिम एकता चाहते है तो इन शरणार्थियोको पूरा आश्वासन देकर उन्हे वापस कोहाटमे ले जायेंगे। मैंने शरणार्थियोसे जो कहा था, यहाँ मैं उसे फिर दोहराना चाहता हूँ।[1] वह यह है कि सीमान्त प्रान्तके हिन्दुओ और मुसलमानोके भावी सम्बन्ध उन्हीके सही आचरणपर निर्भर है। जबतक कोहाटके मुसलमान उन्हे लौटनेके लिए हार्दिक निमन्त्रण और सुरक्षाका पूरा आश्वासन न दे, तबतक न लौटनेमे उन्हीका हित है। इसमे जरा भी सन्देह नही कि तब सारा भारत उनके साथ होगा।

मैंने उनसे यह भी कहा है कि यदि आत्म-सम्मानके साथ उनके लिए कोहाट लौटना असम्भव हो तो उन्हे भारतमे अपने लायक ठीक धन्धा ढूँढनेमे जरा भी कठिनाई नही होगी। मैंने उनसे यह भी कहा है कि अभी मेरे हाथमे जो काम है, उन्हे मैं लगभग २३ जनवरीतक निबटा लूँगा। और उसके बाद तुरन्त खुशीसे रावलपिंडी आ जाऊँगा और जबतक आवश्यक होगा तबतक उनके पास रहूँगा। लेकिन मुझे पूरी आशा है कि कोहाटके मुसलमान उससे बहुत पहले ही शरणार्थियोके प्रति अपना दायित्व महसूस कर लेगे और उनको कोहाट वापस ले जायेंगे। मौलाना शौकत अली इस मामलेमे कोशिश कर भी रहे है और सीमान्तके मुसलमानोके साथ सम्पर्क बनाये हुए है।

जब प्रतिनिधिने गांधीजीसे पंजाबमें हिन्दुओं और मुसलमानोके मतभेदोंके बारेमें अपनी राय बताने या मौजूदा तनावको कम करनेका कोई उपाय सुझानेको कहा तो उत्तरमें उन्होंने कहा :

मैं समझता हूँ कि कोहाटके मामलेमे ऊपर जो वक्तव्य दिया गया है, वह पर्याप्त है। अभी मुझे कोई और ऐसी बात नही सूझती कि जो विशेष महत्त्वकी हो। 'यग इंडिया'के ताजा अकमे प्रकाशित अपने लेखोमें मैंने इस प्रश्नका विस्तृत विवेचन किया है। मैंने जो-कुछ लिखा है, उसके अलावा और कुछ भी नही कहना चाहता।

१. देखिए "भाषण : रावलपिंडीमें", ९-१२-१९२४।

आगे जब प्रतिनिधिने हालके पंजाब प्रान्तीय राजनीतिक सम्मेलनमें गांधीजी द्वारा स्वराज्य प्राप्त करनेकी नई योजनाके सम्बन्धमें कही बातोंका आशय तथा महत्त्व जानना चाहा तो गांधीजीने कहा :

सम्मेलनके अपने समापन-भाषणका विवरण अभी मैंने समाचारपत्रोंमें नहीं देखा है, लेकिन मैंने यह जरूर कहा था कि मैं इस बारेमें बहुत अधिक और गहराईसे विचार कर रहा हूँ और यह मालूम करनेकी कोशिश कर रहा हूँ कि क्या हममें से कमसे-कम कुछ लोग ऐसे नहीं निकल सकते जो इस यन्त्रणाको समाप्त कर सकें। वह योजना क्या हो सकती है, यह मैं अभी नहीं कह सकता और फिर हर चीज इस बातपर निर्भर करेगी कि मैं जो भी प्रस्ताव रखूँ, उसपर कांग्रेसकी प्रतिक्रिया क्या होती है। मैं अभीतक अन्धकारमें हूँ और मुझे अभी इस सम्बन्धमें गम्भीर सन्देह है कि मैं देशको अपने साथ ले जा सकूँगा। फिलहाल मैं इससे अधिक कुछ नहीं कह सकता। लेकिन मेरे मनमें इस सम्बन्धमें कोई सन्देह नहीं है कि मैं अब इसके बारेमें जिस निष्कर्षपर भी पहुँचूँगा, वह कमसे-कम मेरे लिए तो अन्तिम होगा।

गांधीजीने अपने निकट भविष्यके कार्यक्रमके बारेमें पूछनेपर कहा :

मैं शनिवारकी सुबह साबरमती पहुँचूँगा और वहाँसे १८ को चलकर २० को बेलगाँव पहुँच जाऊँगा। आशा है, मैं वहाँ आये हुए सभी अपरिवर्तनवादियोंसे मिलूँगा और फिर २१ को वहाँ जो भी परिवर्तनवादी आयेंगे उनसे मिलूँगा। मैं सभी नेताओं और कार्यकर्त्ताओंसे खुलकर और-अनौपचारिक रूपसे पूरी चर्चा करनेके लिए अत्यन्त उत्सुक हूँ। मुझे सबसे ज्यादा चिन्ता इस बातकी है कि कांग्रेसमें जो-कुछ भी स्वीकार किया जाये, वह यन्त्रवत् स्वीकार न किया जाये, बल्कि हर प्रतिनिधि कांग्रेसके सामने पेश किये जानेवाले प्रस्तावोंको पूरी तौरसे समझकर अपना दायित्व महसूस करते हुए पूरा इत्मीनान करके ही अपनी सहमति दे। किसी भी कार्यक्रमकी सफलताका दारोमदार इसी बातपर है कि हर व्यक्ति उसके लिए जी-जानसे जुटकर काम करे।

[अंग्रेजीसे]

ट्रिब्यून, १३-१२-१९२४

३५३. प्रस्तावना : 'श्री रामकृष्णकी जीवनी' की

साबरमती[1]

मार्गशीर्ष कृष्ण १, १९८१ [१२ दिसम्बर, १९२४][2]

रामकृष्ण परमहंसकी जीवनी धर्मके आचरणकी कथा है। उनका जीवन हमे ईश्वरका स्पष्ट साक्षात्कार करनेमे समर्थ बनाता है। उनकी जीवन-कथा पढनेवाले किसी भी मनुष्यको यह विश्वास हुए बिना नही रह सकता कि ईश्वर ही सत्य है, शेष सब मिथ्या है। रामकृष्ण प्रभु-भक्तिकी जीती-जागती प्रतिमूर्ति थे। उनके वचन एक विद्वान्‌की उक्तियाँ-मात्र नही है, वे जीवन-रूपी पुस्तकके पृष्ठ है। उनमे उनके अपने अनुभव अभिव्यक्त हुए हैं। इसलिए वे पाठकपर ऐसी छाप डालते है, जिससे वह प्रभावित हुए बिना नही रह सकता। अनास्थाके इस युगमे, रामकृष्णने ज्वलन्त और प्राणवन्त आस्थाका एक ऐसा उदाहरण रखा है, जिससे लाखो स्त्री-पुरुषोको शान्ति मिली है। यदि वह उदाहरण उनके सम्मुख न आता तो वे जीवन-भर आध्यात्मिक प्रकाशसे वचित ही रह जाते। रामकृष्णका जीवन अहिंसाका एक वस्तु पाठ है। उनका प्रेम भौगोलिक या अन्य किन्ही भी सीमाओमे बँधा हुआ नही था। ईश्वर करे, इन पृष्ठोको पढ़नेवाले सभी पाठकोको उनका यह दिव्य प्रेम प्रेरणास्पद हो।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
लाइफ ऑफ श्री रामकृष्ण

३५४. पाटीदार और अन्त्यज

मुझे पाटीदारोके विरुद्ध अन्त्यज भाइयोकी शिकायते मिलती ही रहती हैं। एक भाईने मुझे कुछ कतरने भेजी है, जिनमे नाम-धाम सहित पूरा-पूरा विवरण दिया गया है। उनसे पता चलता है कि जिन अन्त्यजोने कई वर्षोसे मरे हुए पशुओको उठानेका काम छोड दिया था, उनसे मार-पीटकर यह काम करवाया गया है।

यदि यह बात सच हो तो यह स्वदेशी डायरशाही मानी जायेगी और किसी हदतक विदेशी डायरशाहीसे भी अधिक बुरी। विदेशी डायरशाहीके पीछे तो लोगोके दोषका कुछ बहाना भी था। इसमे तो वैसी कोई बात नही मिल सकती। विदेशियोकी सख्या बहुत ही कम है, इसलिए उनको सामान्य रूपसे भय भी रहता

१. साधन-सूत्रमें यही दिया गया है; लेकिन गांधीजी १३ दिसम्बरको साबरमती पहुँचे थे; देखिए "पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको", १४-१२-१९२४।

२. साधन-सूत्रमें "१२ नवम्बर, १९२४ तिथि दी हुई है।

है। लेकिन इस स्वदेशी डायरशाहीमें तो पाटीदार बहुत ज्यादा और अन्त्यज सख्यामें कम एव बल और बुद्धिमे हीन भी है। उनपर जुल्म किया जाये, यह तो चीटियो पर सेना लेकर चढाई करनेके समान है।

पाटीदारो और अन्य तथाकथित उच्च वर्णोको अपने कर्त्तव्यपर विचार करना है। किसीकी डायरशाही अब लम्बे समयतक चलनेवाली नही है। अब तो केवल सत्य, न्याय और अहिंसा ही चलेगे। अन्याय, असत्य और हिंसा — चाहे वे स्वदेशी ही क्यो न हो — कदापि नही चल सकते।

आज हम न्यायकी माँग कर रहे है, गुलामीसे मुक्त होनेकी कामना कर रहे है। क्या हम स्वय अपने दोप नही देखेगे, उनको दूर नही करेगे? जिन पाटीदारोने अन्त्यज भाइयोपर जुल्म किया हो, समझदार पाटीदारोको उन्हे रोकना चाहिए। अन्त्यज भाइयोके प्रति भी हमारा कुछ कर्त्तव्य है, लोगोको यह बात समझनी चाहिए। जिस तरह अन्य वर्णोके लोगोने अपने धन्धे छोड दिये है, जिस तरह ब्राह्मणोने शिक्षण-कार्य छोडकर नौकरी आदि अपनाई है, जिस तरह क्षत्रियोने दासता ग्रहण की है, जिस तरह दर्जियोने अपना काम छोडकर अन्य क्षेत्रोमे प्रवेश किया है, उसी तरह अन्त्यजोको भी अपने धन्धे छोडनेका अधिकार है।

चमारका धन्धा आज दूसरे लोग भी करते है। मरे हुए पशुओको उठाकर उचित स्थानपर डाल देनेके काममें मैं कोई दोप नही देखता। लेकिन दूसरोको मै वह काम अथवा कोई और काम करनेके लिए बाध्य कैसे कर सकता हूँ? अमुक धन्धा तो अमुक जाति अथवा व्यक्तिको ही करना होगा, हम ऐसा दुराग्रह नही रख सकते। इसका एक सीधा परिणाम तो यह होना चाहिए कि हमें कोई भी बुनियादी और जरूरी काम करनेमे दोप नही समझना चाहिए। इसके अतिरिक्त जब कोई दूसरे लोग इस कामको करनेके लिए बाध्य नही है तो फिर अन्त्यजोने ही क्या अपराध किया है [कि उन्हीसे यह काम कराया जाये]? मुझे याद है कि दक्षिणमे एक बार भगी नाराज हो गये थे और उन्होने अपना काम बन्द कर दिया था। किन्तु ब्राह्मणोने अपने पाखाने आप ही साफ करना शुरु कर दिया, इससे भगी हार गये। दूसरोको पराजित करनेका यही उत्तम मार्ग है कठिनाइयोको चुपचाप झेलना और उन्हे आत्मबल और सहिष्णुताके द्वारा दूर करना। इस रास्तेपर चलनेमें दोनोकी उन्नति है। पहले रास्तेपर चलनेसे एककी अवनति तो निश्चित ही है, किन्तु हो सकता है, दोनोकी ही अवनति हो।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १४-१२-१९२४

३५५. पत्र : ए० वरदन्‌को

१४ दिसम्बर, १९२४

प्रिय मित्र,

आपके पत्रके साथ भेजी गई क्षमा-याचनाके लिए, जिसपर श्री सुब्रह्मण्यम्‌के दस्तखत हैं, धन्यवाद। मैंने इस बातका कभी विचार नहीं किया है। आशा है, इन पत्रोंको लिखनेके कारण उनको सेवासे निवृत्त नहीं किया जायेगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री ए० वरदन्
प्रधानाध्यापक

अंग्रेजी पत्र (जी० एन० ५६७६) की फोटो-नकलसे।

३५६. पत्र : प्रभाशंकर पट्टणीको

रविवार, मार्गशीर्ष बदी ३ [१४ दिसम्बर, १९२४]

सुज्ञ भाईश्री,

आपका पत्र लाहौरसे होता हुआ आज मिला। मैंने सोचा कि यदि मैं अब तार देता हूँ तो वह भी आपको कल ही मिलेगा, इसलिए पत्र द्वारा ही उत्तर दे रहा हूँ। क्या अब यही उचित नहीं होगा कि परिषद्‌को[1] सोनगढ़में ही होने दिया जाये? फिर भी आप वही करें जिससे सबका हित हो। परिषद्‌में संयमसे काम लिया जायेगा, इस बारेमें भला मैं आपको क्या आश्वासन दे सकता हूँ? मेरी उपस्थितिमें कमसे-कम काठियावाड़में कोई भी व्यक्ति मर्यादा नहीं छोड़ेगा, इस बातका मुझे पक्का भरोसा है। समाचारपत्रोंसे विदित होता है कि नगरपालिका मानपत्र देनेका प्रस्ताव पास कर चुकी है। क्या अब उसमें कोई परिवर्तन किया जाना चाहिए? मुझे लगता है कि यह कार्यक्रम तो निर्विघ्न सम्पन्न हो जायेगा। मैं यहाँ १८ तारीख तक हूँ। यदि कोई शहर जानेवाला व्यक्ति मिल गया तो मैं आपको तार भी दूंगा।

मोहनदास गांधीके वन्देमातरम्

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ३१८४) से।
सौजन्य : महेश पट्टणी।

१. काठियावाड़ राजनीतिक परिषद्; देखिए "पत्र : प्रभाशंकर पट्टणीको", १८-१२-१९२४।

३५७. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

मार्गशीर्ष वदी ३ [१४ दिसम्बर, १९२४][1]

मैं कल पहुँचा। तुम्हे पत्र लिखने ही जा रहा था कि महादेवने मुझे तुम्हारा पत्र ला दिखाया। आनन्दकी तबीयत अभीतक ठीक नही हुई है इससे दुःख और आश्चर्य हो रहा है। इस सवका कारण क्या है? आनन्दसे कहना कि अभी ससारसे विदा लेनेकी तैयारी न करे। क्या वह वायु परिवर्तनकी वात नही मानेगा? मैंने सदा देखा है कि एक वायु परिवर्तनके आगे सौ दवा भी काम नही करती। ऐसी स्थितिमें तुम वेलगाँव कैसे आ सकोगे? मैं तो तुम्हे वेलगाँव आनेके वारेमें ही पत्र लिखना चाहता था। तारामती अव विल्कुल ठीक होगी।

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी

३५८. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[2]

अहमदावाद
१४ दिसम्बर, १९२४

मैंने पजावमें दिये अपने एक भाषणका विवरण देखा है और अपने अन्य भाषणोंके विवरणोंके वारेमे वहुत-कुछ सुना है। मैंने सवाददाताओंको चेतावनी दी थी कि वे मेरे भाषणोंके सम्वन्धमे तैयार किये गये विवरण मुझे दिखाए विना छपनेके लिए न भेजें। मैंने जो वाते कही, वे मेरी दृष्टिमे महत्त्वपूर्ण थी। 'ट्रिव्यून' और और 'जमीदार' के सम्पादकोंने अपने विवरण शुद्ध करनेके लिए मेरे या मेरे सचिवके पास भेजनेका सौजन्य दिखाया, लेकिन स्पष्ट है कि अन्य सम्पादकोंने मेरे अनुरोध-पर ध्यान देना जरूरी नही समझा। नतीजा यह है कि मैंने जो-कुछ कहा था, वह विकृत रूपमे छापा गया है। इसलिए मैं लोगोंसे यही कह सकता हूँ कि मेरे भाषणोंके विवरण, जवतक मेरे द्वारा प्रमाणित किये हुए न हो तवतक उनका एक भी शब्द, मेरा न माने। शेषके लिए लोगोंको मेरे वेलगाँवके भाषणकी राह देखनी चाहिए। उसमें मैं सक्षेपमें उन सभी वातोंको रखूँगा, जो मैंने पजावमें और अन्यत्र कही हैं। मैं लोगोंको आगाह किये देता हूँ कि अभी वे मुझसे किसी सनसनीदार और जोश पैदा करनेवाली योजनाकी आशा न करे। अभी तो मेरी सवसे वडी इच्छा यह है कि एकता कायम हो और एक वर्षतक रचनात्मक कार्य होता रहे। उसके वाद और केवल उसके वाद ही मैं कोई ऐसी चीज देनेका वादा कर सकता हूँ जो उत्साहीसे-

१. साधन-सूत्रके अनुसार।
२. यह वक्तव्य गाधीजीने अपने पजावके भाषणोंके सम्वन्धमें दिया था।

उत्साही व्यक्तियोंको भी काफी जोशीली मालूम हो, परन्तु मुझे उसकी चर्चा अभी नहीं करनी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

न्यू इंडिया, १५-१२-१९२४

३५९. पत्र: कुँवरजी विट्ठलभाई मेहताको

सोमवार [१५ दिसम्बर, १९२४][1]

आपका पत्र[2] मिला। मैं १५ तारीखके[3] बाद बारडोली ताल्लुकेका दौरा करनेकी कोशिश तो अवश्य करूँगा। आप वल्लभभाईके साथ कार्यक्रम निश्चित कर लीजिएगा।

१ वहाँ कुछ चरखा-प्रवृत्ति चल रही है या नहीं?
२. प्रागजी कैसे है?
३ कल्याणजी कहाँ है और कैसे है?
४. क्या 'नवयुग' का खर्च निकल आता है?
५. क्या रुईका संग्रह किया जा रहा है?
६ दयालजीकी तबीयत ठीक हुई या नहीं?

बापूके आशीर्वाद

भाईश्री कुँवरजी विट्ठलभाई
'नवयुग' कार्यालय
लिमडा चौक, सूरत

गुजराती पत्र (जी० एन० २६७३) की फोटो-नकलसे।

३६०. पत्र: प्रभाशंकर पट्टणीको

मंगलवार [१६ दिसम्बर, १९२४][1]

सुज्ञ भाईश्री,

भाई फूलचन्द, अमृतलाल आदि कार्यकर्ता परिषद् बुलाये जानेके सम्बन्धमें विचार-विमर्श करनेके लिए यहाँ आये हुए हैं। उनका कहना है कि वे ऐसी शर्तें स्वीकार करनेको तैयार हैं कि जिनसे परिषद्का काम विवेकपूर्वक हो। वे इस बातका आश्वासन देनेको तैयार हैं कि किसी भी राजाकी कोई व्यक्तिगत आलोचना न की जायगी।

१. डाककी मुहरसे।
२. जनवरी, १९२५ की।
३. गांधीजीके इस पत्रकी प्राप्तिकी सूचना श्री पट्टणीजीने अपने १७ दिसम्बर, १९२४ के पत्र द्वारा दी थी।

यदि वे ऐसी शर्तोंके साथ परिषद्का आयोजन करनेको राजी हों तो मुझे लगता है कि अनुमति देनेमें किसी प्रकारकी अड़चन न होनी चाहिए। अनुमतिके आदेश-पत्रमें यदि शर्तें भी लिख दी जायें तो इससे दरबारके मानकी रक्षा भी हो जायेगी। अब और अन्य राजाओंके प्रति दरबारका कर्त्तव्य भी पूरा हो जायेगा तथा जनताको परिषद् बुलानेकी सुविधा हो जायेगी। मेरा खयाल यह है कि निषेधादेश परिषद्में मर्यादा-पालन न किये जानेके भयसे ही जारी किया गया है। यदि इस भयको दूर करनेके लिए आवश्यक शर्तें दाखिल कर दी जायें तो मुझे लगता है कि फिर कोई अड़चन नहीं रह जाती।

आपका,
मोहनदास गांधी

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ३१८५) से।
सौजन्य: महेश पट्टणी

३६१. पत्र : भगवानजी अनूपचन्द मोदीको

मार्गशीर्ष वदी ५ [१६ दिसम्बर, १९२४][1]

भाई भगवानजी,

आपका पत्र मिला। आपने पत्र लिखा सो अच्छा किया। उसमें से जितना स्वीकार कर सकता हूँ, करूँगा।

मोहनदास गांधीके वन्देमातरम्

भाई भगवानजी अनूपचन्द मोदी
राजकोट

मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ३०३१) से।
सौजन्य: नारणदास गांधी

३६२. सन्देश : देवचन्द पारेखको

[१६ दिसम्बर, १९२४ के पश्चात्][2]

मुझे पता चला है कि काठियावाड़ राजनीतिक परिषद्का स्वागत-मण्डल दरबारको इस बातका आश्वासन देनेको तैयार है कि परिषद्में शिष्टता तथा मर्यादाका पालन होगा और राजाओंकी व्यक्तिगत टीका न की जायेगी।

यह भी मालूम हुआ है कि पोरबन्दरमें कार्यकारी समितिकी जो बैठक हुई थी उसने स्वागत-मण्डलको भावनगरमें परिषद् बुलानेकी सलाह दी थी। इससे पहले उसे

१. डाककी मुहरसे।
२. यह सन्देश "पत्र: प्रभाशंकर पट्टणीको", १६-१२-१९२४ के बाद लिखा प्रतीत होता है।

पट्टणी साहबसे विचार-विमर्श कर लेना चाहिए था। ऐसा न करके उसने शिष्टाचारके नियमका उल्लघन किया है।

पट्टणी साहबका आग्रह है कि इस वर्ष भावनगरमे परिषद् न बुलाई जाये। मै अच्छी तरह समझ सकता हूँ कि इसकी अनुमति देनेमे उन्हें कठिनाई होगी। उनका कहना है कि यदि परिषद् सोनगढमे बुलाई जाये तो वे हर तरहकी मदद देनेको तथा उसमे भावनगरकी प्रजाको भाग लेनेके लिए प्रोत्साहित करनेको तैयार है। इतना ही नही बल्कि आगामी वर्ष होनेवाला सम्मेलन देशी राज्योकी सीमाके अन्दर बुलाया जा सके, इसका समुचित प्रबन्ध करने तथा इसमे सारी आवश्यक सहायता पहुँचानेको भी वे तैयार है। इसके लिए उनकी शर्त केवल इतनी है कि इस वर्षकी परिषद्मे होनेवाले भाषणोमे सयमसे काम लिया जाये। आगामी परिषद्के बारेमे वे कोई शर्त नही लगाना चाहते। उन्हे विश्वास है कि परिषद् स्वय ही मर्यादाका पालन करेगी।

सारी परिस्थितिको देखते हुए मुझे लगता है कि स्वागत-मण्डलके सदस्योको भावनगरमे परिषद् बुलानेके आग्रहको छोड देना चाहिए। उन्हें पट्टणी साहबकी बात मान लेनी चाहिए और परिषद्मे मर्यादाका पूरा-पूरा पालन करके अपने आपको सच्चा सत्याग्रही सिद्ध करना चाहिए।

यदि जनता ऐसा करती है तो वह कोई ऐसा काम नही करती जिसके लिए उसे लज्जित होना पडे। इससे सत्याग्रहको कोई बट्टा नही लगता और भविष्यके लिए मार्ग भी सरल हो जाता है। परन्तु, यदि हम यह मान भी ले कि सब-कुछ उलटा ही होगा — पट्टणी साहब विश्वासघात करेंगे अथवा वे उस समय काठियावाड़में होगे ही नही अथवा वे आगामी वर्ष देशी राज्योकी सीमाके अन्दर परिषद् होने देनेके अपने प्रयत्नोमे असफल सिद्ध होगे तो भी इससे सत्याग्रहीकी कोई हानि न होगी। सच्चा सत्याग्रही शिष्टता और नम्रता दिखानेको सदा तैयार रहता है और उसे अवसर चूक जानेके कारण पछतावा करनेका मौका कभी आता ही नही है। सच्चा सत्याग्रही तो अवसर उपस्थित होते ही कमर कसकर खडा हो जाता है।

मोहनदास करमचन्द गांधी

गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ६२०४) से।
सौजन्य: नारणदास गाधी

३६३. पत्र : जी० ए० नटेसनको

१७ दिसम्बर, १९२४

प्रिय श्री नटेसन,

आपके 'रिव्यू' के लिए सुन्दर भविष्यकी कामना करता हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
इंडियन रिव्यू, जनवरी, १९२५

३६४. पत्र : डाह्याभाई म० पटेलको

मार्गशीर्ष वदी ६ [१७ दिसम्बर, १९२४][1]

भाई डाह्याभाई,

तुम्हारे दोनो पत्र मिल गये। मुझे लिखनेकी इच्छा तो बहुत होती है, लेकिन पूरी जानकारीके अभावमें क्या लिखूं? तथ्योका ठोस ज्ञान न होनेपर लिखना मुझे जरा भी पसन्द नही। अब तो जब मैं बेलगाँवसे वापस आ जाऊँ, तब आ जाना और अपनी बात अच्छी तरह समझाना।

मोहनदासके वन्देमातरम्

भाई डाह्याभाई मनोरदास पटेल
ताल्लुका समिति
धोलका

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० २६९१) से।
सौजन्य : डाह्याभाई म० पटेल

१. डाककी मुहरसे।

३६५. पत्र : 'फारवर्ड' को

[१७ दिसम्बर, १९२४ के आसपास][1]

प्रिय मित्र,

यह रहा मेरा लेख चरखे बिना स्वराज्य असम्भव है। मैं अपनी कोई तसवीर रखता नही। अत. आपको मेरे हस्ताक्षरोसे ही सन्तोष करना पडेगा।

मो० क० गाधी

[अग्रेजीसे]

द स्टोरी ऑफ माई लाइफ, खण्ड २।

३६६. टिप्पणियाँ

क्या लालाजी भीरु हैं?

आम सभाओमे बोलनेवाले बहुत-से लोगोकी यह बदकिस्मती है कि सवाददाता अकसर उनके भाषणोकी गलत रिपोर्ट भेज देते हैं, हालाँकि वे कोई जान-बूझकर ऐसा नही करते। मेरा खयाल है, इस बदकिस्मतीका शिकार मैं भी हूँ। मुझे याद है, सन् १८९६ में जब मैं भारतमे पहले-पहल सार्वजनिक सभामे बोलने जा रहा था, उस समय सर फिरोजशाह मेहताने मुझसे कहा था कि अगर आप चाहते हो कि लोग आपका भाषण सुने और उसकी ठीक-ठीक रिपोर्ट भी दी जाये तो अपना भाषण पहलेसे ही लिख रखिए। इस नेक सलाहके लिए मैं बराबर उनका आभारी रहा। मैं जानता हूँ कि यदि उस सभाके सम्बन्धमे मैं उनकी बात मानकर न चलता तो पूरा रगभग हो गया होता। उसके बाद भी जब कभी मेरे भाषणकी गलत रिपोर्ट दी गई है, मुझे इस प्रान्तके उस बेताजके बादशाहकी सलाह याद हो आई है। कहते हैं, किसीने ऐसी खबर दी है कि अमृतसरके खिलाफत सम्मेलनमे मैंने लालाजीके लिए भीरू शब्दका प्रयोग किया। लालाजी और चाहे जो हो, भीरु तो हैं ही नही। मेरे भाषणका सन्दर्भ देखनेसे स्पष्ट हो जायेगा कि मैं इस आरोपसे लालाजीका बचाव कर रहा था कि वे मुसलमानोके प्रति विरोध-भाव रखते हैं। उस समय मैंने जो कहा था वह यह कि लालाजी शकाशील हैं और मुसलमानोके मशामें शक करते हैं, किन्तु साथ ही वे सच्चे दिलसे मुसलमानोकी मैत्री चाहते हैं। मै साफ कह देना चाहता हूँ कि लालाजीके लिए मेरे दिलमें बडी इज्जत है। मैं उन्हे बहुत बहादुर और आत्म-त्यागी व्यक्ति समझता हूँ। और उदार, सत्यपरायण और ईश्वरसे डरकर चलनेवाला आदमी समझता हूँ। उनकी

१. साधन-सूत्रके अनुसार।

देश-भक्ति अत्यन्त निर्मल है। देशकी उन्होंने जितनी और जैसी अच्छी सेवा की है, उसमें वहुत कम लोग बराबरी कर सकते हैं। और यदि ऐसे व्यक्तिपर बुरा मंशा रखनेका सन्देह किया जाये तब तो हमें हिन्दू-मुस्लिम एकताकी आशा छोड़ ही देनी पड़ेगी। यदि अली-बन्धुओंके मंशामें लोग शक करने लगे तो क्या हिन्दू-मुस्लिम ऐकताकी कोई आशा की जा सकती है? यहाँ भी स्थिति वैसी ही है। हम सबकी अपनी-अपनी मर्यादाएँ हैं, अपने-अपने पूर्वग्रह हैं। तो हम हिन्दुओं और मुसलमानोंको, जैसे हम हैं उसी रूपमें स्वीकार किया जाना चाहिए और जिन लोगोंके लिए हिन्दू-मुस्लिम एकता धर्म-रूप है उन्हें इसी साधन-सम्पत्तिके द्वारा, इन्हीं गुण-दोषमय हिन्दुओं और मुसलमानोंके द्वारा यह एकता स्थापित करनेकी कोशिश करनी चाहिए। अपने औजारोंको दोष देनेवाला बढ़ई असफल बढ़ई है। कर्नल मैडॉकने मुझे बताया कि एक बार उन्होंने आम इस्तेमालके एक मामूली-से चाकूसे बहुत बड़ा ऑपरेशन किया था, क्योंकि उस समय और कोई चाकू उनके पास नहीं था। कीटाणु-नाशक-पदार्थके नामपर उनके पास सिर्फ उबलता हुआ पानी था। लेकिन उन्होंने हिम्मत की और उनके मरीजकी जान बच गई। अगर हम भी एक-दूसरेपर विश्वास करनेका साहस दिखायें तो समझ लीजिए हम सुरक्षित हैं। लेकिन एक-दूसरेका विश्वास करनेका मतलब जबानसे विश्वास प्रकट करना और मनमें अविश्वास रखना नहीं हो सकता। यह तो सचमुच कायरता होगी, और कायरोंसे कायरोंकी अथवा कायरोंसे बहादुरोंकी दोस्ती कभी नहीं हो सकती।

हत्या कब उचित है?

दिल्ली-निवासी लाला शंकरलालने मुझे बताया है कि ऐसी खबर है कि मैंने हिन्दुओंको कुछ मौकोंपर मुसलमानोंकी हत्या करनेकी सलाह दी है। उदाहरणके लिए जब मुसलमान गो-हत्या कर रहे हों। मैंने यह खबर खुद कहीं नहीं पढ़ी है। लेकिन चूँकि बात बहुत महत्त्वपूर्ण है इसलिए मुझे इस सम्बन्धमें अपनी बात बहुत सावधानीके साथ सूक्ष्मतापूर्वक और निश्चित रूपसे कहना जरूरी है। मैं मानता हूँ कि सारी दुनिया या मुसलमानोंसे गायकी रक्षा करना हिन्दू-धर्मका अंग नहीं है। अगर कोई हिन्दू ऐसी कोई कोशिश करता है तो वह दूसरोंपर जबरदस्ती अपना विचार लादनेका दोषी माना जायेगा। उसका कर्त्तव्य तो सिर्फ यह है कि वह अच्छी तरह प्रेमपूर्वक गायकी देख-भाल करे। प्रसंगवश मैं कह दूँ कि इस कर्त्तव्यका पालन वह बिलकुल नहीं करता। हिन्दू लोग जिस तरीकेसे सारी दुनियाको गो-रक्षाके लिए राजी कर सकते हैं वह तरीका सिर्फ यही है। गो-रक्षा और उसमें जो-कुछ समाया हुआ है उसे वे अपने आचरणमें उतारकर दुनियाको दिखायें। लेकिन, यह तो हर व्यक्तिका और इसलिए हर हिन्दूका कर्त्तव्य है कि वह अपनी माँ, बहन, पत्नी या बेटी, बल्कि जो भी एकमात्र या विशेष रूपसे उसीके संरक्षणमें हो ऐसे हर किसीकी, अपने प्राणोंकी बलि देकर भी रक्षा करे। मेरा धर्म तो मुझे सिखाता है कि मैं दूसरोंकी रक्षाके लिए किसीकी हत्या करनेका प्रयत्न किये बिना अपना जीवन बलिदान कर दूँ। लेकिन, साथ ही मेरा धर्म मुझे यह कहनेकी भी प्रेरणा देता है कि जहाँ अपने संरक्षितकी उपेक्षा करके भाग खड़े होने और जो बलात्कार

करना चाहता हो तो उसकी हत्या करने, इन दो स्थितियोके बीच चुनाव करना हो वहाँ कर्त्तव्य-स्थल छोडकर भाग खडा होना नही बल्कि इस स्थलपर डटे रहकर मारना और मिटना ही कर्त्तव्य है। ऐसा भी हुआ है कि बहुत ही लम्बे-तगडे लोगोने मेरे पास आकर बडे सहज-भावसे कह डाला है कि उन्होने लम्पट मुसलमानोके हाथो हिन्दू बहनोका सतीत्व लुटते अपनी आखो देखा। मैं क्या बताऊँ कि उस समय मुझे कितनी ग्लानि हुई है। बहादुरोके समाजमे यह बात लगभग असम्भव है कि किसीके देखते हुए किसी नारीका सतीत्व लुटे और वह ऐसी कलक-कथाकी साक्षी भरनेको जीवित रह जाये। ऐसे अपराधकी खबर देनेके लिए एक भी व्यक्तिको जीवित नही रहना चाहिए। एक सीधे-सादे पुजारीने, जो अहिसाका धर्म नही समझता था, बडे उल्लासके साथ मुझे बताया कि एक बार जब मूर्तियोंको तोडनेके इरादेसे कुछ लोगोकी भीड मन्दिरमे घुस आई तो वह बडी होशियारीसे अन्यत्र छिप गया। ऐसे आदमीको मै पुजारी होनेके लायक नही मानता। उसे तो अपने कर्त्तव्य-स्थलपर मर मिटना चाहिए था। इस तरह उसने मूर्तिको अपने रक्तसे सीचकर पवित्र बना दिया होता। यदि उसमे इतना साहस नही था कि वह ईश्वरसे उन आक्रामकोके प्रति दया करनेकी प्रार्थना करते हुए स्वय बलिदान हो जाता तो उनकी हत्या करना भी उसके लिए उचित होता। लेकिन, अपने क्षण-भगुर शरीरकी रक्षा करनेके लिए इस तरह छिप जाना पुरुषोचित नही था। सच तो यह है कि कायरता स्वय प्रच्छन्न हिंसा है, और चूंकि यह प्रच्छन्न है, इसलिए बहुत खतरनाक है और इसीलिए इसका निवारण भी वास्तविक हिंसासे कही अधिक कठिन है। कायर अपनी जानको कभी खतरेमे नही डालता। जो हत्या करनेको तैयार रहता है, वह अकसर अपनी जानपर खतरा भी लेता है। अहिंसक व्यक्तिका जीवन तो बराबर जो उसे लेना चाहे, उसीके हाथमे रहता है। कारण, वह जानता है कि शरीरके अन्दर जो आत्मा है, वह अनश्वर है। आत्माका निवास-रूप शरीर तो सतत नाशवान है। इसलिए जो व्यक्ति जीवनको परमार्थमे जितना ही लगाता है, वह उसकी उतनी ही रक्षा करता है। इस प्रकार अहिंसाके लिए युद्धके मैदानमे डटे हुए सिपाहीसे अधिक साहसकी आवश्यकता है। 'गीता' के अनुसार योद्धा वह है जो खतरेसे सामना पडनेपर पीठ दिखाना नही जानता।

फिर अपरिवर्तनवादी

अपरिवर्तनवादियोके करुण पत्र अब भी मेरे पास आ रहे है। पत्र-लेखकोने स्पष्ट शब्दोमे लिखा है कि वे मानते है, मैंने असहयोगको बेच डाला है, लेकिन मेरे प्रति प्रेम-भावके कारण वे मेरे विरुद्ध विद्रोह नही करेगे। मै जानता हूँ कि जो अपरिवर्तनवादी स्वराज्यवादियोके साथ मेरे समझौता करलेनेके खिलाफ खुलेआम लिख रहे है वे भी बहुत सयमसे काम ले रहे है। मेरे साथ जो इतना ज्यादा लिहाज बरता जा रहा है, उसके लिए मै बडा कृतज्ञ हूँ। लेकिन जहाँ इस बातसे मुझे खुशी होती है, वहाँ परेशानी भी होती है। मैं उन्हे आश्वस्त कर देना चाहता हूँ कि यदि वे मुझे गलती-पर समझकर मेरा विरोध करेगे तो मैं उसका किसी भी तरह बुरा नही मानूंगा। मेरे प्रति स्नेह-भावके कारण या मेरी गत सेवाओकी वजहसे उन्हे मेरा विरोध करनेमें

किसी प्रकारका सकोच नही करना चाहिए। उनका विरोध, उनसे जितना बने उतना नम्र, शिष्ट और अहिसामय तो हो किन्तु साथ ही उसमे दृढताकी कोई भी कमी नही होनी चाहिए। दरअसल असहयोग जिस प्रकार मेरे लिए आचरणका एक सिद्धान्त है उसी प्रकार उनके लिए भी है। मैंने वार-बार कहा है कि यदि यह एक खरा सिद्धान्त है तो अपने प्रियसे-प्रिय कुटुम्बियो और मित्रोंके साथ भी इसका प्रयोग सम्भव होना चाहिए। मैंने यह बात भी एकाधिक अवसरोपर कही है कि इस सिद्धान्तकी खोज मैंने पारिवारिक जीवनके सूक्ष्म अवलोकनके आधारपर और उस जीवनको अपनी समझके अनुसार ठीक-ठीक व्यवस्थित करते हुए की है। इसलिए जिन अपरिवर्तनवादियोका विश्वास हो कि मै गलतीपर हूँ, वे मेरे साथ असहयोग करके मेरा भला ही करेंगे। लेकिन, यदि उनके मनमे अपने इस निष्कर्षमे कोई सन्देह हो तो मै कहूँगा कि उस सन्देहका लाभ मुझे मिलना चाहिए। जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मैं अब उन्हे और अधिक नही समझाऊँगा। एक अग्रेज भाईके अनुसार, यदि मै उन्हे और अधिक समझाता हूँ तो उसका मतलब अनुचित प्रभाव डालनेकी कोशिश करना होगा। समझौतेके पक्षमें मुझे जो-कुछ कहना था, वह कह चुका हूँ। मै जल्दबाजीमे और पूरा सोचे-विचारे विना कोई काम नही करता, इसलिए मैं अपना कदम जल्दी वापस भी नही लेता। लेकिन, अपरिवर्तनवादियोको इस बातका भरोसा तो होगा ही कि जिस क्षण मुझे लगेगा कि मैंने 'इस ध्येयको' सचमुच 'बेच डाला' है, उसी क्षण मै अपना कदम वापस ले लूंगा और अपनी भूलका पूरा परिमार्जन करनेकी कोशिश करूँगा। लेकिन, तबतक वे यह तो नही ही चाहेंगे कि मै अपने विश्वासोके विरुद्ध कोई काम करूँ।

सबको आना चाहिए

लेकिन, जहाँ मै अपरिवर्तनवादियोको और अधिक समझाना नही चाहता, वहाँ यह अवश्य चाहता हूँ कि वे मुझे अपनी बात समझाते रहे। मुझे ऐसे बहुत-से प्रसग याद हैं, जब मै गलतीपर रहा हूँ और मित्रोने मुझे बार-बार समझाकर सही रास्ते-पर ला दिया है। उनके मनमे अभी जो शकाएँ शेष रह गई हो, उनके उत्तर भी मै सहर्ष देना चाहूँगा। और इसलिए मै चाहता हूँ कि जो अपरिवर्तनवादी काग्रेसमें आ सकते हो वे सबके-सब अवश्य आये। इसी प्रकार मै चाहता हूँ कि सभी परिवर्तन-वादी प्रतिनिधि भी काग्रेस अधिवेशनमे शामिल हो। मै समझौतेपर सिर्फ उनकी तटस्थ सम्मति ही नही चाहता, मै तो चाहता हूँ कि इस सयुक्त कार्यक्रमको कार्यान्वित करनेमे वे सक्रिय रूपसे और उत्साहपूर्वक सहयोग करें। मैं उनका मार्ग-दर्शन चाहता हूँ और चाहता हूँ कि जो चीज उन्हे अच्छी न लगे उसकी वे आलोचना करें। इसके अतिरिक्त यद्यपि मै यह नही चाहता कि समझौतेसे सम्बन्धित बातोपर काग्रेसमें मत-विभाजन हो, फिर भी कुछ ऐसे महत्त्वपूर्ण प्रश्न भी सामने आ सकते है, जिनपर मत-विभाजन अवश्यभावी हो जाये। इसलिए मैं चाहता हूँ कि अधिवेशनमें सभी प्रति-निधि शामिल हो। जो प्रतिनिधि वार्षिक अधिवेशनमें शामिल होकर अपने निर्वाचकोका प्रतिनिधित्व नही करता उसका प्रतिनिधि नियुक्त किया जाना बेकार है। इस वर्ष तो हर प्रतिनिधिके लिए विशेष रूपसे जरूरी है कि वह अधिवेशनमे शामिल हो।

सदस्यताकी शर्तमे क्रान्तिकारी परिवर्तन करनेकी कोशिश हो रही है। यदि कांग्रेसने उसे स्वीकार कर लिया तो उसको कार्य रूप देनेके लिए नियम भी बनाने पड़ेंगे। कुछ और भी महत्त्वपूर्ण परिवर्तन मै विषय समितिके विचारार्थ पेश करना चाहता हूँ। कुछ नये सम्मेलन भी इसके साथ हो रहे है — जैसे नेशनल होमरूल कान्फ्रेंस और अब्राह्मण कान्फ्रेस। इसलिए हर दृष्टिसे यह जरूरी है कि अधिवेशनमे सभी प्रतिनिधि शामिल हो और महत्त्वपूर्ण परिवर्तनोके शुभारम्भमे योग-दान करे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १८-१२-१९२४

३६७. कोहाटका दुष्काण्ड

कोहाटके दुष्काण्डपर भारत सरकारने परदा डाल दिया है। उसने तो पण्डित मालवीयजीको वाइसराय द्वारा दिये गये उत्तरमे ही जनताको इस बातका आभास दे दिया था कि वह कोई वैसा ही फतवा देनेवाली है जैसा कि आज देशके सामने है। यह सरकारी निर्णय जिस प्रकार एक राष्ट्रके रूपमे हमारी निर्वीर्यताका प्रमाण है, उसी प्रकार इस बातका भी सबूत है कि सरकारकी मनमानीको चुनौती देनेवाला कोई नही है और उसे जनमतकी तनिक भी परवाह नही है। मेरे लेखे तो कोहाट-दुष्काण्डका जितना बड़ा कारण वहाँके प्रशासकोकी अयोग्यता और अक्षमता है उतना बड़ा कारण हिन्दू-मुस्लिम तनाव नही है। यदि उन्होने जान-मालकी हिफाजतका अपना बुनियादी फर्ज अदा किया होता तो जो ध्वस-लीला दिन-दहाड़े शुरू हुई और चलती रही, उसे आसानीसे रोका जा सकता था। लेकिन, अधिकारीगण नीरोकी तरह सब-कुछ देखते रहे, मोद मनाते रहे और उधर 'रोम' जलता रहा। वे ऐसा नही कह सकते कि वे असहाय थे। उनके पास इस आगका शमन करनेके लिए पर्याप्त साधन थे। अगर वे चुप बैठे है तो अपने ही अपराधपूर्ण, उपेक्षा-भाव और निष्ठुरताके कारण चुप बैठे है, उनके कर्त्तव्य-पालनके रास्तेमे दूसरी कोई बाधा थी ही नही।

अब भारत सरकार भी उनके अपराधकी सहभागी बन गई है, उसने स्थानीय अधिकारियोकी करनीपर लीपापोती कर दी है, बल्कि उनकी उपेक्षाको या उपेक्षासे भी बदतर आचरणको "धैर्य और साहस" करार दिया है।

अपेक्षा तो यही की जा सकती थी कि इस मामलेकी पूरी, खुली और स्वतत्र जाँच कराई जायेगी। लेकिन विभागीय जाँचके अलावा और कुछ नही किया गया और जाँच करनेवालोमें जनताका कोई भी प्रतिनिधि नही रखा गया। इस जाँचके निष्कर्षोपर जनताको तनिक भी विश्वास नही हो सकता। मैं और मेरे मुसलमान सहयोगियोने राय बहादुर सरदार माखनसिंहसे लेकर मामूलीसे मामूली शरणार्थियो तकसे बातचीत की। सबने यह तो स्वीकार किया कि लाला जीवनदासने एक पर्चा प्रकाशित किया था जिसमे बहुत ही अपमानजनक पद्य छपे हुए थे, किन्तु साथ ही उन्होने यह भी बताया कि हिन्दुओने उसके प्रकाशनके लिए काफी प्रायश्चित्त किया और

जब मुसलमानोंने ध्वंस-लीला शुरू कर दी तब ही हिन्दुओंने आत्मरक्षामें गोलियाँ चलाईं। कोहाटके मुसलमानोंकी ओरसे यह कहा गया कि पर्चेके सम्बन्धमें हिन्दुओंने अपनी भूलका पर्याप्त परिमार्जन नहीं किया और हिन्दुओं द्वारा गोलियाँ चलाने और मुसलमानोंकी जान लेनेके बाद ही मुसलमानोंने ध्वंसात्मक कार्रवाई और गोलियाँ चलाना शुरू किया। चूँकि कोई कोहाटी मुसलमान रावलपिंडी नहीं आया था, इसलिए दुर्भाग्यवश हमें इस सम्बन्धमें सत्यका पता नहीं चल पाया। अत, यह कहना कठिन है कि सरकारने जिस तरह दोनों सम्प्रदायोंके लोगोंके बीच दोषका बँटवारा किया है वह गलत है। लेकिन जाँचके निष्कर्षको कोई निष्पक्ष या स्वीकार्य निर्णय नहीं माना जा सकता। कोहाटके हिन्दुओंसे इस निष्कर्षको स्वीकार करने या इसके सामने सिर झुका देनेकी अपेक्षा नहीं की जा सकती। और न कोहाटके मुसलमानोंको ही सिर्फ इस कारणसे कि यह निष्कर्ष उनके पक्षमें जान पडता है, इससे सन्तोष मिल सकता है। कारण, मुसलमान यदि सिर्फ इसलिए भारत सरकारके इस निष्कर्षपर हर्ष प्रकट करते हैं कि अभी इससे मुसलमानोंकी बातका समर्थन होता दीखता है तो यह गलत होगा। इस मामलेमें तो कोई भी निष्कर्ष संतोषजनक तभी माना जा सकता है जब वह ऐसे हिन्दुओं और मुसलमानों द्वारा निकाला गया संयुक्त निष्कर्ष हो जिनकी निष्पक्षतामें सन्देहकी तनिक भी गुंजाइश न हो। इसलिए भारत-सरकारका यह फतवा दोनों जातियोंके लिए चुनौती है। इसमें हिन्दू शरणार्थियोंसे अपमानजनक परिस्थितियोंमें रहनेका मूल्य चुकाकर कोहाट लौट जानेको कहा गया है और मुसलमानोंको अपने हिन्दू भाइयोंका अपमान करनेके लिए बढ़ावा दिया गया है। आशा है, हिन्दू कोहाटमें अपमान सहकर अमीरीकी जिन्दगी बितानेके बजाय कोहाटसे बाहर सम्मानके साथ फकीरीकी जिन्दगी बिताना ज्यादा पसन्द करेंगे। मुझे आशा है कि मुसलमान भाई भी सरकार द्वारा दिये गये प्रलोभनको ठुकरा देनेकी मर्दानगी दिखायेंगे और अपने हिन्दू भाइयोंको, जिनकी संख्या कोहाटमें बहुत ही कम है, अपमानित करनेमें शरीक नहीं होंगे। प्रारम्भमें चाहे जिसने भी गलती की हो, जिसने भी उत्तेजनका कारण प्रस्तुत किया हो, इस तथ्यको कोई झुठला नहीं सकता कि हिन्दुओंको लगभग जबरदस्ती कोहाटसे निकाल बाहर किया गया। इसलिए यह काम अब मुसलमानोंका है कि वे रावलपिंडी जायें और हिन्दुओंको मैत्री तथा जान-मालकी सुरक्षाका आश्वासन दिलाकर उन्हें कोहाट वापस ले आयें। और कोहाटसे बाहरके हिन्दुओंको भी ऐसा आचरण करना चाहिए जिससे मुसलमान लोग ऐसा रवैया अपना सकें। कोहाटसे बाहरके मुसलमानोंको कोहाटी मुसलमानोंसे अल्पसंख्यक हिन्दुओंके प्रति अपने बुनियादी कर्त्तव्यको स्वीकार करनेका आग्रह करना चाहिए। हिन्दुओं और मुसलमानोंके बीच एकता स्थापित करनेके प्रयासकी सफलता बहुत हदतक इस कठिन समस्याके समुचित और सम्मानजनक समाधानपर ही निर्भर है।

हम सहयोगी और असहयोगी सभी लोग एक-दूसरेसे अपना बचाव करनेके मामलोंमें जितनी जल्दी सरकारपर भरोसा करना छोड़ देंगे, हमारे हकमें उतना ही अच्छा होगा तथा इस समस्याका समाधान उतनी ही जल्दी निकल आयेगा और

वह समाधान उतना ही अधिक स्थायी भी होगा। इस दृष्टिसे देखें तो कोहाटके अधिकारियोकी उपेक्षाको हम इष्ट भी मान सकते है। यदि हिन्दुओने अधिकारियोसे सुरक्षाकी माँग न की होती और बिना कोई बचाव किये अपने-अपने घरोमे वे जमे रहते या अगर उन्होने यही किया होता कि हथियार उठाकर अपनी तथा अपनी सम्पत्ति और आश्रितोकी रक्षा करते हुए वे मर मिटते तो इतिहास कुछ और ही ढगसे लिखा जाता। मुझे खुशी होगी, अगर सरकार कोई ऐसी घोषणा कर दे कि साम्प्रदायिक झगडोमे कोई भी उससे सुरक्षाकी अपेक्षा न करे। अगर दोनो पक्ष अपनी-अपनी स्वाधीनतापर दूसरेकी ओरसे होनेवाले हमलेके खिलाफ अपनी रक्षा आप ही करना सीख ले तो समझ लीजिए हम स्वराज्यके मार्गपर आरूढ है। यह चीज आत्म-रक्षा और आत्म-सम्मानकी या दूसरे शब्दोमे कहे तो स्वराज्यकी बहुत अच्छी तालीम होगी। बचावके दो तरीके है। सबसे अच्छा और कारगर तरीका तो यह है कि हम कोई बचाव करे ही नही, बल्कि तमाम खतरोका सामना करते हुए अपने स्थानपर डटे रहे। इससे जरा कम अच्छा, लेकिन इतना ही सम्मानपूर्ण तरीका यह है कि अपने बचावके लिए बहादुरीके साथ प्रतिपक्षीपर वार करे और अपनेको ज्यादासे-ज्यादा खतरनाक स्थितियोमे डाले। दोनोके बीच दो चार-बार जमकर मुठ-भेड हुई नही कि वे समझ जायेगे कि इस तरह एक-दूसरेका सिर फोडनेसे कोई फायदा होनेवाला नही है। उन्हे इस बातका ज्ञान हो जायेगा कि इस तरह लडना ईश्वरकी नही, बल्कि शैतानकी सेवा करना है।

अन्तमे, मै रावलपिडीमे शरणार्थियोको दिया गया अपना वचन फिरसे दोहराता हूँ। जबतक उन्हे कोहाटके मुसलमानोकी ओरसे हार्दिक निमन्त्रण न मिले तबतक यदि वे लौटकर वहाँ नही जायेगे तो जो काम मैने पहलेसे ही हाथमें ले रखे है, उनके पूरा होते ही मै मौलाना शौकत अलीके साथ रावलपिडी आकर दोनो सम्प्रदायोके लोगोके बीच सौहार्द स्थापित करनेकी कोशिश करूँगा और यदि इसमे असफल रहा तो उन्हें जीवन यापनके उचित धन्धे ढूँढनेमे सहायता दूँगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १८-१२-१९२४

३६८. देशभक्तिके आवेशमें पागलपन

यदि यह समाचार सच है कि मुलशीपेटाके कुछ 'सत्याग्रहियो' ने टाटाके कारखानेपर काम करनेके लिए मजदूरोको ले जा रही एक रेलगाडीको तोड-फोडकर नाकाम कर दिया है, इजिनके ड्राइवरको चोट पहुँचाई है और गरीब मजदूरोको, जिनमें औरते भी शामिल थी, अन्धाधुध मारा है तो उनके इस जुर्मकी जितनी निन्दा की जाये थोडी ही है। कहते है, कानून और व्यवस्थाका भग करानेवाले और शिष्टताके नियमोको तोडनेवाले इन अपराधियोने टाटाके विरुद्ध लडाईकी घोषणा कर दी है और उनका कहना है कि इस तरह मजदूरोको कामपर जानेसे रोककर वे टाटाके कारखानेका बनना रोक देनेकी आशा करते है। यह तो अच्छे समझे जानेवाले उद्देश्यको पूरा करनेके लिए आतकका तरीका अपनाना है। चाहे अच्छे उद्देश्यके लिए हो या बुरे उद्देश्यके लिए, सभी प्रकारकी आतक-नीति बुरी ही है। सच तो यह है कि जो कोई जिस उद्देश्यको लेकर चलता है, उसकी समझमे वह उद्देश्य अच्छा ही होता है। जनरल डायरने जलियाँवाला बागका काण्ड एक ऐसे ही हेतुके लिए किया, जिसे वे निस्सन्देह अच्छा समझते थे (और हजारो अग्रेज स्त्री-पुरुषोके खयालसे भी यह हेतु अच्छा ही था)। उन्होने सोचा कि केवल इसी एक कामको करके उन्होने ब्रिटिश साम्राज्य और अग्रेजोकी जाने बचाई है। यह सही है कि यह सब उनके मनकी कल्पना-मात्र थी, किन्तु इसी कारण हम उनके विश्वासकी गहराईको तो कम नही आँक सकते। लॉर्ड लिटन और लॉर्ड रीडिंग हृदयसे विश्वास करते है कि बगालका स्वराज्यवादी दल हिंसाकी प्रवृत्तिसे ओतप्रोत है। परन्तु उनका हेतु अच्छा होनेके कारण उनकी आतक-नीतिको उचित नही माना जा सकता। जिस उद्देश्यको मुलशीपेटाके सिरफिरे 'सत्याग्रही' अच्छा और न्याययुक्त मानते है, उसीको टाटावाले और उनके समर्थक सचमुच ही दुष्टतापूर्ण मानते है। वे हृदयसे विश्वास करते है कि उनकी योजनासे चारो ओरके गाँवोको लाभ पहुँचेगा। उनका कहना है कि जिन लोगोका जो-कुछ लिया गया है उन्हे उसका पूरा मुआवजा दे दिया गया है। सबने खुशीसे अपनी जमीन छोडी है और यह योजना बम्बईके लिए एक वरदान साबित होगी और इसीलिए जो इस योजनाको विफल करना चाहते है, वे प्रगतिके विरोधी है। उनको अपना यह मत रखनेका उतना ही अधिकार है जितना मुझे यह विश्वास रखनेका अधिकार है कि इस योजनासे पडोसके लोगोको कोई लाभ नही पहुँचेगा, यह वहाँकी प्राकृतिक शोभाका नाश कर देगी। गरीब गाँववालोको कोई समझ नही थी और इसलिए यह कहना कि उन्होने राजी-खुशीसे अपनी जमीन छोडी है, अनुचित है। उस स्थानको छोडनेकी एवजमें जिससे उनका भावनात्मक सम्बन्ध है, कोई मुआवजा पूरा नही कहा जा सकता है। और यह कहना कि यह बम्बई प्रान्तके लिए एक वरदान होगा, विवादका विषय है। लेकिन अगर मै यह माननेकी गुस्ताखी करूँ कि सही तो केवल मै ही हूँ तो

इसका मतलब अपनेको ईश्वरके आसनपर बैठानेकी धृष्टता करना ही होगा और चूँकि क्या सही है, यह तय करनेके लिए हमारे पास कोई सर्वथा पूर्ण और सर्वमान्य माप-दण्ड नही है, इसलिए आतक नीतिको हर हालतमे गलत ही कहना होगा। दूसरे शब्दोमे शुद्ध हेतुके कारण कोई अशुद्ध या हिंसात्मक कार्य उचित नही कहा जा सकता। इसलिए मैं अपराधियोको खुशी-खुशी अपने-आपको अधिकारियोके हवाले कर देनेपर भी बधाई नही दे सकता। इससे दोषका निवारण नही हो सकता। हो सकता है कि वह महज शेखीमे की गई बहादुरी हो। अभी हालमे खिडकीमे एक व्यक्तिने एक महिलाकी हत्या करके आत्मसमर्पण कर दिया। किन्तु यह आत्मसमर्पण उसे फाँसीके तख्तेसे नही बचा पाया। उन निर्दोष स्त्रियोंको, जो ईमानदारीसे अपनी रोजी कमाती थी, मारना-पीटना एक अक्षम्य अपराध था। अपने-आपको मुलशीपेटाके निवासियोका हितैषी समझनेवाले इन व्यक्तियोको पूरा अधिकार था कि वे यदि चाहते थे तो मजदूरोके पास जाते और उन्हे समझा-बुझाकर टाटाका काम करनेसे रोक देते। परन्तु उन्हे कानूनको अपने हाथमे लेनेका कोई अधिकार नही था। उन्होने आतकका गलत तरीका अपनाकर एक अच्छे उद्देश्यको हानि पहुँचाई है और जनताकी जो-कुछ सहानुभूति उनके साथ थी, उससे वे हाथ धो बैठे है। सुधारकोकी ओरसे आतक-नीतिका उपयोग भी वैसा ही अनुचित हो सकता है जैसा कि सरकारकी ओरसे, बल्कि कही-कही तो उससे भी बढकर; क्योकि इसके साथ तो एक हदतक झूठी सहानुभूति पैदा हो जाती है। मैंने एक महिलाको विप्लववादियोके आत्म-बलिदानपर बडा ओजस्वी भाषण देते सुना और देखा कि श्रोताओके हृदयपर उसका काफी प्रभाव भी पड रहा था। लेकिन थोडा विचार करनेपर यह स्पष्ट हो जायेगा कि स्वार्थ-त्यागके कारण किसी अपराधको जायज नही माना जा सकता। किसी बुरे या अनैतिक उद्देश्यका समर्थन आत्म-बलिदानके जरिये भी नही किया जा सकता। यदि कोई पिता अपने बच्चेको इस कारण आगसे खेलनेकी अनुमति दे देता है कि वह यह अनुमति पानेके लिए भूख-हडताल कर रहा है तो वह एक कमजोर पिता माना जायेगा। अभी पिछले दिनो ही कुछ नवयुवकोने कलकत्तेके पास एक निर्दोष टैक्सी ड्राइवरको करीब-करीब मार ही डाला था, किन्तु सिर्फ इस कारणसे कि वे देश-हितके लिए धन पानेके उद्देश्यसे ड्राइवरको लूट रहे थे और इस प्रयत्नमे वे अपनी जान भी खतरेमे डाल रहे थे, वे सहानुभूतिके पात्र नही हो सकते। जो लोग भुलावेमे आकर ऐसे दिग्भ्रमित युवकोके साथ सहानुभूति प्रकट करते है वे दरअसल देशका अहित करते है और इन युवकोका भी कोई कल्याण नही करते।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १८-१२-१९२४

३६९. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

१८ दिसम्बर, १९२४

परमप्रिय चार्ली,

हाँ, तुम्हारे सब तार मिल गये थे। मैं तुमसे सहमत हूँ कि तुमको आरामकी जरूरत है — मुझसे भी बहुत ज्यादा जरूरत है। तो मैं तुम्हें 'यंग इंडिया' की हर चिन्तामें बिलकुल मुक्त कर देता हूँ। तभी लिखो जब लिखनेकी सहज प्रेरणाका अनुभव हो। मुझे तुमको मिस्र और बर्माके बारेमें परेशान करना उचित नहीं था। मेरे अभिभाषणने एक अजीब मोड़ ले लिया है। कई विषयोंको मैंने, उनका अत्यन्त संक्षेपमें उल्लेख करके, समाप्त कर दिया। तुम उसे फुर्सतके समय सावधानीसे पढ़ना और अगर तुम्हारा मन हो तो उसकी आलोचना भी करना। तुम्हें शान्तिनिकेतनमें रहनेवाले यूरोपीयोंको गर्मियोंमें पर्वतीय जलवायुमें ले जाना चाहिए और उन्हें खाना हमेशा यूरोपीय ढंगसे बनवाकर देना चाहिए।

सप्रेम,

तुम्हारा,
मोहन

अंग्रेजी पत्र (जी० एन० २६१८)की फोटो-नकलसे।

३७०. पत्र : वि० ल० फड़केको

बृहस्पतिवार [१८ दिसम्बर, १९२४][1]

भाई मामा,

आपका पत्र मिला। बुधवारको ३१ तारीख है। मेरा विचार है कि मैं उस दिन रवाना होकर शुक्रवारको सवेरे एक्सप्रेससे दाहोद पहुँचूँ और शनिवारको गोधरा और गोधरासे उसी दिन अथवा रविवारको जो भी पहली गाड़ी मिले उससे साबरमती पहुँच जाऊँ। इस तरह ५, ६ और ७ तारीखोंको मैं आश्रम रह सकूँगा। उसके बाद फिर अपनी यात्रा शुरू कर दूँगा। इसलिए आप सोमवारका लालच छोड़ दें। इस कार्यक्रममें यदि कुछ परिवर्तन करना पड़ा तो आपको सूचित करूँगा।

बापू

गुजराती पत्र (जी० एन० ३८१०) से।

१. अनुमानतः गांधीजीने यह पत्र बृहस्पतिवार १८ दिसम्बर, १९२४को साबरमतीसे बेलगाँवके लिए रवाना होनेसे पहले लिखा था। वे ३१ तारीखको बम्बईमें थे और २ तारीखको दाहोद और गोधरा गये थे। श्री फड़के गोधरामें अन्त्यजोंके लिये एक आश्रम चलाते थे।

३७१. पत्र : प्रभाशंकर पट्टणीको

बृहस्पतिवार, मार्गशीर्ष बदी ७ [१८ दिसम्बर, १९२४][1]

सुज्ञ भाईश्री,

आपका पत्र मिला। लगता है कि मेरे पत्रमे 'न' शब्द छूट गया था। मेरा कहनेका अभिप्राय तो यह था कि अब [यदि परिषद्] सोनगढमें न हुई तो यह ठीक न लगेगा। मेरे ऐसा लिखनेका कारण यह था कि एक बार निश्चय कर लेनेके बाद व्यवस्थापकगण केवल सुविधाके लिए उसमे परिवर्तन न करे। यह तो हुआ मेरा निजी विचार। करना क्या है, सो तो आप और परिषद्‌वाले ही जाने।

मैंने नगरनिगमके अध्यक्षको पत्र लिख दिया है। आपके द्वारा पेश की गई कुछ दलीले तुरन्त ही गले उतर जाये, ऐसी है।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ३१८६) से।
सौजन्य महेश पट्टणी

३७२. असहयोगी विद्यार्थी

मै अकसर सुना करता हूँ कि मेरी कही हुई कुछ बातोसे असहयोगी विद्यार्थियो-मे खलबली मची हुई है। कुछ विद्यार्थी तो मुझे पत्रोके जरिये शब्द-बाण भी मार रहे है।

मुझे विद्यार्थियोके किये हुए त्यागपर अभिमान है। मै जानता हूँ कि विद्यार्थियो-ने देशकी सेवा की है। मगर विद्यार्थियोने बहुत-कुछ किया है तो उससे करोडो गुना ज्यादा करना अभी उनके लिए शेष है। त्यागकी हद नही होती। जो ऐसा कहे कि इतना त्याग बहुत है, उसके बारेमे तो यही कहना होगा कि उसे घमण्ड हो गया है और इसलिए उसका त्याग बेकार गया। स्वराज्य पूरे त्यागके बाद आयेगा। यही हमारी कसौटी है। जबतक स्वराज्य नही मिलता, तबतक त्याग अधूरा ही है।

फिर, जो त्याग दु:ख देता है, वह त्याग त्याग नही है। जिस त्यागसे मनुष्यका दिल हलका होता है, शान्त होता है, आनन्दित होता है, वही सच्चा त्याग है। बुद्धके लिए भोग-विलास दु:खदायी बन गया, इसलिए उन्होने उसका त्याग कर दिया। त्याग ही उनके लिए आनन्दका विषय बन गया, इसलिए वे त्यागके मार्गपर दृढ रहे।

१. यह पत्र प्रभाशंकर पट्टणी द्वारा १७-१२-१९२४ को लिखे पत्रके उत्तरमें भेजा गया था। इस पत्रमें "न" शब्दके छूट जानेकी जिस चूकका उल्लेख है, गांधीजीने वह पत्र १४-१२-१९२४ को लिखा था।

सरकारी स्कूलोंका त्याग तभी सच्चा है, जब अन्तमें विद्यार्थीको ऐसा लगे कि "हाँ, अब मुझे छुटकारा मिला।" सोनेके पिंजरेमें रहनेवाले तोतेको साँप आदिका कोई खतरा नहीं होता। उसे अपनी खुराक भी नियमित रूपसे मिलती रहती है। इतने-पर भी मालिक पिंजरेका दरवाजा खोल दे तो वह वहाँसे उड़ जायेगा और किसी पेड़की डालीपर बैठकर वहाँ झूलनेमें ही सुख मानेगा। वह जानता है कि अपनी इस आजादीके साथ उसे अब खाना तलाश करनेकी चिन्ता करनी पड़ेगी और अब उसे साँप और बड़े पक्षियोंका डर भी रहेगा। मगर वह इसकी परवाह नहीं करता। सोनेके पिंजरेके साथ और इसके मालिकके साथ, तोतेका यह असहयोग हमेशा निभेगा, क्योंकि तोतेने त्यागको — असहयोगको — सुख माना है। मालिकका प्रेम उसे स्वार्थमय मालूम होता था। मालिकके यहाँ मिलनेवाली सुविधा उसके लिए असुविधाके समान थी। तोता समझता था कि आजादीकी कोई कीमत नहीं हो सकती। रत्न-जटित पिंजरा भी आखिर है तो पिंजरा ही, तोतेका ऐसा दृढ़ विश्वास हो गया था, इसी-लिए पिंजरा खुलते ही वह उड़ गया।

जिन विद्यार्थियोंने सरकारी स्कूलोंको मोह-जाल समझकर छोड़ा होगा, उन्हें वे सोनेके लगें तो भी वे वहाँ वापस नहीं जायेंगे — फिर भले ही उनके लिए स्वतन्त्र विद्यालय हो या न हो। ऐसे त्यागी विद्यार्थियोंको ही सरकारी स्कूलोंसे बाहर रहनेका अधिकार है। असहयोग मुल्तवी रहनेका अर्थ यह है कि असहयोगकी कीमत जिनकी समझमें अभीतक न आई हो, उन्हें असहयोगको छोड़नेकी सहूलियत मिले और अगर वे असहयोग छोड़ दें तो इसे कोई अकीर्तिकर न माने, न कोई उसकी निन्दा करे। जो त्याग हमें असह्य लगे, भूल-भरा लगे, उस त्यागसे हमें फायदा नहीं होता। ऐसे त्यागियोंपर से कांग्रेसका नियंत्रण हट जायेगा और वे निस्संकोच वापस सरकारी स्कूलोंमें जा सकेंगे।

मगर जिन्हें सरकारी स्कूल कैदखाने-जैसे लगें, वे तो जबतक स्वराज्य नहीं मिले, तबतक — मृत्युपर्यन्त भी — अपना त्याग निभायेंगे। इस तरह विद्यार्थियोंके लिए और दूसरे असहयोगियोंके लिए भी सवाल तो जो पहले था, वही आज भी है। अब फर्क सिर्फ इतना ही है कि जिनके लिए कांग्रेसके प्रस्तावकी ही पाबन्दी थी, वे उससे मुक्त हो जायेंगे। लेकिन जो अपनी आत्माके बन्धनसे बँधे थे और जो आत्माकी आवाजके वश होकर इसमें पड़े थे, उनके लिए पाबन्दी कायम ही है।

इस तरह सरकारी शिक्षा और राष्ट्रीय शिक्षाका भेद काल्पनिक है, क्योंकि यहाँ कोई सिद्धान्त-भेद नहीं है। सिद्धान्त-भेद तो झण्डेका है, स्वामित्वका है। मेरे घरमें पकनेवाली रोटी और दूसरेके घरमें बननेवाली रोटी भले ही एक किस्मकी हो, फिर भी दूसरेके घरमें पकनेवाली रोटी दूसरेकी है, इसलिए उसे लेना चोरी है और इसलिए वह त्याज्य है। कैदखानेमें घरके जैसा खाना मिलता हो तो भी कैदखानेका खाना त्याज्य है। इसी तरह जिस विद्यार्थीको सरकारी स्कूल कैदखाने-जैसा न लगे, उसके लिए उसमें वापस चला जाना उचित है। उसकी आलोचना करनेका दूसरोंको अधिकार नहीं है। एकके लिए जो चीज कैद-जैसी हो, वही दूसरेके लिए आजादी-जैसी हो सकती है।

सच्चा आन्दोलन विचारको बदलनेवाला होता है। आचार विचारके पीछे आता ही है। मगर बिना विचारका आचार विचारशील लोगोको बोझ-सा लगता है, और विचारशून्य लोगोके लिए उसमे न कोई नफा है, न नुकसान। विचारशून्य लोग दूसरेकी नकल करते है; और आम तौरपर हम विचारशून्य होते है। इसीलिए भक्तोने सत्सगकी महिमाका बखान किया है।

अब जमाना सोच-समझकर असहयोग करनेका ही रह गया है। काग्रेस वगैरहकी बाहरी पाबन्दियाँ दवाकी पुडियाकी तरह थोडे समयके लिए उपयोगी हो सकती है। तीन-चार सालके प्रयोगके बाद आज हम देखते है कि बहुत-से विद्वान् लोगोके मनमें विद्यालयोके असहयोगके बारेमे सशय है। अगर उन्हीकी राय मानी जाये तो उनका बहुमत सरकारी स्कूलोके छोडनेके खिलाफ ही निकलेगा। ऐसे प्रतिकूल वातावरणमें थोडे ही विद्यार्थी स्वतन्त्र विचार करके अपना असहयोग कायम रख सकते है।

ऐसे थोडे-से विद्यार्थियोकी मदद करना राष्ट्रीय विद्यालयोका काम है। मै कुलपति माना जाता हूँ। इस जगहके लिए मेरी योग्यताका आधार मेरी विद्वत्ता तो किसी तरह नही है। मुझमे कुलपतिकी योग्यता हो भी तो उसका कारण असहयोगीके रूपमे मेरी विशेषता ही हो सकती है। इसलिए अगर मैने पढाईके सिलसिलेमे असहयोगको बल पहुँचानेवाले अगोपर ज्यादा जोर दिया है तो वह क्षम्य ही नही, स्तुत्य माना जाना चाहिए।

मगर मेरी इस स्थितिका अर्थ यह लगाया गया है कि मै पढाई-लिखाईका, विद्वत्ताका शत्रु हूँ। सच तो यह है कि बात इससे उलटी है। मै नही चाहता कि राष्ट्रीय विद्यालयोमे पढाई-लिखाई बन्द करके सिर्फ कातना-पीजना ही सिखाया जाये या कराया जाये। मै तो चाहता हूँ कि विद्यार्थियोको पूरा और उचित अक्षर-ज्ञान दिया जाये। मैं चाहता हूँ कि वे पढने-लिखनेमे सरकारी स्कूलोके विद्यार्थियोसे होड ले सके।

मगर मुझे सिर्फ अक्षर-ज्ञानसे ही सतोष नही। सरकारी स्कूलोमे केवल नौकरीका, गुमाश्तागिरीका उद्देश्य सामने रखकर हमे सिर्फ पढना-लिखना ही सिखाया जाता है। राष्ट्रीय पाठशालाओका हेतु स्वराज्य, स्वतन्त्रता, स्वावलम्बन है, इसलिए विद्यार्थियोको अक्षरज्ञानके साथ-साथ हृदय-बलकी और शारीरिक श्रमकी तालीम भी दी जानी चाहिए। राष्ट्रीय पाठशालाओमे स्वराज्यके लिए पोषक बाते होनी चाहिए। राष्ट्रीय स्कूलोमें पढाई-लिखाईको साध्य समझनेके बजाय उसे चरित्र-बल बढानेका और स्वराज्यके कार्यका साधन समझना चाहिए। हृदय-बल प्राप्त करनेकी शिक्षा देनेके लिए हृदय-बलवाले शिक्षक चाहिए और चूँकि चरखा स्वराज लेनेका एक जबरदस्त साधन है, इसलिए जिस राष्ट्रीय विद्यालयमे चरखेका सम्मानपूर्ण स्थान न हो, उसे मै राष्ट्रीय हरगिज नही मान सकता। काग्रेसने अपने प्रस्तावोमे चरखेको खूब महत्त्व दिया है। यह सच है कि इन प्रस्तावोको पास करनेवाले उनपर अमल नही करते। जो प्रस्ताव काग्रेसने पास किये है, उनपर अगर सदस्योने ही पूरी तरह अमल किया होता तो आज हम स्वराज्य लेकर शान्तिसे बैठ गये होते या स्वराज्यके द्वारके चमकीले तोरण हम बडी आतुरतासे निहारते होते। लेकिन सदस्योकी सुस्ती और बेवफाई असहयोगी विद्यार्थियोके-लिए दृष्टान्तरूप नही हो सकती। बच्चे बडोसे होड करने लगेगे तो मर जायेगे।

तुलसीदासजीने कहा है कि 'समरथको नहिं दोष गुसाईं'। लेकिन हम प्राकृत जन अगर समर्थ बनने चले तो हमारा नाश हो जाये। जिस राष्ट्रीय विद्यालयमें हिन्दी, उर्दू सिखाना अनिवार्य न हो, वह राष्ट्रके लिए पोषक नहीं है। जो राष्ट्रीय विद्यालय अन्त्यजोंका बहिष्कार करे, उस विद्यालयके बन्द हो जानेमें ही देशका भला है। राष्ट्रीय विद्यालयमें हिन्दू, मुसलमान, पारसी, ईसाई सभी जातियोंके विद्यार्थियोंको सगे भाइयोंकी तरह पढ़ना चाहिए। मेरे खयालसे ये सब बातें राष्ट्रीय विद्यालयके चिह्न हैं। इसमें मुझे शक नहीं कि राष्ट्रीय शिक्षाके लिए जो चीख-पुकार मचाई जा रही है वह बहुत हदतक बिना सोचे-समझे ही मचाई जा रही है। पढ़ाईकी किताबोंमें फेर-बदल, इतिहास आदि पढ़ानेके तरीकोंमें नवीनता लानेकी बातें गौण हैं। उनके लिए बेशुमार पैसा नहीं खर्च किया जा सकता, अलग संस्थाएँ नहीं खोली जा सकतीं। कोशिश करनेसे ऐसे फेर-बदल सरकारी स्कूलोंमें भी कराये जा सकते हैं। ऐसे फेरबदलके अभावमें सरकारी स्कूलोंको छोड़ना शोभा नहीं दे सकता, सम्भव भी नहीं हो सकता। सरकारी स्कूलोंके त्यागके कारणोंपर तो मैं विचार कर ही चुका हूँ। सरकारी पाठशालाओं और राष्ट्रीय पाठशालाओंमें जो फर्क रहना चाहिए, उसपर भी मैं नजर डाल चुका हूँ। इसी फर्कमें व्यवस्थापकोंकी, शिक्षकोंकी और विद्यार्थियोंकी कसौटी है। यह फर्क असहयोगकी बाहरी निशानी है। असहयोगमें इसके अलावा दूसरी बहुत-सी बातें भले ही हों, मगर जिसमें ये चिह्न नहीं, वह असहयोग असहयोग हो ही नहीं सकता।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, २१-१२-१९२४

३७३. भाषण : अपरिवर्तनवादियोंके समक्ष[1]

२१ दिसम्बर, १९२४

रविवारको फिर एक सम्मेलन हुआ। उसमें गांधीजी और अपरिवर्तनवादियोंके बीच आगे विचार-विमर्श हुआ। . . . कहा जाता है कि गांधीजीका भाषण अत्यन्त ही मर्मस्पर्शी था। ऐसा लगता था, मानो उन्होंने उसमें अपना समूचा हृदय उँड़ेल दिया हो। . . . उन्होंने कहा; मैं आज भी उतना ही कट्टर अपरिवर्तनवादी हूँ जितना कभी भी था और कौंसिलोंसे मुझे कोई सरोकार नहीं है। कौंसिल-प्रवेशके विकल्पके रूपमें मुझे चरखा, हिन्दू-मुस्लिम एकता और अस्पृश्यता-निवारणसे अधिक सशक्त अन्य कोई भी कार्यक्रम नहीं सूझ पड़ता। मैं ऐसी कई चीजें सोच सकता हूँ जो देशके लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं, लेकिन वे स्वराज्य-प्राप्तिके लिए अपरिहार्य नहीं हैं। मैंने इसीलिए कहा है कि चरखेका प्रचार एक ऐसा कार्यक्रम है, जिसपर

१. यह भाषण बेलगांवमें दिया गया था।

बड़े या छोटे, नगरोंके या गाँवोंके -- सभी लोग अकेले या सम्मिलित रूपसे अमल कर सकते हैं। इसलिए चरखा ही मेरे इस वर्षके कार्यक्रमका केन्द्र-बिन्दु है। एक वर्षके अन्दर विदेशी वस्त्रोंका पूर्ण बहिष्कार करनेके लिए चरखेका भारी प्रचार करना जरूरी है और कांग्रेसके लिए कताई सदस्यता स्वीकार करना नितान्त आवश्यक। यह भी जरूरी है कि कताई सदस्यता स्वीकार करनेवाले सभी लोग पूरी निष्ठासे वर्ष-भर चरखेके कार्यक्रमपर अमल करें और यदि कताई सदस्यताको स्वीकार करने-वाले और इसके पक्षमें मत डालनेवाले लोग इसपर वर्ष-भर अमल नहीं करेंगे तो मेरा दिल टूट जायेगा। अन्तमें मैं यही कहूँगा कि यदि चरखेके कार्यक्रमके पक्षमें मत देनेवाले सभी लोग पूरे तौरपर इस कार्यमें जुट जायेंगे तो मुझे पूरी आशा और पूरा विश्वास है कि राष्ट्रको इसे स्वीकार करनेमें ज्यादा दिन नहीं लगेंगे।

गांधीजीने यहाँ प्रसंगवश सरकारके विरुद्ध संघर्षकी अपनी उस योजनाका भी उल्लेख किया, जिसकी चर्चा उन्होंने पंजाबमें अपने एक भाषणमें पहले की थी। उन्होंने कहा कि उस योजनाको सांगोपांग ठीक-ठीक रूप दिया जा सके, इसकी एक पूर्व-शर्त है -- विदेशी वस्त्रोंका पूर्ण रूपसे या व्यापक पैमानेपर बहिष्कार। अपरिवर्तनवादियोंसे मेरा आग्रह है कि वे अगले वर्षके दौरान अपनी सारी शक्ति चरखेके प्रचारपर ही केन्द्रित करें। कताई सदस्यताके लिए मैं हर चीज दाँवपर लगा रहा हूँ और अगर मैं देखूँगा कि मेरे अनुयायी मेरा उचित रूपसे समर्थन नहीं कर रहे हैं तो मेरा दिल टूट जायेगा। मेरी नई योजना बारडोलीकी योजनासे भिन्न होगी, हालाँकि उसमें मेरा विश्वास अब भी उतना ही जीवन्त है। मैं अभी उस योजनाका पूरा ब्यौरा नहीं बता रहा हूँ; लेकिन यदि वर्षके अन्ततक आवश्यक बहिष्कार पूरा हो गया तो मेरा कार्यक्रम अमलमें लाया जा सकता है, फिर देशमें चाहे कुछ भी हो रहा हो। लेकिन योजनापर अमल करनकी सबसे बड़ी शर्त यही है कि पहले विदेशी वस्त्रोंका बहिष्कार पूरा हो। मुझे पूरा विश्वास है कि यदि आप आवश्यक प्रयत्न करे तो विदेशी वस्त्रोंका पूर्ण बहिष्कार हो सकता है और यदि वह पूरा कर दिया गया तो सविनय अवज्ञाके लिए उपयुक्त समय आ जायेगा।

गांधीजीने अन्तमें कहा कि यहाँ उपस्थित लोगोंमें से उनकी सूची तैयार कर ली जाये जो वर्षके अन्ततक अपेक्षित २४,००० गज सूत निश्चित रूपमें देना स्वीकार करें और जो आवश्यकता पड़नेपर देशकी खातिर जान देनेके लिए तैयार हों।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २२-१२-१९२४

३७४. भाषण : मानपत्रोंके उत्तरमें[1]

२१ दिसम्बर, १९२४

गाधीजीने दोनो मानपत्रोका उत्तर एक साथ देते हुए कहा; आप लोगोने मेरी तारीफमें जो-कुछ कहा है, मै उसके योग्य नहीं हूँ, क्योकि मैंने आपके शहर या जिलेके लिए ऐसा कुछ भी नहीं किया है। उन्होने ऐसे ही अवसरोपर हालमें बम्बई, कलकत्ता व अहमदाबादमें जो बातें कही थीं, उन्हे दुहराते हुए कहा कि मै आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप उन्हें पढ़ें और समझें। भारतकी मौजूदा राजनीतिक हालतमें देशकी नगरपालिकाओको भी राष्ट्रीय आन्दोलनमें शरीक होना चाहिए। किन्तु उन्हे स्वास्थ्य और सफाई आदिकी व्यवस्थाके अपने प्रारम्भिक कर्त्तव्योको भुलाकर ऐसा नहीं करना चाहिए। मै पश्चिमी सभ्यताका प्रशसक नहीं हूँ, परन्तु हमें सफाई-विज्ञान सम्बन्धी बातोमें अभी पश्चिमसे बहुत-कुछ सीखना है। भारत कृषि-प्रधान देश है और प्लेग व दूसरी महामारियोका हमारे शहरोमें, जो पश्चिमके शहरोके मुकाबलेमें बहुत छोटे है, फैलना नामुमकिन होना चाहिए। मुझे लोगोके मुँहसे यह सुनकर बहुत दुःख होता है कि ये महामारियाँ ईश्वरकी दी हुई है। मै स्वयं ईश्वरको मानता हूँ, परन्तु मै समझता हूँ कि मनुष्यके प्रयत्नोसे मानवीय दु.खोके कम किये जानेकी बहुत कुछ गुजाइश है। जब हम खुद ही ईश्वरके या कुदरतके कानूनोंको तोडते है तो ऐसी हालतमें इन महामारियोकी जिम्मेदारी ईश्वरपर डालना अनर्गल बात है। मुझे यह देखकर खुशी होती है कि यहाँ ब्राह्मणो तथा अब्राह्मणो व हिन्दुओं और मुसलमानोके पारस्परिक सम्बन्ध मित्रतापूर्ण है। मै आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप लोग इन सम्बन्धोको कायम रखें और अछूतोके साथ भी प्रेमका व्यवहार करे।

[अंग्रेजीसे]

न्यू इंडिया, २२-१२-१९२४

१. बेलगाँव नगरपालिका और जिला बोर्डने गाधीजीको ये मानपत्र दरगामें भेंट किये थे।

३७५. अहुरमज्द और अहरमन

[२२ दिसम्बर, १९२४][1]

कांग्रेसके आगामी अधिवेशनसे पहले मेरे मनमें कई विचार आ रहे हैं। इस समय मौन दिवसकी भोर है। कांग्रेसका अधिवेशन आजसे चार दिन बाद आरम्भ होगा। अहुरमज्द और अहरमन — खुदा और शैतान — के बीच जो सतत संग्राम चलता रहता है, वही मेरे हृदयमें उग्र रूपसे चल रहा है। मेरा हृदय भी, अन्य करोड़ों-अरबों इन्सानोंके हृदयोंकी भाँति इस शाश्वत संग्रामका एक क्षेत्र है। मैंने इन पिछले दो बेशकीमती दिनोंमें अपरिवर्तनवादियोंसे महत्त्वपूर्ण बातचीत की है। सरोजिनी देवी कहती हैं, 'अपरिवर्तनवादी' शब्द बुरा है। मैं उनके इस कथनसे सहमत हूँ और मैंने जनताको इससे अधिक प्यारा शब्द देनेका दायित्व कवयित्रीके कन्धोंपर ही डाल दिया है। मेरे हृदयकी एक आवाज कहती है: "यदि तुम और किसी भी बातकी परवाह न करो, बल्कि केवल जिसे तुम अपना कर्त्तव्य समझते हो उसीका पालन करो तो सब-कुछ ठीक ही होगा।" दूसरी आवाज कहती है: "तुम तो मूर्ख हो। तुम्हें स्वराज्यवादियोंका विश्वास न तो करना चाहिए और न ही अपरिवर्तनवादियोंका। स्वराज्यवादी जो-कुछ कहते हैं उसको अमलमें लाना नहीं चाहते और अपरिवर्तनवादी नाजुक वक्तपर तुम्हें संकटमें छोड़कर अलग हो जायेंगे। इन दोनोंके बीच तुम्हारा चरखा पिसकर चूर-चूर हो जायेगा। इसलिए तुम मेरी बात सुनो और सबसे अलग हो जाओ तो अच्छा रहेगा।" मैं पहली आवाजके अनुसार कार्य करूँगा। यदि स्वराज्यवादी मुझे धोखा दे जायें और अपरिवर्तनवादी मेरा साथ छोड़ ही दें तो भी क्या हुआ? इससे उन्हींकी हानि होगी, मेरी नहीं। किन्तु यदि मैं भी दुनियादारीकी बात सुनूँ, तब तो मैं सब-कुछ खो चुका, ऐसा ही मानना चाहिए। मैं भविष्यकी कल्पना करना नहीं चाहता। मुझे तो वर्तमानकी ही परवाह करनेसे मतलब है। अगले क्षण क्या होगा, यह ईश्वरने मेरे बसमें नहीं रखा है। इसलिए जैसे मैं यह चाहता हूँ कि स्वराज्यवादी मेरा विश्वास करें, वैसे ही मुझे भी स्वराज्यवादियोंका विश्वास करना चाहिए। मैं अपरिवर्तनवादियोंपर कमजोरीका दोष लगानेकी हिम्मत नहीं कर सकता, क्योंकि मैं नहीं चाहूँगा कि वे मुझे कमजोर समझें। इसलिए मुझे स्वराज्यवादियोंकी बातकी सचाईपर और अपरिवर्तनवादियोंकी शक्तिपर भरोसा रखना चाहिए। यह सच है कि मैंने अकसर धोखा खाया है। बहुत-से लोगोंने मुझे धोखा दिया है और बहुत-से लोगोंने कमजोरी दिखाई है। किन्तु उनसे मेरा साथ रहा है, इसका मुझे पछतावा नहीं है, क्योंकि जैसे मुझे सहयोग करना आता है, वैसे ही असहयोग करना भी आता है। दुनियामें काम करनेका सबसे अधिक व्यावहारिक और सम्मानपूर्ण तरीका यही है कि

1. मौन दिवस, अर्थात् सोमवार, २२ दिसम्बरके उल्लेखसे।

हम लोगोकी बातपर तबतक विश्वास करें जबतक हमें उनपर अविश्वास करनेका कोई निश्चित कारण न मिल जाये।

इसलिए मैं किसका विश्वास करूँ या किसका न करूँ, यह मेरी कठिनाई नही है। मेरी कठिनाई तो यह है कि मुश्किलसे कोई आधे दर्जन अपरिवर्तनवादी ही ऐसे है, जो समझौतेसे पूर्णतया या कुल मिलाकर सन्तुष्ट है। उनके सन्देह ईमानदाराना है, मुझे उनसे सहानुभूति है, किन्तु फिर भी मैं अनुभव करता हूँ कि समझौतेपर कायम रहकर मै ठीक ही कर रहा हूँ। यदि वे मुझे छोड सकते तो छोड देते, किन्तु वे मुझे छोड नही सकते। यह सम्बन्ध अटूट जान पडता है। अपना मत विरुद्ध होते हुए भी वे मेरे विवेकपर भरोसा करना चाहते है। इससे मुझे सचमुच बडा सकोच महसूस होता है। इससे मेरी जिम्मेदारी सौगुनी बढ जाती है। मै उन्हे भरोसा दिलाता हूँ कि मै जान-बूझकर तो ऐसा कुछ नही करूँगा जिससे उनके विश्वास-को आघात पहुँचे। मै ऐसा कोई काम न करूँगा जिससे देशके उद्देश्य और सम्मानको नुकसान पहुँचे। किन्तु मै उन्हे अधिकतम सान्त्वना यही दे सकता हूँ कि यदि वे अपने प्रति ईमानदार रहेंगे तो सब-कुछ ठीक ही होगा। प्रत्येक व्यक्ति, चाहे वह स्त्री हो या पुरुष यदि हिन्दू-मुस्लिम एकताकी शर्तपर अमल करेगा, यदि वह अपने बचे हुए समयका उपयोग रुई पीजने, सूत कातने और खादीकी कलामे निपुण होनेमें करेगा, यदि वह स्वय खादी पहनेगा और यदि वह हिन्दू है तो अपने अछूत भाइयोसे आत्मवत् प्रेम करेगा तो इतनेसे ही ऐसा माना जायेगा कि उसने अपने प्राथमिक कर्त्तव्यका पालन किया। इतना कार्य तो हममें से हरएक बिना किसीकी सहायताके कर सकता है। किसी बातको अपने आचरणमें उतारना ही उसके पक्षमे दिया गया सबसे अच्छा भाषण है और उसके लिए किया गया सबसे अच्छा प्रचार है। यह काम हर व्यक्ति कर सकता है तथा इसमे कोई विघ्न-बाधा भी नही डालेगा। दूसरोकी चिन्ता न करना अहुरमज्दका तरीका है। अहरमन हमें हमारे विश्वाससे डिगाकर अपने जालमें फँसाता है। ईश्वर काबा या काशीमे नही है। वह तो हम सबके भीतर है। इसलिए स्वराज्य भी हमे अपने भीतर खोजनेमे ही मिलेगा। यदि हम दूसरोसे या अपने साथी-कार्यकर्ताओसे भी यह आशा करे कि वे स्वराज्य लेकर हमे दे देंगे तो हमारी यह आशा व्यर्थ होगी।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २६-१२-१९२४

३७६. भाषण : बेलगाँव कांग्रेसकी विषय-समितिमें[1]

२३ दिसम्बर, १९२४

इसके बाद श्री गांधीने बैठकमें अपना भाषण दिया। उन्होंने अपनी स्थिति स्पष्ट करते हुए कहा, यद्यपि कुछ प्रश्नोंपर सभामें मत-विभाजन कराना बिलकुल ही जरूरी हो सकता है, लेकिन जिस प्रश्नपर स्वराज्यवादियों और गैर-स्वराज्यवादियोंके बीच सैद्धान्तिक और बुनियादी मतभेद हो, उसके सम्बन्धमें मैं मत-विभाजनकी स्थिति नहीं पैदा होने देना चाहता। उन्होंने कलकत्तेमें अपने और स्वराज्यवादी नेता सर्वश्री दास व [मोतीलाल] नेहरूके बीच हुए समझौतेका उल्लेख करते हुए कहा कि पिछली अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीने उसे मंजूर कर लिया था और आप लोग भी इसी समय इसकी ताईद करनेकी कृपा करें। अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी पिछली बैठकके बादसे अभीतक क्या होता रहा है, इसे मैं गौरसे देखता आ रहा हूँ। इस समझौतेके सम्बन्धमें देशवासियोंके जो विचार हैं, उनसे मुझे श्री विट्ठलभाई पटेल अवगत कराते रहे हैं। समझौतेका सबसे महत्त्वपूर्ण भाग वह है, जिसका सम्बन्ध नई सदस्यताकी शर्तसे है। कल रातको और आज भी श्री पटेलने मुझसे कहा कि मैं कताई-सदस्यताकी माँग करके एक घातक कदम उठा रहा हूँ और कांग्रेसके नब्बे फीसदी सदस्य सदस्यताके प्रस्तावित परिवर्तनके खिलाफ हैं। श्री पटेलने मुझसे यह भी कहा कि जहाँतक उनको मालूम है, स्वराज्यवादियोंमें शायद ही कोई ऐसा हो जो सदस्यताकी शर्तमें परिवर्तन चाहता हो और अपरिवर्तनवादियोंमें भी बहुत-से लोग इसके खिलाफ हैं। मैं इसे माननेके लिए तैयार नहीं हूँ, हालाँकि मैंने वह प्रस्ताव देखा है जो बिहार प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी, सिन्ध कांग्रेस कमेटी, मध्य प्रान्तीय कमेटी तथा महाराष्ट्र कांग्रेस कमेटीने तथा बिहारके एक सम्मेलनने भी पास किया है। यदि आप लोग समझौतेको अस्वीकार करना जरूरी समझें तो आप मेरा कोई भी लिहाज न करते हुए खुशीसे ऐसा करें।

मैं आप लोगोंको सचेत किये देता हूँ कि आप सिर्फ मुझे खुश करनेके लिए ही इस परिवर्तनको स्वीकार न करें। आपको अपने अन्तःकरणके अनुकूल मत देना चाहिए, क्योंकि अन्तःकरणकी आवाज किसी भी एक मनुष्यके मतसे अधिक मूल्यवान् है, फिर चाहे उस मनुष्यने देशकी कितनी ही सेवा क्यों न की हो और वह आपकी नजरोंमें भी चाहे कितना ही ऊँचा क्यों न हो।

श्री दासने मुझे लिखा है कि समझौतेकी इस बातके सम्बन्धमें अब मैं स्वराज्यवादियोंकी ओरसे निश्चिन्त रहूँ और इस विषयमें श्री विट्ठलभाई पटेलका विचार उनका निजी विचार ही है। श्री दासने यह भी लिखा है कि स्वराज्यवादी दल

१. गांधीजी इसके अध्यक्ष थे।

बहुमतसे जो फैसला करे उसका पालन करना प्रत्येक स्वराज्यवादी सदस्यके लिए जरूरी है और उसपर अवश्य ही ईमानदारीके साथ अमल किया जायेगा।

इसमें सन्देह नहीं कि इसे पढ़कर मुझे बड़ी राहत मिली; किन्तु मैं चाहता हूँ कि दास महोदय प्रत्येक स्वराज्यवादीको इस बन्धनसे मुक्त कर दें, क्योंकि अगर किसीको यह समझौता ठीक न जँचे तो उसे चाहिए कि वह तुरन्त उसे अस्वीकार कर दे। इस समझौतेको सिर्फ कागजपर लिख रखनेके लिए ही स्वीकार नहीं करना चाहिए। इसके लिए निरन्तर धैर्यपूर्वक प्रयत्न करनेकी तथा कठिन अनुशासनमें रहनेकी जरूरत है। इसके अन्तर्गत प्रत्येक सदस्यको अपने हाथका कता दो हजार गज सूत प्रतिमास नियमित रूपसे भेजना होगा। इसकी पूर्ति दूसरेके काते सूतसे तभी की जा सकती है जब सदस्य स्वयं सूत कातनेमें असमर्थ हो या वास्तवमें वह सूत कातना न चाहता हो; परन्तु वैसी हालतमें भी ऐसी आशा की जाती है कि वह स्वयं सूत कातनेके कामकी निगरानी करेगा। समझौतेको मंजूर करनेके पहले सभाको उसके फलितार्थोंको अच्छी तरह समझ लेना चाहिए।

इस समझौतेके सम्बन्धमें अपरिवर्तनवादियोंके साथ मैंने जो बातचीत की थी, उसमें शुरूमें यह एतराज उठाया गया था कि क्या स्वराज्यवादी दलकी सदस्यता कांग्रेसकी सदस्यतासे अलग हो सकती है; किन्तु श्रीनिवास अय्यंगारने मुझे बताया था कि स्वराज्यवादी अपने संविधानको बदलकर उसे कांग्रेस संविधानके अनुकूल बनानेका विचार कर रहे हैं। अपरिवर्तनवादियोंने यह मानकर कि स्वराज्यवादी दलकी सदस्यता-शर्त और ध्येय वही होंगे जो कांग्रेसके हैं, समझौतेको भारी बहुमतसे स्वीकृत कर लिया।

[अंग्रेजीसे]
न्यू इंडिया, २४-१२-१९२४

३७७. वक्तव्य : बेलगाँवमें कांग्रेसकी फिजूलखर्चीपर

२५ दिसम्बर, १९२४

इसके बाद गांधीजीने इस आशयका एक वक्तव्य दिया कि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके खर्चमें फिजूलखर्ची बहुत ज्यादा हुई है। सजावट वगैरह और ठहरनेके प्रबन्धपर बहुत ज्यादा रुपया खर्च किया जाता है। उन्होंने कहा कि प्रतिनिधियोंसे इस समय लिया जानेवाला १० रुपयेका शुल्क बहुत अधिक है। उन्होंने इस बातकी भी शिकायत की कि खुद मेरी कुटियापर बहुत पैसा खर्च किया गया है और उसे वैसा नहीं बनाना चाहिए था। उन्होंने कहा, छपाईपर भी बहुत पैसा खर्च होता है और मैं चाहता हूँ कि यह सब फिजूलखर्ची रोक दी जाये। अगर मैं कमेटीका सदस्य होता तो मैं आवास-व्यवस्था आदिपर होनेवाले खर्चमें कटौती कर देता। उन्होंने सुझाव दिया कि प्रतिनिधियोंका शुल्क, जो अभी १० रुपये है, वह घटाकर १ रुपया

कर दिया जाये, क्योंकि मुझे इस आशयकी शिकायतें मिली हैं कि प्रतिनिधियोंको यात्रा-भाड़ा आदिपर करीब १०० रुपये खर्च करने पड़ते हैं। विषय-समितिने शुल्क घटाकर १ रुपया स्वीकार कर लिया।

इसके बाद निश्चय किया गया कि जन-संख्याके आधारपर जो प्रान्त खद्दर और विदेशी वस्त्रोंके बहिष्कारके मामलेमें सर्वोत्तम परिणाम दिखायेगा, उसी प्रान्तमें कांग्रेसका अगला अधिवेशन किया जाये।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २६-१२-१९२४

३७८. भाषण : बेलगाँव कांग्रेसकी विषय-समितिमें[1]

२५ दिसम्बर, १९२४

पिछले बृहस्पतिवारको अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी विषय-समितिमें महात्मा गांधीने एक मर्मस्पर्शी भाषण दिया। उसका पूरा पाठ नीचे दिया जा रहा है:

कल शाम ठीक तीन बजे अधिवेशनका आरम्भ होगा। कुछ मिनट तो राष्ट्रगान आदिमें जायेंगे। स्वागत समितिके अध्यक्ष अपना भाषण देनेमें १५ मिनटसे अधिक समय नहीं लेंगे। मेरा इरादा अपना भाषण पढ़नेका नहीं है। वह आज शामको आप लोगोंमें वितरित कर दिया जायेगा। आप कृपया उस भाषणको ध्यानपूर्वक पढ़ लें, क्योंकि ऐसा मान लिया जायेगा कि भाषण पढ़ दिया गया है। मैं केवल प्रस्तावनाके रूपमें कुछ सीधी-सादी बातें कहूँगा। उसमें ३० मिनटसे अधिक समय नहीं लगेगा। मैं प्रारम्भमें हिन्दुस्तानीमें और फिर अंग्रेजीमें बोलूँगा। इसमें कुल मिलाकर ३० मिनटसे अधिक नहीं लगेंगे।

कल औपचारिक रूपसे भाषणोंके पढ़े जानेके बाद जो सबसे पहला प्रस्ताव पेश किया जायेगा, वह कलकत्तेके समझौतेके सम्बन्धमें होगा। मौलाना हसरत मोहानी उस प्रस्तावका विरोध करेंगे। इस सम्बन्धमें मैं अपने कुछ विचार प्रकट करना चाहता हूँ। आप लोग प्रतिनिधि हैं और यहाँ सभी प्रतिनिधि मौजूद हैं। इसलिए मैं आपको सादर चेतावनी देता हूँ कि यदि आप सारा बोझ मेरे ही कन्धोंपर रख देना चाहते हैं तो आप इस प्रस्तावको मंजूर न करें। मुझे कहना चाहिए कि इस बोझको उठानेकी सामर्थ्य मेरे कन्धोंमें नहीं है। मैं इस बोझको केवल आपकी सहायताके बलपर ही उठाना चाहता हूँ। जबतक आपमें से प्रत्येक पूरी तरह मन, वचन और कर्मसे सहायता देनेके लिए तैयार नहीं होगा, तबतक हमारा उद्देश्य सिद्ध नहीं हो सकेगा। हमारा उद्देश्य विदेशी कपड़ेका बहिष्कार करना है और ऐसा इस देशके

१. महादेव देसाई द्वारा दी गई इस भाषणकी रिपोर्ट "इम्प्लीकेशन्स ऑफ नॉन वायलेंस" शीर्षकसे १-१-१९२५ के *यंग इंडिया*में छपी थी।

गरीबसे-गरीब मनुष्यकी — हर पुरुष, स्त्री और बच्चेकी — सहायतासे ही हो सकता है। मेरा विनम्र मत है कि राष्ट्रकी ओरसे ऐसा प्रयास एक ईमानदाराना और सर्वथा उचित प्रयास होगा। यदि हम उस बहिष्कारको पूरा कर सकें — और आजकी परिस्थितिमें हम केवल यही कर सकते हैं — तो इस तरह, और केवल इसी तरह, हम अपने-आपको और सारे संसारको दिखा सकते हैं कि हम इसके साथ ही हजारों और बड़े-बड़े काम भी कर सकते हैं, लेकिन तभी, जब हम पहले इस बहिष्कारको सम्पन्न कर दिखायें।

आपको याद होगा कि आज एक ऐसा संशोधन सामने आया था जिससे मुझे चोट पहुँची है। वह श्री भोपटकरने यह कहते हुए पेश किया था कि जब वयस्क ही कताईको नहीं अपनाते और सभी अवसरोंपर खद्दर पहननेको तैयार नहीं होते तो हमारे लिए बच्चोंसे वैसा करनेकी आशा करना अनुचित है। इससे सचमुच, मुझे चोट पहुँची है। इसका सीधा-सा कारण यह है कि उन्होंने सदस्यताकी शर्तका एक ऐसा अर्थ निकाला है, जो निकल ही नहीं सकता। मेरा कहना यह है कि सदस्यताके लिए हमने यह जो शर्त लगाई है वह तो न्यूनतम शर्त है। और उसे न्यूनतम ही होना चाहिए, क्योंकि इस शर्तका पालन न करना इस अर्थमें दण्डनीय भी है कि उसका पालन न करनेपर आप लोगोंको सदस्यताके अधिकारसे वंचित कर देंगे। मत देनेका अधिकार एक पवित्र चीज है। इसलिए एक न्यूनतम शर्त रखनी ही थी। वह न्यूनतम शर्त यह है कि हमें सभी राजनीतिक और सांस्कृतिक समारोहोंके अवसरोंपर खद्दर पहनना होगा। किन्तु निश्चय ही इसका अर्थ यह नहीं कि आप बेलगाँवमें कांग्रेसके समाप्त होते ही खद्दरको उतार फेंकें। यदि इसका अर्थ ऐसा हो तो आप विदेशी कपड़ेका कारगर ढंगसे बहिष्कार नहीं कर सकते। मैं चाहता हूँ कि आप समझौतेको पढ़ें और उसके भावको समझें। यह न्यूनतम अपेक्षा तो कांग्रेसके सदस्योंसे रखी गई है। फिर हम राष्ट्रसे कितनी ज्यादा अपेक्षा रख सकते हैं? न केवल हम वयस्कोंको बल्कि बच्चोंको भी सभी अवसरोंपर खद्दर पहनना चाहिए। मेरे कहनेका अर्थ यह है कि खद्दर हमारा प्रतिदिनका पहनावा होना चाहिए। जबतक ऐसा नहीं होता, तबतक बहिष्कार नहीं किया जा सकता।

मुझसे कहा गया है कि अनिच्छुक लोगोंको स्वयं कातनेकी शर्तसे मुक्त रखनेका उपबन्ध कताईसे बचनेका एक रास्ता है। किन्तु समझौतेका यह अर्थ नहीं लगता। यदि उसका वही अर्थ है जो आपने बताया है तो इस प्रस्तावको कल ही मैं फाड़कर फेंक देना चाहूँगा, यद्यपि तब यह देखकर मुझे बहुत दुःख होगा कि विदेशी कपड़ेका बहिष्कार एक असम्भव कार्य है। अनिच्छासे सम्बन्धित धारा केवल उन लोगोंके लिए है जो शारीरिक दृष्टिसे असमर्थ हैं या जिनकी सूत कातनेकी सचमुच ही इच्छा नहीं है। बच्चे निश्चित रूपसे उस धाराके अन्तर्गत नहीं आते। आप समझौतेका पालन करनेके लिए अवश्य ही तैयार रहें, जिससे विदेशी कपड़ोंका बहिष्कार सम्भव हो जाये। यदि हम केवल ईमानदारीसे इसपर अमल करें तो एक वर्षके अन्दर ही हमें भारी सफलता देखनेको मिलेगी। यदि प्रतिनिधिगण गाँवोंमें घूम-घूमकर चरखेका

सन्देश जनतातक पहुँचानेका काम शुरू कर दे तो यह काम इतना बडा है कि हममें से तमाम उत्कृष्ट कार्यकर्त्ताओंकी शक्तिका उपयोग इसमे हो सकता है। यदि आपको प्रस्तावपर विश्वास नही है तो उसे पास करना व्यर्थ है। इसलिए आप लोग कल जब अधिवेशनमे इकट्ठे हो तब मै चाहता हूँ कि आप सोच-विचारकर और परिणामको भली-भाँति ध्यानमे रखकर ही अपना मत दे। यदि आप हृदयसे इस कार्यक्रमपर नही चलना चाहते तो यह सफल नही होगा। जब प्रतिनिधि अपने-अपने प्रान्तोमें वापस जाये, तब उन्हे अपने-अपने प्रान्तके ग्रामीणोसे सम्पर्क स्थापित करना चाहिए और उनको बताना चाहिए कि उनका क्या कर्त्तव्य है। तो प्रतिनिधि कल सोच-समझकर, विचारपूर्वक और परिणामोकी ओर देखकर अपना मत दे।

मै आपको यहाँसे जानेसे पहले सावधान करना और इस बातकी याद दिलाना चाहता हूँ कि आपको एक पवित्र दायित्व सौपा गया है। मेरा इरादा २७ तारीखको कार्य समाप्त कर देनेका है। भाषण आदिके अलावा जो काम है — जैसे अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीके कामकी विधि और तफसीले तय करना, कार्य समितिकी नियुक्ति करना आदि — उन्हे निबटानेके लिए तो पूरा एक दिन चाहिए ही।

यहाँ श्री न० चि० केलकरने महात्मा गांधीको सम्बोधित करते हुए कहा:

मैंने आपकी अपील सुन ली है। अबतक यह अपील केवल स्वराज्यवादियोंसे की गई है। किन्तु मै चाहता हूँ कि आप समझौतेके दूसरे भाग अर्थात् कौंसिलोंमें कौंसिलवालोंके कार्यको कांग्रेसकी ओरसे मान्यता देने तथा उन्हे हर सम्भव तरीकेसे सहायता देनेके सम्बन्धमें अपरिवर्तनवादियोंसे भी अपील करें। मै आपको उनसे अपील करते सुनना चाहता हूँ।

मै श्री केलकरसे पूरी तरह सहमत हूँ। वास्तवमे, मै 'यग इडिया' के पृष्ठोमें अपने विचार पहले ही व्यक्त कर चुका हूँ। सबको कलके पवित्र कार्यके लिए तैयार होनेसे पहले मै प्रत्येक अपरिवर्तनवादीको उसके कर्त्तव्यकी याद दिला देना चाहता हूँ। मेरी अपील केवल स्वराज्यवादियोसे ही नही थी। मुझे हमेशासे यही बताया गया है कि अपरिवर्तनवादियोमे ऐसे भी लोग है जो कताई-सदस्यतामे विश्वास नही करते। इसलिए अपरिवर्तनवादियोसे मेरी अपील है कि वे समझौतेको उसी भावनासे ग्रहण करे जिस भावनासे मैने उसे सम्पन्न किया है और यही भावना उनके मनमे भी होना उचित है। मै स्वराज्यवादियोको अपनी पूरी शक्तिसे मदद देना चाहता हूँ और जिस हदतक एक मनुष्यके लिए सम्भव है, उस हदतक उनके उद्देश्यकी सिद्धिमे सहायक बनना चाहता हूँ, मै उनके उद्देश्यको हानि तो किसी तरह नही पहुँचाऊँगा। मै जान-बूझकर "उनका उद्देश्य" शब्दोका प्रयोग कर रहा हूँ; क्योकि कुछ ऐसा कारण है जिससे उनके तरीकोके सम्बन्धमे मै उनसे एकमत नही हूँ। यह सच है कि उनका उद्देश्य केवल उन्हीका या काग्रेसका ही नही, बल्कि सारे राष्ट्रका है। इसका निर्णय करनेका अधिकार मुझे नही है। अगर वे कहते है कि यह चरखा क्या चीज है तो उन्हे ऐसा कहनेका अधिकार है। इसी प्रकार कौसिलोके बारेमे, जिसे वे नौकरशाहीके खिलाफ हमारी लडाईका एक महत्त्वपूर्ण साधन मानते

है, मुझे यह कहनेका हक है कि यह कौंसिल वगैरह क्या चीज है। यद्यपि स्वराज्यवादियोंके तरीकोंके सम्बन्धमें मैं उनसे एकमत नहीं हूँ तथापि मैं, उनके तरीकोंपर शक करनेके बावजूद, उनकी सहायता कर सकता हूँ और कांग्रेसमें उनकी नीतिको निश्चित मान्यता दे सकता हूँ।

एक सदस्य : कांग्रेसके नामपर?

हाँ, कांग्रेसके नामपर। मैंने अपने चारों ओर नजर दौड़ाई कि मैं किस प्रकार उनकी सहायता कर सकता हूँ। मुझे यह समझौता ही उसका रास्ता सूझ पड़ा। मैंने देखा कि मैं ऐसा करके उनपर कोई कृपा नहीं कर रहा हूँ। यह उनका अधिकार है। किन्तु यह समझनेमें मुझे कुछ समय लगा कि यह उनका अधिकार है और जब मैंने यह समझ लिया कि यह उनका अधिकार है, तब मुझे उनके कार्यक्रममें रोड़ा अटकानेकी बात मनमें भी नहीं लानी चाहिए। इसके विपरीत, मुझे अपने मनमें यह विश्वास उत्पन्न करनेका प्रयत्न करना चाहिए कि वे जो-कुछ कर रहे हैं, वह सही है। मैं आप लोगोंसे भी ऐसा ही करनेके लिए कहूँगा।

इसलिए मैं अब विशेष प्रयत्न करके प्रत्येक स्वराज्यवादीसे सम्पर्क स्थापित कर रहा हूँ। मैंने उनके तर्कों और सुझावोंके लिए अपना दिमाग पूरी तरह खुला रखनेका प्रयत्न किया। मैं स्वराज्यवादियोंकी सहायता इसी तरीकेसे कर सकता हूँ। यदि इसका अर्थ यह लिया जाये कि मैं सभा-मंचोंपर जाकर, सरकारके कानूनोंके खिलाफ भाषण देकर या सभाएँ आदि करके, उनकी सहायता करूँगा तो मैं खेदके साथ कहूँगा कि मैं वैसा नहीं कर सकूँगा, क्योंकि मैं हृदयसे उससे सहमत नहीं हूँ। मैंने इस रूपमें न तो समझौतेको समझा है और न उसे इस दृष्टिसे सम्पन्न ही किया है। ये मेरी अपनी मर्यादाएँ हैं। यह बात नहीं कि मैं ऐसा करनेके लिए अनिच्छुक हूँ, किन्तु मैं चाहता हूँ कि मेरा उसपर विश्वास जम जाये। यदि उसपर मेरा विश्वास जम गया तो फिर संसारमें कोई भी शक्ति नहीं जो मुझे तुरन्त अपने आपको पूर्णतया स्वराज्यवादी घोषित करनेसे रोक सके। तब उन्हें यह अधिकार होगा कि वे मुझसे चौबीसों घंटे, नींदके घंटे छोड़कर, शेष सारा समय अपने लिए देनेकी आशा करें। आज मैं आपको पूरे हृदयसे वैसी सहायता नहीं दे सकता, किन्तु अपनी सीमाके भीतर मैं आपको अवश्यमेव प्रोत्साहन तथा हार्दिक सहायता दूँगा। उदाहरणके लिए, जब सरकार आपको और आपकी प्रतिष्ठाको हानि पहुँचाना चाहेगी, तब आप देखेंगे कि मैं आपके साथ हूँ और आपकी सहायता करनेके लिए उत्सुक हूँ। मैं आपके साथ ही कष्ट भोगना चाहता हूँ, और यदि आप मेरी सहायता लेना अस्वीकार करेंगे तो भी मैं आपसे कहूँगा — "ईश्वरके लिए आप मुझे सहायता करने दें।" किन्तु जब मुझसे निजी तौरपर यह कहनेका अनुरोध किया जायेगा कि यह नीति अच्छी है, तब मुझे स्पष्ट रूपसे यह स्वीकार करना होगा कि मैं इसका ऐसा अर्थ नहीं लगाता। किन्तु मैं चाहता हूँ कि यदि लोग आपसे निजी तौर पर पूछें तो आप उन्हें कहें कि यद्यपि हमारा विश्वास चरखेमें नहीं है, फिर भी आप लोग चरखा अवश्य चलायें। आप तो कह रहे हैं कि चरखेमें आपका अविश्वास

नही है। अगर आप उसमे अविश्वास करते हो तो फिर आपको समझौता अस्वीकार कर देना चाहिए। अगर आप ऐसा नही करेंगे तो आप अपने दायित्वके प्रति झूठे साबित होगे।

श्री केलकर: लेकिन अगर मनमें अश्रद्धा हो तब तो काम इसी निषेधक मानसिक स्थितिके अनुपातमें होगा। आपको उन स्वराज्यवादियोंके लिए कुछ गुंजाइश तो रखनी ही पड़ेगी, जिन्होंने मनमें कुछ अश्रद्धा छिपा रखी हो — और यह तो सच ही है कि कुछके मनमें ऐसी अश्रद्धा है।

यदि वह अश्रद्धा इस विश्वासकी हदतक पहुँचती हो कि चरखेसे कोई लाभ नही होगा तो आप इस समझौतेको अस्वीकार कर दे।

मैं चरखेके सम्बन्धमे स्वराज्यवादियोसे जिस सहयोगकी आशा रखता हूँ वह वैसा और उतना नही है जितनेकी आशा वे कौंसिलोंके कार्यके सम्बन्धमे मुझसे रख सकते है और यह बात समझौतेमे स्पष्ट रूपसे बता दी गई है। मै आपसे असम्भवकी उम्मीद नही रखता। मै तो आपसे इतनी ही आशा रखता हूँ कि आप अपनी क्षमता और विश्वासके अनुसार जितनी सहायता कर सकते है, करे; किन्तु उसे बिलकुल ईमानदारीके साथ करे। इससे ज्यादा मैं कुछ नही चाहता। मैं चाहता हूँ कि सभी सदस्य समझौतेको इसी भावनासे देखे। यदि वे उसे इस भावनासे नही देखते तो मै यह भविष्यवाणी करता हूँ कि हमारा आन्दोलन असफल रहेगा। किन्तु मैं तो तब भी असफल नही रहूँगा। हाँ, यह सही है कि तब मै विलक्षण और अहमन्य समझा जाऊँगा। कुछ यूरोपीय कहते भी हैं कि मै अहमन्य हूँ; और कुछ भारतीय भी कहते हैं कि मेरा दावा है कि मैं अकेला ही मानव-प्रकृतिको समझता हूँ और कोई दूसरा नही समझता। मेरा विश्वास है कि मै सही हूँ। दूसरे लोगोंकी बात भी उतनी ही सही हो सकती है, किन्तु यदि मुझे अपनी बात और अपने तरीकेके सही होनेपर पूर्ण विश्वास नही हो तो मैं इस नेतृत्वके उपयुक्त नही रहूँगा। मैं उस बुरी मनोवृत्तिको, मनमे कुछ और रखनेकी और मुँहसे कुछ और कहनेकी उस प्रवृत्तिको दूर करना चाहता हूँ, जिसकी ओर श्री केलकरने सकेत किया है। आपको ऐसा नही करना चाहिए कि मनमे कुछ और रखे और मुँहसे कुछ और कहे। कोई भी ऐसा न सोचे कि स्वराज्यवादी भारतके दुश्मन हैं। न मै यह विश्वास करता हूँ कि बेचारे अराजकतावादी भारतके दुश्मन हैं। वे अपनी समझके अनुसार काम करते हैं। मैं किसीके बारेमे कोई फतवा कैसे दे सकता हूँ? मैं केवल उनके कामके बारेमे अपनी राय ही दे सकता हूँ। लेकिन यहाँ दोनोकी स्थितियोमे कोई समता नही है।

मैं अपरिवर्तनवादियोसे कहता हूँ कि यदि आप चरखेपर विश्वास नही करते तो अन्तमे जाकर आप देखेंगे कि हिंसात्मक तरीकोंके अलावा आपके पास और कोई तरीका नही रह जाता। यदि आपको लगता है कि चरखा आपकी देशभक्त आत्माको सन्तुष्ट नही कर पाता तो आप कौंसिलोमे अवश्य जाये। वहाँ आप हल-चल करके कुछ कैदियोंको तो मुक्त करा सकेंगे। यदि आज स्वराज्यवादी अपने सबसे प्रिय सिद्धान्तोकी बलि देनेको तैयार हों और कहे कि वे अण्डमानके कैदियोकी रिहाई

चाहते हैं तो उनको रिहा करा सकते हैं। किन्तु उन्होंने अपने कन्धोंपर जो दायित्व लिया है वे उसके प्रति सच्चे हैं, और आशा है कि वे देशके लिए इस प्रकारकी हानिकर सौदेबाजी नहीं करेंगे। वे अण्डमानके कैदियोंकी रिहाईके लिए या यरवदा जेलमें पड़े किसी बेचारे बीमार कैदीको मुक्त करानेके लिए कौंसिलोंमें नहीं गये हैं। मैंने कई बार कहा है और मैं इसे फिर दुहराता हूँ कि यदि आप चरखेमें विश्वास नहीं करते तो आपके पास केवल एक ही विकल्प रह जाता है — वह यह कि आप कौंसिलोंमें जायें। कुछ करनेके खयालसे बहुत-से लोगोंके कौंसिलोंमें जानेका रहस्य यही है। आखिर जो कौंसिलोंमें गये हैं वे देशकी सर्वोत्कृष्ट प्रतिभाका प्रतिनिधित्व करते हैं। वे अनुभवी सैनिक हैं। उदाहरणके लिए, आप अपनी सारी जिन्दगी कुर्बान कर देनेवाले पण्डित मदन मोहन मालवीय — जैसे व्यक्ति कहाँसे पायेंगे? मैंने उन्हें जब १९०१ में सर दिनशा वाछाकी अध्यक्षतामें हुए कांग्रेस अधिवेशनमें भाषण करते देखा था, तभीसे मैं उन्हें जानता हूँ। उन्होंने बहुत काफी काम किया है और वे अभी भी कौंसिलके सदस्य बने हुए हैं। उनका अब भी कौंसिलोंमें विश्वास है। वे मूढ़ तो नहीं हैं। मैं जब भी उनसे मिलता हूँ, मेरा माथा उनके सामने झुक जाता है। ये चित्तरंजन दास कौन हैं? और पण्डित मोतीलाल नेहरू कौन हैं? वे आज इस प्रकारके लिबास क्यों पहनते हैं? पण्डित मोतीलाल नेहरू किसी समय राजा-महाराजाओंकी तरह रहते थे। वे एक बार मोटरसे लाहौर आये थे और उनके साथ नौकरोंकी एक पूरी पलटन थी। बहुत ही कम राजा उतने ठाठ-बाटसे रहते थे। उनके सुन्दर बागीचेमें, जहाँ कभी गुलाब तथा अन्य पुष्प भरे रहते थे, आज घास-पात खड़ा है। क्या वे देशद्रोही हैं? मेरा माथा इन लोगोंके सामने बराबर झुक जाता है। मैं जब भी इन लोगोंको देखता हूँ तो मुझे ऐसा लगता है कि मुझमें कोई कमी है, जिसके कारण मैं उनसे सहमत नहीं हो पाता और उनके दृष्टिकोणको समझ नहीं पाता। फिर श्री केलकर कौन हैं? वे उनकी[1] परम्पराके प्रतिनिधि हैं जो भारतकी महानतम विभूतियोंमें से एक थे। जिनका नाम पीढ़ियोंतक अमर रहेगा और हमारे देशमें, जो एक परमेश्वरकी पूजा तो करता ही है किन्तु साथ ही अनेक देवताओंको भी पूजता है, जो एक देवताकी भाँति पूजे जायेंगे। इसलिए मेरी आपसे अपील है कि आप अपने हृदयोंको शुद्ध करें, उदार बनें और अपने हृदयोंको सागरकी तरह विशाल बनायें। 'कुरान शरीफ' और 'गीता' का यही उपदेश है। दूसरे लोग आपके बारेमें फतवे न दें, इसलिए आप दूसरोंके बारेमें फतवे मत दीजिए। भगवानका खयाल कीजिए। वह तो सबसे बड़ा न्यायाधीश है और चाहे तो हमारे दोषोंके लिए हमें मृत्यु दण्ड भी दे सकता है, लेकिन वह कितना दयावान है कि हमें जीने दे रहा है। आप अन्दर और बाहरसे अनेक शत्रुओंसे घिरे हुए हैं, किन्तु वह आपकी रक्षा करता है और आपपर अपनी कृपापूर्ण दृष्टि बनाये रखता है।

क्या आप ऐसा नहीं कर सकते? हम ऐसा क्यों कहें कि उनकी राजनीति भ्रष्ट है और वे वंचक लोग हैं या वे बेईमान हैं या यह कि उनमें राजनीतिक

१. लोकमान्य तिलककी।

दूरदर्शिता नही है? ईश्वर हमें मानव-स्वभावकी ऐसी निन्दा करनेसे बचाये। जबतक ससार होगा, तबतक अनेक मतभेद भी रहेगे; और अपरिवर्तनवादियोकी सबसे बडी सफलता तो यह होगी कि वे अपने तथाकथित विरोधियोको अपने सबसे सच्चे मित्र बना ले और उनको चरखेके धर्ममे दीक्षित कर ले। विश्वास रखिए, यदि अपरिवर्तन-वादियोमे व्यवहार-बुद्धि होगी, यदि वे चरखेके प्रति अपना कर्त्तव्य पूरा करेगे, और उसके लिए मर मिटनेको तैयार रहेगे तो वे स्वराज्यवादियोको अवश्य ही इस धर्ममे दीक्षित कर लेगे। यदि लोग चरखेको नही अपनाते तो इसका कारण यह है कि वे उसकी उपयोगिता नही समझते। यह आपका काम है कि आप उन्हे उसकी उपयोगिता समझाये। मै चरखेका गुण-गान अपने इस अगाध विश्वासके कारण ही करता हूँ कि इसीसे देशको मुक्ति मिलेगी। हिन्दू-धर्मका उपदेश आस्था रखनेके अतिरिक्त अन्य कुछ है ही नही। यदि आप यह मानते हुए भी कि चरखा दूसरोके लिए लाभप्रद नही है, उसमे विश्वास करते है तो हमारे लिए तो वही सब-कुछ है। काशी विश्वनाथके मन्दिरमे जो पत्थरकी मूर्ति है, वह मौलाना हसरत मोहानीके लिए भलेही सिर्फ पत्थर हो सकती है,

मौलाना: मै ऐसा कभी महसूस नहीं करता।

लेकिन मै तो जब वहाँ जाता हूँ, मेरा हृदय अवश्य ही द्रवित हो जाता है। आस्थाका ही खास महत्त्व होता है। मै जब किसी गायको देखता हूँ, तब वह मुझे भक्ष्य पशु नही लगती, बल्कि मेरे तई करुणाकी एक कविता होती है। मै उसकी पूजा करता हूँ और सारी दुनियाके खिलाफ होनेपर भी उसकी पूजाकी हिमायत करूँगा। ईश्वर एक ही है, किन्तु वह मुझे पत्थरमे, अग्रेजोमें और यहाँतक कि देशद्रोही तकमें अपना दर्शन देता है। मै तो देशद्रोहीसे भी घृणा नही करूँगा। मेरा धर्म मुझे इस हदतक ले जाता है। मै प्रत्येक अपरिवर्तनवादीसे कहता हूँ कि यदि आप अपने धर्मके योग्य है और अहिंसक है तो आप स्वराज्यवादियोसे हाथ मिलायेगे और कहे कि "हमने जो-कुछ किया है, उसके लिए आप हमे क्षमा करे।" आपको कोई अधिकार नही कि आप किसीके प्रति दुर्भावना रखे और किसीके विरुद्ध कुछ भी कहे। आप केवल इस उत्तम मन्त्रपर आचरण करे। इससे बढिया मन्त्र मै आपको नही दे सकता। ईश्वर आपकी सहायता करे और आपको इस मन्त्रपर आचरण करनेकी शक्ति दे तो वर्षके अन्तमे सब अच्छा ही देखनेको मिलेगा।

[अग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ३०-१२-१९२४

३७९. तार : अनन्तरामको

[२६ दिसम्बर, १९२४ से पूर्व][1]

दीवान अनन्तराम
शरणार्थी शिविर
रावलपिंडी

कृपया शरणार्थी परिवारोकी सूची और उनकी आवश्यकताएँ लिखे। आशा है कोई वेलगाँव आयेगा।

गाधी

हस्तलिखित अग्रेजी मसविदे (एस० एन० १०५१७) से।

३८०. टिप्पणियाँ

नपी-तुली बात

'यग इडिया' में कहा गया था कि खद्दरके टिकाऊ न होनेके बारेमें लोग एकमत नही है। बीजापुरके श्री एस० जी० पुजारीने इस सिलसिलेमे निम्नलिखित पत्र भेजा है जिसमें उन्होने अपनी वात अत्यन्त नपे-तुले शब्दोमे कही है

> मैं सचमुच खादीका ही काम करता हूँ। मेरी देख-रेखमें १२० चरखे और १३ करघे चल रहे हैं। मैं प्रति सप्ताह ३०० गज खादी तैयार कराता हूँ। मैं यह काम २१ अगस्त, १९२१ से कर रहा हूँ। मेरा तरीका यह है कि मैं यहीं रुई खरीदता हूँ, कतैयोको पूनियाँ देता हूँ, हर कतैयेका सूत अलग-अलग जमा करता हूँ और एक थानके पूरे तानेमें एक ही कतैयेका काता हुआ सूत लगाता हूँ। ऊनके सम्बन्धमें भी मेरी यही प्रक्रिया रहती है, किन्तु सूतकी अपेक्षा ऊनका धागा अधिक मोटा होता है। इस तरीकेसे कपड़ा इकसार और मजबूत बनता है और अधिक दिनतक टिकता है। मैं अपने यहाँसे खद्दर खरीदनेवाले लोगोके ऐसे उदाहरण पेश कर सकता हूँ, जिनकी धोतियाँ, कमीजें और कोट सामान्यतः एक साल चलते हैं।

१. इस तारीखका निर्धारण तारमें वेलगाँवके उल्लेखसे किया गया है, जहाँ २६ और २७ दिसम्बरको कांग्रेसका अधिवेशन हुआ था।

खादीके टिकाऊपनमें कमी होनेका खास कारण बाजारसे खरीदा हुआ सूत है, क्योंकि :

१. यह सूत हमेशा अच्छी रुईसे नहीं काता जाता;
२. ज्यादातर सूत कम बटदार होता है।
३. यह लापरवाहीसे छाँटा जाता है।
४. झिरझिरा बुना होता है।

यदि खादी तैयार करनेवाले उक्त दोषोंसे बचनेका ध्यान रखें तो खादीके टिकाऊपनके बारेमें शिकायतोंकी गुंजाइश कम रहेगी।

मैं इस टिप्पणीको खादीके उत्पादनमे दिलचस्पी रखनेवाले सब लोगोके मार्ग-दर्शनके लिए प्रकाशित कर रहा हूँ।

दो मानपत्र

बेलगाँव जिला-बोर्ड और बेलगाँव नगरपालिकाने मानपत्र देकर मेरा सम्मान किया है। इन मानपत्रोमे मेरे गुणोका बखान किया गया है। मुझे लगता है कि अखिल भारतीय कार्यकर्त्ताके रूपमे मेरे गुणोके बखानकी कोई जरूरत नही थी। नगरपालिकाकी ओरसे तो उसी व्यक्तिको मानपत्र देना उचित होता जिसका नगरपालिका-सम्बन्धी कार्योमे योगदान हो। किन्तु हम जिस विशेष परिस्थितिमे आज रह रहे हैं उसमे नगरपालिकाएँ स्वतन्त्र होनेके लिए सघर्ष कर रही है और अपनी स्वतन्त्रताकी भावना-को इस प्रकार सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओके साथ अपना कुछ-कुछ तादात्म्य दिखाकर व्यक्त करती है, भले ही उन कार्यकर्त्ताओमें नगरपालिकाके कामके उपयुक्त गुण हो या न हो। सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओको नगरपालिकाकी ओरसे मानपत्र देना केवल इसी दृष्टिसे उचित ठहराया जा सकता है। किन्तु इन मानपत्रोके देनेसे मुझे पाश्चात्य देशोके इस सम्बन्धमे किये गये प्रयत्नोकी प्रशसा करनेका अवसर मिला, यद्यपि मैं सामान्यत पाश्चात्य सस्कृतिका विरोध करता हूँ।[1] हम पाश्चात्य देशोसे एक बात सीख सकते है और हमे सीखनी चाहिए। वह है उनका नगरोकी सफाईका विज्ञान। हम अपनी सहज वृत्तिसे और अपनी आदतसे ग्राम्य-जीवनके अभ्यस्त है, जिसमे सामु-दायिक स्वच्छताकी आवश्यकता अधिक अनुभव नही की जाती। किन्तु चूँकि पाश्चात्य सभ्यता भौतिकता-प्रधान है और इस कारण उसका रुझान गाँवोकी उपेक्षा करके शहरोके विकासकी ओर ही अधिक है, इसलिए पाश्चात्य देशोके लोगोने सामुदायिक स्वच्छता और स्वास्थ्य-रक्षाका विज्ञान विकसित कर लिया है। हमे इस विज्ञानसे बहुत-कुछ सीखना है। हमारी गलियाँ सकरी और टेढी-मेढी होती है, हमारे घर घिच-पिच और कम हवादार होते है, हम पीनेका पानी जहाँसे लेते है उसकी सफाईकी घोर उपेक्षा करते है। हमे इन दोषोको दूर करनेकी जरूरत है। प्रत्येक नगरपालिका लोगोसे स्वच्छताके नियमोका पालन करानेका आग्रह करके बडीसे-बडी सेवा कर

१. देखिए "भाषण: मानपत्रोंके उत्तरमें", २१-१२-१९२४।

सकती है। यह विचार भ्रमपूर्ण है कि स्वच्छता-सम्बन्धी सुधार करनेके लिए, बहुत अधिक धनकी आवश्यकता है। हमें स्वच्छताके पाश्चात्य तरीकोंको अपनी आवश्यकताओंके अनुरूप बदल लेना चाहिए, और चूँकि मेरी देशभक्ति ग्रहणशील है, उसमें सबके लिए गुंजाइश है और किसीके प्रति वैर-भाव या द्वेष-भाव नहीं है, अतः मैं पाश्चात्य भौतिकतासे घृणा करनेपर भी उसमें जो-कुछ मेरे लिए लाभप्रद है उसे ग्रहण करनेमें नहीं झिझकता। और चूँकि मैं यह जानता हूँ कि अंग्रेजोंमें सूझबूझ है, इसलिए मैं उनसे ऐसे मामलोंमें कृतज्ञतापूर्वक सहायता लेनेका प्रयत्न करता हूँ। उदाहरणके लिए मनुष्यके मैलेको ठिकाने लगानेका सबसे कम खर्चीला और सबसे ज्यादा कारगर तरीका मुझे श्री पूअरसे मालूम हुआ है। उन्होंने हमें बताया है कि हम अज्ञान अथवा पूर्वग्रहके कारण इस अत्यन्त उपयोगी खादको नष्ट कर देते हैं। मनुष्यके मैलेको उचित जगहपर डाला जाये और उसका उचित उपयोग किया जाये तो वह बेकारकी गन्दगी नहीं होगी। अंग्रेज कहते हैं, गन्दगी अनुपयुक्त स्थानपर रखे हुए पदार्थका ही नाम है।

दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय

दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय प्रवासियोंके इर्द-गिर्दकी सर्प-कुण्डली दिन-प्रतिदिन कसती ही जा रही है। अब नेटालमें भारतीयोंको नगरपालिका-सम्बन्धी मताधिकारसे भी वंचित कर दिया गया है। कहा गया था कि उनके इस अधिकारकी रक्षा की जायेगी। जब उनसे राजनीतिक मताधिकार छीननेका प्रयत्न किया गया था, तब नेटाल सरकारने घोषणा की थी कि भारतीय जिस नगरपालिका-सम्बन्धी मताधिकारका उपभोग कर रहे हैं, उसे उनसे छीननेका उसका कोई विचार नहीं है। किन्तु आधुनिक सरकारोंकी दृष्टिमें एक दुर्बल पक्षको दिया गया कोई भी वचन पालनीय नहीं होता। प्रत्येक पक्षको अपनी ही शक्तिके बलपर अपने अधिकारोंकी रक्षा करनेमें समर्थ होना चाहिए। भारत सरकार भारतीयोंकी संरक्षक होनेकी जो गर्वोक्ति करती रही है, वह इस संकटके अवसरपर काम नहीं आई। मैं जानता हूँ कि प्रवासी हमसे सहायता और संरक्षणकी अपेक्षा रखते हैं। किन्तु उन्हें जानना चाहिए कि उन्हें फिलहाल भारतसे कोई सहायता नहीं मिल सकती। भारत तो स्वयं जीवन-मृत्युके संघर्षमें लगा हुआ है। सालों पहले स्वर्गीय फीरोजशाह मेहताने भविष्यवाणी की थी कि भारत समुद्र-पारके भारतीयोंको तबतक कोई खास सहायता नहीं दे सकता, जबतक उनमें स्वयं अपने अधिकारोंकी रक्षा करनेकी सामर्थ्य नहीं आ जाती। स्व० पेस्तनजी पादशाको मेरा दक्षिण आफ्रिका जाना बिलकुल ही नापसन्द था। उनका खयाल था कि यदि कोई भारतीय कार्यकर्त्ता भारतसे बाहर जाता है तो वह उस हदतक हमारी राष्ट्रीय शक्तिका अपव्यय है। मेरा खयाल है कि यद्यपि श्री पादशा बड़े स्पष्टदर्शी थे, फिर भी इस बारेमें उनका सोचना ठीक नहीं निकला। मैं दक्षिण आफ्रिकामें रहा, इससे मेरी शक्तिका अपव्यय नहीं हुआ। किन्तु श्री पादशाकी तीव्र इच्छा थी कि पहले भारतकी स्वतन्त्रता हासिल की जाये। क्या इस इच्छाके मूलमें एक बहुत बड़ी सचाई नहीं है? जबतक हमें यह स्वतन्त्रता नहीं मिलती, तबतक

हम अपने समुद्र-पारके भाइयोको समाचारपत्रो द्वारा और अन्य प्रकारसे सहानुभूति प्रकट करके जो-कुछ सान्त्वना दे सकते है, वह देते रहे; और तवतक हम इतना ही भर कर सकते है।

एक नमूना

मै नीचे वावू हरदयाल नागका पत्र देता हूँ[1]

वावू हरदयाल नाग एक पुराने असहयोगी है। उनका रुख वहुत-से अपरिवर्तन-वादियोके रुखका नमूना है। उनके-जैसे विचार है, उनको देखते हुए, मै उनके वेलगाँव न जानेके निर्णयकी पुष्टि ही कर सकता हूँ। सच कहूँ तो असहयोगके स्थगनकी वातपर उन्होने जो रोप प्रकट किया है, मै उसकी भी कद्र करता हूँ। ऐसा रोप और भी अधिक लोग प्रकट करते तो अच्छा होता। मै राष्ट्रीय पैमानेपर चालू असहयोगको स्थगित करनेकी सलाह इसलिए नही दे रहा हूँ कि यह मुझे कोई वहुत अच्छा लगता है। परिस्थितियोने मुझे ऐसा करनेको विवश कर दिया है। आवश्यक हो तो उसमे विश्वास रखनेवाले व्यक्ति इसे फिरसे राष्ट्रीय रूप दिला सकते है। इसके लिए उन्हे अपने व्यवहार द्वारा इसकी सामर्थ्य दिखानी होगी और साथ ही स्वय अहिसक भी वने रहना होगा। मै वावू हरदयाल नागसे और उनके-जैसे विचारके लोगोसे यह कहना चाहता हूँ कि वे अपने विरोधियोपर दुष्टताका आरोप न लगाये। इसमें सवसे अच्छा नियम यही है कि लोग तुम्हारे वारेमें फतवे न दें, इसलिए लोगोके वारेमे फतवे मत दो। हम जिन्हे धूर्त कहते है, वे प्राय इसका ऐसा ही उत्तर देते है और वदलेमे हमपर यही आरोप लगाते है। किन्तु इस सम्वन्धमें भी मै इस मान्यताको स्वीकार करता हूँ कि यदि कोई किसीको इतना दुष्ट समझे कि उसे सुधारके अयोग्य माने तो उसे अवश्य ही उससे असहयोग करना होगा। क्योकि दुर्भाग्यवश वहुत-सी वाते केवल व्यक्तिकी मानसिक स्थितिसे नियन्त्रित होती है। यदि मै भ्रमवश रस्सीको साँप मान लूँ तो सम्भव है, मै भयसे पीला पड जाऊँ। इसपर समीप खड़ा कोई व्यक्ति जो जानता है कि यह तो साँप नही, रस्सी है, हँसेगा ही।

१. यह पत्र यहाँ नही दिया जा रहा है। इसमें वावू हरदयाल नागने वेलगाँव काग्रेसमें शामिल होनेकी अपनी असमर्थताके कारण वताये थे। उन दिनों सभा-सम्मेलनोंकी जो स्थिति हो गई थी, उसके कारण उन्हें उनमें कोई उपयोगिता दिखाई नहीं देती थी। वे कट्टर असहयोगी थे और असहयोगका स्थगित किया जाना उन्हें पसन्द नहीं था। असहयोगको स्थगित करके स्वराज्यवादियोंके साथ सहयोग करना वे बुराई और शैतानोंके साथ सहयोग करना मानते थे। दूसरी ओर वे गांधीजीके खिलाफ मत भी नहीं देना चाहते थे। इसलिए उन्होंने वहाँ न जाना ही ठीक समझा। उन्होंने वहुमतके निर्णयमें अपनी आस्था व्यक्त करते हुए कहा था कि वहुमतसे जो निर्णय होगा वह उन्हें मान्य होगा ही। इसके अलावा उन्हें अपने खद्दरके कामकी भी वडी चिन्ता थी और उसे कुछ समयके लिए भी वे छोड़ना नहीं चाहते थे— विशेषकर इस कारणसे कि उनके कथनानुसार वंगाल काग्रेसके स्वराज्यवादियोंके हाथमें होनेके कारण खद्दरकी ओर समुचित ध्यान नहीं दिया जा रहा था। उन्होंने कहा था कि इसी कारण वहाँ राष्ट्रीय पाठशालाओंकी भी स्थिति वहुत बुरी थी। अन्तमें उन्होंने गाधीजीको वगाल आकर वहाँके कट्टर असहयोगियोंसे वातचीत करनेको आमन्त्रित किया था।

मनकी एक अपनी ही दुनिया है। मन स्वर्गको नरक बना सकता है।'[1] जहाँतक बंगालके कांग्रेस-संगठनोंके विरुद्ध शिकायतका सम्बन्ध है, आज उनकी स्थिति जैसी भी हो, यदि हाथसे सूत कातना कांग्रेसके मताधिकारका अंग बन जाता है तो जो भी कांग्रेस-संगठन हाथ-कताईको प्रोत्साहन नहीं देता और उसका संगठन नहीं करता वह जीवित नहीं रह सकेगा।

जहाँतक बंगालका दौरा करनेका सम्बन्ध है, मैं जल्दीसे-जल्दी, अवसर मिलते ही, विभिन्न जिलोंका दौरा करने आऊँगा। किन्तु उसका समय निश्चित करना कठिन है। २३ जनवरीके बाद मेरे समयपर पहला अधिकार कोहाटके शरणार्थियोंको है। और २३ जनवरीतक मेरे एक-एक दिनका कार्यक्रम निश्चित हो चुका है। यह कहना कठिन है कि पंजाबका काम खत्म हो जानेपर भाग्य मुझे कहाँ ले जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २६-१२-१९२४

३८१. उद्घाटन भाषण: बेलगाँव कांग्रेसमें

२६ दिसम्बर, १९२४

अध्यक्ष लँगोटी पहने और अपने हाथमें खद्दर लिये मंचसे उतरकर भाषण स्थानपर आये। लोगोंने उत्साहपूर्वक उनका जय-जयकार किया। उन्होंने अपना थैला मंचपर लटकाकर एक काफी ऊँची तिपाईपर आसन ग्रहण किया और अपनी घड़ी सामने खोलकर रख दी। इसके बाद स्वागत समितिके अध्यक्षने चन्दनकी छोटी-सी सन्दूकचीमें रखी कर्नाटकके इतिहासकी एक प्रति यह कहते हुए उनको भेंट की कि "महोदय, यह आपकी जानकारीके लिए है।" अध्यक्षने यह भेंट हर्ष-ध्वनिके बीच मुक्त मुस्कानके साथ ग्रहण की। इसके बाद, उन्होंने हिन्दीमें अपना भाषण आरम्भ किया :[2]

"भाई गंगाधरराव,[3] भाइयो और बहनो,

आपने मुझे यह उत्तम स्थान दिया है, इसीलिए मैं आप सब भाइयो और बहनोंको कोई बड़ी तकरीर सुनाना नहीं चाहता। जो-कुछ भी मैं इस स्थानसे कहना चाहता था वह सब भाई और बहनें जानती हैं। मेरा भाषण,[4] एड्रेस, व्याख्यान (जो है) उसका अनुवाद हिन्दीमें, कन्नडमें, मराठीमें और अंग्रेजीमें छप गया है और मैंने गंगाधररावजीसे प्रार्थना की थी कि वह आप सब डेलिगेट भाइयोंको कल शामतक मिल जाये। मुझे उम्मीद है कि आपको मेरा व्याख्यान मिल गया है और आप सबने उसे अच्छी तरहसे पढ़ लिया है।

१. मिल्टनकी पैराडाइज़ लॉस्ट।
२. यहाँतक का अंश अंग्रेजी रिपोर्टसे अनूदित है।
३. स्वागत-समितिके अध्यक्ष।
४. देखिए अगला शीर्षक।

मै आपको सिर्फ इतना कहना चाहता हूँ कि आज हमारे सामने ऐसा मौका आ गया है कि हम जो १९२०–२१ में करना चाहते थे वह न कर सके; लेकिन उसके बदले हमारे अन्दर मतभेद, दुश्मनी पैदा हो गई है। हिन्दू-मुसलमान एक-दूसरेको दुश्मन मानते है और एक-दूसरेको मारा-पीटा करते है। यह कोई स्वराज्य लेनेका ढंग नही है। बात समझानेकी कोई जरूरत नही है। हम हिन्दू अपनी अस्पृश्य जातिको घृणाकी दृष्टिसे देखते है। हम उसके छूनेमे पाप समझते है, ऐसा मानकर हम उसको अशुद्ध समझते है। लेकिन खुदाके सामने, ईश्वरके सामने हम बडा भारी गुनाह करते है। यह ठीक है कि हमने पिछले वर्षोंसे, ३–४ वर्षसे, मान लिया है कि बडे-छोटे हरएकको चरखा चलाना चाहिए और, हम है कांग्रेसमे, ऑल इंडिया कांग्रेस कमेटीमे कहते आये है कि हम चरखेसे स्वराज्य लेनेका इरादा रखते है। जब मै पूनामे गया था — इस आन्दोलनमे — मैने एक सभामे कहा था[1] कि लोकमान्यने हमे एक श्लोकार्थ दिया है। वह यह है कि 'स्वराज्य मनुष्यका जन्म-सिद्ध अधिकार है।' मै इस श्लोकको पूरा करनेके लिए पैदा हुआ हूँ, ऐसा मेरा विश्वास है। मै यही फिर कहता हूँ। अगर हम स्वराज्य चाहते है तो उसका रास्ता चरखा है, सूत है, खद्दर है। मुझे यह जानते हुए अफसोस होता है कि आप इसे जानते है, मगर इसपर चलते नही। पर मै इसके सिवा न कुछ जानता हूँ और न सोच ही सकता हूँ। इससे मै आप भाइयो और बहनोको कहता हूँ कि मेरा आपके सामने उपस्थित होना और भाषण देना निरर्थक है। मेरा दिल यह कहता है कि यह निकम्मा काम है। और यो करना आपका और मेरा अपना वक्त भी — जो मै समझता हूँ, अमूल्य है — खराब करना है। अमूल्य इसलिए कि मैं अपनेको खुदाका बन्दा मानता हूँ। मै जानता हूँ कि स्वराज्य इस तरह नही मिलेगा। मौलाना मुहम्मद अलीकी बेगम साहबा कहती थी कि जब-जब मैं कांग्रेसमे आती हूँ तो एक सप्ताहके लिए मालूम होता है कि हमे स्वराज्य मिल गया है। इसका मतलब यह है कि हम स्वराज्यका नाटक रचते है, जैसे कि हरिश्चन्द्रका अभिनय देखते है। हकीकत यह है कि उसमे हरिश्चन्द्र नही होता। जो हरिश्चन्द्रका अभिनय करता है वह सत्यवादी है या नही, वह हम नही जानते। इसी तरह स्वराज्यका जलसा भी एक नाटक हो गया है।

इसलिए मै आप भाइयोसे कहना चाहता हूँ कि देशबन्धु दास एक प्रस्ताव रख रहे है, अगर आप उसको मानते है तो स्वीकार करें, अगर नही मानते है तो अस्वीकार कर दे। इसमे हिन्दू-मुसलमान ऐक्यकी बात नही है, न इसमे अस्पृश्यताका उल्लेख है। इसमे एक ही बात लिखी है कि हम चरखा चलाना चाहते है। और आप लोग जो यहाँ प्रतिनिधि होकर आये है अछूत, ईसाई, अथवा अन्य कोई भी हो — उनके प्रतिनिधि होकर आये हैं और अगर आप मुहम्मद अली और दासकी प्रतिज्ञा माननेवाले है तो मै आप सबसे चाहता हूँ कि आप जो-कुछ करना चाहते है, ईश्वरको दरम्यान रखकर करे। अगर आपका दिल मानता है कि यह बात ठीक नही है, गांधी आपको धोखेमे डालता है तो आप इसे अस्वीकार कर दे, त्याग कर दे। अगर आप भाइयोने ऐसी प्रतिज्ञा की,

१. देखिए "भाषण: पूनाकी सार्वजनिक सभामें", ४-९-१९२४।

आपने इस प्रस्तावको स्वीकार किया — मैं स्वीकार करना प्रतिज्ञा करना समझता हूँ, ईश्वरका नाम लेकर प्रतिज्ञा की और प्रतिज्ञा करके उसपर न चले तो मैं आपको आपपर छोडता हूँ। अगर देशको गांधीका काम पागलपन मालूम हो तो उसका त्याग कर दीजिए। आप फिर सोच लें कि क्या हिन्दुस्तान स्वराज्यके काबिल है? जो प्रतिज्ञा छोड देता है, उसके लिए जगत् क्या कहता है? तुलसीदास उसे क्या कहते है? भले ही 'बाइबिल' हो, भले ही 'गुरु ग्रंथसाहब' हो, भले ही 'कुरान' हो, उसको पढिए। आप पायेंगे कि ऐसा आदमी कोढी है, निकम्मा है, झूठा पैसा है, खोटा रुपया है। अगर झूठा पैसा लेकर दुकानमे गये तो गवर्नमेंट सजा देगी। तो मै आपको यही सुनाता हूँ और आपको बहकाना नही चाहता। मैं खेल खेलना नही चाहता हूँ। जो सोचता हूँ, समझता हूँ, वही सुनाता हूँ। मुझे विश्वास है कि जबतक करोडो भाई-बहन चरखा नही चलाते, सूत नही कातते, खद्दर नही तैयार करते, नही पहनते, स्वराज्य हर्गिज हासिल नही हो सकता। जबतक यह नही होता, तबतक हिन्दुस्तानमें कंगालीयत नही मिटेगी जबतक देशके करोडो कंगालोको रोटी नही मिलेगी, तबतक स्वराज्य नही मिल सकता।

अगर आप स्वराज्य चाहते है तो यही शर्त है। मैंने, देशबन्धु दास और पण्डित मोतीलाल नेहरूके साथ एक करार किया है और मैंने वह सारे भारतवर्षके सामने रखा है। और मैं समझता हूँ कि जो-कुछ हम चाहते है इसमे कोई गलती नही है। जो-कुछ वे चाहते है, उसका हक उनको है। मै यह मानता हूँ कि कौंसिलोकी मार्फत कुछ भी नही मिल सकता। लेकिन कुछ बडे-बडे नेता है, जो मानते है कि कुछ-न-कुछ मिल सकता है, कुछ नही करते तो कौंसिलोमे तो जायें। यह सच है। मै कहता हूँ कि जब वे उसमें फायदा समझते है तो वे जरूर जायें। वे भी मुल्कके नेता है। मै कौन हूँ कि जो नही कहूँ। तो करारमे यह है कि अगर जाना चाहते है तो जायें। इसके मानी यह नही कि जो असहयोगी है वे भी उसको माने। कांग्रेस नाफेरवादी (अपरिवर्तनवादी) और फेरवादी (परिवर्तनवादी) दोनोकी है। किसी एककी है, यह बात झूठी है। इसलिए वे [कौंसिलोमें] कांग्रेसकी तरफसे जायेंगे।

मैंने कहा है कि यह बात झूठी है। पर यह आग्रह कि मेरी ही बात सच है और दूसरोकी बात झूठी — तो यह भी एक खतरनाक बात है। इस आग्रहको भी मिटा देना है। जबतक जगत्‌मे मस्तिष्क अलग-अलग है, तबतक मत भी अलग-अलग रहेंगे। लेकिन हम हरएकको हृदयसे लगाना चाहते हैं, सहनशीलता पैदा करना चाहते है — यह भी अहिंसाका ही एक टुकडा है।

लेकिन मैंने कहा है कि यह छोटी बात है। प्रतिज्ञामे सबसे बडी बात चरखा है। चरखा-शास्त्र अगर आप नही मानते है, खद्दरको नही मानते, अगर आप यह मानते है कि 'फ्रेंचाइज' से नई कांग्रेसकी शक्ति कम हो जायेगी तो इसका त्याग कर दें।

भाइयो, मैंने इतना हिन्दीमे, टूटी-फूटी हिन्दीमें समझा दिया। यह कहते हुए मुझे अफसोस होता है कि कितने भाई दक्षिण, कर्नाटकसे आते है जो कहते है 'अंग्रेजीमे बोलें', — यह बडे दरदकी बात है। मै जबसे हिन्दुस्तानमे आया तबसे कहता रहा हूँ कि कमसे-कम कांग्रेसमें स्वराज्यके विषयमे, हिन्दीमे बात करें। लेकिन

हमारे दुर्दैवसे हमारी शिक्षामे ऐसा दोष आ गया है और आलसीपन आ गया है कि जितना प्रयत्न इसके लिए करना चाहिए, हम लोगोने नही किया है। अगर मुझे विश्वास हो जाये कि मैं जो-कुछ कहना चाहता हूँ वह जो भाई तमिलनाडसे आये है या कर्नाटकके है, मेरी टूटी-फूटी हिन्दी समझ लेते है तो भी चल जाता, मगर मै तो जानता हूँ। लोग नही समझते। मै एक बात भूल गया। मैं देशबन्धु दासको भूल गया। इस गुनाहमे बगाल भी मदद कर रहा है। मै तो चाहता हूँ कि ईश्वर मुझे ऐसी शक्ति देता कि जिस भाषामे रवीन्द्रनाथ ठाकुर उत्तम काव्य देते है, उसको मै सीख लेता और बगालीमें बगाली भाइयोको सुनाता। लेकिन मेरे भाग्यमे वह बात नही थी।

तो प्रार्थना एक ही है। वह भी हमारे भाई समझ ले — हिन्दीमे जो कहना था, समाप्त किया। यह प्रस्ताव आपने समझ लिया है, इसलिए वे[1] आयेगे और जो-कुछ कहना है कह देंगे, प्रस्ताव नही पढेगे। आप उनको मजबूर न करे। प्रतिनिधियोको सुभीता हो, वे प्रस्ताव पढ ले, इसलिए मैंने जवाहरलाल और गगाधरराववजीसे कहा था कि प्रस्ताव उनके पास पहुँच जाये। वह आपके पास पहुँच गया होगा। (नही, नही — की अवाजे)। कितने ऐसे हैं? (बहुत-से — की आवाज) अच्छा। मैंने सुना दिया है कि उस प्रस्तावमे क्या लिखा है। (हँसी) आप सब वह प्रस्ताव पढ लेंगे, अखबारोमे निकल जायेगा। थोडी-सी बात है; उसमे स्वराज्यवादी और अपरिवर्तनवादी दोनो, 'चेजर' और 'नोचेजर' सब एक होकर रहना चाहते हैं। हमारे मतमे फरक है, लेकिन हमारे हृदयमे फरक नही है। अगर आप नाफेरवादी (अपरिवर्तनवादी) है तो भी आपके हृदयमे उतना ही स्थान देशबन्धु दास, पण्डित मोतीलाल और केलकरके लिए और दूसरोके लिए होना चाहिए जितना मेरे लिए है। अगर आप स्वराज्यवादी हैं तो मेरे लिए उतना हीं स्थान होना चाहिए जितना उनमे से किसीके लिए है। यही हिन्दू-मुस्लिम यूनिटी है — हिन्दू-मुस्लिम एकताका यही अर्थ है कि मैं सनातनी हूँ तो जितना स्थान मेरे हृदयमें पूज्य मालवीयजीके लिए है, उतना ही मौलाना मुहम्मद अलीके लिए, शौकत अलीके लिए और किसी भी मुसलमानके लिए होना चाहिए, भले ही वह हमको दुश्मन मानता हो। यह बडी बात मैंने कह दी। आप कहेंगे, कहाँ, मालवीयजी और कहाँ दुश्मन समझनेवाला मुसलमान। लेकिन अगर 'गीताजी', 'भागवतजी', 'रामायणजी' पढकर मैंने कुछ सीखा है तो यही।

तो अब आप प्रस्ताव पढकर उनकी बात सुने और उनको मजबूर न करे कि वह प्रस्ताव पढे।

इसके पश्चात् महात्माजीने अंग्रेजीमें भाषण देते हुए कहा:[2]

मित्रो,

मैं आपका दस मिनटसे अधिक समय नही लेना चाहता। मैंने अपने लिए केवल आधे घंटेका समय रखा था; किन्तु मैंने हिन्दुस्तानीमे बोलनेमें, जितना मैं चाहता

१. चितरंजन दास।
२. इससे आगेका अंश अंग्रेजी रिपोर्टसे अनूदित है।

था, उससे अधिक समय लगाया है। आपको मेरे भाषणकी, हमारे मतलबकी बहुत-सी आवश्यक भाषाओंमें अनूदित प्रतियाँ मिल गई हैं, इसलिए मैं उस भाषणका कोई भी अंश नही पढना चाहता। इससे आपका धैर्य जाता रहेगा तथा आपका और मेरा समय भी बरबाद होगा, इसीलिए मै उस भाषणको नही पढ रहा हूँ। हम उस कार्यको, जो हमारे सामने पडा है, यथासम्भव जल्दीसे-जल्दी समाप्त करना चाहते हैं। देशबन्धु दास अभी आपके सामने मुख्य प्रस्ताव रखेंगे। यदि आप उस प्रस्तावको अस्वीकार कर देते हैं तो आप अपने रास्ते चले और जो आप अपने तथा देशके लिए सर्वोत्कृष्ट समझें वही करें, और मुझे भी अनुमति दें कि मै भी जो काम अपने लिए सबसे अच्छा समझता हूँ उसमें अर्थात् कताईमें लग जाऊँ। मैं आपसे, आपमे से प्रत्येक व्यक्तिसे आग्रहपूर्वक कहता हूँ कि आपके सामने जो-कुछ रखा जा रहा है, आप उसपर ध्यान-पूर्वक विचार करें।

आपके सामने एक क्रान्तिकारी परिवर्तनका प्रस्ताव प्रस्तुत किया जा रहा है। यह एक ऐसा परिवर्तन है जो मेरे विचारसे, जैसा कि लालाजीने कहा है, उतना ही क्रान्तिकारी है जितना कि १९२० में उन्हीके सभापतित्वमें सम्पन्न कलकत्ताके विशेष अधिवेशनमें राष्ट्र द्वारा किया गया परिवर्तन था। मैं तो लालाजीकी तरह यह भी स्वीकार करता हूँ कि जिस परिवर्तनको मैंने प्रस्तुत किया है और राष्ट्रके सामने रखा है वह सम्भवत और भी अधिक क्रान्तिकारी है। इसलिए यदि आप उक्त प्रस्तावका समर्थन पूरे हृदयसे करे और उसपर अमल करे तो मैं कह सकता हूँ कि उससे स्वराज्य शायद काफी निकट आ जायेगा, क्योंकि वे दिन चले गये जब हम केवल प्रस्ताव पास करके सन्तुष्ट हो जाते थे और फिर उन्हे भूल जाते थे। इस प्रस्तावमें अस्पष्ट तरीकेसे राष्ट्रसे अपील नही की गई है, बल्कि काम करनेकी इच्छा रखनेवाले प्रत्येक व्यक्तिसे आग्रह किया गया है। यह प्रस्ताव विशेष रूपसे दोपहर बाद यहाँपर उपस्थित प्रत्येक समझदार स्त्री-पुरुषको ध्यानमे रखकर तैयार किया गया है और यद्यपि देशबन्धु दास और मौलाना मुहम्मद अली आपसे ईश्वरको साक्षी रखकर इस प्रस्तावको पास करनेके लिए नही कहेंगे, फिर भी मैं आपसे वैसा करनेके लिए कहता हूँ, और जब आप इस प्रस्तावपर मतदान करने लगे, तब कृपया याद रखें कि आप उसे ईश्वरको साक्षी मानकर पास कर रहे हैं। इसका मतलब होगा कि आप राष्ट्रके लिए, देशके दरिद्रतम लोगोंके लिए, स्वराज्यकी प्राप्तिके निमित्त कुछ करनेका जिम्मा ले रहे हैं। यदि आपका इस प्रस्तावपर पूर्ण विश्वास नहीं है तो अब मैं आपसे आग्रह करता हूँ कि आप इसको अस्वीकार कर दे।

इस प्रस्तावके पीछे मेरा व्यक्तित्व है, इसका आपपर कोई असर नही पडना चाहिए। मैंने बार-बार आप लोगोंसे कहा है कि मैं कोई ऐसा मनुष्य नहीं हूँ, जिससे गलती नही हो सकती। मैंने इस बातको बार-बार स्वीकार किया है कि मुझसे भूल हो सकती है। मैंने कई बार स्वीकार किया है कि मैंने जीवनमें कभी-कभी बेहद भारी भूलें भी की हैं। मैंने उसके लिए प्रायश्चित्त किया है। जो मनुष्य कभी गलती नही करता वह पूर्ण मनुष्य होता है। उसे प्रायश्चित्त करनेकी आवश्यकता नही होती।

उसे पश्चात्ताप करनेकी आवश्यकता नही होती, क्योकि उससे कोई भूल हो ही नही सकती। उसे बहस करनेकी भी आवश्यकता नही। मै तो आप-जैसा ही भला या बुरा एक मर्त्य प्राणी हूँ। और इसलिए मै चाहता हूँ कि इस प्रस्तावसे मेरे व्यक्तित्वको अलग रखकर ही आप अपने उत्तरका निश्चय करे।

यह प्रस्ताव अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। मै जानता हूँ कि बहुत-से ऐसे लोग है, जिनके विचार इसके विरुद्ध है। कुछ लोग ऐसे है, जो कहते है "यह उचित नही कि हम अपना सम्पूर्ण विश्वास कातनेमे ही रखे।" कुछ दूसरे लोग कहते है, "कातना अच्छा तो है, लेकिन इस कष्टकर कार्यको बहुत लम्बे अरसेतक करते रहनेके बाद ही इसका परिणाम निकल सकता है।" तीसरी तरहके लोग कहते है "यद्यपि खद्दर और हाथ-कताई, दोनो ही अपने आपमे अच्छे है, तथापि राष्ट्रीय मताधिकारमे उनके लिए कोई स्थान नही हो सकता।" किन्तु मेरे विचार इनसे बिलकुल भिन्न है। और मेरा यह विश्वास दिन-प्रतिदिन इतना अधिक बढता जा रहा है कि यदि मेरा सारा समय मेरे अपने हाथमे होता तो मै हर समय कातता ही रहता और अनुभव करता कि चरखेके प्रत्येक चक्करमे स्वराज्य अधिकाधिक हमारे निकट आ रहा है। इस चक्करसे स्वराज्य हमारे अधिकाधिक निकट आ रहा है। चरखेकी इस गतिको ३० करोडसे गुणा करके आप सोचिए कि उससे स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए कितनी गति, कितनी शक्ति पैदा हो जायेगी। किन्तु आपको यह शक्ति तभी मिलेगी जब आपके हृदयमे भी स्वराज्यको सुलभ करानेकी उसकी क्षमतामे मेरे समान ही विश्वास हो।

मैने अपने भाषणमे बहुत-सी बाते कही है। श्रीमती सरोजिनी देवीने मुझे एक बातकी चर्चा करनेके लिए कहा है। मेरे मनमे उनके प्रति बहुत आदर है, क्योकि उन्होने दक्षिण आफ्रिकामे बडी शानदार सेवा की है। इसलिए मै उसका खयाल करके अब उनकी बातकी चर्चा करता हूँ। वह है हिन्दू-मुस्लिम एकता। मौलाना शौकत अली कहते है. "मै इस सारे कामसे तग आ गया हूँ। हमे हिन्दू-मुस्लिम दगोकी, चाहे वे कही भी हों, परवाह नही करनी चाहिए।" उस बडे सिरमे बुद्धित्व भी काफी है, सच मानिए, उसमे सिर्फ चरबी ही नही है। (हँसी) बार-बार उन्होने कहा है "ये मेरे मुसलमान भाई जडबुद्धि हो गये है। वे पागल हो गये है। इसी प्रकार आपके हिन्दू भी जड़बुद्धि हो गये है। हम उनके झगडोका फैसला करनेकी कोशिश कर रहे है और हमारी इस कोशिशमे स्वराज्य हमारे हाथोसे खिसक रहा है। इसलिए हमें उन्हे उनके हालपर ही छोड देना चाहिए।" किन्तु मै वैसा कैसे कर सकता हूँ? मै तो हिन्दू-मुस्लिम एकताके लिए भी, चरखेके समान ही पागल हूँ। यह मेरी उत्कट अभिलाषा बन गई है। मै इसे न तो छोड ही सकता हूँ और न इसे भुला ही सकता हूँ। इस प्रकार आप जानते है कि मै उस छोटी-सी लडकी गुलनारपर मुग्ध हो गया हूँ। आप पूछ सकते है "यह आदमी उस लडकीपर क्यो मुग्ध है?" मै कहूँगा "इसका एक कारण है।" यह लडकी जब बडी होगी तब वह सोचेगी एक गाधी था; वह सनातनी हिन्दू होनेपर भी, मेरे साथ मास न खानेपर भी, स्वय गो-मास न छूनेपर भी और गो-पूजक होनेपर भी, जो लोग गो-मास खाना पसन्द करते है

और खाना चाहते है, उनके गो-मास खानेपर आपत्ति नही करता था। हो सकता है कि जबतक यह लड़की वयस्क हो, तबतक मै मर जाऊँ, किन्तु जब वह बडी होगी, मेरे सन्देशको लोगोतक पहुँचायेगी। आज वह शुद्ध और भोली-भाली है। वह सोचती है कि कही भी कोई खराबी नही है। वह घृणाको जानतीतक नही। वह प्रेमकी प्रतिमा है। मै उसमे प्रेमका साकार रूप देखता हूँ। इसीलिए हमे पृथक् करनेवाली इस खाईके रहते हुए भी मै उसके साथ अपने निकटतम सम्बन्धीके समान व्यवहार कर रहा हूँ। मै उसके माध्यमसे मुसलमानोके साथ अपना ऐक्य स्थापित करनेकी कोशिश कर रहा हूँ। उसका खयाल है कि 'कुरान' के अनुसार उसके लिए गो-हत्या करना वैध है, जब कि मेरा धर्म मुझे आदेश देता है कि मै गो-हत्या न करूँ। इन परिस्थितियोमे मै कौन हूँ जो उसे कहूँ कि वह गो-हत्या न करे? यदि मै ऐसा करूँ तो मेरा वह कार्य मेरे धर्मके विरुद्ध होगा। किन्तु मै उसे प्रेमका पाठ पढाकर जीतना चाहता हूँ। मै उससे कहूँगा, बल्कि कहता हूँ कि 'कुरान' तुमको मजबूर नही करता कि तुम गो-हत्या करो या गो-मास खाओ। मेरा धर्म न केवल इसकी अनुमति नही देता, बल्कि मेरा 'कुरान' मुझे मजबूर करता है कि मै गायकी पूजा करूँ। तुम चाहे गायकी पूजा न करो, किन्तु यदि मै गो-मास नही खाता तो उसे तुम बुरा तो न मानो, यदि मैं गायकी पूजा करता हूँ तो तुम उसे भी सहन करो। मेरे प्रति मित्रतापूर्ण भावनाके कारण तुम गो-वध करनेसे हाथ रोक सकती हो। उस लडकी गुलनारसे मेरे प्रेम करनेका यही रहस्य है। इसीलिए मै मौलाना शौकत अलीकी मुट्ठी मे रहता हूँ। और मैं मालवीयजीका खयाल क्यो नही करता? इसका केवल एक कारण है कि उनके प्रति मेरी भक्ति स्वयस्फूर्त है। किन्तु मुसलमानोका मै विशेष खयाल रखता हूँ। मै अन्यथा कर भी कैसे सकता हूँ? जब आप मुसलमानोका विशेष खयाल रखेंगे तो आप ठीक निष्कर्षपर पहुँच जायेगे और इस समस्याका सही हल निकाल लेंगे। यदि कोई कहे "हिन्दुओको क्या करना चाहिए और मुसलमानोको क्या करना चाहिए, आप इस समस्याका हल निकाले। तो मै कहूँगा, यह प्रत्येक हिन्दूका कर्त्तव्य है कि वह मुसलमानोका विशेष खयाल रखे और प्रत्येक मुसलमानका कर्त्तव्य है कि वह हिन्दुओका विशेष खयाल रखे। मान लीजिए कि मै देखता हूँ कि एक ऐसा ऋषि है जो ईश्वरको देखने या प्राप्त करनेके लिए एक उपाय अपनाता है और मै दूसरा उपाय अपनाता हूँ और इसीलिए वह जो-कुछ करता है उसे मै शकाकी दृष्टिसे देखता हूँ। तब मै अपने मनमें कहता हूँ कि मुझे उसके दृष्टिकोणके प्रति विशेष सहानुभूति रखनी चाहिए और जब मै ऐसा करूँगा, तभी मेरा आचरण न्यायपूर्ण होगा। मै मुसलमानोसे कहना चाहूँगा कि वे भी ऐसा ही करे — वे हिन्दुओका विशेष खयाल करके चले।

उन्होने (श्रीमती नायडूने) मुझसे एक बात और कहनेके लिए कहा है। उस बातका सम्बन्ध उदारदलवालोसे है। "क्या आप उदारदलवालोके बारेमे कुछ कहने जा रहे है?" मै केवल यही कह सकता हूँ कि मै उदारदलवालोकी पूजा करता हूँ। जिस प्रकार मै यह चाहता हूँ कि स्वराज्यवादी काग्रेसमें आये उसी प्रकार मै यह भी चाहता हूँ कि उदारदलीय लोग काग्रेसमें आयें। मैने अपना हृदय उनके सामने

खोलकर रख दिया है। हम चरखेके पास बैठकर सूत कातना चाहते हैं। वे कहते हैं: "नहीं, हम चरखा लेकर नहीं बैठना चाहते, हम सूत नहीं कातेंगे।" तब मैं अपने आपसे पूछता हूँ: "अब मैं क्या करूँ?" यदि वे कहते हैं: "हम चरखेको छुयेंगे ही नहीं", तो मैं उन्हें केवल यह कहता हूँ, "आप कांग्रेसमें प्रवेश करें और मुझे उसमें से निकाल बाहर करें।"

अब मेरा भाषण समाप्त होता है। मैं आपसे यह कहना चाहता हूँ कि आप ईश्वरको साक्षी करके जो-कुछ करनेका निर्णय करें, उसे पूरा करें, चाहे इसके लिए आपको मृत्युका वरण ही क्यों न करना पड़े। (तालियाँ)

उनका छपा हुआ भाषण पढ़ा हुआ मान लिया गया। वह नीचे दिया जा रहा है?[१] . . .

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके ३९वें अधिवेशनकी रिपोर्ट।

३८२. अध्यक्षीय भाषण: बेलगाँव कांग्रेसमें[२]

२६ दिसम्बर, १९२४

दोस्तो,

आप लोगोंने जो सम्मान मुझे दिया है उसकी जिम्मेवारीको मैंने बहुत पसोपेशके बाद स्वीकार किया है। यह असाधारण मान इस बार आपको श्रीमती सरोजिनी नायडूको देना चाहिए था, जिन्होंने कि केनिया और दक्षिण आफ्रिकामें ऐसा अद्भुत काम किया है। लेकिन ईश्वरको ऐसा मंजूर न था। देशके भीतरी और बाहरी घटनाक्रमने मेरे लिए इस बोझको उठाना जरूरी कर दिया। मुझे मालूम है कि जिस ऊँचे पदपर आपने मुझे बिठाया है उसकी जिम्मेवारियोंको ठीक अदा करनेकी कोशिशमें आप मेरी पूरी-पूरी मदद करेंगे।

आरम्भमें, मैं इस मौकेपर भारतमें बी-अम्माँ, सर आशुतोष मुखर्जी, बाबू भूपेन्द्रनाथ बसु, डाक्टर सुब्रमण्यम अय्यर और श्री दलबहादुर गिरिकी तथा दक्षिण आफ्रिकामें पारसी रुस्तमजी और श्री पी० के० नायडूकी मृत्युपर अपने हार्दिक दुःखको और उनके प्रति अपने आदर-भावको जाहिर करता हूँ और इससे जो दुःख उनके रिश्तेदारोंपर गुजरा है उसके लिए आपकी तरफसे मैं उनके साथ हमदर्दी प्रकट करता हूँ।

सिंहावलोकन

सितम्बर १९२० से कांग्रेसका उद्देश्य खासकर देशकी भीतरी ताकतको बढ़ाना रहा है। फलतः दरख्वास्तों और अर्जियोंके जरिये अपने दुःख-दर्द दूर करनेका

१. देखिए अगला शीर्षक।

२. लगता है, यह भाषण १८ दिसम्बरसे पहले ही तैयार कर लिया गया था; देखिए "पत्र: सी० एफ० एन्ड्रयूजको", १८-१२-१९२४।

तरीका वह अब छोड चुकी है। इसकी वजह यह थी कि उसका यह विश्वास बिलकुल उठ गया था कि वर्तमान शासन-प्रणाली किसी भी अशमे लाभकारी है। मुसलमानोके साथ सरकारने जो वचन-भग किया उसने लोगोके विश्वासको पहला सख्त धक्का पहुँचाया। रोलेट कानून और ओ'डायरशाहीने, जो कि अपना रग जलियाँवाला बागके कत्लेआममे लाई, लोगोपर इस प्रणाली (निजामकी) की असलियतका भेद प्रकट कर दिया। इसके साथ ही लोगोने इस बातको जाना कि इस मौजूदा हुकूमतका दारोमदार उनके सहयोगपर है, फिर चाहे वे यह सहयोग अपनी मर्जीसे दे रहे हो या मजबूरन और जान-बूझकर दे रहे हो या अनजाने। इसलिए मौजूदा शासन-प्रणालीको सुधारने या मिटानेके उद्देश्यसे यह तय किया गया कि जिस हदतक लोग अपनी रजामन्दीसे सहयोग कर रहे है, उसका हटाना शुरू करनेकी कोशिश करें और उसका प्रारम्भ ऊपरकी श्रेणीसे किया जाये। सन् १९२० मे कलकत्तेमे कांग्रेसकी जो खास बैठक हुई थी, उसमे सरकारी खिताबो, अदालतो, शिक्षालयो, विधानसभाओ और विदेशी कपडेके बहिष्कारके बारेमें प्रस्ताव पास हुए। इन तमाम बहिष्कारोंपर कम या ज्यादा दर्जेतक उन लोगोने अमल किया जिनका उनसे ताल्लुक था। और जिनके लिए ऐसा करना मुमकिन नही था या जो इसके लिए राजी नही थे, वे कांग्रेससे अलग हो गये। यहाँ मै आपके सामने असहयोग आन्दोलनके रग-बिरगे इतिहासका चित्र नही खीचना चाहता। इतना कहना काफी होगा कि यद्यपि किसी भी एक बहिष्कारमे पूरी-पूरी कामयाबी नही हुई तो भी इसमे कोई सन्देह नही कि जिन-जिन चीजोका बहिष्कार किया गया, उन सबकी इज्जत लोगोके दिलोंसे जरूर ही उठ गई।

सबसे महत्त्वपूर्ण बहिष्कार, हिंसाका बहिष्कार था। यद्यपि एक वक्त ऐसा मालूम होने लगा था कि यह पूरी तरह सफल हो गया तथापि थोडे ही अरसेमे यह पता लग गया कि हमारी अहिंसा बहुत कच्ची बुनियादपर खडी थी। हमारी अहिंसा लाचार लोगोकी निष्क्रिय अहिंसा थी, न कि हिकमती और जानकार आदमीकी प्रबुद्ध अहिंसा। नतीजा यह हुआ कि जो लोग असहयोग आन्दोलनमे शरीक नही हुए थे उनके खिलाफ असहिष्णुताकी लहर चल पडी। यह एक सूक्ष्म प्रकारकी हिंसा थी। लेकिन इस भारी खामीके होते हुए भी मै दावेके साथ यह कहता हूँ कि अहिंसाके प्रचारने हिंसाके उस तूफानको रोक दिया जो कि जरूर ही उठ खडा होता, अगर अहिंसात्मक असहयोग शुरू न हुआ होता। बहुत सोच-विचारके बाद मै इस पक्की रायपर पहुँचा हूँ कि अहिंसात्मक असहयोगने लोगोको अपनी ताकतकी पहचान करा दी है। इसने लोगोके अन्दर कष्ट-सहनके जरिये प्रतिकार करनेकी छुपी ताकतको जगा दिया है। इसकी बदौलत जनतामे वह जागृति पैदा हो गई है जो कि शायद किसी और तरीकेसे न होती।

इसलिए यद्यपि अहिंसात्मक असहयोग हमें स्वराज्य नही दिला सका है, यद्यपि इससे कई खेदजनक नतीजे निकले है और यद्यपि जिन चीजोका बहिष्कार करनेकी कोशिश की गई थी वे अब भी फल-फूल रही है तो भी मेरा विनम्र मत है कि अहिंसात्मक असहयोगने अब राजनीतिक आजादी हासिल करनेके एक साधनके तौरपर

जड पकड ली है और उसकी यह आंशिक सफलता भी हमे स्वराज्यके नजदीक ले आई है और यह बात सूर्य-प्रकाशकी तरह स्पष्ट हो गयी है कि किसी ध्येयके लिए कष्ट सहनेकी क्षमता हो तो उसका मिलना जरूर आसान हो जाता है।

कदम थामनेकी जरूरत

लेकिन आज हमारे सामने एक ऐसी हालत खडी हो गई है जो हमे मजबूर करती है कि हम कदम थामे। कारण, यद्यपि असहयोगमे अनेक व्यक्तियोका विश्वास भी अटल है, किन्तु जिन लोगोका इस आन्दोलनसे सीधा ताल्लुक है, उनमे से अधिकाशका आज विश्वास, एक विदेशी कपडेके बहिष्कारकी बातको छोडकर उससे हट गया है। बीसियो वकीलोने अपनी छोडी हुई वकालत फिरसे शुरू कर दी है। कुछको यह पछतावा भी है कि उन्होने उसे कभी छोडा ही क्यो था। बहुत-से लोग जिन्होने विधानसभाओका बहिष्कार किया था, अब फिर उनमे चले गये है और विधानसभामे विश्वास रखनेवालोकी तादाद बढतीपर है। सैकडो लडके-लडकियाँ, जिन्होने सरकारी पाठशालाओको छोड दिया था, अब पछताकर फिर उनमे लौट रहे हैं। मेरे सुननेमे आया है कि इन सरकारी स्कूलो और कालेजोमे प्रवेशकी माँग इतनी जबरदस्त है कि वे इन सारे प्रवेशार्थियोको जगह नही दे पा रहे हैं। इस हालतमे इन चीजोके बहिष्कारका पालन एक राष्ट्रीय कार्यक्रमके रूपमें तबतक नही किया जा सकता, जबतक कि काग्रेस इन वर्गोको छोडकर अपना काम चलानेके लिए तैयार न हो। लेकिन मैं यह मानता हूँ कि आज उन लोगोको काग्रेसके बाहर रखना उतना ही अव्यवहार्य है जितना कि असहयोगियोको। यह जरूरी है कि दोनो दल एक-दूसरेके काममे दखल दिये बिना और एक-दूसरेके खिलाफ टीका-टिप्पणी किये बिना काग्रेसके अन्दर ही रहें। जो सिद्धान्त हिन्दू-मुस्लिम ऐक्यके सवालपर घटित होता है वही इन भिन्न-भिन्न दलोकी पारस्परिक एकतापर भी होता है। हमे चाहिए कि हम आपसमे सहिष्णुता बढावे और इस बातका यकीन रखें कि समय किसी भी एक दूसरेकी रायका कायल कर देगा, बल्कि हमे इससे भी एक कदम आगे बढ़ना चाहिए। हमे नरमदलवालोसे तथा उन दूसरे लोगोसे भी जो कि काग्रेससे अलहदा हो गये है, अनुरोध करना चाहिए कि वे फिर काग्रेसमे शामिल हो। जो असहयोग मुल्तवी हो जाये तो उनके लिए कोई वजह बाकी नही रहती कि वे काग्रेससे अलग रहे। मगर इस बातमे पहला कदम हम काग्रेसवालोको उठाना चाहिए। हमे प्रेमपूर्वक उन्हे काग्रेसमे शामिल होनेके लिए दावत देनी चाहिए और काग्रेसमे पुन प्रवेशका उनका रास्ता आसान बना देना चाहिए।

मैं समझता हूँ कि अब आप समझ गये होगे कि मैंने स्वराज्यवादियोके साथ समझौता क्यो किया।

विदेशी कपड़ेके बहिष्कारका फर्ज

आप लोगोने देखा होगा कि विदेशी कपडेका बहिष्कार बदस्तूर कायम रखा गया है। एक अग्रेज दोस्तकी भावनाका खयाल करके समझौतेमे बहिष्कार शब्दकी

जगह 'विदेशी कपडा न पहनना' रखा गया है। इसमे कोई शक नही कि बहिष्कार शब्दमे एक बुरी ध्वनि पाई जाती है। आम तौरपर इससे नफरतका भाव टपकता है। लेकिन जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, उस शब्दका उपयोग मैंने नफरतके मानीमे नही किया है। बहिष्कार अग्रेजी कपडेका नही बल्कि विदेशी कपडेका है। इस भावमे बहिष्कार सिर्फ एक हक ही नहीं बल्कि फर्ज भी है। यह फर्ज उतना ही अहम है जितना कि किसी गैर-मुल्कसे लाये गये पानीका बहिष्कार — अगर वह इस गरजसे मगाया जाये कि हिन्दुस्तानकी नदियोके पानीके बजाय उसका इस्तेमाल हो। लेकिन यह तो विषयान्तर हुआ जा रहा है।

जो बात मै आपसे कहना चाहता था वह तो यह है कि मेरे और स्वराज्यवादियोके दरम्यान हुए समझौतेमे विदेशी कपडेके बहिष्कारको सिर्फ कायम ही नही रखा गया है, बल्कि उसपर और भी जोर दिया गया है। मेरे नजदीक तो यह तमाम हिंसात्मक उपायोकी जगह ले सकनेवाला एक प्रभावकारी अहिंसक उपाय है। जिस तरह कि कई बाते, जैसे किसीको गाली देना, बुरी तरह पेश आना, झूठ बोलना, किसीको चोट पहुँचाना या खून करना, ये हिंसाभावकी निशानी है, उसी तरह शिष्टता, सौजन्य, सचाई आदि अहिंसा-भावके प्रतीक है। बस इसी तरह विदेशी कपडेका बहिष्कार भी मेरे लिए अहिंसाका प्रतीक है। अराजकतावादी लोगोके हिंसात्मक कार्योका उद्देश्य सरकारपर दबाव डालना है। लेकिन यह दबाव गुस्से और अदावतके भावोसे प्रेरित है और उसे एक किस्मका पागलपन कह सकते है। मेरा दावा है कि अहिंसात्मक तरीकोसे जो दबाव डाला जा सकता है वह उस दबावसे कही ज्यादा प्रभावकारी होता है, जो हिंसात्मक तरीकोसे डाला जा सकता है। और इसका कारण यह है कि वह सद्भाव और सौम्यतासे निष्पन्न होता है। विदेशी कपडेके बहिष्कारसे ऐसा ही दबाव पडता है। हमारे देशमे ज्यादातर विदेशी कपडा लकाशायरसे ही आता है और यह आता भी है बाकी सब चीजोसे सर्वाधिक मात्रामे। दूसरा स्थान चीनका है। ब्रिटेनका सबसे बडा स्वार्थ भारतके साथ होनेवाली लकाशायरके कपडेकी तिजारतपर ही केन्द्रित है। भारतीय किसान जिन कारणोसे बरबाद हुए है उनमे यह कारण सबसे बडा है। इसने उनको अपने सहायक धन्धेसे वचित करके उन्हे अशत बेकार बना दिया है। इसलिए अगर हिन्दुस्तानके कृषि-जीवियोको जिन्दा रखना है तो विदेशी कपडेका बहिष्कार एक जरूरी बात है। इसलिए योजना यह है कि किसानोको इस सस्ते और आकर्षक विदेशी कपडेको खरीदनेसे इनकार करनेके लिए ही तैयार न किया जाये, बल्कि उन्हे अपने अवकाशके समयमे रुई धुनना, सूत कातना, उस सूतको गाँवके बुनकरोसे बुनवाना और इस प्रकार तैयार की हुई खादीको पहनना सिखाकर विदेशी कपडेको और विदेशी कपडेको ही क्यो, भारतीय कारखानोके कपडेको भी खरीदनेमे खर्च होनेवाला पैसा बचानेके लिए तैयार किया जाये। इस तरह हाथ-कताई और बुनाई यानी खादीके जरिये किया गया विदेशी कपडेका बहिष्कार न सिर्फ किसानके रुपयेकी बचत ही करता है बल्कि कार्यकर्त्ताओको अव्वल दर्जेकी समाज-सेवा करनेका मौका देता है। यह देहातके लोगोके साथ हमारा सीधा सम्बन्ध जोड़ता है।

इसके जरिये हम उन्हें सच्ची राजनीतिक शिक्षा दे सकते हैं और उन्हें अपने पाँवपर खड़े होनेका और अपनी आवश्यकताएँ खुद पूरी करनेका सबक सिखा सकते हैं। इस प्रकार खादी कार्यका संगठन सहकारी समितियोंसे अथवा अन्य किसी प्रकारके ग्राम्य-संगठनसे कितने ही दर्जे बेहतर है। इसके अन्दर भारीसे-भारी राजनीतिक परिणाम छिपे हुए हैं, क्योंकि ऐसा करके हम ब्रिटेनके रास्तेसे सबसे बड़ा अनैतिक प्रलोभन दूर करते हैं। लंकाशायरके कपड़ेके व्यापारको मैं इसलिए अनैतिक कहता हूँ कि उसकी बुनियाद हिन्दुस्तानके करोड़ों खेतिहरोंकी तबाहीपर कायम की गई थी और वह अब भी उसीके बलपर जिन्दा है। और चूँकि एक बदी इन्सानको दूसरी बदियोंके लिए प्रेरित करती है, ब्रिटेनके उन बे-शुमार अनीतिमय कामोंकी जड़में, जिनकी अनैतिकता साफ-साफ साबित की जा चुकी है, यही एक अनीतिमय व्यापार है। ऐसी हालतमें अगर यह एक बड़ा प्रलोभन हिन्दुस्तान खुद ब्रिटेनके रास्तेसे अपनी कोशिशसे हटा दे तो इसका नतीजा हिन्दुस्तानके लिए नेक साबित होगा, ब्रिटेनके लिए नेक साबित होगा और चूँकि ब्रिटेन दुनियाकी सबसे बड़ी ताकत है, इसीलिए सारी मनुष्य जातिके लिए भी नेक साबित होगा।

मैं इस बातको नहीं मानता कि पहले वस्तुओंकी माँग होती है और फिर उनकी पूर्ति। बल्कि इसके खिलाफ नीति और धर्मका खयाल न रखनेवाले व्यापारी बनावटी तरीकोंसे माँगको बढ़ाते हैं और यदि राष्ट्र भी व्यक्तियोंकी तरह नीतिके नियमोंसे बँधे हुए हैं तो उन्हें उन लोगोंके कल्याणका लिहाज रखना जरूरी है, जिनकी जरूरतें वे पूरी करना चाहते हैं। उदाहरणार्थ, जिन्हें शराबकी लत पड़ गयी है उनके लिए शराब मुहैया करना किसी भी राष्ट्रके लिए अनुचित और अनीति-युक्त है। और यदि किसी देशमें बाहरी अनाज और वस्त्रके आयातसे खेतीकी पैदावार और कपड़ेका उत्पादन बन्द होता हो तथा इसके फलस्वरूप वहाँ बेकारी और गरीबी फैलती हो तो जो बात नशीली चीजोंके बारेमें लागू होती है वही अन्न और वस्त्रके सम्बन्धमें लागू होगी। कारण, बेकारी और गरीबी भी इन्सानके शरीर और आत्माको वैसा ही नुकसान पहुँचाती है जैसा कि नशीली चीजें। उत्साहका अभाव उत्तेजनाका ही प्रतिरूप है और इसलिए आखिरकार वैसा ही घातक, बल्कि कई बार तो उससे भी अधिक घातक साबित होता है, क्योंकि बेकारी या गरीबीसे उत्पन्न आलस्य और अनुत्साहको हमने अभी एक अनीति और पाप मानना नहीं सीखा है।

ब्रिटेनका फर्ज

ऐसी हालतमें मैं कहूँगा कि ग्रेट ब्रिटेनका यह फर्ज है कि वह अपने यहाँसे बाहर जानेवाली चीजोंकी तिजारतको हिन्दुस्तानके हितका समुचित विचार करके नियन्त्रित करे। इसी तरह हिन्दुस्तानका भी यह फर्ज है कि वह अपने यहाँ बाहरसे आनेवाली चीजोंको अपने हितका विचार करके नियन्त्रित करे। वह अर्थशास्त्र गलत है जो नैतिक सिद्धान्तोंकी उपेक्षा करता है। अर्थशास्त्रके क्षेत्रमें अहिंसा-धर्मके प्रवेशका इससे कम कोई अर्थ नहीं हो सकता कि अन्तर्राष्ट्रीय व्यापारके नियमनमें नैतिक मूल्यों-को पूरा महत्त्व दिया जाये। और मैं यह माननेको तैयार हूँ कि मेरी महत्त्वाकांक्षा

इससे कम नही कि भारतकी कोशिशोसे अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धोको नैतिक आधार पर प्रतिष्ठित किया जाये। मै अपना यह विश्वास नही छोड सकता कि सीमित रूपमे समाजगत अहिंसाका विकास भी सम्भव है। मै इस बातको नही मानता कि मनुष्य-स्वभावका झुकाव हमेशा नीचेकी तरफ ही होता है।

हाथ-कताई या खादीके जरिये विदेशी कपडेके सफल बहिष्कारसे हम केवल प्रथम कोटिके प्रचण्ड राजनीतिक परिणामकी ही आशा नही रखते, उससे यह अपेक्षा भी है कि हिन्दुस्तानके गरीबसे-गरीब लोगोको, स्त्रियो और पुरुषो, सभीको अपनी शक्तिका ज्ञान हो जायेगा ताकि देशकी आजादीके सग्राममे वे अपना पूरा हिस्सा लें।

विदेशी बनाम अंग्रेजी

अग्रेजी कपडेके या जैसा कि कई देशभक्त सुझाते है अग्रेजी मालके बहिष्कारमे हिंसाकी भावना तो स्पष्ट ही है, अत उसकी तो मै बात ही नही करता। किन्तु मैं समझता हूँ कि अब इतने विवेचनके बाद उसकी व्यर्थता बतानेकी जरूरत भी शायद ही रह गई है। मैं तो बहिष्कारकी बात सिर्फ हिन्दुस्तानके हितको ही दृष्टिमें रखकर कह रहा हूँ। हर किस्मके ब्रिटिश मालसे हमे नुकसान नही पहुँचता है। कुछ अग्रेजी चीजें तो, जैसे किताबे, हमे अपनी बौद्धिक या मानसिक तरक्कीके लिए आवश्यक होती है। अब रहा कपडा, सो सिर्फ अग्रेजी कपडा ही हमारे लिए हानिकर नही है, बल्कि तमाम विदेशी कपडा और केवल विदेशी कपडा ही क्यो, देशी मिलोका कपडा भी हमे नुकसान पहुँचाता है। साराश यह कि जो लाभ हाथ-कताई और खादी द्वारा किये गये बहिष्कारसे हासिल हो सकता है वह 'येन केन उपायेन' किये गये महज अग्रेजी कपडेके बहिष्कारसे हरगिज नही हो सकता। मगर यह तभी हो सकता है जब कि हम तमाम विदेशी कपडेका पूरा बहिष्कार कर दे। इस बहिष्कारका हेतु किसीको सजा देना नही है, उसकी जरूरत तो राष्ट्रकी हस्तीको कायम रखनेके लिए है।

आक्षेपोपर विचार

लेकिन आलोचक कहते है कि चरखेके पैगामने लोगोके दिलोमे घर नही किया, उसमे जोश पैदा करनेकी ताकत नही है, यह सिर्फ औरतोका पेशा है, इसके मानी मध्य युगकी दकियानूसी जीवन-पद्धतिकी ओर लौट जाना है। वे कहते हैं कि यह तो विज्ञानने जो शानदार प्रगति की है और यत्र जिसके प्रतीक है, उसे रोकनेकी एक फिजूल कोशिश है। मेरी नम्र रायमें हिन्दुस्तानको इस समय जोश-खरोश की नही, बल्कि ठोस काम करनेकी जरूरत है। करोडो लोगोके लिए तो जोश और ताकत दोनोका नुस्खा ठोस काम ही है। बात यह है कि अभीतक हमने चरखेको पूरी तौरपर आजमाया ही नही है। मुझे अफसोसके साथ कहना पडता है कि हममें से कइयोने तो अभी उसपर सजीदगीके साथ विचार भी नही किया है। यहाँतक कि अ० भा० का० कमेटीके भी सब सदस्योने समय-समयपर अपने ही द्वारा पास किये गये चरखा कातनेके प्रस्तावोपर अबतक अमल नही किया है। हममे से अधिकतर लोग तो

उसमे विश्वास ही नही करते। ऐसी हालतमे यह कहना न्यायकी दृष्टिसे ठीक नही है कि चरखेकी हलचल, उसके अन्दर जोश दिलानेकी कमीसे असफल हो गई है। और यह कहना कि चरखा महज औरतोका पेशा है — तथ्योसे आँख मूँदना है। आखिर सूत कातनेकी मिले क्या है? वे भी बहुत-से चरखोका एक सग्रह ही तो है। उन्हे पुरुष नही तो और कौन चलाते है? समय आ गया है कि हम इस भ्रमको छोड दे कि कुछ पेशे हम पुरुषोकी शानके खिलाफ है। सामान्य परिस्थितियोमे, बेशक चरखा कातना औरतोका ही काम होगा। मगर हमारी भावी सरकारको हमेशा कुछ आदमी इस कामपर नियुक्त करने होगे कि वे चरखेमे उसकी घरेलू धन्धेकी हैसियतको दृष्टिमे रखते हुए सुधार करते रहे। मै आपको यह भी बता दूँ कि जो सुधार चरखेकी बनावटमे आज आप पाते है वे मुमकिन न होते, अगर हम पुरुषोमे से कई लोग इस काममे अपनेको न लगाते और दिन-रात इसीकी धुनमे न लगे रहते।

यन्त्र

मै आपसे यह भी कहना चाहता हूँ कि यन्त्रोके बारेमे मेरे जो विचार बताये जाते है उनको आप अपने दिमागसे निकाल डाले। पहली बात तो यह है कि अहिंसामे मेरा विश्वास जिस हदतक है वह सारा-का-सारा राष्ट्रके स्वीकारार्थ पेश नही करता उसी तरह मै यन्त्रोके विषयमे अपने तमाम विचार देशके सामने पेश करनेकी कोशिश नही कर रहा हूँ। चरखा खुद भी यन्त्रकालका एक उत्कृष्ट नमूना है। मेरा सिर उसके अज्ञात आविष्कर्त्ताके प्रति रोज आदरसे झुक जाता है। मुझे सन्ताप तो इस बातपर होता है कि हिन्दुस्तानके इस एकमात्र घरेलू उद्योगको जो भूखकी बलासे, १,९०० मील लम्बे और १,५०० मील चौडे क्षेत्रमे फैले हुए लाखो घरोकी रक्षा करता था, अकारण और क्रूरतापूर्वक बरबाद कर दिया गया।

कताई-सदस्यता

अब आप इस बातपर ताज्जुब नही करेगे कि मै क्यो चरखेके पीछे पागल हो गया हूँ और न इस बातपर हैरान होगे कि मैने इसे सदस्यताकी शर्तमे क्यो शामिल किया है और क्यो स्वराज्य-दलकी तरफसे देशबन्धु दास और पण्डित मोतीलाल नेहरूने इसे मजूर किया है। अगर आज मेरा बस चले तो मै काग्रेसके सदस्यके रूपमे काग्रेसके रजिस्टरमे ऐसे एक भी व्यक्तिका नाम दर्ज न होने दूँ जो चरखा कातने पर रजामन्द न हो या जो हर मौकेपर खादीका लिबास न पहने। फिर भी स्वराज्य-दलने जितना-कुछ स्वीकार किया है उसके लिए मै उसका कृतज्ञ हूँ। शर्तमे जो ढिलाई बरती गयी है वह हमारी कमजोरी या विश्वासकी कमीके खातिर दी गयी रिआयत है। लेकिन इस रिआयतको उन लोगोके लिए, जिनका चरखे और खादीमे पूरा विश्वास है, अपनी कोशिशको और तेज करनेका प्रेरक कारण होना चाहिए।

कोई दूसरा सन्देश नहीं

मैने चरखेके बारेमे इतनी सविस्तार चर्चा इसलिए की है कि मेरे पास देशके लिए और कोई बेहतर या दूसरा सन्देश नही है। अगर हम सचमुच 'शान्तिमय और

उचित' उपायोसे ही स्वराज्य हासिल करना चाहते हो तो मेरे पास चरखेके सिवा कोई अन्य प्रभावकारी उपाय नही है। जैसा कि मैं पहले ही कह चुका हूँ, सिर्फ यही एक हथियार ऐसा है जिसे हिंसात्मक साधनोकी जगह सारा देश स्वीकार कर सकता है। मैं सविनय अवज्ञापर अब भी उसी तरह अटल हूँ। लेकिन जबतक कि हम अपने अन्दर विदेशी कपडेके बहिष्कारकी ताकत पैदा न कर ले, तबतक स्वराज्यके लिए सविनय अवज्ञाका प्रयोग ना-मुमकिन है। अब आप आसानीसे देख सकेगे कि अगर मेरे चरखा-सम्बन्धी विचार आपको स्वीकार न हो तो मैं काग्रेसके मार्ग-दर्शनके लिए किस तरह निकम्मा हो जाऊँगा। सच तो यह है कि मैं चरखेके मूलमें निहित सिद्धान्तकी जो व्याख्या करता हूँ उसे यदि आप गलत मानते हो तो अन्य कुछ मित्रोकी तरह आपका भी यह खयाल करना अनुचित न होगा कि मैं देशकी प्रगतिके मार्गमे बाधक हूँ। अगर आपके दिल और दिमाग इस सिद्धान्तको कबूल न करते हो तो मेरे नेतृत्वको नामजूर न करके आप अपने कर्त्तव्य-पालनमें चूकेंगे। कही ऐसा न हो कि फिर लोग यह कहे कि हम हिन्दुस्तानियोमे 'ना' कहनेकी ताकत और हिम्मत नही है, जैसा कि लॉर्ड विलिंगडनने एक बार कहा था और ठीक कहा था। आप सच मानिए कि अगर मेरी तजवीज आपको कुबूल न हो तो आपका उसे नामजूर कर देना स्वराज्य-प्राप्तिकी दिशामे एक कदम आगे बढना ही होगा।

हिन्दू-मुस्लिम एकता

हिन्दू-मुस्लिम एकता चरखेसे कम महत्त्व नही रखती है। वह तो हमारे राष्ट्रीय जीवनका आधार है। इस मसलेपर आपका ज्यादा समय लेना मैं जरूरी नही समझता। क्योकि स्वराज्य हासिल करनेके लिए उसकी जरूरतके प्राय सब लोग कायल है। 'प्राय' शब्दका प्रयोग मैंने जान-बूझकर किया है, क्योकि मैं जानता हूँ कि कुछ हिन्दू और मुसलमान ऐसे भी है जो हिन्दुस्तानमे अगर अकेले हिन्दुओं या अकेले मुसलमानोका राज्य कायम न हो सके तो ब्रिटेनके अधीन गुलामीकी मौजूदा हालतको तरजीह देंगे। खुशीकी बात है वे इने-गिने ही है।

मौलाना शौकत अलीकी तरह मैं भी बहुत दृढतापूर्वक यह मानता हूँ कि यह मौजूदा तनाजा एक चन्दरोजा बीमारी है। खिलाफत आन्दोलनने जिसमें हिन्दू और मुसलमान दोनो कन्धेसे-कन्धा भिडाकर लडे और उसके बाद शुरू हुए असहयोग आन्दोलनने गफलतकी नीदमे सोई हुई जनताको जगा दिया। इससे विशिष्ट वर्गोमें और सामान्य जनतामे एक नई चेतना प्रगट हुई है। दूसरी तरफ कुछ ऐसे भी खुद-गरज लोग थे जिन्हे असहयोगके उत्कर्पके दिनोमें निराश होना पडा था। अब असह-योगमें से नवीनताका आकर्पण निकल गया है तो उन्हे अवसर मिल गया है और वे दोनो कौमोकी धार्मिक अन्धता और खुदगर्जीसे फायदा उठाकर अपना उल्लू सीधा कर रहे है। इसका कुफल हम पिछले दो वर्षोके इतिहासमें स्पष्ट देख सकते है। मजहबको उन्होंने उपहासकी वस्तु बना दिया है। छोटी-छोटी निकम्मी बातोको बढाकर मजहबी उसूलोके दर्जेपर चढा दिया है और मजहबी दीवाने यह दावा पेश करने लगे है कि उनका पालन करना हर सूरतमे लाजिमी है। लोगोमे झगडे करानेके लिए

आर्थिक और राजनीतिक कारणोका उपयोग किया गया है। कोहाटमें तो ये हरकतें चरम सीमाको पहुँच गईं। स्थानीय हाकिमोकी हृदयहीन उपेक्षाने उस दुर्घटनाको और भी दुखदायी बना दिया। उसके कारणोकी छानबीन करने या किसीको कुसूरवार ठहरानेमे मैं वक्त सर्फ नही करना चाहता। मैं ऐसा चाहूँ भी तो मेरे पास इसके लिए काफी मसाला नही है। बस इतना ही कहना काफी होगा कि कोहाटके हिन्दू अपनी जान बचानेके लिए वहाँसे भाग निकले। कोहाटमें मुसलमान बहुत भारी तादादमें बसते है और एक विदेशी सत्ताके अधीन जितना सम्भव है उस हदतक वहाँ उनका प्रभावकारी राजनीतिक नियन्त्रण भी है। इसलिए अब यह दिखाना उनका काम है कि हिन्दू भी उनकी बहुसख्याके बीच उतने ही सुरक्षित है जितने कि अगर कोहाट-मे तमाम हिन्दू ही बसे होते तो वे होते। कोहाटके मुसलमानोको तबतक चैन न लेना चाहिए जबतक कि वे एक-एक शरणार्थी हिन्दूको कोहाटमें वापस नही ले जाते। मैं उम्मीद करता हूँ कि हिन्दू सरकारके बिछाये जालमे न फँसेंगे और दृढताके साथ तबतक कोहाट लौटनेसे इनकार करते रहेगे जबतक कि वहाँके मुसलमान उनके जानो-मालकी हिफाजतका पूरा-पूरा यकीन दिलाकर उन्हे न बुलावे।

हिन्दू लोग सिर्फ उसी हालतमे मुसलमानोकी भारी आबादीमे रह सकते है जबकि मुसलमान मित्रता और बराबरीके आधारपर उन्हे ससम्मान बुलाने और अपने पास रखनेके लिए तैयार हो और यही बात मुसलमानोके लिए भी लागू होती है। अगर उनकी सख्या कम हो और हिन्दुओकी ज्यादा हो तो उन्हे भी सम्मान-पूर्वक जीवन बितानेके लिए हिन्दुओके दोस्ताना सलूकपर ही अपना दारोमदार रखना होगा। कोई सरकार चोर-डाकुओसे तो अपनी प्रजाकी रक्षा कर सकती है। यदि एक जाति दूसरी सारी जातिका सम्पूर्ण बहिष्कार कर दे तो उससे उसकी रक्षा हमारी अपनी सरकार भी नही कर सकेगी। सरकारे कभी-कभी पैदा हो जानेवाली असामान्य परिस्थितियोसे निपट सकती है, किन्तु जब लडाई-झगडे जीवनकी सामान्य परिस्थिति बन जाये तब ऐसी हालतको गृह-युद्ध कहेगे और ऐसी हालतमें दोनो दल-वाले आपसमे लडकर ही निपटारा कर सकते है। मौजूदा सरकार एक विदेशी सर-कार है, उसका शासन वस्तुत प्रच्छन्न रूपमे सैनिक शासन ही है और इसलिए वह अपने पास इतना साजो-सामान तैयार रखती है कि जिसके बलपर वह, हम उसके खिलाफ चाहे जितनी ताकत जुटाये, अपनी हिफाजत कर सकती है। और इसलिए उसकी इतनी ताकत भी जरूर है कि अगर वह चाहे तो हमारे साम्प्रदायिक झगडोको भी रोक सकती है। मगर लोकप्रिय होनेका थोडा भी दावा रखनेवाली किसी स्वराज्य-सरकारको युद्ध-स्तरपर न तो सगठित किया जा सकता है और न कायम रखा जा सकता है। स्वराज्य-सरकारका अर्थ है ऐसी सरकार जिसकी स्थापना हिन्दुओ, मुसलमानो और अन्य लोगोने स्वेच्छापूर्वक आपसमे मिलकर की हो। अगर हिन्दू और मुसलमान स्वराज्य चाहते हो तो उन्हे अपने भेद-भाव आपसमें मिल-जुलकर तय करने होगे।

दिल्लीमे जो एकता-सम्मेलन हुआ था उसने हमारे साम्प्रदायिक मतभेदोको तय करनेका मार्ग प्रशस्त कर दिया है। और सर्वदलीय परिषद्की समितिसे यह उम्मीद

की जाती है कि वह और बातोके साथ महज हिन्दुओ और मुसलमानोके ही नही, बल्कि देशके तमाम वर्गो, जातियो और सम्प्रदायोके राजनीतिक मतभेदोको हल करनेका कोई व्यावहारिक और उचित हल खोज निकालेगी। इसमे हमारा लक्ष्य यह होना चाहिए कि साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्वकी पद्धति जितनी जल्दी हो सके समाप्त कर दी जाये। मतदाता मण्डल मिले-जुले हो और वे सिर्फ गुण और योग्यताके आधार पर निष्पक्ष होकर अपने प्रतिनिधियोको चुने। इसी तरह हमारी नौकरियोमे भी निष्पक्ष भावसे सबसे ज्यादा योग्य स्त्री-पुरुष ही भरती किये जाने चाहिए। लेकिन जबतक कि वह दिन नही आता और जातिगत द्वेष और पक्षपातके भाव अतीतकी वस्तु नही बन जाते तबतक जो अल्प-सख्यक समुदाय बहुसख्यक समुदायोकी नीयतको शककी नजरसे देखते हो, उन्हे अपनी मर्जीके मुताबिक चलनेकी छूट होनी चाहिए और बहुसख्यक समुदायोको इस बारेमे स्वार्थ-त्यागका उदाहरण पेश करना चाहिए।

अस्पृश्यता

अस्पृश्यता स्वराज्यके मार्गमे दूसरी बाधा है। स्वराज्यकी प्राप्तिके लिए जैसी अनिवार्य आवश्यकता हिन्दू-मुस्लिम एकताकी है वैसी ही अस्पृश्यता-निवारणकी भी है। यह प्रश्न मुख्यत हिन्दुओसे सम्बन्धित है और जबतक हिन्दू दलित वर्गोको उनकी स्वतन्त्रता नही दे देते तबतक न तो उन्हे स्वराज्य माँगनेका कोई हक है और न वे उसे पा ही सकते है। उन्हे दबाकर हिन्दू स्वय अधोगतिको प्राप्त हुए है। इतिहासकार हमे बताते है कि अग्रेज आक्रमणकारियोने हमसे जैसा व्यवहार किया है, यदि उससे बुरा नही तो बिलकुल वैसा ही बुरा व्यवहार आर्य आक्रमणकारियोने भारतके मूल वासियोसे किया था। यदि ऐसी बात है तो हमारी मौजूदा गुलामी हमारे द्वारा अस्पृश्य वर्गके निर्माणका उचित दण्ड ही है। इस कलकको हम जितनी जल्दी धो डाले हिन्दुओके लिए उतना ही हितकर होगा। किन्तु हमारे धर्माचार्य कहते है कि अस्पृश्यता तो विधिका विधान है। मै यह दावा करता हूँ कि मुझे हिन्दू-धर्मकी कुछ जानकारी है। मुझे निश्चय है कि हमारे धर्माचार्योका यह कथन ठीक नही है। यह कहना ईश्वरकी निन्दा करना है कि ईश्वरने मानव-जातिके एक वर्गको अस्पृश्य बनाया है और जो हिन्दू कांग्रेसमे है, उनका यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वे इस भेदभावकी दीवारको जल्दीसे-जल्दी तोड दे। वाइकोमके सत्याग्रही हमें मार्ग दिखा रहे हैं। वे नम्रता और दृढतासे अपनी लडाई चला रहे है। उनमे धैर्य, साहस और आस्था है। जिस आन्दोलनमे ये गुण प्रकट होते हो वह अदम्य बन जाता है।

किन्तु आजकल राजनीतिक स्वार्थकी पूर्तिके लिए दलित वर्गोके दुरुपयोगकी जो वृत्ति दिखाई देती है, मै अपने हिन्दू भाइयोको उससे सावधान करना चाहता हूँ। अस्पृश्यता-निवारणका कार्य एक प्रायश्चित्तका कार्य है। यह प्रायश्चित्त करना हिन्दुओका हिन्दू धर्मके और अपने प्रति कर्त्तव्य है। जरूरत अस्पृश्योको शुद्ध करनेकी नहीं है बल्कि कथित उच्च वर्णोको शुद्ध करनेकी है। अस्पृश्योमें ऐसी कोई बुराई नही है जो केवल उन्हीमे पाई जाती हो। वे दूसरोसे अधिक मैले-कुचैले और गन्दे भी नही रहते। बात यह है कि हम बहुत घमण्डी है और हमारे इस घमण्डने हमें अपने

दोषोके प्रति अन्धा बना दिया है। इसी कारण हमे दलित भाइयोके, जिन्हे हमने कुचला है और अब भी कुचल रहे है, छोटे दोष भी बडे दिखाई देते है। राष्ट्रोकी तरह धर्म भी काँटेपर तोले जा रहे है। ईश्वरकी कृपा और ईश्वरीय ज्ञानपर किसी एक प्रजाति या राष्ट्रका इजारा नही है। वे तो जो ईश्वरकी भक्ति करते है, उन सभीको मिलते है। जिस धर्म और राष्ट्रका विश्वास, अन्याय, असत्य अथवा हिंसामें है, वह धर्म और राष्ट्र इस पृथ्वी-तलसे मिट जायेगा। ईश्वर प्रकाश है, अन्धकार नही। ईश्वर प्रेम है, घृणा नही। ईश्वर सत्य है, असत्य नही। ईश्वर ही महान् है। उसके बनाये हम सब प्राणी धूलके समान तुच्छ है। हमे विनम्र बनना चाहिए और यह मानना चाहिए कि इस पृथ्वीपर ईश्वरके बनाये हुए तुच्छसे-तुच्छ प्राणीके लिए स्थान है। कृष्णने चिथडे पहने हुए सुदामाका अनुपम सम्मान किया था। प्रेम धर्म अथवा त्यागका मूल है और यह नश्वर शरीर अभिमान अथवा अधर्मका मूल है, यह तुलसीदासजीकी उक्ति है।[1] हमे स्वराज्य मिले या न मिले, हिन्दुओको तो आत्मशुद्धि करनी ही होगी। तभी वे वैदिक-धर्मके तत्त्वोके पुनरुज्जीवनकी और उन्हे वास्तविक रूप देनेकी आशा कर सकते है।

स्वराज्यकी योजना

किन्तु चरखा, हिन्दू-मुस्लिम एकता और अस्पृश्यता-निवारण तो उद्देश्यकी सिद्धिके साधन-मात्र है। हम उद्देश्यको नही जानते। मेरे लिए तो साधनको जानना ही पर्याप्त है। मेरे जीवन-दर्शनमे साधन और साध्यमे भेद नही है, जो साधन है वही साध्य भी है। किन्तु बाबू भगवानदास कहते है कि लोगोको उद्देश्यका अनिश्चित नही, बल्कि निश्चित ज्ञान होना चाहिए, और जैसा कि मै जाहिर कर चुका हूँ, मुझे उनका यह विचार मान्य है। सारा भारत जिस स्वराज्यको लेना चाहता है, और जिसके लिए उसे लडना चाहिए, लोगोंको उस स्वराज्यकी पूरी परिभाषा अथवा योजनाका ज्ञान होना चाहिए। सौभाग्यसे सर्वदलीय परिषद्ने जो समिति नियुक्त की है, उसको यह काम सौप दिया गया है। हमे यह आशा करनी चाहिए कि यह समिति एक ऐसी योजना तैयार कर सकेगी जो सब दलोको मान्य होगी। क्या मै इस समितिके विचारार्थ निम्न मुद्दे रख सकता हूँ?

१. सदस्यताकी योग्यता न तो सम्पत्ति होनी चाहिए और न पद, बल्कि ऐसा शारीरिक श्रम होना चाहिए जैसा उदाहरणार्थ काग्रेसकी सदस्यताके लिए सुझाया गया है। शैक्षणिक अथवा साम्पत्तिक कसौटी भ्रामक सिद्ध हुई है। जो लोग सरकारमें और राज्यके कल्याणमे भाग लेना चाहते है, उन सबको शारीरिक श्रमसे अवसर मिलता है।

२. विनाशकारी सैनिक खर्च घटा देना चाहिए और सामान्य समयमें जीवन और सम्पत्तिकी रक्षाके लिए जितना रखना आवश्यक हो उतना ही रखना चाहिए।

१. दया धरमको मूल है, पाप मूल अभिमान।

३. न्याय-वितरणकी व्यवस्था सस्ती होनी चाहिए और इस उद्देश्यको ध्यानमें रखकर अपीलकी अन्तिम अदालत लन्दनमें नहीं, बल्कि दिल्लीमें होनी चाहिए। दीवानी मुकदमोंमें वादियों और प्रतिवादियोंको ज्यादातर अपने मुकदमे पंच-फैसलेके लिए सौंपने-पर मजबूर किया जाना चाहिए। इन पंचायतोंके फैसले भ्रष्टाचारके मामलों अथवा कानूनके स्पष्ट दुरुपयोगके मामलोंको छोड़कर अन्तिम होने चाहिए। बीचकी अदालतोंकी संख्या अधिक नहीं होनी चाहिए। प्रमाण-विधि (केस लॉ) खतम होनी चाहिए और सामान्य प्रक्रिया सरल बना दी जानी चाहिए। हमने अंग्रेजोंकी बोझीली और जीर्ण-शीर्ण प्रक्रियाकी आँख मूँदकर नकल की है। उपनिवेशोंके लोग इस प्रक्रियाको सरल बनाते जा रहे हैं, जिससे वादियों और प्रतिवादियों — दोनोंके लिए अपने मुकदमोंकी पैरवी करना आसान हो जाये।

४. शराबसे और नशीली चीजोंसे होनेवाली आमदनी बन्द कर दी जानी चाहिए।

५. असैनिक और सैनिक सेवाओंके वेतन देशकी सामान्य अवस्थाको देखते हुए नीचे स्तरपर निर्धारित किये जाने चाहिए।

६. प्रान्तोंका विभाजन नये सिरेसे भाषाके आधारपर किया जाना चाहिए और प्रत्येक प्रान्तको अपने आन्तरिक विकास और शासनके मामलोंमें यथासम्भव अधिकसे-अधिक स्वतन्त्रता दी जानी चाहिए।

७. विदेशियोंको दिये गये सारे इजारोंकी जाँचके लिए एक आयोग नियुक्त किया जाये और उस आयोगकी जाँचके परिणामोंको ध्यानमें रखते हुए न्यायपूर्वक प्राप्त समस्त निहित हकोंके संरक्षणका पूरा आश्वासन दिया जाये।

८. देशी राज्योंके राजाओंको उनके दर्जेके सम्बन्धमें पूरा आश्वासन दिया जाना चाहिए। केन्द्रीय सरकार इसमें किसी प्रकारकी बाधा नहीं डालेगी। किन्तु इन राज्योंके उन प्रजाजनोंको, जिन्होंने दण्ड विधानके विरुद्ध कोई अपराध न किया हो, स्वराज्य-प्राप्त भारतमें आश्रय लेनेका अधिकार रहे।

९. सब मनमाने अधिकार खतम किये जायें।

१०. ऊँचेसे-ऊँचे स्थान उन लोगोंके लिए जो अन्य प्रकारसे योग्य हों, खुले होने चाहिए। शासनिक और सैनिक नौकरियोंकी परीक्षा भारतमें हो।

११. विभिन्न सम्प्रदायोंको पूरी धार्मिक स्वतन्त्रता हो। लेकिन इस शर्तके साथ कि वे एक-दूसरेके प्रति सहिष्णुताका बरताव करें।

१२. प्रान्तीय सरकारों, विधानसभाओं और न्यायालयोंकी सरकारी भाषा एक निश्चित कालके भीतर उस प्रान्तकी देशी भाषा बना दी जाये; अपीलकी अन्तिम अदालत — प्रिवी कौंसिल — की भाषा हिन्दुस्तानी हो; उसकी लिपि देवनागरी अथवा फारसी हो। केन्द्रीय सरकार और केन्द्रीय विधानसभाकी भाषा भी हिन्दुस्तानी हो। राष्ट्रोंके बीच कूटनीतिकी भाषा अंग्रेजी रहे।

मैं जैसा स्वराज्य चाहूँगा, उसकी कुछ-एक शर्तोंकी एक मोटी रूप-रेखा मैंने ऊपर बताई है। हो सकता है आप लोगोंको लगे कि यह तो अनर्गल कल्पना है। फिर भी मेरा विश्वास है कि आप लोग उसपर हँसेंगे नहीं। मैंने जिन बातोंका उल्लेख किया है उनको लेने अथवा कार्य-रूप देनेकी शक्ति आज हममें न हो।

किन्तु क्या उनको लेने या करनेकी इच्छा-शक्ति हममे है? हमारे मनमे कमसे-कम उसकी इच्छा तो पैदा होनी चाहिए। यह विषय काल्पनिक होनेके कारण अत्यन्त लुभावना है। इसे समाप्त करनेसे पहले स्वराज्यकी योजना बनानेवाली समितिको मै यह आश्वासन दे दूं कि मै यह नही चाहता कि समिति मेरे सुझावोंपर अन्य किसी भी व्यक्तिके सुझावोकी अपेक्षा अधिक ध्यान दे। मैंने अपने भाषणमे उनको केवल इस विचारसे सम्मिलित कर लिया है कि इस तरह उनका प्रचार अन्यथा कदाचित् जितना होता उसकी अपेक्षा अधिक हो सकेगा।

स्वतन्त्रता

इस रूप-रेखामे यह बात मान ली गई है कि ब्रिटेनसे हमारा सम्बन्ध पूर्ण सम्मानजनक और पूरी तरह समान शर्तोपर कायम रहेगा। किन्तु मै जानता हूँ कि काग्रेस-जनोमे एक ऐसा वर्ग है जो हर हालतमे ब्रिटेनसे पूर्णत स्वतन्त्र होना चाहता है। यह वर्ग बराबरीकी साझेदारी भी नही रखना चाहता। मेरी रायमें ब्रिटिश सरकार जो-कुछ कहती है, वैसा ही यदि करना भी चाहती है और हमे समान बनानेमे सच्चे दिलसे सहायता देना चाहती है तो ब्रिटेनसे पूर्णत सम्बन्ध तोड लेनेकी अपेक्षा यह अधिक बड़ी सफलता होगी। इसलिए मैं साम्राज्यके भीतर स्वराज्य लेनेका उद्योग करना चाहता हूँ, किन्तु यदि ब्रिटेनके दोषके कारण उससे सम्बन्ध तोड लेना आवश्यक हुआ तो मै पूर्णत सम्बन्ध तोडनेमे भी नही झिझकूँगा। यदि ऐसा हो तो मैं ब्रिटेनसे अलग होनेकी जिम्मेदारी अग्रेज लोगोपर ही डालूँगा। इस समय ससारके ज्यादा समझदार लोग चाहते है कि ऐसे पूर्ण स्वतन्त्र राज्य न हो जो एक दूसरेसे लड़ते रहे, बल्कि मित्रताके आधारपर अन्योन्याश्रयी राज्योका सघ बनाया जाये। यह स्थिति दूर हो सकती है। मैं अपने देशके लिए कोई बडा दावा नही करना चाहता। किन्तु यदि हम स्वतन्त्रताकी अपेक्षा सबके साथ उक्त आधारपर सहयोगकी तैयारी दिखाये तो यह कोई बहुत बडा अथवा असम्भव दावा नही है। यह बात कहनी है तो ब्रिटेन ही कहे कि वह भारतसे सच्ची मित्रताका सम्बन्ध नही रखना चाहता। मै यह चाहता हूँ कि स्वतन्त्रतापर आग्रह किये बिना हम पूर्ण स्वतन्त्रताकी शक्ति हासिल करे। जबतक ब्रिटेन यह कहता है कि उसका उद्देश्य भारतको साम्राज्यके भीतर पूर्ण समानता देना है तबतक मै जो भी योजना बनाऊँगा उसमे मैत्रीकी बात रहेगी, मैत्रीको छोडकर स्वतन्त्रताकी नही। मै प्रत्येक काग्रेस-जनसे अनुरोध करना चाहता हूँ कि वह हर हालतमे स्वतन्त्रताका आग्रह न करे। इसका कारण यह नही कि स्वतन्त्रता लेना कुछ असम्भव है, बल्कि इसका कारण यह है कि जबतक यह बात बिलकुल स्पष्ट नही हो जाती कि ब्रिटेन जो-कुछ कहता है उसके बावजूद वह वास्तवमे हमे गुलाम रखना चाहता है तबतक ऐसा करना नितान्त अनावश्यक है।

स्वराज्यवादी दल

यहाँतक तो मैंने अपने और स्वराज्यवादियोके बीच हुए समझौतेकी शर्तो तथा उससे उठनेवाले सवालोपर अपने विचार प्रकट किये। स्वराज्यवादी दलको काग्रेसमे

जो बराबरीका दरजा दिया गया है, उसके बारेमे कुछ ज्यादा कहनेकी जरूरत नही। मै इस स्थितिको बचा सकता तो बडा अच्छा होता — इसलिए नही कि स्वराज्यवादी दल इसके लायक नही है, बल्कि इसलिए कि कौंसिल प्रवेशके सम्बन्धमे उसके विचारसे मै सहमत नही हूँ। लेकिन अगर मेरे लिए यह जरूरी है कि मै कांग्रेसमे रहूँ और उसका नेतृत्व करूँ तो मेरे पास इसके सिवा कोई चारा नही कि जो बाते मेरी आँखोके सामने मौजूद है, उनको स्वीकार करके चलूं। मेरे लिए यह बहुत आसान बात थी कि मै कांग्रेससे निकल जाऊँ या अध्यक्ष बननेसे इनकार कर दूं। मगर मैने सोचा और अब भी सोचता हूँ कि ऐसा करना देशके हकमे अच्छा नही होगा। कांग्रेसमे स्वराज्यवादी दलका बहुमत चाहे न हो किन्तु कमसे-कम एक अल्पमत-पक्षके रूपमें तो उसकी स्थिति काफी मजबूत है और दिन-दिन उसका जोर बढता जा रहा है। इसलिए अगर मुझे यह मजूर नही था कि उसके दर्जेके सवालपर कांग्रेसमे मत-विभाजन हो तो मै उसकी शर्तोको स्वीकार करनेके लिए मजबूर था, बशर्ते कि वे मेरी अन्तरात्माको अमान्य न हो। मेरी रायमे वे शर्तें बेजा नही है। स्वराज्यवादी अपनी नीतिको सफल बनानेके लिए कांग्रेसके नामका उपयोग करना चाहते है। अब एक ऐसा तरीका खोजना था कि जिससे एक ओर उनका काम निकले और दूसरी ओर अपरिवर्तनवादियोको उनकी नीतिके साथ बँधना न पडे। इसका एक तरीका यह था कि उनको अपनी नीतिकी रचना करने और उसको लागू करनेके लिए काम करने और पैसा जुटानेकी पूरी सत्ता और जिम्मेदारी दे दी जाये। पूरी कांग्रेस अपने सिर कुछ जिम्मेदारियाँ लिये बिना उस नीतिका सचालन नही कर सकती थी। और चूंकि मै यह जिम्मेवारी अपने ऊपर नही ले सकता था, और लगता है, कोई भी अपरिवर्तनवादी ऐसा नही कर सकता, इसलिए मै उनकी नीतिकी रचना करनेमें शरीक नही हो सकता था। इसके अलावा जिस नीतिको मेरा सम्पूर्ण हृदय स्वीकार नही करता, ऐसी नीतिकी रचना भी मै कैसे कर सकता था? और हृदय तो उसी चीजको स्वीकार कर सकता है, जिसमे आदमीका विश्वास हो। मै जानता हूँ कि एक स्वराज्यवादी दलको ही विधानसभामें अपने कार्यक्रमको चलानेके लिए कांग्रेसके नामका उपयोग करनेकी सत्ता देनेसे कांग्रेसमें शामिल होनेको इच्छुक बाकी दलोकी स्थिति अटपटी हो जाती है। लेकिन मै समझता हूँ कि इसमे कोई छुटकारा न था। स्वराज्यवादी दलसे यह उम्मीद नही की जा सकती कि वह अपनी वर्तमान सुविधाजनक स्थितिका त्याग कर दे। आखिरकार वह इस स्थितिका उपयोग अपने स्वार्थके लिए नही, बल्कि देशकी सेवाके लिए ही तो करना चाहता है। सब दलोकी यही एक महत्त्वाकाक्षा है और हो सकती है, दूसरी नही। इसलिए मै उम्मीद करता हूँ कि दूसरे तमाम दलोके लोग कांग्रेसमे शरीक होकर उसके भीतरसे देशकी राजनीतिपर अपना असर डालनेके लिए काम करेगे। डा० बेसेटने इस मामले-में कदम आगे बढा कर औरोको रास्ता दिखाया है। मुझे मालूम है कि ऐसी बहुत-सी चीजे है जिन्हे वे और तरहसे कराना चाहती, मगर वे इस आशासे कांग्रेसमें शामिल होकर सन्तुष्ट है कि उसके अन्दर काम करके वे मतदाताओको अपने मतका

कायल कर सकेगी। मेरी तुच्छ सम्मतिमे अपरिवर्तनवादी भी शुद्ध हृदयसे इस समझौतेके हकमे राय दे सकते है। जिस राष्ट्रीय कार्यक्रमपर देशके तमाम दलोको मिलकर काम करना है, वह सिर्फ खादी, हिन्दू-मुस्लिम एकता और हिन्दुओके बीच अस्पृश्यता-निवारणका ही कार्यक्रम है। और क्या यही वे बाते नही है, जिन्हे वे सब करना चाहते है?

विशुद्ध सामाजिक सुधार?

इसपर कुछ लोगोका कहना है कि इस कार्यक्रमके मजूर करनेसे काग्रेस विशुद्ध रूपसे एक समाज-सुधारक सस्था बन जायेगी। मै इस रायसे सहमत नही हूँ। स्वराज्यके लिए जो-जो बाते निहायत जरूरी है, वे महज सामाजिक बाते नही है। उनका महत्त्व उससे कही अधिक है और काग्रेसको उन्हे जरूर अपनाना चाहिए। इसके अलावा, यह तो किसीने नही कहा है कि काग्रेस अपनी तमाम शक्ति हमेशा सिर्फ इसी काममे लगाती रहे। हाँ, यह मशा अवश्य है कि काग्रेस आगामी वर्षमे अपनी तमाम शक्ति रचनात्मक कार्यमे, जिसे मैने आन्तरिक विकासका कार्य कहा है, लगा दे।

और यह बात भी नही कि काग्रेसको इस समझौतेमे जिन रचनात्मक कार्योका उल्लेख है सिर्फ उन्हीको हाथमे लेना चाहिए। जिन कार्योकी चर्चा मै करने जा रहा हूँ वे भी बडे महत्त्वके है, लेकिन चूँकि उनके बारेमे कोई मतभेद नही है और वे स्वराज्य-प्राप्तिके लिए उक्त तीन कार्योकी तरह नितान्त आवश्यक नही है, इसलिए समझौतेमे उनका जिक्र नही किया गया है।

राष्ट्रीय शालाएँ

ऐसा एक कार्य है, राष्ट्रीय शालाओको कायम रखना। शायद जनताको यह बात मालूम न हो कि खादीके बाद जिस काममे सबसे अधिक सफलता मिली है, वह राष्ट्रीय शिक्षण सस्थाओको चलानेका काम ही है। जबतक थोडे भी विद्यार्थी रहेगे, ये सस्थाएँ बन्द नही की जा सकती। ऐसे स्कूलो और कालेजोको रखना प्रत्येक प्रान्तको अपने लिए प्रतिष्ठाका प्रश्न बना लेना चाहिए। असहयोग मुलतवी कर देनेका इन सस्थाओपर कुछ भी बुरा असर न होना चाहिए। बल्कि इन्हे कायम रखने और इनकी स्थिति मजबूत बनानेके लिए पहलेसे भी ज्यादा कोशिश होनी चाहिए। अधिकाश प्रान्तोके अपने-अपने राष्ट्रीय स्कूल और कालेज है। अकेले गुजरातमे एक ऐसा राष्ट्रीय विद्यापीठ है जिसपर सालाना १,००,००० रुपया खर्च किया जाता है और जिसके अधीन ३ कालेज और ७० स्कूल चल रहे है, जिनमे ९००० विद्यार्थी है। अहमदाबादमे उसने अपने लिए जमीन भी खरीद ली है और मकान बनवानेमे २,०५,३२३ रुपये खर्च कर चुका है। सारे देशमे चुपचाप सबसे अच्छा काम इन असहयोगी विद्यार्थियोने ही किया है। उन्होने बहुत अधिक और उच्च कोटिका त्याग किया है। दुनियवी खयालसे शायद उन्होने अपने शानदार भविष्यको नष्ट कर दिया है। पर मै उनसे कहूँगा कि राष्ट्रीय दृष्टिसे उन्हे नुकसानके बनिस्बत फायदा ही अधिक हुआ है। उन्होने सरकारी विद्यालयोको इसलिए छोडा कि उन्हीके जरिये पजाबमे हमारे देशके युवकोको अपमानित और तिरस्कृत किया गया था। इन्ही सस्थाओमे हमारी गुलामीकी जजीरकी

पहली कड़ी तैयार की जाती है। इधर हमारी राष्ट्रीय शिक्षण संस्थाएँ, चाहे उनका प्रबन्ध और संचालन कितना भी ढीला हो, उन कारखानोंकी तरह है जहाँ हमारी आजादीके पहले हथियार ढाले जाते हैं। आखिरकार इन राष्ट्रीय संस्थाओंमें पढनेवाले लड़कों और लड़कियोंपर ही तो हमारी भविष्यकी आशा टिकी हुई है। इसलिए मैं इन राष्ट्रीय संस्थाओंको कायम रखना प्रान्तोंकी सबसे पहली जिम्मेवारी मानता हूँ। लेकिन ये राष्ट्रीय संस्थाएँ तभी सच्ची राष्ट्रीय संस्थाएँ हो सकती है जब वे हिन्दू-मुस्लिम एकताको उत्तेजन देनेवाले केन्द्र बन जायें। इसी तरह उन्हे हिन्दू लड़कों और लड़कियोंमें अस्पृश्यताको हिन्दूधर्मका कलंक और मानवताके प्रति अपराध माननेकी भावना जागृत और पोषित करनी चाहिए। इन्हे कुशल कतैये और बुनकर तैयार करनेवाले प्रशिक्षण केन्द्रोंका काम करना चाहिए। अगर चरखे और खादीकी शक्तिमें कांग्रेसका विश्वास कायम रहता है, तो इन संस्थाओंसे क्रमशः कताईका एक पूरा शास्त्र तैयार कर देनेकी आशा रखना भी अनुचित न होगा। इन्हे खादी तैयार करनेवाले कारखानेका भी काम करना चाहिए। इसका मतलब यह नही कि इन लड़के-लड़कियोंको किसी प्रकारकी किताबी शिक्षा न दी जाये। पर मैं ऐसा अवश्य मानता हूँ कि दिमागी तालीमके साथ-साथ हाथ और हृदयकी शिक्षा भी मिलनी चाहिए। किसी भी राष्ट्रीय विद्यालयकी खूबी और उपयोगिताकी परख उसके छात्रोंकी महान् साहित्यिक उपलब्धियोंसे नही, बल्कि इस बातसे होगी कि उसके छात्रोंमे राष्ट्रीय चरित्रका निर्माण कितना है, उनमें धुनकी, चरखा और करघा चलानेकी कितनी निपुणता आई है। इसलिए एक ओर जहाँ मैं इस बातके लिए बड़ा उत्सुक हूँ कि कोई भी राष्ट्रीय विद्यालय बन्द न हो, वहाँ दूसरी ओर मुझे उस पाठशालाको बन्द करनेमें जरा भी हिचकिचाहट न होगी, जो गैर-हिन्दू लड़कोंको भरती करनेकी ओरसे उदासीन हो या जिसने अछूत बालकोंके लिए अपने दरवाजे बन्द कर रखे हो अथवा जिसमें धुनना और कातना शिक्षाके अनिवार्य विषय न हों। अब वह समय चला गया जब हम पाठशालाके साइन-बोर्ड पर सिर्फ "राष्ट्रीय" शब्द पढकर और यह जानकर कि उसका किसी भी सरकारी विद्यालयसे सम्बन्ध नहीं है और उनकी व्यवस्थामें सरकारका कुछ भी हाथ नहीं है, सन्तोष मान सकते हैं। मुझे यहाँ इस बातकी ओर भी इशारा कर देना चाहिए कि बहुतेरी राष्ट्रीय संस्थाओंमें आज भी देशी भाषाओं तथा हिन्दुस्तानीके प्रति उपेक्षा रखनेकी प्रवृत्ति देखी जाती है। बहुत-से शिक्षक देशी भाषाओं या हिन्दुस्तानीके माध्यमसे शिक्षा देनेकी आवश्यकता समझ नहीं पाये हैं। मुझे यह देखकर बड़ी खुशी होती है कि श्री गंगाधररावने राष्ट्रीय शिक्षा-शास्त्रियोंकी एक बैठकका आयोजन किया है, जिसमें मेरी बताई अनेक बातोंके सम्बन्धमें सब एक-दूसरेको अपने-अपने अनुभव बतायेंगे और सम्भव हुआ तो शिक्षा और कार्यके लिए एक सर्वसामान्य योजना भी तैयार करेंगे।

बेकार असहयोगी

राष्ट्रके आह्वानपर जिन वकीलोंने वकालत छोड़ दी और जिन शिक्षकों और दूसरे सरकारी नौकरोंने अपनी सरकारी नौकरियाँ छोड़ दी, मैं समझता हूँ, उनका उल्लेख

करनेका प्रसग अब आ गया। मै जानता हूँ कि ऐसे बहुतसे लोग है, जिन्हे अपनी गुजर करना मुश्किल हो रहा है। वे हर तरहसे राष्ट्रकी ओरसे सहायता पानेके योग्य है। दो ऐसे काम है — एक तो खादी बोर्डका और दूसरा राष्ट्रीय स्कूलो और कालेजोका काम — जिनमें सीखने और मेहनत करनेको तत्पर तथा थोडेमें सन्तोष करनेवाले, असंख्य ईमानदार और उद्यमी लोगोको खपा लेनेकी क्षमता है। मै देखता हूँ कि लोगोमे राष्ट्रीय सेवाके निमित्त बिना कुछ लिए काम करनेकी प्रवृत्ति है। उनकी अवैतनिक काम करनेकी इच्छा, निस्सन्देह, सराहनीय है, लेकिन सब लोग ऐसा नही कर सकते। हर श्रमिक अपने श्रमके मूल्यका अधिकारी है। कोई भी देश अपना सारा समय देनेवाले अवैतनिक कार्यकर्त्ता हजारोकी तादादमे पैदा नही कर सकता। इसलिए हमे ऐसा वातावरण तैयार करना चाहिए जिसमे कोई भी देश-सेवक देशकी सेवा करने और उसके बदले वेतन स्वीकार करनेमें अपनी इज्जत समझे।

नशीली चीजें

राष्ट्रीय महत्त्वका एक और विषय है अफीम और शराबका व्यापार। मद्यपान-निवारणके प्रति सन् १९२१ मे देशमे उत्साहकी जो लहर इस छोरसे उस छोरतक फैली हुई थी, वह यदि शान्तिपूर्ण बनी रहती तो इस क्षेत्रमे आज हमे दिन-ब-दिन प्रगति देखनेको मिलती। लेकिन दुर्भाग्यसे हमारी धरनेदारीमे हिंसाकी वृत्ति आ गई। जहाँ इसने खुली हिंसाका रूप नही लिया, वहाँ भी यह भीतर-ही-भीतर हिंसात्मक हो उठी थी। इसलिए धरना देना बन्द कर देना पड़ा और अफीम तथा शराबकी दुकाने फिर पहलेकी तरह फूलने-फलने लगी। लेकिन यह सुनकर आपको खुशी होगी कि मद्यपान-निवारणका काम बिलकुल बन्द नही हो गया है। बहुत-से कार्यकर्त्ता आज भी चुपचाप नि.स्वार्थ भावसे इस काममे लगे हुए है। इतना होते हुए भी हमे यह जान लेना चाहिए कि जबतक स्वराज्य न मिलेगा, हम इस बुराईको दूर न कर सकेंगे। हमारे लिए यह कोई गर्वकी बात नही है कि ऐसे अनीतिमूलक कार्योकी आमदनीसे हमारे बच्चोको शिक्षा दी जाती है। कौसिलोमें जानेवाले सदस्य यदि साहस दिखाकर इस आमदनीको बिलकुल ही बन्द करा दे तो मैं उन्हे विधान-सभाओमे जानेके लिए लगभग माफ कर दूँगा। इसके परिणामस्वरूप अगर शिक्षण सस्थाओको पैसे न मिले, तो भी मुझे कोई परवाह नही। लेकिन यदि उसी अनुपातमे फौजी खर्चमें कमी करानेपर आग्रह रखेगे तो शिक्षा सस्थाओको भी ऐसी किसी कठिनाईका सामना न करना पड़ेगा।

बंगालका दमन

आपने यह देखा होगा कि अबतक मैंने जो-कुछ कहा, सिर्फ देशके आन्तरिक विकासके सम्बन्धमे ही कहा।

लेकिन बाहरी परिस्थितियाँ और उसमे भी खासकर हमारे शासकोके काम हमारे ध्येयपर उतना ही निश्चित (यद्यपि शायद प्रतिकूल ही) प्रभाव डाल रहे है, जितना कि आन्तरिक विकास। यदि हम चाहे तो उनके कार्योसे फायदा उठा सकते

हैं, पर यदि हम उनके आगे झुक गये तो अपना ही नुकसान करेंगे। हमारे शासकोका सबसे ताजा काम है बगालमे शुरू किया दमन। सर्वदलीय परिषद्ने साफ शब्दोमे उसकी निन्दा की है। हाँ, उसे यह कहनेमे जरूर हिचकिचाहट हुई कि यह प्रहार बगालके स्वराज्यवादी दलपर ही किया गया है। लेकिन मुझे कोई हिचकिचाहट नही है। मै कलकत्ता गया था और वहाँ अलग-अलग राय रखनेवाले तरह-तरहके लोगोसे मिलनेका मुझे मौका मिला था। उससे मै इसी नतीजेपर पहुँचा हूँ कि यह प्रहार स्वराज्यवादी दलपर ही किया गया है। और लॉर्ड लिटन तथा लॉर्ड रीडिगने उसके बाद जो भाषण दिये, उनसे मेरी यह राय और भी पक्की हुई है। अपने पक्षके समर्थनमे उन्होने जो-कुछ कहा है, वह बिलकुल पटने लायक नही है। इस तरहकी सफाई भारतवर्षमे ही दी जा सकती है, जहाँ लोकमतकी कुछ भी पूछ नही है, या है तो बहुत थोडी। लॉर्ड लिटनकी रिहाईकी शर्तें तो हमारी बुद्धिके लिए अपमान-जनक हैं। दोनो वाइसराय साहब जब कहते हैं कि परिस्थिति ही इस अध्यादेश और १८१८ के विनियमके अन्तर्गत कार्रवाई करनेकी आवश्यकताका प्रमाण है तो वे साध्यको ही सिद्ध बात मानकर यह कहते हैं। लेकिन राष्ट्रकी धारणा तो इस विषयमे यह है -

१ जैसी परिस्थिति वे बताते है, वैसी कोई परिस्थिति वास्तवमे है, यह साबित नही हो पाया है।

२ यदि यह मान भी ले कि वास्तवमे ऐसी परिस्थिति है, तो भी इलाज रोगसे भी बदतर है।

३ इस परिस्थितिका मुकाबला करनेके लिए साधारण कानूनोमे भी काफी अधिकार दिये गये है, और अन्तमे,

४ यदि असाधारण अधिकारोकी आवश्यकता थी भी तो उन्हे यह अधिकार *विधानसभाओसे लेने चाहिए थे, जो खुद उन्हीकी बनाई हुई है।*

दोनो वाइसराय साहबोके भाषणोमे ये प्रश्न बिलकुल टाल ही दिये गये है। फिर जिस राष्ट्रको सरकारके निराधार वक्तव्योका बहुत-कुछ अनुभव है, वह इन भाषणोको परम सत्य कैसे मान सकता है? वे जानते हैं कि हम उनके कथनपर विश्वास न तो कर सकते है न करेंगे — सो इसलिए नही कि वे जानबूझकर झूठ बोलते है, बल्कि इसलिए कि जिन सूत्रोसे उन्हे खबर मिलती हैं, वे अकसर दूषित और पक्षपातपूर्ण पाये गये है। इसलिए उनका यकीन दिलाना लोगोका मजाक उडाना ही है। उनके ये भाषण एक तरह हमे ललकार कर कहते है कि आओ, तुमसे जो-कुछ हो सके, सो कर लो। पर हमे न तो झुंझला उठना चाहिए और न धीरज छोड बैठना चाहिए। दमन यदि हमको डरा न सके, दबा न सके, न हमे अपने लक्ष्यसे हटा सके तो फिर उससे स्वराज्य पानेमे मदद ही मिल सकती है। क्योकि वह हमे कसौटीपर चढाता है और खतरेका सामना करनेके लिए हमारे अन्दर हिम्मत और कुरबानीका माद्दा पैदा करता है। एक सच्चे आदमी और राष्ट्रके लिए दमन वही काम करता

है, जो आग सोनेके लिए करती है। १९२१ के दमनका जवाब हमने सविनय अवज्ञाके द्वारा दिया था और सरकारसे कहा था कि जो तुमसे हो सके, सो कर लो। पर आज हमे अपमानका यह घूंट पी जाना है। हम सविनय अवज्ञाके लिए तैयार नही हैं। अभी तो हम उसकी तैयारी ही कर सकते हैं, सविनय अवज्ञाकी तैयारीका मतलब है, अनुशासन, सयम, अहिसापर चलने, किन्तु साथ ही बुराईका प्रतिरोध करनेकी भावना, मिल-जुलकर चलनेकी शक्ति और सबसे बढकर विचारपूर्वक और प्रसन्नताके साथ ईश्वरके प्रकट नियमका तथा मनुष्यके उन कानूनोका पालन करना जो ईश्वरीय कानूनकी मदद और तरक्कीके लिए बनाये गये हो। मगर बदकिस्मती है कि हममें अपने उद्देश्यके अनुरूप न पर्याप्त अनुशासन है और न सयम, हम या तो हिंसापूर्ण हैं या हमारी अहिसामे बुराईके प्रतिरोधकी वृत्ति नही होती। हममे मिल-जुलकर चलनेकी पर्याप्त प्रवृत्ति भी नही है और हम ईश्वर अथवा मनुष्यके जिस कानूनका भी पालन करते है, मजबूर होकर ही करते हैं। हिन्दू और मुसलमान तो अपने आपसी व्यवहारमे रोज-रोज बडी धृष्टताके साथ ईश्वर और मनुष्य दोनोके कानूनोकी अवज्ञा करते हैं। यह सविनय अवज्ञाका, जो शोषितोका एकमात्र अमोघ अस्त्र है, वातावरण नही है। दूसरा रास्ता, निस्सन्देह, हिंसा है और लगता है, हमारे बीच उसके अनुकूल वातावरण है। हिन्दू-मुस्लिम झगडे हमे उसकी तालीम दे रहे हैं और जो लोग मानते हैं कि भारतवर्षका उद्धार हिंसाके ही द्वारा हो सकता है, उन्हे हमारी इन आपस-की खुली लडाइयोपर प्रसन्न होनेका अधिकार है। लेकिन मैं जो हिंसा-पथके पथिक हैं, उनसे कहता हूँ कि 'आप भारतवर्षकी प्रगतिको रोक रहे हैं। अगर आपके दिलमे देशके करोडो नगे-भूखे लोगोके लिए कुछ भी रहम हो या उनके भलेका खयाल हो, तो जान रखिए, अपने हिंसात्मक साधनोसे आप उनकी कुछ भी सेवा न करेंगे। जिन्हे आप अपदस्थ करना चाहते हैं, वे आपकी बनिस्बत कही अच्छे शस्त्रोसे सुसज्जित हैं और अनेक-गुना सुसगठित हैं। आप अपने प्राणोकी परवाह भले ही न करे, पर आप अपने देशके उन भाइयोकी उपेक्षा नही कर सकते, जो शहीदोकी मौत मरनेकी ख्वाहिश नही रखते। आप जानते ही है कि यह सरकार अपनी रक्षाके लिए जलियाँ-वाला बाग-जैसे हत्याकाण्डको एक न्यायोचित साधन माननेवाली है। और देशोकी बात मैं नही कह सकता, पर इस देशमे तो हिंसाके फूलने-फलनेका कोई मौका नही है। भारतवर्ष तो निर्विवाद रूपसे अहिसाका सबसे बडा हामी और सर्वोत्तम आश्रयस्थान है। सो अगर आप अपने जीवनको अहिसाके कार्यमे कुरबान करेंगे तो यह क्या उसका ज्यादा अच्छा उपयोग न होगा?'

लेकिन मैं जानता हूँ कि हिंसात्मक क्रान्तिकारियोसे की गई मेरी यह प्रार्थना उतनी ही निष्फल होगी जितनी कि हिंसाकी राह चलनेवाली इस अराजक सरकारसे की गई मेरी प्रार्थना हो सकती है।

ऐसी हालतमे हमे इसका उपाय खोजना है और हिंसाकी राह चलनेवाली इस सरकार और क्रान्तिकारी समुदाय दोनोको यह दिखला देना जरूरी है कि एक ऐसी भी शक्ति है जो उनके हिंसाबलसे ज्यादा प्रभावकारी है।

दमन एक लक्षण है

इस दमनको मै एक पुरानी बीमारीका एक पुराना लक्षण मानता हूँ। उसका सूत्र है यूरोपका प्रभुत्व और एशियाकी दासता। कभी-कभी तो इसे और भी व्यंजक शब्दावलीमे गोरे बनाम कालेका सवाल कहते है। जब किपलिगने काले लोगोके कधोपर डाले गोरोके जुएको "गोरोका बोझ" कहा तो उसने वास्तवमे स्थितिका गलत वर्णन किया। मलायामे रगभेदकी दीवार अस्थायी समझी जाती थी पर वह अब करीब-करीब स्थायी बन गई है। मॉरिशसके गन्नेकी खेती करनेवालोको हिन्दुस्तानसे मजदूर मिलने ही चाहिए। केनियाके यूरोपीय हिन्दुस्तानियोपर हावी होनेमे कामयाब हो गये है, हालांकि हिन्दुस्तानी वहाँ रहनेका पहला हक रखते है। दक्षिण आफ्रिकाकी सरकार अगर सहूलियतसे कर सके तो वह आज ही वहाँसे एक-एक हिन्दुस्तानीको निकाल बाहर करे। पिछले करारनामोकी वह कुछ भी परवाह न करे। यह बात नही कि इन तमाम बातोमे भारत सरकार और सम्राज्य सरकारका कुछ बस न चल सकता हो, पर वे वहाँके हिन्दुस्तानी निवासियोकी रक्षाके लिए या तो रजामन्द नही है या उतना जोर नही दे रहे है, जितना कि उन्हे देना चाहिए। भारत सरकारने तो फीजीवाले अपने कमीशनकी रिपोर्टतक प्रकाशित करनेकी शिष्टता नही दिखाई है।

अकालियोके अदम्य तेजको कुचलनेका प्रयत्न भी उसी बीमारीका लक्षण है। जिस ध्येयको वे अपनी जानके बराबर प्यार करते है, उसके लिए उन्होने पानीकी तरह अपना खून बहाया है। हो सकता है, उनसे गलतियाँ हुई हो। मगर ऐसा हुआ भी हो तो उसके लिए खून उन्हीका बहा है। उन्होने किसी दूसरेको चोट नही पहुँचाई है। ननकाना साहब, गुरुका बाग और जैतो — उनके साहस, उनके मूक कष्ट-सहन और उनकी शहादतके साक्षी रहेगे। लेकिन कहते है, पजाबके गवर्नर साहबने कसम खाई है कि वे अकालियोको कुचल कर रहेगे।

सुननेमे आया है, उधर बर्मामे भी दमनचक्र चलाकर वहाँकी जनताको कुचला जा रहा है।

मिस्रकी हालत भी हमसे अच्छी नही है। एक पागल मिस्रवासीने एक अंग्रेज अफसरको कत्ल कर डाला — निश्चय ही यह एक जघन्य अपराध है। लेकिन इसकी जो सजा दी जा रही है वह सिर्फ एक जघन्य अपराध ही नही, बल्कि मानवताके साथ बलात्कार है। मिस्रने जो कुछ पाया था, करीब-करीब खो चुका है। सिर्फ एक आदमीके जुर्मके लिए सारी कौमको बेरहमीसे सजा दी गई है। हो सकता है कि उस खूनके साथ मिस्रवासियोकी हमदर्दी रही हो। पर क्या इतनेसे ही उस ताकतके लिए इस तरह जोरोजुल्म करना उचित हो सकता है, जो उसके बिना भी अपने हितोकी रक्षा कर सकती है।

इसलिए बगालका यह दमन कोई असाधारण बात नही है। ऐसी हालतमे, जबतक हमारा स्वत्व हमे प्राप्त नही हो जाता तबतक दमनके किसी-न-किसी रूपमें और किसी-न-किसी प्रान्तमें समय-समयपर होनेवाले ऐसे विस्फोटको एक साधारण बात समझकर ही चलना पड़ेगा।

शक्तिकी आवश्यकता

इसलिए काग्रेसने जो काम अपने हाथमे लिया है उसके योग्य बननेके लिए उसे ऐसी शक्ति अर्जित करनी चाहिए, जिसके बलपर वह अपनी माँगे स्वीकार करा सके। यह शक्ति हम तभी अर्जित कर सकते है जब हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, सिख, पारसी आदि एक हो जाये; जब स्वराज्यवादी, अपरिवर्तनवादी, लिबरल, होमरूलवाले, मुस्लिम लीग और दूसरे तमाम दलोके लोग एकताके सूत्रमे बँध जाये। अगर हम सब मिलकर सिर्फ एक स्वरमे बोल सके और ठीक-ठीक समझ ले कि हम क्या चाहते है, तो हमारा मार्ग सुगम हो जायेगा। अगर हम अपनेमे विदेशी कपडोके पूर्ण बहिष्कारकी शक्ति विकसित कर ले तो हमारा रास्ता सुगम हो जाये। और तब यह माना जा सकता है कि अब हममे वह शक्ति आ गई है, जिसके बलपर हम अपनी बाते मनवा सकते है।

मेरी आस्था

अब मै अपनी आस्थाकी बात बता दूँ। एक काग्रेसीकी हैसियतसे काग्रेसको ज्योका-त्यो कायम रखनेके लिए मै असहयोगको मुल्तवी रखनेकी सलाह दे रहा हूँ, क्योकि मै देखता हूँ कि राष्ट्र अभी इसके लिए तैयार नही है। लेकिन एक व्यक्तिकी हैसियतसे मै तबतक ऐसा नही कर सकता — और न करूँगा ही — जबतक कि यह सरकार जैसीकी-तैसी बनी हुई है। मेरे लिए यह महज एक कार्य-नीति (पॉलिसी) की बात नही, बल्कि अडिग आस्थाकी बात है। असहयोग और सविनय अवज्ञा, सत्याग्रह नामक एक ही वृक्षकी अलग-अलग शाखाएँ है। यह मेरा कल्पद्रुम — जाम-ए-जाम — है। सत्याग्रह क्या है? सत्यकी खोज। और ईश्वर ही सत्य है। अहिंसा वह ज्योति है, जो उस सत्यके दर्शन कराती है। मेरे लिए स्वराज्य उसी सत्यका एक अग है। इस सत्याग्रहने दक्षिण आफ्रिका, खेडा या चम्पारनमे मुझे निराश नही किया। मै ऐसे और भी बहुतसे प्रसग गिना सकता हूँ जब इसने, इससे जितनी भी आशाएँ की गई थी, सब पूरी की। इसमे किसी किस्मकी हिंसा या घृणाभावके लिए जगह नही है। इसलिए मै अग्रेजोसे नफरत नही कर सकता और न करूँगा। पर साथ ही मै उनके जुएको भी गवारा नही कर सकता। हिन्दुस्तानके सिरपर अग्रेजी तौर-तरीके लादनेकी नापाक कोशिशका मुकाबला मै मरते दमतक करूँगा। लेकिन मै अहिंसाके द्वारा ही उसका सामना कर रहा हूँ। मेरा यह दृढ विश्वास है कि हिन्दुस्तान अहिंसाके हथियारसे मौजूदा अग्रेज शासकोका मुकाबला कर सकता है। हमारा यह प्रयोग असफल नही हुआ है। उसमे सफलता जरूर हुई है, लेकिन उस हदतक नही कि जिस हदतक हम चाहते और उम्मीद रखते थे। पर मै निराश नही होता। बल्कि इसके विपरीत मेरा तो विश्वास है कि भारत निकट भविष्यमे अपना स्वत्व पा लेगा और यह सिर्फ सत्याग्रहके द्वारा ही सम्भव होगा। सत्याग्रहको स्थगित करनेका जो प्रस्ताव किया गया है, वह भी इस प्रयोगका ही अग है। अगर मेरा बनाया यह कार्यक्रम पूरा किया जा सके तो असहयोगको फिरसे शुरू करनेकी बिलकुल जरूरत न होगी। पर अगर यह कार्यक्रम न चला तो किसी-न-किसी रूपमे चाहे काग्रेसके नेतृत्वमें या उसके नेतृत्वसे बाहर असहयोग

फिर जारी किया जायेगा। मैंने बार-बार कहा है कि सत्याग्रह कभी असफल नही होता और एक ही सर्वांगपूर्ण सत्याग्रही सत्यको प्रतिष्ठित कर देनेके लिए काफी होता है। इसलिए हम सब सच्चे सत्याग्रही बननेका प्रयत्न करे। इसके लिए ऐसे किसी भी गुण या योग्यताकी जरूरत नही, जो हममे से अदनासे-अदना व्यक्ति भी हासिल न कर सके। कारण, सत्याग्रह हमारी आत्माका ही एक गुण है। वह हम सबके अन्दर छिपा हुआ है। स्वराज्यकी तरह ही उसपर भी हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है। तो अब हम सब उसको पहचाने।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २६-१२-१९२४

३८३. भाषण : बेलगाँव कांग्रेसमें शोक-प्रस्तावपर

२६ दिसम्बर, १९२४

जब अध्यक्षने पहला प्रस्ताव पेश किया उस समय शामके ४ बजकर ५ मिनट हुए थे। उन्होने कहा :

मै अब पहला प्रस्ताव पढूँगा। जब मै इसे पढ चुकूँ तो आप सब कृपया खडे हो जाये। प्रस्ताव बहुत सीधा-सादा है, जो लोग अब हमारे बीच नही रह गये है, उनकी मृत्युपर इसमे शोक प्रगट किया गया है।

यह कांग्रेस बी-अम्माँ, सर आशुतोष चौधरी, सर आशुतोष मुखर्जी, श्री भूपेन्द्रनाथ बसु, डा० सुब्रह्मण्य अय्यर, श्री दल बहादुर गिरि, श्री गोविंद वेंकटेश यालगी, श्री वामनराव मोहरिर, श्री टी० वी० गोपालस्वामी मुदालियर, श्री सी० वी० पी० शिवम् और लाला कन्हैयालालजी तथा साथ ही दक्षिण आफ्रिकामे सर्वश्री रुस्तमजी जीवनजी घोरखोदू और पी० के० नायडूकी मृत्युपर दुःख प्रकट करती है और इनके शोकाकुल परिवारोके साथ सादर सहानुभूति प्रकट करती है।

इसके बाद अध्यक्षने प्रस्तावको हिन्दीमें समझाया।[1]

इस प्रस्तावमे बी-अम्माँ और दूसरे भाइयोकी — जिनके नामोका इसमे उल्लेख है — मृत्युपर हम अफसोस जाहिर करते है और उनके रिश्तेदारोसे हमदर्दी प्रकट करना चाहते है। मै जानता हूँ कि इसमें किसीको शिकायत नही हो सकती। इसलिए आप कुछ मिनट खडे होकर, जब मै बैठ जाऊँगा तब बैठ जाये। यह इस प्रस्तावका स्वीकार करना है।

सब खड़े हो गये। बीचमें कहींसे आवाज आनेपर महात्माजीने कहा :

बीचमे जितने है सब खडे हो जाये। एक भी बैठा न रहे। शान्तिसे रहे। मैंने कहा, किसीको बात नही करनी चाहिए, सब शान्तिसे रहें। हम अपने अन्दर अदब बताना चाहते है तो सब शान्तिसे कुछ सेकडके लिए खडे रहें।

१. इसके बादका अंश किंचित् परिवर्तनके बाद कार्यवाहीकी हिन्दी रिपोर्टसे लिया गया है।

जय-जय ध्वनिके बीच दास महोदय मंचारूढ़ हुए। 'देशबन्धु दास।'— तत्काल महात्माजीने सबको उनका आगमन सूचित किया और कहा:

मालवीयजीने मुझे अभी पैगाम भेजा है और मुझे अफसोस है कि मैं भूल गया। लाला कन्हैयालालजी लाहौरीका स्वर्गवास इसी वर्षमें हुआ है। लाला कन्हैयालालका नाम आपने सुना होगा। वे बुजुर्ग थे, डायरशाहीके जमानेमें इन्होंने देशकी बडी सेवा की थी।

[अंग्रेजीसे]

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके ३९वें अधिवेशनकी रिपोर्ट।

३८४. प्रस्ताव: कलकत्ता-समझौते तथा कताई-सदस्यताके बारेमें

२६ दिसम्बर, १९२४

क. (१) यह कांग्रेस एक ओर महात्मा गांधी तथा दूसरी ओर स्वराज्य दलकी ओरसे देशबन्धु चित्तरंजन दास और पण्डित मोतीलाल नेहरूके बीच हुए निम्नलिखित समझौतेकी पुष्टि करती है।

समझौता[1]

(२) कांग्रेस आशा करती है कि इस समझौतेसे कांग्रेसकी दोनों शाखाओंमें सच्ची एकता आयेगी और यह समझौता अन्य राजनीतिक संगठनोंके सदस्योंके कांग्रेसमें शामिल हो सकनेमें भी सहायक होगा। नये अध्यादेश या १८१८ के विनिमय ३के अन्तर्गत गिरफ्तार किये गये स्वराज्यवादी तथा अन्य लोगोंको कांग्रेस बधाई देती है। कांग्रेसका मत है कि जबतक भारतके लोगोंमें अपने सम्मान और अपनी स्वतन्त्रताकी रक्षा करनेकी क्षमता नहीं होगी, तबतक ऐसी गिरफ्तारियाँ अवश्यम्भावी हैं और उसका यह भी मत है कि देशकी वर्तमान परिस्थितियोंमें ऐसी क्षमताका विकास करनेके लिए जरूरी है कि विदेशी वस्त्रोंका पूर्ण बहिष्कार करनेका जो निश्चय बहुत दिनोंसे टलता आ रहा है, अब उसे लागू किया जाये, और इसीलिए इस राष्ट्रीय उद्देश्यको प्राप्त करनेकी जनताकी सच्ची इच्छा और संकल्पके प्रतीकके रूपमें कांग्रेस सदस्यताके लिए कताईकी शर्त लागू किये जानेका स्वागत करती है और हर स्त्री-पुरुषसे अपील करती है कि वह इस अवसरका लाभ उठाये और कांग्रेसमें शामिल हो।

(३) ऊपर कही गई बातको ध्यानमें रखते हुए कांग्रेस प्रत्येक भारतीय स्त्री-पुरुषसे सब विदेशी वस्त्रोंका त्याग करने और केवल हाथके कते और हाथके बुने खद्दरका ही उपयोग करने और पहननेकी अपेक्षा करती है। इस उद्देश्यको अविलम्ब

१. समझौतेका पाठ यहाँ नहीं दिया जा रहा है। देखिए "गांधीजी और स्वराज्यवादियोंका संयुक्त वक्तव्य", ६-११-१९२४।

प्राप्त करनेकी गरजसे काग्रेस सभी काग्रेस सदस्योंसे अपेक्षा करती है कि वे हाथसे कताईके कामको बढाने-फैलाने और खद्दरके उत्पादन और विक्रीके काममे सहायता दे।

(४) काग्रेस भारतके राजाओं और धनी वर्गके लोगोंमे तथा ऐसे राजनीतिक या उन अन्य सगठनोंके सदस्योंसे, जिनका काग्रेसमें कोई प्रतिनिधित्व नहीं है तथा नगरपालिकाओं, स्थानीय निकायों, पचायतों और ऐसी ही अन्य सस्थाओंसे अपील करती है कि वे स्वय उपयोग करके और अन्य तरीकोंसे, खासकर उन कलाकारोंको उदारतापूर्वक प्रश्रय और प्रोत्साहन देकर, जो अभी भी बच रहे हैं और जो महीन खद्दरके बढिया कलात्मक डिजाइनवाले कपडे तैयार कर सकते हैं, कताईके प्रचारमे सहायता दे।

(५) काग्रेस विदेशी कपड़ो और विदेशी सूतका व्यापार करनेवाले व्यापारियोंसे अपील करती है कि वे राष्ट्रके हितोंको समझे और विदेशी वस्त्र तथा सूतका आयात करना बन्द करके खद्दरका व्यवसाय करे और इस प्रकार इस राष्ट्रीय कुटीर उद्योग की सहायता करे।

(६) काग्रेसके ध्यानमें यह बात आई है कि मिलोंमे तथा अन्य करघोंपर मिलके कते सूतसे कई प्रकारके वस्त्रोंका उत्पादन होता है और उसे भारतीय बाजारमें खद्दर बताकर बेचा जाता है। अत काग्रेस मिल-मालिकों तथा अन्य सम्बन्धित वस्त्र-उत्पादकोंसे अनुरोध करती है कि वे इस अवाछनीय धन्धेको बन्द कर दे। वह उनसे यह भी अपील करती है कि वे अपना कारोबार देशके उन्ही भागोंतक सीमित कर दे जो अभी काग्रेसके प्रभावमे नही आये हैं और ऐसा करके वे भारतके प्राचीन कुटीर उद्योगको पुनरुज्जीवित करनेमे सहायता और प्रोत्साहन प्रदान करे। काग्रेस उनसे यह भी अपील करती है कि वे विदेशी सूतका आयात करना बन्द कर दें।

(७) काग्रेस हिन्दू, मुसलमान और अन्य सभी धार्मिक सम्प्रदायोंमे प्रधान लोगों और नेताओंसे अपील करती है कि वे अपनी धार्मिक सभाओंमे अपने अनुयायियोंको खद्दरका सन्देश सुनाएँ और उन्हे विदेशी वस्त्रोंका इस्तेमाल न करनेकी सलाह दें।

ख काग्रेस सविधानका वर्तमान अनुच्छेद[1] ७ रद्द किया जाये और उसके स्थान पर निम्नलिखित धारा रखी जाये

(१) प्रत्येक व्यक्ति, जो अनुच्छेद ४ मे वर्णित निर्योग्यताओंसे मुक्त है, प्रान्तीय काग्रेस कमेटियों द्वारा नियन्त्रित किसी भी आरम्भिक सस्थाका सदस्य बन सकता है, लेकिन जो स्त्री या पुरुष किसी राजनीतिक या कांग्रेसके समारोहमे या काग्रेसका काम करते समय हाथ-कता और हाथ-बुना खद्दर नही पहनता और अपने हाथका इकसार काता हुआ २४,००० गज सूत, अथवा बीमारी या अनिच्छा अथवा ऐसा ही कोई अन्य कारण होनेपर किसी दूसरे व्यक्ति द्वारा काता गया इतना ही सूत चन्देमे

१. इसमें कहा गया था "प्रत्येक व्यक्ति जो अनुच्छेद ४में वर्णित निर्योग्यताओंसे मुक्त है तथा जो प्रति वर्ष ४ आने शुल्कके रूपमें देता है, प्रान्तीय काग्रेस कमेटियों द्वारा नियन्त्रित किसी भी सस्थाका सदस्य बन सकता है।" देखिए खण्ड १९, पृष्ठ १९६।

नही देता, वह किसी काग्रेस कमेटी या सगठनका सदस्य नही होगा और यह भी कि कोई व्यक्ति एक ही वक्तमे दो समानान्तर काग्रेस सगठनोका सदस्य नही होगा।

(२) सदस्यताका वर्ष १ जनवरीसे ३१ दिसम्बरतक माना जायेगा। उपर्युक्त चन्दा पेशगी देना होगा और इसे २००० गज प्रति माहकी अग्रिम किस्तोमे दिया जा सकेगा। वर्षके बीचमे सदस्य बननेवालोको पूरे वर्षके लिए सूतकी पूरी मात्रा देनी होगी।

संक्रमणकालीन व्यवस्था

१९२५की अवधिमे चन्दा केवल २०,००० गज ही रहेगा और इसे १ मार्चको या उससे पहले दिया जा सकेगा, या जैसा कि ऊपर बताया गया है, माहवारी किस्तोमे दिया जा सकेगा।

(३) जिस व्यक्तिने सूतके रूपमे अपना चन्दा या उसकी बकाया किस्त अदा नही की हो, वह प्रतिनिधियोके चुनावमे, या काग्रेस सगठनकी किसी समिति या उप-समितिके चुनावमे भाग नही ले सकेगा और न स्वय उस रूपमे चुना जा सकेगा। वह काग्रेस या किसी काग्रेस सगठन या उसकी किसी समिति या उप-समितिकी बैठकमे भी भाग नही ले सकेगा। सूतके रूपमे चन्दा देनेमे चूक करनेवाले सदस्यके अधिकार, जब वह बकाया चन्देका सूत और चालू महीनेकी किस्त अदा कर देगा तो पुन बरकरार कर दिये जायेंगे।

(४) प्रत्येक प्रान्तीय काग्रेस कमेटी, अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीके महासचिव-को प्रति माह सदस्यताका ब्यौरा और इस धाराके अन्तर्गत प्राप्त होनेवाले सूतका हिसाब भेजेगी। प्रान्तीय काग्रेस कमेटियाँ चन्देके सूतका दस प्रतिशत या उतने सूतकी कीमत अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीको भेजेगी।

(५) वर्तमान अनुच्छेद ६ (ग)[1] और धारा ९ (ख)[2] को निकाल दिया जाये।

प्रस्तावकर्त्ता :

देशबन्धु चित्तरजन दास (अग्रेजीमे)

अनुमोदनकर्त्ता :

श्रीयुत एस० वी० कौजलगी (कन्नड और अग्रेजी, दोनोमे)
श्रीयुत न० चि० केलकर (मराठीमे)
श्रीयुत एम० वी० अभ्यकर (अग्रेजीमे)
पण्डित मोतीलाल नेहरू (अग्रेजीमे)

विरोधकर्त्ता

मौलाना हसरत मोहानी (उर्दूमे)
मौलाना आजाद सोबानी (उर्दूमे)
स्वामी गोविन्दानन्द (अग्रेजीमे)

[अग्रेजीसे]
भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके ३९ वें अधिवेशनकी रिपोर्ट।

१ और २. देखिए खण्ड १९, पृष्ठ १९६-९७।

३८५. भाषण : कलकत्ता समझौतेपर[1]

२६ दिसम्बर, १९२४

देशबन्धु चित्तरंजन दासने प्रस्ताव पेश किया। प्रस्तावपर कई वक्ताओंने भाषण दिये। स्वामी गोविन्दानन्दका भाषण समाप्त होनेपर अध्यक्षने कहा :

मैं आप लोगोंका अधिक समय नहीं लूँगा। अभी मेरे पास दो वक्ता और हैं। मैं कोशिश कर रहा हूँ कि हो सके तो इस प्रस्तावके विरोधियोंको भी अपनी बात कहनेका अवसर दूँ। अब मैं एक और वक्तासे कहूँगा कि वे इस प्रस्तावका विरोध करें। इसके बाद मैं पं० मोतीलाल नेहरूसे समापन भाषण करनेके लिए कहूँगा। मैं कानपुरके सरदार अली साबरीसे भाषण देनेका अनुरोध करता हूँ। क्या वे यहाँ मौजूद हैं ?

उत्तर : नहीं, नहीं हैं इसके बाद मोतीलाल नेहरू भाषण देनेके लिए आये। . . . शामको ७ बजकर २५ मिनटपर प्रस्तावपर बहस समाप्त हुई। तब अध्यक्ष "महात्मा गांधीकी जय" के निरन्तर गूंजते गगनभेदी नारोंके बीच प्रस्तावपर मत लेनेके लिए खड़े हुए। उन्होंने हिन्दीमें बोलते हुए कांग्रेस तथा अन्य सम्मेलनोंकी बैठकोंका समय घोषित किया और प्रस्तावपर मतदानके सम्बन्धमें कहा :[2]

भाइयो,

अब इस रिजोल्यूशन (प्रस्ताव) को आपके सामने रखूँ, इससे पहले जो मुझे दूसरे भाइयोंने चिट्ठियाँ भेजी हैं, उन्हें सुनाना चाहता हूँ। और एक-दो भाईने मुझसे यह कहा है कि इतने स्वराज्यवादियोंने सुनाया, लेकिन "नो-चेंजर्स" (अपरिवर्तनवादियों) की तरफसे सिर्फ मौलाना मुहम्मद अलीने कहा है तो राजगोपालाचारीसे कहना चाहिए कि कुछ सुना दें। मैं उनको तकलीफ देना नहीं चाहता गरचे उनका नाम लिखा है। क्योंकि जैसा पण्डितजीने सुनाया मैं नहीं चाहता कि किसीके मनपर, दिलपर ऐसा असर डाला जाये कि लोग अपना उसूल कायम कर लें। आप लोग जैसा चाहें वोट दें। इसलिए मैं नहीं चाहता कि भाई राजगोपालाचारीको तकलीफ दूँ, जैसा "नो-चेंजर" चाहते हैं कि वह वोटिंगसे पहले कुछ बोलें।

एक आन्ध्र-भाई कहते हैं कि मैं डाक्टर एनी बेसेंटका अनुयायी हूँ और इसकी ताईद करना चाहता हूँ। डाक्टर एनी बेसेंट आनेवाली थीं, वह नहीं आईं, इसलिए वह कुछ कहना चाहते हैं। एक भाईने यह भी पूछा है कि यह सारा रिजोल्यूशन (प्रस्ताव) एक साथ क्यों पेश करते हैं, क्यों उसके टुकड़े करके नहीं लिया जाता। इसका उत्तर मौ० हसरत मोहानीने दे दिया। क्यों, यह तो अकर्मण्यताका

१. यह बेलगाँव कांग्रेसमें दिया गया था।

२. यहाँतक का अंश अंग्रेजीसे अनूदित है।

सवाल है, यह तो कोई आत्माका नही है। अगर आप पसन्द करते है, तो राय दें; नही करते तो न दे। अगर चलाना चाहते है चरखा, तो हो सकता है। एक दूसरे "नो-चेंजर" भी है जो कुछ कहना चाहते है, लेकिन मै उनको तकलीफ नही देना चाहता। इतने स्वराजी भाइयोको बोलनेका मौका दे दिया, और वक्त नही रहा। हमारे बहुत-से भाइयोको शक था। उनका एक खत मेरे पास है। शकको रफा करनेकी यही तरकीब थी कि उनको मौका दिया जाये कि वह अपनी बात कह दे।

जैसी सचाईसे देशबन्धु दास और दूसरे लोगोने कहा उससे कहाँतक लोग अच्छाई लेगे? भाई अभ्यकरने कहा कि मेरा उनका एक मत नही है फिर भी उन्होने चरखेके पक्षमे मत दे दिया। पण्डितजी कहते है कि जैसा मै चरखेमे विश्वास करूँगा वैसा वह भी। लिख दिया है और वह लिखेको मानते है, ऐसा विश्वास होना चाहिए कि उनका शक दूर होगा। एक बात जरूरी है कि "नो-चेंजर" उनका और वे "नो-चेंजर" का विश्वास करे, इसलिए दोनो विश्वास करे एक-दूसरेका, क्योकि ऐसा यहाँ लिखा हुआ है। इसलिए राय ले लेना चाहता हूँ। जरूरी है कि एक-दूसरेको दोनो भाई समझे, और जैसा देशबन्धु दासने सुनाया एक चीजसे देशका भला है, हम ऐसा मानते है और दूसरी चीजसे भला होगा ऐसा [भी] मानते है। एक बात हम सब घरमे रहकर मानते है, एक उपमा भाई केलकरने दी थी। एक मै दूंगा कि एक चक्का नही चल सकता। जब एक गाडीके दोनो चक्के ठीक है, दृढ है तो आगे गाडी चलती है, नही तो पतित हो [बैठ] जाती है। इसलिए हमारी राय है कि आप लोगोको चाहिए कि हमारे दिलोको साफ करे। मौलाना शौकत अली आयेगे तो कहेगे कि बहादुर बनो, दूसरे और बाते कहेगे। तो दूसरेका शक रखना डरपोक आदमीका काम है, जो मनुष्य डरता नही वह अपने दुश्मनका भी भरोसा करता है। अगर आप इस प्रस्तावको मजूर करना चाहते है तो एक-दूसरेमे किसी तरहका अविश्वास न करे, खटका मिटा दे। इतना कहनेके बाद, मुझे शक है कि अंग्रेजीमे सुनानेकी भी जरूरत है। अगर कोई भाई चाहे तो सुना दूं। मगर मै समझता हूँ कि जरूरत नही है। ("नही, नही" की आवाजे)।

अब मै यह "रिजोल्यूशन" (प्रस्ताव) आपके सामने रखता हूँ और आपकी राय लेना चाहता हूँ, लेकिन राय लेते हुए यह समझा देना चाहता हूँ कि जो पहले शुरू किया था कि आप इसको प्रतिज्ञा समझे — अपनेको, मेरेको, खुदाको साक्षी रखे। यह बात भयकर होगी अगर [कोई] भाई चाहते है कि प्रतिज्ञा करके काम न करे। आप चरखा चलायेगे। चरखा चलानेमे दिक्कत है, चरखा चलाना पसन्द नही है तो दूसरेसे लेकर सूत दे दे, अगर यह भी नही करते तो वोट न दे। और अगर आप चाहते है कि साथ-साथ काम करे तो इस "रिजोल्यूशन" (प्रस्तावको) मजूर करना जरूरी है। अगर आप यह नही चाहते — चरखेको "फ्रैंचाइज" (सदस्यताकी शर्त) मे नही चाहते तो आप हर्गिज [पक्षमे] वोट न दे। इसमें मुझे किसीसे रज न होगा, जैसा दूसरी तरहसे [होगा], जब कहकर न करेगे। तो मै कहूँगा कि अगर आपके दिलमे रहम है मेरे लिए, तो आप अपनी बातको पूरा करेगे। जो वोट न देंगे, वह भी धोखा देगे, ऐसा नही।

मैं इस "रिजोल्यूशन" (प्रस्तावको) पेश करता हूँ और मेरे भाई लोग एक मतसे खुदाको धोखा नही देंगे। मैंने देशबन्धु दासको, पण्डित मोतीलाल नेहरूको जान लिया है, वह जो एक बात कह देते है फिर उससे नाही नही करते। आप इस "रिजोल्यूशन" को मजूर करे या न करे। अगर आप न करेंगे तो मैं मानता हूँ कि अब भी चरखेसे सब-कुछ मिल जायेगा। चरखेकी बात आप समझ ले। यह अगर आप करना चाहते है तो इसको मजूर करे। अगर "नो-चेजरस" (अपरिवर्तनवादी) स्वराज्यवादीसे, स्वराज्यवादी "नो-चेजरस" से मुहब्बत करना चाहते है, भाई केलकरने कहा है कि दोनोको रिस्पान्सिव कोआपरेशन (पारस्परिक सहयोग) करना चाहिए। अगर आप इसको समझते है, मानते है तो हाथ ऊँचा करे, अगर नही मानते तो हाथ ऊँचा न करे। मै कोई दूसरा उपाय सोचूंगा हिन्दुस्तानको आजाद करनेका। जो प्रस्तावके पक्षमें है, हाथ ऊँचा करे।[1]

[प्रस्तावपर मत लेनेसे पूर्व] अध्यक्षने अंग्रेजीमें बोलते हुए कहा :

जो लोग प्रस्तावके पक्षमें है, वे मेरी इस चेतावनीको समझकर अपने हाथ ऊँचे करे कि उनके और देशके बीचमें ईश्वर साक्षी है और केवल तभी हाथ उठायें, जब सचमुच प्रस्तावको मजूर करना और यथाशक्ति उसपर अमल करना चाहते हो।

श्रीयुत गंगाधरराव देशपाण्डेने अध्यक्षके इन शब्दोको कन्नड भाषामें दुहराया। अध्यक्षने हाथ उठानेका आदेश देते हुए कहा :

केवल प्रतिनिधि ही हाथ उठाये। वे ही हाथ उठाये जिन्होने प्रस्तावको समझ लिया हो।

उसके बाद उन्होंने ऊँचे उठे हुए हाथ गिने और कहा :

मै घोषित करता हूँ कि प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। (देर तक जोरकी तालियाँ)।

इसके बाद अधिवेशन दूसरे दिन ११ बजेतक के लिए स्थगित कर दिया गया।[2]

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके ३९ वें अधिवेशनकी रिपोर्ट।

१. यहाँतक का अंश मूल हिन्दीसे है।
२. यह अन्तिम अंश अंग्रेजीसे अनूदित है।

३८६. भाषण : अ० भा० छात्र सम्मेलन, बेलगाँवमें

२७ दिसम्बर, १९२४

पण्डालमें प्रवेश करनेपर महात्मा गांधीका उत्साहके साथ स्वागत किया गया। अध्यक्ष और श्रोताओंके आग्रहपर महात्माजी करीब १० मिनटतक बोले। उन्होंने छात्रोंसे कहा कि वे स्वदेशीका पालन करें और खद्दर ही पहनें। उन्होंने बताया कि किस तरह देशकी मुक्तिका प्रश्न चरखेके प्रसारके साथ जुड़ा हुआ है। उन्होंने श्रोताओंसे कहा, मैं समय न होनेका बहाना स्वीकार करनेको तैयार नहीं हूँ। यदि आप लोगोंमें काम करनेकी इच्छा होगी तो आप उसे कर सकते हैं। अन्तमें उन्होंने कहा कि खद्दर किसीके प्रति घृणाका प्रतीक नहीं है बल्कि प्रेम और आत्म-निर्भरताका प्रतीक है। इसके बाद जोरदार तालियोंकी गड़गड़ाहटके बीच महात्माजीको माला पहनाई गई। अध्यक्षने महात्माजीको सम्मेलनमें आकर अपना आशीर्वाद प्रदान करनेके लिए धन्यवाद दिया, इसके बाद महात्माजी पण्डालमें चले गये।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २-१-१९२५

३८७. भाषण : बेलगाँव कांग्रेसमें शोक प्रस्तावपर

२७ दिसम्बर, १९२४

अध्यक्षने सवेरे ११ बजकर २० मिनटपर निम्नलिखित प्रस्ताव पेश किया :

कांग्रेस श्री जी० एम० भर्गरीकी मृत्युपर गहरा दुःख अनुभव करती है और उनके शोक-सतप्त परिवारके प्रति सादर समवेदना व्यक्त करती है।

प्रस्तावपर मत लेनेसे पहले अध्यक्षने कहा :[1]

भाइयो और बहनो,

मुझे कहते हुए शर्म आती है, मुझे लज्जा होती है कि जब हमने पहला प्रस्ताव पास किया, उस वक्त मैं एक बात भूल गया। आज एक सिन्ध-निवासी भाईने याद दिलाया कि जब हम हमारे नेता, जिनका स्वर्गवास हो गया, उनके लिए अफसोस जाहिर कर रहे थे, एक नाम छूट गया था। वह मिस्टर भर्गरी [का नाम] है। आपको यह मालूम होगा, आप मेरी बात मानेंगे कि मैं जान-बूझकर छोड नहीं सकता था। लेकिन मेरा तो यह बुरा हाल है कि कोई बात, काममें व्यस्त रहनेपर भूल जाता हूँ। बड़ी तकलीफमें मुझे जो नाम लिखने थे, लिख लिये — वह मेरा एड्रेस

१. यहाँतक का अंश अंग्रेजीसे अनूदित है।

था उसमे लिखे थे—मै ही लिखता था, इसलिए मुझे मालूम न हुआ [कि कोई नाम छूट गया है]। मै बडे अदबसे मिस्टर भर्गरीका नाम लिखता। मै मनमे भी उनका बडा अदब रखता हूँ। मैंने भूल की—मै उनके रिश्तेदारोंसे माफी माँगता हूँ। हकीकत तो यह है कि उनके लिए मेरे हृदयमें बडी जगह है। वह एक सिन्धी मुसलमान थे और हिन्दुओंसे प्रेम करते थे। जब मै सिन्धमे जाता हूँ तो लोग कहते हैं कि मिस्टर भर्गरी हिन्दुस्तानके एक सच्चे सपूत थे। हम लोग उनके लिए अफसोस क्यो न जाहिर करे। मै प्रार्थना करता हूँ, भाइयो और बहनोंसे कि वे खडे हो जाये, अदबसे। एक मिनटतक खडे रहे। कोई बैठा न रहे, सब खडे हो जाये। अग्रे पुनरपि—अब सब भाई खामोश रहे और एक दूसरेसे बीचमे बात न करे। हमे अपना सारा प्रोग्राम खत्म करना है और हो सके तो पाँच बजेतक काम खत्म करना है। इसमे मै आप सब प्रतिनिधि भाइयोंकी मदद माँगता हूँ कि आप मदद करे। आज जो प्रस्ताव पहले रखना है, उसमे बहस करनेकी बात ही नहीं है इसलिए कि उसमे कुछ समझाना नही है। इसलिए सिर्फ पढ देता हूँ और यह भी कहना चाहता हूँ कि आज जितने प्रस्ताव है, उनकी नकल आपको बाँटी नही गई है। इसके लिए स्वागत-समिति मजबूर हुई है, क्योकि प्रेस बेलगाँवमें नही है कि जितने प्रस्ताव स्वागत समिति भेजे छप जायें। सबजेक्ट्स कमेटी (विषय-समिति) बैठ सकती है दो-तीन दिन, तो इसमे जितने प्रस्ताव वह पास करती वह छपनेको दे सके। लेकिन ऐसा कोई प्रस्ताव नही है कि जिसकी नकल आपके पास भेजना इतना जरूरी हो। इस-लिए आप क्षमा करे—स्वागत समितिको और मुझको भी। इसलिए जो पढा जाये उसको सुनकर स्वीकार करे।[1]

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके ३९ वें अधिवेशनकी रिपोर्ट।

३८८. प्रस्ताव: सरोजिनी नायडूकी सराहनामें

२७ दिसम्बर, १९२४

इसके बाद बेलगाँव कांग्रेस अधिवेशनके अध्यक्षने निम्नलिखित प्रस्ताव पेश किया:

विदेशोंमे रहनेवाले उन भारतीयोंके हितार्थ श्रीमती सरोजिनी नायडूकी सेवाओंके प्रति कांग्रेस अपनी सराहना प्रकट करती है, जिन्होंने अपनी कार्यशक्ति और लगनसे भारतीयोंका प्रेम तो प्राप्त किया ही, अपने आकर्षक वक्तृत्वसे वहांकी यूरोपीय जनताको भी अपनी बात सहानुभूतिपूर्वक सुननेके लिए बाध्य किया।

भारत सेवक समाज (सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी) के श्री वझे और पण्डित बनारसीदास चतुर्वेदी द्वारा केनियाके प्रवासियोंकी सेवाओंके प्रति भी कांग्रेस अपनी कृतज्ञता व्यक्त करती है।

१. सभी लोग थोडी देरतक मौन खड़े रहे और प्रस्ताव निर्विरोध पास हो गया।

इसके बाद उपर्युक्त प्रस्तावका हिन्दी और कन्नड़ अनुवाद क्रमशः पण्डित सुन्दरलाल और श्री के० मुदवेडकरने पढ़कर सुनाया।

श्रीमती सरोजिनी देवीके सिवा अन्य सभी प्रतिनिधियोंने खड़े होकर प्रस्तावको सर्व-सम्मतिसे पास कर दिया।

[अंग्रेजीसे]

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके ३९ वें अधिवेशनकी रिपोर्ट।

३८९. भाषण: कोहाट और गुलबर्गाके दंगोंसे सम्बन्धित प्रस्तावपर[1]

२७ दिसम्बर, १९२४

भाइयो और बहनो,

आप भाइयोने इस प्रस्तावके[2] बारेमे बहुत-से बयान सुन लिये। मेरे पास एक-दो और भी चिट्ठी आ गई है कि कुछ और भाई भी बहस करना चाहते है। लेकिन मैंने उनको कह दिया है कि अब वह मुझे क्षमा दे दे। मै नही समझता कि इसपर किसी भाईको कुछ और ज्यादा जाननेकी जरूरत है।

एक भाईने लिखा है कि इस प्रस्तावमे पचायतके बारेमे लिखा है, उसमे नामके बारेमें जानना चाहते है। इसमे दो बाते रखी गई है। जो यूनिटी कमेटीने पचायत कायम की है, वह कुछ काम न करे तो और कोई दूसरी पचायत बना ले। यूनिटी कमेटीकी पचायतमे जितने नाम है, वह मै भूल गया हूँ। आप अखबारमें देख लेगे। उसमे मै भी हूँ और शौकत अली और दूसरे मुसलमान भाई है। वह भी छोडना नही चाहता हूँ। मेरा खयाल है कि जो पचायत बन गई है वह जो करेगी, [वह यह कि] जो-कुछ कोहाटमे हुआ है, उसका बयान मालूम करेगी। रावलपिंडीमे जाकर मालूम होगा कि क्या होगा, क्या हो सकता है, क्या नही। जो-कुछ किया जा सकता है, किया जायेगा। आप जो भाई इस प्रस्तावको पसन्द करते है, बदस्तूर हाथ ऊँचा करे।[3]

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके ३९ वें अधिवेशनकी रिपोर्ट।

१. यह बेलगाँव कांग्रेसमें दिया गया था।

२. प० मोतीलाल नेहरू द्वारा पेश किये गये इस प्रस्तावमें गुलबर्गाके दंगों, हिन्दुओंके कोहाटसे निष्कासन तथा संरक्षण देनेमें स्थानीय अधिकारियोंकी असफलताकी निन्दा की गई थी। इसमें लोगोंको सलाह दी गई थी कि वे इस सम्बन्धमें भारत सरकारके निष्कर्षको स्वीकार न करें और तबतक अपना निर्णय स्थगित रखें जबतक कि एकता-सम्मेलन द्वारा नियुक्त या कोई और प्रतिनिधिक निकाय घटनाओंकी जाँच-पड़ताल न कर ले और उसके बारेमें निर्णय न दे दे। प्रस्तावमें गुलबर्गाके दंगोंमें पीड़ित लोगोंके प्रति सहानुभूति प्रकट की गई थी।

३. प्रस्ताव सर्वसम्मतिसे पास हो गया।

३९०. भाषण: अस्पृश्यता-सम्बन्धी प्रस्तावपर[1]

२७ दिसम्बर, १९२४

अब श्री भोपटकरसे प्रार्थना है कि वे अस्पृश्यता-सम्बन्धी प्रस्ताव पेश करें।

किन्तु ऐसा करनेसे पहले मैं आपको बता देना चाहता हूँ कि कुछ तमिल मित्रोंने पत्र लिखकर मुझसे प्रस्तावोंको तमिलमें भी अनूदित करानेका अनुरोध किया है। मुझे अत्यन्त खेद है कि मेरे लिए ऐसा करना सम्भव नहीं है। जिन प्रान्तोंसे हमारा सम्बन्ध है, उनकी संख्या २१ है, और यदि हम प्रत्येक प्रस्तावको इतनी भाषाओंमें अनूदित करें तो वास्तवमें आगे बढ़ना असम्भव हो जायेगा। अबतक हम तीन भाषाओंको उपयोगमें लाते रहे हैं. पहली हिन्दी, जिसे जाननेकी अपेक्षा प्रत्येक व्यक्तिसे की जाती है, दूसरी अंग्रेजी और तीसरी सम्बन्धित प्रान्तकी भाषा। हम पारस्परिक सम्पर्कके उस सामान्य माध्यम, हिन्दुस्तानीको, जिसके जरिये हम एक-दूसरेको जान सकते हैं, अपना नहीं पाये हैं, क्योंकि दक्षिणने सदैव इसमें रोड़ा अटकाया है। इसीलिए हम इस प्रान्तकी भाषा तथा अंग्रेजीका उपयोग कर रहे हैं। किन्तु मैं ऐसे मामलोंमें सुझाव देना चाहता हूँ कि जो लोग प्रान्तमें अंग्रेजी या हिन्दी जानते हैं वे कष्ट उठाकर यहाँ पास किये गये प्रस्ताव अपने उन मित्रोंको समझा दें जो यहाँ बोली जानेवाली किसी भी भाषाको नहीं समझते . . .।[2]

भाइयो,

मुझे दर्द होता है कि पण्डितजी इस समय यहाँ नहीं हैं। मुझे कहा गया था, मैंने उनसे प्रार्थना की थी। उन्होंने कहा कि मैं इस समय कुछ बोलना नहीं चाहता। लेकिन फिर कहा गया कि पण्डितजी चन्द शब्द सुनायेंगे। लेकिन इस समय वह यहाँ नहीं हैं।

इस प्रस्तावपर राय लेनेसे पहले एक खत मेरे पास आया है, उसका उत्तर देना जरूरी है। एक भाई पूछते हैं कि अस्पृश्यता-निवारणके प्रस्तावका क्या यह मतलब है कि [अस्पृश्योंके साथ] रोटी-बेटीका व्यवहार करना चाहिए? इसमें [तो ऐसी] कोई बात नहीं कही गई। अगर मुझसे वह पूछना चाहते हैं कि आप क्या कहते हैं, तो मैंने तो 'नवजीवन' और 'यंग इंडिया' में अपने विचार जाहिर कर दिये हैं — और जातियोंके लोगोंके साथ हम ऐसा व्यवहार करते हैं, वैसा ही व्यवहार उनके साथ [भी] करें, जिनको अस्पृश्य मानते हैं।[3]

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके ३९ वें अधिवेशनकी रिपोर्ट।

१. यह बेलगाँव कांग्रेसमें दिया गया था।

२. कुछ वक्ताओंके प्रस्तावके पक्षमें बोलनेके बाद, अध्यक्षने पं० मदनमोहन मालवीयका नाम घोषित किया कि वे आकर बोलें, पर वे अनुपस्थित थे, इसलिए अध्यक्षने हिन्दीमें बोलते हुए प्रस्तावको मतदानके लिए पेश किया।

३. प्रस्तावके विरुद्ध सिर्फ एक व्यक्तिने हाथ उठाया और अध्यक्षने प्रस्तावको स्वीकृत घोषित कर दिया।

३९१. भाषण : बेलगाँव कांग्रेसमें[1]

२७ दिसम्बर, १९२४

भाइयो,

मैं दूसरा प्रस्ताव आपके आगे रखूं, इससे पहले मुझे एक प्रायश्चित्त करना पड़ेगा। जब यह अस्पृश्यता-निवारणका प्रस्ताव रखा गया था, उस वक्त मैं सोचता था कि मैं एक अस्पृश्य भाईको आपके सामने रखूँगा। मेरे पास एक चिट्ठी आई थी। उसमें लिखा था कि एक अस्पृश्य भाई — जो प्रतिनिधि नहीं है — एक-दो लफ्ज बोलना चाहते हैं। मैं चाहता था कि प्रतिनिधि नहीं हैं तो भी अछूत भाईके नाते इजाजत देना अच्छा है। इसलिए मैं चाहता था कि उनको बुला लूं, लेकिन मैं भूल गया। इसका प्रायश्चित्त यही है कि मैं माफी माँगता हूँ — लेकिन अच्छा हुआ कि समयपर याद आ गया है।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके ३९ वें अधिवेशनकी रिपोर्ट।

३९२. भाषण : एनी बेसेंटके वक्तव्यपर[2]

२७ दिसम्बर, १९२४

इसके पहले कि मैं अन्य प्रस्तावोंको लूं, मुझे आपको सूचित करना है कि हमने जो प्रस्ताव[3] कल पास किया था उसके बारेमें श्रीमती बेसेंट इस सभाके सामने एक वक्तव्य देना जरूरी समझती है। यह यशस्वी महिला क्या कहेंगी, इसके बारेमें मैं कोई पूर्वानुमान नहीं लगाना चाहता। लेकिन मैं उन्हें इस पण्डालको अपनी उपस्थितिसे सुशोभित करनेके लिए बधाई देता हूँ और मानता हूँ कि सारी सभा इसमें मेरे साथ है। वे और उनके पक्के अनुयायी कांग्रेसमें रह सकें या न रह सकें, लेकिन मैं आशा करता हूँ कि हमें उनकी सहानुभूति और नैतिक समर्थन सदा प्राप्त रहेंगे। अब मैं डा० बेसेंटसे अनुरोध करूँगा कि वे अपना वक्तव्य दें। . .[4]

मित्रो, डा० बेसेंटने जो वक्तव्य दिया उसे आपने सुना। आप मुझसे उस वक्तव्यपर कुछ कहनेकी अपेक्षा नहीं करेंगे। मैं जानता हूँ कि डा० बेसेंटने यह वक्तव्य इस खयालसे नहीं दिया है कि इसका जवाब उन्हें इसी वक्त दिया जाये। उन्होंने यह वक्तव्य कर्त्तव्य-भावनासे प्रेरित होकर दिया है ताकि उनकी खामोशीका

१. इससे पूर्व गांधीजीने एक पंचम लड़केको दो मिनट बोलनेका मौका दिया था।

२. यह बेलगाँव कांग्रेसमें दिया गया था।

३. देखिए "प्रस्ताव : कलकत्ता-समझौते तथा कताई-सदस्यताके बारेमें", २६-१२-१९२४।

४. यहाँ उद्धृत नहीं किया जा रहा है।

अर्थ यह न लगाया जाये कि जो प्रस्ताव हमने कल पास किया है उसमे हमे उनकी सहमति प्राप्त थी। लेकिन मैं आशा करता हूँ कि इस कांग्रेसकी ओरसे मैं उन्हें यह आश्वासन दे सकता हूँ कि उन्होंने जो-कुछ कहा है उसपर हम सादर विचार करेंगे और यह कांग्रेस या सभी कांग्रेसी — स्त्री और पुरुष — इस बातकी पूरी-पूरी कोशिश करेंगे कि प्रत्येक दलके लिए जिसे भारतके हितकी चिन्ता है और जिसका लक्ष्य भारतके लिए स्वराज्य है, कांग्रेसमे प्रवेश करनेके दरवाजे यथासम्भव खुले रखे जायें। इन शब्दोंके साथ मैं इस घटनाको यही समाप्त करता हूँ और डा० बेसेंटसे पुन यह निवेदन करता हूँ कि वे या अन्य दल कांग्रेसमे शामिल हों या न हो, लेकिन कांग्रेस उनसे और प्रत्येक दलसे यह आशा करेगी कि जिस किसी बातको वे उचित और ठीक माने, कांग्रेसको अपनी उन सभी बातोमे उनकी सहानुभूति और समर्थन प्राप्त होता रहेगा।

[अंग्रेजीसे]

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके ३९वें अधिवेशनकी रिपोर्ट।

३९३. प्रस्ताव: बेलगाँव कांग्रेसमें[1]

२७ दिसम्बर, १९२४

इसके बाद अध्यक्षने एक-एक करके निम्नलिखत प्रस्ताव पेश किये, प्रत्येकपर मत लिये और उन्हें पारित घोषित किया। ये प्रस्ताव अंग्रेजीमें पण्डित जवाहरलाल नेहरूने, कन्नड़में श्रीयुत मुदवेडकरने तथा हिन्दीमें पण्डित सुन्दरलालने पढ़े।

प्रस्ताव-संख्या १०: राष्ट्रीय शिक्षा-संस्थाएँ

कांग्रेसका यह दृढ मत है कि देशका भविष्य युवकोंके हाथोंमे है और इसलिए वह विश्वास करती है कि प्रान्तीय कमेटियाँ सभी राष्ट्रीय शैक्षणिक संस्थाओंको जीवित रखनेके लिए अभीतक जितना प्रयत्न किया गया है उससे कही अधिक जोरदार प्रयास करेंगी। लेकिन कांग्रेसका जहाँ यह मत है कि मौजूदा राष्ट्रीय शैक्षणिक संस्थाओंको कायम रखा जाये और नई संस्थाएँ खोली जायें वही कांग्रेसका यह मत भी है कि ऐसी कोई भी संस्था राष्ट्रीय नही मानी जायेगी, जिसमें शिक्षाका माध्यम कोई भारतीय भाषा नहीं है, जो हिन्दू-मुस्लिम एकताको और अस्पृश्योंके बीच शिक्षा-प्रचार और अस्पृश्यता-निवारणको सक्रिय प्रोत्साहन नही देती, जिसमें हाथ-कताई, बुनाई, शारीरिक शिक्षा और आत्म-रक्षाके प्रशिक्षणको अनिवार्य नहीं बनाया जाता और जिसमें अध्यापक और १२ वर्षसे ऊपरकी आयुवाले विद्यार्थी, कामके दिनोंमें प्रतिदिन कमसे-कम आधा घंटा कताई नही करते और जिसमें अध्यापक और छात्र नियमत खद्दर नही पहनते।

1. ये प्रस्ताव कांग्रेसके अध्यक्ष गांधीजीकी ओरसे पेश किये गये थे।

प्रस्ताव-संख्या ११ : सवैतनिक राष्ट्रीय सेवा

ऐसा देखा गया है कि बहुत-से योग्य व्यक्ति है, जिनकी सेवाएँ राष्ट्रीय कामोके लिए इसलिए उपलब्ध नही हो पाती क्योकि वे सेवाके बदले पारिश्रमिक नही लेना चाहते। अत काग्रेस यह मत व्यक्त करती है कि राष्ट्रीय सेवाके बदले पारिश्रमिक लेनेमे न केवल असम्मानकी कोई बात नही है, बल्कि काग्रेसको आशा है कि देश-भक्त युवक और युवतियाँ सच्ची लगनके साथ की गई सेवाके बदले गुजारेका खर्च स्वीकार करनेको गौरवकी बात मानेगे और यह भी कि जिन्हे नौकरीकी जरूरत है या जो नौकरी करना चाहते है वे अन्य किसी कामकी अपेक्षा राष्ट्रीय सेवाको ही चुनना पसन्द करेगे।

प्रस्ताव-संख्या १२ : संविधानमें परिवर्तन

अनुच्छेद ११ मे "रु० १० को बदलकर रु० १ कर दिया जाये।"

अनुच्छेद १३ मे प्रथम वाक्यके बाद निम्नलिखित और जोड दिया जाये —

"कोषाध्यक्ष काग्रेसके कोषकी देख-रेख करेगे और उसके लिए उत्तरदायी होगे। वे उसका पूरा लेखा-जोखा भी रखेगे। महासचिव अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीका कार्यालय चलायेगे और उनपर स्वागत-समितिके सहयोगसे काग्रेसके पूर्ववर्ती अधिवेशन और वर्षके दौरान होनेवाले किसी विशेष अधिवेशनकी कार्यवाहीके विवरणके प्रकाशनकी जिम्मेदारी होगी। यह रिपोर्ट जितनी जल्दी सम्भव हो उतनी जल्दी और अधिवेशनके बाद चार महीनेके भीतर-भीतर प्रकाशित की जायेगी और बिकनेके लिए उपलब्ध की जायेगी।"

धारा २३ के अन्तमे जोड़िए . "और अगली काग्रेस-रिपोर्टके साथ प्रकाशित।"

प्रस्ताव-संख्या १३ : मद्य और अफीमका व्यापार

काग्रेस इस बातपर सन्तोष प्रकट करती है कि मादक पेय और दवाओके विरुद्ध १९२१ मे आरम्भ किये गये अभियानमे कुछ रुकावटोके बावजूद काग्रेस कार्यकर्त्ताओने देशके अनेक भागोमे इस आन्दोलनको जोश और दृढताके साथ जारी रखा है। काग्रेसको आशा है कि शराब या अफीमकी जिन लोगोको लत है, उन्हे इस बुराईसे मुक्त करनेके कार्यकर्त्ताओके शान्तिपूर्ण प्रयासोका आगे और अधिक शक्ति और प्रोत्साहन प्राप्त होगा।

काग्रेसका मत है कि शराब या मादक वस्तुएँ लेनेकी लोगोकी लतका राजस्वके साधनके रूपमे प्रयोग करनेकी भारत सरकारकी नीति भारतकी जनताके नैतिक कल्याणके लिए हानिकारक है और इसलिए वह इस नीतिको समाप्त करनेका स्वागत करेगी।

काग्रेसका यह भी मत है कि भारत सरकार अफीम-व्यापारका नियमन जिस तरह कर रही है वह न केवल भारतके बल्कि सारे ससारके नैतिक कल्याणके लिए हानिकर है और भारतमे जितनी अफीमका उत्पादन होता है वह यहाँकी चिकित्सा

तथा वैज्ञानिक दृष्टिसे पड़नेवाली जरूरतको देखते हुए बहुत ज्यादा है, अतः उत्पादन इन आवश्यकताओंकी हदतक ही मर्यादित कर दिया जाना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके ३९वें अधिवेशनकी रिपोर्ट।

३९४. भाषण : पदाधिकारियोंसे सम्बन्धित प्रस्तावपर[1]

२७ दिसम्बर, १९२४

अब सिर्फ दो बातें रह गई हैं, जो हमेशा करनी पड़ती है — एक जनरल सेक्रेटरी [महामन्त्री] और ट्रेजरर [खजांची] का चुनाव करना रहा है और कांग्रेस आगे कहाँ मिलनी चाहिए। इसपर कि जहाँ मिलनी चाहिए, यही मुनासिब है कि इनको ऑल इंडिया कांग्रेस कमेटीके सुपुर्द कर दिया जाये। ऐसा ही गत वर्ष हुआ था। खजांची वही है; और जनरल सेक्रेटरी एक पण्डित जवाहरलाल और दूसरे कुरैशी और तीसरे मिस्टर भरूचा। पहले एक थे डाक्टर किचलू, दूसरे [के लिए] बाबू राजेन्द्रप्रसादको कहा गया। बाबू राजेन्द्रप्रसाद जो हरेक काम करते हैं, वह सारा वक्त नहीं दे सकते कि सिर्फ हमारा काम करें। इनमें दो नये सेक्रेटरीकी बात है। कल सब्जैक्ट्स-कमेटी (विषय-समिति) में इस बारेमें बड़ी बहस हुई थी, और जितने भाई थे, उनसे मेरी बात होती रही थी। और आखिरमें यह मुकर्रर हुआ कि इस वर्ष और आगामी वर्ष भी मैं प्रेसिडेंट रहूँगा तो मुझे काममें मदद देनेवाले ही मेरे मन्त्री नियुक्त किये गये। और कई भाई स्वराज्यवादी और नाफेरवादी [अपरिवर्तनवादी] भी मिल गये हैं। इन्हें वर्किंग कमेटी [कार्य समिति] में शामिल किया जाये तो क्या हो? यह मुझे भी अच्छा लगा और मैं इस एक क्या सभीके सभीको लेनेको तैयार हूँ। लेकिन इसमें एक शर्त होनी चाहिए। [वे साफ समझें] कि सारे नेशनका प्रोग्राम एक ही है, आप भी एक हैं। सारा नेशनल प्रोग्राम एक है। अस्पृश्यता निवारण, चरखा, मदिरा-निवारण — एक 'प्रोग्राम' है। इनको मैंने कहा कि कोई लहरमें [उतना ही] कट्टर विश्वास रखनेवाला हो जितना मैं हूँ, जैसा मेरा विश्वास है तो ऐसे स्वराज्यवादीको मैं [लेना] चाहता हूँ, क्योंकि उनकी मार्फत मैं जितने स्वराज्यवादी हैं उनको शुद्ध कर लूँगा। जहाँ [तक] वे मेरा साथ करेंगे, और हम मिलकर चलना चाहते हैं तो हम मिल जायेंगे।

इस तरह सब बातें होती रहीं। कोई [ऐसा] नजर नहीं आया।

यह दोनों नाफेरवादी (अपरिवर्तनवादी) हैं, यह जरूरी नहीं। कुछ मैं भी जानता हूँ, वह कहता हूँ। शुएब कुरैशीको मैं जानता हूँ। वह एक बड़े पक्के मुसलमान

1. बेलगाँव कांग्रेसमें प्रस्ताव पेश करते हुए यह भाषण दिया था। यह प्रस्ताव बादमें मत लेनेपर पास हो गया था।

है, पर वह मुसलमान है इसीलिए मैंने उनको नही ले लिया है। मैं चाहता हूँ सेक्रेटरीसे सारा वक्त इसी काममें लेना। इसलिए मैंने शौकत अली साहबसे पूछ लिया था कि अगर शुएब साहब पूरा वक्त दे तो मैं उनको [लेना] चाहता हूँ। उन्होने कबूल कर लिया। वह ऐसे है कि एक प्रतिज्ञा कर लेते है तो उसे [पूरी] करते है। उनको खद्दरसे मुहब्बत है, यह भी मै जानता हूँ।

भरुचा पागल आदमी है। मैं भी पागल आदमी हूँ। मेरी इनसे ठीक बनेगी (हास्य ध्वनि)। भरूचासे मुझे वह काम सीखना पडेगा कि कन्धेपर खद्दर लादकर जाना और बेचना। इसमे वह स्पेशिलस्ट बन गया है। हम तो सारे देशमे खद्दर पहुँचाना चाहते है। उसे बेचनेके लिए एक भरूचा नही, सैंकडो भरूचा चाहिए। भरूचा लाला हरकिशन लालके पास गया, दूसरोके पास गया और [उन्हे] खद्दर दिया। लोग गाली दे, लेकिन वह बुरा नही मानता। आज ऐसे ही सेक्रेटरी चाहिए कि जो गाली देनेपर भी खद्दर बेचनेके लिए जाये, खद्दरके लिए हर तरहका अपमान बरदाश्त कर लें। इसलिए मैने दोनोको पसन्द कर लिया। लेकिन मैंने तो चुन लिया, अब अख्तियार आपको है; सब्जेक्ट्स कमेटी [विषय समिति]ने तो मजूर कर लिया है। लेकिन काग्रेस कास्टिट्यूशन [सविधान]के मुताबिक आपकी राय चाहिए। जो भाई इसको मजूर करते है, वह अपनी राय जाहिर करे। खजाचीके लिए कुछ कहनेकी जरूरत नही है, आप पसन्द करते है तो कहे।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके ३९ वें अधिवेशनकी रिपोर्ट।

३९५. भाषण : कताई-प्रतियोगिताके सम्बन्धमे[1]

२७ दिसम्बर, १९२४

अच्छा एक बात और जाहिर कर देता हूँ। थोडी बात सुनानेकी आ गई है। आप जानते है कि स्पिनिग कम्पीटीशन [कताई प्रतियोगिता] हो रही है। कई भाइयोने स्वर्ण-पदक दिये थे, किसीने चादीका भी। इस तरह ११ पदक हैं। ये ११ पदक किनको मिले है, कौन दिये हैं—यही सुना देना चाहता हूँ। एक तो बिहारमे सत्यनारायण सिंह, उनको पहले दर्जेका [पदक] मिला है। ६ पदक गगाजी सिडनीवासीने दिये है। सत्यनारायण सिंहने एक घटेमें ७६५ गज सूत काता है, बड़े 'क्रेडिट' [श्रेय] की बात है (हर्ष-ध्वनि)।

आन्ध्रको दूसरा पदक गया है। वह कोरू कंडावेकम्बाको मिला है। तीसरा भी आन्ध्रके श्रीनिवासचारीको, चौथा तामिलनाडकी माधु गुलाबी अम्बाको। मीनाक्षी सुन्दरम्को छठा मिला है।[2] सातवाँ श्रीमती तारामती अरुन्नसा, आठवाँ रामकृष्ण शास्त्री,

१. यह बेलगाँव कांग्रेसमें दिया गया था।

२. साधन-सूत्रमें छठे नामका उल्लेख नहीं है।

नवाँ रामदेव ठाकुर, दसवाँ सुभान अली और ग्यारहवाँ भी आन्ध्रके लक्ष्मी भाई अन्ताको दिया गया।

मुझे यह देखकर अफसोस होता है कि एक ही मुसलमान भाईने पदक पाया है। एक जमाना था कि बारीक सूत कातनेवाली मुसलमान औरतें ही थीं। लेकिन इसमें हमने यह भी देखा कि ११ में से चार पदक बहनोंके हाथ गये हैं, बाकी भाइयोंके हाथ। एक भाईने लिखा है कि वे उस अस्पृश्य भाईसे हाथ मिलाना चाहते हैं जो अभी बोले थे। वे दिल्लीके प्रतिनिधि हैं। जो भेंट करना चाहे, कर ले। ८ बजे स्टूडेंट सभा, और ऑल इंडिया कांग्रेस कमेटी कल ११ बजे होगी। अब जिनका स्वर्गवास हो गया है, उसमें मौलाना सर साहबका भी जिक्र होना चाहिए। अभी मैंने मौलाना मुहम्मद अली साहबसे पूछा था। उनका स्वर्गवास हालमें ही नहीं हुआ था। वह तो कोकोनाडामें जब जलसा चल रहा था, तब जलसेके पहले दिन हुआ था। जितने भाई आये हैं, उनके लिए अफसोस जाहिर करना उनका काम है। अच्छा, अब यह सब हो गया।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके ३९ वें अधिवेशनकी रिपोर्ट।

३९६. समापन-भाषण : बेलगाँव कांग्रेसमें

२७ दिसम्बर, १९२४

अधिवेशनकी कार्यवाही समाप्त करते हुए अध्यक्षने पहले हिन्दीमें और फिर अंग्रेजीमें अत्यन्त जोशीला भाषण दिया :

अब मैं भाइयोंसे इतना कहना चाहता हूँ कि मैं आपका जितना अहसान मानूं उतना कम है। मैं नहीं जानता कि कोई भी सभापति, कोई भी सदर, जो मुहब्बत आपने मुझे बताई है, उससे ज्यादाकी उम्मीद कर सकता है। जो काम मैं आपसे लेना चाहता था, वह तुरन्त आपने मुझे [करके] दे दिया। जब मैंने कहा कि आप खामोश रहें तो, आप खामोश रहे, जो व्याख्यान देना चाहा, सुन लिया — आपने कहा आप लिखा व्याख्यान चाहते हैं। मैंने कहा — क्षमा करें, तो आपने फिर उसके लिए नहीं कहा। जिस तरह यहाँ आपने शान्तिसे, आवाज किये बिना काम किया है, राय दी है, उसी तरह सब्जेक्ट्स कमेटी [विषय समिति] में भी कोई भी हरकत [गडबड] नहीं हुई। हकीकत तो यह है कि हरकतकी बात तो तब हुई थी कि जब चरखेका बम्ब आपके बीचमें फेंका था। आपने कोई एतराज यहाँ नहीं किया। सब्जेक्ट्स कमेटी (विषय समिति) में भी बड़े अदबसे बरताव किया। इसके लिए, मैं मानता हूँ कि कोई मेरा पूर्वजन्मका पुण्य होगा कि मेरे भाइयोंकी मेरे ऊपर यह दया है। मैं यह चाहता हूँ कि जो यह कृपा मेरेपर आपने बताई है, भारतवर्षपर बतायें, क्योंकि मैं जिन्दा रहना चाहता हूँ तो भारतवर्षके लिए और मरना चाहता हूँ तो भारतवर्षके लिए ही। खुदाके हुक्मके बिना एक पत्ता भी नहीं हिलता। परन्तु हरएक आदमीको अख्तियार है कि

वह खुदासे माँगे; जैसे एक बालक अपने पितासे माँग लेता है, वैसे खुदासे माँगे। मैंने तो यह भी देखा है कि वह मुझको जब माँगता हूँ दे भी देता है। जितना खुदाने निश्चित किया है, वह मिट नहीं सकता।

इसलिए मेरी आप भाइयोसे प्रार्थना है कि आप भारतवर्षकी सेवाके लिए कटिबद्ध हो जाये और जो प्रतिज्ञा आपने ली है उसका पालन करे। मुझे मालूम है कि मैंने सभापतिका स्थान लिया और आप भाई-बहनोंने मुझे मुहब्बत दी। मैं भी चाहता हूँ कि सबके मुँहसे [अपनी] बड़ाई सुनूँ — लेकिन इससे उद्देश्य सिद्ध नही हो सकता। वह तब होगा जब आप जो प्रतिज्ञा करे उसके अनुसार काम करे। मैं यह नही मानता कि ये सब काम हमारी शक्तिसे बाहर हैं — तीसरा काम जो हम करना चाहते है या चौथा या पाँचवाँ काम — इनमे से कोई भी ऐसा नही।

जब मैं भाई भोपटकरका व्याख्यान सुन रहा था तो मुझे सानन्दाश्चर्य हुआ। जब उन्होने कहा कि क्या आप हिन्दू धर्मका नाश करना चाहते है कि जो मनुष्य हैं उनको अस्पृश्य समझते है, तब मुझे बहुत आनन्द हुआ। और तीन शास्त्री महाशयोंने अभी आपको सुना दिया कि हिन्दू धर्ममे हम जैसा मानते है वैसा अस्पृश्यताकी कोई बात नही। क्या यह वही बात है कि हिन्दू-मुसलमान एक-दूसरेको दुश्मन न समझें, और भाई-भाई समझे? आपने नही सुना कि भाई शौकत अलीने क्या कहा है? लाला लाजपतरायने क्या कहा है? भाई जफर अली खाँने एक एतराज किया था — मैं कोई एतराजकी बात नही समझता — लेकिन वह भी हिन्दुस्तानके दुश्मन नहीं हैं। आप किसीको दुश्मन न माने। आपके दिलमे यही होना चाहिए कि हम दुश्मनको भाई बना लेंगे।

लालाजीने एक सिद्धान्त सुना दिया कि सारा प्रश्न मानव जातिका है। किसी एक धर्मतक यह बात मौजूद नही है। उन्होंने कहा कि हिन्दू अगर पागल बना तो क्या कोई मुसलमान उसको गाली न दे? मुसलमान रामचन्द्र और कृष्णको गाली दे तो हिन्दू उसके पैगम्बरको गाली न दें? अगर आप इसका फैसला माफ करके नही करना चाहते तो अदालतमे, पचायतमे जाइये। मैं असहयोगी हूँ, मगर कोई मुसलमान कृष्णको गाली दे तो मैं कहूँगा अदालतमें जाओ, मगर लडो मत। इसमे लडनेकी कोई बात नही है। इस सिद्धान्तकी स्वीकृतिके लिए बहुत समयकी जरूरत नही है। हम लोगोको इस स्वराज्यके लिए इतना बुखार होना चाहिए, हमारे दिलोमें बड़ी आग जलनी चाहिए। जब भोपटकर बोल रहे थे, तब मुझे लोकमान्यकी याद आ गयी। वे स्वराज्यकी प्रतिमा थे। उनके विषयमे एक बड़ी बात सुनी है। उनकी धर्म-पत्नीका स्वर्गवास हुआ तो उस वक्त भी वे अपनी स्वराज्य-सेवामे लगे हुए थे। अगर ऐसा ही ज्वालामुखी हमारे दिलोमें प्रगट हो जाये तो क्या तीसरा और क्या चौथा, हम क्या नही कर सकते? कांग्रेसमे आनेपर खद्दर पहने, यह क्या कोई बड़ी बात है? हम विदेशी कपड़े छोड दे, यह भी कोई बड़ी बात है? आज मैं उनको जलानेकी बात नहीं करता। मैं वही आदमी हूँ कि जिसने सन् इक्कीसके शुरूमें विदेशी कपड़े जलवाये थे। लेकिन हमने शान्तिकी टेक छोड़ दी। अगर सम्पूर्ण शान्ति

आज भी हम पैदा कर सकें तो मैं आज भी सन् इक्कीस-जैसी बात करने लगूं। विदेशी कपड़ेका नाम लेकर पत्थरके ढेर भरे थे।

यह बात मैं जानता हूँ कि दो काम हम साथ-साथ नहीं कर सकते कि सत्यका नाम ले और असत्य [का आचरण] करें। अगर हम सत्यका नाम ले तो असत्यका (आचरण) न करें, नहीं तो शरीर भी जल जायेगा। इससे मेरा दिल तो जल ही जाता है। कोई मेरे सामने झूठी प्रतिज्ञा करे, खुदाकी कसम खाये तो मैं इसे बरदाश्त नहीं कर सकता। मुझे गाली दो, मारो, बूटसे मारो, मेरे ऊपर थूको, मैं विश्वास दिलाता हूँ कि मुझे गुस्सा कभी नहीं आयेगा। लेकिन प्रतिज्ञा करके उसका पालन न करो तो गुस्सेकी अग्निमें मेरा शरीर जल उठेगा। एक स्त्री अपवित्र होकर मेरे सामने पवित्रताका दावा करे तो मेरे दिलमें होता है कि मैं मर जाऊँ। एक मनुष्य पवित्रताका दावा करे और अपवित्र हो तो मैं चाहता हूँ कि मैं मर जाऊँ उसे न देखूं। आपने जो मुहब्बत बताई है, कृपा करके मुझे जिम्मेदारीकी जगहमें रखा है, उसको भंग न करना चाहे तो इसे समझ ले। अगर आप उसमें मुझे रखना चाहते हैं तो मुझे इसी तरह रखें। इससे बढ़कर अच्छी बात यह है कि स्वराज्यवादी और नाफेरवादी [अपरिवर्तनवादी] ऐसे मिल जायें जैसा डाक्टर बेसेंटने कहा है। एक-एक लकड़ी अलग रहे तो टूट जाती है, मगर एक गठ्ठरमें मजबूत रहती है।

हम भूल जायें कि स्वराज्यवादी बुरे हैं। पवित्र आत्माके लिए सब आत्माएँ पवित्र हैं। आत्माका गुण क्या बताया गया है? आत्मा स्फटिक है। शंकराचार्यने कहा कि आत्मा तो दोष-रूप नहीं है। दोष-रूप तो माया है। आपके दिलमें शक्ति आ गई तो द्वेष किये बिना आप दूसरोंकी बुराई निकाल देंगे। हम जब अविश्वास करते हैं, तभी दोष-रूप बनते हैं। अगर एतबारका बदला धोखा है तो एतबार करनेवालेका क्या बुरा होगा? धोखा देनेवालेका ही बुरा होगा। भाई जवाहरसे मैं कहूँ कि मैं तुमको बेटेसे ज्यादा मानता हूँ और ऐसा मैं सिर्फ उनसे काम लेनेके लिए ही कहूँ तो वह धोखा है। जवाहरलालकी पूजा मैं कौन करनेवाला हूँ? उसकी पूजा तो जगत् करेगा, उसपर पुष्प-वृष्टि करेगा।

इस वक्त मैं एकको नहीं, दूसरेको नहीं, दोनोंको कहना चाहता हूँ — आप एक सालमें इतना काम करे कि जिससे हमारी शक्ति बढ़ जाये और स्वराज्य नजदीक आया है, ऐसा हम सब महसूस करे।[1]

तदनन्तर अंग्रेजीमें भाषण देते हुए अध्यक्षने कहा:

अभी मैंने अपने हिन्दी भाषणमें अपना हृदय आपके सामने खोलकर रख दिया है। जो-कुछ मैंने हिन्दीमें कहा है, उसे फिरसे यथावत् दुहरा जाना मेरे लिए असम्भव है। फिर भी मैं एक बात कहना चाहता हूँ कि आप प्रतिनिधियोंने जितना सौजन्य मेरे प्रति दिखाया है, जितने ध्यानसे मेरी बात सुनी है, जितना प्रेम मेरे प्रति दर्शाया है, मैं नहीं समझता कि उससे अधिकका दावा कोई अन्य अध्यक्ष, कोई अन्य सभापति कर सकता है। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि यहाँ कांग्रेस-

१. इसके बादका अंश अंग्रेजीसे अनूदित है।

अधिवेशन तथा विषय-समितिकी कारंवाई अध्यक्षकी हैसियतसे सचालित करते हुए मुझे अत्यन्त हर्ष हुआ। जो भी मैंने चाहा, आपमे से प्रत्येकने वह तुरन्त कर दिया। मै जानता हूँ कि अधिवेशनके दौरानमे आपपर कामका बहुत अधिक बोझ डाले रहा। मै जानता हूँ कि मैंने आपपर बहुत बडा भार डाला है। मैं जानता हूँ कि मैंने आपको चलाया नही, बल्कि दौडाया है। किन्तु मैं क्या कर सकता हूँ? आप अधीर है और मै भी अधीर हूँ। हम स्वराज्यके पास पहुँचना चाहते है और हमे वहाँ घोघेकी चालसे नही, बल्कि अपनी साधारण चालकी भी दुगुनी चालसे दौडकर पहुँचना है। और यदि हम काम करना और आगे बढना चाहते है तो मै आपका और अपना एक क्षण भी व्यर्थ नही गँवा सकता। इसलिए मैंने अपनी पूरी शक्ति लगाकर तीव्र गतिसे कार्य किया है; और यह देखकर मुझे आश्चर्य एव सर्वाधिक सन्तोष हुआ है कि आपने मेरे कहनेपर तुरन्त और बहुत ही उत्तम ढगसे अमल किया है। आपने ऐसा कृपणताके साथ नही, बल्कि अत्यन्त उदारताके साथ किया है। कोई भी व्यक्ति इससे अधिकका दावा नही कर सकता था, इससे अधिककी माँग नही कर सकता था और इससे अधिक पा भी नही सकता था। मैं आपसे जो-कुछ माँग सकता था, आपने मुझे सब-कुछ दिया।

किन्तु अब मैं एक वस्तु ऐसी, जो इससे अधिक बडी, इससे अधिक उत्कृष्ट और जो इससे अधिक मूल्यवान् है, माँगना चाहता हूँ; वह यह है कि आप अपना यह उदात्त प्रेम और अपना यह सारा औदार्य, जो आपने मेरे प्रति दिखाया है, किसी उस वस्तुकी प्राप्तिमे लगा दे, जो आपको और मुझे दोनोको प्रिय है और जो अकेली ही मुझे और आपको एक सूत्रमे बाँधे हुए है, और वह है स्वराज्य। यदि हम स्वराज्य चाहते है तो हमे उसकी शर्त भी जाननी चाहिए। आपने इन शर्तोकी पुष्टि प्रस्तावोमे की है। इन शर्तोका ज्ञान हममे से प्रत्येकको है। आप इन शर्तोको यहाँ न भुला दे। आप उन्हे स्मरण रखे और उन्हे अक्षरश. तथा भावत हर तरहसे पूरा करे और अन्य लोगोंसे भी उनको पूरा करनेका आग्रह करे। आप ऐसा बलपूर्वक नही, बल्कि प्रेम-भावसे करे। प्रेम जितना प्रभाव और जितना दबाव डाल सकता है, आप अपने आसपासके लोगोपर और अपने पडोसियोपर उतना प्रभाव और दबाव अवश्य डाले। आप अपने पूरे जिलेमे दौरा करे और वहाँ खद्दर, हिन्दू-मुस्लिम एकता तथा अस्पृश्यताका यह सन्देश पहुँचाये। आप देशके नवयुवकोको साथ ले और उनको स्वराज्यके वास्तविक सैनिक बनाये।

किन्तु यदि स्वराज्यवादी और अपरिवर्तनवादी अब भी एक-दूसरेसे द्वेष रखेंगे, यदि उन्हे अब भी एक-दूसरेसे ईर्ष्या होगी तो आप यह कार्य नही कर पायेंगे। यह तो तभी सम्भव होगा जब आप घृणाको तिलांजलि दे दे, ईर्ष्या, क्रोध तथा अन्य सारे दुष्प्रभावोको भूल जाये। मै आपसे कहता हूँ कि आप द्वेषको भूला दे। ईर्ष्याको जमीनमे दफन कर दे और जहाँ भी चाहें वहाँ ले जाकर उसकी अन्त्येष्टि कर दे। किन्तु पारित किये गये पवित्र प्रस्तावको अपने मनमे, साथ ले जाये और कहे "चाहे कयामत आ जाये, लेकिन जिस स्नेह-बधनमे, हम आज बँधे हुए है और जिस

सूत्रसे स्वराज्यवादी और अपरिवर्तनवादी बँधकर एक हुए हैं वह कभी नही टूटेगा।" (जोरसे तालियाँ) मेरा काम समाप्त हो चुका है। (देर तक तालियाँ।)

अध्यक्ष अभी भाषण मंचसे उतरे ही थे कि उन्हे कांग्रेसकी ओरसे स्वागत समितिके प्रति आभार प्रकट करनेके कर्त्तव्यकी याद दिलाई गई। उन्होने पुनः मचपर आकर कहा :

यदि मैं डा० हार्डिकर द्वारा प्रशिक्षित कुशल और नेक स्वयसेवकोको और स्वागत समितिके सदस्योको धन्यवाद न देता तो मैं अपनेको कदापि क्षमा न करता। (हर्ष-ध्वनि) किन्तु स्वराज्यके लिए अत्यन्त जोशमें होनेके कारण मैं स्वयसेवकोको तथा स्वागत-समितिके सदस्योकी बात बिलकुल भूल ही गया था।

मैं जानता हूँ कि उन्होने धन्यवाद पानेके लिए सेवा नही की है। उन्होने जो महान् सेवा की है, वह अपने आपमे ही पुरस्कार है। किन्तु धन्यवाद देना मेरा कर्त्तव्य था और यदि मैं आप सबको धन्यवाद न देता तो मैं अपने कर्त्तव्यसे च्युत हो जाता। ईश्वर सभी स्वयसेवकोका तथा स्वागत समितिके सदस्योका कल्याण करे। (हर्ष-ध्वनि)

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके ३९ वें अधिवेशनकी रिपोर्ट।

३९७. भाषण : बेलगाँवकी अस्पृश्यता-परिषद्में

[२७ दिसम्बर, १९२४]

बेलगाँवमें अस्पृश्यता-निवारण परिषद्में मैंने जो भाषण किया था, उसकी रिपोर्ट श्री महादेवभाई देसाईने ली थी। उसमें मेरे विचार प्राय पूरी तरह समाविष्ट हो गये हैं। इसलिए उसे यहाँ देता हूँ

मित्रो,

मेरे लिए अस्पृश्यताके विषयमे कुछ कहना फजूल है। मैं बार-बार कह चुका हूँ कि यदि इस जन्ममे मुझे मोक्ष न मिले तो मेरी आकाक्षा है कि अगले जन्ममें भगीके घर मेरा जन्म हो। मैं वर्णाश्रमको मानता हूँ और इसी लिए जन्म और कर्म दोनोको मानता हूँ। पर मैं इस बातको नही मानता कि भगी कोई पतित योनि है। मैंने ऐसे कितने ही भगी देखे हैं जो पूज्य हैं और ऐसे कितने ही ब्राह्मण भी देखे हैं, जिनकी पूजा करना मेरे लिए मुश्किल पडता है। ब्राह्मणके घरमे जन्म लेकर ब्राह्मणोकी या भगियोकी सेवा कर सकनेकी अपेक्षा, मैं भगीके घर पैदा होकर भगियोकी सेवा ज्यादा कर सकूंगा और दूसरी जातियोको भी समझा सकूंगा। मैं भगियोकी अनेक तरहसे सेवा करना चाहता हूँ। मैं उन्हे यह सीख देना नही चाहता कि वे ब्राह्मणोसे घृणा करे। घृणासे मुझे अत्यन्त दु ख होता है। भगियोका मैं उत्कर्ष चाहता हूँ, पर मैं अपना यह धर्म नही समझता कि उन्हें पश्चिमी तरीकोसे अपना हक प्राप्त करनेकी सीख दूं। इस तरह कुछ भी हासिल करना हमारा धर्म नही, मार-

पीटसे प्राप्त की हुई चीज दुनियामे कायम नही रह सकती। मै अपनी आँखोके सामने उस जमानेको आता हुआ देखता हूँ, जब मार-पीटके बलपर कोई भी काम सिद्ध न हो सकेगा।

मै हिन्दू-धर्मकी उन्नति चाहता हूँ और अस्पृश्योको अपना बनाना चाहता हूँ। इससे जब कोई भी अछूत अपना धर्म छोडकर दूसरे धर्मंमे जा मिलता है, तब मुझे भारी धक्का पहुँचता है। पर हम करे क्या? हम हिन्दू पतित हो गये है। हमारे दिलोसे त्याग-भाव चला गया, प्रेम-भाव जाता रहा, सच्चा धर्म-भाव नष्ट हो गया। 'गीता'मे तो कहा है कि ब्राह्मण और चाण्डालको समान समझो। समानके मानी क्या है? यह नही कि ब्राह्मण और भगीका धर्म एक हो जाता है। इसका मतलब यह है कि हम दोनोको समान न्याय दे — इस हदतक समानता होनी ही चाहिए। मै भगियोकी जरूरते पूरी करूँगा। भगीकी तकलीफ तो यह है कि हम उनकी मामूलीसे-मामूली जरूरते भी पूरी नही करते। भगीको भी सोनेकी जगह तो चाहिए ही, साफ-सुथरी हवा और पानी तो चाहिए ही, भोजन तो चाहिए ही। इतनी बातोमे तो वे ब्राह्मणके समान ही है। जिस भगीको सेवाकी जरूरत है, जैसे कि किसी भगीको साँपने काटा हो तो मै जरूर उसकी सेवा करूँगा। भगीको यदि मै अपनी जूठन खिलाऊँ तो मै ही पतित बनूँगा। इसीसे मै कहता हूँ कि अस्पृश्यता हिन्दू धर्मका महापाप है।

हाँ, अलबत्ता एक प्रकारकी अस्पृश्यताके लिए हिन्दू-धर्ममे स्थान जरूर है। कोई शख्स मैलेको छूकर जबतक स्नान न कर ले, तबतक उसे अस्पृश्य मानना ठीक ही है। मेरी माँ जब मल-मूत्र साफ करती तब नहाये बिना किसी चीजको छूती न थी। मै वैष्णव सम्प्रदायका अनुयायी हूँ, इसलिए इतनी अस्पृश्यता — कर्मकी क्षणिक अस्पृश्यताको मै मानता हूँ। परन्तु जन्मकी अस्पृश्यताको मै नही मानता। जब मै किसी समय अपने मल-मूत्रको उठानेवाली अपनी माताकी मूर्तिका स्मरण करता हूँ, तब वे मुझे अधिक पूज्य मालूम होती है। उसी तरह जब भगीकी सेवाका विचार करता हूँ, तब मेरी दृष्टिमे वह पूज्य हो जाता है।

मैने यह कभी नही कहा कि अन्त्यजोके साथ रोटी-बेटीका व्यवहार रखा जाये, हालाँकि मै रोटी-व्यवहार तो रखता हूँ। बेटी-व्यवहारके लिए मेरे पास गुंजाइश नही। मै वानप्रस्थ-आश्रमका पालन करता हूँ — सन्यासका पालन करता हूँ या नही, सो नही कह सकता, क्योकि कलियुगमे सन्यास-धर्मका पालन करना महा कठिन है। मै तो प्राकृत प्राणी हूँ। मैने वेदाध्ययन नही किया और मै मोक्षके लायक हूँ या नही, इस विषयमे सन्देह है, क्योकि मै राग-द्वेषका पूर्ण त्याग नही कर पाया हूँ। मै 'वेद'का उच्चारण पण्डित मालवीयजीकी तरह नही कर सकता, उसके कारण मोक्ष न मिले, सो बात नही। पर जबतक मेरे अन्दर राग-द्वेष मौजूद है, तबतक मुझे मोक्ष नही मिल सकता। इससे मै सन्यासी चाहे न होऊँ, पर इस बातमे कुछ भी दोष नही दिखाई देता कि मेरी स्थितिका हिन्दू सारे ससारके साथ रोटी-व्यवहार रखे। परन्तु जिस दोषके दूर होनेकी आवश्यकता है, वह है अस्पृश्यता। उसमे रोटी-व्यवहारका समावेश नही है।

अस्पृश्यता-निवारणको मैंने जो कांग्रेसका एक कार्य माना है, वह केवल राजनीतिक हेतु पूरा करनेके लिए नहीं है। वह हेतु तो तुच्छ है, स्थायी नहीं। स्थायी बात तो यह है कि हिन्दू धर्ममें — जिसे कि मैं सर्वोपरि मानता हूँ — अस्पृश्यता-जैसी भारी बुराई हो नहीं सकती। स्थूल स्वराज्यके लिए मैं अन्त्यजोंको फुसलाना नहीं चाहता। मुझे जो लगता है कि हिन्दुओंने अस्पृश्यता बरतते रहकर भारी पाप किया है, इस लालचमें उन्हें फँसाना नहीं चाहता। उसका प्रायश्चित्त उन्हें करना चाहिए। मैं अस्पृश्योंकी 'शुद्धि' जैसी किसी चीजको नहीं मानता। मैं तो अपनी शुद्धिका कायल हूँ। जब मैं स्वयं ही अशुद्ध हूँ तो दूसरेकी शुद्धि क्या करूँगा? मैंने अस्पृश्यताका पाप किया है तो शुद्ध भी मुझे ही होना चाहिए। इसलिए हम जो अस्पृश्यता-निवारणका कार्य कर रहे हैं वह केवल आत्म-शुद्धि है, अस्पृश्योंकी शुद्धि नहीं। मैं तो हिन्दू-धर्मकी इस शैतानियतको निर्मूल करनेकी बात कर रहा हूँ, अस्पृश्योंको फुसलानेकी बात मेरे पास नहीं है।

परन्तु हिन्दू-जातिके लिए खान-पानका सवाल जुदा है। मेरे कुटुम्बमें ऐसे लोग हैं, जो मर्यादा-धर्मका पालन करते हैं। वे और किसीके साथ भोजन नहीं करते। उनके लिए खाने-पीनेके बरतन और चूल्हा भी अलहदा चाहिए। मैं नहीं मानता कि इस मर्यादामें अज्ञान, अंधकार या हिन्दू-धर्मका क्षय है। मैं खुद इन बाहरी आचारोंका पालन नहीं करता। मुझसे यदि कोई कहे कि हिन्दू-संसारको इसका अनुकरण करनेकी सलाह दो, तो मैं वैसी सलाह नहीं दूँगा। मालवीयजी मेरे पूज्य हैं, मैं उनका पाद-प्रक्षालन भी करूँगा पर वे मेरे साथ खाना नहीं खाते। ऐसा करके वे मेरे साथ घृणा नहीं करते। हिन्दू-धर्ममें इस मर्यादाका अटल स्थान नहीं है, परन्तु एक खास स्थितिमें वह स्तुत्य मानी गई है। रोटी-बेटी-व्यवहारका सम्बन्ध जिस दरजेतक संयमसे है, उस दरजेतक उसका सीमित रहना ठीक ही है। पर यह बात सब जगह सच नहीं है कि किसीके साथ भोजन करनेसे मनुष्यका पतन होता है। मैं नहीं चाहता कि मेरा लड़का जहाँ चाहे और जो चाहे खाना खाता फिरे, क्योंकि आहारका असर आत्मापर पड़ता है। पर यदि संयम या सेवाकी सुविधाके लिए वह किसीके यहाँ कुछ खास चीजें खाये तो मैं नहीं समझता कि वह हिन्दू-धर्मका त्याग करता है। मैं नहीं चाहता कि खान-पानकी जो मर्यादा हिन्दू-धर्ममें है, उसका पूरा क्षय हो। सम्भव है कि इस मर्यादाको भी छोड़ देनेका युग आ जाये। ऐसा होनेसे हमारा विनाश नहीं हो जायेगा। आज तो मैं वहींतक जानेके लिए तैयार हूँ, जहाँतक मेरा दिल मानता है। मेरे विचारमें इस युगमें रोटी-बेटीके व्यवहारकी मर्यादाका लोप नहीं आ सकता। मेरी इस वृत्तिके कारण मेरे कितने ही मित्र मुझे दम्भी मानते हैं, पर इसमें किसी तरहका दम्भ नहीं है, स्वामी सत्यदेव और मैं अलीगढ़ जा रहे थे। उन्होंने मुझसे कहा, "आप यह क्या करते हैं? ख्वाजा साहबके यहाँ खायेंगे?" मैंने कहा, "मैं खाऊँगा। आपके लिए यही मर्यादा है कि आप न खायें, लेकिन मेरे लिए ख्वाजा साहबके यहाँ खाद्य वस्तुएँ न खाना पतित होना है। पर यदि आप खायेंगे तो आपका पतन होगा, क्योंकि आप मर्यादाका पालन करते हैं।" स्वामी सत्यदेवके लिए ब्राह्मण बुलाया गया, उसने उनके

लिए रसोई वनाई। मौलाना अब्दुल वारीके यहाँ भी ऐसा ही इन्तजाम होता है, यहाँ तक कि हम जव जाते है तव ब्राह्मण बुलाया जाता है और उसे हुक्म होता है कि तमाम चीजे भी वाहरसे लाये। मैंने मौलानासे पूछा कि इतनी एहतियातकी क्या जरूरत है तो कहते है कि मै दूसरोको भी यह माननेका मौका नही देना चाहता कि मै आपको भ्रष्ट करना चाहता हूँ, क्योकि मै जानता हूँ कि हिन्दू-धर्मके अनुसार वहुत-से लोगोको हमारे साथ खाना खानेसे परहेज होता है। मौलानाको मै आदरकी दृष्टिसे देखता हूँ। वे सीधे-सादे, भोले आदमी है। कभी-कभी भूल कर डालते है। पर है खुदापरस्त और ईश्वरसे डरनेवाले।

वहुतेरे लोग मुझसे कहेगे कि आप सनातनी कहाँसे हो गये? आप काशी-विश्वनाथके दर्शन तो करते नही, और फिर ढेडकी लडकीको गोद ले लिया है। मुझे इन सवाल पूछनेवालोपर रहम आता है।

अन्त्यज भाइयो, आपके साथ वहुत वाते करने नही आया था, फिर भी कर गया, क्योकि आपके साथ मुझे प्रेम है। आपके साथ जो पाप किये गये है, उनके लिए मै आपसे माफी चाहता हूँ। पर आपको अपनी उन्नतिकी शर्त भी समझ लेनी चाहिए। मै जव पूना गया था तव एक अन्त्यज भाईने उठकर कहा था, "हिन्दू-जाति यदि हमारे साथ न्याय न करेगी तो हम मार-काटसे काम लेगे।" यह सुनकर मुझे दुःख हुआ था। क्या इससे हिन्दू-जातिका या आपका उद्धार हो सकता है? क्या इससे अस्पृश्यता दूर हो सकती है? उपाय तो सिर्फ यही है कि धर्मान्ध हिन्दुओको समझाये-बुझायें और वे जो कष्ट दे, उन्हें सहन करे। आप मदरसेमे जानेका हक चाहे, मन्दिरमे जानेका हक माँगे, चारो वर्ण जहाँ-जहाँ जा सकते हो वहाँ जानेका हक चाहें, जो-जो स्थान और पद वे प्राप्त कर सकते हो उनको पानेका हक माँगे, यह विलकुल ठीक है। अस्पृश्यता-निवारणका अर्थ है कि आपके लिए कोई भी ऐहिक स्थिति अप्राप्य न हो। पर आप इन सव वातोको पश्चिमी तरीकोसे नही, हिन्दू-धर्ममें जो विधि कल्याणकारिणी वताई गई है, उसीके द्वारा प्राप्त कर सकते है। यदि यह मानें कि शरीर-वलके द्वारा कार्य सिद्ध होता है तो इसका अर्थ यह होता है कि आसुरी साधनोके द्वारा हम धर्म-कार्य सिद्ध करना चाहते है। मैं आपसे चाहता हूँ कि आपके अन्दर यह आसुरी भाव न पैठे और आप सच्चे भागवत-धर्मका पालन करें। ईश्वर हमे ऐसी सन्मति दे कि जिससे अस्पृश्यता-निवारण एक क्षणमे हो जाये।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ११-१-१९२५

३९८. भाषण : गोरक्षा-परिषद्में

[२८ दिसम्बर, १९२४]

बेलगाँवमें हुई गो-रक्षा-परिषद्में गाधीजीने अध्यक्षकी हैसियतसे नीचे लिखा भाषण दिया :

मुझे दुख है कि जो सभा ४ बजे शुरू होनी थी, वह ६ बजे शुरू की गई, और आज मेरे सामने ऐसा प्रसग आ गया है कि मुझे इसको सवा घटेमे ही पूरा कर देना होगा। ऐसा कोई दूसरा उपयुक्त समय है नही, जब यह कार्य किया जा सके, और इस परिषद्को परसोतक मुल्तवी रखा नही जा सकता। इसलिए मैंने चिकोडीसे[1] कहा था कि ४ घटे काफी है और इसे ८ बजेतक पूरा कर देंगे। लेकिन यह नही हो सका।[2]

मेरे विचारसे गो-रक्षाका प्रश्न स्वराज्यके प्रश्नसे छोटा नही है। कई बातोमे मैं इसे स्वराज्यके प्रश्नसे भी बडा मानता हूँ। मै मानता हूँ कि जिस तरह अस्पृश्यता-के दोषसे मुक्त हुए बिना, हिन्दू-मुस्लिम एकता साधे बिना और खादीधारी बने बिना हम स्वराज्य नही ले सकते, उसी तरह मुझे कहना चाहिए कि जबतक हम यह न जान लें कि गो-रक्षा किस तरह करनी चाहिए तबतक स्वराज्य-जैसी कोई चीज नही है, क्योकि उसमे हिन्दू-धर्मकी सच्ची कसौटी है।[3]

मै सनातनी हिन्दू होनेका दावा करता हूँ, बहुत-से भाइयोको हँसी आती होगी कि मुसलमानोमे हिलने-मिलनेवाले, 'बाइबिल' की बाते करनेवाले, अग्रेजोके साथ पानी पीनेवाले, मुसलमानोकी बनाई हुई रोटी खानेवाले और अछूतकी लडकीको गोद लेने-वालेको सनातनी हिन्दू कहना, भाषापर अत्याचार करना कहा जायेगा। फिर भी मै सनातनी हिन्दू कहलानेका दावा करता हूँ, और मुझे विश्वास है कि एक समय ऐसा आयेगा जब मेरे मरनेके बाद सब यह स्वीकार करेंगे कि गाधी सनातनी हिन्दू था, क्योकि गो-रक्षा मुझे बहुत प्रिय है।

बहुत समय हुआ, मैंने 'यग इडिया' मे 'हिन्दू-धर्म' पर एक लेख[4] लिखा था। वह मेरा अत्यन्त विचारपूर्वक लिखा हुआ लेख है। उसमे हिन्दुत्वके लक्षणोपर विचार

१. स्वागत-समितिके अध्यक्ष।

२. यह पैरा महादेव देसाईकी डायरीसे लिया गया है।

३. **यंग इंडिया**, २९-१-१९२५ में, प्रकाशित इस भाषणके अंग्रेजी विवरणके अनुसार यह वाक्य कुछ इस प्रकार है :

मैं तो यहाँतक कहूँगा कि जिस प्रकार हिन्दू-मुसलमान एकता पैदा किये बिना, हिन्दू धर्मको अस्पृश्यताके कलंकसे मुक्त किए बिना और हाथ कते तथा हाथ बुनेको पहनावा बनाये बिना स्वराज्य हासिल करना असम्भव होगा, उसी तरह गो-रक्षाका कोई सही उपाय निकाले बिना स्वराज्य प्राप्त करना असम्भव और स्वराज्य शब्द बिलकुल ही अर्थहीन होगा, क्योंकि यही एक कसौटी है जिसपर हिन्दू धर्मको परखा और प्रमाणित किया जा सकता है और तभी भारतमें वास्तविक स्वराज्य सम्भव हो सकता है।

४. देखिए खण्ड २१, पृष्ठ २५६-६१।

करते हुए वेदादिको मानना, पुनर्जन्ममे विश्वास रखना और 'गीता', गायत्री आदिमे श्रद्धा होना आदि लक्षण बताये गये है। फिर भी सामान्य हिन्दुओके लिए तो मैंने गो-रक्षाका प्रेम ही हिन्दुत्वका मुख्य लक्षण ठहराया है। कोई पूछे कि दस हजार वर्ष पहले हिन्दू क्या करते थे? बडे विद्वान् और पण्डित कहते है कि वेदादि ग्रथोमे गो-मेधकी बात है। छठे दर्जेमे पढते हुए मैंने सस्कृत पाठशालामे 'पूर्वे ब्राह्मणा गवा मास भक्षयामासु' यह वाक्य पढा था और मैंने मनसे पूछा था कि क्या यह सच होगा? ऐसे वाक्योके बावजूद मै मानता आया हूँ कि वेदमे ऐसी बात लिखी हो तो शायद उसका अर्थ यह न रहा होगा जो हम करते है — दूसरी बात भी सम्भव है। मेरे अर्थके अनुसार अथवा मेरी आत्माकी प्रतीतिके अनुसार — मेरे पास पाण्डित्य अथवा शास्त्रीय ज्ञानका आधार नही है, आत्माकी प्रतीतिका ही आधार है — ऊपर कहे हुए वचनो-जैसे वचनोका दूसरा अर्थ न हो तो ऐसा होना चाहिए कि वे ही ब्राह्मण गो-भक्षण करते थे, जो गायको मारकर उसे फिर जिला सकते थे। मगर ऐसे वाद-विवादके साथ हिन्दू जनताका कुछ भी सरोकार नही। मैंने वेदादिका अध्ययन नही किया और अधिकतर सस्कृत ग्रथोको मै अनुवादसे ही जानता हूँ, इसलिए मेरे-जैसा प्राकृत मनुष्य इस विषयमे क्या बात करे? मगर मुझे आत्म-विश्वास है और इसलिए मै अपने अनुभवकी बात हर जगह किया करता हूँ। गो-रक्षाका अर्थ ढूंढने जायेंगे तो शायद हमे कही भी एक अर्थ न मिले, क्योकि हमारे धर्ममें कलमे-जैसी सर्वमान्य कोई एक चीज नही है और पैगम्बर भी नही है। इससे शायद हमारा धर्म समझनेमे कठिनाई पडती है। परन्तु उससे आसानी भी होती है, क्योकि बहुत-सी बाते हिन्दू जनतामे स्वाभाविक रीतिसे प्रवेश कर गई है। बालक भी समझता है कि हमे गो-रक्षा करनी चाहिए और गो-रक्षा न करे तबतक हम हिन्दू कैसे?

मगर गो-रक्षा करनेकी आजकलकी रीति मुझे पसन्द नही। हमारा गो-रक्षाका मौजूदा तरीका देखकर मेरा दिल अकेलेमे रोता है। रोना मुझे पसन्द नही। कोई रोये तो मुझे दुःख होता है, क्योकि हमे भारी बलिदान करने है और भारी बलिदान करनेवाले रोकर क्या हासिल करेंगे? फिर भी मेरा दिल गो-रक्षाके अर्थपर रोता है। कुछ वर्ष पहले मैंने 'हिन्द स्वराज्य'मे लिखा था कि हमारे गो-रक्षक मण्डलोको गो-भक्षक मण्डल कहा जा सकता है।[१] उसके बाद सन् १९१५ मे हिन्दुस्तान आ जानेके बादसे आजतक मेरी यह राय पुख्ता ही होती गई है। ऐसे विचार होनेसे मुझे लगा कि गो-रक्षा-परिषद्का अध्यक्ष मै क्या बनूंगा और लोगोको अपने विचार कैसे समझाऊँगा? लेकिन गगाधररावजीने मुझे तार भेजा कि आप अपनी शर्तपर सभापति बनिये, भाई चिकोडीजी आपके विचार जानते है और उनसे बहुत-कुछ सहमत है। इसलिए मैंने आना मजूर किया। इतना तो मैंने प्रस्तावनाके तौर-पर कहा।[२]

१. देखिए खण्ड १०, पृष्ठ २८-३०।

२. अंग्रेजी पाठके अनुसार, "अपनी सफाईके तौरपर कहा।"

चम्पारनमें एक जगह गो-रक्षाके बारेमें अपने विचार सुनाते हुए मैंने कहा था कि जिसे गो-रक्षा करनी हो, वह यह बात भूल जाये कि हमें मुसलमानों या ईसाइयों-से गो-रक्षा कराना है। हम आज यह समझते मालूम होते हैं कि दूसरे धर्मके लोग गो-मांस या गो-वध छोड़ें, इसीमें गो-रक्षाकी समाप्ति है। मुझे इस बातमें कोई अर्थ दिखाई नहीं देता।

मगर इससे कोई यह न समझे कि किसीका गो-वध करना मुझे पसन्द है या गो-वधको मैं सहन कर सकता हूँ। मैं यह दावा स्वीकार नहीं करता कि गो-वधसे मेरी अपेक्षा किसी दूसरेकी आत्माको अधिक दुःख होता है। मुझे नहीं लगता कि किसी हिन्दूको गो-वधके कारण मुझसे ज्यादा सख्त चोट पहुँचती होगी। मगर मैं क्या करूँ? मैं अपना धर्म पालन करूँ या दूसरेसे कराऊँ? मैं दूसरेको ब्रह्मचर्यका उपदेश दूँ और खुद व्यभिचार करूँ, तो मेरे उपदेशका क्या अर्थ? मैं गो-मांस भक्षण करूँ और मुसल-मानोंको रोकूँ, यह कैसे हो सकता है? मगर मैं गो-वध न करता होऊँ, तब भी मुसलमानोंको गो-वध करनेसे बलात् रोकना मेरा धर्म नहीं।[1] मुसलमानोंसे जबरदस्ती गो-वध बन्द कराना उन्हें जबरदस्ती हिन्दू बनाने-जैसा है। हिन्दुस्तानमें हिन्दू राज्य हो तो भी गो-वधको अधर्म न माननेवालोंको गो-वधके लिए सजा नहीं मिलनी चाहिए।[2]

मेरे मनमें गो-रक्षा कोई सीमित चीज नहीं है। मैं गो-रक्षाकी प्रतिज्ञा करता हूँ, इसका अर्थ यह नहीं कि हिन्दुस्तानकी ही गायोंको बचाऊँगा। मैं तो संसार-भरकी गायोंको बचानेका नियम रखूँगा। मेरा धर्म यह सिखाता है कि मुझे अपने आचरणसे जता देना चाहिए कि गो-वध या गो-भक्षण करना पाप है और उसे छोड़ देना चाहिए। मेरा मनोरथ तो इतना बड़ा है कि सारी पृथ्वीके लोग गायकी रक्षा करने लगें। मगर इसके लिए मुझे पहले अपना ही घर अच्छी तरह साफ करना चाहिए।

दूसरे प्रान्तोंकी बात जाने दूँ। गुजरातकी ही बात करूँ तो कहूँगा कि गुजरातमें भी हिन्दुओंके हाथों गो-वध होता है। शायद आप न मानें। मगर आपको पता न होगा कि गुजरातमें बैलको गाड़ीमें जोतकर, गाड़ीमें खूब बोझा भरकर उसे आर भोंकी जाती है, जिससे उसके शरीरसे खूनकी धार चलती है। आप कहेंगे कि यह गो-वध नहीं कहा जा सकता, बैल-वध भले कहलाये। मैं तो इसे गो-वध ही कहूँगा, क्योंकि बैल गायकी सन्तान है। फिर शायद आप कहेंगे कि ताड़नको वध नहीं कहा जा सकता। मगर हिंसाकी व्याख्या दूसरेको दुःख देना या सताना है। अगर बैलके जबान हो तो वह जरूर कहे कि रोज-रोज आर भोंककर सतानेसे तो मैं ज्यादा पसन्द करूँगा कि एक दिन छूरी चलाकर मुझे कत्ल कर दो। इसलिए बैलपर इस तरह जुल्म करनेको मैं गायकी हिंसा समझता हूँ। एक सिन्धी मुझे कलकत्तेमें मिला था। वह मुझसे वहाँ

१. यंग इंडियामें प्रकाशित अंग्रेजी विवरणमें एक वाक्य और जुड़ा है: "मुसलमान कहते हैं कि इस्लाम उनको गो-वधकी अनुमति देता है।"

२. अंग्रेजी विवरणमें यह वाक्य इस प्रकार है: "मेरी रायमें तो भारतमें स्वराज्य हो जानेपर भी हिन्दू बहुमतके लिए यह अनुचित और अविवेकपूर्ण ही होगा कि वह एक कानून बनाकर मुसलमान अल्पसंख्यकोंको गो-वध बन्द करनेपर विवश करे।"

गायपर सदा जो हिंसा होती है उसकी बाते करता था। एक बार उसने मुझे ग्वालेके घर चलकर फूंके द्वारा गायका दूध निकालनेकी क्रिया देखनेको कहा। वह भयकर दृश्य मैंने खुद देखा। मुझे विश्वास है कि वह क्रिया आज भी जारी है। उसे करनेवाले हिन्दू है। दुनियामे कही भी गाय-बैल हमारे यहाँकी तरह बेहाल नही होगे। हमारे बैलोके शरीरपर हड्डी और चमडीके सिवा कुछ नही होता। फिर भी हम उनसे अपार बोझा उठवाते है। जबतक यह होता है तबतक हम किसीसे गो-वध बन्द करनेकी माँग नही कर सकते।

'भागवत' मे हम पढते है कि भारतवर्षका नाश कैसे हुआ। उसके अनेक कारणोमें एक कारण हमारा गो-रक्षा छोड देना भी बताया गया है। गो-रक्षा करनेकी अशक्ति-का हिन्दुस्तानकी गरीबीके साथ घनिष्ठ सम्बन्ध है। आप और मै भी शहरके रहनेवाले है। इसलिए हमे गरीबोकी स्थितिका अन्दाजा नही हो सकता। करोडोको एक जून भी पूरा खानेको नही मिलता। करोडो लोग सडे हुए चावल या आटा और नमक-मिर्च खाकर गुजर-बसर करते है। ऐसे लोग गायकी रक्षा कैसे करे?

हिन्दुस्तानमे अनेक पिंजरापोल जैनोके हाथमे है। इन पिजरापोलोमे बीमार जानवरोको रखा जाता है। वहाँ जैसी चाहिए, वैसी व्यवस्था और सुविधा नही होती। हमारे पास पिंजरापोल ही नही, सुन्दर डेरियाँ भी होनी चाहिए। बडे-बडे शहरोमें बालकोके लिए भी शुद्ध दूध नही मिल पाता।[1] गरीब मजदूरोकी स्त्रियाँ बालकोको दूधके बजाय आटा और पानी घोलकर पिलाती है। २३ करोड हिन्दुओकी आबादी-वाले हिन्दुस्तानमे शुद्ध दूध न मिले, इसका इतना अर्थ तो है ही कि हमने गो-रक्षा छोड़ दी है।[2]

गोरक्षाके विषयमे मुझसे पाठ लेना हो तो मेरा पहला पाठ यह है कि मुसल-मानो और ईसाइयोको भूल जाओ और अपने धर्मका पालन करो। भाई शौकत अलीको मैं साफ कहता आया हूँ कि उनकी खिलाफतकी गायको बचाऊँगा तो ही मेरी गाय बचेगी। मैंने मुसलमानोके हाथमे अपनी गरदन क्यो दी है? गायकी रक्षाके लिए। मुसलमानोसे मै गायको बचाना चाहता हूँ, इसका अर्थ यह है कि उनके दिलपर असर करके गायको बचाना चाहता हूँ। जबतक उनमे इतनी समझ न आ जायेगी कि हिन्दू भाइयोके खातिर गो-वध नही करना चाहिए, तबतक मै धीरज रखूंगा। अपने कृत्यसे, अपनी खुदकी गो-रक्षा और गो-भक्तिसे ही मै उनका दिल बदल सकूंगा।

मेरी दृष्टिमें गो-वध और मनुष्य-वध एक ही चीज है। इन दोनोको रोकनेका उपाय यही है कि हम अहिंसा सीखे और मारनेवालेको प्रेमसे अपना ले। प्रेमकी

१. **यंग इंडिया**, २९-१-१९२५ में प्रकाशित अंग्रेजी विवरणमें ये शब्द और जुड़े हैं: 'अहमदाबाद-जैसे समृद्ध शहरमें भी कुछ . . .'।

२. **यंग इंडिया**के अंग्रेजी विवरणमें यह वाक्य इस प्रकार है: "पिंजरापोलोंकी इतनी विस्तृत व्यवस्थाके बावजूद हमारे देशमें गो-रक्षा कैसे की जाती है, यह इसीसे जाहिर हो जाता है कि गरीब लोगोंको अच्छा शुद्ध दूध मिल ही नहीं पाता। आशा है कि इससे आपकी समझमें आ जायेगा कि गो-रक्षा न कर पानेके अनेक दुष्परिणामोंमें से ही एक यह भी है कि लोग कंगाली और भुखमरीके शिकार बनते जाते हैं।

परीक्षा तपश्चर्यामे है और तपश्चर्याका अर्थ है दु ख सहन करना। मै मुसलमानोके लिए यथाशक्ति दु ख सहनेको जो तैयार हुआ, उसका कारण स्वराज्य-प्राप्तिकी छोटी तो थी ही, लेकिन गायको बचानेकी बडी बात भी उसमे थी।

'कुरानशरीफ'में, मेरी समझसे, ऐसा लिखा है कि किसी भी प्राणीकी व्यर्थ जान लेना पाप है। मै मुसलमानोको यह समझानेकी शक्ति अपनेमें पैदा कर लेना चाहता हूँ कि हिन्दुस्तानमें हिन्दुओके साथ रहकर गो-वध करना हिन्दुओका खून करनेके बराबर है, क्योकि 'कुरान' कहती है कि खुदाका हुक्म है कि बेगुनाह पडौसीका खून करनेवालेके लिए जन्नत नही है। अर्थात् आज जो मै मुसलमानोका साथ देता हूँ, उनके साथ ऐसा बरताव करता हूँ जिससे उन्हे दु ख न हो, उनकी खुशामद करता हूँ, यह केवल उनकी धर्मवृत्ति जाग्रत करनेके लिए है, न कि उनके साथ बनियापन या सौदेबाजी करनेके लिए। अपने कर्त्तव्य-पालनके फलके बारेमें मुसलमानोके साथ बात नही करता। उस विषयमे तो ईश्वरसे ही बात करता हूँ। अपने 'गीता'-पाठसे मै समझता हूँ कि अच्छे कामका बुरा नतीजा कभी नही आ सकता। इससे मैने निश्चय किया है कि मुसलमानोके साथ शर्त किये बिना उनका साथ देना मेरा कर्त्तव्य है।

इसी तरह अंग्रेजोके बारेमे। आज उनके लिए जितनी गाये कटती है, उतनी मुसलमानोके लिए नही कटती। मगर मै तो उनका भी हृदय ही हिलाना चाहता हूँ — उन्हे यह समझाकर कि पश्चिमकी सभ्यता जिस हदतक विरोधी हो उस हदतक वे उसे भूल जाये और जबतक यहाँ रहे तबतक यहाँकी सभ्यता सीख ले। यदि हम अपने स्वार्थके लिए भी अहिसा सीख लेगे और अहिसाका पालन करेंगे तो गो-रक्षा हो सकेगी, अंग्रेज मित्र बन जायेंगे। अंग्रेज और मुसलमान दोनोको मै मरकर, यानी अपनी कुर्बानीसे खरीदना चाहता हूँ। अंग्रेज कर्मचारियोमें आज बडा घमण्ड है। इसलिए जिस तरह मै मुसलमानोके सामने विनम्र बनता हूँ उस तरह उनके सामने नही बनता। मुसलमान तो आज हिन्दुओकी तरह ही गुलाम है। इसलिए उनसे मित्र-भावसे बात कर सकता हूँ। अंग्रेज मेरे इस मित्र-भावको नही समझ सकते और मुझे लाचार जानकर सम्भव है, मेरा तिरस्कार करें। वे मेरी मदद नही चाहते। वे तो आश्रयदाता बनना चाहते है। इसलिए उनके प्रति मै शान्त रहता हूँ। दान सुपात्रको और ज्ञान जिज्ञासुको ही देनेका शास्त्र-नियम है। अंग्रेज शासकोसे मै इतना ही कहूँगा कि आपका कृपाभाव मुझे नही चाहिए। आपके साथ मै प्रेमपूर्ण असहयोग ही करता हूँ। चौरीचौराके और बम्बईके दगोके समय, और अहमदाबाद वीरमगाँवके हगामेके समय, मैने सत्याग्रह मुल्तवी किया, उसका कारण यही था कि ऐसा करके मै साबित करना चाहता था कि मै हत्या करके नही, बल्कि अंग्रेजोको बचाकर यानी प्रेमपूर्ण व्यवहारसे स्वराज्य लेना चाहता हूँ। आज यहाँसे अंग्रेजो और मुसलमानोको मारकर या निकालकर मै गायको बचाऊँ तो उससे मुझे क्या सन्तोष होगा? मुझे तो सन्तोष तभी होगा जब दुनियाभरके लोग गायको बचाने लगें, यह शुद्ध अहिसाके पालनसे ही हो सकता है।

अब गो-रक्षाका मेरा अर्थ आपकी समझमे आ गया होगा। गो-रक्षाका स्थूल अर्थ यह है कि हम स्थूल गायकी रक्षा करे। गो-रक्षाका सूक्ष्म आध्यात्मिक अर्थ यह

है कि प्राणि-मात्रकी रक्षा की जाये। आज हम अहिंसा नीतिके परिणामों और उसकी शक्तिको नही जानते। मुसलमान, ईसाई और हिन्दू नही जानते कि उनके धर्म-ग्रन्थ अहिंसासे भरे है। हमारे ऋषियोने मन्त्रोके अर्थ करनेके लिए भारी तपस्या की थी। गायत्रीका जो अर्थ आज सनातनी करते है वह सच्चा है या आर्य-समाजी करते है वह सच्चा है, यह कौन कह सकता है? मेरा तो दृढ विश्वास है कि ईश्वरके भेजे हुए किसी भी सन्देशका अर्थ — किसी भी सूत्रका अर्थ — जैसे-जैसे हम सत्य और अहिंसाके प्रयोगमे आगे बढते जायेंगे, वैसे-वैसे अधिक खुलता जायेगा। ऋषि कह गये है कि गो-रक्षा हिन्दूका परम कर्त्तव्य है, क्योकि उससे मोक्ष मिलता है। मै नही मानता कि केवल स्थूल गायकी रक्षा करनेसे ही मोक्ष मिल जायेगा, क्योकि मोक्ष पानेके लिए राग-द्वेष छोडना जरूरी है। इसलिए गो-रक्षाका जो सामान्य अर्थ हम करते है, उससे व्यापक अर्थ करना चाहिए। गो-रक्षासे मुक्ति मिलती हो तो गो-रक्षाका अर्थ सिर्फ गायकी ही रक्षा नही बल्कि प्राणि-मात्रकी रक्षा होना चाहिए, अर्थात् [कोई भी हिंसा — कटु वाक्यसे स्त्री, भाई-बन्धु किसीका भी जी दुखाना, किसी भी प्राणीको दु ख पहुँचाना — गो-रक्षाका उल्लघन है, गो-भक्षण है।] हिन्दू-धर्ममे गायकी रक्षाका उपदेश है तो क्या गायको न मारना और बकरीको मारना चाहिए? गायका सकुचित अर्थ करनेसे ऐसे बहुतसे अनर्थ हो सकते है। गोरक्षा करनेवाले बहुत-से हिन्दू दूसरे जानवरोका मास खाते है। मेरी तुच्छ रायमे वे गो-रक्षा करनेका दावा नही कर सकते।

लाला धनपतराय नामक मेरे जैसा एक पागल-सा आदमी लाहौरमें मुझसे मिलने आया था। उसने मुझे कहा कि तू गो-रक्षा करना चाहता हो तो हिन्दू जो पाप कर रहे है उससे उन्हे बचा। उसने कहा · कोई हिन्दू अगर गायको न बेंचे तो कत्ल कौन करे? कसाईको गाय कोई दे ही नही तो वह गाय लाये कहाँसे? इसमे आर्थिक प्रश्न है। हमारी गोचर-भूमि सरकारने ले ली। इस कारण गायका दूध देना बन्द करनेपर हिन्दू तुरन्त उसे बेच देते है। इसका उपाय धनपतरायने मुझे बताया। उसने कहा कि ऐसी गायको बेचनेकी जरूरत नही। गायसे बैलका काम क्यो न लिया जाय? हमारे धर्ममें ऐसा नही कहा गया है कि गायका भारवाहक जानवरके तौर पर उपयोग न किया जाये। हम अपनी माताओपर जितना बोझा रखते है, उतना उसपर भी डाले। गायको खिला-पिलाकर, प्रात काल उसकी पूजा करके थोडा काम उससे ले ले, तो क्या बुराई है? ऐसा उस भाईने मुझसे पूछा। उसके पास बहुत-सी गाये है। वह उन गायोको मोटी-ताजी करके गाडी और हलमे जोतता है। फिर वे फलती है और गो-वश बढाती है। यह मैने आँखसे नही देखा। धनपतरायकी कही हुई बात है। मगर इसे न माननेका कोई कारण नही है। मै मानता हूँ कि यह विचारने लायक बात है। कोई इस तरह भी गायकी रक्षा करता हो तो उसकी निन्दा नही होनी चाहिए।

इस परिषद्मे कुछ प्रस्ताव सुझानेकी मेरी इच्छा थी, मगर अब प्रस्तावका समय नही है। और आज मैने जो बाते कही, उनमे से आप कुछ बाते समझे न हो तो

भी प्रस्तावोंके बारेमें 'हाँ' करें, तो उसमें मेरा और आपका कल्याण कैसे होगा? इसलिए मेरी सलाह यह है कि मेरा यह व्याख्यान सुनकर आप लोग एक कमेटी बनायें, उसमें कुछ साधु-चरित गो-रक्षा-भक्त हिन्दुओंको रखें और वे सभाका विधान बनाकर, मैंने जो बातें पेश की हैं उनमें से स्वीकार करने लायक बातें स्वीकार करके सभाको स्थायी रूप देनेके लिए अगली परिषद्में सभाका विधान पेश करें।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २५-१-१९२५

३९९. भाषण: अ० भा० देशी रियासत-परिषद्में[1]

[३० दिसम्बर, १९२४]

पण्डालमें प्रवेश करनेपर महात्मा गांधीका जोरकी हर्ष-ध्वनिके साथ स्वागत किया गया।

उन्होंने कहा :

पिछले कुछ दिनोंमें सभी लोगोंने मेरे प्रति जो स्नेह प्रदर्शित किया है उससे मैं अभिभूत हो गया हूँ। आज आपके अध्यक्षने अपना भाषण बीच ही में स्थगित करके मुझे आपसे कुछ शब्द कहनेका अवसर देकर उस स्नेहका और प्रमाण दिया है। आपको मालूम होगा कि मैं भारतके एक गाँवमें पैदा हुआ था। मैं काठियावाडकी रियासतोंको जानता हूँ। उनके साथ मेरे सम्बन्ध सद्भावपूर्ण हैं। हालाँकि मैं कुछ कहता नहीं लेकिन देशी रियासतोंमें होनेवाली गति-विधियोंको बराबर देखता रहता हूँ। अध्यक्ष-पदसे दिये गये अपने भाषणमें मैंने देशी रियासतोंका उल्लेख किया है। अभी हालमें बम्बईमें जो सर्वदलीय सम्मेलन हुआ था, उसने स्वराज्यकी एक योजना तैयार करनेके लिए एक समिति नियुक्त की है और अपने भाषणमें मैंने आनेवाले स्वराज्यकी अपनी रूपरेखा बताई है। अपने विचारोंको मुझे कमसे-कम वाक्योंमें बताना पड़ा और इसलिए मैं देशी रियासतोंके बारेमें चन्द वाक्य ही कह सका। मेरे कुछ वकील मित्रोंको, देशी रियासतोंके बारेमें मैंने जो कहा है, उसपर कुछ आपत्ति है। उनका कहना है कि मैंने भारतीय राजाओंके दर्जेके बारेमें तो कहा है लेकिन अपनी प्रजाके प्रति उनके दायित्वोंके बारेमें कुछ नहीं कहा है। लेकिन मुझे अपने इन मित्रोंको यह याद दिलानेकी जरूरत नहीं है कि अधिकारके साथ ही दायित्व भी हमेशा जुड़ा होता है। भारतीय स्वराज्यकी मेरी योजनामें देशी रियासतोंको समाप्त करनेका कोई विचार नहीं है। मैं अपना यह मत जनताके सामने बिलकुल स्पष्ट रूपमें रख देना चाहता था। लेकिन यदि किसी देशी नरेशके अत्याचारोंके कारण देशी रियासतोंकी प्रजा भागकर ब्रिटिश भारतीय सीमामें आ जाये तो स्वराज्य सरकार किसी भी कीमतपर इन लोगोंको

१. यह परिषद् बेलगाँवमें हुई थी तथा इसकी अध्यक्षता न० चि० केलकरने की थी।

सम्बन्धित नरेशके हवाले नही करेगी। प्रजाको दी गई गारटी और नरेशोको उनके दर्जेके बारेमे दी गई गारटीके पीछे यह अभिधारणा है कि देशी रियासतोमे अच्छा शासन होगा।

रेखा-गणित (ज्यामिति) मे कुछ अभिधारणाएँ होती है। उसी प्रकार राजनीति-शास्त्रमे भी कुछ अभिधारणाएँ होती है। जब देशी नरेशोको उनके दर्जेके बारेमें गारटी दी जाती है तो ऐसा मान लिया जाता है कि वे अपनी प्रजाके लिए प्रगतिशील और उदार शासनकी व्यवस्थाकी गारटी करेगे। मै कुछ ही समय बाद भावनगरमे काठियावाड राज्य परिषद्की अध्यक्षता करनेवाला हूँ और देशी रियासतोके बारेमे मुझे जो-कुछ कहना है, वह मै उसी अवसरपर कहूँगा। इस परिषद्की अध्यक्षता करनेके लिए मुझे बहुत समय पहले निमन्त्रित किया गया था। लेकिन अपनी गिरफ्तारीसे पहले मै सत्याग्रहका झण्डा फहरा चुका था और मुझे लगा कि इस वक्त मेरे ऐसे किसी सम्मेलनकी अध्यक्षता स्वीकार करनेसे देशी नरेशोकी स्थिति अटपटी हो जायेगी। मै उन्हे किसी अटपटी स्थितिमे डालकर अपने और उनके बीचके सुन्दर सम्बन्धोको खराब नही करना चाहता था। आप जानते है कि मै अहिंसामे कट्टर विश्वास रखता हूँ। देशी नरेशो और उनकी प्रजाके बीचके मधुर सम्बन्धोको कटु बनाना मेरे सिद्धान्तोके विरुद्ध होगा। लेकिन मुझे आपको यह विश्वास दिलानेकी जरूरत नही है कि मैं इन रियासतोंकी जनताको और उनके वाजिब दावोको कभी नही भूल सकता। देशी रियासतोंके प्रश्नको सुलझानेमें मेरी इच्छा यही है कि ऐसा वातावरण रहे जिसमे लोग एक-दूसरेकी बात सद्भावसे सुने और समझें और इस तरह इसे निपटा दिया जाये। मैं किसी पक्षके मनमे कोई दुराग्रह नही पैदा करना चाहता। मेरी एकमात्र इच्छा यही है कि नरेशोके दर्जे और उनकी प्रजाके अधिकारोका आदर किया जाये। मेरी हार्दिक इच्छा है कि खादी और चरखेके प्रचार कार्यमे मै देशी नरेशोकी सहानुभूति प्राप्त करूँ। मैंने अपना समूचा विश्वास चरखेपर केन्द्रित कर दिया है। मेरा विश्वास है कि उसीपर इस देशकी मुक्ति निर्भर करती है।

महात्माजीके चले जानेके बाद श्री केलकरने उनके भाषणका आशय मराठीमें संक्षेपमें बताया और इसके बाद अपना अंग्रेजी भाषण पढ़ा।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २-१-१९२५

४००. पत्र : कुमारी मैडिलीन स्लेडको

गाडीमें
३१ दिसम्बर, १९२४

प्रिय बहन,

मैं आपसे क्षमा चाहता हूँ कि आपको इससे पहले न लिख सका। मैं लगातार सफरमें रहा। आपने जो २० पौंड भेजे, उनके लिए आपका आभारी हूँ। यह रकम चरखेके प्रचारमें इस्तेमाल की जायेगी।

मुझे सचमुच खुशी है कि आपने अपने प्रथम आवेगमें न बहकर, यहाँके जीवनकी तैयारी करनेके लिए समय लगानेका निश्चय किया है। अगर साल-भरके परीक्षणके बाद भी आपको यहाँ आनेकी प्रेरणा महसूस हो तो आपका हिन्दुस्तान आना शायद उचित रहेगा।

आपका,
मो० क० गांधी

कुमारी मैडिलीन स्लेड
६३, बेडफोर्ड गार्डन्स
कैम्पडेन हिल,
लन्दन, डब्ल्यू० ८

अंग्रेजी पत्र (सी० डब्ल्यू० ५१८१)से।
सौजन्य : मीराबहन

४०१. भाषण : अ० भा० मुस्लिम लीग अधिवेशनमें[1]

बम्बई
३१ दिसम्बर, १९२४

श्रीमती नायडू दक्षिण आफ्रिका होकर आई हैं और वहाँके सम्बन्धमें उन्होंने आपको सब-कुछ बताया है। मुझे जितना-कुछ कहना था वह मैं कांग्रेसमें कह चुका हूँ। मैं कह नहीं सकता कि सरकारसे कहकर हम सहायता प्राप्त कर सकते हैं या नहीं। मेरी समझमें, जबतक हम सशक्त नहीं होंगे तबतक केनियामें जो-कुछ हो रहा है, वह हमें सहना ही होगा। एक समय था जब दक्षिण आफ्रिकामें सत्याग्रह चल रहा था और सरकार भी कहती थी कि भारतीय लोग सम्राट्के प्रति निष्ठावान नहीं रह

१. यह भाषण उस प्रस्तावका समर्थन करते हुए दिया गया था जिसमें नेटाल बरोज अध्यादेशकी निन्दा की गई थी, इस अध्यादेशके द्वारा नेटालवासी भारतीयोंका नगरपालिका मताधिकार छीन लिया गया था।

गये हैं, उसी समय लॉर्ड हार्डिगने मद्रासमे एक घोषणा की और उससे भारतीयोको काफी लाभ हुआ। इसका कारण यही था कि दक्षिण आफ्रिकामें भारतीय लोग सत्याग्रह कर रहे थे। यदि आप उनकी सहायता करना चाहते है तो अपनी सहायता आपको पहले करनी चाहिए।

मुझे यह सुनकर दुख हुआ कि पूर्व आफ्रिकामे भारतीयोने कौसिलोमे जानेका निश्चय किया है और बाहरका काम छोड दिया है। मै कह नही सकता कि यह सही है या गलत क्योकि इतनी दूरसे उसके बारेमे मै कुछ धारणा नही बना सकता।

हमारे लिए समय है कि हम अपनी शक्ति बढाये। तब आप देखेगे कि लॉर्ड रीडिग भी वही रास्ता अख्तियार करेगे जो लॉर्ड हार्डिगने किया था। हिन्दू-मुस्लिम एकता अत्यन्त आवश्यक है और इसके साथ ही खद्दर पहनना भी जरूरी है, लेकिन मै नही जानता कि यह बात मुझे यहाँ कहनी चाहिए या नही। मै चाहता हूँ कि सभी सरकारी पद मुसलमानो, पारसियो और ईसाइयोको दिये जाये, क्योकि उनकी सख्या कम है और यदि फिर भी कुछ बच रहे तो वे हिन्दुओको दिये जाये।

मुझे बगालमे खादी कार्यके बारेमे अपने एक साथी कार्यकर्त्ता श्री [सतीश बाबू] रायसे पता चला है। वहाँ यह कार्य मुख्यत मुसलमान औरते कर रही है। वे अपनी आजीविका चरखेसे कमाती है। अत यदि आप उन्हे लाभ पहुँचाना चाहते है तो खादी पहनिए। यदि आप मिस्रकी सहायता करना चाहते है तो जैसा मै मौलाना मुहम्मद अलीको बता चुका हूँ, इसका एकमात्र रास्ता यही है कि आप पहले स्वराज्य प्राप्त करे तब और केवल तभी आप सच्चे अर्थमे टर्की, मिस्र और अरबकी मदद कर सकते है। हिन्दू और मुसलमान कागजी समझौतो और प्रस्तावोके जरिये ही नही, बल्कि दिलसे परस्पर एक होगे तभी आप भारतमे और भारतसे बाहर इस्लामकी रक्षा कर सकते है। आप कृपया ये चीजे एक सालतक करे और फिर इनके परिणाम आप खुद ही देखेगे। (हर्ष-ध्वनि)

[अग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल १-१-१९२५

४०२. बेलगाँवके संस्मरण [-१]

जब कि बहुतेरे अक्स मनमे उभर रहे हो और वे सभी अभिव्यक्तिके लिए तडप रहे हो तब उनको लिपिबद्ध करनेवालेका काम सचमुच बडा ही कठिन हो जाता है। बेलगाँवके अपने सस्मरण लिखनेके लिए पेन्सिल हाथ लेते समय मेरी हालत ऐसी ही हो रही है। मै कोशिश-भर कर सकता हूँ।

गगाधरराव देशपाण्डे और उनके साथियोकी टोलीने अतीव दक्षता दिखाई। उनके विजयनगरको तो विजय ही समझिए — स्वराज्यकी तो नही, पर सगठनकी विजय तो अवश्य ही थी। छोटीसे-छोटी बाततक बडे सुनियोजित ढगसे की गई थी। डा० हार्डीकरके स्वयसेवक चुस्त और चौकस थे। सड़के चौडी और साफ-सुथरी थी। वे

आनानीसे और भी चौड़ी की जा सकती थी, जिससे वहाँ लगाई गई अस्थायी दुकानोंको और हजारों तमाशबीनोंकी भीड़को आमद-रफ्तमें सहूलियत होती। रोशनीका इन्तजाम पूरा-पूरा था। विशाल-सभा-मण्डप और उसके सामने खड़ा सगमरमरी फव्वारा तमाम प्रवेश करनेवालोंको अपनी ओर आकर्षित करता हुआ लगता था। मण्डपमें कमसे-कम १७,००० आदमियोंकी गुंजाइश की गई थी। सफाईका इन्तजाम बहुत अच्छा था, फिर भी उसमें इससे ज्यादा बाकायदगी दरकार थी। इस्तेमाल किये हुए पानीको बाहर निकालनेका तरीका बहुत पुराने जमानेका था। मैं कानपुरके लोगोंका ध्यान इस तरफ खींचना चाहता हूँ। कांग्रेसका १९२५ का अधिवेशन उन्हें अपने यहाँ करनेका सौभाग्य प्राप्त होनेवाला है। उन्हें चाहिए कि वे ऐसे पड़ावोंमें सफाई रखनेके निहायत कारगर तरीकोंपर अभीसे गौर करते रहें और इस बड़े जरूरी कामको ऐन वक्तके लिए न रख छोड़ें।

एक ओर जहाँ मैं बेलगाँव कांग्रेसके लगभग त्रुटिहीन प्रबन्धकी बेहिचक तारीफ करता हूँ, वहाँ दूसरी ओर मैं यह कहे बिना नहीं रह सकता कि गंगाधररावजी बाहरी ठाठ-बाटपर खूब रुपया खर्च करने और शीर्षस्थ लोगोंको ऐशो-आरामके साधन मुहैया करनेकी पुरानी परिपाटीके मोहसे अपनेको नहीं बचा सके। सभापतिकी 'झोपड़ी' को ही लीजिए। मैंने तो एक खादीकी झोपड़ीका ही सौदा किया था, पर खादीका एक खासा महल ही तैयार करके मेरा अपमान किया गया। सभापतिके लिए जितनी लम्बी-चौड़ी जमीन रखी गई, वह बेशक जरूरी थी। उस 'महल' के चारों ओर जो बाड़ा तैयार किया गया था, वह भी बिलकुल जरूरी था, क्योंकि उसकी बदौलत उन लोगोंकी भीड़से मेरी रक्षा होती थी, जो मेरे प्रति प्रेम और आदरके कारण मुझे बहुत दिक और परेशान कर सकते थे। लेकिन मैं निश्चयके साथ कहता हूँ कि अगर उसका ठेका मेरे जिम्मे रहता, तो इससे आधे खर्चमें सभापतिके लिए उतनी ही जगह और उतने ही आरामका इन्तजाम कर देता। ऐसी फजूलखर्चीकी मैं और भी मिसालें दे सकता हूँ। विषय समितिके सदस्यों तथा अन्य लोगोंके जलपानमें भी ऐसी ही फजूलखर्ची दिखाई देती थी। जो भी चीजें परोसी जाती थीं, उनमें तादादकी कोई भी कैद या लिहाज नहीं रखा जाता था। मैं किसीपर दोषारोपण नहीं कर रहा हूँ। इस फजूलखर्चीकी जड़में दरियादिली ही थी। यह सब शुभ हेतुसे किया गया था। चालीस बरस पुरानी परिपाटी एक दिनमें नहीं टूट सकती — विशेषकर तब, जब कि ऐसा शख्स जिसकी बात लोग सुन सकें, उसपर लगातार टीका-टिप्पणी करते रहनेको तैयार न हो। मुझे याद है कि १९२१ में जब मैंने वल्लभभाईसे कहा था कि इस दिशामें आप ही आगे कदम बढ़ायें तो उन्होंने जवाब दिया था कि मैं सादगी लाने और फजूलखर्ची न होने देनेकी कोशिश तो करूँगा, पर अपने प्रिय गुजरातको कंजूस कहलानेका अवसर भी नहीं देना चाहूँगा। मैं उन्हें यह बात नहीं समझा सका कि यदि वे कई हजार रुपये खर्च करके अस्थायी फव्वारा न बनवायेंगे तो कोई उन्हें कंजूस न कहेगा। मैंने उनसे यह भी कहा था कि वे जो-कुछ करेंगे उसका अनुकरण, आगे यह जिम्मेवारी जिनके सिर आयेगी, वे भी करेंगे। पर वे

कजूस कहलानेका कलक अपने सिर लेनेको तैयार नही हुए। अब मै कानपुरको सलाह देता हूँ कि वह इसमे आगे बढ़कर रास्ता दिखाये। हम तो मितव्ययिताकी दिशामे इतना आगे बढना चाहते है कि सम्भव है, कानपुरकी आजकी कजूसी कल फिजूल-खर्ची-जैसी मालूम हो। वल्लभभाईने भी बहुत-सी चीजे छोड दी थी, किन्तु उन चीजोकी निस्बत, जिनकी कोई महसूस होने लायक जरूरत ही नही थी, किसी तरहकी शिकायत मेरे कानमे नही पड़ी।

हमे यह बात याद रखनी चाहिए कि काग्रेसका मन्शा उन लोगोंका प्रतिनिधि बनना है जो गरीबसे-गरीब है, मेहनत-मशक्कत करते है और जो भारतके प्राण है। सो हमारा पैमाना ऐसा होना चाहिए जो उनको मुआफिक आ सके। इसलिए कम खर्चकी ओर अपना कदम दिन-ब-दिन आगे बढाना होगा, पर इस तरह कि हमारे काममे न तो कोई खामी आये और न कजूसी ही टपके।

मेरी रायमे रहनेका और खानेका खर्च जो अभी देना पडता है, बहुत भारी है। हमे इस मामलेमे स्वामी श्रद्धानन्दजीसे नसीहत लेनी चाहिए। मुझे याद है कि उन्होने अपने गुरुकुलके १९१६ के वार्षिकोत्सवमे आनेवाले मेहमानोके लिए किस तरहके छप्पर डलवाए थे। उन्होने [मै समझता हूँ] कोई दो हजार रुपए लगाकर फूसके छप्पर बनवा डाले थे। उन्होने ठेकेदारोसे अहातेके भीतर जलपान-गृह आदि खोलनेको कहा था और दुकानोके लिए दी गई जगहोका कोई किराया नही लिया था। उस इन्तजामसे किसीको कोई शिकायत नही हो सकती थी। लोग जानते थे कि हमे किन-किन चीजोकी उम्मीद रखनी चाहिए। इस तरह कोई ४०,००० लोग गुरुकुलके अहातेमे बिना किसी तरहकी दिक्कत और प्राय बिना किसी प्रकारके खर्चके ठहराये गये थे और इससे भी बडी बात यह कि वहाँ आनेवाला हर आदमी जैसी सुविधाएँ चाहता था, उसे मिल जाती थी और वह अपनी मर्जीके मुताबिक थोडा या ज्यादा खर्च करके रह सकता था।

मै यह नही कहता कि स्वामीजीकी व्यवस्थाकी हरफ-ब-हरफ नकल की जाये। पर मै यह जरूर कहता हूँ कि बेहतर और ज्यादा सस्ते इन्तजामकी निहायत जरूरत है। प्रतिनिधियोकी फीसके १० रुपयेसे घटाकर १ रुपया कर दिये जानेपर[1] सब लोग खुश हुए थे और मुझे यकीन है कि रहने और खानेके खर्चमे कमी करना लोगोको और भी पसन्द आयेगा।

तो फिर आमदनीकी तदबीर क्या हो? हरएक दर्शकके लिए थोडा-सा प्रवेश शुल्क रखा जाये। काग्रेस अधिवेशन एक तरहका सालाना मेला बन जाना चाहिए, जिसमे दर्शक लोग आये और मनोरजनके साथ-साथ शिक्षाप्रद बाते सीखकर जाये। अधिवेशनके विचार-विमर्श या चर्चावाले हिस्सेको केन्द्रीय स्थान दिया जाना चाहिए, और प्रदर्शनात्मक महत्त्वके कार्यक्रम उसीके आसपास गूँथे जाने चाहिए। इसलिए इस सालकी तरह, उसका आयोजन उपयुक्त समयपर होना चाहिए और हर काममें समयकी पाबन्दी निष्ठाके साथ बरती जानी चाहिए।

१. देखिए "प्रस्ताव: बेलगाँव कांग्रेसमें", २७-१२-१९२४।

मुझे इस बातमें सन्देह है कि दूसरे तमाम सम्मेलनोंको एक ही सप्ताहमें जैसे-तैसे निबटा देनेसे किसी राष्ट्रीय अर्थकी सिद्धि होती है। मेरी रायमें सिर्फ उन्हीं सम्मेलनोंको कांग्रेस अधिवेशनवाले सप्ताहमें रखना चाहिए, जिनसे कांग्रेसकी ताकत बढ़ती हो और उसे मदद मिलती हो। सभापति और उनके "मन्त्रिमण्डल" से यह अपेक्षा नहीं रखनी चाहिए कि वे कांग्रेसके कामके अलावा और किसी बातपर ध्यान दें। मैं जानता हूँ कि अगर मुझे अपना वक्त और बातोंमें न लगाना पड़ता तो मैं अपने कामको ज्यादा अच्छी तरह कर पाता। सोचने-विचारनेके लिए मेरे पास थोड़ा भी वक्त नहीं बचता था। इसीसे मैं कताईपर आधारित मताधिकारको सफल बनानेके लिए जरूरी सिफारिशोंका मसविदा तैयार नहीं कर सका। बात यह है कि विभिन्न सम्मेलनोंके आयोजक अपने काममें संजीदगीके साथ नहीं जुटते। वे उनका आयोजन केवल इसलिए करते हैं कि यह एक फैशन बन गया है। मैं विभिन्न क्षेत्रोंके कार्यकर्ताओंसे आग्रह करूँगा कि वे हर साल अपनी शक्ति बरबाद करनेसे बचें।

देशी हुनर और उद्योगकी नुमाइश एक ऐसी चीज है जिसकी बढ़ती साल-दर-साल होनी चाहिए। संगीतके जलसेने हजारों लोगोंका मनोरंजन किया होगा। हमारे सबसे बड़े राष्ट्रीय उद्योगके विनाशके करुण इतिहास और उस उद्योगके पुनरुद्धारकी सम्भावनाओंपर दीप-चित्रों और भाषणोंके जरिए जिस ढंगसे प्रकाश डाला गया, वह बहुत उपयुक्त, शिक्षाप्रद और मनोरंजक था। सतीश बाबूने जिस तरह विचारपूर्वक और सांगोपांग ढंगसे इन भाषणोंका आयोजन किया था, उसके लिए मैं उन्हें बधाई देता हूँ। कताई प्रतियोगिता[1] भी एक स्थायी चीज बन जानी चाहिए। प्रतियोगिता लोगोंको कितनी पसन्द आई, इसका पता उसमें शरीक होनेवाले लोगोंकी तादाद और उसके उम्दा नतीजों तथा उसके लिए अनुदान देनेवालोंकी संख्यासे भलीभाँति लग जाता है। इस चरखा-आन्दोलनकी बदौलत भारतकी स्त्रियाँ पर्दा छोड़कर जिस तरह बाहर निकल रही हैं, उस तरह किसी और उपायसे न निकल पातीं। ११ इनाम पानेवालोंमें से ४ स्त्रियाँ थीं। इससे उन्हें जो गौरव और आत्मविश्वास मिला है, वह किसी भी विश्वविद्यालयकी उपाधिसे न मिल पाता। वे इस बातको समझती जा रही हैं कि उनकी सक्रिय सहायता भी उतनी ही अपरिहार्य है जितनी कि पुरुषोंकी और इससे भी बड़ी बात यह कि वे यह सहायता, यदि ज्यादा नहीं तो कमसे-कम पुरुषोंके बराबर तो आसानीसे दे सकती हैं।

इन संस्मरणोंको समाप्त करनेसे पहले मैं एक बातका जिक्र किये बिना नहीं रह सकता। कांग्रेसकी छावनीमें संडास वगैरह साफ करनेके काममें कोई ७५ स्वयंसेवक लगे हुए थे, जिनमें ज्यादातर ब्राह्मण थे। हाँ, नगरपालिकाके भंगी भी जरूर लिये गये थे, परन्तु इन स्वयंसेवकोंका रहना भी जरूरी समझा गया। काका कालेलकर —जिनके जिम्मे यह काम था—कहते हैं कि यह काम उतनी अच्छी तरह न हो पाता, अगर यह स्वयंसेवकोंकी टुकड़ी तैयार न की गई होती। उन्होंने यह भी बताया है कि स्वयंसेवकोंने यह काम खुशी-खुशी किया। उस कामको करनेमें किसीने

१. देखिए "भाषण: कताई-प्रतियोगिताके सम्बन्धमें", २७-१२-१९२५।

भी जी नही चुराया,' हालाँकि मामूली तौरपर उसके लिए बहुत कम लोग तैयार होते है और फिर एक लिहाजसे तो यह काम दूसरे तमाम कामोसे कही ऊँचे दरजेका है। इसमे कोई शक नही कि सफाई-सम्बन्धी काम स्वयसेवकोकी तमाम तालीमकी बुनियाद समझी जानी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १-१-१९२५

४०३. कैसे करना चाहिए?

कांग्रेसने एक बहुत ही अहम कदम आगे बढाया है या जैसा कि कुछ लोग कहते है उसने एक पागल आदमीके कहनेसे भारी बेवकूफी कर डाली है। कांग्रेसके सदस्योको, चाहे वे इच्छापूर्वक काते या अनिच्छापूर्वक, कताई-सदस्यताको अंजाम देकर इस कदमका औचित्य सिद्ध करना होगा। जो काम अबतक कुछ ही लोग कर रहे थे, वह अब कांग्रेसके सदस्य बननेके इच्छुक तमाम लोगोको करना होगा। कांग्रेस अपने हर सदस्यसे व्यवस्थित तौरपर श्रम करनेकी आशा रखती है। यदि वह उस श्रमको स्वय करनेपर रजामन्द न हो तो उसे दूसरेका श्रम खरीदकर — दूसरेसे सूत कतवाकर — देना होगा।

काम स्पष्टत बडा मुश्किल है। काम यदि आसान होता तो इसके सफल होनेपर जिस बडे नतीजेकी आशा रखी जाती है, उसकी आशा भी नही रखी जा सकती। और जब सालमे सिर्फ चार-चार आने इकट्ठे करने पडते थे, तब भी तो काम मुश्किल ही मालूम पडता था। आज भी कांग्रेसके रजिस्टरमे सब प्रान्तोको मिलाकर ५०,००० भी ऐसे सदस्य दर्ज नही है। अब कांग्रेस अपने हर सदस्यसे उम्मीद रखती है कि वह माहवार २,००० गज सूत स्वय काते या दूसरोसे कतवा कर इतना ही सूत दे। इस तरह कार्यकर्त्ताओको कातनेवालोके साथ लगातार सम्पर्क रखना होगा। मेरी रायमे सदस्यताकी इस नई शर्तका जो-कुछ भी महत्त्व है, वह इसीमे है। इससे लोगोको बडे ऊँचे ढगकी राजनीतिक शिक्षा मिलती है।

अब हरएक प्रान्तके लिए निश्चित तौरपर सफलता प्राप्त करनेका रास्ता यही है कि वह जितने मतदाताओकी उम्मीद रखता-हो उनकी कमसे-कम तादाद मुकर्रर कर ले और जबतक उतने मतदाता न मिले तबतक दम न ले। अब सारे हिन्दुस्तानमे कमसे-कम तादादमे गिननेपर भी कोई ५०,००,०००० चरखे तो चलते ही होगे। ये सब कातनेवाले आसानीसे कांग्रेसके सदस्य भी बन सकते है। जो लोग उनसे काम ले रहे हैं वे अब उन्हे हर रोज आधा घटा देशके लिए कताई करनेको आमन्त्रित कर सकते है। इसके लिए किसी नये सगठनकी जरूरत नही है। रुई, पूनियाँ आदि तो तैयार ही है। इन्तजाम करनेवालोको सिर्फ इतना ही करना होगा कि स्वेच्छासे कातनेवालो या सदस्य बननेके लिए कातनेवालोको जितनी पूनियाँ चाहिए, उतनी पूनियाँ कांग्रेसको भेंट कर दें। कातनेवालोको तो कांग्रेसको सिर्फ २,००० गज

सूत कातनेका निःशुल्क श्रम ही देना है। फिर ऐसे लोग भी हैं जो सूत कातनेका पेशा तो नहीं करते पर अपनी खुशीसे सूत कातते हैं। जो लोग आज कात रहे हैं, उन्हे अपने मित्रों और पड़ोसियोंसे कातनेके लिए और कांग्रेसके सदस्य बननेके लिए कहना है। हरएक कार्यकर्ता २०–२० कातनेवालोंकी मण्डलियाँ बनाकर यह काम बहुत अच्छी तरह कर सकता है। ये मण्डलियाँ छोटी और सुगठित होनी चाहिए, तभी वह अच्छा काम कर सकेगा। उसको शुरू करनेवाले सदस्यको धुनाई और कताई-में पूरा दक्ष होना चाहिए, क्योंकि रुई इकट्ठा करना, उसे धुनना, उसकी पूनियाँ बनाना और मण्डलीके सदस्योंमें उन्हे बाँटना, इन कामोंका सारा दायित्व प्रारम्भमें उसीपर रहेगा। तीसरे किस्मका काम है, उनके लिए इन्तजाम करना जो अनिच्छाके कारण नही कातते। कातनेके लिए अनिच्छुक व्यक्तियोंमे जो बहुत-ज्यादा ईमानदार होंगे वे तो अपनी एवजमे कातनेवाले लोग, स्वभावत अपने परिवारोंमे ढूंढनेकी कोशिश करेंगे। इससे वे यकीनन अच्छा और सचमुच ही हाथसे कता सूत दे सकेंगे। कातनेके लिए अनिच्छुक लोगोंमें से इससे दूसरे दरजेके होंगे, वे खुद किसी पेशेवर कातनेवाले को लगाकर अपनी एवजमे कतवायेंगे और कातनेकी इच्छा न रखनेवालोंमे से आखिरी दर्जेके लोग वे हैं जो बाजारसे सूत खरीदकर देंगे और इस तरह हाथसे कते सूतके बजाय खोटा सूत खरीदनेकी जोखिम उठायेंगे। कांग्रेसके जो सदस्य स्वय कातना नही चाहते, उन्हें मैं आगाह कर देता हूँ कि सामान्य उद्देश्यके हितकी दृष्टिसे वे इस आखिरी तरीकेसे दूर रहें। इस आखिरी दर्जेके लोगोंके लिए सदस्य बनना आसान है और यदि बहुतेरे लोग इससे फायदा उठायेंगे तो इससे दगाबाजी सरेआम चल पड़ेगी और इससे उस कुटीर उद्योगको, जो इतनी मुश्किलोंका सामना करते हुए आगे बढ रहा है, नुकसान हो सकता है। मुझे तो आशा है कि ऐसे बहुत ही थोड़े लोग होंगे जो कांग्रेस और देशकी खातिर कातनेसे जी चुरायेंगे। सदस्यताकी इस शर्तमें 'अनिच्छुक' शब्दको सिर्फ इसलिए स्थान मिला है कि उनकी मुश्किलें हल हो जाये, जो कांग्रेसके पुराने सदस्य हैं और जो यदि कांग्रेसको छोड़ना चाहे तो भी मैं उन्हे छोड़ने नही देना चाहूँगा। लेकिन मैं तो यह उम्मीद रखूँगा कि इस 'अनिच्छा'को प्रोत्साहन नही दिया जायेगा। हाथ कते सूतका उत्पादन होनेसे ही तो आलसी और नंगे-भूखे काम नही करने लग जायेंगे। लाखों-करोड़ों लोगोंको फिरसे चरखेको अपनानेके लिए उत्साहित करनेके लिए शारीरिक श्रमका और विशेषकर हाथ-कताईके रूपमे शारीरिक श्रमका वातावरण होना चाहिए और ऐसा वातावरण तैयार करनेका उत्तम तरीका यही है कि कांग्रेसके सदस्य स्वय कातनेमें अपनी इज्जत समझने लगें।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १-१-१९२५

४०४. टिप्पणियाँ

दो वादे

एक तमिल प्रतिनिधिने यह वचन दिया है:

वादा करता हूँ कि मैं ३० अप्रैल, १९२५ के पहले, मदुरई शहरमें दस हजार चरखे चलवा दूँगा।

आपका सदाका भक्त,
एल० के० तुलसीराम

श्री तुलसीरामने तमिल प्रतिनिधियोंकी एक सभामें मुझे यह पुर्जा दिया था। दरअसल दस हजार चरखे चलवानेके मानी हैं, उतने सदस्य बनाना। यदि अकेले मदुरा शहरसे दस हजार सदस्य मिल सकते हैं तो सारे तमिलनाडसे कितने सदस्य मिल सकेंगे?

दूसरा वादा, जो इससे भी अधिक महत्त्वका है, मौलाना जफर अली खाँकी तरफसे मिला है। उन्होंने संकल्प किया है कि मेरा कार्य-काल खत्म होनेतक वे २५,००० मुसलमान कातनेवालोंको सदस्य बना लेंगे। यदि मौलानाको इसमें सफलता मिली तो वे बड़ीसे-बड़ी बधाईके हकदार होंगे — इसलिए नहीं कि लोगोंमें सचमुच रुचि जागनेपर पंजाबमें २५,००० मुसलमान सदस्योंकी संख्या कोई बहुत बड़ी संख्या है, बल्कि इसलिए कि जब इतने सारे लोग कताई सदस्यताके फलस्वरूप एक बड़ी विडम्बनाकी भविष्यवाणी कर रहे हैं, तब मौलाना साहबका इस प्रकार संकल्प करना मेरी रायमें सचमुच अद्भुत है। मैंने मौलानासे कह दिया है कि यदि वे अपना वादा तोड़ेंगे तो मुझे उनके खिलाफ उपवास करना होगा। उन्होंने तड़से उत्तर दिया था कि बेशक वे नहीं चाहते कि मैं खुदकुशी कर लूँ। उन्होंने यह भी कहा कि वे उसे पूरा करना न चाहते और उसको पूरा करना उन्हें नामुमकिन लगता तो वे यह वादा ही न करते। मैं चाहता हूँ कि हर प्रान्तसे ऐसे ही वादे मिलें। लेकिन जोशमें आकर वचन देनेकी जरूरत नहीं। जबतक साथमें अटल संकल्प न हो, तबतक वचन देनेका कुछ भी अर्थ नहीं होता। मैं जानता हूँ कि लड़ाईके दिनोंमें अधिकारियोंकी तरफसे प्रत्येक प्रान्तके लिए एक निश्चित परिमाणमें धन-जनकी मदद देना तय कर दिया जाता था और हरेकको उतना धन-जन जुटाना पड़ता था। उसमें उनको कितना देना होगा, यह मुकर्रर रहता था और न देनेपर उसके साथ दण्डकी व्यवस्था भी थी। परन्तु, क्या इसलिए कि प्रान्तोंको खुद ही अपना कोटा आप मुकर्रर करनेके लिए कहा गया है और इसलिए कि वादा तोड़नेपर कोई सजा तजवीज नहीं की गई है, उन्हें कम काम करना चाहिए?

एक इनाम

मेरे अनुरोध करनेपर श्रीयुत रेवाशंकर जगजीवन झवेरीने चरखा और खादीके सन्देशके विषयपर सबसे बढ़िया निबन्ध लिखनेवालेको एक हजार रुपयेका पुरस्कार देना स्वीकार किया है। निबन्धमें उसमें उद्योगके विनाशका इतिहास शुरूमें देना होगा और उसके पुनरुद्धारकी क्या सम्भावना है, इसपर चर्चा करनी होगी। अन्य शर्तें अगले अंकमें प्रकाशित की जायेंगी।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १-१-१९२५

४०५. बोल्शेविज्मका अर्थ

नीचे दिया गया लेख[1] श्री एम० एन० रायने बोल्शेविज्मपर लिखे मेरे लेखके[2] उत्तरमें भेजा है। मैं उसे खुशीसे प्रकाशित करता हूँ, लेकिन यह कहे बिना नहीं रह सकता कि अगर श्री रायके लेखमें बोल्शेविज्मका सही चित्रण हुआ है तो बोल्शेविज्म बहुत घटिया चीज है। जिस तरह मैं पूंजीवादका जुआ बरदाश्त नहीं कर सकता, उसी तरह श्री राय द्वारा वर्णित बोल्शेविज्मका जुआ भी मैं बरदाश्त नहीं कर सकता। मैं मनुष्य-जातिका हृदय परिवर्तन करनेमें विश्वास रखता हूँ, उसके विनाशमें नहीं। कारण बहुत स्पष्ट है। हम सब अत्यन्त अपूर्ण और कमजोर प्राणी हैं और यदि हम सब लोगोंको मारना शुरू कर दें, जिनकी रीति-नीति हमें पसन्द नहीं तो इस पृथ्वीपर एक भी आदमी जीता न बचेगा। भीड़शाही किसी एक व्यक्तिके स्वेच्छाचारी शासनका ही अत्यन्त बृहत्तर रूप है। लेकिन मैं आशा करता हूँ, बल्कि मुझे लगभग पूर्ण विश्वास है कि बोल्शेविज्मका सच्चा स्वरूप श्री एम० एन० राय द्वारा खींचे गये उस चित्रसे कहीं ज्यादा अच्छा है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १-१-१९२५

१. देखिए परिशिष्ट १

२. देखिए "बोल्शेविज्म या आत्म-संयम", २१-८-१९२४।

४०६. पत्र : न० चि० केलकरको

साबरमती जाते हुए
२ जनवरी, १९२५

प्रिय श्री केलकर,

यह सदा मेरी इच्छा और नीति रही है कि दूसरोकी भावनाओको ठेस पहुँचानेके लिए कुछ न लिखूँ। लेकिन इस वर्ष, जबकि मै आपको अपने पक्षमें लानेके लिए पूरी कोशिशमे लगा हुआ हूँ, तब तो मै और भी अधिक सावधान रहना चाहूँगा। मै जानता हूँ कि बिना चाहे भी मै ऐसी चीजे लिख सकता हूँ जो आपको अर्थात् काग्रेसको, अच्छी न लगे। इसलिए यदि 'यग इडिया' या 'नवजीवन'मे कोई ऐसी चीज प्रकाशित हो, जो उचित न हो तो कृपया मेरा ध्यान उसकी ओर आकृष्ट कर दे। जहाँ भी सम्भव होगा, मै उसका परिमार्जन करनेका प्रयत्न करूँगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अग्रेजी पत्र (सी० डब्ल्यू० ३११५) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य : काशीनाथ केलकर।

४०७. भाषण : दाहोदकी सार्वजनिक सभामें

२ जनवरी, १९२५

कताईके प्रस्तावमे कातनेकी अनिच्छाके सम्बन्धमे जो रियायत दी गई है, मेरी इच्छा है कि उससे कोई गुजराती लाभ न उठाये। मुझे ईश्वरने यरवदा जेलसे भयकर बीमारीके कारण रिहा करवाया, इसमे मुझे ईश्वरका कोई बडा हेतु दिखाई देता है। मुझे लगता है, उसने मुझे इसलिए छुडवाया है कि मै देशमे चारो ओर घूम-घूमकर अन्नपूर्णाकी — चरखेकी — चर्चा करूँ और उसका सार्वत्रिक प्रचार करूँ। यदि हिन्दुस्तान अभी भी चरखा कातनेके इस सन्देशको नही सुनेगा तो देशमे भुखमरी और बढेगी। दाहोद बम्बई हो जाये, उसमे चार-छ लोग लखपति हो जाये तो इसमे मुझे कोई खुशी न होगी। सबको खाने-पीने और कपडे पहननेका अधिकार है। लेकिन किसीको धन इकट्ठा करके धनवान बन जानेका हक नही है। दाहोदमे चार-छ लोग साहूकार बने, यह मै नही चाहता। मेरी इच्छा तो यह है कि हम खादी घीकी तरह आसानीसे बेच सके और वह सिक्को तथा डाककी टिकिटोकी तरह जहाँ चाहे वहाँ सुलभ हो जाये। जो लोग सूत नही कात सकते वे दूसरोंसे कतवाकर सदस्य बन सकते है, ऐसी शर्त रखी गई है। लेकिन मै चाहता हूँ कि इसका लाभ कोई

भी गुजराती न ले। भाई सुखदेवने मुझे कहा है कि उन्होंने सूत कातना छोड़ दिया है। मुझे यह बात मालूम न थी। वे अन्य कार्य करते होंगे, लेकिन वे कातना छोड़ देंगे तो इससे हमारी भारी दुर्दशा होगी। और भाई सुखदेवको कातना अच्छा नहीं लगता सो बात नहीं है, किन्तु उन्हें कातनेमें आलस्य महसूस होता है। मैं किसी गुजरातीसे इन शब्दोंको सुनना नहीं चाहता।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, ११-१-१९२५

४०८. भाषण : अन्त्यज आश्रम गोधरामें

२ जनवरी, १९२५

आपने अनेक प्रकारके संवाद और भजन सुने। कौन कह सकता है कि वे संवाद अन्त्यज बालकोंके थे अथवा भगवानकी भक्तिके इन भजनोंको उन्होंने ही गाया। परिषद्‌का परिणाम ऐसा होगा, यह कौन जानता था? मैंने तो अन्त्यजोंसे सम्बन्धित प्रस्तावपर बोलते हुए सबको अन्त्यज वाड़ेमें जानेका सुझाव दिया था। मैंने समझा था कि परिषद्‌में गोधराके भाई-बहन हैं, लेकिन मुझसे भूल हुई। इसमें अनेक ऐसे भाई-बहन आये थे जो गोधरा निवासी नहीं थे। हालाँकि उनमें से अधिकतर लोग गुजरातके थे। उस समय हमें काफी धन मिला। हमने उससे अन्त्यज-शाला खोली। परन्तु गोधराके भाइयों और बहनोंने उसका स्वागत नहीं किया, इतना ही नहीं बल्कि उसके प्रति अपनी अरुचि बताई। ऐसी ही स्थिति अन्त्यज भाइयोंकी भी थी। अन्त्यजोंकी पाठशालामें अन्त्यज बालकोंको ही लाना मुश्किल हो गया। एक समय ऐसा आया कि यहाँके कार्यको बन्द करनेके प्रस्तावपर गम्भीरतासे विचार करनेका मन हुआ, लेकिन बादमें वह विचार स्थगित कर दिया।

मामा[1] दक्षिणके हैं, लेकिन इन्होंने गुजराती पढ़ ली है। इन्हें अन्त्यजोंका कार्य प्रिय है, यह बात मैंने आश्रममें देखी थी। इन्हें मैंने गोधरामें जमकर बैठनेकी सलाह दी। उसके बाद मैं जेल चला गया। मेरे बाद इसका दायित्व और असह्य बोझ वल्लभभाईने उठाया। इसी बीच यह मकान बना। यह मुझे पसन्द नहीं है। यह अधूरा है, सो बात नहीं, लेकिन यह हमें शोभा नहीं देता। इसकी सुन्दरतामें कोई त्रुटि नहीं है, लेकिन यह ऐसा होना चाहिए जो हमें शोभा दे। मामा शिल्पी नहीं हैं, लेकिन उनके मनमें प्रेम और भक्ति है। वे अन्त्यजोंके प्रति अपने प्रेममें बह गये और इसमें २०,००० रुपया खर्च कर दिया। वल्लभभाईमें इतना रुपया इकट्ठा करनेकी शक्ति नहीं थी, लेकिन सौभाग्यसे पारसी रुस्तमजीने इस प्रकारके कार्यके लिए कुछ धन दिया था। उसमें से ही इस मकानके लिए पैसा लिया गया। लेकिन यह मकान ऐसा होना चाहिए था जो हमको, अन्त्यजोंको, गरीबोंको शोभा देता। हम लोग गरीब हैं और इसमें भी सबसे गरीब हैं हमारे अन्त्यज भाई। ये बिना मालिकके

१. विट्ठल लक्ष्मण फड़के।

ढोरों-जैसे है। हिन्दुओने इनका तिरस्कार करके एक पाप किया है। आप ऐसा रुख रखे कि ऐसा आलीशान मकान बन गया है, इस कारण आप उनसे कोई ईर्ष्या न करे। यदि ऐसा मकान वणिक् छात्रावासका हो तो आप ईर्ष्या करे। मैं यह बात स्वीकार करता हूँ कि एक भी ऐसा मकान नही होना चाहिए जो हिन्दुस्तानकी जनताको, उसकी गरीबीको शोभा न दे। इससे भी अधिक सुन्दर मकान अनेक है जो अन्य वर्णोके बालकोके उपयोगमे आते है। लेकिन अन्त्यजोको ऐसे मकानोको इस्तेमाल करनेका अधिकार नही है, ऐसा भाव आपके मनमे कदापि न आना चाहिए। तथापि हमे अन्त्यजोको भी समझाना चाहिए। मै तो इसकी चर्चा यहाँ कर ही रहा हूँ, लेकिन यदि गोधराका कोई धनी इस मकानको ले ले तो अच्छा हो और तब हम, जो गरीबोको शोभा दे, ऐसे किसी अन्य मकानमे चले जायेगे। तबतक मामा इससे काम लें।

आज मैं अन्त्यजोके वाड़ेमे तीन जगह गया था। वहाँ मैंने मनुष्य नही वरन् पशु देखे। हम इनसे बात करने बैठे तो ये हमे अपनेसे भिन्न प्राणी लगे। परन्तु ये भी प्रेमको समझते है। इनकी इस दयनीय स्थितिके लिए हम लोग उत्तरदायी नही है तो और कौन है? मेरी दृष्टिमे स्वराज्य इन लोगोकी सेवाकी तुलनामे तुच्छ वस्तु है। अन्त्यजोंकी सेवासे स्वराज्य मिलेगा, इस उद्देश्यसे मैंने यह सेवा आरम्भ नही की है। तीस वर्ष पहले जब मैं दक्षिण आफ्रिकामे था और जब स्वराज्यकी बात भी नही थी तबसे मैं अपने अन्त्यज-सेवा सम्बन्धी विचार प्रकट करता आ रहा हूँ। आजकल हम हिन्दू-धर्मकी रक्षा नही कर रहे है, उसका नाश कर रहे है और मै चाहता हूँ कि उसे इस नाशसे बचानेके लिए आप यह सेवा-कार्य हाथमे ले। आप ऐसा समझें कि आप लोग जो यहाँ आये है, यहाँ आकर अपवित्र नही, बल्कि पवित्र हुए है। मुझे तो यह कहनेमे भी कोई सकोच नही कि जहाँ-जहाँ अन्त्यज-सेवा है, जहाँ-जहाँ अन्त्यज-पाठशाला है, जहाँ-जहाँ अन्त्यज आश्रम है, वहाँ-वहाँ तीर्थ है। कारण, तीर्थ वही होता है जहाँ हम अपने पापोका परिमार्जन करके भवसागरसे तरनेके लिए तैयार होते है। माँ-बाप क्यो तीर्थ-रूप है? गुरु क्यो तीर्थ-रूप है? यदि हम हृदयसे सेवा करते है तो पवित्र बनते है। आप इनसे छू गये है, इसलिए आपको नहाना चाहिए, ऐसा आप न माने। यदि आपको पहलेसे मालूम न होता तो क्या आप कह सकते थे कि ये सवाद सुनानेवाले बालक अन्त्यज है? यदि हम इन बालकोपर पूरी मेहनत करे तो ये बालक हम लोगोंसे आगे बढ जायेगे। भगीके बालकोमे सद्विचार नही आ सकते, मैं ऐसा नही मानता। मैं अनुभवसे कहता हूँ कि यदि हम प्रयास करे तो उनके हृदयमे सद्विचार अवश्य आयेगे। आप सब लोगोसे, जो यहाँ आये है प्रार्थना करता हूँ कि आप इस अवसरको अन्तिम अवसर न मान ले; आप समय-समयपर यहाँ आकर सहायता देते रहे।

यहाँ अन्त्यज सेवा-मण्डल है, इसके अस्तित्वके लिए हम इन्दुलालके[1] आभारी है। इन्होने भारी सेवा की है। वे जेलमे भी इसीका विचार करते थे। यदि उन्होने उत्साह-अतिरेकमे कुछ ऐसा काम किया हो जो सम्भव है हमको अच्छा न लगे, तो हमें

१. इन्दुलाल कन्हैयालाल याज्ञिक।

उसपर ध्यान नहीं देना चाहिए। अमृतलाल[1] अपना प्रवास छोड़कर आज यहाँ आये हैं। अब वे ढेढ़ों, भंगियों और भीलोंके गुरु बन गये हैं। इन्दुलालने अन्त्यज सेवा-मण्डल छोड़नेका विचार किया तब मैंने उनसे कहा था, मैं उसे विद्यापीठको सौंप दूँगा। अमृतलालने कहा कि यह संस्था तो रहनी चाहिए। अब इसका बोझ उन्होंने स्वयं उठा लिया है। लेकिन एक मनुष्य कितना बोझ उठा सकता है? आप इनकी मदद भी करें। अन्त्यज-सेवा-मण्डलका कार्य बहुत बड़ा है। वह गुजरातके अन्त्यजोंका नक्शा तैयार कर रहा है। गोधराने एक भी पैसा दिया हो, इसकी मुझे कोई जानकारी नहीं है। यदि आपके हृदयमें ईश्वर बसता है तो आप भाई अमृतलाल अथवा मामाको पैसा दें। ऐसा आप समझ-बूझकर करें।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ७

४०९. भाषण : गोधराकी सार्वजनिक सभामें

२ जनवरी, १९२५

अन्त्यजोंको जन्मसे अस्पृश्य माननेमें धर्म नहीं, बल्कि अधर्म है। मेरी दृढ़ मान्यता है कि मुझे सनातनी न माननेवाले लोग अज्ञानी हैं। आप कहेंगे कि अनेक पण्डित भी अस्पृश्यताका समर्थन करते हैं। लेकिन उनपर अखा भगतकी यह उक्ति लागू होती है 'बिन विचार विद्या मिथ्या'। हिन्दू धर्ममें एक ही तरहकी अस्पृश्यता है, असन्तोंसे दूर रहनेकी, दुष्ट, पाखण्डी लम्पट और व्यभिचारीसे दूर रहनेकी। उन्हें आप अस्पृश्य मानकर उनसे दूर भागें, लेकिन जो व्यक्ति आपकी सेवा करे, आपका मैला साफ करे, आपके लिए चमड़ा तैयार करे और आपकी खेती [की सिंचाई] के लिए चरसा तैयार करे, उसे क्या आप अस्पृश्य मानेंगे? यह तो हिन्दू धर्म नहीं, पाखण्ड है। यदि हिन्दूधर्म यह कहता हो कि ये लोग अस्पृश्य हैं तो मैं हिन्दूधर्मका त्याग करनेकी सलाह दूँगा। अस्पृश्यताकी यह प्रवृत्ति भ्रम-मात्र है, यदि आपमें दयाभाव हो तो आप भंगीका अज्ञान देखकर रो उठें और आपके मनमें कर्तव्य पालनकी भावना जाग्रत हो। आप मेरा त्याग करें, आप मुझे जंगलमें भगा दें और मैं पागल हो जाऊँ तो इसमें दोष मेरा है या आपका? उसी तरह बेचारे भंगी और ढेढ़ दीन-हीन और कंगाल हो गये हैं, उनमें अज्ञानकी कोई हद नहीं है और वे व्यसनी हैं तो इसमें उनका दोष है या आपका दोष है? यह आपका ही दोष है और मैं चाहता हूँ कि आप इस दोषका त्यागकर शुद्ध बनें।

मुझे ईश्वरने यरवदा जेलमें भयंकर बीमारीसे बचाकर आपकी सेवाके लिए मुक्त किया, इसमें मुझे तो उसका कोई बहुत बड़ा हेतु दिखाई देता है और वह हेतु यह है कि मैं आपमें आत्म-विश्वासका संचार करूँ, जेलमें अपने गंभीर चिन्तनके परिणाम स्वरूप बने अपने विचारको आपके समक्ष रखूँ कि तीन शर्तों — चरखा, हिन्दू-मुस्लिम

१. अमृतलाल विठ्ठलभाई ठक्कर।

एकता और अस्पृश्यता-निवारण — में ही स्वराज्य निहित है। मैंने चरखेकी बात सबसे पहले रखी है, उसका कारण यह है कि उपर्युक्त तीनों बातोमे केवल चरखेकी बात ही ऐसी है जिसके सम्बन्धमे हममे अविश्वास है और दूसरा कारण यह है कि चरखा ही एक ऐसी वस्तु है जो हर रोज हमसे खरा काम माँगता है। यदि मैं रोज हिन्दू-मुस्लिम एकता अथवा अस्पृश्यता-निवारणके लिए आधा घंटा काम करना चाहूँ तो मेरी समझमे नही आयेगा कि क्या करूँ। लेकिन आधा घंटा चरखा चलानेमे प्रत्यक्ष काम होता है। यह जडपदार्थ है, लेकिन इसमे निहित शक्ति अमोघ है। इसको चलानेके लिए आप सब तैयार हो जाये, ऐसी मेरी इच्छा है। खादीका कपडा आपको मोटा लगता है। आपका कहना है कि खादी तो चुभती है। इसका अर्थ यह हुआ कि आपको यह देश चुभता है और जिसे देश चुभता है, वह स्वराज्य क्या प्राप्त करेगा? तिलक महाराज कहा करते थे कि जब लोग जलवायु-परिवर्तनके लिए विदेश जानेकी बात करते है तब मुझे तो दुःख होता है। ईश्वरने मुझे यहाँ उत्पन्न किया है तो क्या उसने मुझे मेरे लिए इसी जलवायुमे स्वस्थ बने रहनेकी बात न सोची होगी? इग्लैडमे अत्यधिक ठण्ड होनेके बावजूद क्या अंग्रेज इग्लैड छोडकर भागते है? घरमे सिगडी सुलगाते है, गरम कपडे पहनते है और ठण्डसे बचनेके लिए अनेक उपाय करते हैं। लेकिन जिनके पास करोडो रुपये है, वे लोग करे तो क्या करे? वे जलवायु-परिवर्तनका विचार करते हैं। मैं आपसे कहता हूँ कि यह उनका पाखण्ड है। उसी तरह हम यहाँकी बनी, महँगी-सस्ती, अच्छी-बुरी, मोटी-पतली खादी पहनें, इसीमे हमारी स्वदेश-भक्ति है और नही तो स्वदेशका नाम लेना निरर्थक है। क्या कोई माँ अपने कुरूप पुत्रको छोड दूसरीके अच्छे बच्चेको गोदमे लेगी? बालकके प्रति माँके हृदयमें ईश्वरने जो प्रेम और ममत्व पैदा किया है, मेरी इच्छा है कि वही प्रेम और ममत्व आपके हृदयमे हिन्दुस्तानके लिए हो, हिन्दुस्तानमे पैदा होनेवाले अन्नके लिए हो, खादीके लिए हो। यदि गोधराका प्रत्येक व्यक्ति पाँच रुपये मूल्यकी खादी तैयार करे तो २५००० की आबादीमे कितने रुपयोकी बचत हो? यदि आप यह रुपया बचा लें तो गोधराके निवासी अधिक खुशहाल हो जाये। उससे आपका तेज बढेगा और आपका देश-प्रेम छलक उठेगा। चरखा चलाना ही एक ऐसी प्रवृत्ति है जिसमे स्त्री-पुरुष और बालक, गरीब और अमीर सब समान योग दे सकते है तथा जिससे भारी फलकी उपलब्धि हो सकती है। 'बूँद-बूँदसे सरोवर भरता है' इस कहावतपर आप विचार करे और प्रति व्यक्ति दो हजार गज सूत देकर स्वराज्य रूपी सरोवरको भरते रहे। वामनराव विधान-सभामे जाये और वहाँ जाकर सरकारको आँखे दिखाये तो क्या आप समझते है, इससे आपको स्वराज्य मिल जायेगा। मैं तो कहता हूँ कि आप विधान-सभामे जाये तो वहाँ भी सूत और खादीकी ही पुकार करे। लेकिन यदि आप विदेशी कपडेका बहिष्कार न कर सकें तो चाहे वल्लभभाई अथवा वामनराव-जैसे पाँच हजार लोग विधान सभामे जाये, पर इससे स्वराज्य नही मिलेगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ११-१-१९२५

४१०. काठियावाड़ियोंसे

परिस्थितियाँ मुझे काठियावाड ले जा रही है। काठियावाडियोके प्रेमको मै समझता हूँ, पहचानता हूँ। लेकिन मुझे तो काम चाहिए। मै अपनी पद्धतिमे और आजके शिक्षित वर्गकी पद्धतिमे भेद देख रहा हूँ। इस भेदके बावजूद मेरा अध्यक्ष बनाना हास्यास्पद है। मैंने जिन प्रस्तावोका मसविदा तैयार किया था वे यद्यपि कांग्रेसमे पारित हो चुके है तथापि अनेक लोग मुझसे कहते है कि इन प्रस्तावोपर अमल कोई नही करेगा। ऐसी भयकर बातपर मै कैसे विश्वास कर सकता हूँ।

मेरे पास जिस तरह कांग्रेसके सम्मुख कहनेके लिए कोई नई बात नही थी, उसी तरह कदाचित् काठियावाडसे कहनेके लिए भी न हो। सत्य तो यह है कि मुझे जो-कुछ कहना था वह सब मै कह चुका हूँ। मुझे तो हेर-फेरके साथ केवल उन्ही बातोको दुहराना है। मेरा मन तो केवल गरीबोमे ही रमा रहता है, मुझे तो भंगियोके लिए, मजदूरोके लिए स्वराज्य चाहिए। वे किस तरह सुखी हो, मै हर पल इसी बातपर विचार करता रहता हूँ। हम उनके कन्धोपर से कब उतरेगे? हमें अपने अधिकारोकी पड़ी है, किन्तु मुझे तो गरीबोके अधिकारोकी और अपने कर्त्तव्यकी बात करनी है।

यदि मै अपनी बात काठियावाडियोको समझा सकूँ तो कितना अच्छा हो। क्या यह ऐसी बात है जो सम्भव नही? मनुष्य आशापर जीता है। यही बात मेरे सम्बन्धमें भी है। किसी-न-किसी दिन हिन्दुस्तानको मेरी बात सुननी ही पडेगी। इसका आरम्भ काठियावाड ही क्यो न करे?

व्यवस्थापकोने मेरे लिए वातावरण तैयार करनेका बीड़ा उठाया है। वे मेरे लिए इतना तो करेगे ही कि जहाँ देखूं वहाँ खादी नजर आये। वे काठियावाडकी कारीगरी और कलाओकी प्रदर्शनी भी अवश्य रखेंगे। बेलगाँवमे प्रदर्शनी कितनी सुन्दर थी? काठियावाडमे क्या कम कलाएँ है? काठियावाडकी वनस्पतियोमे क्या नही है? काठियावाडके गाय-बैल कितने सुन्दर है? क्या उनके दर्शन होगे? मैं पश्चिमकी महिमा देखने नही जाता, वह तो मैने पश्चिममे ही बहुत देखी है। लेकिन मै तो देशसे निर्वासित देशी वस्तुओका स्मरण करता हूँ, उन्हे देखना चाहता हूँ।

काठियावाड अपनी शिष्टताके लिए तो प्रसिद्ध है ही। स्वागत समितिसे मेरी प्रार्थना है कि वह शिष्टताकी अतिमें समय नष्ट न करे। समयकी मर्यादा नही है, किन्तु मनुष्य-देहकी तो है। हमें इस क्षणभगुर शरीरकी सहायतासे अनेक काम करने है, इसलिए हमे एक-एक क्षणका सदुपयोग करना उचित है।

इस कारण मै चाहता हूँ कि कार्यवाहक इस बातकी सावधानी रखें कि अपना प्रत्येक कार्य हम समयपर कर सकें। जिन-जिन प्रस्तावोको परिषद्में रखना आवश्यक लगता हो, यदि उनके मसविदे पहलेसे तैयार कर लिये गये होगे तो हम उनपर

पर्याप्त विचार कर सकेगे। मेरी सलाह है कि विषय समितिकी बैठकके लिए पर्याप्त समय रखा जाये। प्रस्तावोकी रचनामे अपने कर्त्तव्योपर विशेष जोर दिया जाये तो हम अधिक सफल होगे। इसलिए मै चाहता हूँ कि प्रस्ताव इस बातको ध्यानमे रखकर ही तैयार किये जाये।

समय बचानेका एक मार्ग तो मै सुझा दूँ। आप स्वागत हृदयसे करे। इससे आपकी समझमे आ जायेगा कि बाह्य स्वागतकी कोई आवश्यकता नही है।

जुलूस आदिमे समय लगाना तो हमे जो असली कार्य करना है उसमे चोरी करनेके समान होगा। दो दिनमे छब्बीस लाख लोगोकी सेवाका कार्यक्रम बनाना है, आपको यह बात न भूलनी चाहिए। हजारो स्त्री-पुरुष इकट्ठे होगे, उनको सतोष देनेके लिए कितनी ही बाह्य वस्तुओकी आवश्यकता होगी। इसके लिए तो प्रदर्शनी-जैसी दूसरी कोई वस्तु नही है, यह हम बेलगाँवमे देख चुके है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ४-१-१९२५

४११. मनसे और बेमनसे

काग्रेसका काम निर्विघ्न समाप्त हो गया। काम एक ही था, अगर ऐसा भी कहे तो गलत न होगा। वह काम यह स्वीकार करना था कि सूत कातना भारतीय-मात्रका धर्म है। यदि यह बात प्रामाणिकताके साथ स्वीकार की गई हो तो काग्रेसका यह अधिवेशन हमारे इतिहासमे प्रसिद्ध हो जायेगा, और यदि यह कदम हमने अप्रामाणिकताके साथ उठाया होगा तो इतिहासकार काग्रेसके इस अधिवेशनको निन्द-नीय ठहरायेगे।

मेरे पास तो ऐसा माननेका एक भी कारण नही कि यह कदम अप्रामाणिकता-के साथ मनमें मैल रखकर उठाया गया है। जो प्रस्ताव स्वीकार किया गया, स्वय उस प्रस्तावमे ही मनसे और बेमनसे स्वीकार करनेवाले दो पक्षोका उल्लेख किया गया है। बेमनसे स्वीकार करनेवालोने भी कातनेकी आवश्यकताको तो मान लिया है, किन्तु यह स्वीकार नही किया कि वे स्वय कातेगे। इन्होने भी वर्षमे २४,००० गज सूत देनेकी बात मान ली है, किन्तु वे यह काम खुशीसे करे, इसे सम्भव बनाना उनका काम है, जिन्होने प्रस्तावको पूरे मनसे स्वीकार किया है। यदि खुशी-खुशी कातनेवाले लोग नियमित रूपसे कातने लगे तो दूसरे पक्षवाले स्वय कातनेके धर्मको मानने लगेगे।

आशा करनी चाहिए कि गुजरातमे बेमनसे स्वीकार करनेवाला पक्ष है ही नही। मनसे स्वीकार करनेवालोंकी सख्या भले ही बहुत कम हो, हमे उसकी चिन्ता हरगिज नही करनी चाहिए। हम चिन्ता कामकी करे। कोई स्वय न काते, फिर भी काग्रेसमे आना चाहे तो उसे ऐसा करनेका पूरा-पूरा अधिकार है।

किन्तु गुजरातमे ऐसा कोई पक्ष देखनेमे नही आया है जो स्वय कातनेके विषयमें उदासीन हो। कातनेवालोकी सख्या भले ही प्रारम्भमे छोटी हो, किन्तु यदि हमे वैमे चुस्त लोग मिल जायेगे तो हम उनकी मार्फत बहुत सारा काम करा सकते है, ऐमा मेरा दृढ विश्वास है।

यदि गुजरात चाहे तो वह इस मामलेमे अगुआ बन सकता है। सारे साधन गुजरातमें हैं। आवश्यकता सिर्फ इस बातकी है कि जनतामें उसके प्रति इच्छा हो। इच्छा उत्पन्न करना कार्यकर्त्ताओका काम है और इसीमे हमारी सगठन-शक्ति, देश-भक्ति, दृढता आदिकी कसौटी होनी है।

कातनेके प्रचारका अर्थ है खादी-प्रचार और खादी-प्रचारका अर्थ है विदेशी कपडेका परिपूर्ण बहिष्कार। इसलिए अभीतक खादी-प्रचारके लिए जितना किया है, उससे बहुत अधिक प्रयत्न हमे करना है। फिर, खादी-प्रचारका अर्थ है, गुजरातकी खादीका प्रचार। जबतक गुजरात स्वय अपना कपडा तैयार करके उसीका उपयोग नही करता तबतक गुजरातमे खादीका चमत्कार दिखाई नही पड सकता। खादी-प्रचारके साथ-साथ गुजरातमे अन्य सभी कलाएँ अपने-आप आ जायेगी और गुजरातकी आर्थिक स्थिति सुधरेगी।

गुजरातमे भुखमरी भले ही न हो, किन्तु उसमे तेज भी नही है। यहाँके बालकोको दूध नही मिलता और जब-कभी यहाँ अकाल पड जाता है तो यहाँके लोग भीख माँगने निकल पडते है। हिन्दुस्तानके बाहर कदाचित् ही कही ऐसा होता हो। विदेशी कपडेके सम्पूर्ण बहिष्कारके बाद ही गुजरात इस स्थितिसे छुटकारा पा सकता है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ४-१-१९२५

४१२. पत्र : रेहाना तैयबजीको

५ जनवरी, १९२५

प्रिय रेहाना,

मुझे खुशी है कि तुम आ रही हो। तुम्हे शायद मालूम हो कि मेरे पिताके एक मित्र ईश्वरकी निरन्तर आराधना करके अपने रोगसे मुक्त हो गये थे। क्या तुम भी वैसा नही कर सकती? अगर तुम चाहो तो ठीक हो सकती हो।

तुम्हारा,

मो० क० गाधी

अग्रेजी पत्र (एस० एन० ९५९९) की फोटो-नकलसे।

४१३. पत्र : फूलचन्द शाहको

पोष सुदी ११, १९८१ [५ जनवरी, १९२५]

भाईश्री फूलचन्द,

यदि किसी कार्यक्रमको हाथमे लेनेकी बात सोची तो भावनगर पहुँचनेके बाद ही लूँगा। अभीसे आप मुझे न बाँधिये। मैं बहुत थका हुआ हूँ और मुझे अभी भी अनेक योजनाओंमे भाग लेना बाकी है।

बापूके आशीर्वाद

भाईश्री फूलचन्द कस्तूरचन्द
केळवणी मण्डल कार्यालय,
वढवान शहर

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० २८२४) से।
सौजन्य: शारदाबहन शाह

४१४. पत्र : अवन्तिकाबाई गोखलेको

पोष सुदी ११, १९८१ [५ जनवरी, १९२५]

प्रिय बहन,

चिरंजीव छगनलालने मुझे आपकी आर्थिक स्थितिके बारेमे बताया है, सुनकर दु:ख हुआ। आपने इस सम्बन्धमे मुझसे आजतक कुछ क्यो नही कहा? खैर जो हुआ सो हुआ। आप दोनो जब चाहे तब यहाँ आकर रह सकते हैं। आप इसे अपना घर ही समझियेगा। डाक्टर मेहताका बंगला फिलहाल खाली ही पडा है। उसके एक हिस्सेका उपयोग आप कर सकेंगी। नया मकान बनानेका विचार हम बादमें करेंगे। यह सुझाव आपके स्वास्थ्यको ध्यानमें रखकर मैंने पहले ही दिया था। आप सार्वजनिक कार्य यहाँ भी कर सकेंगी। निर्णय करनेमे देर न लगाइये। वहाँ भला कैसे आ सकती हूँ — ऐसा व्यर्थका विचार मनमे हरगिज न लाइये।

अपने स्वास्थ्यका समाचार लिखियेगा। पत्रोत्तर भावनगर भेजिये। वहाँ ८ तारीखसे १३ तारीखतक रहनेका मेरा विचार है। पत्र सर प्रभाशंकर पट्टणीके पतेपर लिखियेगा

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ४८३८) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य: बम्बई राज्य कमेटी, सं. गा. वा.।

४१५. पत्र : कपिल ठक्करको

आश्रम
साबरमती
पोष[1] सुदी ११, १९८१ [५ जनवरी, १९२५][2]

भाईश्री कपिल,

आपका पत्र मिला। खेद है कि मैं इस बार बोटाद न जा सकूँगा। मुझे जरा भी समय नहीं मिलता।

मोहनदास गांधीके वन्देमातरम्

भाईश्री कपिल ठक्कर,
भावनगर

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० २८९६) से।
सौजन्य कपिल ठक्कर

४१६. पत्र : प्रभाशंकर पट्टणीको

पोष सुदी ११, १९८१ [५ जनवरी, १९२५]

सुज्ञ भाईश्री,

मैं यह कह देना उचित समझता हूँ कि मेरे साथ लक्ष्मी (अन्त्यज बालिका) भी होगी। इस कारण यदि किसी भी स्थानपर मेरी उपस्थिति आपत्तिजनक मानी जाये तो मुझे इशारा-भर कर दीजियेगा, मैं समझ जाऊँगा और वहाँ न जानेका आग्रह मैं स्वयं करूँगा, ताकि किसीकी स्थिति विषम न हो जाये। इस सबका भार आपपर ही डाल रहा हूँ।

मोहनदासके वन्देमातरम्

मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ३१८८) से।
सौजन्य महेश पट्टणी

१. साधन-सूत्रमें मार्गशीर्ष दिया हुआ है।
२. डाककी मुहरसे।

४१७. पत्र : लक्ष्मीनिवास बिड़लाको

पोष सुदी ११ १९८१ [५ जनवरी, १९२५]

चि० लक्ष्मीनिवास,

तुमारा खत मिला। मुझे बहोत आनद हुआ।

सच्च है कि सबको चर्खा चलाना चाहिये। जैसे इस जगत्का चक्र एक क्षण भी बध नहिं होता है ऐसे ही चर्खा किसी रोज कोई भारतवर्षके घरमे बध रहना न चाहिये। धनिकोके लीये मे चर्खाको ज्यादह आवश्यक समझता हु। मेरी उमेद है कि सब चर्खा चलावेगे और सूत मुझे भेजेगे।

शुभेच्छक,
मोहनदास गाधीका आशीर्वाद

मूल पत्र (सी० डब्ल्यू० ६१०१) से।
सौजन्य घनश्यामदास बिडला

४१८. तार : प्रभाशंकर पट्टणीको

साबरमती
७ जनवरी, १९२५

सर प्रभाशंकर पट्टणी
भावनगर

आपका तार पानेसे पहले मैं स्वागत समितिको जवाब दे चुका था। परिषद्के[1] दौरान मैं उनकी मानूंगा। यही उचित और आवश्यक लगता है कि उन्हीका अतिथि रहूँ। मुझे आगेवालोंके लिए अटपटा उदाहरण स्थापित नही करना चाहिए। देवचन्द भाई[2] सहमत है और ठीक ही आग्रह करते हैं कि मैं स्वागत समितिका अतिथि होऊँ। अत नौ तारीखतक कृपया क्षमा करें।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (जी० एन० ५८७५) की फोटो-नकल तथा सी० डब्ल्यू० ३१८१ से।

१. तृतीय काठियावाड़ राजनीतिक परिषद्।
२. देवचन्द पारेख, वकील, काठियावाड़के सामाजिक कार्यकर्ता।

४१९. कार्य समिति

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीने कार्य समितिके सदस्य चुननेका जिम्मा आखिर श्री देशबन्धु दास, पण्डित मोतीलाल नेहरू और मुझपर छोड़ दिया था। मुझपर यह आक्षेप लगाया गया है कि मैंने स्वराज्यवादियोंकी हर माँग मानली है। यदि मैंने ऐसा किया हो तो मुझे इसका फख्र है। पूर्ण समर्पण तो पूर्ण ही होना चाहिए। फिर भी हकीकत यह है कि किसी भी अपरिवर्तनवादीका नाम वापस लेनेके लिए मुझपर किसी प्रकारका दबाव नहीं डाला गया। मैंने चक्रवर्ती राजगोपालाचारी, श्री वल्लभभाई पटेल और शंकरलाल बैंकरके नाम जान-बूझकर निकाल दिये। समितिमें श्रीमती सरोजिनी देवी और सरदार मंगलसिंहका होना एक सम्मानकी बात है। श्री केलकर, श्री अणेके हकमें अपनी जगह खाली कर देनेको बहुत उत्सुक थे, लेकिन यह बात मुझे मंजूर नहीं थी। दूसरी ओर श्री अणेका नाम आते ही मुझको लगा कि उनको भी उसमें अवश्य होना चाहिए। पाठक विश्वास रखें कि यह सारा चुनाव सोलहों आने मैत्रीकी भावनासे किया गया है। मान लीजिए कि दोनों पक्षोंके लोग जो-कुछ कह रहे थे, ईमानदारीसे कह रहे थे (और ऐसा ही मानना भी चाहिए) तो यह बात आसानीसे समझमें आ जायेगी कि यह काम दोनोंके लिए कितना कठिन था। यद्यपि उनके विश्वासकी मात्राओंमें फर्क है और इसीलिए उनका जोर जुदा-जुदा बातोंपर है, फिर भी दोनोंको इस सामान्य कार्यक्रमको पूरा करनेके लिए एक सामान्य तरीका ढूँढ निकालनेका प्रयत्न करना है। बेशक, अपरिवर्तनवादियोंके निश्चित बहुमतवाली कार्यसमितिमें खादी सम्बन्धी कार्यके सिलसिलेमें जोरदार प्रस्ताव पास हो सकते हैं, लेकिन उन लोगोंके नजदीक उनका कुछ भी वजन न होगा जिन्होंने कि खादी-सदस्यताकी शर्तको बेमनसे कबूल किया था। इसके विपरीत जिस समितिमें स्वराज्यवादियोंका बहुमत होगा उसके प्रस्ताव नरम ढंगके भले ही हों, किन्तु स्वराज्यवादी लोग उन्हें कहीं अधिक महत्त्व देंगे और मेरा काम तो यह है कि स्वराज्यवादियोंको तहे-दिलसे इस काममें अपना साथी बनाऊँ। मैं चाहता हूँ कि मैं अपना असर उनपर डालूँ और वे अपना मुझपर डालें। इसलिए इससे बेहतर कोई बात नहीं हो सकती कि स्वराज्यवादी दलके नेता और उनमें भी योग्यतम और कताई सदस्यताके कट्टरसे-कट्टर विरोधी नेता और मैं मिलकर ऐसे वातावरणमें काम करें, जिसमें हमें एक-दूसरेके साथ मिलकर ही काम करना पड़े। लेकिन जिनको खुद ही इस बातका शौक और विशेष उत्साह है, उनके साथ ऐसा सम्पर्क रखनेकी आवश्यकता मुझे नहीं है। वे तो अपने विश्वासके अनुरूप यथाशक्य काम करेंगे ही। उन्हें काम करनेका उत्साह दिलानेके लिए प्रस्तावों या हिदायतोंकी जरूरत नहीं। इसलिए यदि हम चाहते हों कि इस एक सालमें कांग्रेसके दोनों पक्षोंमें अटूट एकता स्थापित हो जाये तो मेरी रायमें कार्य समितिका चुनाव एक आदर्श चुनाव है। जो भी हो, उनके

परिणामस्वरूप ऐसा वातावरण तो तैयार होगा ही, जो इस उद्देश्यके लिए अधिकसे-अधिक अनुकूल होगा।

मै लक्ष्यपर पहुँचनेके लिए अपनी तरफसे कुछ न उठा रखूँगा। इसलिए इस साल मै ऐसा कोई भी प्रस्ताव पास नही कराना चाहता, जिसे इस या उस पक्षका कहा जा सके। यदि खुद काग्रेसमे ही घोर विरोध चलता रहे तो न चरखा और न विदेशी कपडोके बहिष्कारका कार्यक्रम ही तेजीसे चल सकेगा। सच तो यह है कि हमे राष्ट्रीय रचनात्मक कार्यक्रमके लिए काग्रेसके बाहरके लोगोका भी समर्थन प्राप्त करनेकी कोशिश करनी चाहिए। वे चाहे सदस्यताकी शर्तके तौरपर कताईको या खादी पहननेको पसन्द न करते हो, लेकिन लिबरलोमे भी जिन-जिनसे मैं मिला हूँ, उनमे से ऐसे बहुत लोग नही है जिनको कुटीर उद्योगके तौरपर कताईपर और सदस्यताकी शर्तके अलावा और किसी कारणसे खादी पहननेपर किसी भी प्रकारकी आपत्ति हो। हो सकता है कि काग्रेसकी वर्तमान नीति और ध्येयको या सदस्यताकी इस नई शर्तको स्वीकार करके काग्रेसमे शामिल होना सभी दलोके लिए अपने-अपने सविधानोकी दृष्टिमे सम्भव न हो; लेकिन मैं आशा करता हूँ कि काग्रेसकी वर्तमान नीति और ध्येय तथा सदस्यताकी यह नई शर्त, जहाँ सम्भव हो वहाँ, हमारे एक साथ मिलकर काम करनेमे बाधक नही बनेगी।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ८-१-१९२५

४२०. बेलगाँवके संस्मरण [-२]

नामधारी सिख

मुझसे मुलाकात करनेके लिए सामूहिक रूपसे अथवा अकेले-अकेले आनेवाले सब लोगोसे मिलने और उनकी शकाओका समाधान करनेमे मुझे बडी मुश्किल पडी। नामधारी सिख कागजोका एक पुलिन्दा लेकर मेरे पास आये। वे चाहते थे कि अकालियोके खिलाफ उनकी शिकायतको मैं गौरसे सुनूं। उनकी नम्रता और धीरज देखकर मेरी अनिच्छा भी जाती रही। लेकिन उनकी शिकायतोको न सुननेकी वजह अनिच्छाकी बनिस्बत मेरी मजबूरी ही अधिक थी। उनकी नम्रता देखकर भी समय तो नही ठहर जाता। वे स्वय भी समझ गये कि मै बिलकुल मजबूर हूँ। मैं उनको सिर्फ यही तसल्ली दे सका कि जब मैं फिर कभी लाहौर आऊँगा तो उनके कागजात देखूँगा और इस बातका खयाल रखूँगा कि काँग्रेसकी तरफसे उनके साथ किसी प्रकारका अन्याय न होने पाये। मैंने उनसे कहा कि बहादुर अकालियोके ध्येयके प्रति मेरे मनमे विशेष सहानुभूति अवश्य है, पर मैं उनके द्वारा किये जानेवाले अन्याय या अत्याचारका कभी भी समर्थन नही करूँगा। सरदार मगलसिंहने भी मेरे इस भावके अनुरूप उद्गार व्यक्त करते हुए कहा कि अकाली लोग यह सिद्ध करनेके लिए हमेशा

तैयार हैं कि वे एक सर्वथा नैतिक आधारपर गुरुद्वारोंके सुधारके अतिरिक्त और कुछ भी नहीं चाहते।

बौद्धोंकी शिकायत

लंकाके श्री परेरा चाहते थे कि मैं कांग्रेसको बुद्ध-गयाके मन्दिरके सवालमें दिलचस्पी लेनेके लिए प्रेरित करूँ। पाठकोंको शायद याद होगा कि पिछले कुछ सालसे एक आन्दोलन चला आ रहा है कि गयाका विशाल ऐतिहासिक बुद्ध मन्दिर फिरसे बौद्धोंके हवाले कर दिया जाये। लेकिन मालूम होता है, अभी आन्दोलन कोई खास आगे नहीं बढ़ पाया है। कोकोनाडा कांग्रेसने बाबू राजेन्द्रप्रसादको इस मामलेकी जाँच करके रिपोर्ट पेश करनेके लिए मुकर्रर किया था। इस बैठकतक वे यह नहीं कर सके थे। कांग्रेस सप्ताहके दौरान लंकासे बौद्धोंका एक शिष्टमण्डल कांग्रेसके सामने बौद्धोंका पक्ष स्वयं पेश करनेके लिए बेलगाँव आया था। श्री परेरा कुछ नेताओं-से मिलकर फिर मुझसे मिले। वास्तवमें उनको मेरे सामने वह सब पेश करनेकी जरूरत ही न थी। मैं तो पहलेसे उन्हींके मतका था। लेकिन यहाँ भी वही समस्या थी। मैं करता क्या? मैंने जो काम पहले ही हाथमें ले रखा था, उसके सिवा और कार्य करनेकी मुझे फुरसत ही न थी। लेकिन श्री परेराको टालना भी मुश्किल था। मैंने उनसे कहा कि मुझे भी उनकी बातमें उतना ही विश्वास है जितना कि उन्हें स्वयं है, लेकिन कांग्रेस शायद उनकी ज्यादा मदद न कर सकेगी। पर वे डटे रहे और आखिर मुझे इस बातपर राजी होना ही पड़ा कि वे विषय समितिमें उपस्थित होकर अपनी बात कहें और फिर अगर समितिको उनकी बातें अस्वीकार हों तो वे सीधे उसीके मुँहसे अस्वीकृति सुनें। श्री परेरामें आत्मविश्वास था। उनके मीठे बरताव और संक्षिप्त लेकिन सुन्दर भाषणकी छाप समितिपर अच्छी पड़ी और उसने उसी वक्त उसपर विचार करनेका निश्चय किया। लेकिन, अफसोस! बहसके बाद समिति इस निष्कर्षपर पहुँची कि वह श्री परेराको कोई खास मदद नहीं दे सकती, उसे अपने प्रतिनिधिकी रिपोर्ट तबतक नहीं मिली थी। और पिछले साल इस विषयपर काफी विस्तारसे चर्चा हो चुकी थी, लेकिन तीव्र मतभेदके कारण उसे इस विषयको छोड़ देना पड़ा था। इसलिए समिति सिर्फ इतना ही कर सकी कि उसने राजेन्द्र-बाबूसे कहा कि जल्दीसे जाँच करके चालू महीनेके आखिरतक या उससे पहले अपनी रिपोर्ट वे कार्य समितिमें पेश कर दें। हाँ, इसमें तो शक नहीं कि मन्दिरका कब्जा बौद्धोंके ही हाथोंमें होना चाहिए। इसमें कुछ कानूनी अड़चनें पेश आ सकती हैं। उन्हें दूर करना होगा। यदि वह खबर सच है कि उस मन्दिरमें पशुओंकी बलि दी जाती है तो बेशक यह मन्दिरकी पवित्रता भंग करना है और जैसा कि कहा जाता है, पूजा भी ऐसे तरीकोंसे की जाती है जिनसे बौद्धोंका दिल दुखता है तो यह भी मन्दिरकी पवित्रताको भंग करनेवाला काम है। मन्दिरके असल हकदारोंको मन्दिरका कब्जा दिलानेमें सहायता करना हमारे लिए गर्वकी बात होनी चाहिए। मुझे आशा है कि राजेन्द्रबाबू इस विषयसे सम्बन्धित सभी कागजात इकट्ठा करेंगे और उनके आधारपर ऐसी परिपूर्ण रिपोर्ट तैयार करेंगे, जिससे कि इस मामलेमें बौद्धोंकी सहा-

यता करनेके इच्छुक सभी लोगोको मार्ग-दर्शन और सहायता मिले। मुझे यह भी आशा है कि श्री परेरा भारतमें ही रहकर राजेन्द्रबाबूकी मदद करेंगे।

शिक्षक-सम्मेलन

राष्ट्रीय शिक्षकोंका भी एक अनौपचारिक सम्मेलन हुआ और उसमे वे कुछ निश्चित परिणामोपर पहुँचे। बहस खासी दिलचस्प रही। सारी बहसका केन्द्र चरखा ही था। अच्छे-अच्छे विद्वान् सम्मेलनमे आये थे। मुझे आशा है, शिक्षक लोग शिक्षकोके लिए ही पास किये गये उन प्रस्तावोपर ठीक-ठीक और शब्दश अमल करेगे। प्रस्तावोको पास करके उनपर कभी अमल न करना हमारे राष्ट्रीय जीवनका एक अभिशाप रहा है। यो ही बेमतलब वचन देना शिक्षकोके लिए तो सबसे ज्यादा अशोभनीय है। देशके युवकोको एक सही साँचेमे ढालनेका काम उन्हीके हाथोमें है। उन्हे यह बात अच्छी तरह समझनी चाहिए कि विद्यार्थी लोग इन प्रस्तावो और वचनोकी पवित्रताके सम्बन्धमें उनके लम्बे-चौडे प्रवचनोसे प्रभावित होनेकी बजाय उनके वचन-भगके बुरे उदाहरणका अनुकरण कही अधिक तत्परतासे करेगे। राष्ट्रके लिए यह साल एक आजमाइशका साल है। काग्रेसने लगभग एक ही चीजके लिए अपना सर्वस्व दाँवपर लगा दिया है अर्थात् खादी पैदा करने और विदेशी कपडोका बहिष्कार करनेके लिए। राष्ट्रीय पाठशालाएँ तभी राष्ट्रीय कहलायेगी जब वे राष्ट्रीय कार्यमे मदद करेगी। इसके लिए उनके शिक्षकोको, छात्र-छात्राओको वे तमाम काम सीखने होगे जिनकी जरूरत खादी पैदा करनेमें पडती है। उन्हे स्वय खादी पहननी होगी और जितना कात सके कातना होगा। इसके लिए जरूरी नही कि वे अपनी दूसरी पढाईकी उपेक्षा करे, लेकिन उन्हें उन बातोकी उपेक्षा तो हरगिज नही करनी है, जो राष्ट्रके लिए अत्यन्त आवश्यक है। शिक्षकोने बहुत बडे बहुमतसे इस बातको स्वीकार किया है। मै आशा करता हूँ कि वे अपने वचनके अनुसार कार्य करके इसको सफल बनायेगे।

विद्यार्थी

विद्यार्थियोका भी एक सम्मेलन हुआ है। उनमे केवल राष्ट्रीय पाठशालाओ और विद्यालयोके ही विद्यार्थी नही, बल्कि अधिकाशत सरकारी पाठशालाओके ही विद्यार्थी थे। विद्यार्थियोके छुट्टीके दिनो और दूसरे खाली समयका उपयोग करनेकी एक योजना सभापति श्री रेड्डीने तैयार की थी। उनकी योजना यह थी कि सभी विद्यार्थी (वे वकीलोंको भी उनमे शामिल करना चाहेगे) कमसे-कम एक सालमे २८ सायकाल राष्ट्रको देनेकी प्रतिज्ञा ले। प्रत्येक स्वयसेवक विद्यार्थी अपने पडोसके चार गाँवोको अपने क्षेत्रीय कार्यके लिए चुन ले। श्री रेड्डीने भिन्न-भिन्न विषयोपर एक व्याख्यान-माला आयोजित करनेकी सलाह दी। मै तो अभी इन स्वयसेवकोके अवकाशके समयका उपयोग सिर्फ खादीके प्रचारमे ही कराना चाहता हूँ। लेकिन सेवाका यही एक मार्ग तो नही है जिसका अनुसरण करके विद्यार्थी और वकील लोग सहायता कर सकते हो। बेशक वे कमसे-कम इतना तो कर ही सकते है कि स्वय खादी पहनें और रोज

आधा घंटा कातें। वकीलों और इक्कीस सालसे अधिक आयुके विद्यार्थियोंको कांग्रेसके सदस्य बन जाना चाहिए और जिनकी उम्र कम हो उन्हें अपना सूत भेंटके तौरपर अपनी समितिको या अखिल भारतीय खादी बोर्डको भेजना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ८-१-१९२५

४२१. टिप्पणियाँ

प्रान्तीय कमेटियोंके लिए

मैं आशा करता हूँ कि प्रान्तीय कांग्रेस कमेटियाँ नई शर्तके अनुसार सदस्य बनानेके कार्यमें तत्काल जुट जायेंगी। मैं जानता हूँ कि कुछ कांग्रेस-जन नये सदस्य बनानेका काम शुरू करनेसे पहले कामके तरीकेके बारेमें कार्य समितिकी हिदायतोंकी राह देख रहे हैं। लेकिन इस तरह राह देखनेकी कोई आवश्यकता नहीं है। नई सदस्यता शर्तके अनुसार कार्य समितिको खुद कार्य संगठित करना नहीं है। सारा भार प्रान्तोंपर ही है और वे जितनी जल्दी काम शुरू करेंगे उतना ही अधिक लाभ उस उद्देश्यको पहुँचेगा, जिसको दृष्टिमें रखकर सदस्यताकी यह नई शर्त लागू की गई है। कांग्रेस-जनोंको यह स्मरण रखना चाहिए कि वर्तमान सदस्योंकी सदस्यताकी अवधि फरवरीके अन्तमें पूरी हो जायेगी। यदि प्रान्तीय कमेटियाँ तबतक सदस्य बनानेका काम मुल्तवी रखें, तो वे पायेंगी कि उस वक्त उनके पास काम चलानेके लिए आवश्यक न्यूनतम संख्यामें भी सदस्य नहीं होंगे। इसलिए अभीसे सदस्य बनानेके लिए प्रचारका काम तत्परतासे शुरू कर देना चाहिए। इसका संगठन करनेके तरीकोंके सम्बन्धमें श्री सतीशचन्द्र दास गुप्तने कुछ उपयोगी जानकारी दी है। मुझे उम्मीद थी कि मैं उसको प्रकाशित कर सकूँगा। खादी-कार्यके सम्बन्धमें सतीश बाबू द्वारा लिखित और खादी प्रतिष्ठान द्वारा प्रकाशित दो ज्ञानवर्धक पुस्तकें भी मेरे पास आई हैं। प्रथम खण्डमें कताई और बुनाईके कार्यको संगठित करनेके तरीके बयान किये गये हैं और दूसरेमें रुईसे सम्बन्धित जितनी उपयोगी जानकारी मिल सकती थी, दी गई है। ये दोनों पुस्तकें समयोपयोगी हैं। इनके लेखकने परिश्रमपूर्वक जनताको जानकारी सुलभ कराई है, उसमें से कुछको मैं सार-रूपमें प्रस्तुत करनेकी उम्मीद रखता हूँ।

जो लोग खरीद सकते हैं, उन्हें इन किताबोंको ही खरीद लेना चाहिए। वे इनके लिए खादी प्रतिष्ठान, १५ कॉलेज स्क्वायर, कलकत्ताको लिखें। पहले खण्डकी कीमत दो रुपया और दूसरेकी एक रुपया है।

कतैयोंसे

कई कतैये, जो अबतक अपना सूत अखिल भारतीय खादी बोर्डके या मेरे पास भेजा करते थे, पूछते हैं कि हमें अब क्या करना चाहिए। दिसम्बर मासका

सूत तो उन्हे उसी तरह भेजना चाहिए जिस तरह भेजते आये है। सालके शुरू होनेके बाद वालिग लोग जितना भी काते, अपने ही पास रखे और सदस्यताके माहवारी चन्देके तौरपर अपनी-अपनी प्रान्तीय समितियोको भेज दे। अवतक कतैये जितना कातते, भेज देते थे, और वहुत-से लोगोने तो २,००० गजसे भी कम सूत भेजा है। अव अपनी सक्रिय सदस्यता वनाये रखनेके लिए हर महीने कमसे-कम २,००० गज भेजना तो जरूरी है ही। यदि वे चाहे तो ज्यादा भेज सकते है। उन्हे इस वातका खयाल रखना चाहिए कि जितना सूत भेजे उतनेकी रसीद ले ले। २,००० गजसे जितना अधिक सूत भेजेंगे उतना दूसरे महीनेके हिसावमे गिन लिया जायेगा। छोटी उम्रके लड़के-लडकियाँ सूत दानके तौरपर प्रान्तीय कमेटियोको भेजे। वे सदस्य नही वन सकते। मुझे वताया गया है कि फिर भी कुछ लोग ऐसे है, जो सिर्फ मुझको ही सूत भेजना चाहेगे। मै उन्हे अपनी-अपनी कमेटियोको सूत भेजनेकी सलाह दूंगा, लेकिन यदि वे ऐसा न करे तो मै खुशीसे उनके सूतको स्वीकार करूँगा और सदाकी तरह उसका अच्छेसे-अच्छा उपयोग करूँगा।

पुरस्कार-निवन्ध

चरखे और खद्दरके सन्देशके सम्वन्धमे पुरस्कार-निवन्धकी[1] शर्तें ये है

१ निवन्ध अग्रेजीमे और चार भागोमे विभक्त होना चाहिए, पहले भागमे भारतमे अग्रेजोके आनेसे पहले हाथ-कताईका इतिहास और खद्दर (अर्थात् हाथ-कते सूतसे हाथ-वुने कपडे, जिसमे ढाकाकी प्रसिद्ध 'शवनम' भी शामिल है) के व्यापारकी कहानी दी जाये, दूसरे भागमे हाथ-कताई और खद्दरके व्यापारके विनाशका क्रमवद्ध इतिहास दिया जाये, तीसरेमे हाथ-कताई और खद्दरकी सम्भावनाओकी जाँच-पडताल की जाये और भारतीय मिल उद्योग तथा हाथ-कताई और हाथ-वुनाईकी तुलना की जाये और चौथे भागमे चरखेके जरिये विदेशी कपडेका वहिष्कार कहाँतक सम्भव है, इसपर विचार किया जाये। निवन्धकी स्थापनाओकी पुष्टि प्रामाणिक आँकडोसे की जाये और एक परिशिष्ट भी दिया जाये, जिसमे सभी सन्दर्भ-पुस्तको और लेखक द्वारा अपने विचारोके समर्थनमे दिये गये अधिकारी लेखकोकी सूची दी जाये।

२. प्रतियोगितामे भाग लेनेवाले अपने निवन्धको जितना चाहे उतना सक्षिप्त वना सकते है, किन्तु उसमे तथ्यो और आँकडोका पूरा लेखा आ जाना चाहिए।

३ निवन्ध रजिस्टर्ड वुकपोस्ट द्वारा 'यग इडिया' के दफ्तरमे भेजा जाये और उसके साथ एक अलग कागजपर लेखकका नाम भी भेजा जाये। निवन्ध अधिकसे-अधिक आगामी १५ मार्चतक 'यंग इडिया' के दफ्तरमें पहुँच जाना चाहिए। निवन्धके निर्णायकोमे श्री शंकरलाल वैकर, श्री मगनलाल गाधी और स्वयं मै रहूँगा। परिणामकी घोषणा अधिकसे-अधिक ३१ मार्च, १९२५ तक कर दी जायेगी। यदि निवन्ध एक निश्चित स्तरसे नीचेके होगे तो निर्णायकोको अधिकार होगा कि वे चाहे तो सभी निवन्धोंको रद कर दे। पुरस्कार परिणामकी घोषणाके वाद विजेताको दिया जायेगा।

१. देखिए "टिप्पणियाँ", १-१-१९२५ का उप-शीर्षक "एक इनाम"।

निबन्धके प्रकाशनका अधिकार धन-दाताकी इच्छाके अनुसार अखिल भारतीय खादी बोर्डको होगा।

मुझे आशा है कि महान् चरखा आन्दोलनमें जिन-जिन विद्वानोंकी रुचि हो और जिन्होंने इस विषयका अध्ययन किया हो, वे सभी इस प्रतियोगितामें भाग लेना उपयोगी मानेंगे।

गरीबी एक कारण

एक बंगाली मित्रने एकताके सम्बन्धमें लिखा है

> **बंगालमें और कदाचित् दूसरे प्रान्तोंमें भी, शिक्षित मध्य वर्गोंकी आर्थिक कठिनाइयोंसे लोकसेवाकी भावना और देशभक्तिके विकासमें रुकावट पड़ती है। युवक सभाओंमें बड़ी संख्यामें आते हैं और भाषणोंपर तालियाँ बजाते हैं। जब वे स्कूलों और कालेजोंसे निकलते हैं तो उन्हें जीवन-निर्वाहके संघर्षका अनुभव होने लगता है। इससे उनकी युवकोचित स्फूर्ति और उनका उत्साह मन्द पड़ जाता है और राष्ट्रीय कार्यको आगे बढ़ानेमें उनकी कोई वास्तविक रुचि नहीं रह जाती।**

लेखकने यह निष्कर्ष ठीक ही निकाला है कि यह बुराई न्यूनाधिक सभी प्रान्तोंमें मिलती है। इसका उपाय स्पष्ट है। कोई भी सरकार छात्रोंकी साल-दर-साल बढ़ती हुई संख्याके लिए रोजगारकी व्यवस्था नहीं कर सकती। इस पेचीदा सवालको हल करनेका केवल एक ही तरीका है, वह यह कि शिक्षाके सम्बन्धमें प्रचलित इस आम धारणाको बदल दिया जाये कि शिक्षा एक अच्छी जीविका पानेका साधन है। शिक्षा मानसिक और नैतिक उन्नतिके लिए प्राप्त की जानी चाहिए। दूसरे, उसका यह फल होना चाहिए कि बेरोजगार युवकोंको श्रम गरिमाकी प्रतीति हो सके और वे अपने अन्दर चरखा-उद्योगका संगठन हाथमें लेनेकी योग्यता विकसित करें। यदि युवक आवश्यक प्रशिक्षण प्राप्त करने और गाँवमें जाकर साधारण आयपर सन्तोष करनेके लिए तैयार हों तो उनकी बड़ीसे-बड़ी संख्या भी इस कार्यमें खप सकती है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ८-१-१९२५

४२२. भाषण : विषय समितिकी बैठकमें[1]

८ जनवरी, १९२५

जनताका हृदय जीतनेका एक ही उपाय है — चरखा। जहाँ-तहाँ अधर्मकी पताका फहरा रही है। आज तो 'धर्म-संस्थापन' चरखेके माध्यमसे ही सम्भव है। आज तो हम सबकी दशा त्रिशंकु-जैसी है। चरखेके सिवाय इस भयानक स्थितिसे छुटकारा पानेका और कोई उपाय नही है। जनताको इसीके माध्यमसे प्रभावित किया जा सकता है। सरकारमे भी धर्म-भावना इसीके बलपर जगाई जा सकेगी। एक सज्जन पूछते है कि "क्या मूँछोवाले लोग भी सूत कातने बैठेंगे?" उन्हे मैं याद दिलाना चाहूँगा कि आज तो हमारी मूँछे मुड़वा डालनेकी घड़ी आ गई है। लंकाशायरमे जो लोग मशीने चला रहे है और इस तरह जो लोग साम्राज्य चला रहे है, वे मुछाड़िए है या मूँछ-विहीन है? इस विषयपर जो साहित्य लिखा जा रहा है, वह भी पुरुषोके द्वारा ही लिखा जा रहा है। परिवारकी रसोई स्त्री बनाती है, किन्तु जब समूची जाति भोजनके लिए बुलाई जाती है, तब रसोई बनाना मुछाड़ियोंके बिना नही चलता। कोई-कोई उच्च वर्णवाला होनेका, ब्राह्मण होनेका तर्क उठाते है। वर्णाश्रम यानी कार्य-विभाजन — यह बात मैं स्वीकार करता हूँ। किन्तु कार्यका अर्थ यहाँ प्रधान रूपसे करनेका कार्य ही है। उसके बाद करनेके कार्य सभीके लिए समान हो सकते है और आज तो वैसा होना ही चाहिए। भाई सतीशचन्द्र दास गुप्तने चरखेकी विद्याको शास्त्रका रूप दिया है। पालितानाके एक तहसीलदारका मुझे एक सुन्दर पत्र मिला है। उसमे वे कहते है कि मैं नियमित रूपसे कातता हूँ और दीवान साहब या ठाकुर साहब मुझे कातनेसे रोकते नही हैं। मैं जितना ही अधिक कातनेका अभ्यास करता जाता हूँ, उतनी ही मेरी शक्ति बढ़ती जाती है। मुझे तो यहाँतक लगता है कि मै अपने घोडेकी पीठपर भी एक नन्हा-सा चरखा लेकर दौरेपर जा सकता हूँ। यदि ऐसा कोई हाकिम लोकप्रिय हो जाये तो इसमें आश्चर्यकी क्या बात। जनता आपके किस गुणसे आकृष्ट होकर आपके पीछे चले? पहली बार जब किंग जॉर्ज काम सीखनेके लिए जहाजपर भेजे गये, तो उन्हे दूसरे मल्लाहोंकी तरह काली काफी, काली रोटी और पनीर मिलता था। उनके खाने या रहनेकी कोई विशेष व्यवस्था नही की गई थी — उनके लिए अपने अन्य सहयोगियो जैसी ही व्यवस्था थी। कपड़ेतक जैसे खलासियोको पहननेके लिए दिये जाते हैं, वैसे ही दिये जाते। इस बातसे आप यह समझ जायेंगे कि अंग्रेजी जनता क्यो अपने राजा जॉर्जके पीछे पागल है। राजा और प्रजा, कार्यकर्त्तागण और जनसाधारण चरखेके तारके द्वारा परस्पर बाँधे जा सकते हैं। मैं मोटी मारड गया था। यद्यपि वह गाँव रेलके स्टेशनसे दूर है, किन्तु मैंने देखा कि मलमलका कपडा वहाँ भी पहुँचा हुआ

१. बैठक भावनगरमें हुई थी।

हैं। हमारे देशमें सात लाख गाँव हैं, यह बात हमें ब्रिटिश साम्राज्यके अन्तर्गत आ जानेके बाद मालूम पड़ी। इन सात लाख गाँवोंमें इसके पहले किसी सरकारने प्रवेश नहीं किया था, किन्तु आज वहाँ केलिको[1] और मँजलीनने[2] प्रवेश कर लिया है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १८-१-१९२५

४२३. अध्यक्षीय भाषण : काठियावाड़ राजनीतिक परिषद्‌में[3]

८ जनवरी, १९२५

मित्रो,

काठियावाड़ राजनीतिक परिषद्‌का अध्यक्ष-पद मुझे अपने जेल जानेसे पहले ही स्वीकार करनेको कहा गया था, लेकिन उस समय मैंने इस सम्मानजनक पदकी जिम्मेदारियाँ लेनेसे इनकार कर दिया था। जिन कारणोंसे इसे मैंने अस्वीकार किया था, चूँकि अब वे नहीं रह गये हैं, इसलिए इस सम्मानको मैंने अब स्वीकार कर लिया है, हालाँकि कुछ झिझकके साथ — झिझक इसलिए कि राजनीतिक सवाल पर मेरे विचारोंमें और अन्य बहुत-से लोगोंके विचारोंमें बहुत गहरा अन्तर है। इसके अलावा, यह तथ्य कि मैं चालू वर्षके लिए कांग्रेसका अध्यक्ष हूँ, मेरी स्थितिको कुछ अटपटी बना देता है। वही एक भार इतना ज्यादा है कि मैं उसका समुचित निर्वाह नहीं कर सकता और उसके साथ इस वर्ष इस परिषद्‌की गतिविधियोंका भी निर्देशन कर सकना मेरी सामर्थ्यसे लगभग बाहरकी बात होगी। इसलिए यदि आपकी आजकी कार्यवाहीकी अध्यक्षता करनेका मतलब ऐसा कोई दायित्व उठानेमें हो तो मैं कह दूँ कि मैं उसके साथ न्याय करनेकी हालतमें बिलकुल नहीं हूँ। इसके अलावा, मैं यहाँ अध्यक्षकी हैसियतसे जो विचार रखूँ, यदि उन्हें महज इसी कारण कांग्रेसके विचार माना जाये, क्योंकि मैं इस वर्ष कांग्रेसका भी नेतृत्व कर रहा हूँ, तो यह अनुचित होगा।

इसलिए मेरे लिए यह आरम्भमें ही स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि देशी रियासतोंके सम्बन्धमें मेरे विचारोंका कांग्रेसके सदस्योंके विचारोंसे कोई सम्बन्ध नहीं है। मेरे विचार मेरे निजी विचार हैं। इनपर कांग्रेसके विचारोंकी कोई छाप नहीं है।

यदि मुझे इस परिषद्‌का अध्यक्ष होनेके योग्य समझा गया है तो उसका कारण मैं सोचता हूँ यही है कि मैं काठियावाड़का निवासी हूँ और इस कारण भी कि मेरे इस परिषद्‌के कार्यकर्ताओंसे निकटके सम्बन्ध हैं। यह तो एक संयोगकी ही बात है कि मैं इस समय कांग्रेसका भी नेतृत्व कर रहा हूँ।

१ और २. महीन कपड़ेकी एक किस्म।

३. परिषद् भावनगरमें हुई थी।

मुख्य विषयपर आनेसे पहले मै भाई मनसुखलालके निधनका उल्लेख करना चाहता हूँ। आप सब उनके साथ मेरे सम्बन्धोसे अवगत है। आप सबको उनकी अनुपस्थिति आज खटके तो कोई आश्चर्यकी बात नही है, लेकिन मै यह बात छिपा नही सकता कि मुझे उनकी कमी बहुत ज्यादा खटक रही है। कविश्री मणिशकर रतनजी भट्टका निधन भी आपके और मेरे लिए वैसा ही दु खका विषय है। मुझे उन्हे निकटसे जानने-का सौभाग्य नही मिला था। अब उनका सहयोग हमे उपलब्ध नही होगा, यह कोई मामूली बात नही है। ईश्वर दोनो परिवारोको ये क्षतियाँ सहन करनेकी शक्ति दे। हम उनके दु खमे दुखी है, इस जानकारीसे आशा है उनका दु.ख हलका होनेमे सहायता मिलेगी।

महासभा और देशी-राज्य

मैंने अक्सर कहा है कि देशी रियासतोसे सम्बन्धित प्रश्नोपर काग्रेसको सामान्यत अ-हस्तक्षेपकी नीति अपनानी चाहिए। ब्रिटिश भारतकी जनता इस समय स्वय अपनी आजादीके लिए सघर्ष कर रही है, ऐसे समयमे इसके लिए देशी रियासतोके मामलोमे टाँग अडाना अपनी शक्ति-हीनताका ही परिचय देना होगा। जिस तरह देशी रियासतो और ब्रिटिश सरकारके सम्बन्धोमे काग्रेसकी कोई प्रभावशाली आवाज नही हो सकती, उसी प्रकार देशी रियासतो और उनकी अपनी प्रजाके बीचके सम्बन्धोमे भी काग्रेसका हस्तक्षेप व्यर्थ सिद्ध होगा।

फिर भी ब्रिटिश भारतकी जनता और देशी रियासतोकी जनता एक है, क्योकि भारत एक है। उदाहरणके लिए, बडौदाके भारतीयोकी आवश्यकताएँ और उनके रीति-रिवाज अहमदाबादके भारतीयोसे भिन्न नही है। भावनगरके लोगोका राजकोटके लोगोसे घनिष्ठ सम्बन्ध है। तथापि कृत्रिम परिस्थितियोके परिणामस्वरूप राजकोटकी नीति भावनगरकी नीतिसे भिन्न हो सकती है। एक ही प्रकारके लोगोके सम्बन्धमें विभिन्न नीतियोका होना एक ऐसी चीज है जो बहुत दिनोतक नही चल सकती। परिणामत काग्रेसके हस्तक्षेप किये बिना ही, परिस्थितियोके अदृश्य दबावसे ही अलग राज्योके अलग क्षेत्राधिकार होनेके बावजूद नीतियोमे समानता आयेगी। विविधतामे भी एकता ला सकनेकी हमारी क्षमता ही हमारी सभ्यताकी खूबी और परीक्षा होगी।

लेकिन मेरा दृढ मत है कि जबतक ब्रिटिश भारत स्वतन्त्र नही होता, जबतक ब्रिटिश भारतके लोग वास्तविक शक्ति नही प्राप्त कर लेते अर्थात् जबतक ब्रिटिश भारतमे आत्माभिव्यक्ति करनेकी शक्ति नही आती — एक शब्दमे कहे तो जबतक ब्रिटिश भारत स्वराज्य नही प्राप्त कर लेता तबतक ब्रिटिश भारत और भारतकी देशी रियासतोमे विभ्रम और अस्थिरताकी यह दशा बनी ही रहेगी। तीसरी सत्ताका अस्तित्व ही इस दशाके चलते रहनेपर निर्भर है। हम अपने घरको तभी सुव्यवस्थित कर सकते है जब ब्रिटिश भारत स्वराज्य प्राप्त कर ले।

स्वराज्यके अन्तर्गत देशी राज्योंकी स्थिति

स्वराज्य मिल जानेपर स्थिति क्या होगी? तब यहाँ पारस्परिक सहायता और सहयोगके सम्बन्ध होगे और विनाशकारी सघर्ष भूतकालकी चीज बन जायेगी।

स्वराज्य पा चुकनेपर ब्रिटिश भारत देशी रियासतोंको नष्ट करनेकी इच्छा नही करेगा, बल्कि उनका सहायक सिद्ध होगा। और देशी रियासते भी ब्रिटिश भारतके प्रति ऐसा ही रवैया अपनायेगी।

देशी रियासतोकी वर्तमान दशा मेरी रायमे कुछ दयनीय है, क्योंकि देशी नरेशोको कोई स्वाधीनता नही है। प्रजाको मृत्यु-दण्ड दे सकनेकी शक्ति होना, सच्ची शक्ति होनेका द्योतक नही है। सच्ची शक्ति तो अपनी प्रजाको सारी दुनियाके मुकाबले भी सुरक्षित रखनेकी इच्छा और सामर्थ्यमे है। आज देशी रियासतोमे ऐसी क्षमता नही है और परिणामत धीरे-धीरे वैसा करनेकी इच्छा भी समाप्त ही हो गई है। इसके विपरीत, प्रजापर अत्याचार करनेकी उनकी शक्ति, लगता है बढ गई है। चूँकि साम्राज्यमे ही अराजकता फैली हुई है इसलिए साम्राज्यके अधीन जो रियासते है उनमे भी अराजकता है। देशी रियासतोमे अराजकता देशी नरेशोके कारण उतनी नही है जितनी कि भारतकी वर्तमान दशाके कारण है।

भारतकी वर्तमान दशा चूँकि प्राकृतिक नियमो, अर्थात् ईश्वरीय नियमोके विरुद्ध है, इसलिए हम सारे देशमें अव्यवस्था और असन्तोष देखते हैं। मेरा निश्चित मत है कि यदि भारतका एक अग स्वशासित हो जाये तो सब-कुछ ठीक हो जायेगा।

आगे कौन बढ़े ?

तो फिर पहला कदम कौन उठाये ? स्पष्ट है कि भारतको ही पथ-निर्देशन करना होगा। वहाँ लोगोंको अपनी बुरी दशाका भान है और है उससे मुक्ति पानेकी चाह, और चूँकि इच्छासे ही ज्ञान उत्पन्न होता है, इसलिए जो लोग अपने सकटमे मुक्ति पाना चाहते हैं, वे ही उनके साधन ढूँढेगे और उनका प्रयोग करेंगे। इसीलिए मैंने अकसर कहा है कि ब्रिटिश भारतकी मुक्तिका अर्थ देशी रियासतोकी मुक्ति भी है। जब ब्रिटिश भारतकी स्वतन्त्रताका शुभ दिन आयेगा तब देशी रियासतोमे शासक और शासितका सम्बन्ध समाप्त नही होगा, किन्तु वह शुद्ध हो जायेगा। मेरी स्वराज्यकी जो कल्पना है उसका मतलब राजाशाहीका अन्त नही है। न उसका मतलब है पूँजीका अन्त। सचित पूँजीका मतलब है, शासनकी शक्ति। मैं पूंजी और श्रम आदिके बीच सही सम्बन्ध स्थापित करनेके पक्षमें हूँ। मैं एकके ऊपर दूसरेकी प्रभुता स्थापित नही करना चाहता। मैं ऐसा नही मानता कि इन दोनोमे कोई स्वाभाविक वैर है। हमारे बीच अमीर और गरीब हमेशा रहेगे। लेकिन उनके पारस्परिक सम्बन्धोमे निरन्तर परिवर्तन होते रहेगे। फ्रान्स एक गणतन्त्र है, लेकिन फ्रान्समे सभी वर्गोंके लोग है।

हमें आकर्षक शब्दोसे भ्रममे नही पडना चाहिए। भारतमें जो भी भ्रष्टाचार हम देखते हैं वह हर भ्रष्टाचार पश्चिमके तथाकथित सभ्य देशोमें भी उसी प्रमाणमें मौजूद हैं, भले ही उन्हे तरह-तरहके नामोसे पुकारा जाता हो। दूरीके कारण ही चीजें आँखोको मोहक लगती है, इसीलिए पश्चिमकी हर चीज हमारी आँखोमें बडी चमक-दमकवाली लगती है। वास्तवमें पश्चिममें भी शासको और शासितोके बीच अनवरत संघर्ष चलता रहता है। वहाँ भी लोग सुख और स्वर्गोकी तलाश करते है और बदलेमें दु ख भोगते हैं।

देशी राज्योंके बारेमें

बहुत-से काठियावाडी मुझसे इस सुन्दर देशके राजाओ और सामन्तोके विरुद्ध शिकायत करते है और मेरे रवैयेको मेरी उदासीनता समझकर मुझे आडे हाथो लेते है। अगर मैं कहूँ कि मैं उदासीन नही हूँ, बल्कि मै वर्तमान अव्यवस्थाओको दूर करनेके उपाय ढूँढ़ता और उन्हे लागू करता रहा हूँ तो मेरे ये अधीर मित्र मेरी यह बात शायद समझ नही पायेगे। मैंने स्वराज्य आन्दोलनमे अपना सब-कुछ दाँवपर लगा दिया है, इस आशामे कि स्वराज्य ही सब रोगोकी अचूक दवा है। जिस प्रकार सूर्योदय होनेपर तिमिरका लोप हो जाता है उसी प्रकार जब स्वराज्यका सूर्य उदित होगा तब शासको और प्रजाओकी अराजकताका अँधेरा भी एक क्षणमे तिरोहित हो जायेगा।

यूरोपके प्रवास

देशी रियासतोकी शासन-व्यवस्थाकी बराबर आलोचना होती रही है और उससे यह छोटा-सा प्रान्त भी बचा नही है। नरेशो और सामन्तोके विरुद्ध जो एक आम शिकायत है वह यह कि यूरोप-यात्रा करनेका उनका चाव दिनो-दिन बढता जाता है। किसी कामसे या ज्ञानोपार्जनके लिए उनका यूरोप जाना तो समझा जा सकता है, किन्तु महज आनन्दकी खोजमे यूरोप जाना तो असहनीय लगेगा। यदि कोई नरेश अपना ज्यादातर समय अपने राज्यसे बाहर व्यतीत करता है तो उसके राज्यमे गडबडी फैल जाती है। हमने देखा है कि लोकतन्त्र और ज्ञान-प्रसारके इस युगमे कोई ऐसा राज्य या सगठन जो लोकप्रिय या लोकोपकारी न हो, जिन्दा नही रह सकता। भारतकी देशी रियासते इस नियमके प्रभावसे मुक्त नही है। उनके प्रशासनकी तुलना इस समय ब्रिटिश सरकारके प्रशासनसे और जब स्वराज्य स्थापित हो जायेगा तब स्वराज्य सरकारके प्रशासनसे हमेशा की जायेगी। इग्लैंडके राजा जॉर्ज अपने मन्त्रियोकी सहमतिके बिना इग्लैंडसे बाहर नही जा सकते। और इसपर भी उनकी जिम्मेदारियाँ उतनी नही है जितनी कि भारतीय नरेशोकी है। भारतीय नरेश सारी ताकत अपने ही हाथोमे रखते है। वे छोटे-छोटे पदोपर नियुक्तियाँ भी खुद ही करते है। एक पुल बनानेके लिए भी उनकी अनुमति लेना जरूरी है। ऐसी हालतमे उनकी यूरोप-यात्राएँ उनकी प्रजाके लिए बहुत अरुचिकर होती है।

इन यात्राओपर होनेवाला खर्च भी असह्य होता है। यदि राजाशाहीका एक नैतिक आधार है तो नरेश लोग स्वतन्त्र मालिक नही है, बल्कि प्रजासे प्राप्त होनेवाले राजस्वके प्रजाकी ओरसे ट्रस्टी-मात्र हैं। इस धनको वे केवल न्यास-धनके रूपमे ही खर्च कर सकते है। कहा जा सकता है कि ब्रिटिश सविधानमे इस सिद्धान्तको लगभग पूर्णत कार्यान्वित किया गया है। मेरी नम्र रायमे हमारे नरेशो द्वारा यूरोपमे मुक्त-हस्तसे पैसा उडाया जाना किसी भी दृष्टिसे उचित नही ठहराया जा सकता।

कभी-कभी यूरोप जाकर इस तरह धन खर्च करनेको इस तर्कके आधारपर उचित ठहराया जाता है कि नरेश लोग वहाँ स्वास्थ्य-लाभके लिए जाते हैं। यह दलील बिलकुल हास्यास्पद है। जिस देशमे पर्वतराज हिमालयका अखण्ड साम्राज्य हो

और जिस धरतीको गगा, सिन्धु और ब्रह्मपुत्र-जैसी प्रवल नदियाँ सीचती हो, उस देश-को छोडकर स्वास्थ्य-लाभके लिए वाहर जानेकी किसीको जरूरत नही है। जिस देशमें करोडो लोग पूर्ण स्वास्थ्यका सुख भोगते हो, वहाँ नरेशोके स्वास्थ्यकी आवश्यकताएँ भी पूरी हो सकती है।

पश्चिमकी नकल

लेकिन इन विदेश-यात्राओकी सबसे वडी हानि तो नरेशो द्वारा पश्चिमकी नकल करनेमे है। हमे पश्चिमसे वहुत-कुछ सीखना और पाना है, लेकिन वहाँ वहुत-कुछ ऐसा भी है जिसे अस्वीकार ही करना होगा। ऐसा माननेका कोई कारण नही है कि जो चीज यूरोपकी जलवायुके अनुकूल है, वह सभी प्रकारकी जलवायुके अनुकूल पडेगी। अनुभव हमे वताता है कि प्रत्येक विशिष्ट प्रकारकी जलवायुके लिए कुछ अलग प्रकारकी ही चीजे अनुकूल पडती है। पश्चिमके तौर-तरीके और रीति-रिवाज पूर्वको मुआफिक नही पडेगे और न पूर्वके पश्चिमको। ऐसा कहा जाता है कि पश्चिमी देशोमे स्त्री-पुरुष साथ मिलकर सयमके साथ नाचते है और जैसा कि वताया जाता है, कि यद्यपि वे नाचके वीच मादक द्रव्योका भी प्रयोग करते है, फिर भी वे शिष्टताकी सीमा नही लाँघते। मुझे वतानेकी जरूरत नहीं है कि अगर हम इस प्रथाकी नकल करे तो क्या होगा। उस भारतीय नरेशसे सम्वन्धित घटना हमारे लिए कितनी लज्जाजनक है जिसकी चर्चा आजकल अखवारोमे पूरे विस्तारके साथ की जा रही है।

अनियन्त्रित खर्च

नरेशो और सामन्तोके विरुद्ध दूसरी शिकायत है, उनके अनियन्त्रित खर्च। इसमें वहुत-कुछ ऐसा होता है जिसे उचित नही ठहराया जा सकता। आनन्द और विलासपर एक सीमाके अन्दर खर्च करनेका नरेशोको अधिकार हो सकता है। लेकिन मै मानता हूँ कि खुद नरेश लोग भी इस मामलेमे अवाध स्वतन्त्रताकी इच्छा नही रखते।

राजस्व-प्रणाली

रियासतोमे राजस्व प्रणाली भी दोप-रहित नही है। मुझे पूरा विश्वास है कि देशी रियासतो द्वारा ब्रिटिश राजस्व-प्रणालीकी नकलने वहाँकी प्रजाका भारी अहित किया है। अगर हम यह मान ले कि मुट्ठीभर अग्रेजोके लिए हर दशामें हमारे देश-पर अपना आधिपत्य वनाये रखना नैतिक दृष्टिसे ठीक है तो ब्रिटिश राजस्व-प्रणाली-का थोडा-वहुत औचित्य हो सकता है। लेकिन भारतीय नरेशोके मामलेमे तो ऐसी कोई मजवूरी नही है। उनको अपनी प्रजासे डरनेकी कोई जरूरत नही है क्योकि उनका अस्तित्व कभी खतरेमें नही है। उन्हे एक वडी सेना रखनेकी जरूरत नही है, किसी नरेशके पास है भी नही और न अग्रेज कभी उन्हे ऐसा करने ही देगे। इसके वावजूद वे इतने भारी कर लगाते है, जिसे देना प्रजाकी सामर्थ्यसे वाहर है। मुझे यह देखकर दु ख होता है कि हमारी इस प्राचीन परम्पराका कोई आदर नही रह गया है, जिसके अनुसार राजस्वका उद्देश्य केवल जन-कल्याण ही था।

आबकारी

नरेशोंने राजस्व बढानेके लिए ब्रिटिश आबकारी विभागकी जो नकल की है वह तो विशेषरूपसे क्षोभजनक है। ऐसा कहा जाता है कि आबकारी भारतका एक प्राचीन अभिशाप है। जिस अर्थमे यह बात कही जाती है उस अर्थमे मैं इस कथन-पर विश्वास नही करता। प्राचीन कालमे राजा लोग शराबके व्यापारसे शायद कुछ राजस्व प्राप्त करते थे, लेकिन उन्होंने लोगोको आजकी तरह शराबका गुलाम कभी नही बनाया। आबकारी अपने वर्तमान रूपमे बहुत पुराने जमानेसे नही चली आ रही है, मेरा यह खयाल गलत हो तो भी, मैं इस अन्धविश्वासको नही मानता कि कोई चीज प्राचीन कालसे चली आ रही है, इसलिए अच्छी ही है। मै तो यह भी नही मानता कि कोई चीज भारतीय है इसलिए जरूर अच्छी है। बिना कोशिशके भी यह बात देखी जा सकती है कि अफीम और ऐसी ही मादक वस्तुएँ मनुष्यकी आत्माको मूच्छित कर देती है और उसे पशुओसे भी नीचे गिरा देती है। उनका व्यापार करना स्पष्ट ही पापपूर्ण है। भारतीय रियासतोको सभी शराबकी दूकाने बन्द करवा देनी चाहिए और इस प्रकार ब्रिटिश प्रशासकोके सामने अनुकरणके लिए एक अच्छा उदाहरण रखना चाहिए। काठियावाडकी जिन रियासतोने यह सुधार लागू करनेकी कोशिश की है, मैं उन्हे बधाई देता हूँ और आशा करता हूँ कि वह दिन दूर नही जब हमारे इस प्रायद्वीपमे भी शराबकी दूकान नही होगी।

कुछ खास मामले

मुझे कुछ रियासतोके विरुद्ध 'यंग इंडिया' और 'नवजीवन' मे प्रकाशन और आलोचनाके लिए बराबर शिकायते मिलती रहती है। लेकिन मैं उनकी चर्चा इस समय नही करना चाहता और न मैंने उनका जिक्र इन पत्रोमे ही किया है। जबतक मेरे पास सारे तथ्य न आ जाये और जबतक इस बारेमें सम्बन्धित रियासतोका कथन मुझे नही मालूम हो जाता तबतक मैं चुप ही रहना पसन्द करूँगा। इन चीजोके बारेमे मुझे कुछ कहना या करना उचित होगा तो मैं अवश्य इस विषयमें कदम उठाऊँगा।

खादी और चरखा

दो चीजे है जिनमे हम देशी राज्योसे पूर्ण सहयोगकी अपेक्षा कर सकते है। एक जमानेमे हमारी अर्थ-व्यवस्था ऐसी थी कि जिस प्रकार हम अपना अन्न खुद पैदा करते और उसका उपभोग करते थे, उसी प्रकार हम अपने यहाँ रुई पैदा करते, अपने घरोमे उससे सूत कातते थे और अपने ही सूतसे अपने ही बुनकरो द्वारा बुना गया कपडा पहनते थे। इसमे से पहली बात तो आज भी होती है, लेकिन दूसरी बात लगभग समाप्त हो गई है। एक आदमी अपने खानेपर जितना खर्च करता है उसका दसवाँ हिस्सा कपडेपर करता है, अत अपनी आयका दसवाँ हिस्सा अपने ही बीच बाँटनेके बजाय अब हम उसे इंग्लैंड भेज देते है या अपनी ही मिलोको। इसका मतलब यह हुआ कि हम इतना ही श्रम खो देते है और बदलेमे हम कपडेपर पैसा खर्च करते है और परिणामत दोहरा नुकसान उठाते है। इसका नतीजा यह

है कि हम अपने खानेमे कटौती करते है ताकि कपडेपर पैसा खर्च कर सके और इस प्रकार दिनोदिन ज्यादा दु खमे डूबते जाते है। अगर हमारे घरोमे या हमारे गाँवोमे कृषि और कताई-बुनाई, ये दो उद्योग समाप्त हो गये तो हमारा विनाश निश्चित है। अगर भावनगरके अधीन जितने गाँव है वे सब अपना खाना और कपडा भावनगरसे मँगवाने लगे तो क्या परिणाम होगा, इसकी कल्पना मै इस परिषद्के सदस्योपर छोडता हूँ। तथापि यही अस्वाभाविक प्रक्रिया हमने अपने कपडेकी बाबत अपना ली है। हम अपना कपडा या तो विदेशोसे मँगवाते है या मिलोसे प्राप्त करते है। दोनो ही हालतोमें इसका ग्रामीण जनतापर क्षयकारी प्रभाव पडता है।

हमें उन देशोके उदाहरणसे धोखेमे नही पड जाना चाहिए जो अपनी जरूरतका कपडा बाहरसे आयात करते है और फिर भी आर्थिक दृष्टिसे नुकसान नही उठाते। अन्य देशोमे यदि लोग कताई या बुनाईका धन्धा छोडते है तो वे उसके बदले कोई और अधिक लाभदायक उद्योग अपना लेते है। दूसरी ओर हम है जिन्होने कताई और कुछ हदतक बुनाईका धन्धा छोड दिया है और इससे बचे फालतू समयका उपयोग करनेके लिए हमारे पास कोई दूसरा उद्योग भी नही है।

काठियावाडके लिए आर्थिक सकटसे बचना बहुत आसान है। हमारे नरेश लोग स्वय उदाहरण प्रस्तुत करके लोगोको प्रोत्साहित कर सकते है और उन्हे अपने घरोमे खादीकी पुन प्रतिष्ठा करनेके लिए प्रेरित कर सकते है और इस प्रकार काठियावाडकी दिनोदिन बढती गरीबीको रोक सकते है। मेरे विचारमे काठियावाडमे मिलें और रुई साफ करनेकी मशीने लगानेसे लोगोकी आर्थिक स्थिति सुधरेगी नही, बल्कि वह तो एक बडी दुर्घटना होगी। मध्यमवर्गीय लोगोको आजीविकाकी खोजमें यहाँसे बाहर जाना पडे, यह एक स्वस्थ चिह्न नही है। इसमे कोई हर्ज नही है कि कुछ उद्यमशील व्यक्ति धनोपार्जनके लिए काठियावाडसे बाहर जायें, लेकिन रियासतोके लिए यह शर्मकी बात है कि उनकी प्रजा कगाल होकर लाचारीकी हालतमें बाहर जानेको बाध्य हो। जब भी मै कुछ दिनो बाहर रहनेके बाद काठियावाड वापस लौटा हूँ, मैने देखा है कि लोगोकी हिम्मत बढनेके बजाय वे और पस्त-हिम्मत हो गये है।

सौभाग्यसे कताई और बुनाईकी कला दिनोदिन फिरसे जीवित होती जा रही है और खादीका महत्त्व समझा जा रहा है। क्या, नरेश और सामन्त लोग इस आन्दोलनकी सहायता नही करेगे ? यदि वे किसानोको काठियावाडकी जरूरत-भरकी रुई जमा करके रखनेकी बात समझायें और स्वय खादी पहनकर उसका प्रचलन करे तो उनके लिए यह कोई कम श्रेयकी बात नही होगी। सभी खादी मोटी हो, यह जरूरी नही है। नरेश लोग हाथ-कताई और हाथ बुनाईको प्रोत्साहन देकर बुनाईसे सम्बन्धित कई प्रकारकी कलाओ और शिल्पोको पुन जीवित कर सकते है। राज महिलाएँ कलात्मक रूपसे रगे हुए और चाँदीकी घटियोमे सजे चरखोपर महीन सूत काते, उस सूतसे बारीक कपडा बुनवायें और उसे ही धारण करे। मैने काठियावाडमें बारीक और खूबसूरत किस्मका कपडा बुना जाते स्वय देखा है। यह कला अब लगभग

मृत हो चुकी है। ऐसी कलाओंको प्रोत्साहित करना क्या नरेशोका विशेष कर्त्तव्य नही है?

अस्पृश्यता

दूसरा बहुत ही महत्त्वपूर्ण सवाल अस्पृश्यताका है। दलितवर्गके लोग बृहत्तर गुजरातमे अन्य किसी भी स्थानकी अपेक्षा शायद काठियावाडमें ज्यादा पीडित जीवन व्यतीत करते है। यहाँतक कि रेलगाड़ियोमे भी उन्हे तग और परेशान किया जाता है। पीडित लोगोको राहत पहुँचाना नरेशोका विशेष कर्त्तव्य है। दुर्बलोके वे स्वाभाविक रक्षक है। क्या वे दलित वर्गोंकी सहायताके लिए आगे नही आयेगे? नरेश लोग अपनी प्रजाके आशीर्वादोसे जीवित रहते है। क्या वे दलितोकी दुआएँ अर्जित करके स्वय अपना जीवन समृद्ध नही करेगे? शास्त्र कहते है कि ब्राह्मण और भगीमें कोई भेद नही है। आत्मा दोनोमे है, दोनोमे पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ है। नरेश लोग यदि चाहे तो इन वर्गोंके लोगोकी दशा सुधारनेके लिए बहुत-कुछ कर सकते है और धार्मिक भावनासे उनके साथ वे मिले-जुले तो अस्पृश्यता समाप्त कर सकते है। उन्हे चाहिए कि दलित वर्गोंके लिए स्कूल स्थापित करें और कुएँ खुदवाये और इस तरह उनके हृदय-सिहासनपर आसीन हो।

मैंने आलोचना क्यों की?

मैंने महज आलोचनाकी ही गरजसे रियासतोकी आलोचना नही की है। मैं जानता हूँ कि गाधी-परिवारका रियासतोसे तीन पीढीका सम्बन्ध रहा है। तीन राज्योमे दीवानी करते तो मैंने ही देखा है। मुझे याद है कि मेरे पिता और मेरे चाचाके सम्बन्ध अपने-अपने राजाओसे बहुत ही सद्भावपूर्ण थे। चूँकि मेरा विश्वास है कि मुझमे अच्छे-बुरेका भेद कर सकनेकी शक्ति है इसलिए मैं उत्सुक हूँ कि रियासतोकी अच्छी बाते ही मैं देखूं। जैसा कि मैंने पहले ही कहा, मैं उनकी समाप्ति नही चाहता। मेरा विश्वास है कि रियासते लोगोका बहुत भला कर सकती है। और यदि मैं आलोचना करता हूँ तो इसीलिए कि वह राजाओ और उनकी प्रजा, दोनोके ही हितमें है। मेरा धर्म सत्य और अहिंसापर आधारित है। सत्य ही मेरा ईश्वर है। अहिसा उसे प्राप्त करनेका साधन है। आलोचना करते समय मैंने सत्य ही बतानेकी कोशिश की है और अहिसा या प्रेमकी भावनासे प्रेरित होकर ही मैंने वैसा किया है। मैं मानता हूँ कि राजा और सामन्त लोग मेरी बातोको उसी भावनासे समझे और स्वीकार करे।

रामराज्य

देशी रियासतोंके लिए मेरा आदर्श राम-राज्य है। रामने एक धोबीका उलाहना सुनकर और अपनी प्रजाको सन्तुष्ट करनेके लिए सीताको त्याग दिया था, जो कि उन्हे प्राणोसे प्यारी थी और पवित्रताकी साक्षात् अवतार थी। रामने कुत्तेतक के साथ न्याय किया था। सत्यकी रक्षाके लिए राज्य छोड जगलमें रहकर रामने ससारभरके राजाओको शुद्ध आचरणका वस्तु-पाठ पढाया। अपने कठोर और एक-पत्नी-

व्रतमे उन्होंने दिखा दिया कि एक राज-गृहस्थ भी पूर्ण आत्म-सयमका जीवन बिता सकता है। अपने लोकप्रिय शासनसे उन्होंने अपने सिंहासनकी शोभा बढाई और सिद्ध कर दिया कि राम-राज्य स्वराज्यका चरमोत्कर्ष है। रामको जनमतका निश्चय करनेके लिए मत-गणना-जैसे निहायत अपूर्ण आधुनिक साधनकी कोई आवश्यकता नही थी। उन्होंने जनताके हृदयको वशमें कर लिया था। उन्हे जनताकी रायका जैसे सहज ही ज्ञान हो जाता था। रामकी प्रजा अत्यन्त सुखी थी।

ऐसा राम-राज्य आज भी सम्भव है। रामका वश अभी समाप्त नही हुआ है। आधुनिक युगमे कहा जा सकता है कि आरम्भिक खलीफाओंने राम-राज्यकी स्थापना की थी। अबूबकर और हजरत उमर करोडो रुपयेका राजस्व उगाहते थे, लेकिन व्यक्तिगत तौरपर वे फकीरोसे बेहतर नही थे। वे राजकोपसे एक पाई भी नही लेते थे। वे हमेशा सतर्क रहते थे कि जनताको न्याय प्राप्त हो। उनका सिद्धान्त था कि शत्रुके साथ भी कोई धोखेबाजी नही की जा सकती और उसके साथ भी न्यायपूर्ण बरताव होना चाहिए।

जनतासे

मेरी नम्र रायमें नरेशोंके प्रति कुछ शब्द कहकर मैंने उनके प्रति अपना कर्त्तव्य निबाहा है। अब कुछ शब्द जनतासे कहूँगा। लोकोक्ति है, "यथा राजा तथा प्रजा" यह उक्ति आधी ही सच है। कहनेका मतलब कि जितनी यह उक्ति सही है कि "यथा प्रजा तथा राजा" उतनी ही सही पहली उक्ति है, उससे अधिक नही। जहाँ प्रजा सदा सावधान और सजग है वहाँ राजा अपनी गद्दीके लिए हमेशा उसके ऊपर निर्भर रहता है। जहाँकी प्रजा तन्द्रामें पडकर उदासीन हो जाती है, वहाँ इस बातकी बहुत सम्भावना रहती है कि राजा रक्षककी जगह भक्षक बन जायेगा। जो प्रजा सदैव जागरूक नही रहती, उसे अपने राजापर दोष धरनेका कोई अधिकार नही है। राजा प्रजा दोनो ही ज्यादातर परिस्थितियोके दास होते है। उद्यमशील राजा और प्रजा परिस्थितियोको अपने अनुकूल मोड लेते है। परिस्थितियोको अपना दास बना लेनेमें ही मर्दानगी है। जो अपनी मदद खुद नही करते वे नष्ट हो जायेंगे। इस सिद्धान्तको समझनेका मतलब है कि मनुष्य अधीर न हो, भाग्यको न कोसे और दूसरोको दोष न दे। जो मनुष्य आत्म-सहायताके सिद्धान्तको समझता है वह अपनी असफलताके लिए स्वय अपनेको दोष देता है। यही वह सिद्धान्त है जिसके आधारपर मैं हिंसाका विरोध करता हूँ। जहाँ हमें स्वय अपनेको दोष देना चाहिए, वहाँ यदि हम दूसरोको दोष दे और उनके नाशकी इच्छा करे या उनका नाश कर दें तो रोगका मूल कारण खतम नही हो जाता, उलटे रोगका ज्ञान न होनेके कारण उसकी जड और भी गहरी पैठ जाती है।

सत्याग्रह

तो हम देखते है कि जिन दोषोंका मैंने उल्लेख किया उनके लिए जनता उतनी ही जिम्मेदार है जितने कि राजा लोग, बल्कि उनसे ज्यादा जिम्मेदार है। यदि जनमत

किसी नीतिके विरुद्ध हो तो राजाके लिए उस नीतिको अपना सकना असम्भव है। विरोधसे यहाँ मतलब मन-ही-मन बुड़बुड़ानेसे नही है। जनमत तभी प्रभावकारी होता है जब उसके पीछे शक्ति हो। जब किसी पुत्रको अपने पिताके किसी कार्यपर आपत्ति होती है तो वह क्या करता है? वह अपने पितासे उस आपत्तिजनक कार्यको न करनेकी प्रार्थना करता है अर्थात् आदरपूर्वक निवेदन करता है। यदि बार-बार प्रार्थना करनेपर भी पिता नहीं मानता तो बेटा उससे असहयोग करके अपने पिताका घर तक छोड़ देता है। यह शुद्ध न्याय है। यदि पिता और पुत्र असभ्य है तो वे एक-दूसरेसे झगड़ते है, गाली-गलौज करते है और कभी-कभी तो मार-पीट भी करते है। आज्ञाकारी पुत्र सदा विनम्र-शान्त और पिताके प्रति प्रेमभाव रखनेवाला होता है। यह उसका प्रेम ही है जो उसे अवसर आनेपर असहयोग करनेके लिए बाध्य करता है। स्वयं पिता भी इस प्रेमपूर्ण असहयोगको समझता है। वह अपने पुत्रका इस तरह घर छोड़कर चला जाना या उससे अलग होना सह नही सकता, मनमे दुःखी होता है और पश्चात्ताप करता है। हमेशा यही होता है, ऐसी बात नही है। लेकिन असहयोग करनेका पुत्रका कर्त्तव्य स्पष्ट है।

किसी राजा या उसकी प्रजाके बीच भी ऐसा असहयोग सम्भव है। परिस्थिति विशेषमे ऐसा करना जनताका कर्त्तव्य भी हो सकता है। ऐसी परिस्थितियाँ वही सम्भव है जहाँकी प्रजाके लोग स्वभावसे निर्भय और स्वाधीनता-प्रेमी होते है। वे राज्यके कानूनोकी सामान्यत. कद्र करते है और दण्ड-भयके बिना ही उसका पालन करते है। समझ-बूझकर और इच्छापूर्वक राज्यके कानूनोका पालन, असहयोगका पहला पाठ है।

दूसरा पाठ है 'सहिष्णुता'। राज्यके बहुत-से कानून है जो असुविधाजनक हों तो भी उनका पालन हमें करना चाहिए। पुत्र अपने पिताकी कुछ आज्ञाओसे सहमत न होनेपर भी उनका पालन करता है। जब पिताकी आज्ञाएँ सहने योग्य न हो और अनैतिक हों तभी वह उनकी अवज्ञा करता है। पिता ऐसी सविनय अवज्ञाको तुरन्त समझ जायेगा। इसी तरह जब किसी राज्यके लोग राज्यके बहुत-से कानूनोका पालन करके अपनी सक्रिय निष्ठाको सिद्ध कर देते है, तभी वे सविनय अवज्ञा करनेके अधिकारी बनते है।

तीसरा पाठ कष्ट-सहनका है। जिसमे कष्ट-सहनकी क्षमता नही है वह असहयोग नही कर सकता। जिसने जरूरत पड़नेपर अपनी सम्पत्ति, यहाँतक कि परिवारका त्याग करना नही सीखा है वह असहयोग नही कर सकता। ऐसा सम्भव है कि असहयोगसे चिढकर कोई राजा तरह-तरहके दण्ड दे। इसीमे प्रेम, धैर्य और शक्तिकी परीक्षा है। जो अग्नि-परीक्षा झेलनेके लिए तैयार नही है वह असहयोग नही कर सकता। केवल एक या दो व्यक्तियोंने ही यदि ये तीन पाठ हृदयंगम किये हो तो ऐसा नही माना जा सकता कि सारी जनता असहयोगके लिए तैयार हो चुकी है। असहयोग कर सके, इससे पहले काफी बडी सख्यामे लोगोका इन तीन बातोको सीखना आवश्यक है। जल्दबाजीमे किये गये असहयोगका परिणाम हानिकारक ही होगा। कुछ राष्ट्र-प्रेमी नौजवान मेरे द्वारा बताई गई सीमाओको न समझ पानेके

कारण अधीर हो उठते हैं। सभी महत्त्वपूर्ण चीजोंकी तरह असहयोगके लिए भी पहलेसे तैयारी करना जरूरी है। इच्छा करने मात्रसे कोई व्यक्ति असहयोगी नहीं हो जाता। अनुशासन अनिवार्य है। मुझे नहीं मालूम कि काठियावाडके किसी हिस्सेमें लोगोंने आवश्यक अनुशासनका पाठ पढा है। आवश्यक अनुशासनकी शिक्षा पानेके बाद शायद असहयोग करनेकी जरूरत ही नहीं होगी।

हालत जैसी है, उसमें मैं काठियावाडमें और भारतके अन्य भागोंमें भी इस बातकी जरूरत देखता हूँ कि प्रत्येक व्यक्ति अपनेको तैयार करे। प्रत्येक व्यक्तिको सेवा, त्याग, सत्य, अहिंसा, आत्म-संयम और धैर्य आदिकी भावना अपनेमें पैदा करनी चाहिए। इन गुणोंको विकसित करनेके बाद उन्हें रचनात्मक कार्योंमें लगना जरूरी है। यदि हम जनताके बीच शान्त ढंगसे काम करें तो बहुत-से सुधार अपने आप ही हो जायेंगे।

राजनीतिक वर्ग

काठियावाड अपने राजनीतिक वर्गके लिए प्रसिद्ध है। यह वर्ग अतिशय विनम्रताका दिखावा करता है और परिणामस्वरूप इसमें ढोंग, भीरुता और जी-हुजूरीके दुर्गुण आ गये हैं। इस वर्गके लोग शिक्षित हैं और इसलिए उन्हें सुधारोंके मामलेमें सबसे आगे बढना चाहिए। अगर वे चाहें तो जनताके लिए बहुत-कुछ कर सकते हैं। जहाँ-जहाँ ये राजनीतिक अधिकारी चरित्रवान व्यक्ति हैं वहाँ हम लोगोंमें सुख-सन्तोष पाते हैं। यह कहनेकी जरूरत नहीं है कि मेरी यह उक्ति राजनीतिक व्यक्तियोंके पूरे वर्गके लिए है। मैं यह नहीं कहना चाहता कि मेरा कथन इस वर्गके प्रत्येक सदस्यके बारेमें सच है। बल्कि इसके विपरीत, मैं जानता हूँ कि कुछ अच्छेसे-अच्छे कार्यकर्त्ता इसी वर्गसे आये हैं। अतः इस वर्गके प्रति मैं कभी निराश नहीं हुआ हूँ। यदि यह वर्ग राजस्व बढानेके लिए नहीं बल्कि शुद्ध सेवा-भावसे राज्यकी सेवा करे तो बहुत भला हो सकता है।

अन्य लोग

फिर, जिन लोगोंने राज्यकी नौकरी न करके कोई स्वतन्त्र पेशा अपनाया है उनके लिए रचनात्मक सेवा-कार्य करना बहुत सरल है। मैं उनमें उपयुक्त गुणोंका विकास देखना चाहता हूँ। हमें मौन कार्यकर्त्ताओं और शुद्ध लडाकोंकी जरूरत है जो जनताके बीच अपनेको घुला-मिला दें। इस प्रकारके कार्यकर्त्ता अँगुलियोंपर गिने जा सकते हैं। क्या काठियावाडके प्रत्येक गाँवमें एक-एक भी ऐसा कार्यकर्त्ता है? मैं जानता हूँ कि इनका उत्तर 'नहीं' में है। जिस वर्गके लोग मेरा यह भाषण पढेंगे उन्हें ग्रामीण-जीवनका शायद ही कोई अनुभव हो। जिन्हें कुछ है, वे उसे पसन्द नहीं करेंगे। तथापि भारत और इसीलिए काठियावाड भी, गाँवोंमें ही बसता है।

चरखा

यह सेवा किस प्रकार की जा सकती है? यहाँ मैं पहला स्थान चरखेको देता हूँ। मैंने चरखेके विरुद्ध बहुत-कुछ सुना है। लेकिन मैं जानता हूँ कि जिस चीजको आज गाली दी जा रही है उसीको सुदर्शन चक्रकी भाँति पूजा जायेगा और वह

समय करीब ही है। मुझे पूरा विश्वास है कि यदि हम स्वेच्छासे आज उसे स्वीकार नही करते तो परिस्थितियाँ हमे उसके लिए मजबूर कर देगी। भारतीय अर्थशास्त्रका अध्ययन चरखेका अध्ययन है। चरखा हमारे ह्रासोन्मुखी ग्रामोद्योगोके पुनरुद्धारकी अपरिहार्य शर्त है। मै हाथ-कताईको कोई धन्धा नही मानता, वल्कि सभी धार्मिक सम्प्रदायोके अनुयायियोके लिए उसे एक धार्मिक कर्त्तव्य मानता हूँ।

एक अमेरिकी लेखकका कहना है कि भविष्य उन राष्ट्रोके हाथमे है जो शारीरिक श्रममे विश्वास करते है। दुनियाके देश उन निर्जीव मशीनोकी पूजासे थक गये है, जो निरन्तर सख्यामे बढती ही जा रही है। हम लोग अप्रतिम सजीव मशीनोको अर्थात् अपने शरीरको निकम्मा वनाकर और उनकी जगह निर्जीव मशीनोको देकर शरीरको नष्ट कर रहे हैं। यह एक ईश्वरीय नियम है कि शरीरसे पूरा काम लिया जाये और उसका उपयोग किया जाये। हम उसकी उपेक्षा नही कर सकते। चरखा शरीरका शुभ प्रतीक है। जो मनुष्य विना श्रमका भोग चढाये भोजन करता है वह चोरी करके खाता है। शरीर-श्रमसे बचना देश-द्रोह करने और ड्योढीपर खडी भाग्य-लक्ष्मीको ठुकरानेके समान है। भारतमे जीवित ककाल-जैसे शरीरवाले असख्य पुरुष और स्त्री इसके गवाह हैं। मेरे आदरणीय मित्र श्री [श्रीनिवास] शास्त्रियर कहते है कि मै लोगोके कपडेकी पसन्दमें भी हस्तक्षेप करता हूँ। यह वात विलकुल सही है। देशके प्रत्येक सेवकका यह कर्त्तव्य है कि जब जरूरी हो जाये तो वह वैसा करे। यदि देशमे पतलून अपनाई जाने लगे तो मैं अवश्य उसके खिलाफ अपनी आवाज उठाऊँगा। पतलून हमारे यहाँकी जलवायुकी दृष्टिसे विलकुल अनुपयुक्त है। यह प्रत्येक भारतीयका कर्त्तव्य है कि वह अपने देशवासियोके द्वारा विदेशी कपडेका उपयोग किये जानेके खिलाफ अपनी आवाज उठाये। विरोध वस्तुत कपडेके विदेशी होनेसे नही है, वल्कि उस गरीबीसे है जो विदेशी कपड़ेके आयातके साथ-साथ इस देशमे आती है। अगर देश अपना ज्वार और बाजरा छोडकर स्काटलैंडसे ओट या रूससे राईका आयात करने लगे तो मै निश्चय ही देशकी रसोईके मामलेमे भी हस्तक्षेप करूँगा, उसे जी भरकर फटकारूँगा, यहाँतक कि धरना दूँगा और अपने हृदयकी व्यथाको सुनाकर मानूँगा। ऐसे हस्तक्षेपकी घटनाएँ हालके जमानेमें ही हुई हैं। यूरोपके पिछले नृशस युद्धके दौरान लोगोको कुछ खास फसले उगानेपर मजबूर किया गया था और राज्योने अपनी प्रजाके खाने-पीनेपर नियत्रण लगा दिया था।

जो लोग गाँवोंमे सेवा-कार्य करना चाहते है उनके लिए चरखेका अध्ययन लाजिमी है। सैकड़ो-हजारो युवक और युवतियाँ चरखेके जरिये अपनी जीविका कमा सकते है और दूना लाभ पहुँचा सकते हैं। इस कामके लिए सगठनकी आवश्यकता है और प्रत्येक ग्रामवासीसे परिचय होना जरूरी है, ताकि कार्यकर्त्ता अर्थशास्त्र और राजनीतिकी बुनियादी वातोका उसे आसानीसे ज्ञान करा सके। इस काममे ग्रामीण वालकोकी सच्ची शिक्षा भी शामिल हो सकती है और वहाँ काम करनेसे गाँवकी जरूरतो और कमियोका भी ठीक अन्दाज लगाया जा सकता है।

खादीके काममें राजा और उसकी प्रजाके वीच किसी प्रकारका सघर्ष सम्भव नही है। यही नही, वल्कि इससे उनके पारस्परिक सम्बन्ध सद्भावनापूर्ण होनेकी

आशा की जा सकती है। इस आशाकी पूर्ति कार्यकर्त्ताओंकी विनयशीलतापर निर्भर करती है। इसलिए इस राजनीतिक परिषद्से चरखेको प्रमुखता देनेको कहनेमें न मुझे कोई शर्म लग रही है और न कोई सकोच ही है।

दलित वर्ग

दलित वर्गोंके बीच काम करना भी ऐसा ही है। सभी हिन्दुओका यह परम कर्त्तव्य है कि वे अस्पृश्यताको समाप्त करे। इस काममे भी राजाओकी ओरसे किसी हस्तक्षेपकी आशका नही है। मेरा पक्का विश्वास है कि दलितोंकी सेवा करते हुए और उनके हृदयमे निकलनेवाला आशीर्वाद पाते हुए हिन्दू लोग यदि आत्म-शुद्धिकी प्रक्रिया जारी रखेंगे तो वे अपना आत्म-बल फिरसे प्राप्त कर लेगे। अस्पृश्यता हिन्दू-धर्मपर एक बहुत बडा कलक है। इस कलकको मिटाना बहुत जरूरी है। दलितोंकी जो सेवा करेगा वह हिन्दू-धर्मका त्राता होगा और वह अपने दलित भाई और बहनोंके हृदयमे स्थान पायेगा।

शक्ति दो प्रकारकी होती है। एक जो दण्डका भय दिखाकर प्राप्त की जाती है और दूसरी वह जो प्रेमके तरीकोंसे प्राप्त की जाती है। प्रेमपर आधारित शक्ति भयके जरिये प्राप्त शक्तिके मुकाबले हजारगुना कारगर और स्थायी होती है। जब इस परिषद्के सदस्य प्रेमपूर्ण सेवाओंके जरिये अपनेको तैयार कर लेंगे तब वे जनताकी ओरसे बोलनेका अधिकार प्राप्त कर लेंगे और उस समय कोई राजा उनका विरोध नही कर सकेगा। यदि असहयोग करनेकी कभी जरूरत पडी ही तो उसका ठीक वातावरण उसी समय होगा।

लेकिन मुझे राजाओमे भरोसा है। वे ऐसे प्रबुद्ध और सशक्त जनमतकी शक्ति तत्काल पहचान लेंगे। आखिरकार राजा लोग भी भारतीय है। यह देश हमारी ही तरह उनके लिए भी सब-कुछ है। उनके हृदयको छू सकना सम्भव है। कमसे-कम मैं उनकी न्याय-बुद्धिसे अपील करके सही बात मनवा लेना कठिन नही मानता। हमने अभीतक कोई सच्चा प्रयास नही किया है। हम हडबडमे हैं। पूरी ईमानदारीसे सेवाके लिए अपनेको तैयार करनेमें ही हमारी विजय निहित है — नरेशोंकी विजय भी और जनताकी विजय भी।

हिन्दू-मुस्लिम एकता

तीसरा सवाल हिन्दू-मुस्लिम एकताका है। मेरे पास काठियावाडमे भेजे गये एक-दो पत्र हैं, जिनसे पता चलता है कि इस सवालपर काठियावाडमे भी कुछ लोग चिन्तित हैं। यह कहनेकी जरूरत नही है कि हिन्दू और मुसलमानोंमे एकता होना जरूरी है। कोई भी कार्यकर्त्ता राष्ट्रके किसी भी अगकी उपेक्षा नही कर सकता।

मेरा कार्य-क्षेत्र

मैं जानता हूँ कि बहुतोंको मेरा भाषण अपूर्ण और नीरस लगेगा। लेकिन मैं अपनी परिधिसे बाहर जाकर कोई व्यावहारिक और उपयोगी सलाह नही दे सकता। मेरा कार्य-क्षेत्र सुस्पष्ट है और उसमे मुझे सुख मिलता है। मैं तो प्रेमके कानूनपर

मंत्रमुग्ध हूँ। यह तो मेरे लिए पारसमणिके समान है। मैं जानता हूँ कि हमारी जो खराबियाँ है उनका एकमात्र इलाज अहिंसा है। मेरी दृष्टिमे अहिंसाका रास्ता भीरु या नामर्द लोगोका रास्ता नही है। अहिंसा क्षात्र-धर्मका चरमोत्कर्ष है, क्योकि यह निर्भयताकी पराकाष्ठाका प्रतीक है। इसमे पीठ दिखाकर भागने या पराजयकी कोई गुजाइश नही है। अहिंसा आत्माका गुण है, अत. इसकी सिद्धि कठिन नही है। अपने अन्तरमे आत्माका अस्तित्व अनुभव करनेवालेको यह गुण सरलतासे सिद्ध हो जाता है। मेरा विश्वास है कि भारतको अहिंसाके सिवा कोई दूसरा रास्ता अनुकूल नही पड़ेगा। भारतके लिए अहिंसा धर्मका प्रतीक चरखा है, क्योकि चरखा ही दु.खीजनोका साथी और गरीबोको समृद्धि प्रदान करनेवाला है। प्रेमका कानून दिशा और कालके बन्धनसे मुक्त है। इसीलिए मेरे स्वराज्यमें भंगियो, ढेढो और दूबलो[1] और दीनसे-दीन व्यक्तिका भी महत्त्व माना गया है और चरखेके सिवा मैं दूसरी किसी चीजको नही जानता जो इन सबको अपना मित्र बनाती हो।

मैंने आपकी स्थानीय समस्याओकी चर्चा नही की है, क्योकि उनका मुझे समुचित ज्ञान नही है। देशी रियासतोके लिए आदर्श सविधानके बारेमे मैंने कुछ नही कहा है, क्योकि उसकी रचना केवल आप ही कर सकते है। मेरा कर्त्तव्य तो उन साधनोकी खोज करना और उनका उपयोग करना है जिनके जरिये हमारा देश अपनी इच्छाको कार्यान्वित करनेकी शक्ति प्राप्त कर सके। एक बार देशको अपनी शक्तिका ज्ञान हो जाये, फिर तो वह अपना रास्ता स्वय पा लेगा और रास्ता नही होगा तो बना लेगा। मुझे तो वही राजा स्वीकार्य है जो अपनी प्रजाके सेवकोमे सबसे श्रेष्ठ हो। प्रजा ही वास्तविक स्वामी है। लेकिन यह स्वामी ही सो जाये तो सेवक क्या कर सकता है? इसलिए सच्ची राष्ट्रीय जागृतिमे सभी चीजे शामिल है।

मेरा आदर्श यह है और इसीलिए मेरी कल्पनाके स्वराज्यमे भारतीय रियासतोके लिए स्थान है और उसमे प्रजाको उसके अधिकारोकी पूरी गारटी होगी। अधिकारका सच्चा स्रोत कर्त्तव्य है। इसीलिए मैंने केवल राजाओ और प्रजाके कर्त्तव्योकी ही चर्चा की है। हम सब यदि अपने कर्त्तव्योको पूरा करे तो अधिकारोको ढूँढने दूर नही जाना होगा। यदि हम अपने कर्त्तव्योको अधूरा छोडकर अधिकारोके पीछे दौड़ेंगे तो वे मृग-मरीचिकाकी तरह हमारे हाथसे निकल जायेंगे। हम जितना ही उनके पीछे दौड़ेंगे वे हमसे उतने ही दूर भागते जायेंगे। यही शिक्षा कृष्णके इन अमर शब्दोमें निहित है: "कर्मण्येवाधिकारस्ते, मा फलेषु कदाचन।[2]" अर्थात् कर्म करना ही तेरा धर्म है, अत फलकी आकाक्षा मत कर। कर्म कर्त्तव्य है; अधिकार फल है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ८-१-१९२५

१. गुजरातकी एक पिछड़ी हुई आदिवासी जाति।

२. **भगवद्गीता** अध्याय २, श्लोक ४७।

४२४. भाषण : काठियावाड़ राजनीतिक परिषद्, भावनगरमें

८ जनवरी, १९२५

इस परिषद्के अध्यक्ष-पदका भार ग्रहण करते हुए मुझे बहुत हिचकिचाहट हो रही थी, यह बात मैंने अपने भाषणमे बताई है। लेकिन मनुष्य सोचता कुछ है तथा ईश्वर करता कुछ और ही है। ऐसे उदाहरण मैंने अपने जीवनमें अनेक बार देखे है और एक भी विचारशील स्त्री अथवा पुरुष ऐसा न होगा जिसे इसका अनुभव न हुआ हो।

मैंने यह भी माना था कि इस परिषद्मे मुझे केवल एक ही वस्तुको प्रधानता देनी होगी, लेकिन सौभाग्यसे अब मुझे दो वस्तुओंको प्रधानता देनी होगी। पहली तो खादी, जिसके समान मुझे अन्य कोई वस्तु प्रिय नही है। कुछ लोग मुझे चरखेका — खादीका — दीवाना कहते है और यह बात सच है। कारण, आशिक ही माशूकको समझ सकता है। मुहब्बत, प्रेम, इश्क क्या है सो आशिक ही बता सकता है। मैं आशिक हूँ इसलिए अपने प्रेमकी बात मैं ही समझ सकता हूँ, मैं ही जानता हूँ कि मेरे हृदयमे कौन-सी ज्वाला धधक रही है। लेकिन इस ज्वालाके सम्बन्धमे मैं अभी कुछ नही कहना चाहता।

यह राजनीतिक परिषद् है और आप लोग राजनीतिक मामलोंकी चर्चाकी अपेक्षा करते होंगे। मेरा मन तो किसानका है, हालाँकि मैं जन्मसे बनिया हूँ तथा मेरे पिता और उनके भी पिता मुनीमगिरी करते थे। ऐसा होनेपर भी मुझमे मुनीम-गिरीपन नही है अथवा अगर है तो इसलिए कि मैं लाचार हूँ। लेकिन मुझमें एक अन्य वस्तु भी है — जो विरासतमें नही मिली लेकिन, जिसे मैंने प्राप्त किया है — वह है किसानपन, भंगीपन, ढेढपन, समाजमे जिसे नीचा माना गया है, ऐसा हर पेशा मैंने अपना माना है। ऐसा मेरा स्वभाव है अत 'राजनीतिक' का आप लोग जो अर्थ करते है, वैसा मैं नही करता। आपकी तरह मैं उसे 'मुनीमगिरी' से कूटनीतिसे, नही जोडता। मेरे जैसे लोग 'राजनीतिक' विषयोपर विचार करते समय केवल राजकाजकी बातोका ही विचार नही करते, क्योकि किसान खेतकी देखभाल भाषणोसे नही कर सकता, केवल हलसे ही कर सकता है, चाहे कितनी ही गर्मी और सर्दी क्यो न हो वह हल नही छोड सकता। बुनाईका धन्धा करनेवाला व्यक्ति भी तभी अपने धन्धेको साध सकेगा, जब वह अपना काम करेगा। 'राजनीतिक' का सामान्य अर्थ भाषण करना, आन्दोलन करना, राजाकी त्रुटियोको देखना है। लेकिन मैंने उसका इससे उलटा ही अर्थ किया है। हिन्दुस्तानके बाहर अपने २२ वर्षके कार्यकालमें भी मैंने इसका दूसरा ही अर्थ किया है। लेकिन दूरके ढोल सुहावने लगते है, उस तरह लोग मुझे भी राजनीतिक अर्थात् मुनीम मानते आये है। मुझे राजनीतिक काम

करना आता है लेकिन मेरी राजनीति दूसरी तरहकी है, उसमे विवेक और प्रेम निहित हैं। उसमे कूटनीतिको स्थान नही है। सच तो यह है कि कूटनीतिसे जितना लाभ होता है, विवेक और प्रेमसे उससे हजारगुना ज्यादा होता है और इसमें किसानका, भंगीका, ढेढ़का सबके हितका विचार आ जाता है। आप जानते है कि कांग्रेसमें भी मैंने 'राजनीति' की यही व्याख्या की थी और ऐसा करते हुए मैंने लज्जाका अनुभव नही किया था। इसी बातको ध्यानमे रखकर मैने खादीको राजनीतिक कार्य-क्रममे स्थान दिया है। मेरा दावा है कि मेरी बात समझदारीकी और ज्ञानकी है तथा मुझे लगता है कि एक समय ऐसा आयेगा जब आप कहेगे, गांधीने चरखेकी जो बात की थी उसमे अत्यन्त चतुराई, ज्ञान और समझदारी भरी हुई थी। आज जब लोग मुझपर हँसते है और कहते हैं कि चरखा गांधीके मनोरंजनकी वस्तु है तब मुझे उनपर दया आती है और वे अपने मनमें जितना चाहे उतना हँसें लेकिन मैं खादीकी बात छोड़नेवाला नही हूँ।

अब दूसरी बातपर आता हूँ। जबसे मेरे यहाँ आनेकी बात हुई है और जबसे मैंने 'नवजीवन' मे लिखा है कि यदि सभामे ढेढ़ोको अलग स्थान दिया जायेगा तो मेरे लिए भी उनके बीच बैठनेकी व्यवस्था करनी होगी[1], तबसे भावनगरमे खलबली मच रही है। काठियावाड़में अस्पृश्यताका रूप क्या है, उसे मैंने अपनी आँखोसे देखा है। मेरी पूजनीय माता भंगीको छूनेमे पाप मानती थी, लेकिन इसके लिए मेरे मनमें अपनी माँके प्रति घृणाका भाव नही है। लेकिन मुझे अपने माँ-बापके कुँएमे डूबकर तो नही मरना है। मेरे माँ-बापने तो मुझे स्वतन्त्रताकी विरासत दी है और यद्यपि आज मैं उनके विचारोसे विपरीत विचार रखता हूँ तथापि मुझे विश्वास है कि मेरी माताकी आत्मा कहेगी, "बेटा, तू धन्य है।" क्योकि मैंने उससे जो प्रतिज्ञाएँ की थी, उनमे ऐसी कोई बात नही थी कि किसीसे छू जानेमे पाप है। मुझे विलायत भेजते समय उसने मुझसे तीन प्रतिज्ञाएँ कराई थी, लेकिन उसने मुझसे ऐसी कोई प्रतिज्ञा नहीं कराई थी कि विलायतमे जाकर अस्पृश्यताको धर्म समझना। मैं देखता हूँ कि इस बातको लेकर आज भावनगरमे थोड़ी (या ज्यादा — मैं ठीक नहीं जानता) खलबली मची हुई है तथा नागर, बनिये और अन्य लोग व्याकुल हो रहे हैं। उनमें से जो लोग उपस्थित है जो ऐसा मानते है कि गांधी भ्रष्ट हो गया है और सनातन धर्मकी जड़ काट रहा है उनसे मैं विनयपूर्वक, पर दृढ़तापूर्वक कहना चाहता हूँ कि गांधी सनातन धर्मकी जड़ नही काट रहा है, अपितु गांधी जो कहता है उसीमें सनातन धर्मकी जड़ निहित है। आपमे भले ही कोई पण्डित हो, भले ही उन्होने 'वेद' का हर शब्द-शब्द रटा हो तथापि मैं उनसे कहूँगा कि आपसे भारी भूल हो रही है, सनातन धर्मकी जड़ वे ही उखाड़ रहे है जो अस्पृश्यताको हिन्दू-धर्मका मूल मानते हैं। उनसे मैं आदरपूर्वक कहना चाहता हूँ कि इसमें विचार नही, विवेक नही, विनय नहीं और दया नही है। अपने विचारमें यदि मैं अकेला भी रह जाऊँ तो भी अन्ततक मैं यही कहूँगा कि अस्पृश्यताका हम आज जो अर्थ करते है उसे यदि हम हिन्दू-धर्ममें

१. देखिए शीर्षक "किस आशासे?", ७-१२-१९२४।

स्थान दें तो हिन्दू-धर्मको क्षय रोग हो जायेगा और इसके परिणामस्वरूप यह नष्ट हो जायेगा। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र — सबसे मैं कहता हूँ कि हिन्दुस्तानका उद्धार न तो मुसलमानोंपर और न ईसाइयोंपर उतना निर्भर करता है जितना कि इस बातपर कि हिन्दू अपने धर्मका किस तरह पालन करते हैं। क्योंकि मुसलमानोंका काशी-विश्वनाथ यहाँ नहीं बल्कि मक्केमें है और ईसाइयोंका जेरूसलममें है। लेकिन आप तो हिन्दुस्तानमें रहकर ही मोक्ष प्राप्त कर सकेंगे। यह युधिष्ठिरकी भूमि है, रामचन्द्रकी भूमि है, ऋषि-मुनियोंने इस भूमिपर तपश्चर्या की और उन्होंने ही यह सन्देश सुनाया कि यह कर्मभूमि है, भोगभूमि नहीं। इस भूमिके वासियोंसे मैं कहता हूँ कि आज हिन्दू-धर्मकी परीक्षा है और जगतके सब धर्मोंके साथ आज उसकी तुलना हो रही है। तथा जो वस्तु समझके बाहर होगी, दयाधर्मके बाहर होगी उस वस्तुका [यदि] हिन्दू-धर्ममें समावेश होगा तो उसका अवश्य नाश हो जायेगा। दया-धर्मका मुझे भान है और इसीके कारण मैं देख रहा हूँ कि हिन्दू-धर्ममें कितना पाखण्ड, कितना अज्ञान चल रहा है। इस पाखण्ड और अज्ञानके विरुद्ध जरूरत पड़नेपर मैं अकेले ही जूझूँगा, अकेला रहकर तपश्चर्या करूँगा और इसका नाम रटते हुए मरूँगा। हाँ, ऐसा भी हो सकता है कि मैं पागल हो जाऊँ और अपने पागलपनमें मैं कहने लगूँ कि अस्पृश्यता सम्बन्धी अपने विचारोंके सम्बन्धमें मैंने भूल की थी, अस्पृश्यताको हिन्दू धर्मका पाप बतानेमें मैंने पाप किया था। जिस दिन ऐसा हो उस दिन आप समझ लेना कि मैं डर गया हूँ, परिणामोंका सामना नहीं कर सका हूँ और घबरा कर खुद ही अपने विचारोंसे पीछे हट रहा हूँ। उस समय आप यही समझना कि मूर्च्छावस्थामें ऐसी बात कर रहा हूँ।

मैं आज जो बात कह रहा हूँ उसमें मेरा स्वार्थ नहीं है। उससे मुझे कोई पदवी प्राप्त नहीं करनी है, पदवी तो मुझे भंगीकी चाहिए। सफाई करनेका काम कितने पुण्यका काम है। यह काम या तो ब्राह्मण कर सकता है या भंगी ही। ब्राह्मण ज्ञानपूर्वक करता है और भंगी अज्ञानपूर्वक। मुझे दोनों पूज्य हैं, आदरणीय हैं। दोनोंमें से यदि एकका भी लोप हो जाये तो हिन्दूधर्म लुप्त हो जायेगा।

और सेवाधर्म मुझे प्रिय है इसीसे भंगी मुझे प्रिय है। मैं तो भंगीके साथ खाता भी हूँ लेकिन आप लोगोंसे नहीं कहता कि आप भी उनके साथ खायें और रोटी-बेटीका व्यवहार करें। आपको कैसे कह सकता हूँ? मैं तो फकीरके समान हूँ — सच्चा फकीर हूँ या नहीं, इसकी मुझे खबर नहीं। सच्चा सन्यासी हूँ या नहीं, इसकी भी मुझे खबर नहीं है। लेकिन सन्यास मुझे अच्छा लगता है। मुझे ब्रह्मचर्य प्रिय है लेकिन मैं सच्चा ब्रह्मचारी हूँ अथवा नहीं सो मुझे नहीं मालूम। क्योंकि यदि ब्रह्मचारीके मनमें दूषित विचार आते हों, यदि वह स्वप्नमें भी व्यभिचारका विचार करता है तो मैं मानूँगा कि वह ब्रह्मचारी नहीं है। मैं क्रोधमें एक भी वचन बोलूँ, द्वेषमें कोई भी कार्य करूँ, अपने कट्टरसे-कट्टर दुश्मनके विरुद्ध भी यदि मैं क्रोधमें कुछ कहूँ तो मैं अपने आपको सच्चा ब्रह्मचारी नहीं कह सकता। अतएव मैं सम्पूर्ण ब्रह्मचारी अथवा सन्यासी हूँ अथवा नहीं सो मैं नहीं जानता, तथापि मैं इतना अवश्य कहूँगा कि मेरा जीवन उस दिशाकी ओर बह रहा है और चूँकि मेरी दशा ऐसी है

अत' कोई भंगीकी लडकी अथवा कोई कोढी यदि मेरी सेवा चाहते हो तो मैं उनसे यह नही कह सकता कि मैं नही कर सकता। यदि वे मुझे अपने हाथोसे खिलाना चाहते हो तो मैं खानेसे इनकार नही कर सकता। फिर भले ईश्वरकी इच्छा हो तो मुझे बचाये अथवा मुझे मारे, लेकिन मुझे तो कोढीकी सेवा करनी ही है। हाँ, ऐसा करते हुए मैं यह दावा भी करूँगा कि ईश्वरको गरज होगी तो वह मुझे बचायेगा, क्योकि भगी, कोढी और ढेढको खिलाकर खाना ही मैं अपना धर्म समझता हूँ। लेकिन, समाजने खाने-पीनेके सम्बन्धमे जो मर्यादा निश्चित की है, आप उसका उल्लघन करे सो मैं नही कहता। आपसे तो मैं इतना ही चाहता हूँ कि आप पाँचवाँ वर्ण न बनाये। ईश्वरने चार वर्ण बनाये है और उसका अर्थ मैं समझ सकता हूँ। पर आप अस्पृश्यताका यह पाँचवाँ वर्ण न बनाये। अस्पृश्यता मुझसे सहन ही नही होती। यह शब्द सुनकर मुझे आघात पहुँचता है। जो लोग मेरा विरोध करते है, उनसे मैं कहता हूँ कि आप विचार करे, मेरे पास आकर उसकी चर्चा करे तो आप समझ जायेगे कि मैं क्या कह रहा हूँ। आप विवेक और विचार छोडकर बात कर रहे है, उसका असर नही होगा। आज मेरे पास एक तार आया है जिसपर दो पण्डितोके हस्ताक्षर है। इन पण्डितोको मैं नही जानता लेकिन उसमे उन्होने लिखा है कि हिन्दूधर्मका सहारा लेकर और पण्डितोके नामपर आपपर जो आक्षेप किये जा रहे हैं, वे झूठे है तथा हम आपको अपने वर्गके लोगोके हस्ताक्षरसे युक्त पत्र भेजेगे, जिससे आपको विदित होगा कि अनेक शास्त्री आपके साथ हैं। हालाँकि आप जितने जोर-शोरसे काम कर रहे है, उतने जोर-शोरसे हम नही कर सकते, क्योकि आप निडर है और हमे बहुत-सी बातोंका विचार करना पडता है। द्रोणाचार्य और भीष्मके पास आकर श्रीकृष्णने पूछा कि क्या आप पाण्डवोके विरुद्ध लड़ेंगे, तो उन्होने उत्तर दिया, भाई हमे तो अपनी आजीविकाकी पडी है, इसलिए हम क्या करे? हमारे बीच भी अनेक द्रोणाचार्य और भीष्म पड़े है, जबतक उन्हे अपने पेटकी पडी है तबतक वे बेचारे क्या कर सकते है? इनसे कुछ नही हो सकता, इसमें उनका दोष नही है अपितु विधिका दोष है, परिस्थितियोका दोष है। लेकिन वे मनमे तो मानते है कि गांधी अच्छा काम कर रहा है और उनका हृदय मुझे दुआ दे रहा है। लेकिन इसके साथ ही मैं एक दूसरी बात भी कहता हूँ। मैं तो सत्याग्रही हूँ, मारना नहीं बल्कि मरना मेरा धर्म है, इसलिए मुझे तो अपने तरीकेसे ही काम लेना है। अतएव आपसे एक विनती करता हूँ। यदि आपको ऐसा लगे कि अस्पृश्यता हिन्दू-धर्मकी जड़ है तो आप भले ही वैसा माने, लेकिन मुझे भी अस्पृश्यताको हिन्दूधर्मका पाप माननेका अधिकार प्रदान करे। आपसे बन सके तो आप हिन्दू समाजके हृदयको जागृत करना और मुझे भी वैसा करनेका अवकाश देना। सत्याग्रही तो एक मार्गी है, उसे दूसरोंके साथ गुप्त मन्त्रणा नही करनी है, [सिद्धान्तहीन] समझौते नही करने है। इसलिए आपके साथ प्रेमपूर्ण व्यवहार करनेका मैं वचन दूंगा। यदि मैं अकेला रह जाऊँगा तो दूर रहकर "मुझसे दूर रहो, दूर रहो" की पुकार करूँगा।

अस्पृश्यताके कार्यमे आज जो लोग मेरी मदद कर रहे है उनसे मैं कहता हूँ — ढेढ़, भगीको भी कहता हूँ — कि आपको जो गाली दे उसे सहन करना। तुलसी-

दास कह गये है कि दया धर्मका मूल है, इसलिए प्रेम छोडोगे तो बाजी हार जाओगे। आपमे से जो लोग अस्पृश्यताको पाप मानते है, वे अपने विरोधियोका तिरस्कार करनेका पाप न करे। आप गाली देनेवालोके साथ हँसकर बोलना। आप यदि हृदयसे उनके साथ प्रेम करेंगे और शुद्ध आचार व व्यवहार रखेंगे तो यह अस्पृश्यता-रूपी पाप चला जायेगा।

लेकिन यहाँ, काठियावाडमे, ऐसा विरोध होनेकी बात मेरे गले नही उतरती। काठियावाड तो सुदामाजीकी, श्रीकृष्णकी वासभूमि है, यहाँ तो अनिरुद्ध रहे थे। जिस भूमिपर योद्धाओने अपना खून बहाया उस भूमिमे अस्पृश्यताको स्थान मिलेगा तो मैं कहाँ जाऊँगा? भगी मुझसे कहते है यहाँ उनकी दशा इतनी बुरी है कि काठियावाडसे बाहर गुजरातमे भी उतनी बुरी न होगी। यह सुनकर मेरा हृदय रोता है।

नारणदास सघाणी कौन है? वह तो मेरा बच्चा है। एक समय ऐसा था जब वह पूरी तरह मेरी आज्ञाके अधीन था, केवल मेरा सेवक बनकर रहता था। उसने अपनी सारी लाइब्रेरी मुझे दे दी। लेकिन भगवानने अब उसे कुमति दी है (मैं सचमुच मानता हूँ कि भगवानने इसकी मति भ्रष्ट कर दी है) तथापि मेरे लिए तो वह अभी भी बच्चेके समान है। मै मानता हूँ कि उसका यह तूफान लम्बे समयतक नही चलेगा और उसने जो प्रतिज्ञा की है वह फलेगी नही। लेकिन यदि ईश्वर चाहे और फले और मेरे ऊपर वह हाथ उठाये तथा आक्रमण करे तो उस समय मैं कहूँगा, "तूने जो किया सो ठीक ही किया", मै तब भी उसे आशीर्वाद दूँगा। प्रह्लादने अपने पिताका कहना नही माना। उसने यही कहा कि मेरे पिता मुझसे अधर्म करवाना चाहते है, मुझे कुमार्गपर ले जाना चाहते है तब ऐसे समय पिताका अनादर करना धर्म है। नारणदास सघाणी यदि आज ऐसा मानता है कि वह मेरा प्रथम पुत्र है, परन्तु यदि उसे ऐसा लगे कि मैं पथभ्रष्ट हो गया हूँ और मेरा सहार करना चाहिए तो उसे जरूर मेरा सहार करना चाहिए। मेरा सहार करते हुए उसकी आँखोका पर्दा हट जायेगा और तब वह आप लोगोके पास आकर क्षमा माँगेगा और प्रायश्चित्त करेगा, ऐसा मेरा विश्वास है। वह तो बालक है, जवान है और मैं अब बूढा हो गया। मेरे ऊपर तो अनेक लोगोने हाथ उठाये है तथापि मैं बच गया हूँ। मुझे एपेन्डिसाइटिसका रोग हुआ, मेरा ऑपरेशन हुआ। ऑपरेशन करते समय दीपक बुझ गया। उस समय कर्नल मैडॉक भी घबरा गये थे। लेकिन ईश्वरको मुझे बचाना था, इसलिए क्या हो सकता था? उपनिषदोमे एक कहानी है — उसमे पवनसे कहा जाता है कि तू तिनका उडा दे, अग्निसे कहा जाता है कि तिनकेको जला डाल, लेकिन हमसे नही होता, यह कहकर अग्नि और वायु भाग खडे होते है। ऐसी कहानी है। यदि ईश्वर नही चाहता कि मैं मर जाऊँ तो मुझे कौन मार सकता है? किन्तु मेरे दिन यदि पूरे हो गये होंगे तो भले ही मैं इस तरह बोल रहा होऊँ, चैनसे बैठा हुआ होऊँ, उस समय भी मेरे प्राण ऐसे चुपचाप निकल जायेंगे कि किसीको खबर भी न होगी और कोई उन्हे रोक भी नही सकेगा। लेकिन मुझे कुछ व्यावहारिक पक्षका अनुभव है, मैंने कुछ ज्ञान प्राप्त किया है, इसलिए आपसे प्रार्थना करता हूँ कि मेरी बातको मानना और नारणदासपर दया करना। मैं आपसे

अपने लिए दयाकी भीख नही माँगता, दयाकी भीख तो मै ईश्वरसे ही माँगता हूँ लेकिन आपसे मै सच्चे सैनिककी प्रतिज्ञा माँगता हूँ और कहता हूँ कि यदि आप प्रतिज्ञा करेंगे तो आपको उसका पालन करना ही पडेगा। बिना विचारे प्रतिज्ञा करेंगे तो मैं आपको बहुत भारी पडूँगा, क्योकि मै आपसे प्रतिज्ञाका पालन करवा कर रहूँगा। इसलिए कल यहाँ आप बहुत सोच-विचारकर और सावधान होकर आना।

मुझे तीस मिनट लेने थे, लेकिन मैंने ३५ मिनट ले लिये है। ये पाँच मिनट लेनेका मुझे अधिकार नही था लेकिन भगीके हितार्थ आपने मुझे यह छूट दी है और मैंने आपसे ली है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, परिशिष्ट, १८-१-१९२५

४२५. समापन भाषण : काठियावाड़ राजनीतिक परिषद्में

[९ जनवरी, १९२५][1]

मै जब-जब काठियावाड़ आया हूँ तब-तब मैने अपने प्रति काठियावाडके अपूर्व प्रेमका अनुभव किया है। इसी प्रेमका अनुभव मैंने इस बार भी किया है और इसमे आश्चर्यकी कोई बात नही। हिन्दुस्तानमे मै जहाँ-जहाँ जाता हूँ वहाँ-वहाँ मुझे काठियावाड ही दिखाई देता है—मुझपर प्रेमकी ऐसी ही वर्षा की जाती है। लेकिन मैं तो आपसे [इस प्रेमसे बडी] एक दिव्य वस्तु माँगता हूँ। आपके प्रेमसे मैं घबरा जाता हूँ, कारण आप जिस बातको स्वीकार करे उसपर यदि अमल न करे तो मेरे लिए आपका प्रेम पोषक नही, वरन् घातक होगा। इस प्रेमसे मेरी उन्नति नही हो सकती बल्कि मुझे आलस्य घेरेगा। और यदि मैं जागृत न रहूँ तो मेरी अधोगति हो सकती है। प्रेमसे मैं फूल उठूँ ऐसा मेरा स्वभाव नही है, लेकिन यदि वह प्रेम कार्यरूपमे परिणत न हो तो आपके और मेरे बीचके सम्बन्धका क्या होगा? यह सम्बन्ध सार्वजनिक है, व्यक्तिगत नही। आपकी सेवाके लिए आपसे मेरा सम्बन्ध है, आप मुझे निजी रूपसे निमन्त्रण दे तो कदाचित् मैं उसे स्वीकार न कर सकूँ, लेकिन आप मुझे सार्वजनिक सेवाके लिए जब चाहे तब बुला सकते है। इसलिए जबतक आपका प्रेम सार्वजनिक कार्यमे परिवर्तित नही होता, तबतक इस प्रेमकी कोई कीमत नही। इस प्रेमकी ईश्वरके दरबारमे भले ही कीमत हो लेकिन मैं तो कुछ करना चाहता हूँ और हमारी यह मित्रता उसी कार्यके लिए है। अत मैं आपसे ऐसे प्रेमकी अपेक्षा करता हूँ जो उस कार्यमे सहायक हो। मैं तो प्राकृत मनुष्य ठहरा, मुझमे राग-द्वेष हैं, भावनाओको दबाना मेरा धर्म है। हमेशा चित्तवृत्तिके निरोधका प्रयत्न करता रहता हूँ, इसलिए प्रेम भी ऐसा चाहता हूँ, उसे ऐसा रूप देनेका प्रयत्न करता हूँ, जिससे चित्तवृत्ति शान्त हो, जिससे कि मैं जलूँ नही। प्रेम अग्निके समान

१. साधन-सूत्रसे।

है, उनका सदुपयोग हो तो वह पावक अग्निके समान शुद्ध करता है नहीं तो वह सामान्य अग्निकी भाँति जलाता है, मैं जलना नहीं चाहता इसलिए मेरे प्रति आपके प्रेमका उपयोग यदि देश-कार्यमें हो तो ही उसका परिवर्तन, शुद्ध परिवर्तन है। यदि आप इतना सब स्वीकार करनेके बावजूद कुछ काम नहीं करेंगे और मुझे निराश करेंगे तो काठियावाडका क्या होगा, इसपर खूब विचार करना।

कल रात (विषय समितिमें) अनेक बातें आपने मुझपर छोड दीं। आप प्रस्तावोंका एक बड़ा चिट्ठा तैयार करके लाये थे, इस आशासे कि जी-भरके अपने दुःखोंका वर्णन करेंगे और उस वर्णन-मात्रसे अपने दुःखोंको कम करेंगे। लेकिन मैंने आपको सलाह दी कि आप इस दुःखोंके वर्णनकी इच्छा छोड दें और उसके बजाय अपनी शक्तिका विकास करें। तथा आपने मेरी सलाह मानी। यह सलाह आपने मानी इसका कारण यह नहीं कि मैं एक बड़ा व्यक्ति हूँ, अपितु उसका कारण यह है कि मैं काम करनेवाला व्यक्ति हूँ, अनुभवकी बात कहनेवाला व्यक्ति हूँ। मैंने आपको दूसरा एक भी प्रस्ताव नहीं रखने दिया, राजाओंके विरुद्ध आपकी शिकायतोंकी सार्वजनिक चर्चा नहीं होने दी, बल्कि आपके मुँहको बन्द किया है। इससे आप यह न समझना कि मैंने अपना मुँह भी बन्द किया है और अब मैं सो जाना चाहता हूँ। आपको चुप रखकर मैंने अपने ऊपर भारी बोझ ले लिया है। मैं सोना नहीं चाहता, मैं तो सारे साल काम करना चाहता हूँ। लेकिन मेरा रास्ता भिन्न है। मैंने आपको जो सलाह दी है, उसके मूलमें मनुष्यके सम्बन्धमें और काठियावाडके राज्यकर्त्ताओंके सम्बन्धमें मेरा विश्वास निहित है, मेरी इस सलाहमें मेरे इस विश्वासका दर्शन है। अमृतसरमें मैंने मॉन्टेग्यु साहबकी निन्दा न करनेकी सलाह दी,[1] उसमें भी उनका और राजा जॉर्जका अविश्वास न करनेकी बात निहित थी। मैंने उस समय कहा था कि आप सुधारोंको स्वीकार कर लें और उन सुधारोंके तहत जितनी शक्ति अर्जित कर सकते हैं, करें। कांग्रेसने मेरी सलाहको कुछ हदतक स्वीकार किया। इसका क्या कारण था? उस समय तो लोकमान्य तिलक महाराज-जैसे योद्धा विद्यमान थे और वे मेरे विरुद्ध लडनेकी शक्ति रखते थे। उन्होंने मेरे कथनको क्यों स्वीकार किया होगा? केवल इसीलिए कि उन्हें लगा, गांधी जो कहता है, ठीक कहता है, उन्होंने एक शब्दको बदलकर मेरे कथनको स्वीकार कर लिया। मैंने उनसे कहा : आज विश्वास रखकर आप सुधारोंको स्वीकार करें। आप और मैं जिस दिन निराश हो जायेंगे, जिस दिन ये सुधार, सुधार नहीं बल्कि भाररूप जान पडेंगे, उस दिन हम इनका त्याग करेंगे और उस समय हमें उनकी निन्दा करनेका अधिकार भी प्राप्त हो जायेगा। आज हमें यह अधिकार नहीं है, कारण आज तो मॉन्टेग्यु कहते हैं कि मैंने आपको जितना दिया जा सकता है उतना देनेका प्रयत्न किया है। लॉर्ड सिन्हा जो कि जानकार व्यक्ति हैं, पराक्रमी हैं और देशप्रेमी हैं, उनका भी कहना है कि सुधारोंको स्वीकार कर लो। इसके अतिरिक्त सम्राट्के सन्देशमें भी माधुर्य था। यह सब सोच-विचारकर मैंने सुधारोंको स्वीकार करनेकी सलाह दी

१. देखिए खण्ड १६, पृष्ठ ३७४-७८।

थी। इस विश्वासकी स्थितिमें से ही असहयोगकी उत्पत्ति हुई। आज भी मैं आपको विश्वासकी नीतिका प्रयोग करनेकी सलाह दे रहा हूँ। लेकिन आप १९१९ की उपमाको ठीक अन्ततक मत खींचियेगा। उसका आप इतना अर्थ करनेके अधिकारी है कि मैं सोनेवाला नही हूँ। आपने मेरे आगे जितनी बाते बताई है उनसे अधिक दुःखकी पुकार मैंने सुनी है। वे सब सच है अथवा झूठ सो मै नही जानता। यदि ये सच साबित होगी तो मेरे पास जितना समय होगा, मुझमे जितनी चतुराई होगी वह सब मैं खर्च कर डालूँगा। मैं राज्यकर्त्ताओसे मिलनेका प्रयत्न करूँगा। मुझे वे मिलनेकी अनुमति देंगे तो उनसे मैं एक दीनकी तरह मिलूँगा और यदि उनकी अनुमति मिली तो उनके साथ मेरी क्या बातचीत हुई उसे सार्वजनिक रूपसे प्रकट करूँगा। धोराजीवाले मुसलमान भाई मेरे पास आये थे। उन्होने मुझसे कहा कि यह काठियावाड़ राजनीतिक परिषद् कहलाती है तो क्या आप हमे धोराजीके सम्बन्धमे एक भी शब्द नही कहने देंगे? मैंने कहा, "नही"। कारण, उनकी शिकायतमें कितना सच और कितना झूठ है सो मैं जानता हूँ। गोंडलके ठाकुर साहबको मैं जानता हूँ। मैं उनसे परिचित हूँ, उनके प्रति मेरे मनमें आदर है और मैं जानता हूँ कि वे सुयोग्य शासक है। उनके हाथो प्रजाका नुकसान हो यह विचार मेरे लिए असह्य है। एक, दो अथवा पचास व्यक्तियोके कहनेपर मैं उनकी भर्त्सना कैसे कर सकता हूँ? मुझसे उनकी निन्दा कैसे हो सकती है? मैं जबतक उनसे मिल नही लेता उनके अधिकारियोसे बातचीत नही कर लेता, तबतक किसी तरहकी सलाह देना मेरे स्वभावके विरुद्ध है। इसलिए मैंने धोराजीवालोसे कहा कि आप जो कहते है, मै उसकी पूरी-पूरी जाँच करूँगा। अब तो मौलाना शौकत अली आ गये है इसलिए मुझमे अधिक बल आ गया है। मेरे लिए हिन्दू और मुसलमानके बीच कोई भेद नही लेकिन इन लोगोको इस बातकी क्या खबर हो सकती है? इसलिए मैंने उनसे कहा कि मौलाना और मैं, दोनो मिलकर आपको सलाह देंगे, और उन्होंने भी कहा कि आप जो सलाह देंगे उसे हम स्वीकार करेंगे।

जो बात गोंडलपर लागू होती है वही जामनगरपर भी लागू होती है। जामनगरके सम्बन्धमें भी मेरे पास बहुत सारी शिकायते आई है। यदि राजाको कोई प्रजा-जन मित्र कह सकता है तो मै और जामसाहब बालमित्र थे। जामसाहबके नाम स्वर्गीय केवलराम मावजीका सिफारिशी पत्र लेकर ही मै विलायत गया था। इस पत्रसे मुझे अपने कार्यमें बहुत सहायता मिली। वहाँ मैं उनसे अनेक बार मिला। उस समय हम सबके मनमें, जो उनके समकालीन थे, यह साध थी कि यदि उन्हे जामनगरकी गद्दी मिले तो कितना अच्छा हो। लेकिन आज तो मैं उनकी बहुत निन्दा सुन रहा हूँ। वह सब सच है अथवा झूठ, मुझे मालूम नही। लेकिन मेरी इच्छा है कि एक भी बात सच न हो। मैं यह भी चाहता हूँ कि जाने-अनजाने, उनके हाथो अथवा अप्रत्यक्ष रूपसे प्रजापर जो अत्याचार हुआ है, उसे वे अपने हाथोसे धो डाले। उन्हे चिढ़ाना मेरा काम नही है। उन्हे नम्रतापूर्वक कहना मेरा काम है और मेरा काम इसके लिए अनुकूल वातावरण तैयार करना है। अपने दुश्मनोको

भी, यदि कोई दुश्मन हो तो, उदाहरणके रूपमे, सर माइकेल ओ'डायर मुझे दुष्टमे भी दुष्ट मानते है, लेकिन यदि वे यहाँ सम्राट्के प्रतिनिधि बनकर आयें तो उनमे भी मैं नगे पाँवो जाकर मिलूँगा। फिर, जामसाहबके साथ अविनयकी बात तो स्वप्नमें भी नही सोच सकता।

इन दोनो राज्योके सम्बन्धमें मेरे पास बहुत सारी शिकायतें आई है, बहुत सारे कागज पडे हुए है, लेकिन मैं तबतक इस सामग्रीका उपयोग नही कर सकता जब तक पूरी जाँच करनेके लिए ठीक-ठीक उपाय नही कर लिए जाते। इसलिए मैं प्रकट रूपसे कदापि इनकी निन्दा नही कर सकता, लेकिन इन शिकायतोको मैं भूलनेवाला नही हूँ। इस वर्ष इन शिकायतोको दूर करवानेके लिए मुझसे जो-कुछ हो सकेगा सो मैं करूँगा और उम्मीद करता हूँ कि वर्षके अन्तमे अपने कामकी दैनन्दिनी आपके सम्मुख रखूँगा।

अब मेरी आपसे एक प्रार्थना है। आप सार्वजनिक अथवा खानगी रूपसे कडवी टीका करके अपने ही काममे विघ्न न डालना। सार्वजनिक रूपसे टीका करके आप शासकोको चिढाना नही, कारण; वे राजा हैं, अधिकारी हैं और अधिकार अन्धा होता है। रामचन्द्रजी क्या हर युगमे हुए हैं? उमर-जैसे खलीफा क्या हर युगमे होते हैं? इस्लामको वैभवके शिखरपर पहुँचानेवाले चार खलीफाओका कार्यकाल ३० वर्षमे पूरा हो गया। उसके बाद जितने खलीफा हुए, उनमें से कोई भी उनके समकक्ष नही हुआ। यह जगतका न्याय है। रत्न तो दुर्लभ होते हैं। खानको गहरे खोदा जाता हैं तब कही किसी जगह वे मिलते हैं। इसलिए राजा जब चिढ उठे, क्रोध करे तब मैं ऐसा नही मानता कि वह बेवकूफ है। क्रोध तो मुझमे भी है और आपमे भी है। राजा कोई योगी नही है और हम भी योगी नही हैं। ऐसे योगीका उदाहरण — केवल जनक विदेहीका है। मै कहता हूँ कि उनका ही उदाहरण है, क्योकि वे प्राकृत मनुष्य होते हुए भी योगी हो गये। रामचन्द्र तो अवतार कहे जाते हैं। इतिहास हमे बताता है कि जनक विदेही-जैसा एक भी अन्य उदाहरण इस पृथ्वीपर नही मिलता। राजा अधिकारी तो है ही और चूँकि वह अधिकारी है इसलिए उसकी कोई-न-कोई बात तो सहन करनी ही होगी। हमे जब लोकतान्त्रिक-राज्य मिलेगा तब भी कोई अधिकारी तो होगा ही, जिसकी थोडी-बहुत बात हमे सहनी ही पडेगी। मेरी ही कितनी बातें आपको सहन करनी पडी हैं। क्या मैंने अपने अधिकारका अन्धा उपयोग नही किया होगा? एक शास्त्रीने मुझसे भाषण करनेकी अनुमति माँगी, मैंने उन्हें नही बोलने दिया। एक [जैन] मुनिकी भी बोलनेकी इच्छा थी, उनसे मैंने कहा कि मैं आपको बोलनेकी होडमे नही उतरने दूँगा। आप तो घर-घर जाकर लोगोमे चरखा कतवायें। ऐसा करनेमे मैंने विनयसे काम लिया कि अविनयसे, यह मैं कहाँ जानता हूँ? लेकिन इन दो दिनोतक तो, मैं जैसा भी था, था तो राजा। कोई व्यक्ति चाहे कैसा भी क्यो न हो, भले ही चौथे अथवा पाँचवे वर्गका हो तो भी वह राजा तो है और जहाँ पद होगा वहाँ राज्याधिकार होगा ही और जहाँ राज्याधिकार होगा वहाँ क्रोध एव अन्यायके लिए अवकाश रहता ही है। अत शासकोके शासनमे मिलने-वाले कडवे घूँट हमें पीने ही पडेंगे।

आपके सामने मैंने दो पक्ष रखे है — राजपक्ष और प्रजापक्ष। काठियावाडके राजाओके हाथो अन्याय हो, यह मेरे लिए असह्य है। मैं उन्हे इतना ही कहूँगा कि आप किस भौतिक लाभके लिए यह अन्याय कर रहे है। प्रजासे इतना ही कहूँगा कि वह खामोशीसे सहन करना सीखे। प्रजाके हकोके सम्बन्धमें मैंने अपने मुद्रित भाषणके अन्तिम अनुच्छेदमे कुछ कहा है। इस अनुच्छेदको आप अनेक बार पढ़िये और याद कर लीजिए। जिसने केवल अधिकारों को चाहा है, ऐसी कोई भी प्रजा उन्नति नही कर सकी है, केवल वही प्रजा उन्नति कर सकी है, जिसने कर्त्तव्यका धार्मिक रूपसे पालन किया है। कर्त्तव्योके पालनसे उन्हे अधिकारकी प्राप्ति हुई ही। कर्त्तव्यका पालन करते-करते ईश्वरसे प्रार्थना करनी चाहिए कि हमें इन अधिकारोकी प्राप्ति भी हो। हमारे शास्त्र मातृ-भक्ति और पितृ-भक्ति सिखाते है। इसका अर्थ क्या है? मेरे पिता मुझसे रुष्ट हो जाये, मुझे गाली दे, मारे तो भी मै उनकी सेवा करूँ, ज्यादासे-ज्यादा उनसे इतना ही कहूँ कि, "पिताजी, इतना ज्यादा मत मारो।" इसका क्या कारण है? आपके सम्मुख गर्जना करनेवाले यह शौकत अली — अपनी माँका राक्षस-जैसा विशालकाय बेटा — अपनी माँके धमकानेपर चुपचाप बैठ जाते थे। इसका रहस्य क्या है? इसका कारण यह है कि माता-पिताके बाद उन्हे अधिकार मिलता है — विरासत मिलती है। इस आज्ञा-पालनके पीछे पिताकी विरासत मिलनेकी बात छिपी हुई है। किन्तु यदि इस विरासतकी आशा रखकर मै आज्ञा-पालन करूँ तब तो मै मर ही जाऊँ। इसलिए शास्त्र हमें यह भी सिखाते है कि ऐसी आशा रखे बिना ही हम आज्ञाका पालन करे। ऐसे कठिन है हमारे शास्त्र। हककी आशा न रखनेवाला हक प्राप्त करता है और हककी बात करनेवाला परास्त होता है, यह नियम है। और इसी नियमको मैं आपके सामने रखता हूँ। यदि आप इस नियमका पालन करेगे तो आप समझना कि आपने काठियावाडके स्वराज्यकी एक विनयी सेना तैयार की है। इस वर्ष आप ऐसे विनयी कार्यकर्त्ताओकी सेना तैयार करे तो फिर बादमें कोई राजा आपका तिरस्कार नही कर सकता। अभी आपको यह आशंका होती है कि कोई राजा आपको अपने राज्यमे परिषद् बुलाने देगा अथवा नही। सोरठवालोने परिषद् अपने यहाँ करनेका आमंत्रण दिया, सो डरते-डरते दिया। उनके मनमे भय था कि हमने परिषद् अमुक स्थानमे करनेका विचार किया और कही राजाने इनकार कर दिया तो क्या होगा? अतएव आप अपना वातावरण इतना स्वच्छ करें, अपने चारित्र्यबलका इतना विकास करे कि कोई राजा आपको इनकार कर ही न सके। मेरी सलाहका अर्थ यह न लगाना कि आपको न करने योग्य काम भी करना है, आपके आत्म-सम्मानको ठेस पहुँचे ऐसा काम करना है। बड़ेसे-बड़ा काम करते हुए भी आप अपने आग्रहको मत छोडना, सत्यको न छोड़ना और उसी तरह विनय तथा मृदुताको भी न छोड़ना। मै स्वय पत्रकार हूँ और वह भी एक प्रतिष्ठित पत्रकार। मैं १९०४ से यह काम करता आया हूँ तथा मै मानता हूँ कि यह काम मुझे अच्छी तरहसे आता है। कारण, जब मेरा सौ विषयोपर लिखनेका इरादा होता है तब मैं एक विषयपर लिखता हूँ, ऐसा मेरा स्वभाव है। अब यदि मैं 'यंग इंडिया'में परस्पर एक दूसरेकी, एक-दूसरेको दी गई, गालियाँ और जिस-तिसकी शिकायतोको

छापने लगूँ तो इस समय उसकी जो प्रतिष्ठा है क्या वह रह सकती है? 'नवजीवन' मे मेरे पास जो-कुछ आता है, अगर वह सवका-सव प्रकाशित कर दूं तो क्या उसका कोई पाठक रह जायेगा? इस नियमको लेकर ही मैंने इन दो पत्रोंके लिए कुछ प्रतिष्ठा प्राप्त की है। इस नियममें भी कभी-कभी भूल हो जाती है। इसलिए राजनीतिज्ञो और लेखकोसे मैं कहता हूँ कि आप कलमको वसमे रखे और आत्माका विकास करे। शब्दका नियन्त्रण कीजिये, आत्मोन्नतिका नही। खुशामद भी न करना और क्रोध भी न करना। सयममे खुशामद नही है, जवकि क्रोध — तीखा शब्द — खुशामदसे भी ज्यादा खराव है। खुशामद और क्रोध एक ही वस्तु है — दुर्बलताके दो पक्ष है। टेढा पक्ष क्रोध है। दुर्बल व्यक्ति खुशामद करता है अथवा अपनी दुर्बलता ढकनेके लिए क्रोध करता है। कोई भी क्रोधी पुरुष यह न माने कि उसने वल प्रदर्शित किया है। वल तो कर्ममे है और कर्मका अर्थ है धर्म-पालन। जगतके हृदय-साम्राज्यका उपभोग करनेवालोने अपनी इन्द्रियोको सयमकी अग्निमे भस्मीभूत किया है। आप भी यदि काठियावाडका उद्धार करना चाहते है तो याद रखिए कि आप शान्ति और सयमसे ही उसे साध सकेंगे। राजा अपना काम दण्डके द्वारा करता है। आप अपना काम सेवा और प्रेमसे करे, राजा तथा प्रजा दोनोपर अपनी सेवा और प्रेमकी ऐसी वर्षा करे कि उससे उत्पन्न काठियावाडकी सुवर्ण वाटिकाको सव लोग देखनेके लिए आये। यदि मुझे आशीर्वाद देनेका अधिकार है तो मेरा आशीर्वाद है और नही तो मै ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि ऐसा [शुभ] दिन तुरन्त आये।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, परिशिष्ट, १८-१-१९२५

४२६. भाषण : शामलदास कालेज, भावनगरमें

९ जनवरी, १९२५

मुझे आज विद्यार्थी-धर्मपर बोलना है। यह आसान भी है और मुश्किल भी। विद्यार्थियोकी स्थितिको हिन्दू-धर्ममें ब्रह्मचर्यकी स्थिति कहा गया है। ब्रह्मचर्यका सामान्यत जो अर्थ किया जाता है, शास्त्रोमे उसका वह अर्थ नही है। सामान्य अर्थ सकुचित है। मूल अर्थमे तो ब्रह्मचर्य विद्यार्थीकी स्थितिका ही पर्याय है। ब्रह्मचर्यका अर्थ है हरएक इन्द्रियका सयम। परन्तु उसके द्वारा विद्या प्राप्त करनेके सारे कालका समावेश ब्रह्मचर्य-आश्रममे हो जाता है। ब्रह्मचर्यके इस निर्दोष जीवनमे देनेकी वातें कम और लेनेकी ज्यादा हैं। इस दशामे वह माँ-वापसे, शिक्षकोसे, समाजसे ग्रहण ही करता है। पर यह किसलिए? इसीलिए कि मौका पडनेपर वह वापस दिया जाये — चक्रवृद्धि व्याजके साथ लौटाया जाये। इसीलिए तो समाज ब्रह्मचर्य-आश्रमको पोषण प्रदान करता है।

ब्रह्मचर्याश्रम और सन्यासाश्रम, दोनोके कार्य हिन्दू-धर्ममे एक-से वताये गये हैं। विद्यार्थीको सन्यासी होनेके लिए इच्छा नही करनी पडती, वल्कि वह स्वभावत ही

सन्यासी है। आज तो विद्यार्थियोके मन भी खराब हो गये है। मेरी मति १२ सालकी उम्रमे ही भ्रष्ट हो गयी थी। मुझे विकारोका ज्ञान उस छोटी उम्रमे हो गया था। विद्यार्थीका जीवन स्वभावत निर्विकार होना चाहिए। इतनी कच्ची उम्रमे विकारोका ज्ञान हो जाये, ऐसे पतनके हजारो उदाहरण मिलते हैं, लेकिन सत्यका दर्शन करानेके लिए मैं अपना ही उदाहरण दे रहा हूँ। विद्यार्थी-जीवन स्वभावत ही सन्यासी-जीवन है। पर सन्यासी उस दशाको अपनी इच्छा करके प्राप्त करता है। आज तो तमाम आश्रम छिन्न-भिन्न हो गये है, सिर्फ नाम ही बाकी रह गये हैं। आश्रमोके लिए मेरे मनमे इतना ऊँचा स्थान है कि उसका वर्णन नही हो सकता। जो हो, उनका आन्तरिक सत्य तो यही है और उसमे हमे विद्यार्थी-धर्मका दर्शन हो जाता है।

विद्यार्थी-धर्मका ज्ञान आज कैसे हो सकता है? आज तो माता-पिता भी उलटा पाठ पढाते हैं। विद्याकी प्राप्तिके लिए नही, बल्कि इस गरजसे कि लडका पढ-लिखकर धन कमाये, पद-प्रतिष्ठा प्राप्त करे, इसलिए वे उसे विद्या पढाते है। इस तरह हमारी स्थिति जैसी होनी चाहिए उससे उलटी बना दी गई है। जो हमारा धर्म होना चाहिए, उसे छोडकर हम विद्याका दुरुपयोग कर रहे है। फलत विद्यार्थी-जीवनमे जो परम शान्ति, जो सुख, जो शुद्धता होनी चाहिए वह हमे दिखाई नही देती। हमारे विद्यार्थी विद्यार्थी-अवस्थामे ही चिन्ताओके बोझसे दबे नजर आते है। लेकिन इस अवस्थामे देनेकी तो बात ही नही है, केवल ग्रहण करना, लेते रहना और लेनेमे विवेक-बुद्धिसे काम लेना इतना ही काम विद्यार्थीका है। अनेक प्रयोगोके द्वारा शिक्षक हमे इसी विवेक-बुद्धिकी शिक्षा देता है। वह बताता है कि कौन चीज ग्राह्य है, कौन त्याज्य है। यदि हमे यह विद्या ज्ञात न हो तो हम एक यन्त्र बन जाते है। लेकिन हम तो सजीव है, चेतन है और चेतनका स्वभाव है यह समझ लेना कि कौन वस्तु ग्राह्य है और कौन त्याज्य। इस कारण इस अवस्थामे हम सत्यका ग्रहण, असत्यका त्याग, मधुर-वाणीका ग्रहण, कठोर और दु खकर वाणीका त्याग, आदि बाते सीखते है और उसके सीखनेसे जीवन सरल हो जाता है।

तुम्हें लगेगा कि यह तो हिन्दू धर्मपर व्याख्यान सुनाने आया है। लेकिन मै तो तुम्हारे सामने अपनी बात रखने आया हूँ — और मेरी बात इसके सिवा क्या हो सकती है? उसीको स्पष्ट करनेके लिए मैंने यह सारा विश्लेषण किया है। मै कह चुका हूँ कि ब्रह्मचारीको ग्राह्य और त्याज्यका भेद करना सीखना चाहिए। पर आज तो हमने धर्मको सकर कर डाला है और हमे इस सकरके खिलाफ लडना है। यदि माता-पिताने दूसरे प्रकारकी शिक्षा दी होती और वायुमण्डल बिगाडा न होता तो विद्यार्थियोको इस वायुमण्डलका मुकाबला करनेकी जरूरत न रहती। प्राचीन कालमें विद्यार्थी-जीवन ऋषियोके आश्रमोमे व्यतीत होता था। पर आज हालत उलटी है। जहाँ समुद्रकी स्वच्छ हवा आती हो, वहाँ खूब खुलकर हवा खानी चाहिए। पर जहाँ बदबू आती हो वहाँ मुँह बन्द कर लेना चाहिए। यहाँका वायुमण्डल बदबूसे भरा हुआ है। इसीलिए उसके खिलाफ आवाज उठाये बिना मेरे लिए कोई चारा नही। इस कसौटीके अनुसार तुम देखोगे कि आज तुमको बहुतेरी चीजे त्याग देनी पडेगी। बहुत-सी बाते ऐसी होगी जो महज नुकसानदेह है। प्राचीनकालमें मौखिक शिक्षा दी जाती थी। मत्र

ही सिखाये जाते थे। मत्र क्या है? सक्षिप्त भाषामे कहा हुआ सार-तत्त्व। इसके बाद उसपर टीकाएँ हुई। आज तो पुस्तकोका ढेर लग गया है। मै यदि अपने ही कालकी बात करूँ तो मुझे ऐसी अनेक चीजे याद आती है, जो त्याग करने लायक थी। छठी-सातवी श्रेणीके विद्यार्थियोमे कौन रेनॉल्ड्सके उपन्यास नही पढता था, यह कहना कठिन है। पर मै तो था मन्द-बुद्धि। मै महज पास होनेका ही खयाल करता था। पिताकी सेवा करना और पास होनेके लायक किताबे पढ लेना, यही मेरा काम था। इससे मै उन उपन्यासोसे बच गया। औरोपर ऐसी पुस्तकोका क्या असर होता है, सो मै नही जानता। पर विलायतमे मैने देखा कि समाजके शिष्ट वर्गोमे ये पुस्तकें पढी नही जाती थी। उनका पढना अच्छा नही समझा जाता था। सो मैने देखा कि उनके न पढनेसे मेरी कुछ हानि न हुई।

इसी प्रकार आज अनेक चीजें ऐसी है जिनसे मुँह मोडनेकी जरूरत है। हम बडी विषम स्थितिमे आ फँसे है। आज तो १२ सालकी उम्रमे आजीविकाका विचार करना पडता है। यह विद्यार्थी-आश्रमके साथ गृहस्थाश्रमका सकर हुआ। गगा-जमनाका सगम तो सुन्दर है, पर यह सगम नही, सकर है। अतएव विद्यार्थियोको आज यह जान लेना चाहिए कि देशमे क्या हो रहा है। आज शायद ही कोई विद्यार्थी ऐसा होता है जो अखबार न पढता हो। मै किस तरह कहूँ कि आपको अखबार न पढना चाहिए? पर विद्यार्थियोसे मै इतना तो जरूर कहूँगा कि अखबारोके क्षणिक साहित्यकी ओर आँख उठाकर न देखना। उसमे सच्चा साहित्य, शिष्ट भाषा नही मिलती। उनसे जो बातें मिलती है वे क्षणिक होती है। हमे जरूरत तो स्थायी भाषा ग्रहण करनेकी है। विद्यार्थी जीवन, जीवनकी बुनियाद है, जीवनकी तैयारी है। इस कालमे हम अपने लिए अखबारोसे विचार-सामग्री किस तरह ले सकते है। यदि तुम कहो कि हम अखबार नही पढेगे तो तुम्हारा यह कहना स्वाभाविक नही होगा। क्योकि तुम तो दास या गाधीका भाषण पढकर कहो कि अमुक भाषण बढिया था और अमुक यो ही था — यह स्थिति दयाजनक है, भयकर है। इससे हमे बाहर निकलना ही होगा। यह बात मै इसीलिए कहता हूँ कि मैने शिक्षाके अनेक प्रयोग किये है। अपने लडके-बच्चे और औरोके लडके-लडकी या जवान लडके-लडकियोको साथ रखकर शिक्षा देनेकी भयकर जोखिम मैने उठा देखी है। पर मै पार हो गया, क्योकि जिस तरह माता-पिताकी आँख जवान लडकीकी गति-विधिका निरीक्षण करती रहती है उसी तरह मै भी चारो ओर नजर रखता था। मैने उन लडके-लडकियोके माँ-बापका स्थान लिया था, उनपर डिटेक्टिवकी तरह नजर रखता था। राजा भी था और गुलाम भी था। इससे मुझे इस बातका अनुभव हुआ कि शिक्षा क्या चीज है? कैसी होनी चाहिए? और इसका विचार करते-करते मैने सत्याग्रहको पाया, मुझे असहयोगका दर्शन हुआ। और इसलिए मुझे इन प्रयोगोका साहस हुआ। आप ऐसा न समझना कि मैने ये प्रयोग केवल स्थूल स्वराज्यके लिए किये है। मैने तो ससारके सामने एक चिरतन सनातन धार्मिक वस्तु रख दी है। इसकी जडे गहरी पहुँच गई है, इसलिए लडकोके सामने भी इसे पेश करते हुए मुझे सकोच नही होता। इसकी निर्दोषताको मै किस प्रकार प्रकट करूँ? मैने जब देखा कि मेरे शान्तिके प्रयोगसे अशान्ति फैली तो मैने

तुरन्त अपने हथियार वापस खीच लिये और सिर्फ एक ही शान्तिका हथियार—चरखा—देशके सामने रख दिया। इसे देखकर पहले तो लोग हँसे, फिर तिरस्कार प्रकट करने लगे और अब उसका स्वागत करनेका समय आ रहा है। अब मै विद्यार्थियोसे कह रहा हूँ कि इसे अपनाओ। काग्रेसमे भी चरखेका प्रस्ताव हुआ और यदि लॉर्ड रीडिंगसे मिलनेका अवसर आये तो अब मै उनसे भी यही कहूँगा कि जनाब चरखा कातिए। यह सुनकर आपको हँसी आई, पर मै गभीरताके साथ कह रहा हूँ। मै उन्हे यह कहते हुए जरा भी न हिचकूँगा और यदि वे न माने तो नुकसान उनका है, मेरा बिलकुल नही। जो भिक्षा माँगता हो उसका क्या नुकसान होगा? उसका तो वह धर्म ही है, पेशा ही है। मेरा यह धर्म है कि उनके सामने हाथ फैलाकर उन्हे पुण्य करनेका अवसर दूँ। अच्छीसे-अच्छी चीज ग्रहण करनेका मौका उनके सामने उपस्थित करूँ। अगर वे उसे न अपनावे तो हानि उनकी होगी। कलकत्तेके बडे पादरी साहबसे मैने अपनी भजन-मण्डलीमे बैठनेका अनुरोध किया। वे बैठे और उन्होने भजन गाया। इससे उनके और मेरे बीच प्रेमकी गाँठ बँध गई। पर इतनेसे ही मुझे सन्तोष न हुआ। मैने उनसे चरखेकी बात कही। कर्नल मैडॉकने मेरी जान बचानेके लिए मेरे पेटमे नश्तर लगाया। अनेक औजारोका प्रयोग किया। मैने उनके सामने भी चरखेकी बात पेश की। श्रीमती मैडॉक जब विलायत जाने लगी तो मैने उन्हे खादीका तौलिया देकर चरखेका सदेश वहाँ भेजा। उन्होने उसे प्रेमपूर्वक ग्रहण कर लिया और कह गई है कि मै घर-घर इस तौलियेका सन्देश पहुँचाऊँगी।

यह चीज बिलकुल निर्दोष है। इसमे स्वाद नही हो सकता। आरोग्यप्रद भोजन चटपटा और तेज नही होता। राजकोटमे एक हलवाई था, वह बहुत तेज भजिये बनाता था। उनमे बहुत तरहके मसाले डालता था और इन भजियोके लिए सैकडो लोग उसी दुकानपर दौडते थे। लेकिन उनमे ऐसा कोई गुण तो था नही कि वे खानेवालेका आरोग्य-वर्धन कर सके। अनेक चीजे ऐसी होती है जो नीरस मालूम होती है पर दरअसल होती सरस है। इसी कारण 'गीता'का यह महावचन है, 'जो बात आरम्भमे कडवी परन्तु परिणाममे अमृतमय हो' उसे ग्रहण करो। ऐसी अमृतप्राय वस्तु सूतका तार है। आत्माको शान्ति देनेके लिए, विद्यार्थी-कालमे जीवनको शान्ति देनेके लिए, जीवनमे धर्मको स्थान देनेके लिए, इसके सदृश सामर्थ्यवान् यज्ञ दूसरा नही है। हिन्दुस्तानके लिए मै आज दूसरी चीज नही दे सकता—गायत्रीको भी सारे हिन्दुस्तानके सामने पेश नही कर सकता। क्योकि यह युग व्यावहारिक युग है, तत्काल परिणाम देखना चाहता है। मै गायत्री जरूर उपस्थित कर सकता हूँ, पर तत्काल परिणाम क्या दिखाऊँगा? पर चरखा ऐसी चीज है कि आप सूतका तार निकालते जाइए, रामका नाम लेते जाइए और आपको सब-कुछ मिल जायेगा।

ट्यूडर ओवन साहब यहाँ एक बडे हाकिम थे। आज वे पचमहालमे है। उन्हें मैंने अपनी पाँतमे मिला लिया। उसका छुपा भेद मै आज प्रकट करता हूँ। उन्होने मुझे लिखा है कि चरखा मुझे बडा प्रिय हो गया है। मेरी अग्रेजी 'कॉमनसेंस' (व्यवहार-बुद्धि) कहती है कि वह मेरी बढिया 'हॉबी' (शौक) है। मैने उनसे कहा कि आपके लिए यह 'हॉबी' होगी हमारे लिए तो यह कल्पद्रुम है। अग्रेजी जीवन

मुझे पसन्द नही। पर उसके कितने ही रसका स्वाद मैं लेता हूँ — क्योकि मधु-मक्खियोंकी तरह मैं तो मधुरताकी खोज करता रहता हूँ। इन लोगोकी 'हॉबी' में बहुत रहस्य भरा रहता है। कर्नल मैडॉक एक आँखसे अधे थे। नश्तर लगाते हुए ही एक आँख चली गई। उनकी उम्र भी कोई साठ सालकी होगी, फिर भी वे शल्य-क्रियामें निपुण थे। चाकूसे सीधा नश्तर लगाते, पर खबरतक न होती। वे चौबीसो घटे नश्तर नही लगाया करते थे। परन्तु दो घटे वे अपनी 'हॉबी' को — बगीचेमे काम करनेके लिए देते थे। और इससे उनका जीवन रसमय बना हुआ था।

मै तुम्हारे सामने चरखा इसलिए रख रहा हूँ कि तुम्हारा जीवन रसमय हो, तुम्हें धर्म मिले, कर्म मिले, शान्ति मिले, विवेक मिले। विद्यार्थी-जीवनमे श्रद्धा बडी जरूरी चीज है। किसी बातको बुद्धि स्वीकार न करती हो तो भी उसे मान लेना पडता है — मेरे पारसी मित्र स्वीकार करेंगे, क्योकि भूमितिमे वे मेरे ही जैसे शून्य होते हैं — कितनी ही बाते मान लेनी पडती हैं। भूमितिमे मेरी गति ही रुक जाती थी। २४वाँ साध्य तो समझमें आता ही न था। पर मैं किसी तरह गाडी खीचता। आज वह विषय मुझे बडा आनन्दमय मालूम होता है। आज अगर भूमितिकी पुस्तक हाथमे आ जाय तो मैं उसमे डूब सकता हूँ। विद्यार्थी-जीवनमें चित्त श्रद्धामय होनेके कारण ही मैंने यह मान लिया था कि किसी-न-किसी दिन इसका मर्म समझमे आ जायेगा। तुममें भी यदि श्रद्धा होगी तो तुम्हे मालूम हो जायेगा कि एक व्यक्तिने जो बात कही थी, वह सच थी। चरखेपर खूब विचार करके ही एक शास्त्रीने 'गीता'का यह श्लोक चरखेपर घटाया है —

"नेहाभिक्रमनाशोऽस्ति प्रत्यवायो न विद्यते।
स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात्॥"[1]

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १८-१-१९२५

४२७. स्वराज्यके व्यापारी

सदस्यताकी शर्तोमे जो नवीन परिवर्तन हुए है, ऐसा लगता है, वे अब भी बहुतोको भयानक मालूम होते हैं। इसपर मुझे ताज्जुब नही होता। नई चीज बहुतोंको कई बार दुविधामे डाल देती है, कितनी ही बार डर पैदा कर देती है। मुझे आशा है कि वक्तके साथ-साथ डर जाता रहेगा और लोग सदस्यताकी शर्तमे चरखेको स्थान मिलनेका महत्त्व समझ जायेंगे। इसे समझनेमे मदद करनेके लिए इतना आवश्यक है कि जिन लोगोंका चरखेपर विश्वास है, उसपर अटल रहकर अपना विश्वास साबित करें। प्रान्तीय कमेटियोंकी राह न देखकर जो पहलेसे कात रहे है वे ज्यादा नियम-पूर्वक काते और जो न कातते हो, वे कातना शुरू कर दें। जैसे-जैसे दो-दो हजार गजकी आँटियाँ तैयार होती जाये, वैसे-वैसे वे उन्हे अपनी-अपनी प्रान्तीय कमेटियोंको

१. **भगवद्गीता**, अध्याय २, श्लोक ४०।

भेजते जाये और अपने नाम दर्ज कराते जाये। इसके लिए प्रान्तीय कमेटीके नोटिसकी राह देखनेकी जरूरत नही।

जो लोग कातते है, उन्हे औरोंको समझानेका भी काम शुरू कर देना चाहिए।

और जो बात कताईपर घटती है, वही खादीपर भी घटती है। अभी खादी-का काफी प्रचार करनेकी जरूरत है। दाहोद और गोधराके सफरमे मैने देखा कि अभी बहुत थोडे लोग खादी पहनते है। यह भी सुनता हूँ कि बहुतेरे लोग सिर्फ सभा-सम्मेलनमे ही खादी पहनते है। इस तरह कही विदेशी कपडेका बहिष्कार हो सकता है? स्त्रियोमे तो मुझे खादीका बहुत कम प्रचलन देखनेको मिला। सो दाहोद और गोधराके स्वयसेवकोंको मेरी खास सलाह है कि वे इन दोनो शहरोमे घर-घर जाकर लोगोंको खादीके इस्तेमालकी जरूरत और कताईका कर्त्तव्य समझाये।

व्यापारी जिस तरह रात-दिन अपने व्यापारकी बढतीकी योजना ही बनाता रहता है, उसी तरह हमे भी करना चाहिए। हम स्वराज्यके व्यापारी है। हम जानते हैं कि विदेशी कपडेका बहिष्कार सम्पन्न होनेसे ही स्वराज्यका व्यापार बढ सकता है।

हरएक स्वयसेवकको अपनी जिम्मेवारी समझ लेनी चाहिए। हर व्यक्ति डायरी रखे और रातको अपने मनसे नीचे लिखे सवाल पूछे और उनके जो जवाब मिले उन्हे उसमे लिख ले।

१ आज मैंने कितना गज सूत काता?

२. आज मैंने कितनोको सूत कातनेके लिए समझाया?

३ आज मैंने कितनोंको खादी पहननेपर रजामन्द किया?

जो व्यक्ति ईमानदारीके साथ इन सवालोके जवाब हमेशा अपनी डायरीमे लिखता रहेगा, वह शीघ्र ही यह देखेगा कि उसकी काम करनेकी शक्ति बढ रही है। थोडा-बहुत पुरुषार्थ तो मनुष्य-मात्रमे है और हमेशा अपनी हारकी बाते लिखना उसे पसन्द नही आता। इसलिए ईमानदार आदमी उस हारको हरा देता है और फतह हासिल करता है। अच्छा व्यापारी अपने कामका रोजनामचा रखता है और उसका अमूल्य लाभ जानता है। जहाजके कप्तानके लिए तो रोजनामचा रखना लाजिमी होता है। फिर, स्वराज्यके व्यापारी क्यों न रोजनामचा रखे? हताश जनता यदि आशावान बनना चाहे तो उसके लिए काग्रेसने प्रशस्त राजमार्ग दिखा दिया है। हम यदि आलस्यको छोड देगे और उद्यम करेगे तो हमे तुरन्त उसका मीठा फल चखनेको मिलेगा। यह समय न तो टीका-टिप्पणीका है, न शका-सशयका है। यह मुँह बन्द करके चुपचाप सिर्फ काम करनेका, अर्थात् सूत कातनेका और कतवानेका, खादी पहननेका और दूसरोंको उसे पहननेके लिए राजी करनेका समय है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ११-१-१९२५

४२८. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

पोष वदी २ [१२ जनवरी, १९२५][1]

काठियावाडकी यात्रामें तुम्हारी और आनन्दकी याद आती रही। तुम्हारी उपस्थितिकी और आनन्दके स्वास्थ्यकी कामना की। आश्रम पहुँचकर तुम्हारे पत्रकी बाट जोहूँगा। आनन्दसे कहना कि मैं रोज उसे याद करता हूँ।

[गुजरातीसे]

बापुनी प्रसादी

४२९. पत्र : देवचन्द पारेखको

सोमवार [१२ जनवरी, १९२५][2]

भाईश्री देवचन्द भाई,

मैं वहाँ[3] कल मंगलवारको तीन बजे पहुँचूँगा और सीधे बाबूसाहब यशवन्त प्रसाद सिंहके यहाँ जाऊँगा। वे कल यहाँ मुझसे मिले थे और उन्होंने मुझसे अपने यहाँ ठहरनेका आग्रह किया था। आप वहाँ मिलेंगे न?

क्या आप सोजित्रा आयेंगे? न आनेवाले हो तो कमसे-कम धोलातक अथवा उसके निकटवर्ती किसी स्थानतक जरूर आ जायें, ताकि हम भविष्यके कार्यक्रमके सम्बन्धमें कुछ सलाह-मशविरा करना चाहें तो कर सकें।

जो रुई इकट्ठी की गई है, उसकी क्या व्यवस्था की गई है, सो जानना चाहता हूँ। यदि हम छोटीसे-छोटी बातोंके बारेमें समुचित व्यवस्था करेंगे तो हमें सुपरिणाम प्राप्त होगा। रुई यहाँ भी इकट्ठी की जा रही है।

पट्टणी साहबका कातना जारी है।

मुझे मेरे सौ नाम चाहिए। आपको इस वर्ष और कोई काम नहीं करना है। आप तो अन्त्यजोंके लिए राज्योंसे, जहाँ कहींसे भी ला सकें वहाँसे, यथासम्भव सहायता लाइयेगा।

शेष मिलनेपर।

मोहनदास गांधीके वन्देमातरम्

गुजराती पत्र (जी० एन० ५७१६) की फोटो-नकलसे।

१. साधन-सूत्रके अनुसार।

२. गांधीजी भावनगरसे अहमदाबादके लिए १२ तारीखको रवाना हुए थे और वहाँसे १६ तारीखको सोजित्रा गये, पट्टणीजीके कताईसे सम्बन्धित उल्लेखसे विदित होता है कि यह पत्र भावनगरमें लिखा गया था।

३. भावनगर।

४३०. भाषण : गुजरात प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीकी बैठकमें

अहमदाबाद
१४ जनवरी, १९२५

आज शाम गुजरात प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीकी एक बैठक कांग्रेसके नये संविधानके अनुसार एक योजना निर्धारित करनेके लिए हुई। श्री गांधीने, जो बैठकमें उपस्थित थे, सुझाव दिया कि उन्हें कांग्रेसके सदस्य बनानेका काम शुरू कर देना चाहिए। उन्हें बताना चाहिए कि कौन स्वयं सूत कातेगा और कौन दूसरोंका काता हुआ सूत देगा। उन्हें यह भी बताना चाहिए कि कांग्रेसके लिए वे कितने सदस्य बनायेंगे। श्री गांधीने स्वयं सूत कातने और काठियावाड़से १०० सदस्य बनानेका वादा किया। किसीने कहा कि श्री गांधीको भारत-भरसे कांग्रेसके दो लाख सदस्य बनाने चाहिए। श्री गांधीने उत्तर दिया कि अतिरिक्त सदस्य मैं आपको दे दूँगा। कुल मिलाकर ७४ सदस्योंने स्वयं सूत कातनेका वादा किया, तीनने दूसरोंका काता हुआ सूत देनेका वादा किया और सब मिलाकर १,७०० सदस्य बनानेके वादे किये गये। इसके बाद श्री गांधीने सुझाव दिया कि स्वयं सूत कातनेवालों और दूसरोंका काता सूत देनेवालोंके अलावा ऐसे सदस्य भी होंगे जिन्हें यदि रुई दी जाये तो वे रोजाना आधा घंटा सूत कातेंगे। उन्होंने कहा कि मैं चाहता हूँ, रुई इकट्ठी की जाये। श्री वल्लभभाई पटेलने ५०० मन रुई इकट्ठी करनेका वादा किया और श्री अब्बास तैयबजीने २५ मन रुई।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १५-१-१९२५

४३१. दीक्षान्त भाषण : गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबादमें

१४ जनवरी, १९२५

विद्यार्थीगण, भाइयो और बहनो,

आप विद्यार्थियोंने आज जो उपाधि प्राप्त की है, उसके लिए मैं आप लोगोंको बधाई देता हूँ और आशा करता हूँ कि ली हुई प्रतिज्ञाको आप पूरा करेंगे। ऐसा प्रसग जब-जब आता है, तब-तब सामान्य सस्थाओकी रिपोर्टोंमे ऐसा कुछ उल्लेख होता है कि इस वर्ष विद्यार्थियों और शिक्षकोकी सख्या बढी, और सस्थाकी विविध प्रवृत्तियो-मे भी हर तरहसे वृद्धि हुई। आज महामात्र [रजिस्ट्रार]ने जब रिपोर्ट पढी तब हमने देखा कि इस विद्यापीठके चार वर्षके कार्य-कालमे सख्या घटती ही गई है। सामान्य रूपसे इससे निराशा होगी। लेकिन मुझे निराशा नही हुई। इतना अवश्य स्वीकार करता हूँ कि अगर हम विद्यार्थियोकी सख्यामे वृद्धि बता सकते अथवा दुनिया जिसे

प्रगति कहती है, कोई वैसी बात बता सकते तो मुझे खुशी होती। आजकी स्थितिमें मुझे प्रसन्नता होती है, ऐसा नही कह सकता, परन्तु मै निराश भी नही हुआ हू। बहुत-से दूसरे लोग और मैं ऐसी उम्मीद रखते ही थे कि यह कार्य हमे एक ही वर्ष चलाना होगा और एक वर्ष (अर्थात् स्वराज्य-प्राप्ति) के बाद तो जिन सस्थाओमे से आप निकले हैं, उन्ही सस्थाओमे आप फिरसे शिक्षा लेने लगेगे। एकके बदले तो चार वर्ष हो गये, और आगे कितने वर्ष यह देश-निकाला भोगना पडेगा, सो नही कहा जा सकता। मै तो अब ऐसा मानने लगा हूँ कि यह देश-निकाला है ही नही। कदाचित् स्वराज्य मिलनेपर भी ऐसी कितनी ही सस्थाएँ सरकारसे स्वतन्त्र रहकर चलती रहेगी। उस समय सिर्फ इतना होगा कि इन सस्थाओको सरकारी सस्थाओंसे प्रतिस्पर्धा नही करनी पडेगी, सरकारी सस्थाएँ विरोधी नही मानी जायेगी, त्याज्य नही मानी जायेगी। तथापि उस समय भी अनेक प्रयोग तो होते ही रहेगे और उनमे हमारी-जैसी सस्थाओके लिए स्थान रहेगा। इसलिए जो विद्यार्थी विद्यापीठके आश्रयमे पढते हैं वे किसी तरह निराश न हो और ऐसा न माने कि हम जितने वर्ष यहाँ पढे है, वे सब निष्फल गये।

आज सवेरे मै जब आश्रम पहुँचा[1] तो एक पोस्टकार्ड आया हुआ था। इसमें महाविद्यालयपर आक्षेप किया गया था। पोस्टकार्डपर लिखनेवालेका नाम-पता कुछ नही था। मैं 'नवजीवन' मे अनेक बार कह चुका हूँ कि कोई भी व्यक्ति अपना नाम-पता दिये बिना पत्र न लिखे। यह नामूसीकी बात है, इसमे एक प्रकारकी भीरुता है और हमे इसे छोड देना चाहिए। जिन विचारोको दुनियाके सामने रखनेकी हमारी हिम्मत न हो, उन्हे भूल जाना, दफना देना ही अच्छा है। तथापि यह प्रथा इस देशमें कितने ही बरसोमे चलती आ रही है और कदाचित् आगे भी चलती रहेगी। इसलिए पत्रको मै पढ गया। इसमे लिखा है "आप महाविद्यालयको बन्द क्यो नही करते? आपकी आँखे क्यो नही खुलती? विद्यार्थी आपको भुलावेमे डालते हैं, यहाँसे निकलनेके बाद बहुत-से विद्यार्थी सरकारी सस्थाओमे चले जाते हैं। आप चाहे जो माने, लेकिन छात्रो और छात्राओको चरखेपर तनिक भी श्रद्धा नही है। इसलिए आप विद्यापीठ और उसकी सब सस्थाओको बन्द कर दीजिए।" मुझे यह सलाह मान्य नही है, और मैं चाहता हूं, आपको भी मान्य न हो। दुनियामे किसी भी कामका महत्त्व इस बातसे नही आँका जा सकता कि उसमे कितने लोग लगे हुए हैं और उसपर कितना पैसा खर्च किया जा रहा है। इस तरह हिसाब करने बैठे तो भ्रममे पडनेका भय रहता है। इस देशमे आत्म-शुद्धिकी प्रवृत्ति चल रही है — हमने असहयोगको दुनियाके सामने आत्म-शुद्धिके प्रयत्नके रूपमे ही पेश किया है — तो ऐसे समय हमारी सस्थाओमे विद्यार्थियोकी सख्या बढेगी, यह सोचना ही भूल है। सख्या बढे तो अच्छा है, न बढे तो भी हमे श्रद्धा रखनी चाहिए और जबतक हममे विश्वास है तबतक हमे इस प्रवृत्तिमे लगे रहना चाहिए।

१. गांधीजी उसी दिन सुबह भावनगरसे साबरमती लौटे थे।

अगर यह सच हो कि विद्यार्थियोंको चरखेपर श्रद्धा नहीं है तो दुःखकी बात है। जिसे चरखेपर श्रद्धा न हो, उसे विद्यापीठका त्याग ही कर देना चाहिए। राष्ट्रीय स्कूलोंके सम्बन्धमें कांग्रेसका प्रस्ताव तो आपको याद ही होगा। उसकी याद मैं यहाँ फिर दिलाता हूँ। इसमें राष्ट्रीय शिक्षा-संस्थाकी जो व्याख्या की गई है, वहाँ उपस्थित लोगोंको उससे कोई विरोध न था। विरोध मनमें था, परन्तु उन्होंने उसे प्रकट नहीं किया, ऐसा मानना तो मेरे लिए, उनके लिए, उनके देशके लिए अप्रतिष्ठाकी बात है। इतने अधिक बुद्धिमान, स्वतन्त्रचेता और प्रौढ़ व्यक्ति जो सम्मति दें, वह सच्चे मनसे नहीं दी गयी है, हार्दिक नहीं है, ऐसा मैं कैसे मान सकता हूँ? इसीलिए मैं कहता हूँ कि इस व्याख्यासे हजारों व्यक्ति सहमत थे। अब काठियावाड़ परिषद्ने भी यह व्याख्या स्वीकार कर ली है। यह व्याख्या क्या है? राष्ट्रीय विद्यामन्दिरकी गिनतीमें वही पाठशाला आ सकती है, जिसमें चरखेका काम चलता है, जिसमें शिक्षक और विद्यार्थी आधा घंटा चरखा चलाते हैं और दोनों हाथ-कते सूतसे बनी खादी ही पहनते हैं, जिसमें शिक्षाका माध्यम मातृभाषा अथवा हिन्दुस्तानी है, जिसमें व्यायामको पूरा-पूरा स्थान है, जिसमें आत्म-रक्षाकी भी शिक्षा दी जाती है, जिसमें हिन्दुओं और मुसलमानोंको एक-हृदय बनानेके लिए प्रयत्न किया जाता है और जिसमें अन्त्यजोंका किसी भी तरहसे बहिष्कार नहीं किया जाता है। कांग्रेसने राष्ट्रीय विद्यामन्दिरकी यह व्याख्या की है। इसलिए मैं जब कहता हूँ कि जिन्हें चरखेपर श्रद्धा न हो उन्हें विद्यापीठके अधीन चलनेवाली सभी संस्थाओंका त्याग कर देना चाहिए तो आप यह न मानें कि मैं कुछ बढ़ा-चढ़ाकर कह रहा हूँ। इसीमें प्रगति निहित है। ऐसा करनेसे मालूम हो जायेगा कि हम किस दिशामें जा रहे हैं और कितने स्त्री-पुरुष तथा छात्र-छात्राएँ हमारे साथ हैं।

मेरा ध्यान 'साबरमती'में[1] प्रकाशित एक लेखकी टीकाकी ओर आकर्षित किया गया था। उसमें उठाई गई कुछ शंकाएँ निराधार हैं, क्योंकि उनमें मुझपर जो विचार रखनेका आरोप है, वे मेरे हैं ही नहीं। चरखेको विद्यार्थी अपना सारा समय दें, ऐसा तो मैंने कहा ही नहीं। मेरे विचार ऐसे हैं ही नहीं, सो बात नहीं। मैं यदि विद्यार्थियोंको और देशको समझा सकूँ कि यही बात देशके लिए उत्तम है तो अवश्य कहूँ कि आप सारा समय चरखा चलानेमें लगायें। लेकिन आज मैं यह बात देशको समझा नहीं सकता। आज मैं स्वयं ही यह नहीं कर सकता। मैं स्वयं सारा समय चरखा चलानेमें लगा सकूँ तो देशसे और विद्यार्थियोंसे भी कहूँ। मेरी आकांक्षा यह अवश्य है कि मैं हिन्दुस्तानको बता सकूँ कि चौबीस घंटे चरखा चलानेमें ही शुद्ध विद्या निहित है। वैसे तो यदि हम किसी भी स्वच्छ वस्तुको लेकर बैठ जायें और उसमें एकाग्रता प्राप्त करें तो उसमें भी शुद्ध विद्या है ही। कारण, इस तरह हम योगकी साधना करते हैं। लेकिन अभी मैं यह बात नहीं कहता। अभी तो मैं विद्यार्थियोंसे इतना ही कहता हूँ कि आप श्रद्धापूर्वक, आनन्दसे चरखा चलायें, अच्छी तरह कातें तथा चरखा चलानेकी कला सीख लें एवं जितनी आतुरता व प्रेम आप

१. गुजरात महाविद्यालयका एक गुजराती द्विमासिक।

दूसरी किसी विद्याके सम्बन्धमे रखते है, उतनी ही इसके सम्बन्धमें भी रखें। बाकीका सारा समय अन्य विषयोको दें, इसके खिलाफ मुझे कोई शिकायत नही। मै तो आपसे सिर्फ इतना ही माँगता हूँ कि जो कीजिए, श्रद्धापूर्वक कीजिए, बेगार न टालिए।

दूसरा आक्षेप यह है कि मैंने एक समय कहा था कि विद्यापीठको ऐसा पाठ्य-क्रम गढना चाहिए जिससे आपको आजीविका मिले और यहाँ उसीको चलाना चाहिए। यह बात मै अभी भी कहता हूँ। लेकिन विद्यापीठके लिए और आपके लिए भी यह मुख्य उद्देश्य नही है, होना भी नही चाहिए। अगर विद्याको आप केवल आजीविका-का साधन मानने लगेंगे तो यह किसी समय आपकी अधोगतिका कारण सिद्ध होगा। विद्याकी जो व्याख्या विद्यापीठने स्वीकार की है, वह यह है कि जो मुक्ति दे, वही विद्या है। इसलिए ऐसे आदर्शवाली सस्थामे केवल आजीविकाको ध्यानमे रखकर विद्या ग्रहण करना उचित नही। आजीविकाके अनेक साधन है। विद्या तो तन, मन और आत्माकी उन्नतिके लिए है। जिसके अग सुघड है, शरीर सुव्यवस्थित और मजबूत है, जो सख्त गरमी और सर्दी सहन कर सकता है, जिसमे ऐसी प्रबल सकल्प-शक्ति है कि वह निश्चित किया हुआ काम कर सकता है, जो सयमी है, जिसकी आत्मा स्वच्छ है — इतनी स्वच्छ कि वह कह सके कि मै अपने हृदयका सूक्ष्म स्पदन भी सुन सकता हूँ और चूँकि आत्माका स्थान हृदय है इसलिए उसका हृदय भी स्वच्छ होना चाहिए — उसीने सच्ची विद्या सीखी है। ये तीन वस्तुएँ जिसने प्राप्त कर ली हैं उसे आजीविकाका पाठ सीखनेकी जरूरत क्यो होनी चाहिए, आजीविकाके लिए चिन्ता क्यो होनी चाहिए? ऐसे लोगोको तो विश्वास होना चाहिए कि जिसने दाँत दिये है, वह चबानेको भी कुछ देगा ही। मुझसे कहा गया है कि विद्यार्थियोको घर-ससार चलाना होता है, उन्हे दो-दो तीन-तीन जनोका पोषण करना होता है। पोषण करना होता हो तो हो, पोषण करना भी चाहिए और उसे करनेमे बहादुरी भी है, लेकिन उपर्युक्त वस्तुओको साधनेसे ही आजीविका मिल जाती है, आजीविका ढूंढनेमे नही मिलती। आजीविका मिल सके, ऐसी व्यवस्था तो विद्यापीठ आज भी कर रहा है। यदि विद्यापीठ ऐसा आश्वासन दे अथवा यह पत्र लिख दे कि विद्यार्थीको विद्यापीठसे निकलनेपर तुरन्त ही तीन सौ अथवा तीस रुपये वेतन मिलने लगेगा तो यह आपको अपग बनाना होगा। बादमे आप देश-सेवा नही कर सकते, तब आपसे पुरुषार्थ भी नही होगा। विद्यापीठ तो आपको केवल मुसीबतके आगे टिके रहनेकी, उसमे निकल जानेकी शक्ति देता है। वस्तुत. देखा जाये तो विद्यापीठ आपको कुछ भी नही दे सकता, वह तो आपमे जो-कुछ होगा, उसीको विकसित कर सकेगा। इसलिए आप आजसे यह माने कि विद्यापीठमे आकर आपने कुछ खोया नही है, कुछ खोनेवाले भी नही है।

विद्यापीठका और महाविद्यालयका भविष्य क्या है और उन्हे किस मार्गपर ले जाया जाये, महामात्रने मुझसे इसके बारेमे सुझाव देनेके लिए कहा है। इसके बारेमें कुछ भी सुझाव देना मेरी शक्तिके बाहर है। इस वर्ष हिन्दुस्तानमें वातावरण क्या स्वरूप धारण करेगा, सो मै नही जानता। मुझे आशाएँ तो बहुत है। मै आशावादी हूँ और मरणपर्यन्त आशावादी रहूँगा। लेकिन इस समय मै आपके सामने इन

आशाओंको रखूँ, यह उचित नही है। आपसे तो इतना ही कहूँगा कि विद्यापीठका भविष्य क्या होगा, इसके प्रपचमे आप विद्यार्थी लोग न पडे। आप मान ले कि आप जो विद्यापीठमे है सो उचित ही है, सरकारी स्कूलोमे जाना उचित नही है और सचमुच जो शिक्षा मिलनी चाहिए वह वर्तमान स्थितिमें वहाँ मिलनेवाली नही है। आपके मनमे जबतक यह बात है कि सरकारी स्कूलोंसे हिन्दुस्तानको जो चाहिए वह नही मिला है और न आगे मिलनेवाला है, तभीतक आप विद्यापीठमे रहे। यदि आपको लगे कि सरकारी सस्थाओमे यह सब मिल जाता है तो आपका सरकारी संस्थाओंमें जाना ही ठीक है। उस हालतमे आपको इस झझटमे पड़नेका कोई कारण नही कि विद्यापीठका भविष्य क्या होगा। सरकारी पाठशालाओके सम्बन्धमे आपके मनमें दृढ विराग होना चाहिए। विराग होना अर्थात् उन पाठशालाओके बारेमे आपमे त्यागवृत्ति हो, राग नही। जबतक राग होगा तबतक आप विद्यापीठकी सरकारी स्कूलोके साथ तुलना करते ही रहेंगे। हर समय मनमे कहेंगे कि वहाँ इतनी सुविधाएँ है और यहाँ वे नही है। विद्यापीठमें सुविधाएँ नही है, यही इसकी विशेषता है। अगर यहाँ भी सुविधाएँ जुटा देगे, तो फिर हम मुसीबतोंको लांघना नही सीख सकेंगे। अथवा यो कहे कि यहाँ भिन्न प्रकारकी सुविधाएँ है अतः यहाँ कुछ विशेषता तो होनी ही चाहिए। सरकारी स्कूलोके साथ इस विद्यापीठके स्कूलोंकी तुलना तो की ही नहीं जा सकती। इतनी ही बात यदि आपके मनमें घर कर जाये तो फिर विद्यापीठका भविष्य क्या होगा, इसकी आपको क्या चिन्ता? आप अपना कर्त्तव्य-पालन करके इतना कह सके कि हमने स्वराज्यकी लडाईमे पूरी-पूरी मदद की, यही पर्याप्त है। इससे अधिक जाननेका आपको और मुझे अधिकार नही है। मैं तो इतना ही जानता हूँ कि जबतक विद्यापीठ स्वराज्यकी लड़ाईमे सहायक होगा — तबतक वह चलेगा, जब स्वराज्यकी लडाईमे सहायक नही होगा, उसी समय इसका नाश हो जायेगा। और तब अगर उसका नाश हो तो इसमे बुरा क्या है? बल्कि तब उसका नाश इष्ट ही है। हिन्दुस्तानके स्वराज्यका भविष्य ही विद्यापीठका भविष्य है।

हमे जो अच्छा लगता है, वही हमेशा हितकर नही होता। मैं बूढा हो गया हूँ फिर भी मुझे लगता है कि मुझे जो अच्छा लगता है, वह सब मेरे लिए हितकर नही होता। अतएव, अनेक बातोमे हमे बड़ोकी सलाह लेनी पडती है। इसीसे हमारे यहाँ यह प्राचीन प्रथा चल रही है कि गुरुकी खोज करके उसकी शरण लो, उसका आधार लो, उसकी गोदमे सिर रखकर कहो कि आप अपनी इच्छानुसार मुझे चलाये, आपको जो अच्छा लगे सो हमारी बुद्धिमे भरे। आजकल तो वैसा गुरु कही मिल नही सकता, इसलिए आज ऐसे स्वार्पणकी बात नही उठती। यहाँ तो मात्र ऐसी श्रद्धाकी ही जरूरत है कि शिक्षक हमे अच्छे मार्गकी ओर प्रेरित करते है, बुरे मार्गकी ओर नही। अनेक वस्तुएँ आरम्भमे कड़वी होती है, लेकिन उनका फल अमृतमय होता है, ऐसी श्रद्धा रखकर आप कड़वे घूँट भी पी जाये। यही मेरी सलाह है और मेरी विनती है।

अब मैं फिर, आपने जो प्रतिज्ञा ली है, उसपर वापस आना चाहता हूँ। दोनो भाई आठवलेने[1] जो प्रार्थना पढी है, उसकी ओर भी आपने ध्यान दिया होगा।

१. आर० बी० आठवले, गुजरात विद्यापीठमें संस्कृतके आचार्य।

वस्तुएँ बहुत सामान्य थी। जो वस्तु सामान्य होती है, उसमें कितना जोर होता है, सो हम नही देख सकते। किसी चित्रकारने भले ही कोई बहुत मामूली चित्र बनाया हो, उसे देखकर हम वाह-वाह कर उठते है। कारण, हमे आदत ही ऐसी पड़ी हुई है। लेकिन हमारे सिरके ऊपर जो भव्य चित्र है, उसकी कोई कद्र नही करता। यह विशाल आकाश और उसमें जगमगाते तारे व चन्द्र, सूर्योदय और सूर्यास्तके समय उभरनेवाले अनेक रंग, यह सब कौन चितेरा चित्रित कर सकता है? तथापि हम उस पर ध्यान नही देते। कारण, हमारी दृष्टि नीचे ही नीचे रहती है और मामूली चित्रों पर हम मुग्ध हो जाते हैं। यह दयनीय स्थिति है। इसलिए आपने आज जो प्रार्थना सुनी है और जो प्रतिज्ञा महामात्रने आपसे कराई है, सम्भव है, उसके रहस्यको आप समझ सके हो। उसपर आप बार-बार मनन कीजिएगा, प्रतिज्ञाका पालन कीजिएगा। इस प्रार्थनामें कहे गये भव्य मन्त्रोंसे वह पोषण मिलता है, जो भाषणों और लेखोंसे नही मिलता। यह माताके दूध-जैसी स्वाभाविक खुराक है। यदि माता बच्चेको अपना दूध न दे और दूसरी स्त्री उसे तरह-तरहकी अन्य खुराके दे तो उसका क्या परिणाम होगा? कोई बालक जीवित न बचेगा। ये सामान्य वस्तुएँ ही अमृतके समान हैं, और यदि हम अपने पूर्वजोंकी इस विरासतपर मनन करे, उसे हृदयमे उतारें, उसके अनुसार आचरण करे तो हमारा जीवन सार्थक है। आप मेरे भाषणको भूल जाये, और सब-कुछ भूल जाये, परन्तु इस प्रार्थनाके मन्त्रोंको तथा अपनी प्रतिज्ञाको न भूलें तो माना जायेगा कि आपका और मेरा समय निरर्थक नही गया।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १८-१-१९२५

४३२. तार: सुरेन्द्रनाथ विश्वासको[1]

[१५ जनवरी, १९२५ या उससे पूर्व]

सम्मेलनमें शामिल होनेको उत्सुक हूँ। कृपया फरवरीके अन्तमें याद दिला दें।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

अमृत बाजार पत्रिका १६-१-१९२५

१. बंगाल प्रान्तीय सम्मेलनकी स्वागत समितिके अध्यक्ष। यह सम्मेलन फरीदपुरमें होनेवाला था।

४३३. मेरी आस्था

राजगोपालाचारीकी ओरसे यह अयाचित घोषणा[1] सुनकर मेरे हृदयको बडी राहत मिली है। पाठक जानते हैं कि उनकी विवेकशीलता और परखका मैं कितना सम्मान करता हूँ। उनको सन्देहो और आशकाओमे उलझा देखकर मेरा मन बडा दु खी था। चरखा-कार्यक्रममे 'सत्यके साथ खिलवाड़ करन' की कोई बात नही है, क्योकि सत्याग्रह मुख्यत सविनय अवज्ञा नही, बल्कि शान्त मनसे सत्यका अडिग अनुगमन है। सविनय अवज्ञाका रूप तो वह कभी-कभी ही धारण करता है। लेकिन, जहाँ बहुत सारे कार्यकर्त्ताओ द्वारा सविनय अवज्ञा करनेका सवाल हो, वहाँ इस राहपर चलनेसे पूर्व उन्हे जान-बूझकर, अपनी इच्छासे आज्ञा-पालन करना सीखना चाहिए। चरखा स्वेच्छापूर्वक आज्ञापालन और शान्त प्रयत्नशीलताका मूर्त रूप है, इसलिए सविनय अवज्ञासे पहले उसे सफल कर दिखाना नितान्त आवश्यक है। जबतक इस बातका पूरा भरोसा नही हो जाता कि सविनय अवज्ञाके लिए उपर्युक्त वातावरण तैयार हो गया है तबतक मनमे उसका कोई खयाल भी लानेमे मुझे ऐसा लगता है कि यह सत्यके साथ खिलवाड करना होगा। इसीलिए मुझे चरखेके कार्यक्रमपर और स्वराज्यवादियोके सामने तो क्या, सभी सम्बन्धित लोगोके सामने पूर्ण आत्म-समर्पण करनेका आग्रह रखना ही है, भले ही मेरे साथ फिर अँगुलियोपर गिनने लायक कार्यकर्त्ता ही रह जायें। हमे सविनय अवज्ञाकी आडमे हिसापूर्ण अवज्ञाको पनपनेका मौका नही देना चाहिए। चौरी-चौराकी सीख मेरे मनमे इतनी गहरी उतर चुकी है कि उसे आसानीसे भुलाया नही जा सकता। बारडोलीके निर्णयको लेकर मेरे मनमे कोई खेद होना तो दूर, मै तो उसे देशके प्रति की गई अपनी सबसे बडी सेवाओमे से एक मानता हूँ।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १५-१-१९२५

४३४. नोटिस?

मुझे बेलगाँवमे निम्नलिखित नोटिस दिया गया था:

नीचे हस्ताक्षर करनेवाले हम, महाराष्ट्र प्रान्तकी कोलाबा जिला कांग्रेस कमेटीके प्रतिनिधिगण, अपने जिलेकी विशेष परिस्थितिकी ओर आपका ध्यान दिलानेकी अनुमति चाहते हैं। कोलाबा जिलेमें न तो कपास ही पैदा होती है और न वह कपासके किसी केन्द्रके नजदीक ही है। इसलिए स्वभावतः कताईकी तरफ वहाँके लोगोंका झुकाव नहीं है। यहाँतक कि असहयोगके शुरूके दिनोंमें भी बड़ी मुश्किलसे वहाँ कुछ चरखे चलाये गये थे, सो भी कुछ ही महीने चल पाये।

१. देखिए परिशिष्ट २।

सो इन सब तथ्योंपर खूब अच्छी तरह विचार करके फोलाबा जिला कांग्रेस कमेटीने पिछले सितम्बर माहमें एक प्रस्ताव पास किया, जिसका आशय यह था कि इस जिलेमें कताई-सदस्यता सफल नहीं हो सकती और कांग्रेसके विधानमें उसका समावेश हो जानेसे जिलेकी प्राय. तमाम समितियोंका अस्तित्व खतरेमें पड़ जायेगा, इसलिए कांग्रेस द्वारा कताई-सदस्यताके स्वीकृत होते ही हम आपको शीघ्रसे-शीघ्र सूचित करते हैं कि हममें से बहुतेरे लोगोंने, उस प्रस्तावके हकमें जो राय दी है या उसके खिलाफ राय देनेसे अपने-आपको रोका है, उसकी वजह यही थी कि एक तो स्वराज्य दलने इसे अपने दलका सवाल बना लिया था और दूसरे, कांग्रेसमें एकता बनाये रखनेके खयालसे ऐसा रुख अपनाना लाजिमी हो गया था। लेकिन इसपर अमल करना हमारे लिए मुश्किल है। हम पहलेसे आपको खबर किये देते हैं, जिससे आपको हताश न होना पड़े।

इसपर २७ दिसम्बरकी तारीख पड़ी है और १२ सदस्योंके दस्तखत हैं, जिनमें सभापति और मंत्री भी शामिल हैं। मुझे आशा है कि ये महाशय अपनी धमकीको कार्यरूपमें परिणत नहीं करना चाहेंगे। अगर इन सज्जनोंने अनुशासन या एकताके खयालसे ही कताईवाले प्रस्तावके पक्षमें राय न दी हो या उसके सम्बन्धमें तटस्थ रहे हों तो मैं उन्हें यह बताना चाहता हूँ कि खिलाफ राय न देने या तटस्थ रहनेसे ही अनुशासन या एकताकी शर्तें पूरी नहीं हो जातीं। अनुशासनका वास्तविक पालन तो तभी हो सकता है, जब प्रस्तावपर सच्चे सिपाहीकी तरह आज्ञा-पालनकी भावनासे अमल किया जाये, भले ही वह बुद्धिको ठीक न जँचता हो। 'लाइट ब्रिगेड' ने — जिसकी अविस्मरणीय वीरताको टेनीसनने प्रसिद्ध कर दिया है[1] — ऐसी ही भावनासे काम लिया था। बोअर-युद्धमें उन सिपाहियोंने भी इसी भावनाका परिचय दिया था, जो यह जानते हुए भी कि हम मौतके मुँहमें जा रहे हैं, बराबर अपने जनरलके पीछे-पीछे गये और बोअरोंकी गोलियाँ खाते हुए स्पिअनकॉपकी पहाड़ियोंपर खेत रहे। जनरलके इस प्रस्तावपर कि पहाड़ीपर कब्जा कर लिया जाये, यदि वे कठ-पुतलियोंकी तरह 'हाँ' कह देते तो उसका कोई महत्त्व न होता, बल्कि यह चीज उनके लिए अप्रतिष्ठाका कारण बन जाती। वे इसीलिए शूरवीरोंकी श्रेणीमें प्रतिष्ठित हो गये कि उन्होंने मनमें हिचक होते हुए भी ऐसा साहस दिखाया, जो प्रबलतम विश्वासमें ही सम्भव होता है। याद रखनेकी बात यह है कि उन्हें ऐसी लड़ाई लड़नी थी, जिसमें पराजय बिलकुल निश्चित थी। लेकिन शूरवीरोंका उदय तो पराजय सामने दिखने-पर ही होता है। किसीने ठीक ही कहा है 'गौरवपूर्ण पराजयके क्रमकी परिणति ही सफलता है'। इसलिए अगर सालके अन्तमें सदस्यताकी यह नई शर्त विफल साबित

१. रूस तथा मित्र देश तुर्की, इंग्लैंड, फ्रांस और सार्डिनियाके बीच (१८५३-५६ में) हुई क्रीमियाकी लड़ाईमें लाइट ब्रिगेडने सेनापतिके इशारेपर अपने-आपको आग उगलती तोपोंके मुकाबले झोंक दिया था। इसी घटनाको टेनीसनने अपनी कवितामें प्रसिद्धि प्रदान की।

हो जाये, तो भी हर्ज क्या? यदि कांग्रेस-जन इस बातका खयाल किये बिना कि वे किस दलके है और इस बातसे सहमत है अथवा नही, इसे सफल बनानेके लिए जुटकर कार्य करे तो वह असफलता भी एक गौरवपूर्ण असफलता होगी।

अगर लोगोका इरादा प्रस्तावके अनुसार काम करनेका नही था तो यह कहना भी, जैसा कि हस्ताक्षर-कर्त्ता सज्जनोने कहा है, गैरमुनासिब है कि बहुत-से लोगोने सिर्फ एकताके खयालसे उस प्रस्तावके हकमे राय दी थी। एकता इतनी आसानीसे हासिल नही हो सकती। एकता कोई ऐसी चीज नही जो मात्र-दिखावेके लिए हो और जिसे कागजपर महज प्रस्तावके रूपमे लिख देनेसे काम चल सकता हो। एकता तो तभी कायम हो सकती है जब प्रस्तावके अनुसार ठोस काम करके दिखाया जाये। विधान सभाओपर मेरा विश्वास नही। पर मेरे दूसरे साथियोको उनपर विश्वास है, इसलिए मैंने उन्हे कांग्रेसके नामका इस्तेमाल करनेकी इजाजत दे दी है। पर अब अगर मै दिलमे कुछ महसूस करूँ और मुँहसे कुछ और कहूँ या कलमसे कुछ और लिखूँ तो मै एकतामे सच्चा विश्वास रखनेवाला नही, बल्कि पाखण्डी साबित होऊँगा। कौंसिल-प्रवेशका अधिकार देनेवाले प्रस्तावके हकमे एक बार राय दे चुकनेके बाद मुझे चाहिए कि मै स्वराज्यवादियोंका भला मनाऊँ। मुझे अपने किसी भी कामसे उनके कार्यक्रमको नुकसान नही पहुँचाना चाहिए। यही नही, बल्कि जहाँ-कही मुझसे हो सके, अपनी पूरी शक्तिके साथ उन्हे मदद भी पहुँचानी चाहिए, और यदि इतने पर भी उन्हे असफलता मिले तो उन्हे यह कह सकनेका मौका नही देना चाहिए कि वे इसलिए नाकामयाब हुए कि हमने पहलेसे परस्पर निर्धारित मर्यादाके अन्दर भी उन्हे मदद नही दी। फर्ज कीजिए कि अपरिवर्तनवादी किसी भी तरहसे स्वराज्य-वादियोका काम न बिगाडे तो उस हालतमे यदि वे असफल भी हो तो वह असफलता —एक तरहकी सफलता ही होगी, क्योंकि तब हमे अपने ध्येयतक पहुँचनेका दूसरा रास्ता मिल जायेगा। ठीक इसी तरह, यदि देशके तमाम दल कताईकी शर्तको सफल बनानेमे अपनी पूरी शक्ति लगाकर देखे और फिर भी सफलता न मिले तो हम सब उसे स्पष्ट रूपमे महसूस कर सकेंगे, और अपनी हार कबूल करते हुए सब मिलकर सफलताके लिए कोई और मार्ग निकालनेकी कोशिश करेंगे, क्योंकि यदि हम सचमुच तुले हुऐ हो तो हम अवश्य ही असफलताओके बीचसे अपनी मंजिलतक पहुँचनेका मार्ग पा जायेगे।

कोलाबाके इन सज्जनोंकी कठिनाई है क्या? वह खुद उन्ही की पैदा की हुई तो है। अगर खुद उनके जिलेमे कपास पैदा नही होती तो वे खरीद ले। कोलाबा मैंचेस्टरकी अपेक्षा बम्बईसे कही नजदीक है। क्या उन्हे यह जानकर ताज्जुब न होगा कि मैंचेस्टरके आसपास कपासका एक टेट भी नही फलता, पर वहाँके लोगोको कपास बाहरसे मँगाने, धुनने और कातनेमें जरा भी दिक्कत महसूस नही होती? मैं कोलाबाके इन मित्रोको यकीन दिलाता हूँ कि ऐसा करनेमे उन्हे मैंचेस्टरके लोगोके मुकाबले आधी परेशानी भी नही उठानी पडेगी। उनका दिल बढानेके लिए मै यह भी कह देता हूँ कि यदि उन्हें कपास मँगाने और धुनने तथा कातनेकी इच्छा न हो तो

कॉंग्रेसके प्रस्तावने उन्हें यह छुट्टी दे रखी है कि वे आवश्यक हाथ-कता सूत खरीद कर कांग्रेसको दे दें। क्या वे सूत खरीदना चाहते हैं? यदि सूत हाथ-कता हो और एक-सा तथा मजबूत हो तो खरीदकर देना भी बुरा नहीं रहेगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १५-१-१९२५

४३५. शाबाश!

देशबन्धुने लॉर्ड लिटनके खिलाफ हालमें जो हाथ दिखाया है, वह सचमुच कमालका है। उनकी बीमारी और फिर कौंसिल हॉलतक डोलीपर उनका पहुँचाया जाना — इन बातोंने उनकी शानदार जीतमें एक नाटकीयता पैदा कर दी है। बीमारीकी हालतमें उनकी वहाँ मौजूदगी अपने-आपमें इतना कुछ-कह गई कि प्रभावशालीसे-प्रभावशाली भाषण भी उतना कारगर नहीं हो सकता था। यदि लॉर्ड लिटनमें काफी सूझबूझ और खिलाड़ियोंके योग्य भावना हो तो उनको इतनी बार मात खानेके बाद अब अध्यादेश वापस ले लेना चाहिए, कैदियोंको रिहा कर देना चाहिए और वे जो ऐसा मानते हैं कि बंगालमें हत्याका षड्यंत्र चल रहा है, उस षडयन्त्रसे निबटनेकी जिम्मेदारी उन लोगोंपर छोड़ देनी चाहिए जिन्होंने देशबन्धुके पक्षमें मतदान किया है। बंगाल-कौंसिलने उनके विरुद्ध मतदान किया है, इसपर उनको शिकायत नहीं करनी चाहिए। लोक-निर्वाचित विधान सभाओंका सार-तत्त्व यही है कि उनका निर्माण करनेवाली सरकारको अपने अस्तित्वके लिए उनके विवेकशील समर्थनपर ही निर्भर रहना चाहिए। विधान-सभाएँ कभी-कभी हठधर्मी या मूढ़ता कर सकती हैं या कभी-कभी सरकारके प्रति उनका भाव सन्देहका हो सकता है। वैसी हालतमें सरकारको तबतक धैर्यपूर्वक प्रतीक्षा करनी चाहिए जबतक कि वे उसके दृष्टिकोणकी हामी न हो जायें और इस बीच कुशासन या उससे भी बुरी स्थिति पैदा होनेके खतरे उठा लेने चाहिए। हमें यह उम्मीद क्यों करनी चाहिए कि लोक-निर्वाचित विधान सभाएँ निरंकुश शासनके दोषोंसे मुक्त ही होंगी? लॉर्ड लिटन ऐसा कोई दावा नहीं करते कि उन्होंने जो-कुछ किया है उससे देश राजनीतिक अपराधोंसे सर्वथा मुक्त हो जायेगा। लेकिन मुझे बहुत आशंका है कि भारतीय पत्रकार आदि जो सुन्दर-सटीक तर्क पेश कर रहे हैं, उनसे लोकमतकी अवहेलना करनेकी आदी इस सरकारके कानोंपर जूँ-तक नहीं रेंगेगी, हालाँकि उन सभीने लगभग एक स्वरसे लॉर्ड लिटनकी नीतिकी निन्दा की है। इसीलिए मैं भारतीय लोकसेवी जनोंसे कहता हूँ कि यदि वे अपने तर्कोंमें बल पैदा करना चाहते हैं तो उनको चरखा चलाना चाहिए। राष्ट्रको यही एक रचनात्मक शक्ति सहज-सुलभ है। देशबन्धु दासने बंगाल-कौंसिलमें जो अनुशासन स्थापित कर दिया है, उसका बड़ा जबरदस्त प्रभाव पड़ेगा, लेकिन तभी, जब चरखा घर-घरमें प्रतिष्ठापित हो जायेगा और उसके फलस्वरूप, विदेशी वस्त्रोंका

बहिष्कार एक वास्तविकता बन जायेगा, उससे पहले नही। काश समूचा राष्ट्र इस एक रचनात्मक कार्यका श्रेय ले सकता!

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १५-१-१९२५

४३६. काठियावाड़ राजनीतिक परिषद्

काठियावाड राजनीतिक परिषद्को मैंने यह सलाह यो ही नही दे दी थी कि वह ऐसी शिकायतोको लेकर प्रस्तावपर-प्रस्ताव पास करने न बैठे, जिनको दूर करानेके तरीकेपर अमल करना प्रतिनिधियोके वशके बाहर हो, भले ही उनके पास ऐसे प्रमाण हों, जिनसे जनताको उन शिकायतोके सही होनेका विश्वास दिलाया जा सकता हो। मैंने उनसे कहा कि परिषद्मे पहले सार्वजनिक सेवा और त्यागकी भावनाका विकास करें और फिर शिकायतोको दूर करानेके लिए प्रयत्न प्रारम्भ करे। तब आप उन भिन्न-भिन्न मामलोसे, जो आपको बहुत खटकते है और जिनके बारेमें आपको शिकायत है, निबटनेमे कही अधिक समर्थ हो पायेगे। शान्तिपूर्ण प्रतिरोधका यही तरीका है। विषय-समितिने इस सलाहको बिना किसी हिचकिचाहटके स्वीकार कर लिया। परन्तु परिषद्के सचालको द्वारा तैयार किये गये कताई-सदस्यता सम्बन्धी प्रस्तावपर दिलचस्प बहस हुई। पर वह बहुत भारी बहुमतसे पास हो गया। यह प्रस्ताव काग्रेसके प्रस्तावसे एक बातमे भिन्न है। इस प्रस्ताव द्वारा हर बुनियादी सदस्यके लिए विशेष राजनीतिक आयोजनोके समय ही नही, बल्कि सदा-सर्वदा खादी पहनना लाजिमी बना दिया गया है। यहाँ सगठनके अनुशासनके खयालसे राय देनेकी कोई बात न थी। हर शख्स अपनी मर्जीके मुताबिक राय देनेके लिए आजाद था।

अब यह देखना है कि इस प्रस्तावपर अमल किस तरह होता है। हर शख्स इस बातको तस्लीम करता हुआ दिखाई देता था कि इसकी सफलता उन मुख्य कार्यकर्त्ताओके उत्साह, लगन और कार्य-क्षमतापर निर्भर है जो इस प्रस्तावको पास करानेके जिम्मेवार है।

सर प्रभाशंकर कातेंगे

इस परिषद्मे सबसे अधिक अद्भुत बात तो सर प्रभाशकर पट्टणीकी यह प्रतिज्ञा थी कि वे खाना खानेके पहले कमसे-कम आधा घटा रोजाना कातेंगे — सिवा उस वक्तके जब वे इतने बीमार हो कि चरखा चला ही न सके। उन्होने सफरमें भी इससे छूट न लेनेकी ठानी है। उनका कहना है और वह ठीक ही है कि वे पहले दर्जेमे सफर करते हैं और इसलिए सफरमे चरखा साथ ले जानेमे और कातनेमें भी उन्हे कोई दिक्कत पेश नही आनी चाहिए। सर प्रभाशकरके लिए यह एक बडा भारी कदम है। मुझे आशा है कि वे अपने निश्चयपर जरूर अमल कर पायेंगे। उनके इस उदाहरणसे काठियावाड़मे कताई-आन्दोलनको बडा उत्तेजन मिलेगा। यह कहनेकी तो कोई आवश्यकता ही नही कि काठियावाड-सभामे शामिल होनेकी उनसे कोई आशा

नही करता। मैं यह खुलासा करनेके लिए उत्सुक था कि यद्यपि कातनेका एक राजनीतिक पहलू है तो भी हरएक कातनेवालेको उनके राजनीतिक पहलूसे सम्बन्ध रखनेकी जरूरत नहीं। यदि राजा लोग और उनके मत्री मिसाल पेश करनेके लिए और प्रजाके साथ अपने तादात्म्यके चिन्ह-स्वरूप काते तो मैं उसे ही काफी मानूंगा। काठियावाडके किसानोको खूब फुरसत रहती है। लोग गरीब है। और यदि राजे-रजवाडो और उनके प्रतिनिधियोंके द्वारा कातनेका रिवाज चलाया जाये तो आम लोग भी, जिनपर वे शासन करते है, उसे अपना लेंगे और इससे राष्ट्रीय सम्पदामें भरपूर वृद्धि होगी। व्यक्तियोपर चाहे इस वृद्धिका असर स्पष्ट मालूम न हो, लेकिन लोगोपर समष्टि-रूपसे उसका असर काफी बडा होगा।

पाठक यह जानना चाहेगे कि सर प्रभाशकरने यह प्रतिज्ञा क्यो और कैसे की थी। वे दर्शककी हैसियतसे विषय समितिमे आमन्त्रित होकर आये थे। कातनेका प्रस्ताव पास हो जानेपर, मैंने सदस्योको कातनेवालोंमे नाम लिखानेके लिए आमन्त्रित किया। मैंने उनसे कहा कि बेलगांवमे दूसरे लोगोंके साथ मैंने भी अपने सिर यह भार लिया था कि पहली मार्चके पहले-पहले, प्रतिमास २००० गज सूत कातनेवाले १०० सदस्य बनाऊँगा, मैंने यह भी कहा कि "अनिच्छुक" लोगोमें से दो कातनेवालोको तैयार करूँगा, मैंने श्रोताओंसे यह भी कहा कि बेलगांवमे जब मैंने यह बीडा उठाया, मुझे आशा थी कि ये १०० सदस्य मुझे काठियावाडसे मिल जायेंगे और इच्छा न होनेपर भी कातनेवाले दो सदस्योमे एक सर प्रभाशकर मेरे खयालमें थे। यह सुनते ही सर प्रभाशकर फौरन खडे हुए और हर्ष-ध्वनिके बीच बडे सकल्पके साथ उन्होंने अपना पूर्वोक्त निश्चय प्रकट किया।

सर प्रभाशकरका शिक्षक मुझे ही बनना था। यह लिखते समयतक उन्हें सिर्फ तीन बार अभ्यास कराया गया है। तीसरे ही दिन वे २ घटेसे भी कम समयमें ८ नम्बरका एक-सा और अच्छा बटा हुआ ४८ गज सूत कात सके थे। सच बात तो यह है कि पहली बार ही आध घटेके अभ्याससे वे तार निकालने लगे थे। इसके बाद उन्होंने कहा कि अब चरखेके साथ मुझे कुछ देर अकेले ही जूझने दीजिए। मुझे आशा है कि दूसरे राज्याधिकारी और मत्री भी सर प्रभाशकरके इस सुन्दर सकल्पका अनुकरण करेंगे, जो खुद उनके लिए भी और उनके अधीनस्थ प्रजाजनोके लिए भी लाभदायक है।

रुईका सग्रह

रुईका केन्द्र होनेके कारण भावनगरमें उन गरीब कातनेवालोंको, जो आध घटेकी मजदूरी देनेपर राजी हो सकते है, लेकिन जो रुई नहीं दे सकते और न मांग ही सकते हैं, रुई देनेके लिए कपास सग्रह करनेका भी निश्चय हुआ। उसका नतीजा यह हुआ कि २७५ मनसे ज्यादा रुई इकट्ठी हो गई। दो दिनके मांगनेपर इतनी रुई इकट्ठी हो जानेपर कोई बुरा नहीं। यदि जोश ऐसा ही रहा तो काठियावाडमें कताई आन्दोलन खूब चल पडेगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १५-१-१९२५

४३७. घूमता चक्र

पाठक जानते है कि बड़ो दादा द्विजेन्द्रनाथ ठाकुर मेरे प्रति बहुत स्नेह-भाव रखते है। मै जो भी कहता या करता हूँ, लगभग सभीको वे पसन्द किये बिना नही रह पाते। इसलिए पाठकगण मेरे विचारों और मेरी योजनाओके उनके अनुमोदनको यदि बहुत अधिक महत्त्व न दे तो उनको इसका पूरा-पूरा हक है। लेकिन पाठक देशके प्रति बड़ो दादाके उत्साह और उनकी निष्ठाकी सराहना किये बिना नही रह सकते। बड़ो दादा अपने इसी उत्साह और निष्ठाके कारण देशकी, राजनीतिमे आनेवाले नये-नये विचारोंसे अपना सम्पर्क बनाये रहते हैं। इधर हालमे उन्होने चरखेके बारेमे मुझे यह लिखा है:

> सिद्धान्तमें तो नहीं, परन्तु व्यवहारमें अत्यन्त अहंमन्य लोगोंका एक मूढ़ विश्वास बन जाता है कि जो काम उनको असाध्य लगता है वह असम्भव है और जो उनको साध्य लगता है वही सम्भव है। नैपोलियनके शत्रु कभी खयाल करते थे कि किसी भी सेनाके लिए शीत ऋतुमें आल्प्स पर्वत पार करना उतना ही असम्भव है, जितना गुब्बारेके सहारे चन्द्रलोककी यात्रा करना; किन्तु नैपोलियनका खयाल इससे भिन्न था। उसकी पैनी दृष्टि देख रही थी कि आल्प्सको पार करना ही इटलीमें प्रवेशका एकमात्र सम्भव साधन है।
>
> इसी तरह हमारे देशके अधिकांश लोग समझते है कि चरखा चलाना एक ऐसा सीधा-सादा काम है जिससे राजनीतिक तो दूर आर्थिक स्वतन्त्रताकी ओर भी हमारा एक कदमतक आगे बढ़ना बिलकुल असम्भव है; जबकि दूसरी ओर महात्माजी खयाल करते है कि हम जिस ध्येयकी प्राप्तिका प्रयत्न कर रहे है, उसे केवल इसी एक साधनसे प्राप्त करना सम्भव है।

बडो दादाने एक पाद-टिप्पणी देते हुए यह भी लिखा है कि शाब्दिक दृष्टिसे चरखा, चक्रका पर्याय है और लाक्षणिक दृष्टिसे घूमते हुए ससार-चक्रका। कबीरके एक भजनमे चरखेका वर्णन उसके इसी लाक्षणिक अर्थमे हुआ है। लेकिन बडो दादाके पत्रका सबसे महत्त्वपूर्ण भाग वह है जिसमे इस कठोर सत्यपर जोर दिया गया है कि सासारिक दृष्टिसे सयाने लोगोंको चरखे द्वारा देशकी वास्तविक प्रगति चाहे जितनी असम्भव जान पड़े, किन्तु उसका केवल यही एक सम्भव उपाय है। देश जो कोई अहम राजनीतिक कदम उठा सकता है, उसको यह चरखा-कार्य ही ठोस आधार प्रदान कर सकता है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १५-१-१९२५

४३८. अब्राह्मण

'क्रॉनिकल' ने बेलगाँवमे हुए अब्राह्मण सम्मेलनके बारेमे मुझसे अपनी सक्रियता या निष्क्रियताका स्पष्टीकरण करनेको कहा है। इस सम्मेलनके सम्बन्धमें कांग्रेसी नेताओंकी उपेक्षाकी शिकायतें सुनकर मुझे आश्चर्य हुआ है। अपने सम्बन्धमें तो मैं यही कह सकता हूँ कि मैं बेलगाँवमें जिस कार्यके लिए गया था उसके उचित सम्पादनको ध्यानमें रखते हुए, मुझसे जहाँतक सम्भव था, सभी सम्मेलनोंमे जानेका प्रयत्न कर रहा था। मुझे बताया गया है कि वहाँ जो अब्राह्मण सम्मेलन किया गया, वह मौलाना मुहम्मद अलीके आमन्त्रणपर नही किया गया था। वह कांग्रेस अधिवेशनकी हदमें भी नही हुआ था। जहाँतक मैं जानता हूँ, उसके सम्बन्धमे किसी कांग्रेसीसे सलाह नही ली गई थी। सम्मेलनके समय और स्थानकी जानकारी मुझे एक प्रवेश-पत्रसे मिली थी; किन्तु उस तरहके तो, न जाने, कितने प्रवेश-पत्र मेरे पास आते रहते थे। फिर भी मैं उसमें जानेके लिए उत्सुक था और यह प्रयत्न कर रहा था कि अपने दूसरे कार्यक्रमोंको निभाते हुए उसमें जा सकूँ। दुर्भाग्यसे मैं उस समय काममें लगा हुआ था, सो जब सम्मेलन चल रहा था, तब मैं उस कामको छोडकर उसमे नही जा सका। जब मेरा काम खत्म हुआ और मैंने पूछा, तब पता चला कि सम्मेलन तो खत्म हो चुका है। मैं ये बातें केवल यह दिखानेके लिए बतला रहा हूँ कि सम्मेलनके प्रति मैंने कोई अरुचि या अशिष्टता नही दिखाई। जो बात मुझपर लागू होती है वही अन्य अधिकांश नेताओंपर भी लागू होती है। मेरी रायमे सम्मेलनके संगठनकर्त्ताओंका यह कर्त्तव्य था कि वे सम्मेलनका समय मुझसे पूछकर ऐसा रखते जिससे मैं उसमें जा सकता। तब मैं दूसरे कांग्रेसी नेताओंका भी वहाँ पहुँचना सम्भव बना देता। मौलाना मुहम्मद अलीके आमन्त्रणका प्रयोजन केवल इतना नही था कि बिना कुछ सोचे-विचारे सभी अन्य सम्मेलन कांग्रेस सप्ताहके दौरान ही आयोजित किये जायें। उसका उद्देश्य तो सब पक्षोंका हार्दिक सम्मिलन था। मैं अब्राह्मण सम्मेलनके संगठनकर्त्ताओंपर दोषारोपण नही कर रहा हूँ। मैं तो केवल यह दिखानेका प्रयत्न कर रहा हूँ कि कांग्रेसी नेता यदि सम्मेलनमे जा सकते और उनको उसका मौका दिया जाता तो वे खुशीसे जाते। इन पंक्तियोंको लिखनेके बाद मैंने श्री गंगाधर रावका स्पष्टीकरण देख लिया है, इससे स्थिति और भी स्पष्ट हो जाती है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १५-१-१९२५

४३९. सदस्यताकी नई शर्त कार्यान्वित करनेकी विधि

मेरे अनुरोधपर खादी प्रतिष्ठानके श्रीयुत सतीश दासगुप्तने काग्रेस कमेटियो और कार्यकर्त्ताओंके लाभार्थ कुछ सूचनाएँ तैयार की है। मैं नीचे उनका सक्षेप दे रहा हूँ। काग्रेस कमेटियोंके लिए यह आदर्श नमूनेके तौरपर काम दे सकता है।

सदस्योंसे प्राप्त होनेवाले सूतके कोटेको एक जगह जमा करने और बाहर भेजनेके लिए ताल्लुका कमेटियों या सदस्य बनानेवाली अन्य कमेटियोको कई किताबे रखनी होंगी. (१) सदस्य सूची; (२) सूत प्राप्तिकी रसीदकी किताब; (३) सदस्योका सूतका रजिस्टर।

सदस्य सूची: नये सदस्यके लिए जब वह प्रतिज्ञा पत्रपर हस्ताक्षर कर दे, और पुराने सदस्यके लिए, जब उसका सूतका पहला कोटा प्राप्त हो जाये, तब उस सदस्यका नाम सदस्य-सूचीमे दर्ज किया जाना चाहिए।

सदस्य-सूची, १९२५

ताल्लुका　　　　जिला　　　　प्रान्त

प्राप्त सूतका कोटा

क्रम सख्या	नाम व पता	जनवरी	फरवरी	मार्च	अप्रैल	मई	जून	जुलाई	अगस्त	सितम्बर	अक्तूबर	नवम्बर	दिसम्बर
१	जे० एफ० अय्यर	क	क	क									
२.	के० आर० नाथन	ख	ख	ख									

सदस्य-सूचीवाले रजिस्टरमे सदस्यकी क्रम-सख्या और उसका नाम-पता लिखा जाना चाहिए। नामके सामने सदस्यके सूतके कोटेका प्रकार लिखा जायेगा। सदस्योका वर्गीकरण करना जरूरी है, ताकि पता चल सके कि सदस्यताकी नई शर्तका काम कैसा चलता है।

सदस्योंका वर्गीकरण: वर्ग 'क' — वे लोग जो स्वय सूत कातते है। वर्ग 'ख' — जो दूसरे साधनोसे सूत प्राप्त करते है।

रसीदें: सूत पानेवाला जिस सदस्यसे सूत प्राप्त करेगा, उसे नीचे लिखी रसीद देगा।

सूतकी रसीद

तारीख　　　　रसीद-सख्या　　　　काग्रेस कमेटी

देनेवालेका नाम:
क्रम सख्या
वर्ग
कितने तोला रुई दी गई
सूतकी गुडियाँ, सूत . . गज बताया गया है
सूतका नम्बर.

पानेवालेके हस्ताक्षर

रसीदोंकी तीन-तीन प्रतियाँ छपवानी चाहिए। पहली प्रति सूत इकट्ठा करनेवाले कार्यालयमें रखी जानी चाहिए, दूसरी प्रति ताल्लुका कार्यालयको भेजी जानी चाहिए और तीसरी प्रति सदस्यको दी जानी चाहिए। चाहे सूत सदस्योंके घर जाकर इकट्ठा किया जाये या सदस्य लोग कांग्रेस कार्यालयमें आकर सूत जमा करें, रसीद उसी फार्मपर दी जानी चाहिए। यदि बदलेमें रुई दी जाये तो रुईकी मात्रा रसीद पर दर्ज कर दी जानी चाहिए।

सूत इकट्ठा करनेवालेको प्राप्त होनेवाले सूतपर सदस्यकी सदस्यता-संख्या, और सदस्यका नाम तथा और कुछ अन्य विवरण नीचे बताये गये रूपमें एक पर्चीपर लिखकर लगाना चाहिए। पर्ची मजबूत कागजकी और दोहरी मुडी हुई हो जिसके बीचमें एक डोरा पडा हो और इस डोरेसे पर्चीको सूतके बण्डलपर बाँध दिया जाये।

पर्ची

सदस्य-संख्या	नाम		वर्ग
. गज	का० कमेटीका		
	कोटा	इकट्ठा करनेवालेका नाम	तारीख

सूत इकट्ठा करनेवाला व्यक्ति सूतको ताल्लुका कांग्रेस कमेटीके कार्यालयमें जमा कर देगा।

यह माना जाता है कि गाँवकी या ताल्लुकाके अधीन आनेवाली अन्य सभी कमेटियाँ रसीदकी किताब केवल ताल्लुका कमेटीसे प्राप्त करेंगी और सभी किताबें ताल्लुका कार्यालयमें रहेंगी। जो अधीनस्थ कमेटियाँ अन्य किताबें अपने पास रखनेको तैयार हों, वे अपना काम और सुचारु रूपसे कर सकनेकी दृष्टिसे उन्हें रख सकती हैं।

रसीदकी किताबें प्रान्तीय कार्यालय छपवायेगा और इनपर एक ही क्रममें नम्बर पड़ेंगे। प्रत्येक सदस्यके लिए प्रतिवर्ष १२ रसीदोंकी आवश्यकता होगी।

रसीदकी किताबें अर्जी देकर प्रान्तीय कांग्रेस कमेटियोंसे प्राप्त की जा सकेंगी। जो रसीदकी किताबें जारी की जायेंगी उन्हें प्रान्तीय कांग्रेस कमेटियाँ एक रजिस्टर-पर निम्न रूपमें दर्ज करेंगी

रसीदकी किताबोंका रजिस्टर

तारीख	कांग्रेस कमेटीका नाम और जिला	जिस अधिकारीको भेजी गई उसका नाम	बॉक्स न	रसीद न	
				इतनेसे	इतनेतक

सूत प्राप्त करनेवाली कमेटी इकट्ठा हुआ सूत सीधे प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीको या प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी जिस कार्यालयको कहे, उस कार्यालयको भेजेगी।

सदस्यताके कोटेके रूपमे एक बार प्राप्त हुआ सूत दुबारा उसी उद्देश्यसे इस्तेमाल नही किया जा सकता। प्रान्तीय कांग्रेस कमेटियाँ एक "दैनिक पुस्तिका" रखेंगी जिसमें वे प्राप्त होनेवाले सूत, बाहर दिये गये सूत और हाथमें बचे सूतका लेखा रखेंगी।

सूत सम्बन्धी दैनिक पुस्तिका

प्रान्त												वर्ष
तारीख	जिससे सूत प्राप्त हुआ	मात्रा			दिया गया	मात्रा			शेष			
		मन	सेर	छटाक		मन	सेर	छटाक	मन	सेर	छटाक	
५-२	हरिपुर ता०का०क० को मधुबनी ग्राम का० क० के लिए	...	१०	५								
१५-२					पी०के०बी० को बुननेके लिए		८	.	..	२	.	

मूल्यांकन

प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी हर महीने प्राप्त होनेवाले कुल सूतका मूल्याकन करेगी और उसका १० प्रतिशत अ० भा० कांग्रेस कमेटीको भेजेगी।

प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी सदस्योंकी सूचीका पूरा ब्यौरा निम्नलिखित रूपमे अ० भा० कांग्रेस कमेटीको भेजेगी·

सदस्योंका मासिक ब्यौरा

प्रान्त			माह	
जिला	कांग्रेस कमेटी	रजिस्टरपर सदस्योंकी सख्या	सूतका कोटा भेजनेवाले सदस्योंकी सख्या	
			वर्ग 'क'	वर्ग 'ख'

प्रान्तीय कॉंग्रेस कमेटी सूत भेजनेवाली प्रत्येक कांग्रेस कमेटीका हिसाब रखेगी ताकि किसी भी समय इस बातका निश्चय किया जा सके कि उस कमेटीको दी जाने वाली रुईपर जो खर्च आया उसके मुकाबले सूतकी बिक्रीसे होनेवाली आय कितनी हुई है और अब उस कमेटीको कितना पैसा देना है?

सूत प्राप्त होनेपर उसका मूल्याकन किया जाना चाहिए और पहली अवस्थामे उसे कांग्रेस कमेटीके ही जमा खातेमे दर्ज किया जाना चाहिए। समय-समयपर सूतके मूल्यमे से अ भा कांग्रेस कमेटी, प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी और जिला कांग्रेस कमेटीके

हिस्सोकी रकम तय करके उतनी रकम सम्बन्धित काग्रेस कमेटीके जमा खातेसे निकाल कर प्रान्तीय काग्रेस कमेटीके जमा खातेमे डाल दी जानी चाहिए।

प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके लिए खातेका फार्म

खाता	ताल्लुका काग्रेस कमेटी								वर्ष
तारीख	दी गई रुई	देना			तारीख	प्राप्त किया गया सूत	पावना		
१०-१	½ मन प्रति मन ४०) की दरसे	२०	-	-	५-२	१० सेर ५ तोला२) प्रति सेरकी दरसे	२०	२	-
२०-१	१ मन, प्रति मन ४०)की दरसे	४०	-	-		२० सेर २।) प्रति सेरकी दरसे	४५	-	-
१०-३	जनवरी, फरवरीऔर मार्चका कोटा	१६	४	६					

यदि ऊपर बताये गये ढगसे काग्रेस कमेटियो और अ भा काग्रेस कमेटीके सम्बन्धमें कोई हिसाब रखा जाता है तो सभी पक्षोंको सन्तुष्ट कर सकना सरल होगा। प्रान्तीय काग्रेस कमेटी रुईका वितरण करती है और सूतकी कीमत वसूल करती है और उस कीमतमे से अ भा काग्रेस कमेटी तथा अन्य कमेटियोंका हिस्सा निकालती है। यह काम बहुत जटिल है, और अगर उचित हिसाब नही रखा जाता तो इसमे विफलताकी सम्भावनाएँ बहुत है।

कताई-कार्य

जिन प्रान्तोमे स्वय कताई करनेवालोकी सख्या काफी है और खादी सम्बन्धी गतिविधि महत्त्वपूर्ण है, वहाँ सूत-सदस्यताके आधारपर सदस्योको भरती करना और मौजूदा चरखोपर कताई कराना कठिन नही होगा। लेकिन जिन प्रान्तोमे कताईका काम बहुत नही बढ पाया है, वहाँ प्रान्तीय काग्रेस कमेटीको सदस्य भरती करनेके लिए विशेष प्रबन्ध करने होगे।

अभीतक काग्रेस कमेटियाँ पैसेका ही हिसाब-किताब रखती थी, लेकिन कताई-सदस्यताकी व्यवस्था लागू होनेके बाद उन्हें सूत और खादीका हिसाब रखना होगा। काग्रेस कार्यालयमें एक सूत और खादी विभाग होगा। तौलनेके लिए तराजू और बाट तथा सूत और खादीको एक जगह रखने, पैकिंग करने, भेजने और सूत तथा खादीकी बिक्रीका भी प्रबन्ध करना होगा। किताबोका एक पूरा सेट रखना होगा। प्रत्येक काग्रेस कार्यालय आवश्यक रूपसे एक खादी-उत्पादन केन्द्र बन जायेगा।

सदस्योंको चरखा आसानीसे उपलब्ध करनेकी भी व्यवस्था करनी होगी।

प्रत्येक काग्रेस कमेटीसे सम्बद्ध प्रशिक्षण केन्द्र होना भी जरूरी होगा। कताई-विभागकी देखरेख करनेवाले कार्यकर्त्ताको रुई धुनना सीखना जरूरी है और उसे धुनकी-

का एक कुशल धुनियेकी तरह उपयोग करना आना चाहिए तथा उसे एक अच्छा सूत कातनेवाला भी होना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १५-१-१९२५

४४०. भाषण : खेडूत परिषद्में[1]

१५ जनवरी, १९२५

अध्यक्ष महोदयने जो भिक्षा[2] माँगी है, वह अगर उन्हें नहीं दी जा सकती तो मैं मानूँगा कि यह परिषद् निरर्थक रही। उनकी माँग यदि बहुत ज्यादा होती और आपके बूतेसे बाहर होती तो कुछ कहनेको नहीं रह जाता। इस परिषद्में से ४० स्वयंसेवक भी न मिले तो आप सबके लिए यह शर्मकी बात कही जायेगी। और जितनी आपके लिए उतनी ही मेरे लिए भी। कारण, पाटीदारोंके साथ मेरा निकटका सम्बन्ध रहा है — और सो यहाँ आकर जबसे मैं काममें जुटा हूँ तबसे नहीं, बल्कि दक्षिण आफ्रिकासे ही — और इस सम्बन्धका खयाल करते हुए मैं आशा रखता हूँ कि इतने लोगोंके समुदायमें से ४० स्वयंसेवक अवश्य मिलने चाहिए, और पुरुष स्वयंसेवक ही नहीं, अपितु स्वयंसेविकाएँ भी मिलनी चाहिए। इस लड़ाईमें यदि महिलाओंका हिस्सा नहीं होगा तो हमसे केवल आधा ही काम होगा। ये स्वयंसेवक वेतन लेनेवाले नहीं हों, एक तरहसे यह बात है। जो वेतनके मोहके कारण ही वेतन लेना चाहते हों, वे स्वयंसेवक नहीं हैं। लेकिन स्वयंसेवककी सेवा स्वीकार करनेवाली जनता उसके निर्वाहकी व्यवस्था करनेके लिए भी बँधी हुई है। ४० स्वयंसेवक हमारे कामके लिए पर्याप्त नहीं हैं। हिन्दुस्तानमें तो ४० लाख स्वयंसेवक चाहिए। हमने आज जो काम हाथमें ले रखा है उसके लिए पाँच-सात हजार स्वयंसेवक तो अवश्य चाहिए और इस गरीब देशमें इतने स्वयंसेवक निर्वाहके लिए कुछ भी लिये बिना काम कर सकें, यह असम्भव है। यूरोप-जैसे देशोंमें भी ऐसे स्वयंसेवक प्राप्त करना असम्भव है। ईश्वरने हमें इसलिए पैदा नहीं किया कि हम खायें और काम न करें। प्रकृतिके सर्वसामान्य नियमको हमने भंग किया है। कुछ लोग हैं जो खाते तो हैं किन्तु उसके लिए काम नहीं करते, इसीका यह परिणाम है कि कुछ तो अपने ऊपर हजारों रुपये खर्च करते हैं और दूसरी ओर हजारों लोग भूखों मरते हैं। हिन्दुस्तानके अंग्रेज इतिहासकार हंटरका कहना है कि यहाँ लगभग दस करोड़ व्यक्तियोंको मुश्किलसे एक जून ही खानेको मिलता है और वह भी रोटी तथा नमक। कांग्रेसने भी इस आशयका प्रस्ताव पास किया है कि सभी स्वसेयवक बिना पैसेके मिल जायें, ऐसी अपेक्षा न करनी चाहिए।

१. किसानोंका यह सम्मेलन सोजित्रामें हुआ था।

२. परिषद्के अध्यक्ष डा० सुमन्त मेहताने ४० स्वयंसेवकोंकी माँग की थी।

लोगोंके सामने इसका उदाहरण प्रस्तुत करनेके लिए अग्रगण्य व्यक्तियोंको पहल करनी चाहिए। यदि जरूरत जान पड़े तो मुझे भी गुजारेके लायक पैसा लेना चाहिए। वल्लभभाईको भी लेना चाहिए। वैसे मैं तो मित्रोंसे असख्य वस्तुएँ प्राप्त करता ही रहता हूँ। आज कदाचित् मुझे और वल्लभभाईको इसकी जरूरत न हो, लेकिन ऐसा समय आयेगा तो वेतन लेनेवाले स्वयसेवकोंकी भरतीमे वल्लभभाई और मैं, दोनों दाखिल होगे। तिलक महाराज और गोखलेजीके उदाहरण लें। जब फर्ग्युसन कॉलेज खुला तब दोनोंने उसमें ४० रुपयेके अल्प वेतनसे सन्तोष मानकर शिक्षाके लिए सेवा करनेकी दीक्षा ली थी। तिलक महाराजने बादमे अमुक कारणोंसे कॉलेज छोड़ दिया था, लेकिन वे जबतक वहाँ रहे तबतक उतना वेतन लेनेमें वे अपना मान समझते थे। गोखलेजीने तो २० वर्ष पूरे किये। इस बीच वे विधान परिषद्के सदस्य थे, अनेक समितियोंका कार्य करते थे, और इस सबसे भी उन्हें कुछ पैसा मिलता ही था, लेकिन फर्ग्युसन कॉलेजसे जो वेतन उन्हे मिलता था, उसे लेना उन्होंने बन्द नही किया। जब वे स्वय "महान्" बन गये और जब १०,००० रुपयेका वेतन मिल सके, ऐसी स्थिति थी, तब भी उन्होंने पहलेके ७५ रुपयेके मासिक वेतनको जितना मान प्रदान किया था उतना इन मोटी रकमोंको भी नही दिया। अपनी पेन्शनकी छोटी-सी रकम भी उन्होंने बहुत कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार की।

स्वयसेवकोंको लोकापवादकी परवाह नही करनी चाहिए। निठल्ला व्यक्ति घर घालता है, इसलिए निठल्ले लोग स्वयसेवकोंकी निन्दा करें तो इससे उन्हें घबरानेका कोई कारण नही है। स्वयसेवक निन्दाको अपनी खुराक मानें। जो जगतकी निन्दाको सहन नही कर सकता, वह स्वयसेवक नही हो सकता। उसकी चमडी तो भैंसेकी होनी चाहिए। नीचा सिर करके काम करता जाये, आगे-पीछे न देखे, केवल अपनेमें और अपने काममें ही ध्यान हो — उसे ऐसा योगी होना चाहिए। जो स्वयसेवक मानता है कि वह जनताके हाथो बिक चुका है, उसे दिन-रात अपने कामके ही सपने आने चाहिए, लेकिन आजीविका-भरको — अर्थात् खीर-पूरीके लायक नही बल्कि ज्वार-बाजराके लायक — लेनेमे उसे सकोच न करना चाहिए। ऐसे कसे हुए स्वयसेवकोंको ही इसमे आना चाहिए और अध्यक्ष महोदयको निश्चिन्त कर देना चाहिए। अध्यक्ष महोदयको यही इसी काममें बाँध रखना चाहते हो तो सामने आइये! इतने कमसे सन्तोष माननेवाला अध्यक्ष आपको दूसरा शायद ही मिले।

हिन्दुस्तानमे आज जो सबसे बडी और प्रौढ़ प्रवृत्ति चल रही है, उसके सम्बन्धमें तो मुझे आपसे कुछ कहना ही होगा। यह प्रवृत्ति है खादीकी, चरखेकी। जैसे-जैसे चरखेका विरोध किया जाता है वैसे-वैसे उसके प्रति मेरा विश्वास और भी दृढ़ होता जाता है। इसका अर्थ यह नही कीजिएगा कि मैं मूर्ख और जिद्दी हूँ और न समझनेपर भी एक वस्तुके पीछे लगा हुआ हूँ। मैं जिस वस्तुकी बात कर रहा हूँ वह वस्तु तो मैंने हिन्दुस्तानके आगे सिर्फ चार-पाँच वर्ष पहले ही रखी थी, लेकिन

चरखेके पक्षमे दलील तो मैंने इससे बहुत पहले, जब उसके दर्शन भी न किये थे, तभी 'हिन्द-स्वराज्य' मे पेश की थी। और जैसे-जैसे इसका विरोध होता है, वैसे-वैसे मैं देखता हूँ कि इस विरोधके पीछे अनुभव और विचार नही है और मेरी दलीलोमें गहरा विचार और अनुभव है। मैं अपनेको सीधा व्यक्ति मानता हूँ। भूल स्वीकार करना मै अपना धर्म समझता हूँ, मलिनता मुझे पसन्द नहीं। शरीरमे, मनमे, हृदयमे मैल रखना रोग है, इसलिए भूल स्वीकार न करना भी रोग है। जो मनुष्य ईश्वरके आगे भूल स्वीकार नही करता — यद्यपि ईश्वर तो सब-कुछ देखनेवाला है, लेकिन साथ ही वह बड़ा कौतुकी भी है और मनुष्यको भुलावेमे डालनेवाला है — जो व्यक्ति ईश्वरके आगे अर्थात् जगतके आगे अपनी भूल स्वीकार नही करता, उसे क्षयरोग हो जाता है, उसका आध्यात्मिक क्षय होता है। यह क्षय शारीरिक क्षयकी अपेक्षा अधिक हानिकारक है। शारीरिक क्षयमे केवल शरीरका नाश है, लेकिन इसमे तो आत्माका नाश है। आत्मा तो अमर है, अक्षय है, इसलिए उसका नाश नही होता, पर नाशकी भ्रान्ति होती है। इसलिए अमर आत्माके नाशकी कल्पनामे दुहरा रोग होता है। अतएव मुझसे भूल हो तो उसे स्वीकार करनेमे मुझे तनिक भी संकोच नही होता। बादमे मेरे भूल स्वीकार करनेके फलस्वरूप सारे चरखे बन्द हो जाये और मैं पागल माना जाऊँ तो कोई बात नही; लेकिन मैं जानता हूँ कि अभी ऐसा समय नही आया है। मुझे चरखेमे इतना अधिक विश्वास है कि मेरी स्त्री, मेरे लड़के और जो मेरे लिए मेरे लड़कोसे भी बढ़कर है, ऐसे साथी अगर चरखेको छोड़ दे तो भी मैं अकेला इसका मत्र जपा करूँगा और उसे चलाता चला जाऊँगा। हिन्दुस्तानमे आलस्य-का महारोग है। यह स्वाभाविक नही है। किसानोके लिए तो यह स्वाभाविक हो ही नही सकता; यदि हो तो उनकी खेती बरबाद हो जाय। हमारे यहाँ चरखेका नाश हुआ, इसीसे आलस्य आया। करोड़ों लोग बेरोजगार हो गये। अब, कोई छोटी-मोटी चीज करोड़ोके लिए धन्धा नही बन सकती। कोई कहता है, हम टोकरियाँ बनायेंगे, कोई कहता है, ताले बनायेगे, कोई दियासलाई तो कोई साबुन। इन कामोमे करोड़ोका उपयोग नही हो सकता और अगर वे सब इनमे भी लग जाये तो इन सारी चीजोकी खपत नही हो सकती। इस तरहसे काम करनेसे सारी जनता एक नही हो सकती, वह अलग-अलग व्यक्तियोंके समूहमे बँटकर ही रह जायेगी। ऐसे काममे उद्धार नहीं है। इसीसे मैं कहता हूँ कि हिन्दुस्तानमे सहायक धन्धेकी आवश्यकता है। खेड़ामें बहुत थोड़े-से गाँव होंगे, जहाँ मैं गया न होऊँ और थोड़े ही लोग होगे जिन्हे मैंने देखा नही होगा। इनमे से बहुत-से लोगोके पास काफी समय रहता है। इस समयका उपयोग करनेका साधन चरखा है, ऐसा कहूँ तो यह बात सबको पसन्द नही आती। परिणामतः कुछ लोग चोरी करते है, कुछ ऋण लेते है, तो कुछ भूखो मरते है। ऐसी दयनीय स्थितिमे पड़ी हुई — मजबूरन आलसी हो गई — जनताका नाश ही सम्भव है। यदि वह स्वयं जागृत नही होती और दूसरोको जागृत नही

करती तो नाश ही होगा। यह समाज-शास्त्रका नियम है। व्यक्तिगत शास्त्रका नहीं, यह समाज-शास्त्रका नियम है। करोडो इससे आजीविका प्राप्त नही कर सकते और न इसे आजीविकाके साधनके रूपमें पेश ही किया गया है। उसका वर्णन तो अन्नपूर्णाके रूपमें किया गया है। अन्नपूर्णा अर्थात् घी-दूध। असंख्य गरीबोंको आज घी-दूध नही मिल सकता। गेहूँकी लपसीमें दूधकी बूँद अथवा घीका छींटा भी डालनेको नही मिल सकता। यह भयानक स्थिति है। इसका एक ही इलाज है — चरखा। यदि एक-एक व्यक्ति एक-एक रुपयेका काम करे तो वह मालूम नही होगा, परन्तु यदि सात हजारकी आबादी वाला गाँव इस तरहसे सात हजार रुपया पैदा करे तो वह देखा जा सकता है। इस चरखेको साधनेसे दूसरे अनेक गुण खुद-ब-खुद आ जाते है। इसके साथ सादगी आती है, सरलता आती है, नियमितता आती है और एक बातमे नियमितता आ जानेका मतलब है सारे जीवनमे नियमितता आ जाना — ठीक उसी तरह जिस तरह टेढे हो गये चौखटेका जो एक कोना खराब हो गया हो उसे ठीक कर देनेसे बाकीके सारे कोने खुद-ब-खुद ठीक हो जाते है। यह भूमितिका नियम है। एक कामके नियमित होनेसे सब काम नियमित हो जाते है। आज यदि आप चरखेको स्वीकार न करेगे तो कल मुझे याद करेगे। जब पानी थोडा बरसता हो, तभी बाँध बाँधकर उसे इकट्ठा कर लीजिए। जब प्रवाह आता है, तब बाँध बाँधनेवाला उसे नही रोक सकता तथा बाँध और पानी दोनोको खो बैठता है। इसलिए आज, जबकि समय है, मैं आपसे कहता हूँ कि आप चेते, जागे। बनिये-का हिसाब न करे, चरखेसे आपमें से एक व्यक्तिको कितनी आमदनी होती है, उसपर विचार न कर राष्ट्रको कितनी आय होगी, इसका विचार करे। त्रापज-जैसे छोटे गाँवमे जब लोगोको हिसाब करके बताया, तब वे चकित रह गये। काठिया-वाड उपजाऊ नही है। उसमें तो लकडीकी फसल — पत्थरकी फसल — पकती है, और जमीनके उर्वर न होनेसे लोग छ महीने तो क्या, आठ महीने बरोठेपर बैठकर गप्पें मारते है, और न हुआ तो थोडी अफीम ही खा लेते है। मैंने त्रापजके लोगोको समझाया कि वे किस तरहसे आसानीसे दो हजार बचा सकते है। एक सेर रुईके पीछे ज्यादा खर्च तो कताईका ही है, बुनाईका नही। अपने घरकी रुई आप घरमे ही साफ करे और काते तो केवल बुनाईका ही खर्च पडे तथा यदि केवल बुनाईका ही खर्च पडता हो तो हम दुनियाकी मिलोके साथ प्रतिस्पर्धा कर सकते है। कारण कि बुननेका खर्च तो मिलोको भी लगभग हाथ-करघे-जितना ही पड जाता है। इस चाबीका महत्त्व हिन्दुस्तानकी जनता समझती थी, इसलिए उसने चूल्हेकी भांति चरखेको भी साध रखा था। यह चाबी उसके हाथसे गई, और बस हमारा जीवन अपवित्र हो गया, हम नास्तिक हो गये, हमें ईश्वरका भय नही रहा। आप आस्तिक बनना चाहते हो, पवित्र होना चाहते हो, अपनी बहनोंके शीलकी रक्षा करना चाहते हो तो चरखेको अंगीकार करे। चरखेमे ही देशकी जागृति है, हिन्दू-मुस्लिम एकता है,

देशकी गरीबीका निराकरण है, सारे देशके किसानोंका उद्धार है, और हिन्दू समाज-शास्त्रके पालनका आधार भी इसीपर है।

आप पाटीदार लोग अन्त्यजोंके साथ अच्छी तरहसे व्यवहार नही करते, ऐसा मैंने सुना है। आप अपनेको क्षत्रिय मानते हो तो आप अन्त्यजोंके साथ जबरदस्ती नही कर सकते, उन्हे मार-पीट नही सकते, ज्यादा काम लेना और कम दाम देना, ऐसा राक्षसी न्याय नही कर सकते। 'गीता' देवताओंको सन्तुष्ट रखनेको कहती है, "देवताओंको सन्तुष्ट रखोगे तो देवता वर्षा देंगे।" देवता आकाशमें नही हैं। आपके देवता अन्त्यज हैं, आपके देवता आपके पौनी-पसारी हैं। हिन्दुस्तानका देवता हिन्दुस्तानकी गरीब जनता है। दया-धर्मसे विहीन धर्म पाखण्ड है। दया ही धर्मका मूल है और उसका त्याग करनेवाला ईश्वरका त्याग करता है, रंकका त्याग करनेवाला सबका त्याग करता है। अन्त्यजो और रंकोको यदि हम स्थान न देंगे तो हमारा नाश निश्चित है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १-२-१९२५

परिशिष्ट

परिशिष्ट १

बोलशेविज्मपर मानवेन्द्रनाथ रायके विचार

महात्मा गांधीके कुछ अमेरिकी मित्रोंने उन्हें लिखा कि धर्मके नामपर आप भारतमें शायद बोलशेविज्मको दाखिल कर रहे हैं। ये ख्वामखाह "मित्र" बननेवाले लोग, स्पष्ट ही आंग्ल-सैक्सन साम्राज्यवादके पक्षधरोंसे (जो अकसर दुनियाके सामने अपने को शान्तिवादियोंके बानेमें पेश करते हैं) प्रेरणा लेकर, मुसलमान जातियोंके विद्रोहको विश्वके लिए एक भारी खतरा बताते हैं, क्योंकि इस विद्रोहको बोलशेविक रूसका समर्थन प्राप्त है। महात्माजी चाहते तो बड़ी आसानीसे इस उद्धततापूर्ण पत्रका मुनासिब जवाब दे सकते थे। वे अपने "जिम्मेदार (?) विदेशी मित्रों" से कह सकते थे कि मुसलमान जातियोंके पास विद्रोह करनेके उचित कारण हैं, और इस विद्रोहका समर्थन करनेवाला कोई भी राजनीतिक सिद्धान्त या सरकार स्वतन्त्रताके तमाम पक्षधरोंकी दृष्टिमें सम्मानकी पात्र होनी चाहिए। इसके अलावा वे अपने अमेरिकी मित्रोंसे यह भी कह सकते हैं कि अगर सचमुच आपको इस विद्रोहमें विश्वके लिए कोई बहुत बड़ा खतरा दिखाई देता है तो कृपा कर अपने यहाँ उसका कुछ उपाय करिये। दुनियाको आज अमेरिकी साम्राज्यवादसे ज्यादा खतरा और किस चीजसे है? क्या मुसलमान जातियोंका विद्रोह 'कू-क्लक्स-क्लान'[1] और 'अमेरिकन लीजन' से भी ज्यादा खतरनाक है? क्या बोलशेविकोंका अनीश्वरवाद अमेरिकी लोकतन्त्रकी एशिया-विरोधी भावनासे भी अधिक अधर्ममय है?

किन्तु, महात्माजीने ऐसा दो टूक जवाब नहीं दिया। उन्होंने अपने दृष्टिकोणका औचित्य सिद्ध करना उचित समझा। कोई उनपर बोलशेविक प्रवृत्तिका सन्देह न कर सके, उन्होंने इसकी पेशबन्दी कर डाली। किन्तु, विचित्र बात यह है कि यद्यपि स्वयं अपने कथनके अनुसार वे बोलशेविज्मके विषयमें कुछ नहीं जानते, फिर भी वे दुनियाके सामने यह सिद्ध करनेके लिए अत्यन्त उत्सुक थे कि इसके प्रति उनका कोई रुझान नहीं है। उनकी सहज बोलशेविज्म-विरोधी भावना इतनी प्रबल है। 'यंग इंडिया' में अपने एक लेखमें वे कहते हैं कि "सबसे पहले तो मैं यह स्वीकार करता हूँ कि मुझे पता नहीं, बोलशेविज्मके मानी क्या हैं।" यह तो उनकी प्रतिष्ठाको बहुत आँच पहुँचानेवाली स्वीकारोक्ति है, क्योंकि यह स्वीकारोक्ति उस व्यक्तिकी है जो एक बहुत बड़े जन-आन्दोलनका नेतृत्व कर रहा है। उसी लेखमें महात्माजीने यह भी कहा कि वे जानते हैं कि इस मामलेमें दो परस्पर-विरोधी पक्ष हैं—"एक तो उसका बड़ा भद्दा और

१. गृह-युद्धके बाद स्थापित संयुक्त राज्य अमेरिकाके दक्षिणी राज्योंकी नीग्रो-विरोधी गुप्त समिति।

काला चित्र खीचा करता है और दूसरा उसे ससारकी तमाम दलित-पतित और पीडित जातियोंके उद्धारका आन्दोलन बताता है।" लेकिन वे यह नही जानते कि वे किसकी बातका विश्वास करे। यहाँ भी वे साधारण मानव-बुद्धिसे काम ले सकते थे। वे बडी आसानीसे यह बात देख सकते थे कि वे कौन है जो उसका काला और भद्दा चित्र खीचते है। ये वे ही लोग है जो खून और खंजरकी नीतिके बलपर दुनियापर शासन कर रहे है। महात्माजीको अपनी निष्पक्षताका बडा ध्यान रहता है, सो उसका ध्यान रखते हुए भले ही वे बोलशेविज्मका उज्ज्वल चित्र पेश करनेवालोंपर विश्वास न करें, किन्तु उन्हे इस बातकी प्रतीति करानेकी भी क्या कोई आवश्यकता है कि पहला पक्ष मानव-जातिका मित्र या उद्धारकर्त्ता नही है? इसलिए, जब इस पक्षवाले किसी चीजका बहुत काला चित्र पेश करते है तो मानव-जातिके दलित-शोषित वर्गको सहज ही उसमे किसी घोर अनिष्टकारी उद्देश्यका आभास मिल जाता है, इस दलित मानव-वर्गको लगता है कि यह कालेपनका मुलम्मा उसे छलनेके लिए लगाया गया है। युद्ध-कालमे जब रायटर मित्र-राष्ट्रोंकी एक विजयकी खबर देता था तब राष्ट्रवादी भारतीय लोग अन्तरकी इसी अचूक सहज प्रेरणाके कारण समझते थे कि जर्मनीने दो लड़ाइयाँ जीती होगी और इसी सहज बुद्धिकी प्रेरणाका अनुसरण करते हुए एक अदना मैक्सिकन चपरासी अपनेको गर्वके साथ बोलशेविक कहता है, क्योंकि वह देखता है कि अमेरिकी पूंजीपति बोलशेविज्मके इतने ज्यादा विरुद्ध है। लेकिन मै समझता हूँ, महात्माओंकी मनोवृत्ति शायद इतनी जटिल होती है कि उसमे ऐसी किसी सीधी-सादी और सहज मानसिक प्रक्रियाकी गुजाइश ही नही होती।

चूंकि बोलशेविज्मके प्रति इस दु:खद अज्ञानके शिकार सिर्फ महात्माजी ही नही, बल्कि और भी बहुतसे भारतीय है, और चूंकि इस अज्ञानके बावजूद वे उसके विषयमे कोई राय बनानेसे बाज नही आते, इसलिए इस भयंकर सिद्धान्तके बारेमे दो शब्द कह देना अप्रासगिक नही होगा। चूंकि बोलशेविज्म आजकी दुनियाका सबसे प्रमुख राजनीतिक तत्त्व है, इसलिए इसके सम्बन्धमे कुछ कहना और भी जरूरी हो जाता है। यहाँ प्रसंगवश मै यह बता दूं कि इस आम धारणाके विपरीत कि वह १९१७की रूसी क्रान्तिका परिणाम है, वास्तवमे वह उसका बुनियादी सिद्धान्त है। जिस प्रकार १७८९ की महान् फ्रासीसी क्रान्तिने अपने समयमे यूरोपके राजनीतिक-जीवन और विचारको प्रभावित किया, उसी प्रकार रूसी क्रान्ति भी हमारे युगमे वैसी ही महत्वपूर्ण भूमिका निभायेगी। फर्क सिर्फ इतना है कि रूसकी भौगोलिक स्थिति ऐसी है और रूसी क्रातिके सिद्धान्त ऐसे है कि उसका प्रभाव-क्षेत्र अधिक व्यापक होगा — उसमे एशिया और आफ्रिका भी आ जायेगे। वस्तुस्थिति यही है। शान्तिवादी मनोवृत्तिकी जिन स्त्रियों और पुरुषोंकी सदाशयतामे गाधीजी सहज ही विश्वास करके चलते है, उसे दुनियाके अधिक व्यावहारिक लोग गम्भीर सन्देहकी दृष्टिसे देखते है। इन शान्तिवादियोंकी आशकासे, जिसका कारण भली-भाँति समझा जा सकता है, और उनकी रोष-भावनासे उपरोक्त वस्तुस्थितिमे कोई अन्तर नही पडता।

अब, जहाँतक महात्माजीका सम्बन्ध है, बोलशेविज्मके मुख्य सिद्धान्त कुछ नये नही होंगे। वे खुद भी ऐसा ही मानेंगे। लेकिन अगर सिद्धान्तोको कार्यान्वित न किया जाये

तो वे निष्प्राण शब्द-भर रह जाते हैं। महात्माजीने खुद कहा है कि वे जनसाधारणको पूँजीवादके प्रभुत्वसे मुक्त देखना चाहते हैं। स्वय बोलशेविज्म इससे कोई अधिक भयकर लक्ष्य लेकर कहाँ चल रहा है? बोलशेविक लोग भी महात्माजीके इस कथनसे सामान्यत सहमत है कि "दुनियाका सबसे बडा सकट तो आज वह साम्राज्यवाद है, जो दिनपर-दिन अपने पैर फैलाता जाता है, दुनियाको लूटता जाता है, जो किसीके प्रति जिम्मेवार नही है, और जो . तमाम निर्बल जातियोके स्वतन्त्र अस्तित्व और विकासके लिए खतरा उपस्थित कर रहा है।" लेकिन महात्माजी और बोलशेविकोके बीच अन्तर यह है कि जहाँ महात्माजी स्वतन्त्रताके इस सिद्धान्तको नैतिकता, धर्म और ईश्वरकी जटिल कल्पनाके सामने गौण बनाकर उसे समस्त व्यावहारिक महत्त्वसे वंचित कर देते हैं, वहाँ बोलशेविक लोग अपनी दृष्टिपर इस प्रकारके भ्रमोका पर्दा नही चढने देते और दुनिया जैसी है, उसके साथ वैसा ही बरतते है। नतीजा यह है कि जहाँ बोलशेविज्म इन साम्राज्यवादी शक्तियोके सयुक्त और दृढ विरोधके बावजूद अपना रास्ता बनाते हुए आगे बढ़ता है और युगो पुरानी दासताकी फौलादी बेडियोकी कडियाँ एकके बाद एक तोडता जाता है, वहाँ गाधीवाद अन्धेरेमे हाथ-पाँव मार रहा है और ऐसे नैतिक तथा धार्मिक विधानोकी सृष्टि करता जा रहा है, जो जन साधारणकी अपनी स्वतन्त्रताके लिए लडनेकी सकल्प-शक्तिके सिर्फ आडे ही आते हैं।

इतना तो माना ही जा सकता है कि महात्माजी समाजवादके सामान्य सिद्धान्तोसे परिचित हैं। यहाँ मेरा मतलब सेंट साइमन, टामस मूर, टाल्स्टाय, आदिके अव्यवहार्य समाजवादके सिद्धान्तोसे नही, बल्कि कार्ल मार्क्स और फ्रेडरिक एगेल्स द्वारा वस्तुस्थितिकी वास्तविक जानकारी और आर्थिक तथ्योके आधारपर रचे समाजवादके सिद्धान्तोसे है। ये सिद्धान्त इस प्रकार है (१) उत्पादनकी पूँजीवादी प्रणालीका उच्छेद, (२) वैयक्तिक सम्पत्तिकी समाप्ति, (३) सामाजिक स्वामित्वके आधारपर उत्पादन और वितरणके साधनोका पुनर्गठन, और (४) वर्गोमे विभाजित समाजका बन्धुत्वकी भावनासे युक्त मानव-परिवारमे रूपान्तर। यही सब सिद्धान्त बोलशेविज्मके भी हैं, क्योकि समाजवादकी उग्र और विजयगामी प्रारम्भिक अवस्थाका नाम ही बोलशेविज्म है।

'बोलशेविज्म' शब्दको रक्तपात, विनाश, आतक आदिके साथ जोड दिया गया है, लेकिन उसका असली अर्थ बिलकुल निर्दोष है। बोलशेविज्म रूसी शब्द 'बोलशेविकी' से बना है और बोलशेविकीका अर्थ है बहुसख्यक पक्षके अनुगामी। इस शब्दका प्रयोग पहले-पहल तब हुआ था, जब सन् १९०३ मे कार्यक्रम और कार्य-प्रणालीके सवालपर रूसकी सोशलिस्ट डेमोक्रेटिक लेबर पार्टी दो टुकडोमे बँट गई थी। लेनिन और कुछ दूसरे लोगोके नेतृत्वमे चलनेवाले बहुसख्यक दलके कार्यक्रम और कार्य-प्रणालीका नाम बोलशेविज्म पड गया। और चूँकि रूसके सर्वहारा वर्गने अक्तूबर, १९१७ मे जो विजय प्राप्त की, वह उसी कार्यक्रम और कार्य-प्रणालीके अनुसार लडकर प्राप्त की जिसकी वकालत बहुसख्यक दल १९०३ से ही करता आ रहा था, इसलिए अक्तूबर क्रान्तिको बोलशेविस्ट विजय कहा जाता है। यह बोलशेविस्ट विजय समाजवादकी पहली विजय है। अब हम देखे कि रूसी क्रान्तिके ठोस परिणाम क्या है· (१) एक भ्रष्ट, गैरजिम्मे-

दार और निरकुश शासनका अन्त हो गया। (२) उस बुर्जुआ वर्गका भी सफाया हो गया जो जनतन्त्रकी आडमे, विदेशी सरकारोंकी मददसे, रूसी जनताको क्रान्तिके लाभो-से वचित करना चाहता था। (३) जमीदार वर्ग, जो जारकी निरकुश सत्ताका मूला-धार था, नष्ट कर दिया गया और जमीन पूरे राष्ट्रकी सम्पत्ति घोपित कर दी गई और किसानोंमे बाँट दी गई। (४) बडे-बडे उद्योग राष्ट्रकी सम्पत्ति घोषित कर दिये गये। (५) विदेशी व्यापारपर राज्यका एकाधिकार हो गया। (६) विधान बनाने और प्रशासन चलानेकी सारी सत्ता जनताके उस हिस्सेको सौप दी गई जिसका प्रबल बहुमत था, अर्थात् सत्ता मजदूरो, किसानो और सैनिकोको सौप दी गई। वे इस सत्ताका प्रयोग अपनी परिषदो (सोवियतो) द्वारा करते है। (७) निजी तौरपर सम्पत्ति रखनेका सारा अधिकार और उसकी रूसे मिलनेवाले सब विशेषाधिकार खत्म कर दिये गये। ये है बोलशविज्मके सिद्धान्त, जिन्हे रूसमे क्रान्तिके फलस्वरूप व्यवहारमे उतारा गया है। तो अब चूकि महात्माजी बोलशेविज्मका अर्थ जान गये इसलिए हम यह जानना चाहेगे कि उसके प्रति उनका क्या रुख है। इस प्रश्नके उत्तरमे न सिर्फ भारतको बल्कि सारी दुनियाको दिलचस्पी होगी।

अब हम ज्यादा नाजुक सवालपर आते है। महात्माजीको शायद इन सिद्धान्तोके खिलाफ कोई आपत्ति न हो, लेकिन उन्हे कार्यान्वित करनेकी रीतिके बारेमे वे निश्चय ही अनेक शर्ते रखेगे। उनके लिए तो हर चीजकी एक ही कसौटी है। अगर बोलशेविज्म अनीश्वरवादी है, तो बस, वे उसके खिलाफ है। खैर, हमने तो उन्हे सक्षेपमे बोलशेविज्मकी परिभाषा दे दी है। अब वे विचार करे और कहे कि बोलशेविज्म ईश्वरको नकारता है या क्या करता है। जबतक वे वैयक्तिक सम्पत्ति और निहित स्वार्थोको ईश्वरीय विधान न मान ले, तबतक उनके उन्मूलनको वे ईश्वरको नकारना नही कह सकते। कारण, इसमे शक नही कि बोलशेविज्म वैयक्तिक सम्पत्ति और स्थापित स्वार्थोको, जो इतिहासके आदिकालसे ही मनुष्य-समाजके लिए अभिशाप-रूप सिद्ध हुए है, अमान्य करता है। बोलशेविज्मके व्यावहारिक कार्यक्रममे ईश्वर या धर्मका कोई सवाल ही नही उठता। वह न ईश्वरवादी है और न अनीश्वरवादी है। उसका सम्बन्ध मनुष्यके ऐहिक जीवनसे है। ईश्वर या धर्मके साथ उसका झगडा यदि होता है तो तब होता है, जब ईश्वर और धर्म उसके आडे आते है। ऐसी हालतमे, साम्यवाद कल्पित सर्वशक्तिमान-से भी टक्कर लेनेमे नही हिचकिचाता और नास्तिक बन जाता है और इस तरह वह महात्मा गाधीके समर्थनको खो बैठनेका खतरा मोल लेता है। लेकिन ऐसा करके वह न केवल जनताके भौतिक अधिकारोंका प्रबलतम समर्थक बन जाता है बल्कि शासित वर्गने सदियोसे जनताको जिस अज्ञान और अन्धविश्वासके अन्धकारमे रख छोडा है, उसे नष्ट करनेके लिए बौद्धिक और आत्मिक मुक्तिकी मशालको भी प्रज्वलित करता है।

महात्माजी यदि खुले तौरपर उच्च वर्गोका समर्थन नही करते हो तो वे इस बातसे इनकार नही कर सकते कि बोलशेविज्म एक मानव कल्याणकारी आन्दोलन है। लेकिन हाँ उसे सरलतापूर्वक कार्यान्वित नही किया जा सकता। रूसमे क्रान्तिके

वाद निर्विवाद रूपमे जो आतकका साम्राज्य रहा और विनाशकारी गृहयुद्ध छिडा उसका मूल कारण यह था कि इस कार्यक्रमको कार्यान्वित करनेमे बहुत ज्यादा बाधा उपस्थित की गई थी और हिंसा बरती गई थी। न केवल रूसी अभिजात वर्ग और बुर्जुआ वर्गने, जिन्होने स्वभावत अपनी खोई हुई स्थितिको पुन प्राप्त करनेकी भरसक चेष्टा की, बाधा उपस्थित की वरन् उसे अन्तर्राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्गका समर्थन भी प्राप्त था, जिसे रूसी क्रान्तिके रूपमें अपने गढकी दीवारोमे दरार पडनेके प्रथम चिह्न दिखाई पडने लगे थे। इस अनवरत विरोधी कार्रवाई और प्रचारका एक अग था—बोल्शेविज्मको बहुत ही डरावने रूपमें चित्रित करना, और इस चित्रके प्रभावसे महात्माजी भी बिलकुल अछूते नही रह पाये। किन्तु सवाल यह है कि उस परिस्थितिमे बोल्शेविक लोग करते क्या? दो ही रास्ते थे—या तो रूसी श्रमिको और किसानोमे ईश्वरका भय रखते हुए चुपचाप फिर उन्ही बेडियोमें जकड जानेको कहा जाता, जिन्हे उन्होने इतनी बहादुरीसे तोड डाला था, या फिर प्राप्त स्वतन्त्रताकी रक्षा करने और उसे स्थायी बनानेके लिए, ईश्वर और धर्म बाधक बने तो उनके खिलाफ भी, लडाई जारी रखने-को कहा जाता। बोलशेविज्मको दूसरा विकल्प स्वीकार करना पडा, क्योकि रूसी मजदूरो और किसानोंको फिरसे पूँजीवाद और अत्याचारी जारशाहीके अधीन होनेको मजबूर करनेके लिए न केवल सभी भौतिक शक्तियाँ एकजुट हो गई थी, बल्कि ईश्वर और धर्मकी भी तमाम ताकते मोर्चेपर लगा दी गई थी। बोलशेविज्म कोई ईश्वरसे सम्बन्धित सिद्धान्त नही है। बोलशेविक लोग फरिश्ते नही है। किन्तु साथ ही बोलशेविज्मका मतलब शैतानी प्रवृत्ति भी नही है। महात्माजी "जनसाधारणके हृदयको झकझोरकर, उसकी उच्चतर वृत्तियोको जगाकर उसे अपनी बात समझाना चाहते है। यह योजना तो बहुत आकर्षक है और अगर यह जनसाधारणको वर्ग प्रभुत्व और साम्राज्यवादी अत्याचारसे मुक्त करानेमे व्यवहारत कामके लायक साबित हुई होती तो बोलशेविज्मको इसपर कोई आपत्ति नही होती। उनका "सयम-विषयक सिद्धान्त भी बहुत शकास्पद है। जनसाधारणके आध्यात्मिक विकासके लिए यह अच्छी चीज हो सकती है, लेकिन निश्चय ही इसमे अपनी स्वतन्त्रताके लिए लडनेका जनताका मनोबल कमजोर होता है। जो लोग (शायद अनजाने ही) वर्ग-प्रभुत्वके साधन सदृश रहे है, वे न जाने कबसे "हृदय", "उच्चतर वृत्तियो", "सयम" आदिसे सम्बन्धित इन तमाम सिद्धान्तोंकी चर्चा करते आये है। कोई कर्त्तव्य चाहे कितना भी अप्रिय या कठिन हो, बोलशेविज्म उससे जी नही चुराता। यह ईश्वरके अस्तित्वको इसलिए अस्वीकार करता है और तज्जनित धार्मिक तथा नैतिक विधानोकी भर्त्सना इसलिए करता है कि स्वातन्त्र्य सग्राममें ईश्वर, धर्म और नैतिकताके सिद्धान्त निर-कुशता, दमन और अन्यायके दलमे खडे दिखाई देते है।

अगर ईश्वर और धरतीपर ईश्वरकी ध्वजा फहरानेवाले लोग भौतिक मामलोमे हस्तक्षेप न करनेको राजी हो जाये तो बोल्शेविज्म ईश्वरको अपनी जगहपर बने रहने देनेको तैयार है। लेकिन, अगर उन्हे अपनी लोकोत्तर स्थितिमे सन्तुष्ट रहना मजूर नही है और वे दुनियामें सकट और कठिनाई पैदा करना चाहते है तो बोल्शेविज्म

जनसाधारणको धर्म द्वारा बुने अज्ञानके जालसे मुक्त करनेके लिए नास्तिकताका प्रचार अवश्य करेगा।

मानवेन्द्रनाथ राय

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १-१-१९२५

परिशिष्ट २

चरखेके सम्बन्धमें च० राजगोपालाचारीकी टिप्पणीका अंश

. . अपरिवर्तनवादियोंको, जिन्हें लगता है कि देशकी मुक्तिका मार्ग, हमारी आशाका स्थायी आधार, चरखा ही है, इधर-उधरकी कोई चिन्ता किये बिना निष्ठापूर्वक अपना दायित्व निभाते चलना चाहिए। हमारे लिए न विश्रामका अवकाश है और न थककर बैठ जानेकी गुंजाइश। चरखा ही हमारी आशा है, हमारा आनन्द है, हमारा मित्र और नेक रहनुमा है। जागते हुए हमें इसीके लिए काम करते रहना चाहिए, सोते हुए इसीका स्वप्न देखना चाहिए। पहले मुझे इन बातोंका मतलब पूरी तरहसे समझमें नहीं आया था। इसलिए मैं ऐसा समझता था कि महात्माजी ऐसी राह जा रहे हैं, जिसमें मुझे न कोई औचित्य दिखाई पड़ता था, न रोशनी। लेकिन, अब मैं चीजोंको बिलकुल स्पष्ट देख रहा हूँ और आशा करता हूँ कि जो लोग मेरी ही तरह अबतक शंकाग्रस्त और दिग्भ्रमित रहे हैं वे भी इन चीजोंको साफ-साफ देखेंगे। कातो, कातो, कातो और दूसरोंसे भी कतवाओ — यही हमारा एक-मात्र मंत्र है, यही हमारा गायत्री-जाप है।

किन्तु, जहाँ मुझे वस्तुस्थितिका सही भान हुआ, वहाँ यह भी लगा कि इस सबमें एक प्रकारकी अवास्तविकता भी है, सत्यके साथ किसी प्रकारका कोई राजनीतिक खेल खेला जा रहा है, जो सत्याग्रहकी योजनापर अपनी अशुभ काली छाया डाल रहा है। लेकिन, यहाँ मैं उस गुरुकी निर्णयबुद्धिपर निर्भर करता हूँ, जिसका सहज सत्यबोध मेरे सत्यबोधसे न जाने कितना बढ़-चढ़कर है। अतः मैं पूर्णतः निश्चिन्त हूँ।

राजगोपालाचारी

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १५-१-१९२५

सामग्रीके साधन-सूत्र

गांधी स्मारक संग्रहालय, नई दिल्ली गांधी साहित्य और सम्बन्धित कागजातका केन्द्रीय संग्रहालय तथा पुस्तकालय। देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३४९।

साबरमती संग्रहालय पुस्तकालय तथा आलेख संग्रहालय जहाँ गांधीजीके दक्षिण आफ्रिकी काल और १९३३ तकके भारतीय कालसे सम्बन्धित कागजात सुरक्षित हैं, देखिए खण्ड, १, पृष्ठ ३४९।

'अमृतबाजार पत्रिका', कलकत्तासे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'आज', बनारससे प्रकाशित हिन्दी दैनिक।

'इंडियन रिव्यू', मद्राससे प्रकाशित अंग्रेजी मासिक।'

'गुणसुन्दरी' गुजराती मासिक।

'ट्रिब्यून', लाहौरसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक। १९४८ से यह पत्र अम्बालासे प्रकाशित होने लगा है।

'नवजीवन' (१९१९-१९३२) गांधीजी द्वारा सम्पादित और अहमदाबादसे प्रकाशित गुजराती साप्ताहिक।

'न्यू इंडिया, मद्राससे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'बॉम्बे क्रॉनिकल' बम्बईसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'यंग इंडिया' (१९१९–१९३२) अहमदाबादसे प्रकाशित अंग्रेजी साप्ताहिक।

'हिन्दी नवजीवन' (१९२१–१९३२) गांधीजी द्वारा सम्पादित और अहमदाबादसे प्रकाशित हिन्दी साप्ताहिक।

'हिन्दुस्तान टाइम्स' नई दिल्लीसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'हिन्दू' मद्राससे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, १९२४।

'भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके ३९ वें अधिवेशनकी रिपोर्ट', १९२४।

'ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स' जवाहरलाल नेहरू, एशिया पब्लिशिंग हाउस, बम्बई, १९५८।

'द स्टोरी ऑफ माई लाइफ' खण्ड २. मु० रा० जयकर, एशिया पब्लिशिंग हाउस, बम्बई, १९५९।

'बापुना पत्रो २ — सरदार वल्लभभाई पटेलने' (गुजराती) मणिबहेन पटेल द्वारा सम्पादित, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५७।

'बापुना पत्रो ४ — मणिबहेन पटेलने' (गुजराती) मणिबहेन पटेल द्वारा सम्पादित, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५७।

'बापुना पत्रो ६ — गंगाबहेनने' (गुजराती) द० बा० कालेलकर द्वारा सम्पादित, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९६०।

'बापुनी प्रसादी' — (गुजराती) मथुरादास त्रिकमजी, द्वारा अनुवादित, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४८।

'महात्मा — लाइफ ऑफ मोहनदास करमचन्द गांधी', खण्ड २ डी० जी० तेन्दुलकर, विट्ठलभाई के० झवेरी और डी० जी० तेन्दुलकर, बम्बई, १९५१।

'महादेवभाईनी डायरी' खण्ड ७ (गुजराती) चन्दूलाल भगुभाई दलाल द्वारा सम्पादित, साबरमती आश्रम सुरक्षा और स्मारक ट्रस्ट, अहमदाबाद–१३, १९६५।

'लाइफ ऑफ श्री रामकृष्ण', अद्वैत आश्रम, ४ विलिंग्डन लेन, कलकत्ता, १९५५।

'लेटर्स ऑफ श्रीनिवास शास्त्री' सम्पादक — टी० एन० जगदीशन, एशिया पब्लिशिंग हाउस, बम्बई, १९६३।

तारीखवार जीवन-वृत्तान्त

(१६ अगस्त, १९२४ से १५ जनवरी, १९२५ तक)

१६ अगस्त : साम्प्रदायिक दंगोको सुलझानेके लिए सम्बन्धित हिन्दू-मुस्लिम समझौतेके लिए गांधीजी अहमदाबादसे दिल्लीके लिए रवाना हुए।

१७ अगस्त दिल्ली पहुँचे।
'नवजीवन' मे मलाबारके बाढ़-पीड़ितोकी सहायताके लिए चन्देकी अपील।

२२ अगस्त हिन्दू-मुस्लिम समझौतेके बारेमे एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिसे भेंट।
बम्बईके रास्ते दिल्लीसे अहमदाबादके लिए रवाना।

२३ अगस्त अहमदाबादमें मजदूरोकी सभामे भाषण।

२६ अगस्त अहमदाबाद नगरपालिकाके अभिनन्दनके उत्तरमे भाषण।

२८ अगस्त 'यंग इंडिया' मे प्रकाशित अपने लेख "गुलबर्गाका पागलपन" मे हिन्दू-मुस्लिम एकताके लिए अपील की।

२९ अगस्त. बम्बई पहुँचे।
बम्बई निगमके अभिनन्दनके उत्तरमे भाषण।

३० अगस्त मोतीलाल नेहरूको लिखे अपने पत्रमे गांधीजीने 'पूर्ण समर्पण' की अपनी शर्तोका उल्लेख किया तथा कांग्रेस-संगठनके सुधारके लिए सुझाव दिये।
राष्ट्रीय महिला परिषद् द्वारा आयोजित दादाभाई नौरोजीके जयन्ती-समारोहमें भाग लिया।

३१ अगस्त राष्ट्रीय एकतापर वक्तव्य देते हुए मोतीलाल नेहरूके सम्मुख अपने 'पूर्ण समर्पण' के कारणोपर प्रकाश डाला।
एक्सेल्सियर थियेटरमे मलाबार बाढ़-सहायता कोषके लिए आयोजित पारसी राजकीय मण्डलकी सभामे भाषण।
बम्बई प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीकी बैठकमे अहमदाबादमें पास किये गये कताई-प्रस्तावकी आलोचनाका उत्तर दिया।

२ सितम्बर प्रिंसेस स्ट्रीटपर स्थित खादी भण्डार देखने गये।
शामको नेशनल मैडिकल कालेजमे पारितोषिक वितरण किया।
रातके ९ बजे बम्बई प्रान्तीय कांग्रेस समितिकी सभामे भाषण

३ सितम्बर बम्बईसे रातकी गाड़ी द्वारा पूनाके लिए रवाना हुए।

४ सितम्बर. पूनामे सार्वजनिक सभामे भाषण।
भारत सेवक समाज (सर्वेन्ट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी) गये। तिलक महाविद्यालयके दीक्षांत-समारोहमे भाषण।
कांग्रेसी कार्यकर्त्ताओको पद-त्याग करने और कातनेकी सलाह दी।

५ सितम्बर अहमदाबादके रास्ते बम्बई वापिस आये।
सूरत पहुँचे और शामको सार्वजनिक सभामे भाषण दिया।

६ सितम्बर मोतीलाल नेहरूको एक पत्रमे काग्रेसका विभाजन न होने देनेके निर्णय-पर जोर दिया।
राजगोपालाचारीको लिखे अपने पत्रमे गाधीजीने इस बातपर जोर दिया कि "यदि हमे अपने उद्देश्योंमे आस्था है तो हमे पूर्णरूपसे सत्ताका परित्याग कर देना चाहिए।"

९, १० सितम्बर कोहाटमे दगे, हिन्दुओको निकाला गया।

१३ सितम्बर हिन्दू-मुस्लिम दगोके सम्बन्धमे अहमदाबादसे दिल्लीके लिए रवाना हुए।

१४ सितम्बर दिल्ली पहुँचे।

१५ सितम्बर दिल्लीमे 'हिन्दुस्तान टाइम्स' का उद्घाटन किया।

१७ सितम्बर मुहम्मद अलीके घरपर २१ दिनका उपवास शुरू किया।

१८ सितम्बर प्रात २ बजे दिये गये अपने वक्तव्यमे गाधीजीने बताया कि २१ दिनका यह उपवास प्रायश्चित्त और प्रार्थना दोनो ही है।

२४ सितम्बर एकता सम्मेलनके सम्बन्धमे समाचारपत्रोको दिये एक वक्तव्यमे गाधीजीने 'पैबन्द और थेगलीवाली कृत्रिम शान्ति' की अपेक्षा हृदयकी एकताके बढानेपर जोर दिया।

२६ सितम्बर. दिल्ली एकता सम्मेलनमे एक प्रस्ताव पासकर गाधीजीसे उपवास समाप्त करनेकी प्रार्थना की गई।

२७ सितम्बर गाधीजीने एकता सम्मेलनकी प्रार्थनाको माननेसे इनकार कर दिया।

१ अक्तूबर बम्बईकी महिलाओका एक शिष्ट-मण्डल गाधीजीसे मिला और उनसे उपवास तोडनेका अनुरोध किया।
बम्बईकी एक सार्वजनिक सभामे एनी बेसेटकी ७८ वी वर्षगाँठपर गाधीजी द्वारा भेजा गया सदेश पढ़ा गया।

२ अक्तूबरसे पूर्व जेनेवा अन्तर्राष्ट्रीय अफीम-सम्मेलनसे रवीन्द्रनाथ ठाकुरके साथ गाधीजीने अपील की कि दवाओको छोडकर दूसरे सभी उद्देश्योके लिए अफीम-व्यापार बन्द किया जाये।

८ अक्तूबर हिन्दू-मुस्लिम एकतापर वक्तव्य देनेके बाद गाधीजीने १२ बजे दोपहर को अपना २१ दिनका उपवास तोडा।
पिंजरापोलको भेजनेके लिए मुहम्मद अलीने कसाईसे एक गाय खरीदकर गाधीजीको भेट की।

९ अक्तूबर गाधीजीने अखबारोको एक सदेशमे कहा कि भारतके सभी भाई-बहन एकताके लिए ईश्वरसे प्रार्थना करे और अपना पूरा सहयोग दे।

१६ अक्तूबर 'यग इंडिया' मे कताई सदस्यताकी आवश्यकतापर फिर जोर दिया।
एक पत्र लिखकर वाइसरायसे कोहाट जानेकी अनुमति माँगी।

२० अक्तूबर. ट्रान्सवालके भारतीयोको एक सन्देशमे कहा कि वे अपने सम्मानपूर्ण अस्तित्वके लिए अन्ततक सघर्ष करें।

२३ अक्तूबर 'यंग इंडिया' में प्रकाशित 'प्रेमका विधान' में गांधीजीने अपरिवर्तनवादियोंसे कहा कि वे अपने साथी स्वराज्यवादियों एवं लिबरलोंके सामने शोभनीय ढंगसे झुक जायें।

२८ अक्तूबर वाइसरायने गांधीजीको कोहाट जानेकी अनुमति देनेसे इनकार कर दिया।

३० अक्तूबर संयुक्त प्रान्त राजनीतिक परिषद्, गोरखपुरके लिए एक सन्देशमें गांधीजीने बंगाल सरकारकी अनियमितताकी निन्दा की और लोगोंमें शान्ति बनाये रखनेकी अपील की।

२ नवम्बर. दिल्लीसे कलकत्ताके लिए रवाना।

६ नवम्बर स्वराज्य दलके नेताओंके साथ एक संयुक्त वक्तव्यमें संगठित ढंगसे कार्य करनेकी और असहयोग तथा कताई सदस्यताको स्थगित करनेकी घोषणा की। टाउन हालमें कलकत्ता निगम द्वारा दिये गये मानपत्रके उत्तरमें भाषण।

७ नवम्बर. अपरिवर्तनवादियोंके साथ हुई बातचीतमें स्वराज्य दलके नेताओंके साथ हुए समझौतेकी पेचीदगियोंका खुलासा किया।
हावडा टाउन हालमें हावडा नगर-पालिका द्वारा दिये गये मानपत्रके उत्तरमें भाषण।
स्वराज्य दलके नेताओंसे हुए समझौतेपर एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिसे भेंट।
दिल्लीके लिए रवाना हुए।

१० नवम्बर दिल्लीमें, एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिसे एक भेंटमें बताया कि कलकत्ता समझौतेको अन्तिम निर्णयके लिए बम्बईके सर्वदलीय सम्मेलनमें रखा जायेगा।

१३ नवम्बर 'यंग इंडिया' में कलकत्ता-समझौतेके बारेमें सविस्तार लिखा।
एक पत्रमें रोमाँ रोलाँको लिखा कि कुमारी मैडिलीन स्लेड (मीराबहन) भारत पहुँच गई हैं और मैं उनके पूर्व और पश्चिमके बीच एक लघु सेतु बन सकनेमें पूरी सहायता करूँगा।
माडर्न स्कूल गये, रामजस कालिजके विद्यार्थियोंके बीच भाषण दिया।
अली भाइयोंकी माता, बी-अम्माँके कफन-दफनमें शामिल हुए।

१४ नवम्बर न्यूयार्कके 'वर्ल्ड टुमारो' को एक सन्देशमें कहा कि 'अहिंसा संसारकी सबसे बड़ी शक्ति है।'

१६ नवम्बर कोहाटके प्रश्नपर वक्तव्य।

१७ नवम्बरसे पूर्व गांधीजीने तिरुवन्नामलईमें हुई तमिलनाड परिषद्को एक सन्देशमें बताया कि स्वराज्यवादियोंके साथ हुए समझौतेका आधार अहिंसाकी भावना थी।

१९. नवम्बर· दिल्लीसे बम्बईके लिए रवाना हुए।

२० नवम्बर बम्बई पहुँचे।

२१ नवम्बर बम्बईमें कांग्रेस कार्यसमितिकी बैठकमें भाषण।
बम्बईमें, सर्वदलीय सम्मेलनमें गांधीजीने बंगाल अधिनियमपर पहला प्रस्ताव पेश किया।

गांधीजीने ऐसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिसे हुई एक भेंटमें स्थानीय अखबारोंमें प्रकाशित कताई-सदस्यता हटा लेनेकी खबरको गलत बताया।

२२ नवम्बर सर्वदलीय सम्मेलनमें एकतापर भाषण।

२३ नवम्बर अखिल भारतीय कांग्रेस समितिकी बैठकमें कलकत्ता समझौतेकी स्वीकृतिका प्रस्ताव रखा।

बी० अम्मांकी मृत्युपर शोक प्रकट करते हुए गांधीजीने चौपाटीकी सभामें भाषण दिया।

२५ नवम्बर बम्बईसे अहमदाबादके लिए रवाना हुए।

२६ नवम्बर अहमदाबाद पहुँचे।

३० नवम्बर अहमदाबादमें गुजरात राष्ट्रीय विद्यालयके विद्यार्थियोंके समक्ष भाषण।

४ दिसम्बर लाहौर पहुँचे; श्री लाजपतरायके घरपर उनसे और प० मदनमोहन मालवीयसे सलाह-मशविरा किया।

५ दिसम्बर. अमृतसर पहुँचे।

दोपहर बाद स्वर्ण-मन्दिरमें भाषण।

शामको जलियाँवाला बागमें आयोजित एक सार्वजनिक सभामें भाषण।

६ दिसम्बर पंजाब प्रान्तीय खिलाफत सम्मेलनमें हिन्दू नेताओंपर जफरअली द्वारा लगाये गये आरोपोंका उत्तर।

लाहौरकी पंजाब कौमी विद्यापीठमें दीक्षान्त भाषण दिया।

७ दिसम्बर पंजाब प्रान्तीय सम्मेलनमें अध्यक्ष पदसे भाषण दिया।

८ दिसम्बर. गांधीजीके अनुरोधपर हिन्दू-मुस्लिम एकताको दृढ़ करनेके उपाय खोजनेके लिए खिलाफत सम्मेलनके प्रतिनिधि लाहौरमें मिले।

९ दिसम्बर रावलपिंडीमें भाषण करते हुए गांधीजीने हिन्दू शरणार्थियोंको सलाह दी कि वे सरकारके कहनेपर कोहाट वापस न जायें।

११ दिसम्बर प्रातः रावलपिंडीसे अहमदाबादके लिए रवाना हुए, रास्तेमें लाहौर स्टेशनपर 'ट्रिब्यून' के प्रतिनिधिसे कोहाटके मामलेपर भेंट।

१३ दिसम्बर अहमदाबाद पहुँचे।

१४ दिसम्बर समाचारपत्रोंको दिये गये अपने वक्तव्यमें गांधीजीने लोगोंको चेतावनी दी कि मेरे द्वारा प्रमाणित न किये गये पंजाबके मेरे भाषणोंके विवरणोंपर वे विश्वास न करें।

१८ दिसम्बर: अहमदाबादसे बेलगाँवके लिए रवाना।

२० दिसम्बर गांधीजी बेलगाँव पहुँचे।

२१ दिसम्बर: बेलगाँव नगरपालिका और जिला बोर्ड द्वारा दिये गये मानपत्रके उत्तरमें भाषण।

२३ दिसम्बर: बेलगाँवमें, अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीने कलकत्ताके समझौतेकी पुष्टि करनेके लिए एक प्रस्तावका मसविदा तैयार करनेके उद्देश्यसे गांधीजीकी अध्यक्षतामें सोलह सदस्योंकी एक विषय समितिका गठन किया।

२४ दिसम्बर विषय समितिने कलकत्ता समझौता और कताई सदस्यताका समर्थन करनेवाले प्रस्तावको स्वीकृत किया।
काग्रेस पडालमे डा० किचलूकी अध्यक्षतामे खिलाफत सम्मेलन हुआ।

२५ दिसम्बर. बेलगांवमे विषय समितिकी बैठकमे गाधीजीने अपरिवर्तनवादियोंसे अपील की कि वे स्वराज्यवादियोमे विश्वास रखे।

२६ दिसम्बर गाधीजीकी अध्यक्षतामे भारतीय राष्ट्रीय काग्रेसका ३९ वाँ अधिवेशन शुरू हुआ। गाधीजीने अध्यक्षीय भाषण दिया तथा कलकत्ता समझौतेका समर्थन करनेवाले प्रस्तावपर अपने विचार व्यक्त किए।

२७ दिसम्बर सुबह पाँचवे अखिल भारतीय छात्र-सम्मेलनमे भाषण।
काग्रेस अधिवेशनमे विभिन्न प्रस्तावो और एनी बेसेंटके वक्तव्यपर भाषण।
गाधीजी द्वारा पहले हिन्दी तथा बादमे अग्रेजीमे दिये गये प्रभावशाली भाषणके साथ काग्रेस अधिवेशन समाप्त हुआ।
अस्पृश्यता परिषद्मे भाषण।
काग्रेस पडालमे हुए हिन्दू महासभाके अधिवेशनमे शामिल हुए।

२८ दिसम्बर गोरक्षा परिषद्मे अध्यक्षीय भाषण।

३० दिसम्बर अखिल भारतीय देशी रियासत-परिषद्मे भाषण।

३१ दिसम्बर बम्बईमे हुए अखिल भारतीय मुस्लिम लीगके अधिवेशनमे गाधीजीने 'नेटाल-बरोज अध्यादेश'की निन्दा की।

१९२५

१ जनवरी गाधीजीने अपने लेख "बोलशेविज्म या आत्मसयम" पर श्री एम० एन० रायकी आलोचनाका 'यग इडिया' मे उत्तर दिया।

२ जनवरी: दाहोद और गोधरामे भाषण।

८ जनवरी: भावनगरमे हुई तीसरी काठियावाड राजनीतिक परिषद्मे अध्यक्षीय भाषण।

९ जनवरी. काठियावाड राजनीतिक परिषद्मे समापन भाषण दिया।
सामलदास कालेजमे विद्यार्थियोंके कर्तव्यपर भाषण।

१४ जनवरी अहमदाबादमे, गुजरात प्रान्तीय काग्रेस कमेटीकी बैठकमे भाषण।
गुजरात विद्यापीठमे दीक्षान्त भाषण।

१५ जनवरी. गाधीजीने कताई-सदस्यताको कार्यान्वित करने सम्बन्धी सूचनाएँ 'यग इडिया' मे सक्षेपमे दीं।
सोजित्रामें हुई खेडूत-परिषद्मे भाषण।

शीर्षक सांकेतिका

विविध

सांकेतिका

अ

आ

इ

ख

ग

ड

त

थ

द

भ

ह